ISSN 2321-4945
UGC CARE LISTED JOURNAL

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 74 अंक : 08, 09
नवंबर-दिसंबर, 2024

अमृत वर्ष
की ओर
अग्रसर...

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE LISTED JOURNAL

www.arpsguwahati.com

वर्ष : 74 **अंक : 08, 09** **नवंबर-दिसंबर, 2024**

परामर्श मंडल

भारतभूषण महंत (असम) • **प्रो. आर. एस. सर्राजु** (तेलंगाना) • **प्रो. किरण हाजरिका** (पंजाब)
• **प्रो. प्रदीप के शर्मा** (सिक्किम) • **प्रो. एच. एन. वाघेला** (गुजरात) • **डॉ. रीतामणि वैश्य** (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया

संपादक

प्रो. मोहन

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature, Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा. लिमिटेड, इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

© सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	हिंदी विभाग		
	संपादकीय		*5*
1.	नए गगन में नया सूर्य जो चमक रहा है... (भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य)	✍ डॉ. अनुशब्द	6
2.	भूमंडलीकरण : भाषा, संस्कृति और साहित्य	✍ डॉ. गिरधारी लाल लोधी	12
3.	सामासिक संस्कृति के संदर्भ में हिंदी भाषा और साहित्य	✍ डॉ. रत्नेश कुमार यादव	18
4.	कृत्तिवास रामायण और राम का आदर्श	✍ डॉ. अभिलाष कुमार गोंड	23
5.	राष्ट्रीय भाषा हिंदी : स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता के बाद	✍ डॉ. नीलम सिंह	28
6.	विनोद कुमार शुक्ल का 'कभी के बाद अभी' (कविता संग्रह) और आदिवासी	✍ डॉ. इबरार खान ✍ डॉ. बनवारी लाल मीना	33
7.	शिशुपाल सिंह 'शिशु' का काव्य संग्रह	✍ डॉ. भावना सिंह भदौरिया	37
8.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय ज्ञान परंपरा	✍ डॉ. ममता कुंवर	45
9.	विभाजन की पीड़ा को भोगती वर्तमान पीढ़ी 'चहार दर' उपन्यास के संदर्भ में	✍ पायल ✍ डॉ. सपना शर्मा	49
10.	उषा महाजन की कहानियों में चित्रित स्त्री-पुरुष संबंध पारिवारिक संबंध के विशेष संदर्भ में	✍ शिवराज कुमार कल्लूर ✍ डॉ. प्रभुसेन डी	54
11.	राष्ट्रव्यापी अराजकता का प्रतीक : 'राग दरबारी'	✍ डॉ. प्रीति राय	59
12.	आधुनिकता के संबंध में इतिहासकारों व विद्वानों के मतों का विश्लेषण : एक अवलोकन	✍ बिभूति बिक्रम नाथ ✍ डॉ. अंजु लता	66
13.	दलित साहित्य में नए प्रतिमानों के संस्थापक सूरजपाल चौहान	✍ उदिप्त तालुकदार	73
14.	भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुसार स्व एवं व्यक्तित्व विकास की अवधारणा	✍ आसिया मकबूल ✍ ललित मोहन शर्मा	78
15.	स्त्री अस्मिता का प्रश्न और 'मेरी आवाज सुनो' उपन्यास	✍ ताबा याना ✍ प्रो. संजय कुमार	85
16.	नेपाली लोककथाओं में पूर्वोत्तर भारत की लोक मान्यताओं की झलक (नेपाली लोककथा संग्रह 'गोलसिमल' के विशेष संदर्भ में)	✍ कृतिका विश्वकर्मा ✍ प्रो. संजय कुमार	92
17.	साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि और भाषा का महत्व	✍ आशु मंडोरा ✍ प्रो. चर्ल अन्नपूर्णा	97
18.	सम्राट अशोक की नीति का ऐतिहासिक विश्लेषण (विशेषत: कालसी शिलालेख के संदर्भ में)	✍ ललित सिंह	103
19.	संविधान के प्रति जन जागरूकता में रामबहादुर राय का अवदान	✍ आशीष द्विवेदी	108
20.	उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' का समाज और दलित चेतना	✍ नीलाक्षी पावे	112
21.	पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास निरूपण	✍ प्रभाकर सुयाल	120

অসমীয়া বিভাগ

22.	অনুবাদ তত্ত্ব : ভাষিক আৰু যোগাযোগমূলক দৃষ্টিভঙ্গী	✍ ড° হিমাদ্রী শইকীয়া	127
23.	অসমীয়া চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনা (জোনাকী পৰুৱা Fireflies- চলচ্চিত্রৰ আধাৰত)	✍ ড° দিগন্ত ৰাজবংশী	135
24.	অসমৰ শিক্ষা ব্যৱস্থা ঃ ৰাষ্ট্রীয় আৰু ৰাজ্যিক শৈক্ষিক পৰিস্থিতিৰ মাজৰ ব্যৱধান	✍ ড° প্রতিযা পদ্মশ্রী ডেকা	146
25.	মহিলাসকলৰ আর্থ-সামাজিক সবলীকৰণত প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা- গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিৰ অৱদান	✍ ড° বিজয় দাস ✍ ড° ৰামাচন্দ্র পাৰিদা	151
26.	নৱকান্ত বৰুৱাৰ কপিলীপৰীয়া সাধু উপন্যাসত নদী ঃ এক অধ্যয়ন	✍ ডিম্পী ৰাণী বর্মন ✍ ড° প্রফুল্ল কুমাৰ নাথ	157
27.	অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'ফেলানী' উপন্যাস ঃ এক বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়ন	✍ জয় জ্যোতি ডেকা ✍ ড° দীপাঞ্জলি দাস গোস্বামী	164
28.	নিম্নবর্গৰ চেতনা তত্ত্বৰ আধাৰত 'ফেলানী' উপন্যাসৰ আলোচনা	✍ মিনাক্ষী বৰুৱা ✍ ড° মহেশ্বৰ কলিতা	171
29.	পৰিপার্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত মৃদুল শর্মাৰ গঁড় উপন্যাস ঃ এটি অধ্যয়ন	✍ পূবালী বৰা ✍ ড° অৰবিন্দ ৰাজখোৱা	177
30.	শূদ্রকৰ ব্যতিক্রমী সৃষ্টি 'মৃচ্ছকটিকম' ঃ এক অধ্যয়ন	✍ দীপামণি বৈশ্য ✍ ড° বিভূতি লোচন শর্মা	186
31.	'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসত নাৰীৰ পৰিচয়ৰ সংকট আৰু দলিত নাৰীবাদ	✍ ড° মনমী বৰুৱা	192
32.	বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ 'সংস্কৃতি' অধ্যয়ন ঃ এক অধ্যয়ন (বিশেষ উল্লিখন 'ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি' গ্রন্থ)	✍ ড° ভাস্কৰজিৎ বৰা	198
33.	ত্রৈলোক্য নাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী	✍ ডালিমী পাঠক	205
34.	প্রাচীন গোৱালপাৰা জিলাৰ শৈৱ পৰম্পৰা ঃ এক অৱলোকন	✍ হর্ষজিৎ কলিতা ✍ পাৰমিতা দাস	210
35.	অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ চুটিগল্পৰ আংগিক ঃ এক বিশ্লেষণ	✍ দীপজ্যোতি বৰা	214
36.	নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন (নির্বাচিত কবিতাৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)	✍ কৌশিক ঠাকুৰীয়া	224
37.	কৃষক বিদ্রোহ ঃ সমকালীন আলোচনী আৰু অন্যান্য প্রসংগ--এক বিশ্লেষণ	✍ ৰাজেন দাস	231
38.	অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'সম্রাজ্ঞী' চুটি গল্পত প্রকাশ পোৱা অর্থনৈতিক চেতনা ঃ এটি অৱলোকন	✍ মঞ্জুলা কলিতা	238
39.	বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্ব দুধনৈ ৰাজহ চক্র অঞ্চলৰ বিশেষ উল্লেখেৰে অসমৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ ওপৰত কৰা এক অধ্যয়ন	✍ কপিল কলিতা ✍ ড° প্রণৱ শইকীয়া	242
40.	বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকৰ নেৰেটিভ শৈলী : এটি অধ্যয়ন (এবছার্ড নাটক কেইখনৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)	✍ ৰিম্পী বড়া ✍ ড° মৃণাল জ্যোতি গোস্বামী	247

❑ ❑ ❑

संपादकीय

भूमंडलीकरण और हिंदी

भाषा-संस्कृति की संवाहिका कही जाती है। संस्कृति समयानुसार अपने भीतर बदलाव करती रहती है उसी प्रकार भाषा भी। संस्कृति का कोई एक केंद्र नहीं होता, अपितु वह विभिन्न केंद्रों से मिलकर बनी होती है। जिसके कई उपकेद्र होते हैं। संस्कृति द्वंद्वात्मकता का समुच्चय है, जो अंतर्विरोध के साथ होती है। सच्चिदानंद सिन्हा के अनुसार 'कहीं-कहीं जब एक क्षेत्र में एक से अधिक मानव समूहों के लोग आकर साथ-साथ रहने लगते हैं और किसी मिली-जुली संस्कृति का निर्माण करते हैं, तो राष्ट्रीय बोध कबिलाई बोध से आगे बढ़कर पूरे क्षेत्र में व्याप्त सास्कृतिक बोझ बन जाता है।'

संस्कृति अपनी प्रकृति में गतिशील होती है। उसमें ठहराव नहीं होता है। आदिम संस्कृति से आज तक की भूमंडलीय संस्कृति तक, संस्कृति का रूप बदलता रहा है। संस्कृति मानव समाज से जुडे व्यवहारों, धर्म-विधियों, पहनावे, खानपान, दर्शन, रीति-रिवाजों, मूल्य, भौतिक और आध्यात्मिक निर्मिती से मिलकर बनी होती है। ऐसे में संस्कृति अपनी परिस्थिति के मुताबिक कुछ बुनियादी अवधारणा को लेकर चलती है। जैसे भारतीय संस्कृति में भावना और आस्था को अधिक महत्व मिला है। इसका मतलब यह नहीं कि यहाँ भौतिक संस्कृति की मौजूदगी नहीं रही है, लेकिन महत्व उसे ज्यादा मिला है। परंपरा, संस्कृति को विकसित करती हुई आगे जोड़ती है। भाषा संस्कृति को विस्तार देती है। भूमंडलीकरण के बाद व्यापार के माध्यम से सूचना और तकनीक का आदान-प्रदान हुआ। जिसकी वजह से संस्कृतियों का भी आदान-प्रदान हुआ। इन्हीं कारणों से भूमंडलीकृत भारत में एक नई बीसवीं सदी की संस्कृति को हम देखते हैं। पूंजीवादी बाजार में संचार माध्यमों के सहयोग से संस्कृति का बाजारीकरण किया गया। केनेथ थॉम्सन के अनुसार 'उत्तर-आधुनिक अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण बात यह है कि इसने संस्कृति की पण्य वस्तु को अंतर्निहित भाग बना लिया है। पूंजीवाद की पहली अवस्थाओं में ऐसा नहीं था। तब संस्कृति अलग थी और आर्थिक व्यवस्था अलग।'

इसी सोच के साथ भूमंडलीकृत भारत में तकनीक की बदौलत संचार क्रांति का जबरदस्त विस्तार हुआ है। इसका विस्तार अनियंत्रित था। इस विस्तार को केबल टीवी, इंटरनेट के बाद मोबाइल ने सबसे अधिक प्रभावी बनाया। नव-उपनिवेशवाद के इस दौर में अपने अस्तित्व को बनाए रखने की जंग थी, जिसमें व्यापार और तकनीकी उपलब्धियों के अलावा सूचना सबसे मूल्यवान वस्तु बन गई। फ्रेंच विद्वान ज्यां बोड्रिलॉर्ड ने कहा कि 'इस समाज का प्रभावी मुहावरा ही संचार की दुनिया है। संचार और संकेत दोनों मिलकर इस समाज को उपभोग समाज बनाते हैं।'

हिंदी ने बाजार से घुलमिलकर उसके साथ जीना सीख लिया है। उसकी संभावना किसी एक सिस्टम पर निर्भर नहीं है। हिंदी की निर्भरता अपने युग के हिसाब से विकेंद्रित है। संचार की सहायता से वैश्विक संस्कृति से घुली-मिली हिंदी की संस्कृति अपना अलग अस्तित्व और मायने रखती है, इसमें कोई संदेह नहीं। संस्कृति और संचार की भूमिका में आज व्यापार और राजनीतिक इच्छा-शक्ति का बहुत महत्व है। जितना हम आर्थिक शक्ति के रूप में उभरेंगे, तकनीक और व्यापार में जितना हम आत्मनिर्भर होंगे, उतनी ही उन्नति होगी, तो उस उन्नति का लाभ हिंदी को भी मिलेगा। अगर इस उन्नति में भाषा का माध्यम हिंदी बनती है, तो ऐसी स्थिति में हिंदी और एक नए मुकाम पर पहुँचेगी। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विरासत

नए गगन में नया सूर्य जो चमक रहा है...

(भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य)

डॉ. अनुशब्द

हिन्दी विभाग
तेजपुर विश्वविद्यालय
तेजपुर, असम-793022
8876049200
dranushabda@gmail.com

भारतीय ज्ञान परंपरा के केंद्र में प्राचीन काल से ही अध्यात्म और विज्ञान रहा है। विज्ञान हमें अध्यात्म से जोड़ता है और अध्यात्म हमें वैज्ञानिक तरीके से सोचने का सामर्थ्य देता है। विज्ञान और अध्यात्म का अद्भुत समन्वय सबसे पहले हमें भीमबेटका की गुफाओं में और हड़प्पाकालीन सभ्यता में देखने को मिलता है। हड़प्पा में मुख्य रूप से पीपल, नदी और पशु आदि की पूजा होती थी। ऋग्वेद में भी प्रकृति के रूप में नदी, आग और वायु आदि की पूजा होती थी। हड़प्पा और ऋग्वेद दोनों कालों में यक्ष की मूर्तियाँ मिली हैं, अर्थात बहुदेवाद की अवधारणा समाज में आ गई थी। योग का पहला रूप हमें हड़प्पा की मोहरों पर 'ध्यानमुद्रा के योगी' के रूप में देखने को मिलता है, जो योग आज भी वर्तमान है। टोटमवाद हड़प्पा में भी था, जिसे हम अथर्ववेद से लेकर आजतक देख सकते हैं। पुनर्जन्म की अवधारणा भी थी क्योंकि आदमी के साथ खानपान की वस्तुएँ, कुत्ते आदि को दफनाने का संकेत मिला है, जो आज तक चला आ रहा है।

हड़प्पा की मोहरों का चौकोर होना, वहाँ की सड़कों का एक-दूसरे को समकोण पर काटना, ग्रिड पैटर्न पर नगर निर्माण, कांस्य का प्रयोग, हड़प्पा वालों को दिशा का ज्ञान होना (क्योंकि नौका परिचालन एवं समुद्री-व्यापार का भी प्रमाण मिलता है), माप-तौल के लिए सोलह गुणज का प्रयोग, मोहनजोदड़ो से विश्वविद्यालय और शतरंज आदि के प्रमाणों का मिलना इस बात के गवाह हैं कि हड़प्पा के लोग अध्यात्म, विज्ञान, चित्रकला और वास्तुकला आदि में प्रवीण थे। हड़प्पा की सभ्यता और संस्कृति का विकास वैदिक साहित्य में देखने को मिलता है। वैदिक साहित्य मुख्य रूप से चार प्रकार के हैं- सहिंता, ब्राह्मण, अरण्यक और उपनिषद्। इन सभी साहित्यों के केंद्र में अध्यात्म और विज्ञान देखने को मिलता है। वैदिक साहित्य को समझने के लिए वेदांगों की रचना की गई। ऋग्वैदिक काल में जिस प्रकार अपाला, घोषा, विश्ववारा, सिस्ता और लोपामुद्रा आदि ने धार्मिक शिक्षा प्राप्त की ठीक उसी प्रकार बुद्ध के समय में भी स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्त करती थीं। इस समय प्रारंभ में चैत्य में स्त्रियों को प्रवेश नहीं मिलता था लेकिन आनंद के कहने पर बुद्ध ने स्त्रियों को प्रवेश दिया और कहा, जो धर्म हजार साल चलने वाला था उसका अंत पांच सौ वर्षों में हो जाएगा। पदार्थों की उत्पत्ति के साथ ही ध्वनि चिन्हों

का उद्‌भव और विकास प्रारंभ हो जाता है। भारत में लिखित रूप में भाषा-साहित्य की उत्पत्ति की जब हम बात करते हैं तो सबसे पहले हमारा ध्यान हड़प्पा की मोहरों की तरफ जाता है हड़प्पा सभ्यता की लिपि चित्रात्मक एवं ध्वनयात्मक है, जिसे हम बौद्ध सभ्यता और संस्कृति में भी देख सकते हैं, विशेषकर बौद्ध गुफाओं में। हड़प्पा सभ्यता की लिपि से संबंधित लगभग 4000 नमूने प्राप्त हुए हैं। संभव है कि चीन की चित्रलिपि और मिश्र की काप्टिक लिपि भी हड़प्पा की लिपि से प्रभावित हो, क्योंकि हड़प्पा की समकालीन सभ्यता के लोग आपस में व्यापार भी करते थे। यह अलग बात है कि हड़प्पा सभ्यता की लिपि को आजतक कोई पढ़ नहीं पाया और न ही हमारे पास उस समय का कोई साहित्य उपलब्ध है, लेकिन हड़प्पा सभ्यता की चीजें लोक में आजतक जीवित हैं, जिन्हें हम विभिन्न भारतीय भाषा-परिवारों एवं विभिन्न भारतीय पारंपरिक संस्कृतियों में देख सकते हैं।

साहित्य रूप में अभिलेख को छोड़कर हमें जो कुछ भी प्राप्त है, उसमें वैदिक साहित्य और संगम साहित्य का नाम सबसे पहले आता है। वैदिक साहित्य चार प्रकार के हैं - पहला सहिंता, इसके अंतर्गत ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्वेद आते हैं। इनकी भाषाएँ प्राकृत मिश्रित संस्कृत हैं। इनमें यज्ञ, संगीत, कर्मकांड और टोटमवाद आदि अनुष्ठानों के बारे में बताया गया है। दूसरा है ब्राह्मण, सहिंताओं में जिन कर्मकांडों का उल्लेख हुआ है, उसका विस्तृत ब्यौरा बताने वाला साहित्य ब्राह्मण है। प्रत्येक वेद का अपना-अपना ब्राह्मण होता है, जैसे ऋग्वेद का ऐतरेय ब्राह्मण, सामवेद का पंचविष और जैमीनीय ब्राह्मण, यजुर्वेद का शतपत ब्राह्मण और अथर्ववेद का गोपंथ ब्राह्मण। तीसरा है अरण्यक, इसके अंतर्गत वह साहित्य आता है, जो अरण्य में चिंतन-मनन के आधार पर ज्ञानमार्गी साहित्य विकसित हुआ था। इसी की अगली कड़ी के रूप में उपनिषदों (चौथा सहिंता) का विकास हुआ, जिसे भारतीय दर्शन का आधार माना जाता है। इनकी संख्या 108 है, लेकिन 11 ही प्रमाणिक माने जाते हैं। इनमें मूलत: ब्रह्म, आत्मा, कर्मफल और मोक्ष आदि जैसे प्रश्नों पर विचार किया गया है।

वैदिक साहित्य को समझने के लिए वेदांग की रचना की गई जो छछ प्रकार के हैं। (1) शिक्षा के अंतर्गत उच्चारण (प्रतिशाख्य) की बातें कहीं गई हैं। (2) निरुक्त में व्युत्पत्तिशास्त्र (निघंटु) के अंतर्गत कठिन शब्दों का अर्थ समझाया गया। (3) व्याकरण-पाणिनी। इसी समय दक्षिण में भी तोल्कापियम नामक व्याकरण की रचना हुई थी। पश्चिम के भाषा-वैज्ञानिकों में सस्यूर का संरचनावाद और नॉम चॉम्स्की का भाववाद एवं संज्ञानवाद आदि इन्हीं के चिंतनों से प्रभावित हैं। (4) ज्योतिष-लगध मुनि। (5) छंद-पिंगल मुनि। (6)

कल्प में कर्मकांडों की बातें कहीं गई हैं। कल्प तीन प्रकार के होते हैं (1) श्रोत सूत्र के अंतर्गत शुल्व सूत्र। (2) गृह सूत्र के अंतर्गत छोटे-छोटे अनुष्ठान और सोलह संस्कारों की बातें कहीं गई हैं। (3) धर्म सूत्र के अंतर्गत सामाजिक विधान, नैतिक-अनैतिक की शिक्षा और कराधान की बातें कहीं गई हैं ''स्वंय भाषा-विज्ञान में भी इतनी अधिक उर्वरता बढ़ी कि इसकी कई प्रशाखाएं बन गयीं। उक्त छ: वेदांगों में पांच तो भाषा-विज्ञान के लिए बनाने पड़े।''[17] ऋग्वैदिक साहित्य से कर्म आधारित वर्ण-व्यवस्था, महिलाओं की अच्छी दशा (क्योंकि महिलाएँ यज्ञ एवं पठन-पाठन आदि में भाग लेती थीं। जैसे अपाला, घोषा, विश्ववारा, सिस्ता और लोपामुद्रा आदि) का वर्णन मिलता है। आर्यों-अनार्यों के बीच संघर्ष और मेल-मिलाप, सभा-समिति, बहुदेववाद और अमाजू महिलाओं आदि का उल्लेख मिलता है, वहीं उत्तरवैदिक काल में इन सभी की स्थितियों में गिरावट आई। संगम साहित्य भी श्रुति परंपरा पर आधारित है। पांडेय राज्य की राजधानी में तीन संगम आयोजित किए गए, जिनमें से पहले संगम की अध्यक्षता करने का श्रेय अगस्त्य मुनि को दिया जाता है और उसके द्वारा अगत्यार ग्रंथ की रचना के बारे में बताया जाता है, जो आज उपलब्ध नहीं है। द्वितीय संगम में 'तोल्कापियम' नामक व्याकरण की रचना की गई, जो उपलब्ध है। इसका रचना काल 300 ई.पू. के आसपास बताया जाता है। तृतीय संगम के दौरान अधिकतर संगम साहित्य की रचनाएँ हुईं। तमिल के पंचतिनै साहित्य का संबंध कालिदास के साहित्य के साथ देखा जा सकता है। इस समय अगम (प्रेम) और पूरम (युद्ध) साहित्य की रचना भी देखने को मिलती है। संगम साहित्य की जानकारी के स्रोत अशोक का अभिलेख,

पिलिनी की नेचुरल हिस्टोरिका और Periplus of the àßrithin Sea आदि हैं। इन सभी रचनाओं की भाषा तमिल और ग्रीक है।

श्रमण धर्म के विचारकों ने भी ईश्वर, आत्मा, मोक्ष, कर्मफल और पुनर्जन्म आदि पर विचार किए हैं जिसे हम हीनयान के आगम साहित्य सुतपिटक, विनयपिटक, अभिधम्म पिटक, दीपवंश एवं महावंश, जातक कथा, विशुद्धमग्न और मिलिन्द्पन्हों आदि में देख सकते हैं। महायान का आगम साहित्य वैपूल्यसूत्र के अंतर्गत अष्टसहस्त्रप्रज्ञापारमिता, सद्धर्मपूंडरिक और ललित विस्तार आते हैं। उन्होंने भी जातक कथाओं की तरह अवदान साहित्य की रचना की जैसे दिव्यावदान। महायानियों की अन्य रचनाएँ मध्यकारिका, सूत्रालंकार, बुद्धचरित, सौंदरानंद और शारिपुत्रपराक्रम आदि हैं। इन सभी रचनाओं की भाषाएँ प्राकृत, पालि और सिंहली हैं। इसी दौरान भाषाई स्तर पर सबसे ज्यादा बदलाव देखने को मिलते हैं। जैन धर्म से संबंधित साहित्य में अचारांग सूत्र, भगवती सूत्र, कल्प सूत्र कालक आचार्य कथा, कुवलयमाला, आदिपुराण और त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित आदि देखने को मिलते हैं। इनकी भाषाएँ प्राकृत और अपभ्रंश हैं।

मौर्यकालीन साहित्य के अंतर्गत अशोक का अभिलेख, अर्थशास्त्र और राजतरंगिणी आदि आते हैं। इसी समय पहली बार न्याय प्रणाली को आपराधिक और दीवानी क्षेत्रों में बांटा गया जो अभी तक चला आ रहा है। मौर्योत्तर काल में धर्मशास्त्रों एवं स्मृतियों का पुन: विकास हुआ। मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति, वृहस्पति स्मृति, कात्यायन स्मृति, महाकाव्य, नाटक (स्वप्नवासवदत्ता, मुद्राराक्षस) जीवनचरित (बुद्धचरित, हर्षचरित) गाथा सप्तशती, परिशिष्टपर्वन और मामुलनार(तमिल) आदि हैं। इसमें से ज्यादतर रचनाएँ संस्कृत में हैं, लेकिन गाथा सप्तशती प्राकृत में है। गुप्तकालीन भाषा-साहित्य में महाभारत का संकलन इसी समय हुआ। महाभारत में इस समय एक लाख से ज्यादा श्लोक हो गए। पुराणों का संकलन भी इसी समय हुआ, लेकिन इसकी कथाएँ प्राचीन हैं। इसके लेखक लोहमर्ष और उग्रसव्रा हैं। इसी समय सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई उसका विचार आया, जिसपर आजतक विचार किया जा रहा है। त्रिमूर्ति और पंचायतन का विचार भी इसी समय आया। कालिदास का अभिज्ञानशाकुन्तलम, अग्निमित्र, विक्रमोर्यवशीयम्, कुमारसंभवम्, रघुवंशम्, मेघदूतम्, ऋतुसम्माहर शूद्रक का मृच्छकटिकम्, विशाखदत्त का देवी चन्द्रगुप्त, कात्यायन का कामसूत्र और कामंदक का नीतिसार आदि देखने को मिलते हैं। इन सभी की भाषाएँ संस्कृत हैं, लेकिन इनके निम्न पात्रों द्वारा प्राकृत भाषा का भी प्रयोग किया गया है। यही प्राकृत अपभ्रंश के मार्ग से होते हुए आधुनिक भाषा हिन्दी के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संगम साहित्य का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थानीय देवता बेलमुरुगन का संबंध कार्तिकेय के साथ इसी समय जोड़ा गया।

भारतीय ज्ञान परंपरा में कलाओं का योगदान हमेशा से काफी महत्वपूर्ण रहा है। कलाओं का संबंध हमेशा से भारतीय जनमानस के साथ रहा है, जिसकी अभिव्यक्ति समय-समय पर स्थापत्य कला, चित्रकला और मूर्तिकला आदि में देखने को मिलती है। मनुष्य द्वारा निर्मित सबसे पहले चित्रकला हमें भीमबेटका की दीवारों पर देखने को मिलती है, जहाँ पर विभिन्न प्रकार के चित्र पाए गए हैं। जैसे- मकड़ी का जाल जैसी ज्यामितीय संरचना, स्त्री के सिर पर घड़े का चित्र, जानवरों के चित्र, आदि देखने को मिलते हैं। वैसे तो हमें लोककला के रूप में मृदभांड का प्रयोग पाषाण काल से ही देखने को मिलता है। हमें एक साथ सभी कलाओं का विकसित रूप सबसे पहले हड़प्पा सभ्यता में देखने को मिलता है, जो विश्व की प्राचीन स्थापत्य कलाओं में सबसे उत्कृष्ट है। वास्तुकला के सुन्दर उदाहरण तो हमें हड़प्पा से ही देखने को मिलते हैं, लेकिन प्रथम बार मौर्यों के समय वास्तुकला के लिए दो अधिकारियों के नाम (एग्रोनोमोई और एरिस्ट्रोनोमोई) का उल्लेख इंडिका में मिलता है, जिसका संबंध सार्वजनिक निर्माण विभाग से था। हड़प्पा सभ्यता में लोककला के रूप में मृदभांड, मिट्टी के खिलौने, चाक और बैल गाड़ी आदि देखने को मिलते हैं। इसीतरह चित्रकला के रूप में मृदभांड के ऊपर की गई लाल और काले रंग की चित्रकारी, मूर्तिकला के रूप में यक्षिणी की मूर्ति और पुजारी की मूर्ति, हड़प्पा की मोहरों पर विभिन्न प्रकार के जानवरों के चित्र आदि देखने को मिलते हैं। महाजनपद काल में भी स्थापत्य, चित्रकला और मूर्तिकला के अद्भुत नमूने पाए गए हैं। मौर्यों के समय बड़े पैमाने पर मुद्राएँ ढाली गईं, जो कार्षपण और पंचमार्क के नाम से जानी जाती थीं। सिक्के अधिकतर तांबे

और चांदी के होते थे। स्थापत्य कला में इस समय स्तूप, पहाड़ काटकर गुफाओं का निर्माण, राजमहल, स्तंभ, राजकीय मूर्तिकला और लोककला आदि देखने को मिलते हैं।

हड़प्पा, मौर्य, शुंग तीनों के समय में यक्ष-यक्षिणी की मूर्तियाँ मिली हैं। सातवाहन और कुशान के यहाँ भी सभी कलाओं का विकास हुआ। कनिष्क का समय मौद्रिक क्रांति का समय है। गंधार और मथुरा कला का भी विकास इस समय हुआ। इसके निर्माण की प्रक्रिया चौथी शताब्दी ई.पू. में प्रारंभ हो गई थी। गंधार कला का सम्बन्ध बौद्ध धर्म के महायान शाखा से है तो वहीं मथुरा कला का संबंध बौद्ध, जैन, वैष्णव और शैव आदि धर्मो से है - ''प्राचीन ग्रंथों में हम इतने प्रकार के कारीगर नहीं पाते जितना इस अवधि के लेखन में''[27] कंकालीटीला का संबंध भी मथुरा कला से ही है। विदेशी इतिहासकारों का आरोप है कि भारत में इतिहास लेखन की परंपरा नहीं रही है, जो अनुचित है। हम पुराणों के रूप में इसे देख सकते हैं, जिसके लेखक लोहमर्ष और उग्रसव्रा हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा का विकास लोक कंठ, मठ-मंदिर, विहार, नालंदा, विक्रमशिला, वल्लभी, सोमपुरी और ओदंतपुरी विश्वविद्यालय आदि से हुआ है, जो आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के लिए संजीवनी के रूप में काम कर रही है।

गुप्त काल में अनेक प्रकार के सिक्के ढलवाए गए, जिनमें सबसे ज्यादा सोने के सिक्के थे। इस समय की स्थापत्य कला, मूर्तिकला और चित्रकला बौद्ध धर्म एवं हिन्दू धर्म से संबंधित है, जिसमें अजंता, बाघ की गुफा, सारनाथ की मूर्तियाँ, सुल्तानगंज की मूर्तियाँ, उदयगिरी का मंदिर, देवगर का मंदिर, भीतर गाँव का मंदिर, शिवपुर का लक्ष्मण मंदिर और नचनाकुठार का पार्वती मंदिर आदि देखने को मिलते हैं। चोल, चेर, पाण्डेय और मुगल काल तो कलाओं के उत्थान के लिए ही जाने जाते हैं, विशेषकर मुगल काल स्थापत्य और चित्रकला के लिए जाना जाता है।

सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ ही दर्शन का विकास प्रारंभ हो जाता है। दर्शन ग्रंथों का मुख्य विषय मोक्ष और मुक्ति है। भारतीय दर्शन की बात करें तो इसका प्रारम्भिक रूप हमें हड़प्पा सभ्यता में देखने को मिलता है, जो अध्यात्म और विज्ञान को अपने में समाहित किए हुए है। हड़प्पा की मुहरों पर 'ध्यान मुद्रा के योगी', जॉन मार्शल का पशुपत शिव की अवधारणा, मोहनजोदड़ो से पुरोहित की मूर्ति, मोहनजोदड़ो से विश्वविद्यालय का प्रमाण, मोहनजोदड़ो से वृक्ष के रूप में आदि देवी की पूजा इत्यादि के प्रमाण मिलते हैं। इस समय मुख्य रूप से पीपल, पशु और यक्ष आदि की पूजा होती थी। अर्थात् बहुदेववाद की परंपरा हड़प्पा काल से ही चली आ रही है, जो ऋग्वैदिक काल में भी देखने को मिलती है। ऋग्वेद के तीसरे मंडल में सूर्य पूजा की बात की गई है, जिसे गायत्री मंत्र के नाम से भी जाना जाता है। उपनिषदों में ज्ञानमार्गी धारा एवं एकेश्वरवाद की बातें कही गई हैं। श्रमण धारा के दार्शनिक वेद को प्रमाण नहीं मानते हैं। ये दार्शनिक ज्ञानमार्गी थे, लेकिन इनका ज्ञान इनकी समझ के आधार पर विकसित हुआ था। उन्होंने महिलाओं के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाया था।

वैदिक दर्शनों में षड्दर्शन अत्यंत प्राचीन हैं, जिन्हें आस्तिक दर्शन कहा जाता है। इनमें सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदांत आते हैं। सांख्य दर्शन के प्रवर्तक कपिल मुनि हैं। सांख्य दर्शन के अनुसार संसार के निर्माण में भगवान से ज्यादा महत्वपूर्ण भूमिका प्रकृति की रही है। उन्होंने पुरुष और आत्मा को एक ही तत्व माना है। सांख्य दर्शन प्रारंभ में भौतिकवादी था, लेकिन आगे चलकर यह अध्यात्मवाद की तरफ मुड़ गया। योग दर्शन के प्रवर्तक पतंजलि हैं। इनके अनुसार व्यक्ति ध्यान के माध्यम से सांसारिक जीवन से मुक्ति पा सकता है। ज्ञानेन्द्रियों को नियंत्रण में रखने के लिए उन्होंने आठ मुद्राओं की बातें कहीं। न्याय दर्शन के प्रवर्तक गौतम ऋषि माने जाते हैं। उन्होंने एक तर्क प्रणाली विकसित की और कहा कि ज्ञान प्राप्ति के माध्यम से ही मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है, जिसका परीक्षण तर्क के आधार पर होगा। वैशेषिक दर्शन भौतिकवादी दर्शन है। इसके प्रवर्तक ऋषि कणाद हैं। उन्होंने सृष्टि का मूल उपादान कारक परमाणु को माना है और सम्पूर्ण सत्ता को सात पदार्थों में विभक्त किया है। मीमांसा दर्शन के प्रवर्तक जैमिनी हैं। उन्होंने वेदों को ही शाश्वत सत्य माना है और इसकी प्रमाणिकता के लिए तर्क का प्रयोग किया है। इसके केंद्र में भी मोक्ष ही है। वेदांत दर्शन की तीन शाखाएँ हैं - अद्वैत वेदांत (शंकराचार्य), विशिष्टाद्वैत (रामानुजाचार्य) और द्वैत (मध्वाचार्य)। शंकराचार्य ने ब्रह्म को किसी विशेष गुण से रहित माना है तो वहीं रामानुजाचार्य ने ब्रह्म को सर्वगुण संपन्न माना है। इस

दर्शन का मूल उपनिषदों में है। अर्थात् आस्तिक दर्शन का केंद्रीय तत्व मुक्ति है–''इसलिए मोक्ष या मुक्ति दर्शन ग्रंथों का मुख्य विषय बन गया। इसका मतलब जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति है, जिस पर पहली बार गौतम बुद्ध ने उपदेश दिया और बाद में कुछ ब्राह्मणवादी दर्शानिकों ने इसे आगे बढ़ाया।'[3]

नास्तिक दर्शनों में चार्वाक का नाम आता है, जो भौतिकवादी हैं। वे दिव्य और अलौकिक शक्तियों को नकार कर सभी कार्य-व्यापारों के केंद्र में मानव को ले आते हैं, जिसे वर्तमान से जोड़कर देखा जा सकता है। चार्वाक की तरह अजीत केश कम्बलीन और पुकुद कात्यायन का दर्शन है, जिसे लोकायतन दर्शन भी कहा जाता है। इसका मानना है कि आत्मा एक चेतना है, जो शरीर के साथ विकसित होती है। नियतिवाद में मखली गोसाल ने माना है कि मानव आत्मा है और संसार में दु:ख है। कर्मफल के अनुसार पुनर्जन्म होता है। पूरण कश्यप का अक्रियावाद नियतिवाद के समान ही है। संजय वेट्ठलीपुत्र के अनिश्चयवाद का तात्पर्य यह है कि सही क्या है और गलत क्या है। इस प्रश्न से हम आज भी जूझ रहे हैं। विश्व को सबसे पहले लोकतंत्र का पाठ पढ़ाने वाला भारत ही है, जो महात्मा बुद्ध के समय से देखने को मिलता है। बुद्ध ने ही निर्वाण प्राप्ति के लिए चार आर्य सत्य, मध्यम मार्ग, दसशील, अनात्मवाद, क्षणभंगुरवाद और पुनर्जन्म आदि सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। जैन धर्म में अनेक आत्माओं की बातें कही गई हैं। मुक्ति के लिए जैनियों ने सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान और सम्यक आचरण की बातें कही हैं। उन्होंने तो स्त्रियों की मुक्ति की बात मल्लीनाथ के माध्यम से कही है। उन्होंने ही स्यादवाद और अनेकान्तवाद की बातें कही हैं। इन सभी दार्शनिकों के सिद्धांतों पर आज भी चर्चाएँ हो रही हैं अर्थात सभी दार्शनिकों ने दर्शन के केंद्र में दुखों से निवृत्ति को ही स्थान दिया है ''जब मानव ने अपने को दु:खों से घिरा हुआ पाया तब उसने पीड़ा और क्लेश से छुटकारा पाने की कामना की। इस प्रकार दु:खों से निवृत्ति के लिए उसने दर्शन को अपनाया।''[4] वर्तमान में हमारे दर्शन का क्षेत्र दिन-प्रतिदिन समृद्ध होता जा रहा है।

प्राचीन काल से ही प्रकृति और मनुष्य के आपसी टकरावों से कई महत्वपूर्ण घटनाएँ घटती रही हैं। इसी प्रक्रिया में मनुष्यों ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित किया। उन्होंने सातवीं सहस्राब्दी ई.पू. में कृषि करना प्रारंभ कर दिया था। भारतीय ज्ञान परंपरा के केंद्र में प्राचीन काल से ही अध्यात्म और विज्ञान रहा है जो भीमबेटका और हड़प्पाकालीन सभ्यता में भी देखने को मिलता है। भीमबेटका में चित्रकला के रूप में ज्यामितीय प्रमाण देखने को मिलता है, जिसे हम हड़प्पा कालीन संरचना, शुल्व सूत्र और पलशाले मुडूकुडूमी (यज्ञशाला) आदि में भी देख सकते हैं, जहाँ पर यज्ञ वेदिका बनाने की बातें कहीं गई हैं। अपस्तम्बा ने वेदियों के निर्माण के लिए न्यूनकोण, अधिककोण और समकोण का वर्णन किया है। शिल्प और प्रौद्योगिकी का विकास हड़प्पा सभ्यता में बहुत तेजी से हुआ। यह कांस्य युगीन सभ्यता है, क्योंकि कांसे की मूर्तियां मिली हैं। वाणिज्य और कृषि में भी खूब प्रगति हुई। इसी दौरान हमें सबसे पहले पक्की ईंटें देखने को मिलती हैं। रसायन विज्ञान एवं जीव विज्ञान के रूप में हड़प्पा में कांस्ये का प्रयोग। उन्हें विभिन्न प्रकार के रंगों और रंगाई के बारे में जानकारियाँ थीं। हड़प्पा की सड़कें एक-दूसरे को समकोण पर काटती थीं। ग्रिड प्रणाली विकसित हो गई थी। बाद के राजाओं ने तो सड़कों के माध्यम से समूचे भारत को एक सूत्र में पिरोने का काम किया। ''इन नंद राजाओं ने दुनिया में पहली बार सड़क का निर्माण कराया। तक्षशिला से लेकर गंगा दरिया के मुहाने तक सड़क बनवाई। इस सड़क से देश के दो महानतम विश्वविद्यालय (तक्षशिला और नालंदा) ही आपस में नहीं जुड़े बल्कि पूरा भारत एक सूत्र में ही बंध गया।''[5] अर्थात राजमिस्त्री उच्च कोटि के पाए जाते थे। उन्हें दिशाओं का ज्ञान प्राप्त था, इसी का सहारा लेकर वे लोग समुद्री मार्ग से दूर-दूर तक व्यापार करते थे। तीसरी शताब्दी ई.पू. तक भारतीयों ने गणित, विज्ञान, खगोलशास्त्र और चिकित्सा विज्ञान में दक्षता प्राप्त कर ली थी। पांचवी शताब्दी के प्रारंभ में आर्यभट्ट के द्वारा अंकन प्रणाली, दशमलव प्रणाली और शून्य का विकास हो चुका था। आर्यभट्ट ने ग्रहों की गणना बेबीलोनियन विधि से किया। उन्होंने सूर्य और चन्द्र ग्रहण के कारणों की खोज की। पृथ्वी की त्रिज्या बताई और कहा कि सूर्य स्थिर है तथा पृथ्वी घूमती है। गणित और विज्ञान के क्षेत्र में आर्यभट्ट की कृति आर्यभट्टीय बहुत महत्वपूर्ण है। वराहमिहिर ने बताया कि चंद्रमा पृथ्वी के

चारों ओर और पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। उन्होंने पौधे और पशु संबंधी वर्गीकरण करके कृषि विज्ञान को समृद्ध किया। इनके खगोलशास्त्र के पंचसिद्धान्तिका की चर्चा विश्व में हुई थी। कामसूत्र में नगरीय समाज, भौतिक जीवन को अच्छा बनाने का उपाय और बासठ कलाओं की चर्चा की गई है। परासर स्मृति में कृषि विज्ञान की चर्चा की गई है। भारतीय कारीगरों द्वारा निर्मित तलवार अन्य देशों की तुलना में ज्यादा उत्कृष्ट होती थी और चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय का दिल्ली का महरौली स्तूप रसायन विज्ञान का अद्‌भुत नमूना है।

दवाओं का सबसे पहला उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है। अशोक के समय में पशुओं के लिए अस्पताल का निर्माण हुआ था। दूसरी शताब्दी ई.पू. भारत में आयुर्वेद के दो प्रसिद्ध विद्वानों का जन्म हुआ, सुश्रुत और चरक7 सुश्रुतसहिंता में शल्य चिकित्सा की बातें कहीं गई हैं और 121 औजारों का उल्लेख किया गया है। चरकसहिंता जेनरल मेडिसिन के लिए जाना जाता है। प्राचीन भारत में वनस्पतियों का प्रयोग रसायन विज्ञान में भी किया जाता था। गणित और खगोलशास्त्र के क्षेत्र में आर्यभट्ट का कथन पाई का मान 22/7 के लगभग, पृथ्वी की त्रिज्या, चंद्रमा में रौशनी नहीं होती है, पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगाती है और ज्योतिष विद्या आदि आज भी प्रासंगिक हैं। वराहमिहिर के खगोलशास्त्र में पंचसिद्धान्तिका की चर्चा विश्व में हुई थी। उत्तरवैदिक काल में लोहे गलाने की भट्ठी सुनेरी से मिली है। हड़प्पा के बाद मौर्योत्तर काल में पुन: हिप्पालूश द्वारा मानसूनी हवा की खोज की गई, ताकि समुद्री व्यापार के लिए नौका परिचालन में सुविधा हो सके। प्राचीन भारत में विज्ञान का बोलबाला तो रहा ही है। वर्तमान समय में भी इसका महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। ध्यातव्य है कि ''भारत ने विज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्राचीन काल में, धर्म और विज्ञान अतुलनीय रूप से जुड़े हुए थे।''[6] आज भारतीय विज्ञान-प्रौद्योगिकी अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का काम कर रही है[आने वाले समय में तो स्पेस-प्रौद्योगिकी की मांग और ज्यादा बढ़ेने वाली है।

बहरहाल आधुनिक भारत के ज्ञान-विज्ञान के केंद्र में प्राचीन भारत का ज्ञान-विज्ञान विद्यमान है। भौतिकवादी संसार से मोहभंग होने पर लोग अध्यातम की ओर मुड़ते हैं। आध्यत्मिक ज्ञान और विज्ञान को संचित एवं संरक्षित करने के लिए हमारे यहाँ के ऋषियों एवं महात्माओं ने वर्षों से अथक परिश्रम किया है। आज विश्व में जो ज्ञान-विज्ञान, दर्शन, भाषा-साहित्य और कला फल-फूल रही है, उसके केंद्र में कभी भारत हुआ करता था। आज भी पूरे विश्व में ज्ञान का स्रोत भारत ही है। शिक्षा ग्रहण करने हेतु विद्यार्थी विदेशों से नालंदा, विक्रमशिला आदि विश्वविद्यालयों में आते थे7 प्राचीन भारतीय परंपरा को जितना हम जानते हैं, उतना ही गौरवांवित होते हैं। भारतीय भूमि बेचैन आत्माओं को तृप्त करने के लिए जानी जाती है। आज प्राचीन ज्ञान-विज्ञान के सकारात्मक पहलुओं के प्रचार-प्रसार की जरूरत है। गौरतलब है कि विश्व की विभिन्न भाषाओं के साहित्य और संस्कृति में या आधुनिक भारत में जो ज्ञान और सूचना का भंडार आज हम देख रहे हैं, उन सबका उत्स भारत की सनातन समृद्ध परंपरा में सहज ही दृष्टव्य है। बस जरूरत है हमें सांस्कृतिक साम्राज्यवाद से दृढ़तापूर्वक उबरने की या औपनिवेशिक मानसिकता से मुक्त होकर अपनी प्राचीन सांस्कृतिक उपलब्धियों पर गर्व करने की। एक बार कवि नागार्जुन की इन पंक्तियों पर इतरा कर तो देखिए-

''नए गगन में नया सूर्य जो चमक रहा है
यह विशाल भूखंड आज जो दमक रहा है
मेरी भी आभा है इसमें।''[7] ❑

संदर्भ सूची :

1. डॉ. कैलाश नाथ पाण्डेय, भाषा-विज्ञान का रसायन, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या-3
2. राम शरण शर्मा, प्राचीन भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड प्रकाशन, 2005, पृष्ठ संख्या - 209
3. राम शरण शर्मा, प्राचीन भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड प्रकाशन, 2005, पृष्ठ संख्या - 261
4. प्रो. हरेंद्र प्रसाद सिंहा, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी,प्रथम संस्करण 1963, पृष्ठ संख्या-2
5. कुलदीप कुमार (अनुवादक), इण्डिका, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, तृतीय संस्करण 2021, पृष्ठ संख्या -47
6. राम शरण शर्मा, प्राचीन भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड प्रकाशन, 2005, पृष्ठ संख्या - 293.
7. राजेश जोशी, नागार्जुन रचना संचयन, 'मेरी भी आभा है इसमें' (कविता), साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या-175

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

प्रसंग

भूमंडलीकरण : भाषा, संस्कृति और साहित्य

डॉ. गिरधारी लाल लोधी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी
देव सुंदरी मेमोरियल महाविद्यालय
झाझा, 811308
अंगीभूत इकाई मुंगेर विश्वविद्यालय,
मुंगेर (बिहार)
7000185069
giridhari1996@gmail.com

सारांश :

भूमंडलीकरण ने पूरे विश्व को एक गाँव बना दिया है। लेकिन इसका विकास प्रतिस्पर्धात्मक हो रहा है, इसका विकास विचार, सूचना, विज्ञान के क्षेत्र में जिस प्रकार से हो रहा है उसी प्रकार क्षमा, करुणा, दया, अहिंसा, संवेदना, मैत्री, शांति के पक्ष में भी होना चाहिए। भाषा के दृष्टिकोण से देखा जाए तो अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ रहा है, लेकिन अन्य भाषाओं का भी विकास हो रहा है। संस्कृति में बदलाव भी दिखाई दे रहा है। इसे संधिविचि संस्कृति, उप-संस्कृति का संगम, नवाचार आदि के माध्यम से समझा जा सकता है। भूमंडलीकरण के प्रभाव से साहित्य में नगरीय जीवन, कंपनियों के पैकेज में काम करने वाले पात्रों, तकनीकी का प्रयोग करने वाले पात्रों आदि का चित्रण लेखकों द्वारा किया जा रहा है।

मूल शब्द : भूमंडलीकरण, स्पर्धा, विश्व समाज, नगरीय जीवन।

प्रस्तावना :

'वसुधैव कुटुंबकम' भारत का प्राचीन दर्शन रहा है, जो संपूर्ण विश्व को एक परिवार, इकाई के रूप में देखने, समझने और जीने की प्रेरणा देता है। सामान्य जीवन में प्रयोग आने वाली आवश्यकताएँ, भोजन, कपड़ा, दवाइयाँ, कुर्सियाँ, टेबल, मोबाइल, कंप्यूटर आदि अन्य वस्तुएँ, जिनमें से कई भूमंडलीय माध्यम से हम तक पहुँचती हैं। इन आवश्यकताओं के निर्माण में हो सकता है कच्चा माल किसी एक देश से निकाला गया हो, उस कच्चे माल को निर्मित करने का ज्ञान किसी दूसरे देश के पास हो, उत्पादन किसी तीसरे देश की सहायता से हुआ हो। इस प्रकार विश्व के सभी लोग किसी-न-किसी प्रकार से एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। केवल वस्तु उत्पादन, वितरण की निर्भरता ही नहीं अपितु शिक्षा, कला, साहित्य का क्षेत्र भी प्रभावित होता है। मिथिलेश वामनकर ने लिखा है- *''भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में देश एक-दूसरे पर परस्पर निर्भर हो जाते हैं और लोगों के बीच की दूरियाँ घट जाती हैं। एक देश अपने विकास के लिए दूसरे देशों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए सूती कपड़े के उद्योग में महत्वपूर्ण नाम में से एक जापान, भारत या अन्य देशों में पैदा हुई कपास पर निर्भर करता है। काजू के अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रमुख भारत, अफ्रीकी देशों में पैदा हुए कच्चे काजू पर निर्भर करता है। हम सब जानते हैं कि अमेरिका का सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग किस सीमा तक भारत और*

अन्य विकासशील देशों के इंजीनियरों पर निर्भर करता है। भूमंडलीकरण में केवल वस्तुओं और पूँजी का ही संचलन नहीं होता, अपितु लोगों का भी संचलन होता है।'' (वामनकर)

भूमंडलीकरण को स्पष्ट करते हुए और इसका प्रारंभ कब से हुआ- इस संबंध में प्रो. नवल किशोर का विचार इस प्रकार है- *''भूमंडलीकरण का सही शाब्दिक अर्थ लिया जाए और इसे मनुष्य की घुमंतू प्रवृत्ति से जोड़ा जाए तो इसकी शुरुआत सभ्यता के प्रारंभिक चरण से ही मानी जा सकती है। लेकिन आज यह शब्द (पद) विशेष राजनीतिक-आर्थिक संदर्भ में प्रयुक्त होता है और हमारे यहाँ इसका प्रयोग उदारीकरण की नई आर्थिक नीतियों के साथ ही होने लगा है। इसकी शुरुआत पिछली सदी के अंतिम चरण से मानी जा सकती है। भूमंडलीकरण का मतलब है मुक्त व्यापार अर्थात विकसित देशों से विकासशील और पिछड़े देशों में वस्तुओं का खुला आयात। भूमंडलीकरण के साथ जिस बाजारवाद की शुरुआत होती है उसका मतलब होता है- उपभोक्ता संस्कृति का प्रसार और इसके लिए विकासशील देशों और पिछड़े देशों में ऐसा अर्थतंत्र विकसित होता है, जिससे बाजार में पूँजीवादी देशों की वस्तुएँ निर्बाध रूप से आने लगती हैं।''* (श्रीमाली, 2014 पृ.51)

भूमंडलीकरण का भाषा व्यवहार पर प्रभाव :

''हिंदी दुनिया की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है, जबकि भारत में बमुश्किल से पाँच फीसदी लोग अंग्रेजी समझते हैं। यही पाँच फीसदी लोग बाकी भाषा-भाषियों पर अपना प्रभुत्व जमाए हुए हैं। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं पर अंग्रेजी के इस दबदबे का कारण गुलाम मानसिकता तो है ही, उससे भी ज्यादा भारतीय विचार को लगातार दबाना और चंद कुलीनों के आधिपत्य को बरकरार रखना है।'' (टूली, 2009) भूमंडलीकरण की बात शुरू की जाए तो सबसे पहले हम भाषा का ही सवाल ले लें- अंग्रेजी और भारतीय भाषाओं का अंतरसंबंध। जब मैकाले ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा की शुरुआत की थी, तब भूमंडलीकरण का सवाल नहीं था। अंग्रेजी सत्ता हमें विश्व-नागरिक बनाने के लिए अंग्रेजी नहीं पढ़ा रही थी। उपनिवेशवादी दौर में उन्हें अपने लिए अंग्रेजी पढ़े-लिखे कारकुन चाहिए थे। इंग्लिस्तान के विधि-विधान और कानून को देश में लागू करने के लिए न्यायाधीश और वकील चाहिए थे। भारत में वकीलों का तबका ही पहला अंग्रेजी पढ़ा-लिखा तबका था। तब की अंग्रेजी शिक्षा और आज की अंग्रेजी शिक्षा में अंतर है। आज भारत की अंग्रेजी हमें अपने ही देश में व्यक्तित्वहीन बनाती है और साथ ही हमें विश्व-बाजार में विशअव-नागरिक बनाती है। भूमंडलीकरण की स्पर्धा में यह हमारी सहायक भी है। (कमलेश्वर, 2001)

भूमंडलीकरण के कारण भाषा कई प्रकार से प्रभावित हुई है। एक ओर भूमंडलीकरण ने भाषा को तकनीकी रूप से समृद्ध किया है, वहीं दूसरी ओर मातृभाषा पर विदेशी भाषाओं का प्रभाव भी दिखाई पड़ता है। वैश्विकरण एक परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में उभरा है, जो भौगोलिक सीमाओं को पार करता है, समाजों, अर्थव्यवस्थाओं और संस्कृतियों को अभूतपूर्व तरीकों से जोड़ता है। जैसे-जैसे दुनिया तेजी से आपस में जुड़ती जा रही है, भाषाओं पर वैश्विकरण का प्रभाव काफी दिलचस्पी और जाँच का विषय बन गया है। इस घटना का भाषायी विविधता, भाषा की जीवंतता और सांस्कृतिक पहचान पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह के परिणाम दिखाई देता है। आर्थिक, तकनीकी और सांस्कृतिक ताकतों के बीच जटिल अंतरक्रिया ने भाषायी परिवर्तनों के एक जटिल जाल को जन्म दिया है, जिसमें वैश्विक भाषाओं के प्रभुत्व से लेकर स्थानीय बोलियों के खतरे तक शामिल हैं।

भाषाओं पर वैश्विकरण के प्रभावों का विश्लेषण भाषायी परिदृश्यों की गतिशील और विकसित प्रकृति में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, जो दुनिया भर के समुदायों के सामने आने वाली चुनौतियों और अवसरों पर प्रकाश डालता है। वैश्विकरण ने दुनिया को एक वैश्विक गाँव में बदल दिया है, इस बढ़ते अंतर्संबंध का विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं पर मिश्रित प्रभाव पड़ा है, जिनमें से एक भाषा है। नई तकनीकी प्रगति के कारण दुनिया भर में क्रॉस-कम्युनिकेशन में वृद्धि के परिणामस्वरूप स्पेस-टाइम संपीड़न हुआ है। इसने नई संकर भाषाओं के उदय को सुगम बनाया है, जिन्हें क्रेओल्स या पिजिन्स के रूप में जाना जाता है, उदाहरण के लिए हिंग्लिश।

मीडिया, प्रौद्योगिकी और संस्कृतियों के वैश्विकरण ने छोटी, क्षेत्रीय भाषाओं की कीमत पर मुट्ठी भर प्रमुख भाषाओं को जन्म दिया है। इस प्रकार कई स्थानीय भाषाएँ अब तेजी से लुप्तप्राय और विलुप्त होती जा रही हैं। उदाहरण के लिए, लुप्तप्राय भाषा परियोजना के अनुमान के अनुसार दुनिया की 7000 भाषाओं में से चालीस प्रतिशत लुप्त होने का खतरा है। इस प्रकार वैश्विकरण का भाषा पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह का प्रभाव पड़ता है। यह सांस्कृतिक आदान-प्रदान और भाषायी समृद्धि को बढ़ावा देता है, लेकिन इसका परिणाम भाषाओं के समरूपीकरण और भाषायी विविधता में कमी के रूप में भी हो सकता है। इस संबंध में भाषायी विविधता को संरक्षित करने और उसका जश्न मनाने के प्रयास महत्वपूर्ण हैं।

भूमंडलीकरण का सांस्कृतिक प्रभाव :

भूमंडलीकरण के सांस्कृतिक प्रभाव से तात्पर्य दुनिया भर में विचारों, अर्थों और मूल्यों को इस तरह से प्रचारित-प्रसारित करना है, जिससे सामाजिक संबंधों की प्रगाढ़ता हो। सांस्कृतिक प्रभाव आम उपभोग से पहचानी जाती है, जो इंटरनेट, लोकप्रिय संस्कृति, मीडिया और अंतर्राष्ट्रीय यात्रा द्वारा फैल गई है। इस प्रक्रिया ने उपयोगिता विनिमय और उपनिवेशीकरण की प्रक्रियाओं को एक करने का प्रयास किया है, जिसका दुनिया भर में सांस्कृतिक अर्थ ले जाने का लंबा इतिहास है। संस्कृतियों का संचलन व्यक्तियों को राष्ट्रीय और क्षेत्रीय सीमाओं को पार करने वाले विस्तारित सामाजिक संबंधों में भाग लेने में सक्षम बनाता है। ऐसे सामाजिक संबंधों का निर्माण और विस्तार केवल भौतिक स्तर पर नहीं देखा जाता है। इस प्रक्रिया में साझा मानदंडों और ज्ञान का गठन शामिल है, जिसके साथ लोग अपनी व्यक्तिगत और सामूहिक सांस्कृतिक पहचान को जोड़ते हैं। यह विभिन्न आबादियों और संस्कृतियों के बीच बढ़ती हुई परस्पर जुड़ाव लाता है।

लेकिन भूमंडलीकरण से अलग जब राष्ट्रीयकरण का सवाल आता है तो अंग्रेजी के कारण हमारा संपर्क और संबंध अपने ही देश के दलित, शोषित और अशिक्षित वर्ग से टूट जाता है। इतना ही नहीं, सभी भारतीय भाषाओं में हमारी सोच का प्राकृतिक प्रवाह बाधित होता है। ...कहे-अनकहे तरीके से यहीं से हमारा सांस्कृतिक संकट शुरू होता है। हम विभाजित व्यक्ति बन जाते हैं। खुद अपने सांस्कारिक स्रोतों, आस्था के प्रतीकों, अपने आस-पास की संवेदनाजन्य ध्वनियों और अपने जन-सामान्य से कट जाते है। सच्चाई यही है कि वैश्विक बाजार की पूरी परिकल्पना उस अमीर को लेकर की गई है, जो साधन-संपन्न है। उसे ही इस बाजार में मानव होने का दर्जा दिया गया है। उसी के अधिकार मानवाधिकार हैं। मानव मूल्य अब गौण हो गए हैं। (कमलेश्वर, 2001) इस बाजारवाद का गरीब देशों और उसके गरीब से कोई लेना-देना नहीं है। सही अर्थों और संदर्भों में यदि इस बाजारवाद और वैश्विकरण को देखा जाए तो यह पूँजीवादी देशों के अमीरों की क्रांति है। जब इसका अपने ही देशों के गरीबों से कुछ लेना-देना नहीं है तो हम जैसे गरीब देशों से उसका क्या सरोकार हो सकता है? (कमलेश्वर, 2001)

लेकिन सरोकार है! उसका सरोकार है हमारे बाजार से। हमारा वह बाजार जो गरीबों ने अपने पुश्तैनी धंधों और श्रम से तैयार किया है। पुश्तैनी धंधों और खेतीबाड़ी के सहारे हमारा स्वदेशी बाजार निर्मित हुआ। इसी स्वदेशी बाजार के मुनाफे पर जीने वाले वर्गों और अंग्रेजी शिक्षा के सहारे हमारा भारतीय मध्यवर्ग पैदा हुआ। यही कुलीन नौकरशाह मध्यवर्ग हमारी नीतियों और जीवित रहने के सिद्धांतों को तय और लागू करता है। यही वर्ग है, जो आज भूमंडलीकरण का स्वागत कर रहा है। जन्मना भारतीय होते हुए भी यह कर्मणा भारतीय नहीं है। इन मध्यवर्गीय घरों में चलकर देखिए तो आपको देशी-विदेशी पेंटर्स के सस्ते प्रिंट्स तो जरूर मिल जाएँगे, पर परिवार के पूर्वजों की तस्वीरें अब इनके घरों में नहीं मिलेंगी। माँ-बाप यदि जीवित भी हुए तो भी वे मध्यवर्गीय बाबुओं के बंगलों या कोठियों में नहीं मिलेंगे। वे गाँव या कस्बे में अपनी वृद्धावस्था काट रहे होंगे। सांस्कृतिक दृष्टि से यदि देखें तो इससे हमारे पारिवारिक और सामुदायिक संबंधों के पैमाने बदल गए हैं। हमारी क्षमा, दया और करुणा के आयाम परिवर्तित हुए हैं। जिस घटना-दुर्घटना, अनाचार या अत्याचार पर बूढ़ी दादी के आँसू निकल पड़ते हैं, उसी घटना-दुर्घटना पर नातिन या पोतिन के आँसू नहीं निकलते, पोतिन या नातिन को वो आँसू तर्कसंगत नहीं लगते। इस

भूमंडलीकरण की दुनिया में क्षमा, धीरज और बर्दाश्त जैसे मूल्य तिरोहित हो गए हैं। दया अब कहाँ है? करुणा के लिए हमारे मानस में जगह कहाँ रह गई है? ...यही है संस्कृति का वीभत्स विरूपण! भूमंडलीकरण लगातार हमारी संस्कृति को विकृत करता जा रहा है। हमारे सदियों पुराने मानवीय सरोकारों और संस्कारों को तोड़ता जा रहा है...। (कमलेश्वर, 2001)

गाँव के करघों पर जो सूती कपड़ा बनता था, उसके कुर्ते पीले रंग में रंगकर वसंत के दिन पहने जाते थे। यहाँ तक कि मध्यवर्गीय कुलीन भी कम-से-कम अपना रुमाल पीले रंग में रंग लेते थे। लेकिन अब बाजारवाद के चलते सिंथेटिक कपड़ों पर कोई देशी रंग नहीं चढ़ता। कृषि प्रधान भारत में अब बच्चे सरसों के खेत देखते हैं तो खुश तो बहुत होते हैं, पर यह भी पूछते हैं कि इतने सुंदर खेत किस चीज के हैं? वसंत पर सरस्वती पूजा और लेखनी की पूजा की परिपाटी तो अब भी निभाई जाती है, पर साहित्य, ग्रामीण सभ्यता, प्रकृति के साथ जो उत्सवधर्मी तादात्म्य था, वह अब खंडित हो चुका है। यही संस्कृति की क्षति है। (कमलेश्वर, 2001)

भूमंडलीकरण का साहित्य पर प्रभाव :

भूमंडलीकरण का प्रभाव विश्व समाज पर दूर तक पड़ा है। इसलिए साहित्य का उससे प्रभावित होना स्वाभाविक है। साहित्य-विशेषत: कथा साहित्य एक स्तर पर अपने समय का साक्षी भी होता है। समयचक्र में इंसानी हालातों और जज्बातों को वह दर्ज करता है। साहित्य पर उसके प्रभाव को हम किस तरह देखते हैं, यह देखने वालों के नजरिए पर बहुत कुछ निर्भर करता है। जैसे बाजार की माँग को पूरा करने वाले उपन्यास हैं, जिन्हें हम लुगदी साहित्य की श्रेणी में रखते हैं, खूब बिकते हैं। हिंदी-आलोचना में एक ऐसा संप्रदाय भी इधर प्रकट हुआ है, जो ऐसे बाजारू उपन्यासों को लोकप्रियता के नाम पर मान देना चाहता है और उनके जरिए हमारे समय के आदमी की लिप्साओं, इच्छाओं और जरूरतों का अध्ययन करने की वकालत करता है। इसका प्रभाव यह हुआ है कि जिन उपन्यासों को हम साहित्य की कसौटी पर कसते हैं और तब उनका महत्व निर्धारण करते हैं तो उस महत्व-निर्धारण में उनकी बिक्री की संख्या भी एक घटक बनता जा रहा है। आज हर चीज बाजार की माँग पर निर्धारित होती जा रही है, लगता है कि थोड़े ही दिनों में किसी कथाकृति का अंतिम महत्व भी उसके बाजार मूल्य से ही निर्धारित होगा। अभी तो हिंदी के किसी बहु विक्रेय उपन्यास का नाम लेना आसान नहीं होगा, लेकिन हम अंग्रेजी के कथाकार चेतन भगत के उपन्यासों के उदाहरण से इसे समझ सकते हैं। जब बाजार साहित्य को प्रभावित करने लगता है तो लेखक की रचनात्मकता पर भी उसका प्रभाव पड़ता है। हिंदी अभी खुशकिस्मत है कि साहित्यिक दृष्टि से 'पल्प लिटरेचर' या तथाकथित 'पॉपुलर लिटरेचर' को उतनी अहमियत नहीं मिली है। हमारी अग्रपंक्ति का जो कथा लेखन है, वह वास्तव में बाजारवाद के प्रतिरोध का ही साहित्य है। (श्रीमाली, 2014)

भूमंडलीकरण की नीतियों ने चूँकि आम आदमी को विपन्न बनाया है और हमारी भाषा का अच्छा साहित्य आम आदमी का पक्षधर साहित्य है, इसलिए केवल कथा-साहित्य को ही नहीं, बल्कि समग्र साहित्य को एक तरह से पूँजीवाद के प्रतिरोध का और अपसंस्कृति के प्रतिवाद का साहित्य कहा जा सकता है। पूँजीवाद समर्थक कितना ही कहें की समाजवाद का अंत हो गया है, हमारे साहित्य में हम उसे एक जीवंत चिंताधारा के रूप में देखते हैं। मार्क्सवाद के नाम पर न किसी खास राजनीतिक दल की पक्षधरता आज हिंदी लेखकों में है और न पुरानी संकीर्ण वर्गवादी कट्टरता और न भविष्य का कोई संभव यूटोपिया। अधिकांश युवा लेखकों में आम आदमी के प्रति गहरी सहानुभूति है, क्योंकि वे भी ज्यादातर साधारण जनता के बीच से ही आते हैं। जिनमें राजनीतिक पक्षधरताएँ स्पष्ट दिखाई भी देती हैं, उनमें भी खुलापन है और वे कट्टर मतवादी रूझान नहीं रखते। मार्क्सवाद के साथ वे अपने को गांधी से भी नए सिरे से जोड़ते हैं। (श्रीमाली, 2014)

इस संबंध में आलोचक-विचारक प्रो.नवल किशोर ने साक्षात्कार में कहा है- *''लेखक भूमंडलीकरण को विषय बनाकर कथा-लेखन नहीं करता। वह उसके कारण मानवीय स्थितियों में जो विक्षोभ उत्पन्न हुआ है और जीता जागता मनुष्य जो त्रास झेल रहा है, उसी को लेकर रचना करता है। अपनी रचना में सीधे न वह आर्थिक कारणों को गिनाता है और न ही राजनीतिक कारणों*

को। ये कारण हैं तो भी इन्हें पृष्ठभूमि में रखते हुए वह जीते-जागते इंसानों की जीवन कथाएँ ही सुनाता है। ऐसे में हम भूमंडलीकरण को इतना तूल नहीं दें कि मनुष्य और उसके परिवेश की अंतर्निबद्ध कथा से हमारा ध्यान हट जाए।'' (श्रीमाली, 2014)

भूमंडलीकरण के कारण मुनष्य का जिस निर्मम पूँजीवादी यथार्थ से पाला पड़ा है, वह विकास नाम पर उसके वर्तमान और भविष्य के विनाश का यथार्थ है। यहाँ ओजोन-आवरण में छिद्र होना, ग्लेशियरों का पिघलना, मौसमों में बदलाव, वनों का उजड़ना, प्रजातियों का लोप होना, धुआँ भरे शहरों में सीमेंटी टावरों का फैलाव और दलदली-जमीनों पर झुग्गी-झोपड़ियों की नीम अंधेरी दुनियाओं का बसाव-इस सबके बाबत केवल संकेत ही किया जा सकता है। क्योंकि यथार्थ का प्रत्यक्ष चित्रण कथा साहित्य में अधिक होता है, इसलिए उपन्यासों और कहानियों में इसे हम अधिक पढ़ रहे हैं। हिंदी में अभी तक कोई ऐसा उपन्यास जरूर नहीं आया है, जिसे वैसी प्रमुखता दी जा सके जैसी हम समय-सापेक्ष यथार्थ चित्रण के लिए 'रेणु' के मैला आँचल को देते हैं, जिसका संबंध ग्रामीण और आँचलिक जीवन से था। आज हिंदी में इधर ऐसी कहानियाँ खूब आई हैं, जिनमें बड़ी-बड़ी कंपनियों में काम करने वाले युवाओं की ऐसी जिंदगियों को हम पहचानते हैं, जहाँ पैसा तो खूब है, किंतु एक ऐसी भागती-दौड़ती आपाधापी है, जो उन्हें चैन नहीं लेने देती और युवक-युवतियों के बीच जहाँ नए और बराबरी के रिश्ते कायम हुए हैं, लेकिन साथ ही संबंधों में एक अनित्यता भी आई है। (श्रीमाली, 2014)

भूमंडलीकरण अर्थात नव-पूँजीवाद के कारण जो नए किस्म का यथार्थ आया है, उसने समाज को अनेक स्तरों पर प्रभावित किया है। बाजारवाद या उपभोक्तावाद ने मनुष्य को लगातार संवेदनहीन बनाया है। पैसे ने हमेशा मानवीय रिश्तों पर बुरा असर डाला है, लेकिन आज तो येन-केन-प्रकारेण पैसा कमाना ही समाज में चरम आदर्श बन गया है। पूँजीवाद का नया मंत्र है- 'सपने बेचना', ये सपने आदमी को एक मायावी संसार में ले जाते हैं तथा उसे छद्म सुख का भ्रम देते हैं। ऐसे उपन्यास के उदाहरण के लिए जिसमें विज्ञापन के इस कमाल को दर्शाया गया है हम अलका सरावगी के उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' का जिक्र कर सकते हैं। बाजार के विस्तार के साथ ही भारतीय मध्यवर्ग के युवाओं के लिए बड़ी-बड़ी कंपनियों में नए अवसर पैदा हुए हैं। ज्यादातर ये आउटसोर्सिंग वाली कंपनियाँ हैं, जो विदेशी निगमों के लिए बहुत सस्ता श्रम मुहैया कराती हैं। इनमें नए नौकरी-पेशाओं को लेकर लिखी गई रचनाओं में ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास का उल्लेख किया जा सकता है। नए अर्थतंत्र ने जिस तरह भूमंडलीकृत देह-व्यापार और अपराध जगत को बढ़ाया है, उसके उदाहरण के लिए प्रदीप सौरभ का 'मुन्नी मोबाइल' उल्लेखनीय है। ये उपन्यास इसलिए भी उल्लेखनीय हैं कि ये केवल यथार्थ के ऊपरी स्तर पर नहीं रचे गए हैं, बल्कि इस अर्थतंत्र का मानवीय संबंधों पर जो टूटनकारी असर हुआ है उसको दिखाते हैं। इस प्रसंग में काशीनाथ सिंह के 'रेहन पर रग्घु' का विशेष उल्लेख आवश्यक है। यह केवल युवा वर्ग के निष्क्रमण की कहानी ही नहीं कहता, बल्कि उसके अलावा भी औरत-आदमी के बदलते रिश्तों की बदलती नैतिकता को सहानुभूति और संवेदना से देखता है। (श्रीमाली, 2014)

संचार-क्रांति अभिव्यक्ति-रूपों पर गहरा असर डाल रही है। हमारे देश में कंप्यूटर और इंटरनेट का प्रसार पिछले दो दशकों में ही हुआ है। जब भी संचार साधनों में बदलाव आता है तो साहित्य पर उसका प्रभाव लक्षित होता ही है। फिल्म तकनीक का प्रभाव लेखन विधि पर स्पष्ट रूप से पड़ा था। रेडियो की प्रमुखता के जमाने में ध्वनि-नाटकों और एकांकियों का खूब चलन रहा था। समाचार पत्रों में रिपोर्ट लेखन के प्रभाव से साहित्य में रिपोर्ताज-लेखन अस्तित्व में आया था, जिसका अत्यंत कलात्मक अभिनिवेश 'रेणु' के कथा-साहित्य में हमें मिलता है। दूरदर्शन के विस्तार के साथ कथा-लेखन में वर्णानात्मकता का महत्व कम होता है और दृश्यात्मकता का अधिक। हिंदी में अभी ग्राफिक लेखन अधिक नहीं मिलता है, लेकिन अंग्रेजी में तो ग्राफिक कथा का अलग स्वरूप विकसित हो-सा गया है। मोबाइल के प्रचार-प्रसार के साथ ऐसे उपन्यास अस्तित्व में आए हैं, जो पूरे-के-पूरे मोबाइल पर उपलब्ध हैं। रचना में तकनीक का महत्व है, लेकिन तकनीक अपने आप में रचना को महत्वपूर्ण नहीं

बनाती। उस तकनीक का श्रेष्ठ सर्जक अपने ढंग से यदि एक अनोखा इस्तेमाल करता है तो उसकी रचना विलक्षण हो जाती है। उदाहरण के लिए अलका सरावगी का उपन्यास 'कलिकथा वाया बाईपास' इसीलिए महत्वपूर्ण हो सका, क्योंकि उसमें केवल अपने समय का यथार्थ ही नहीं था, बल्कि उस यथार्थ की प्रस्तुति भी मुद्रण की नई तकनीक के सहारे प्रस्तुत की गई थी। अलका सरावगी ने अपने दूसरे उपन्यास 'शेष कादम्बरी' में फोन की एस.टी.डी. पद्धति का उपयोग किया था, जो आज के मोबाइली जमाने में बहुत पुरानी दिखाई देती है। (श्रीमाली, 2014) ई-मेल और ब्लॉग का बहुत अच्छा उपयोग मनीषा कुलश्रेष्ठ ने अपने उपन्यास 'शिगाफ' में किया है। इन पद्धतियों का प्रभाव हम अनेक रचनाआरों की कृतियों में लक्षित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए 'महुआचारित' में आख्यान पद्धति की जो मितकथनी शब्द का है, बहुत संभव है कि उस पर मोबाइल की 'मैसेज' पद्धति का प्रभाव भी कुछ पड़ा हो। (श्रीमाली, 2014)

भूमंडलीकरण का एक पक्ष हिंदी साहित्य को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान भी दिला रही है। उदाहरण के तौर पर गीतांजलि श्री के उपन्यास 'रेत समाधि' को साल 2022 में अंतर्राष्ट्रीय बुकर पुरस्कार मिला। हिंदी में लिखा गया पहला उपन्यास है, जिसे यह पुरस्कार मिला। इस उपन्यास का अंग्रेजी अनुवाद डेजी रॉकवेल ने 'टूंब ऑफसैंड' नाम से किया था। इसी क्रम में 2 मार्च, 2023 को 'पेन अमेरिका' संगठन द्वारा अंतर्राष्ट्रीय साहित्य में योगदान, चिरस्थायी, मौलिकता और उत्कृष्ट शिल्प कौशल के लिए 59वाँ पेन नाबोकोव पुरस्कार विनोद कुमार शुक्लजी को प्राप्त हुआ। हिंदी साहित्य कहीं-न-कहीं, चाहे वह अनुवाद के माध्यम से हो या किसी अन्य कारण से अंतर्राष्ट्रीय पहुँच प्राप्त कर रही है तो इसके पीछे भूमंडलीकरण ही है।

भारत एक बहुभाषी वाला देश है, साथ ही एक बहुत बड़ा बाजार भी है। विस्तार की इस शर्त में अंग्रेजी भाषा को ज्ञान-विज्ञान, तकनीकी की भाषा के रूप में पेश किया जा रहा है। इसका प्रभाव हिंदी साहित्य पर भी पड़ा है। भूमंडलीकरण ने हिंदी को केवल विज्ञापन की भाषा तक ही सीमित कर दिया है। पहले दूरदर्शन, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं में कविता कहानी की एक जगह हुआ करती थी, लेकिन धीरे-धीरे इसका स्थान कम होता जा रहा है। आज की पीढ़ी टेलीविजन के जरिए सारी दुनिया को अपने आसपास घटते देख रही है, इससे जो नए संबंधों का विकास हुआ है, नए समस्याओं का जन्म हुआ है और नए मर्यादाओं का निर्माण हुआ है। उससे आज का हिंदी लेखक संवाद नहीं बना पा रहा है। इसी कारण आज का युवा, हिंदी लेखक को पढ़ने के बजाए चेतन भगत जैसे लेखकों या उसके हिंदी अनुवाद को पढ़ना पसंद करते हैं। आज का हिंदी लेखक जीवन की सच्चाई को पकड़ने के बजाए महान साहित्य रचना चाहता है। जब इस ग्रंथि से मुक्ति मिल जाएगी और लेखक उन विषयों पर लेख लिखेगा, जिसमें संवेदनशीलता की सच्चाई हो तो शायद ऐसी चीज लिखी जा सकती है, जिसे अधिक मात्रा में पाठकों की संख्या में वृद्धि होगी। यह सच है कि अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है, लेकिन साथ ही भाषा के स्तर पर एक नई शब्दावाली का भी गठन हो रहा है, जो आज के जीवन यथार्थ को पकड़ने में मददगार हो रही है और इस तरह हिंदी एक समृद्ध भाषा बन रही है।

निष्कर्ष : भूमंडलीकरण ने पूरे विश्व को एक गाँव बना दिया है। लेकिन इसका विकास प्रतिस्पर्धात्मक हो रहा है, इसका विकास विचार, सूचना, विज्ञान के क्षेत्र में जिस प्रकार से हो रहा है, उसी प्रकार क्षमा, करुणा, दया, अहिंसा, संवेदना, मैत्री, शांति के पक्ष में भी होना चाहिए। भाषा के दृष्टिकोण से देखा जाए तो अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ रहा है, लेकिन अन्य भाषाओं का भी विकास हो रहा है। संस्कृति में बदवाल भी दिखाई दे रहा है। इसे संधिविचि संस्कृति, उप-संस्कृति का संगम, नवाचार आदि के माध्यम से समझा जा सकता है। भूमंडलीकरण के प्रभाव से साहित्य में नगरीय जीवन, कंपनियों के पैकेज में काम करने वाले पात्रों, तकनीकी का प्रयोग करने वाले पात्रों आदि का चित्रण लेखकों द्वारा किया जा रहा है। ❑

संदर्भ :

कमलेश्वर (24 सितंबर, 2001), भूमण्डलीकरण : साहित्य और संस्कृति . धर्मवीर स्मृति हिंदी महिमा व्याख्यान
टूली, मार्क (26 अप्रैल, 2009), प्रभात खबर
वामनकर, मिथिलेश, भूमंडलीकरण
श्रीमाली, ललित (अगस्त 2014), अक्षरपर्व, रायपुर

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

सामासिक संस्कृति के संदर्भ में हिंदी भाषा और साहित्य

डॉ. रत्नेश कुमार यादव

सहायक आचार्य, हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग
जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय, राया सुचानी (बागला) जिला साम्बा
जम्मू एवं कश्मीर-181143
9560046944
ratnesh.hnd@cujammu.ac.in

शोध सार :

सामासिक संस्कृति का अर्थ कई संस्कृतियों के मिलन से है। अर्थात ऐसी संस्कृति, जिसमें समाज की अनेक संस्कृतियों का मेल हो। राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया के संदर्भ में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका की बात को आज समाजशास्त्री और भाषा वैज्ञानिक समान रूप से स्वीकार करने लगे हैं। यह बात इसलिए भी महत्व की है कि भाषा अगर एक ओर राष्ट्रीय एकीकरण का महत्वपूर्ण उपादान बन सकती है तो वहीं दूसरी ओर वह समाज में तनाव, द्वंद, विद्वेष और विघटन की प्रवृत्ति को भी जन्म दे सकती है। अत: यह आवश्यक है कि भाषा की इस दुहरी संभावना को हम सजग भाव से समझें और एक ऐसी भाषा नीति को अपनाएँ, जो देश के आर्थिक और सामाजिक विकास में सहायक हो, हमारी बहुभाषिक यथार्थता के अनुकूल हो और जो राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया में साधक हो।

बीज शब्द :

राष्ट्रीय एकीकरण, हिंदी नवजागरण, राष्ट्र निर्माण, उदारता, सहिष्णुता, सामासिक संस्कृति।

मूल आलेख :

हिंदी के महान साहित्यकार एवं खड़ी बोली हिंदी के जन्मदाता माने जाने वाले भारतेंदु हरिश्चंद्र ने कहा था, 'निजभाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के मिटै न हिय को सूल।' भाषा संस्कृति की लालित्यपूर्ण अभिव्यक्ति होती है। किसी भी समृद्ध भाषा का गठन व विस्तार उस राष्ट्र के गठन विस्तार की अभिव्यक्ति होता है। इस ढंग से हिंदी भाषा ने जातीय अस्मिता, हिंदी नवजागरण को प्रतिस्थापित करने व राष्ट्रीय भावबोध को उन्नत करने का महनीय कार्य किया है। हिंदी भाषा ने राष्ट्रीय आंदोलन में अपने अंतर्निहित सांस्कृतिक एवं सामाजिक एकीकरण के सूत्रों के माध्यम से इस देश की आत्मा को पुनर्गठित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। नि:संदेह स्वाधीनता आंदोलन को जनाधार दिलवाने में हिंदी भाषा व साहित्य की महती भूमिका रही है। द्विवेदी युग के कवि मैथिली शरण गुप्त 'भारत भारती' के माध्यम से भारतीयों के मन में अपने इतिहास और अपनी

संस्कृति के प्रति गौरव बोध जागृत कर रहे थे। तो 'पुष्प की अभिलाषा' के माध्यम से माखनलाल चतुर्वेदी मातृभूमि की रक्षा के लिए शीश कटाने वालों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कर भारतीयोंके मन में देश-भक्ति का संचार कर रहे थे। भारत के स्वाधीनता आंदोलन में हिंदी का बड़ा महत्व रहा। महात्मा गांधी गुजराती थे, सी. राजगोपालाचारी मद्रासी थे, राजा राम मोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर व देवी प्रसाद चट्टोपाध्याय जैसे महान दार्शनिक व क्रांतिकारी बंगाली थे। ऐसे ही देश के अलग-अलग प्रांतों के क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता आंदोलन में खुद को खपा दिया। उन्होंने स्वाधीनता का संदेश देश भर में जन-जन तक पहुँचाने के लिए हिंदी को चुना। राष्ट्र निर्माण की दिशा में काम करने वाले बुद्धिजीवियों की राय है कि सभी क्षेत्रीय बोलियों का परस्पर सम्मान होना चाहिए। सबकी एक राय होनी चाहिए कि हिंदी सभी क्षेत्रीय भाषाओं की बड़ी बहन है। नवजागरण आंदोलन के कारण जो नवीन चेतना जागृत हो रही थी, उसका साहित्य पर भी गहरा असर पड़ रहा था। इस दौर के लेखकों ने भारत की आधुनिक भाषाओं में नवजागरण के दौर के सामाजिक और राष्ट्रीय मुद्दों को अपने साहित्य का विषय बनाया। हिंदी भाषा और साहित्य के माध्यम से इसे समझा जा सकता है। संस्कृति व्यापक अर्थ में संपूर्ण मानव सभ्यता को अपने अंदर समाहित की हुई होती है। भाषा मानव चेतना की अभिव्यक्ति का एक माध्यम है। भाषा और साहित्य का संस्कृति के साथ अभिन्न संबंध रहा है। किसी भी संस्कृति के विकास के साथ-साथ भाषा और साहित्य का भी विकास होता है। संस्कृति जीवन की एक विधि है, जिसमें जीवन के अमूर्त भाव एवं विचार सम्मलित होते हैं। भाषा, साहित्य, कला, धर्म आदि का संबंध किसी-न-किसी रूप में संस्कृति से जुड़ा हुआ है। समाज की गति और विकास में भाषा, साहित्य और संस्कृति का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। संस्कृति का संबंध आंतरिक अनभूतियों से है, जिसमें मन और हृदय की पवित्रता निहित है। किसी भी राष्ट्र की एकता और अखंडता में भाषा एवं साहित्य की बहुत बड़ी भूमिका होती है। भाषा के रूप में हिंदी हमेशा से हमारे जीवन-मूल्यों एवं संस्कृति की सच्ची संवाहक रही है। हिंदी देश की राजभाषा होने के बाद भी जिस तरह दिन-प्रति दिन उपेक्षित होती जा रही है, यह एक विचारणीय प्रश्न है। उदारता, त्याग, सहिष्णुता, बंधुत्व तथा आपसी प्रेम-भाव भारतीय जीवन मूल्यों का आधार है। 'वसुधैव कुटुंबकम' की अवधारणा, विश्व कल्याण की भावना तथा सर्वधर्म समभाव का भाव इस भावना को और पुष्ट करता है। अनेकता में एकता भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता कही जा सकती है। अत: सामासिक संस्कृति के संदर्भ में हिंदी भाषा और साहित्य के योगदान को नाकारा नहीं जा सकता। इसमें हिंदी साहित्य के रचनाकारों और साहित्यकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारत अपनी संस्कृति के लिए विश्व में अपनी अलग पहचान रखता है। इसके सभी प्रदेश अपनी अमूल्य संस्कृति के लिए प्रसिद्ध हैं। संस्कृति शब्द मूलत: अंग्रेजी 'कल्चर' का हिंदी अनुवाद है। किसी भी देश, जाति या समुदाय विशेष की संस्कृति का अर्थ है वहाँ रहने वाले लोगों का रहन-सहन, इतिहास, दर्शन, परंपरा, विश्वास, धारणाएँ, पर्व-त्योहार, वेशभूषा, खान-पान इत्यादि। बाबू गुलाब राय के अनुसार, *''संस्कृति समाज की आचार संहिता है, क्योंकि इसके बिना समाज की रचना की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वही समाज का मार्गदर्शन भी करती है।''*[1] सामान्य शब्दों में कहा जाए तो मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए विचार और कर्म के क्षेत्र में जो सुधार एवं परिष्कार करता है उसे संस्कृति कहते हैं।

संस्कृति जीने का ढंग है। डॉ. रामवृक्ष बेनीपुरी के अनुसार, *''संस्कृति किसी समाज के उत्पाद संबंधों पर आधारित दर्शन, चिंतन कला, विज्ञान आदि की गतिविधियों का कुल योग है। संस्कृति समाज का सर्वकालिक और सार्वभौमिक तत्व नहीं, बल्कि वह मानव इतिहास के साथ-साथ विकसित हुई है। मनुष्य अपनी मानवीयता की प्राप्ति और प्रकृति पर अधिकार प्राप्त करने के लिए तथा अपने अस्तित्व की रक्षा करने के लिए उत्पादन करता है। वह आज जिस पद्धति से उत्पादन करता है, उसी के अनुसार उसके सामाजिक संबंध बनते हैं। यही वह आधार है, जिससे संस्कृति पैदा होती है और विकसित होती है। इसमें नैतिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, साहित्यिक- सभी विचारात्मक प्रक्रियाएँ शामिल हैं।''*[2] संस्कृति के विकास में मनुष्य ने प्रकृति के साथ अपने संबंध स्थापित कर अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करके आविष्कार किया और जो कमी रही उसे कला, संगीत और साहित्य के माध्यम से पूरा किया। इसी प्रकार संस्कृति का धीरे-धीरे विकास हुआ। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने संस्कृति को परिभाषित करते हुए कहा है कि *''नाना प्रकार के धार्मिक साधनों, कलात्मक प्रयत्नों और सेवा, भक्ति तथा योग मूलक अनुभूतियों के भीतर से मनुष्य इस महान सत्य के व्यापक और परिपूर्ण रूप को क्रमशः प्राप्त करता जा रहा है, जिसे हम संस्कृति शब्द द्वारा व्यक्त करते हैं। इनके अनुसार मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति है।''*[3] अतः हम कह सकते हैं कि मनुष्य के वह सभी विचार और क्रियाएँ, जो उसके जीवन का संस्कार करती हैं और जीवन के मार्ग को सुलभ और प्रशस्त बनाती हैं, वे सभी संस्कृति के अंदर समाविष्ट हैं।

भारत का इतिहास और संस्कृति मानव सभ्यता की शुरुआत से ही गतिशील रहे हैं। इसमें बहुरंगी विविधता और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत है। यह सिंधु घाटी सभ्यता से शुरू होकर भारत के दक्षिणी इलाकों तक फैली हुई है। यहाँ के आस-पास स्थित अनेक संस्कृतियों से लोगों का एकीकरण होता रहा है। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों- जिनमें यूनान, रोम, मिस्र, सुमेर और चीन की संस्कृति है, के समान ही प्राचीन है। समय के अनुसार परिवर्तन भारतीय संस्कृति की पहचान है। इसमें प्राचीन गौरवशाली मान्यताओं एवं परंपराओं के साथ नवीनता का समावेश भी दिखाई पड़ता है। भारतीय संस्कृति ने अनेक जातियों के श्रेष्ठ विचारों को अपने में समेट लिया है। भारतीय संस्कृति में यहाँ के मूल निवासियों के समन्वय की प्रक्रिया के साथ ही बाहर से आने वाले शक, हूण, यूनानी एवं कुषाण भी यहाँ की संस्कृति से घुल-मिल गए। अरबों, तुर्कों और मुगलों के माध्यम से यहाँ इस्लामी संस्कृति का आगमन हुआ। भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता उसकी सामासिकता है। अनेक जातियों के आक्रमण को सहने के बावजूद भारतीय संस्कृति ने अपनी पहचान नहीं खोई, बल्कि इसने अपना पृथक अस्तित्व बनाए रखा और नवागत संस्कृति की अच्छी बातों को उदारतापूर्वक ग्रहण कर अत्यधिक परिपक्व और सुदृढ़ किया। इसी विशेषता के कारण आज भारतीय संस्कृति में इतनी विभिन्नता होने के उपरांत भी एकता दिखाई देती है। भारत की सांस्कृतिक एकता ही उसकी आत्मा है।

आरंभ से ही भारत अलग-अलग धर्मों और जातियों का देश रहा है, जिनकी अपनी अलग-अलग संस्कृति रही है। इन धर्मों और जातियों के एक साथ मिलकर रहने के कारण यह संस्कृति एक-दूसरे को प्रभावित करती रही है। इस तरह से एक मिश्रित संस्कृति का विकास हुआ, जिसे सामासिक संस्कृति कहा जाता है। डॉक्टर गोपाल शर्मा के अनुसार, *''किसी देश की बहुधर्मी संस्कृति में सामान्य तत्वों के आधार पर समन्वित संस्कृति की धारणा स्थापित की जाती है और सामान्य तत्वों के साथ-साथ भिन्न तत्वों को यथावत स्वीकार करते हुए कालांतर में पारस्परिक आदान-प्रदान की आकांक्षा से उत्तरोत्तर समन्वय की एक कल्पित रूपरेखा तैयार की जाती है, जिसे कि हम सामासिक संस्कृति कह सकते हैं।''*[4] संस्कृति हमेशा गतिशील रहती है। जिस प्रकार हमारे सामाजिक और आर्थिक जीवन में बदलाव होता है, उसी प्रकार सांस्कृतिक जीवन में भी बदलाव होता है। जीवन के साथ-साथ संस्कृति भी बदलती है। जब भी दो संस्कृतियाँ मिलती हैं तो वह अपनी पुरानी चीजों को पीछे छोड़ कर कुछ नयापन लाती हैं, जिससे नई संस्कृति का विकास होता है। भारतीय संस्कृति आरंभ से

ही सामासिक रही है, क्योंकि यहाँ बाहर से आए हुए लोगों को कभी भी विदेशी नहीं माना गया, बल्कि उनके रीति-रिवाज, आचार-विचार को अपने में समाहित कर लिया गया है। डॉक्टर शंकर दयाल शर्मा ने भारत की सामासिक संस्कृति को स्पष्ट करते हुए कहा कि *''हमारे देश में भाषा, संस्कृति, जाति, धर्म और क्षेत्र की विविधताएँ हैं, लेकिन बावजूद इसके पूर्व से लेकर पश्चिम तथा उत्तर से लेकर दक्षिण तक के संपूर्ण भारत का चिंतन हमेशा एक जैसा रहा है। यह चिंतन कहीं तिरुल्लुवर के द्वारा तमिल में व्यक्त हुआ है तो कहीं संस्कृत में शंकराचार्य के द्वारा व्यक्त हुआ है। यदि हम इन सभी के चिंतन को देखें तो काल और क्षेत्र की बेहद विभिन्नताओं के बावजूद उनमें एक अविभाज्य एकता दिखाई पड़ती है।''* [5] भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता प्रारंभ से ही अनेक संस्कृतियों को अपने में आत्मसात करने की रही है। इसी कारण उसमें विश्व संस्कृति का नेतृत्व करने की क्षमता दिखाई देती है।

साहित्य समाज का दर्पण है तथा समाज का निर्माण संस्कृति से होता है। असल में साहित्य, समाज और संस्कृति तीनों ही एक-दूसरे के पूरक कहे जा सकते हैं, क्योंकि किसी एक के अस्तित्व के बिना दूसरा संभव नहीं है। संस्कृति से हमारे मन में गौरव का भाव उदित होता है। इस गौरव के भाव में जातीय अस्मिता की भावना निहित होती है। भारतीय संस्कृति हजारों वर्ष पुरानी है। जब अनेक संस्कृतियाँ नष्ट हो चुकी थीं, तब भारतीय संस्कृति अपना अस्तित्व बनाए हुई थी। संस्कृति का स्वरूप साहित्य में सबसे अधिक समर्थपूर्ण तरीके से अभिव्यक्त होता है। संस्कृति साहित्य का प्राण है। साहित्य की अनेक विधाओं में संस्कृति के प्रभाव को देखा जा सकता है। भारतीय साहित्य में दया, करुणा, प्रेम, शांति, सहिष्णुता, लचीलापन, क्षमाशीलता इत्यादि को यहाँ की संस्कृति के आधारभूत मूल्य के रूप में अभिव्यक्ति दी गई है। प्रारंभ से ही हिंदी साहित्य ने जिस आदर्श को प्रतिष्ठित किया, वह सांस्कृतिक एकता थी। आदिकाल में सिद्ध और जैन साहित्य समानांतर रूप से दो सांस्कृतिक चेतनाओं का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। आदिकाल में एक साथ अनेक साहित्यिक कृतियों के दर्शन देखने को मिलते हैं-बौद्ध, व्रजयानी साहित्य परंपरा में लिखित अपभ्रंश सिद्ध साहित्य (सरहपा),अपभ्रंश जैन प्रबंध काव्य (स्वयंभू, पुष्पदंत), अपभ्रंश विशुद्ध श्रृंगार काव्य (अब्दुलरहमान), अवधी प्रेमाख्यान काव्य (मुल्ला दाऊद), मैथिली कृष्णकाव्य (विद्यापति), राजस्थानी चारण काव्य (चंदबरदाई), खड़ी बोली मनोरंजन काव्य (अमीर खुसरो) आदि। भारतीय सामाजिक जीवन में यह काल विभिन्न संस्कृतियों के मिलन का काल कहा जाता है। भक्तिकाल की चार प्रमुख धाराएँ कही जाती हैं, जिनमें निर्गुण शाखा के संत काव्य और प्रेम काव्य तथा सगुण शाखा में राम काव्य और कृष्ण काव्यहैं। इन चारों प्रमुख धाराओं में हम सामासिक संस्कृति के तत्व देख सकते हैं। सामासिक संस्कृति का स्पष्ट उदहारण हमें कबीर दस के इस दोहे से होता है-

''दरियाव की लहर दरियाव है जी
दरियाव और लहर में भिन्नकोयम
उठे तो नीर है बैठे तो नीर है
कहो दूसरा किस तरह होयम।'' [6]

कबीर ने वेदांत के अद्वैतवाद तथा दरियाव और नीर जैसे फारसी और संस्कृत के पदों का सहज भाव से प्रयोग किया है। आदिकाल में जिस सांस्कृतिक समेकन की भूमिका तैयार हो रही थी, कबीर तक आते-आते वह पूरी होती दिखाई देती है। हिंदू-मुस्लिम सांस्कृतिक सामासिकता का ज्वलंत उदाहरण हमें जायसी के पद्मावत में भी देखने को मिलता है। जायसी ने मुस्लिम होते हुए भी जिस ठेठ अवधि का प्रयोग किया वह जनसाधारण की भाषा थी। पद्मावत में फारसी काव्य शैली के साथ-साथ भारतीय काव्य शैली का संभावित रूप दिखलाई पड़ता है। मध्यकालीन भारतीय सामाजिक संस्कृति के उदाहरण हमें रामकाव्य और कृष्णकाव्य में भी देखने को मिलते हैं। राम काव्य के सर्वश्रेष्ठ तुलसीदास को एक ओर लोकनायक भी कहा जाता है तो दूसरी ओर महान समन्वयकारी। उन्होंने शैव, राम और विष्णु संप्रदायों में समन्वय कर एक स्थायी मार्ग प्रशस्त किया। रामचरितमानस में समस्त देश की सांस्कृतिक विशेषताएँ समाविष्ट हो जाती हैं। कृष्ण काव्य में भी आर्येतर सांस्कृतिक तत्व उपलब्ध हैं । उत्तर-दक्षिण के सांस्कृतिक तत्वों का समन्वय सूर साहित्य और कृष्णकाव्य में प्रतिष्ठित होता है। मध्यकालीन कृष्णकाव्य का आधारभूत कृष्णचरित

(बाल लीला, गोप लीला, भ्रमरगीत, रामलीला) सांस्कृतिक आदान-प्रदान की ही उपज है। सांस्कृतिक सामासिकता का यह एक सुंदर उदाहरण है। भक्तिकाल की चारों प्रमुख धाराओं में हमें सामासिक संस्कृति के तत्व देखने को मिलते हैं। चूँकि रीतिकाल का समाज बहुत कुछ विछिन्न सा रहा है, इस काल के जो कवि हुए वह या तो वह अपने आश्रयदाता राजा के चरितगान में लगे रहे या तो नखशिख वर्णन अथवा षडऋतु वर्णन में लीन रहे। किंतु रीतिकाल के पश्चात पुन: कवि दृष्टि समाज और उसकी सांस्कृतिक विशेषताओं के चित्रण की ओर लौट आई। हिंदी साहित्य के इतिहास का आधुनिक काल सामासिक संस्कृति के चित्रण के सर्वाधिक उदाहरणों से युक्त है। नवयुग के समय में एक बड़ी सांस्कृतिक क्रांति हुई तथा परंपरागत भारतीय और आधुनिक पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, संघर्ष और कलांतर में उनका समन्वय भी हुआ। डच, फ्रांसीसी और अंग्रेजों के आने से पश्चिम की आधुनिक विकसित विज्ञान और समूह चेतना ने समाज के पुराने ढाँचे को झकझोर दिया। पश्चिमी संस्कृति का भारतीय संस्कृति के साथ मिल जाने से पुरानी रूढ़ियाँ तेजी से बदलने लगीं। जीवन और समाज को देखने की दृष्टि मिली। भारतेंदु की राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत रचनाएँ इसी का पक्ष हैं।

''आवहु सब मिलकर रोवहु भारत भाई।
हाहा भारत दुर्दशा देखी न जाए।''[7]

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने भगवान को पुकारा है। लेकिन अपने कल्याण के लिए नहीं, बल्कि अपने देशवासियों के उद्धार के लिए। मुख्यत: आधुनिक साहित्य में सामासिक संस्कृति के तत्व सर्वाधिक उपन्यासों में देखने को मिलते हैं। हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित लेखक मुंशी प्रेमचंद के 'निर्मला' और 'प्रतिज्ञा' उपन्यास में सामासिक संस्कृति के तत्व देखने को मिलते हैं। समाज में विभिन्न धर्मों के मानने वाले लोगों की आस्था, विश्वास, रीतियाँ और आचार-व्यवहार में एकरूपता दिखा कर सांस्कृतिक एकता को सुदृढ़ करने का प्रयास किया है। भगवती चरण वर्मा कृत 'प्रश्न और मरीचिका' उपन्यास में सभी जातियों और वर्गों के पात्र हैं। यशपाल के 'झूठा सच' में पंजाब और लाहौर के जीवन का चित्रण है।

निष्कर्ष :

अत: कहा जा सकता है कि सामासिक संस्कृति में हिंदी साहित्य का अपना एक विशेष योगदान है। हिंदी साहित्य की अन्य साहित्यिक विधाओं में भी ऐसी बहुत प्रयास हो रहे हैं, जिनमें आधुनिक सामासिक संस्कृति के तत्वों को देखा जा सकता है। ❑

संदर्भ :

1. रॉय, बाबु गुलाब, भारतीय संस्कृति, ग्वालियर, रवीन्द्र प्रकाशन, पृ.सं.4
2. सिंह,नामवर सं.आलोचना, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, जनवरी-मार्च 75, पृ.सं.46
3. द्विवेदी, हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली,1995, पृ.सं .75
4. श्रीवास्तव, रविन्द्रनाथ सं. हिंदी का सामाजिक सन्दर्भ, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा,1990, पृ.स.235
5. शर्मा, शंकर दयाल ,चेतना के स्रोत, प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली,1995, पृ.102
6. दास, श्याम सुंदर,सं. कबीर ग्रंथावली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2022, पृ.230
7. हरिश्चंद्र,भारतेंदु ,भारत दुर्दशा, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर,1880, पृ.93

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

धरोहर

कृत्तिवास रामायण और राम का आदर्श

डॉ. अभिलाष कुमार गोंड

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी साहित्य विभाग
महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी
विश्वविद्यालय, वर्धा
महाराष्ट्र, पिन : 442001
8090613455
bhuabhilash@gmail.com

वर्तमान समय में धर्म की परिभाषा और उसकी भूमिका को देखने और समझने हेतु हमें भारतीय संस्कृति और रामकाव्य परंपरा का अध्ययन समेकित रूप से करने की अवश्यकता बढ़ जाती है। फिर यह जरूरी हो जाता है कि धर्म के व्यापक अर्थ को समझते हुए यह समझाने का प्रयास किया जाए कि मनुष्य जीवन के उन्नयन के लिए धर्म कितना विशिष्ट स्थान रखता है। भारतीय ज्ञान परंपरा में धर्म को केवल धार्मिक आस्थाओं या पूजा-पद्धतियों तक सीमित न करते हुए इसे एक ऐसी जीवंत पद्धति के रूप में देखा गया है, जो सत्य, कर्तव्य, और नैतिकता के मार्ग पर चलने की शिक्षा देते हुए बहुत बार अहिंसात्मक होने की वकालत करता है। यह वही दृष्टिकोण है, जो यह स्वीकारता है कि धर्म केवल आध्यात्मिक उन्नति का साधन न होकर जीवन को एक दिशा और उद्देश्य के साथ जीने का साध्य भी है, जो व्यक्ति को उसके व्यक्तिगत और सामाजिक कर्तव्यों के प्रति सजग रखते हुए समाज में उसकी नैतिक भागीदारी की बात करता है। भारतीय दर्शन में धर्म का यह व्यापक दृष्टिकोण कई शास्त्रों और ग्रंथों के माध्यम से परिलक्षित होता है। उपनिषदों, महाभारत और रामायण जैसी पुस्तकों ने इस आदर्श को विस्तार से समझाते हुए उसके पीछे के दर्शन की महत्ता को स्वीकार किया है। इस आधार पर जब हम वाल्मीकि के रामायण को केंद्र में रखते हुए रामकथा की चर्चा करते हैं तो राम को न केवल एक पौराणिक चरित्र के रूप में, बल्कि एक आदर्श पुरुष के रूप में भी पाते हैं, जो अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए सत्य और न्याय की राह के साथ आगे बढ़ते हैं। उनका यह दृष्टिकोण जीवन की चुनौतियों का सामना करते हुए धर्म की मर्यादा को बनाए रखने की प्रेरणा देता है। इन सबके बीच यदि कृत्तिवास ओझा के समय को देखते हुए युगीन परिवेश को देखें तो यह वही समय था, जब भारत में भक्ति आंदोलन अपने चरम पर था। संत कबीर, चैतन्य महाप्रभु और तुलसीदास जैसे संत अपने-अपने माध्यम से ईश्वर के प्रति भक्ति का प्रचार-प्रसार कर रहे थे। इन सबके बीच बंगाल में भी भक्ति की लहर दौड़ी, जिससे प्रभावित होकर चैतन्य महाप्रभु भी वैष्णव भक्ति की ओर उन्मुख हुए। आगे चलकर कृत्तिवास ओझा ने भी रामायण को बंगला भाषा में प्रस्तुत करते हुए राम भक्ति को स्थानीय स्तर पर विस्तार के साथ प्रचारित करने का प्रयास किया, जिसमें ओझा जी ने बंगाल

के समाज के साथ राम को जोड़ते हुए कभी एक आदर्श चरित्र तो कभी भगवान विष्णु के अवतार के रूप में प्रतिष्ठित किया।

प्रत्येक युग का भिन्न वैचारिक आधार होने के बावजूद भी कुछ में ऐसा सूत्र विद्यमान होता है, जो सभी को एक-दूसरे से जोड़ते हुए आगे बढ़ता है। राम काव्य परंपरा पर भी ये बातें लागू होती हैं। वाल्मीकि जी द्वारा रचित रामकाव्य तथ्यों और घटनाओं के साथ कितना संगत बैठता है, यह शोध का विषय हो सकता है। परंतु राम को जनमानस और लोकमानस के बीच स्थापित करने का मुकम्मल प्रयास वाल्मीकि द्वारा ही किया गया। विद्वानों का एक बड़ा वर्ग वाल्मीकि के रामायण को आधार मानते हुए ही रामकाव्य की प्रामाणिकता पर विचार करता है। वाल्मीकि राम के समकालीन थे तथा लव-कुश ने वाल्मीकि के कहने पर ही राम की सभा में रामायण सुनाया। परंतु जैसे-जैसे समय बीतता गया वैसे-वैसे रामायण लिखने की भावना का विस्तार हुआ, जिसके साथ राम कथा के साथ कृतिमता तथा असत्यता भी बढ़ती चली गई। आगे चलकर राम कथा के साथ मिथकों का प्रचलन बढ़ने लगा, जिसने राम कथा की सत्यता पर नवीन तरीके से विचार करने को भी बाध्य किया। भले ही उत्तरवर्ती लेखकों ने राम कथा का आधार वाल्मीकि रामायण को स्वीकार किया हो, परंतु बहुत से ऐसे बिंदु भी हैं, जिस पर विचार करते हुए ही पूर्ववर्ती कथा के साथ राम के संपूर्ण जीवन को जोड़कर देखा जा सकता है, जिसे देखने विचारने का सशक्त माध्यम भाषा ही हो सकती है। आरंभ में भले ही रामायण की भाषा संस्कृत रही हो, परंतु जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होता चला गया युग के अनुरूप राम के संपूर्ण जीवन को भिन्न-भिन्न कोणों तथा दृष्टिकोणों से देखने की एक नवीन परंपरा विकसित हुई, जिसने बहुत बार राम को ईश्वर तथा मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में देखा तो बहुत बार सामान्य मनुष्य की चिंता उत्कंठा के साथ राम कथा को जोड़कर उसकी एक अलग व्याख्या प्रस्तुत की। हिंदी के साथ जब अन्य भारतीय भाषाओं को एकता के सूत्र के साथ देखा जाने लगा, तब बहुत-सी ऐसी राम कथाएँ भी अस्तित्व में आईं, जिसका उल्लेख या तो नहीं मिलता और यदि मिलता भी है तो छिटपुट ढंग से ही मिलता है। रामायण के नए पाठकों ने तुलसीदास कृत रामचरितमानस को महत्व प्रदान करने के क्रम में यह भुला दिया है कि रामकाव्य की आधारशीला वाल्मीकि रामायण से निर्मित होकर राम को लोक के नायक के रूप में देखती है। एक भिन्न मत यह भी है कि वाल्मीकि दलित थे, जिसके कारण उनके साहित्य को दलितवाद से प्रभावित स्वीकारा गया। परंतु वाल्मीकि रामायण के संदर्भ में ये सभी बातें सर्वथा अनुपयोगी प्रतीत होती हैं, जिससे उसकी साहित्यिकता बाधित होती है। वाल्मीकि के रामायण का ही प्रभाव था कि उनके पश्चात भारतीय भाषाओं में रामायण लिखने की परंपरा का आरंभ हुआ। 'कृत्तिवास रामायण' का भी आधार वाल्मीकि रामायण को ही स्वीकारा गया। इस समय संस्कृत भाषा का प्रभाव तथा बोलबाला होने के कारण जब कृत्तिवास ओझा कृत कृत्तिवास रामायण अस्तित्व में आया तो संस्कृत के महापंडितों के मध्य एक वैचारिक संघर्ष आरंभ हुआ। उसकी रचना प्रक्रिया तथा भाषा को लेकर विवाद खड़ा हुआ। परंतु इतने विरोध और संघर्षों के पश्चात कृत्तिवास ओझा द्वारा राम का जो रूप मूर्त किया गया, वह निश्चित रूप से बंगला जनमानस के लिए गौरवपूर्ण विषय था, जिससे बंगला भाषा के साथ उसके साहित्य को भी ख्याति मिली। कालांतर में कृत्तिवास ओझा का यही रामायण बंगला जनमानस के हृदय में अपना स्थान बनाते हुए सभी समुदाय के बीच चर्चित और आदर्श का पुँज बनकर उभरा, जिसने न केवल अपनी सामाजिक परिधि का विस्तार किया, बल्कि समाज को नूतनता के साथ सोचने-समझने का विवेक भी प्रदान किया। इसे समाज के प्रत्येक वर्ग ने इसे अपने साथ जोड़कर देखा। कृत्तिवास रामायण को पढ़ते हुए बहुत बार यह प्रश्न उठ सकता है कि वाल्मीकि के संस्कृत रामायण और अवधी के रामचरितमानस के साथ जब भिन्न-भिन्न भाषाओं में 300 से अधिक रामायण लिखे जा चुके हैं तो कृत्तिवास रामायण को किन अर्थों में विशेष समझा जाए? इस पर भी विद्वानों का भिन्न-भिन्न मत मौजूद है, जिसे जिसे व्यापकता से देखते हुए ही उसकी बारीकियों को समझा जा सकता है। बावजूद इसके भी कुछ बातें ऐसी हैं, जिस पर विचार करने के उपरांत ही कृत्तिवास रामायण को उसके महत्व के साथ समझा और विश्लेषण किया जा सकता है। तुलसीदास के

रामचरितमानस की भाँति कृत्तिवास रामायण भी कांडों में विभक्त है, जिसे राम के संपूर्ण जीवन को आधार बनाकर लिखा गया है। बंगला भाषा का यह रामायण में छह कांडों में विभक्त है, जिसमें आदिकांड, अयोध्याकांड, अरण्यकांड, किष्किंधाकांड, सुंदरकांड और लंकाकांड शामिल हैं। आदिकांड से यदि विचार करें तो यह रामायण भगवान राम के जन्म, बाल्यकाल की घटनाओं के साथ बढ़ते हुए ऋषि विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण की जंगल यात्रा और सीता स्वयंवर तक की कथा को प्रमुखता से समेटता हुआ आगे बढ़ता है। कृत्तिवास ओझा मुख्य रूप से राम की बाल्यावस्था का वर्णन करते हुए उनकी शक्ति, शौर्य, धर्मनिष्ठा और कर्तव्यपरायणता के साथ राम को एक मर्यादित चरित्र के रूप में चित्रित करते हैं। साथ ही यह भी दर्शाने का प्रयास करते हैं कि राम मात्र एक राजपुत्र नहीं थे, बल्कि धरती पर धर्म की स्थापना के लिए अवतरित मनुष्य थे, जिनके भीतर देवगुण मौजूद था। यह कांड मनुष्य को समाज और उसके कर्तव्यों के प्रति सजग रहते हुए समाज में धर्म की स्थापना की बात करता है।

''ननये देखिने शैव्या करिल गमन,
विश्वामित्र तपोवने दिल दरशन
बालकेरे चाहिया बेड़ान तपोवने,
देखे वृक्ष आडे पड़े आपन नन्दने
पुत्र के देखिया शैव्या पडित भूतले,
येमन कलार गाछ भांगे डाले मूले
पुत्र कोले करि शैव्या करिछे क्रन्दन,
कोया गेल मम पुत्र रुहित नन्दन
धर्म करिवारे दुख दिल नारायण,
अग्निते पुड़िया आजि त्यजिब जोवन
पुत्र कोले करि शैव्या छाड़लि निश्वास,
काँदिते काँदिते गेल ब्राह्मणेर पाश॥''[1]

इसके साथ ही राम के धनुष्य तोड़ने के प्रसंग पर कृत्तिवास ओझा बहुत ही मार्मिक वर्णन प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं :-

''धनुष भंग रामचंद्रे जगत तनय मंदली।
नर नारी जय जय ध्वनि उठी सकल मंडली॥''[2]

सीता के स्वयंवर का यह वही समय था, जब मर्यादा पुरुषोत्तमपुर राम और सीता के मिलन से समाज में एक नए अध्याय की शुरुआत हुई, जिससे आदर्श दांपत्य जीवन की स्थापना हुई। यही आगे चलकर अयोध्याकांड में व्यापकता के साथ परिलक्षित होते हुए राम के कर्तव्य और त्याग का प्रतीक बनकर उभरा। यह कांड कैकेयी के वरदान से उपजी समस्या के साथ राम वन गमन की घटना को आधार बनाकर आगे बढ़ता है, जिसमें राम भाई लक्ष्मण और पत्नी सीता के साथ वन की ओर प्रस्थान करते हुए भी उस मर्यादा और शिष्टाचार का दामन नहीं छोड़ते, जो उन्हें अपने पिता से विरासत में प्राप्त हुआ था। यही कारण है कि राम को विवाद के साथ देखने वाले भी राम के प्रति अगाध निष्ठा का भाव रखते हुए ही राम के मर्यादा की व्याख्या करते हैं। राम ने माता-पिता के आदेश का पालन करते हुए तथा अपने सुख-संपन्न जीवन को छोड़कर वनवास स्वीकार किया, यह दर्शाता है कि सच्चा वीर वही हो सकता है, जो भौतिक सुख-सुविधा और मोह के पाश से मुक्त रहकर अपने कर्तव्य का सत्यता के साथ निर्वहन करे। कृत्तिवास जी ने जब रामायण में राम चरित्र को उद्घाटित किया तो अपनी संपूर्ण शक्ति और क्षमता के साथ ही किया। यही कारण था कि वाल्मीकि की राम कथा को आधार स्वीकारते हुए भी कृत्तिवास जी का यह रामायण राम के मानवीय रूप को नहीं, बल्कि देवता राम के रूप को उद्घाटित करता है, जिसमें मात्र राम ही नहीं बल्कि हनुमान, लक्ष्मण, सीता, विभीषण जैसे चरित्रों में भी आदर्श भावना को प्रचुरता में समाहित करते हुए भी ओझा जी सत्यता का दामन नहीं छोड़ते। इसी का परिणाम है कि 15वीं शताब्दी से लेकर आज तक यह रामायण बंगाल के जनमानस को राम के प्रति अगाध श्रद्धा और कर्तव्य निष्ठा के साथ जोड़कर उनमें भक्ति का प्रसार करता आया है।

मध्यकाल में जब कृत्तिवास रामायण की रचना की गई तो उसका उद्देश्य बहुत व्यापक था। व्यापक इस संदर्भ में कि मुगलों के आधिपत्य के बीच हिंदुत्व की भावना को प्रमुखता के साथ उभारना एक चुनौती पूर्ण कार्य था। परंतु इसमें बहुत से अपवादों को खारिज कर दें तो ऐसे बहुत से शासक भी हुए, जिन्होंने हिंदू-मुस्लिम की साझी परंपरा को बनाए रखते हुए उनके धर्म और संस्कृति को संरक्षण प्रदान किया। यही कारण है कि जब विद्वानों द्वारा रामायण

में राम के चरित्र की बात होती है तो कृत्तिवास जी के रामायण को मुख्य सूची में रखने की आवश्यकता बढ़ जाती है, क्योंकि यह रामायण राम और सीता के संबंध को भी भक्ति के आवरण में न केवल देखता है, बल्कि यह उन्हें आदर्श नारी-पुरुष के संबंध के साथ मात्र न जोड़कर राम की शक्ति, सीता की सहनशीलता और हनुमान की भक्ति से जोड़ता है। इसमें मात्र सीता ही राम के प्रति समर्पित नहीं हैं, बल्कि राम का आदर्श भी उनकी भक्ति को महान बनाता है। यह संबंध समर्पण और प्रेम का संबंध है, जिसे कृत्तिवास ओझा प्रमुखता के साथ भक्ति रस के रूप में उभारते हैं। प्रेम के इसी रूप को मूर्त करते हुए ओझा जी राम की चिंता तथा उनकी निराशा को भी विशेष महत्व के साथ चित्रित करते हुए उन प्रमुख बिंदुओं को भी उठाते हैं, जो प्रेम का एक अटूट और विशाल रूप पेश करता है, जिसमें अगाध प्रेम के बीच वह चिंता भी व्याप्त मिलती है, जो राम-सीता के प्रेम को अलौकिक प्रेम की श्रेणी में देखने को बाध्य करती है।

''आयेउँ सौंपि तुमहिं प्रिय थाती, तात कीन्ह इच्छा केहि भाँती,
कम अन्यथा कीन मम वानी, अब धौं मिलन कठिन सियरानी
का गति अहा लखन मम होई, केही सम किमि बरनउँ दुख रोई
कनक पूतरी मम अतिरूपा, परी बंधु केहि फंद अनूपा।''[3]

प्रस्तुत पद सीता की चिंता से शुरू होता है, जिसमें राम ईश्वर होते हुए मानवीय भावों में बंधे प्रतीत होते हैं। कृत्तिवास रामायण में कवि ने राम की इसी चिंता को उनके प्रेम और समर्पण के साथ जोड़कर देखा है। हनुमान का चरित्र भी भक्ति का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता है। हनुमान राम के प्रति नि:स्वार्थ और पूर्ण समर्पण के भाव से जुड़े हुए हैं। हनुमान की राम के प्रति भक्ति और सेवा का चित्रण इस रामायण में अत्यंत महिमा के साथ किया गया है, जो सीता-हनुमान के संवाद में परिलक्षित होता है।

''विना राम सब कछु दुख-सेजा, बिना भानु जिमि शशि निस्तेजा
वर्षा हेतु मेघ सन्माना, बिना राम जल अनल समाना
सरमा चन्दन देत सरीरा, मम तन लहत अनल सम पीरा
सहित कपूर पान यदि देही, विन रघुनाथ न रुचि उर लेही
एते दुख किमि सिय-निस्तारू, मरन असंशय विन उद्धारू।।''[4]

हनुमान का प्रत्येक कार्य राम के प्रति उनकी भक्ति को दर्शाता है। उनकी शक्ति और समर्पण राम के प्रति उनकी अद्वितीय भक्ति का ही प्रतीक है, जो भक्तों को प्रेरित करता है। भावों के आधार पर यदि हम विचार करें तो कृत्तिवास रामायण में अनेक भावों का समावेश मिलता है, जो विभिन्न विभिन्न पात्रों के माध्यम से और भी अधिक विस्तृत और व्यापक होता प्रतीत होता है। ऐसे बहुत से उदाहरण कृत्तिवास रामायण में मौजूद हैं, जिस पर चर्चा किए बगैर उसके महत्व को नहीं समझा जा सकता। रावण की मृत्यु के उपरांत मंदोदरी का विलाप भी इसी ओर इशारा करता है। जब मंदोदरी रावण की मृत्यु का समाचार सुनकर लोक लाज की चिंता किए अपने महल से निकलती है तो मात्र इसलिए नहीं निकलती कि उसके पति रावण की मृत्यु हो गई है, बल्कि इसलिए भी निकलती है कि वह यह देखना चाहती थी की राम रूप में विष्णु के अवतार दिखते कैसे हैं।

''कटके वेष्ठित ब से आच्छेन श्रीराम,
हेनकाले मन्दोदरी करिल प्रणाम
सीता-शाने भावि राम राणी
मन्दोदरी 'जन्मायती' हुओ बलि आशीब्बादि करि
रामेर चरणे राणी बले ततक्षण,
हेन वर दिले के न कमल लोचन
चन्द्र-सूर्य पृथिवी-समुद्र यदि छाड़े तबु रघुनाथ,
तव वाक्य नाहिनडे
श्रीरामेरे मन्दोदरी परिचय दिल,
कृत्तिवास पण्डित कवित्व बिरचिल''[5]

इसके साथ ही कृत्तिवास रामायण में ऐसी भी कथा मौजूद है, जो इसे विशिष्ट बनाती है। राम की हताशा निराशा का वर्णन तो प्रत्येक रामायण में दिख जाता है, परंतु राम की शक्ति आराधना तथा शक्ति का प्रसन्न होकर राम को जीत का आश्वासन देना जैसे प्रसंगों का कृत्तिवास रामायण में महत्वपूर्ण रूप से चित्रण मिलता है। इससे यह रामायण दूसरे रामायणों से स्वयं को अलग रखते हुए अपनी विशिष्टता को बरकरार रखता है। एक अद्वितीय और महत्वपूर्ण प्रसंग से जुड़ा होने के कारण इसे भक्ति के आदर्श के साथ जोड़कर भी देखा जा सकता है। यह प्रसंग राम द्वारा माँ

दुर्गा की पूजा का है, जिसे 'अकाल बोधन' कहा जाता है। इस कथा के अनुसार, जब राम रावण से युद्ध करने के लिए लंका की ओर बढ़ते हैं तो उन्हें बताया जाता है कि उन्हें माँ दुर्गा की आराधना करनी होगी।

''भाबीते भाबीते राम करेलन मोनी
नील कोमलाखो मोरे बोले सर्वोजने
जुगल नियोन मोर फुलिलो लीलो पोल
संकल्पो कोरिबो पूर्णो गुजिबो जाबो
ऐक चोख दिबो देविर चोरोडे
एतो बोली कोहे राम अनुज लोखोने ने''[6]

इस पूजा का वर्णन बंगाल की सांस्कृतिक परंपरा से गहरा जुड़ा हुआ है, जहाँ दुर्गा पूजा का विशेष महत्व है। राम की इस पूजा ने उन्हें शक्ति के प्रति नतमस्तक दिखाया और भक्तों के लिए भक्ति और शक्ति का संयोग प्रस्तुत किया। कृत्तिवास रामायण का एक प्रमुख उद्देश्य समाज में भक्ति की भावना का प्रसार करना भी था। इस रामायण ने समाज के सभी वर्गों को राम के प्रति भक्ति और समर्पण की प्रेरणा दी। कृत्तिवास ने राम के चरित्र को इतना उदार और जनसामान्य के लिए सुलभ बनाया कि हर कोई राम की भक्ति में लीन हो सके। रामायण की कथा को लोक गीतों और सरल भाषा में प्रस्तुत करने से यह काव्य केवल उच्च वर्ग के लिए ही नहीं, बल्कि समाज के हर वर्ग के लिए प्रिय हो गया। यह रामायण मात्र विद्वानों के अध्ययन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि आम जनमानस के बीच भी लोकप्रिय हुआ। इसमें लोक गीतों, कथाओं और पूजा पाठ के माध्यम से राम की भक्ति का प्रचार-प्रसार किया गया है, जिससे राम का चरित्र बंगाली समाज के प्रत्येक वर्ग के साथ-साथ सभी समाज के दिलों में घर कर जाए। इसका सबसे बड़ा और व्यापक परिणाम यह हुआ कि कृत्तिवास रामायण के प्रसंग लोक कथाओं और लोक गीतों का हिस्सा बनते गए, जिससे इसकी समृद्धि भी बढ़ती चली गई। भाषा और शैली अत्यंत सरल होने के कारण बंगाली मानस में इसकी ख्याति और भी बढ़ती चली गई, जिससे सोचने-समझने की एक नवीन दृष्टि का विकास हुआ। कृत्तिवास रामायण के कई अंश संगीतात्मक हैं, जो बंगाल के लोक संगीत परंपरा से प्रभावित दिखते हैं, जो रामायण के प्रसंगों को गीतों के रूप में प्रयुक्त होकर भक्ति की एक अनूठी व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। ❑

संदर्भ :

1. कृत्तिवास रामायण, अनु. नंदकुमार अवस्थी, भुवन वाणी, रानीकटरा लखनऊ, प्रथम संस्करण 1969 ई. पृ. 51
2. कृत्तिवास रामायण, अनु. नंदकुमार अवस्थी, भुवन वाणी, रानीकटरा लखनऊ, प्रथम संस्करण 1969 ई. पृ. 65
3. वही, पृ. 350
4. वही, पृ. 35
5. कृत्तिवास रामायण (बंगला), कृत्तिवास ओझा, गीता प्रेस, संस्करण 2018, पृ. 607
6. कृत्तिवास रामायण (बंगला), कृत्तिवास ओझा, गीता प्रेस, संस्करण 2018, पृ. 530

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

देशकाल

राष्ट्रीय भाषा हिंदी : स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता के बाद

डॉ. नीलम सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर(हिंदी)
एन-6/2बी-36 इंदिरा नगर कॉलोनी
चित्तैपुर, वाराणसी-221005
8887611104
nelulns@gmail.com

भाषा, धर्म, संस्कृति और राष्ट्रीयता-ये चार तत्व हैं, जो मनुष्य जाति को परस्पर मिलाते भी हैं और अलग भी करते हैं। यह बात विरोधाभास जैसी दिखती है कि एक ही वस्तु एकीकरण और पृथक्करण दोनों का साधन हो, फिर भी बात ऐसी ही है। *भाषा ही एक एकमात्र वह साधन है, जो अन्य पशुओं से मनुष्य को पृथक करती है और उसे मनुष्य बनाती है। साहित्य, ज्ञान विज्ञान, कला- सभी क्षेत्रों में मनुष्य की समस्त उपलब्धियों का आधार भाषा है। स्वभावत: भाषा का मनुष्य के जीवन में बड़ा महत्व है।*[1] दण्डी ने कहा है -

इदम-धंतम कृत्सनं जायेत भुवनपत्रयम ।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरा संसार न दीप्यते ।।[2]

(काव्यादर्श दण्डी 1/4)

अर्थात मनुष्य के जो भी लौकिक व्यवहार संपन्न होते हैं, उनका माध्यम भाषा है। प्रेम, घृणा, विरोध, प्रसन्नता सभी का आधार भाषा ही होती है। भाषा का जनसमुदाय के एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भाषा का संबंध धर्म, संस्कृति, साहित्य और राष्ट्रीयता से जुड़ा है। एक राष्ट्र में अनेक भाषाएँ हो सकती हैं, जैसे- रूस, कनाडा, स्विट्जरलैंड, भारत आदि में है। रूस अनेक जनतंत्रों का संघ है और उन सभी जनतंत्रों की पृथक-पृथक भाषाएँ है, पर संपूर्ण सोवियत संघ की राष्ट्रभाषा रूसी है। इसी तरह कनाडा में अंग्रेजी के साथ फ्रेंच और जर्मन में इतावली और रूमाश। भारत में संविधान में स्वीकृत भाषाएँ हैं चौदह। भारत की तरह अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड में भी भाषाओं की विविधता है, किंतु राष्ट्रभाषा एक ही है। इससे स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीयता और भाषा की एकता अनिवार्य नहीं होती। एक राष्ट्र में अनेक भाषाएँ हो सकती हैं या अनेक राष्ट्रों में एक भाषा भी हो सकती है। ऐसी स्थिति में हिंदी को राष्ट्रभाषा न मानने के पीछे का विवाद निरर्थक प्रतीत होता है।

भारत में राजभाषा की समस्या दिन-पर-दिन अत्यत जटिल होती जा रही है। यह समस्या सुलझ कर भी उलझी हुई प्रतीत होती है। देश के अनेक क्षेत्रों से अब विरोध की आवाज भी आने लगी है कि हिंदी की समस्या को जिस ढंग से सुलझाना था, वैसा नहीं किया गया। अर्थात कहीं-न-कहीं हिंदी को राष्ट्रभाषा न बनाने में

राजनीतिकरण हुआ है। प्रश्न यह उठता है कि जो राजनेता स्वतंत्रता से पूर्व हिंदी के प्रचारक थे, वे स्वतंत्रता के बाद अचानक कैसे विरोधी हो गए। स्वतंत्रता पूर्व जो हिंदी शब्द को एक सूत्र में बांधने में मददगार थी, वह आजादी के बाद कैसे विघटनकारी हो गई। ऐसे अनेक प्रश्न राष्ट्रभाषा के सामने खड़े होते हैं, जिनका उत्तर ढूँढ़ना हर हिंदी भाषा-भाषी के लिए आवश्यक है। भारत में भाषा और बोलियों का बाहुल्य भी है और वैविध्य भी, किंतु भाषा की समस्या का हल ढूँढ़ते समय तो महत्वपूर्ण तथ्यों को हमेशा नजरअंदाज किया गया। जब तक इन समस्याओं का हल नहीं निकाला जाएगा, तब तक हिंदी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाएगी। *भाषा की समस्याएँ मुख्य रूप से तीन प्रकार की हैं- शासन और न्याय की समस्या, शिक्षा के माध्यम की समस्या, विदेशों से संबंध की समस्या। इनमें प्रथम के केंद्रीय, प्रांतीय या प्रादेशिक और अंत: या अंत:प्रदेशीय तीन रूप हैं। न्याय और शासन के लिए केंद्र में किस भाषा का प्रयोग हो? प्रांत या प्रदेश में किसका प्रयोग और एक प्रांत या एक प्रदेश से दूसरे के पत्र-व्यवहार में किसका प्रयोग हो? शिक्षा की दृष्टि से भी समस्या तीन प्रकार की है- प्रारंभिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, विश्वविद्यालीय शिक्षा। विदेशों से संबंध का अर्थ है उनसे पत्र-व्यवहार किस भाषा में किए जाएँ।*[3] (राजभाषा हिंदी पृ. 11-18)

राष्ट्रभाषा हिंदी की समस्या पिछले 10 सालों से उलझी नजर जाती है। भारत में अनेक भाषाएँ एवं बोलियाँ हैं, जो संविधान की पाँचवीं अनुसूची में दर्ज हैं। राजभाषा के प्रश्न पर संविधान में 12 सितंबर, 1949 से 14 सितंबर 1949 तक चर्चा चली। बोलने वालों की संख्या इतनी अधिक थी कि संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद को निश्चित अवधि से नौ घंटे अधिक देने पड़े। सभी प्रांतों

के प्रतिनिधियों ने अपने महत्वपूर्ण विचार सदन के सामने रखे। विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के सदस्यों के बीच काफी बहस भी हुई। निश्चित कालावधि तक कोई निर्णय नहीं हो पाया। कांग्रेस में भी इसमें सहमति नहीं बन पाई। राजभाषा संबंधी मुंशी अयंगर मसौदे पर विचार करने के लिए 2 सितंबर, 1949 को कांग्रेस दल की बैठक हुई, लेकिन कोई ठोस निर्णय नहीं हुआ और अंततोगत्वा अंबेडकर, अयंगर और मुंशी ने यह प्रस्ताव व्यक्तिगत हैसियत से सदन में पेश किया। राजभाषा संबंधी 343 से 351 तक के अनुच्छेद भारतीय संविधान के 17वें भाग में समाविष्ट है। ये अनुच्छेद निम्न चार अध्यायों में विभक्त है-

(1) संघ की भाषा

(2) प्रादेशिक भाषाएँ

(3) उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालय आदि की भाषा

(4) विशेष निर्देश 74 (राजभाषा समस्या पृ. 35)

संविधान सभा की बहस का मुख्य मुद्दा अनुच्छेद 343 ही रहा। इस अनुच्छेद ने मुख्य रूप से चार बातों पर विशेष बल दिया- संघ की राजभाषा हिंदी और उसकी लिपि 'देवनागरी' होगी, राजकाज के कामों में भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूप का प्रयोग होगा और इन सब निर्देशों के बावजूद भारतीय संविधान के लागू होने से 15 वर्षों की अवधि तक अंग्रेजी भाषा उन सभी कामों में प्रचलित रहेंगी, जिनके लिए जैसा जहाँ आबादी के पूर्व था। संभवत: संविधान का यही निर्णय हिंदी को राष्ट्रभाषा आज तक घोषित नहीं करवा सका। यहाँ हिंदी को कमतर और अंग्रेजी को मजबूत मानना ही सबसे बड़ी भूल थी। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि हिंदी कमजोर नहीं है, अपितु दृढ़ इच्छा शक्ति की कमी है। टर्की जब अंग्रेजों से आजाद हुआ तो वहाँ के तानाशाह मुस्तफा कमाल पासा ने अपने सलाहकार से पूछा कि अंग्रेजी भाषा को टर्की से हटाने और टर्की भाषा को लागू करने में कितना समय लगेगा। सलाहकार मंत्री ने बड़ी विनम्रता से कहा कि कम-से-कम तीन महीना। कमाल पासा ने कहा, ठीक है यह समय समझ लो आज रात 12 बजे समाप्त हो रहा है, कल से किसी भी दशा में अंग्रेजी का प्रयोग न हो। सारे काम टर्की भाषा में ही होने चाहिए। इसके अतिरिक्त जब रूस आजाद हुआ तो वहाँ 62 भाषाएँ बोली जाती थीं, किंतु वहाँ की संसद ने सिर्फ रूसी को ही मान्यता दी। कहने का तात्पर्य है कि किसी निर्णय में दृढ़ इच्छा शक्ति का होना आवश्यक है। हिंदी के साथ सबसे बड़ा दुर्भाग्य यही रहा कि जिन लोगों को हिंदी को राष्ट्रभाषा / राजभाषा घोषित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई उनमें दृढ़ इच्छा शक्ति का अभाव दिखा। हिंदी और अंग्रेजी के अध्ययन करने के उपरांत इस बात को स्वीकार किया जा सकता है कि हिंदी बोलने, लिखने में अंग्रेजी से सरल है। इसकी लिपि इतनी श्रेष्ठ है कि दुनिया की कोई लिपि इसके सामने नहीं टिक सकती। इसका प्रमाण 21वीं सदी में देखा जा सकता है।

आज दुनिया में हिंदी बोलने वालों की संख्या सबसे ज्यादा है। आज विश्व में लगभग एक अरब 44 करोड़ लोग हिंदी बोलते हैं। विश्व के लगभग 140 देशों में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन होता है। दुर्भाग्यवश भारत 171 देशों का समर्थन नहीं जुटा पा रहा है, जिसके कारण यूनेस्को में हिंदी को विश्व भाषा का दर्जा दिला सके। अर्थात कहीं-न-कहीं कूटनीति की भी कमी देखने को मिलती है। *''हिंदी का विरोध और अंग्रेजी का समर्थन करने वालों में सबसे प्रमुख नाम डॉ. सुनीति चटर्जी का आता है। स्वतंत्रता से पूर्व डॉ. चटर्जी हिंदी को 'आधुनिक भारत की प्रतिनिधि भाषा' (राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएँ और समाधान पृ. 167) कहा था।''*[5]

किंतु उस समय वे एक भाषाशास्त्री थे, जबकि स्वतंत्रता के बाद वे विधान परिषद के अध्यक्ष बन चुके थे। अर्थात सरस्वती के आराधक के पद को त्याग कर डॉ. चटर्जी पूरी तरह से नेता बन चुके थे। ऐसे में हिंदी उनको बाँटने वाली भाषा नजर आने लगी। हिंदी के विरोध में एवं अंग्रेजी के पक्ष में डॉ. चटर्जी ने 39 पृष्ठों के विमाल टिप्पण (नोट आफ डिसेंट) में 22 हिंदी के विपक्ष में एवं 12 अंग्रेजी के पक्ष में तर्क रखे, जो पूरी तरह से हेत्वाभास है, विरोधाभास है। (राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएँ और समाधान, देवेंद्रनाथ शर्मा, पृ.164)

देवेंद्रनाथ शर्मा का मानना है कि हिंदी के पक्ष और विपक्ष में दिए गए सारे तर्क सहसा देखने पर सभ्रम उत्पन्न हो जाता है और लगता है कि ये तर्क अकाट्य हैं, किंतु इनमें किसी में कोई तथ्य या सार नहीं है, इसलिए मैंने इन्हें हेत्वाभास और विरोधाभास कहा है। किसी को भी आश्चर्य हो सकता है कि जिस व्यक्ति ने स्वाधीनता से पहले सर्वतोभावेन हिंदी का समर्थन किया और उसे राष्ट्रभाषा के योग्य घोषित किया, वही आज हिंदी के विपक्ष में इतनी उग्रता से क्यों बोल रहा है। तो यह सब राजनीति की माया है। (राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएँ और समाधान, पृ. 167)।

डॉ. सुनीति चटर्जी ही नहीं, अनेक ऐसे नेता सामने आए, जो स्वतंत्रता पूर्व हिंदी के समर्थक थे और स्वतंत्रता के बाद उसके विरोधी हो गए। जो तमिलनाडु आज हिंदी का सबसे बड़ा विरोधी है, स्वतंत्रता से पूर्व मद्रास के मुख्यमंत्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी जी ने हाईस्कूल तक हिंदी को अनिवार्य कर दिया था। हिंदी को राष्ट्रभाषा की कल्पना करने वालों में सबसे मूर्धन्य हैं बंगाल के श्री केशव चन्द्र सेन, जिन्होंने 1893 में अपने पत्र 'सुलभ समाचार' में लिखा था – यदि भाषा एक न होने पर भारतवर्ष में एकता न हो तो उसका उपाय क्या है? समस्त भारत में एक भाषा का प्रयोग करना इसका उपाय है। इस समय भारत में जितनी भाषाएँ प्रचलित हैं, उनमें हिंदी भाषा प्राय: सर्व प्रचलित है। इस हिंदी भाषा को यदि भारतवर्ष की एकमात्र भाषा बनाया जाए तो अनायास ही यह एकता शीघ्र ही संपन्न हो सकती है। यह देखकर आश्चर्य होता है कि राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की घोषणा कर उसके व्यापक प्रचार के लिए ठोस कदम उठाने वाले लगभग सभी अहिंदी भाषी थे। हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का विचार भी सबसे पहले पश्चिम बंगाल से ही उदित हुआ और आरंभ से अंत तक इसे वहाँ के मूर्धन्य नेताओं, बुद्धिजीवियों का सक्रिखय सहयोग एवं नैतिक बल भी मिलता रहा। राष्ट्रगीत के रचयिता बंकिम चंद्र चटर्जी ने पूरे विश्वास के साथ भविष्यवाणी की थी कि हिंदी एक दिन भारत की राष्ट्रभाषा बनकर रहेगी। इसका समर्थन कवींद्र रवींद्र ने किया था। आज हिंदी संविधान में राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं प्राप्त कर पाई है तो सिर्फ राजनीति और दृढ़ इच्छा के अभाव में, अन्यथा हिंदी में ऐसी कोई समस्या नहीं है, जिसका समाधान न खोजा जा सके। यदि ऐसा होता तो विश्व मं हिंदी की स्थिति इतनी मजबूत न होती। हिंदी में मुख्य रूप से जिन समस्याओं को बार-बार प्रस्तुत किया जाता रहा है, उन्हें दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। पहली समस्या कल्पित है, जबकि दूसरी वास्तविक हिंदी का विरोध करने वालों ने हिंदी की समस्याओं का अधिकतर स्वरूप कल्पित ही रखा है। हिंदी की सबसे बड़ी समस्या है मनोवैज्ञानिक। जिस दिन यह समस्या सुलझ जाएगी हिंदी स्वत: राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन हो जाएगी और इस समस्या में नेताओं का दृढ़ संकल्पी होना अनिवार्य है। जब तक अंग्रेजी का पल्ला पकड़े रहेंगे, तब तक हिंदी के प्रयोग की हमें आवश्यकता ही नहीं महसूस होगी। इस बात से भी खंडन नहीं किया जा सकता कि अंग्रेजी ने अपने पाँव हमारे देश और देशवासियों में मजबूती से जमा लिए हैं। अंग्रेजों की सबसे बड़ी उपलब्धि रही कि उन्होंने प्रत्येक भारतीय वस्तु के प्रति, संस्कृति के प्रति और भाषा के प्रति विमुखता और अनास्था का भाव हममें भर दिया। दो सौ वर्षों तक अंग्रेजों ने हमारे देश पर राज्य किया और प्रचारित करते रहे कि भारतीय संस्कृति धर्म, साहित्य, सभ्यता एवं निस्सार और अनुपयोगी है। दुर्भाग्यवश हम बड़ी सहजता से उनके इस अनर्गल प्रलाप में फँसते गए और मान बैठे कि भारत में सब कुछ हीन है। जिस दिन हम इस भ्रम जाल से अपने आप को दृढ़ता से निकाल लेंगे और अपनी सभ्यता और संस्कृति और साहित्य पर गर्व करने लगेंगे, उसी समय से हमारी भाषा की समस्या का भी समाधान बड़ी सरलता से होने लगेगा। यह सिर्फ और सिर्फ मनोवैज्ञानिक समस्या है, जो भारतीय भाषाओं के विकास में बाधक है। हिंदी की कुछ वास्तविक समस्याएँ भी हैं, जिनके निवारण की आवश्यकता है। समय-समय पर अनेक समीतियों एवं संस्थाओं का निर्माण भी राजभाषा आयोग ने किया, किंतु गति इतनी मंथर है कि अभी भी समाधान नहीं हो पाया है। सबसे बड़ी समस्या पारिभाषिक शब्दावली की है, बाकी जितनी भी समस्याएँ हैं वे सब इसी से जुड़ी हुई हैं। भारतीय भाषाओं का प्रयोग जो नहीं हो पा रहा है, वह उपयुक्त शब्दों के अभाव की दुहाई देकर। हिंदी को कार्यान्वित

करने की बात आती है तो सहज भाव से कह दिया जाता है- *''हिंदी में शब्द हैं कहाँ कि उसे काम में लाया जाए।''* [6] (राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएँ और समाधान, पृ. 51)

यह पारिभाषिक शब्दावली ही वह कच्चा माल है, जिससे कुछ बनाया जा सकता है। आज आवश्यकता है शिक्षा में, शास्त्र में, विधि में, चिकित्सा में विज्ञान में पारिभाषिक शब्दावली की। दो प्रकार से शब्दावली निर्माण किया जा सकता है - मौलिक रचना द्वारा और अनुवाद के द्वारा। यद्यपि प्रयास चल रहे हैं। पारिभाषिक शब्दावलियों का निर्माण हो रहा है, किंतु निर्माण की गति तेज न होने के कारण समय अधिक लग रहा है।

हिंदी की एक समस्या प्रचार-प्रसार की भी है। प्रसार का तात्पर्य है कि हिंदी को अधिक-से-अधिक काम में लाना। इसके प्रमुख क्षेत्र हैं- शिक्षा, शासन और विधि, क्योंकि जन सामान्य का इन्हीं तीनों से विशेष संबंध रहता है। यदि इन तीनों क्षेत्रों में हिंदी के प्रयोग पर बल दिया जाए और तीनों से संबंधित साहित्य का अधिक-से-अधिक निर्माण तेजी से किया जाए तो हिंदी की समस्या को समाप्त किया जा सकता है।

निष्कर्ष :

कहा जा सकता है कि हिंदी पूरी तरह से संपन्न भाषा है। हिंदी में ऐसे तत्व मौजूद हैं, जो एक देश की राष्ट्रभाषा में होने चाहिए। आज हिंदी का बाजार विश्व का सबसे बड़ा बाजार है। पूरा विश्व हिंदी की ओर देखने को विवश है। ऐसे में भ्रांतिपूर्ण तथ्यों को आधार बनाकर विरोध करना सिर्फ राजनीति का हिस्सा हो सकता है और कुछ नहीं। आज जरूरत सिर्फ दृढ़ इच्छा शक्ति है, जैसी दृढ़ इच्छा 370 के लिए प्रयोग की गई। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान-डॉ. देवेंद्र नाथ शर्मा पृ. 09, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. काव्यादर्श, दण्डी-पृ.1/4
3. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएँ और समाधान- डॉ. देवेंद्र नाथ शर्मा, पृ. 17-18, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
4. वही, पृ, 35
5. वही, पृ, 167
6. वहीं, पृ, 51

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

विनोद कुमार शुक्ल का 'कभी के बाद अभी' (कविता संग्रह) और आदिवासी

डॉ. इबरार खान
(असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष)
हिंदी विभाग, मिर्जा गालिब कॉलेज
गया-823001, बिहार
8712375016
ibkhan@gmail.com

डॉ. बनवारी लाल मीना
सहलेखक (एसोसिएट प्रोफेसर)
शिक्षा विद्यापीठ, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय
मुक्त विश्वविद्यालय, मैदानगढ़ी
नई दिल्ली-110068
blalmeena@ignou.ac.in

प्रस्तावना :

हमारा भारतीय समाज जिस वर्ण व्यवस्था के कारण कभी उन्नत समझा जाता था, आज उसी व्यवस्था ने हमारे लिए कई सारी समस्याएँ उत्पन्न कर दी हैं। हमने सेवक की भूमिका में रहने वालों को हेय दृष्टि से देखा और उनका शोषण किया। हम यह भूल गए कि हमारे प्रभु मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचंद्र जी ने सबरी के जूठे बेर खाए थे। क्या आज हम प्रभु के इस आचरण की सराहना नहीं कर सकते ? क्या हम उनके इस कार्य को अपने जीवन में नहीं उतार सकते ?

वर्तमान में यह धारणा और मान्यता बना ली गई है कि दलित पर तो दलित ही लिख सकता है। आदिवासियों पर तो आदिवासी ही लिख सकता है तो क्या मानवीय संवेदना नाम की कोई चीज नहीं होती ? 1936 में लखनऊ में प्रगतिशील लेखक संघ के अधिवेशन में प्रेमचंद ने कहा था, *''साहित्यकार या कलाकार स्वभावत: प्रगतिशील होता है।''*[1] यदि साहित्यकार स्वभावत: प्रगतिशील होता है तो वह तो किसी पर भी लिख सकता है। बस उसके अंदर सच्ची संवेदना होनी चाहिए। वह जन्मत: भले ही किसी भी जाति, धर्म, संप्रदाय का हो। कई ऐसे लोग रहे हैं, जो जन्मत: उच्च वर्ण के थे, लेकिन उन्होंने निम्न वर्ग के लिए बहुत काम किया है। आदिवासियों के संदर्भ में रमणिका गुप्ता, महाश्वेता देवी आदि के नाम लिए जा सकते हैं। नागार्जुन, राहुल सांकृत्यायन आदि के नाम भी दलित के संदर्भ में लिए जा सकते हैं। कहने का तात्पर्य है - संवेदना का होना, मनुष्यता का होना आवश्यक है। सबसे बड़ी बात तो मनुष्यता की है। मनुष्यता तो सबके अंदर होनी चाहिए और यदि इसी मनुष्यता से ओत-प्रोत होकर कोई साहित्यकार लेखन करता है तो बहुत ही अच्छी बात है। विनोद कुमार शुक्ल ने सत्य ही कहा है, *''समय ऊँचाई पर नहीं पहुँचेगा, जब तक मनुष्य ऊँचाई पर नहीं पहुँचेगा। सारी शिक्षा बस्ते के अंदर भरी नहीं होती, असली शिक्षा बाहर होती है, बाहर से सीखने का कोई बस्ता नहीं है।''*[2] हम मनुष्यता का प्रचार-प्रसार साहित्य के माध्यम से कर सकते हैं। साहित्य की विभिन्न विधाएँ हैं। इन विधाओं में कविता का अपना विशेष महत्व है।

विनोद कुमार शुक्ल कविता के माध्यम से अपनी मनुष्यता का प्रकटीकरण करते हैं। उन्होंने अपने 'कभी के बाद अभी' कविता संग्रह में विभिन्न प्रकार के विषयों को उठाया है, यथा-सांप्रदायिकता, गरीबी, भेदभाव, ऊँच-नीच, क्षेत्रवाद आदि। उन्होंने अपने इस कविता संग्रह में आदिवासियों के प्रति भी अपनी संवेदना व्यक्त की है। इसके साथ-साथ उनकी समस्याओं पर भी विचार किया है। आखिर क्यों न उनके साहित्य में आदिवासियों का चित्रण हो? जब वे स्वयं अपनी कविता का उपजीव्य आदिवासी जीवन से ग्रहण करते हैं। इस संदर्भ में अरविंद त्रिपाठी लिखते हैं, *''आदिवासी जीवन और छत्तीसगढ़ के घने और बीहड़ जंगलों के बीच से अपनी कविता का उपजीव्य ग्रहण करने वाले विनोद जी पेशे से कृषि विषय के प्राध्यापक रहे।''*[3] यह सत्य ही है कि उनकी कविताओं में जल, जंगल, जमीन तो आए ही हैं, साथ-ही-साथ वहीं से प्रतीक और उपमान भी ग्रहण किए गए हैं। विनोद कुमार शुक्ल के विषय में रामकिशोर शर्मा लिखते हैं, *''नदी, पृथ्वी, जंगल आदि उपमानों तथा प्रतीकों द्वारा वे अनेक मानवीय समस्याओं पर जो देखने में अतिसाधारण हैं, उन पर विचार करते हैं।''*[4] प्रकृति से जल, जंगल, जमीन से जितना आदिवासी लोग जुड़े होते हैं संभवत: उतना और कोई नहीं जुड़ा होता। कारण यही है कि वे उसी से आधारित वस्तुएँ, औषधियों का इस्तेमाल करते हैं। हम यह मानते हैं कि प्रत्येक आदिवासी जो प्रकृति से सीधे तौर पर जुड़ा है, वह एक आयुर्वेदिक डॉक्टर होता है।

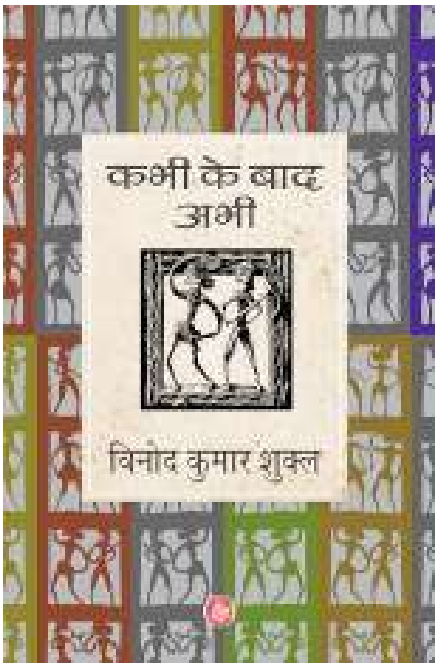

अब सवाल ये उठता है कि आदिवासी है कौन? आदिवासी के पर्यायवाची शब्दों में 'वनवासी' शब्द को लाया जाता है, लेकिन इसके पीछे एक षड्यंत्र ही है, क्योंकि 'वनवासी' कहने से सिर्फ यही पता चलता है कि 'वन का वासी' या 'वन में रहने वाला'। लेकिन आदिवासी कहने से 'आदि' या 'आदिकाल से रहने वाला' अर्थ निकलता है। कहने का तात्पर्य है ''जो प्रारंभ से ही है, जिसको रहते हुए कई अरसा गुजर गया। जो यहाँ का मूल निवासी है।'' रमणिका गुप्ता ने सत्य ही लिखा है, *''आदिवासी की पहचान और नाम छीनकर उसे 'वनवासी' घोषित किया जा रहा है ताकि वह यह भूल जाए कि वह इस देश का मूल निवासी यानी आदिवासी है।''*[5] सवाल यह है कि ये एक साजिश नहीं तो फिर क्या है?

भारतीय राजनीति के साथ-साथ साहित्य को भी महात्मा गांधी ने प्रभावित किया है। हम यह देखकर आश्चर्य में पड़ जाते हैं कि गांधी जी को आदिवासियों की भी चिंता थी। कहने का मतलब गांधी जी को सबकी चिंता थी। उस समय जब आदिवासी विमर्श नाम की कोई अवधारणा नहीं थी, तब भी गांधी जी आदिवासियों के विषय में लिख रहे थे। 'हरिजन सेवक' में 18-1-1942 को वे लिखते हैं, *''आदिवासी नाम उन लोगों को दिया गया है, जो कि पहले से ही इस देश में बसे हुए थे। उनकी आर्थिक स्थिति हरिजनों से शायद ही अच्छी होगी। लंबे अरसे से अपने आपको 'ऊँचे वर्गों' के नाम से पुकारने वाली हमारी जनता ने उनके प्रति जो बेपरवाही बताई है, उसका परिणाम उन्हें भोगना पड़ा है। आदिवासियों के प्रश्न को रचनात्मक कार्यक्रम में खास स्थान मिलना चाहिए।''*[6] यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि गांधी जी भी 'आदिवासी' शब्द का प्रयोग करते हैं। वे इस बात को भी स्वीकार करते हैं कि 'ऊँचे वर्गों' के लोगों ने आदिवासियों के प्रति कोई ध्यान नहीं दिया है।

आदिवासियों की भी अपनी समस्याएँ हैं। वे भी हमारे अपने बंधु हैं। वे हमारे ही बंधु विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक व आर्थिक आदि समस्याओं के कारण हमसे दूर होते चले गए। फिर इस पूँजीवादी व्यवस्था,

औद्योगीकरण ने भी उन्हें अपने जल, जंगल, जमीन से दूर किया है। वे आदिवासी जिन जंगलों में सदियों से रहते आए हैं, आज विकास के नाम पर उन्हें वहाँ से खदेड़ा जा रहा है। ओडिशा, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, गुजरात आदि इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। आदिवासी लोगों के जन्म से मृत्यु तक की पूरी जीवन प्रक्रिया जंगल में ही बीत जाती है। इसलिए वह जंगल की जड़, पौधे और पत्ती-पत्ती से वाकिफ होता है। वह जानता है कि किस जड़ी-बूटी का प्रयोग किस रोग में औषधि के रूप में करना है। ग्रामीण जीवन जीने वाला सामान्य मनुष्य भी यह जानता है कि तुलसी की पत्ती को चाय में डालकर पीना चाहिए। इससे सर्दी-जुकाम में लाभ होता है। वर्तमान में अभी हाल ही में कोरोना से हमारा पीछा छूटा है। इस वैश्विक महामारी में जंगल की औषधि की उपयोगिता से इनकार नहीं किया जा सकता है। विनोद कुमार शुक्ल ने सत्य ही लिखा है :-

''जो प्रकृति के सबसे निकट हैं
जंगल उनका है
आदिवासी जंगल के सबसे निकट हैं
इसलिए जंगल उनका है
अब उनके बेदखल होने का समय है।''[7]

प्रश्न यह है कि उन्हें क्यों बेदखल किया जाए? कोई व्यक्ति जन्म के बाद किसी जगह कई साल रहे और फिर कोई कहे कि तुम्हें वहाँ से हटना होगा तो उसे कैसा लगता होगा? जरा सोचिए! क्या उस आदिवासी को पीड़ा नहीं होती होगी? जंगल उनका घर होता है। जंगल से उनकी जीविका चलती है। लेकिन हाय रे! विवशता। उन्हें जंगल छोड़ना पड़ता है। जंगल उन्हें छोड़कर नहीं जाते, बल्कि वे आदिवासी ही विवशता में जंगल छोड़ते हैं। फिर वे जंगल भी नष्ट कर दिए जाते हैं। वे लिखते हैं :-

''आदिवासी! पेड़ तुम्हें छोड़कर नहीं गए
और तुम भी जंगल छोड़कर खुद नहीं गए''[8]

आज हमारे सभ्य होने, शहरी होने का एक पैमाना है। यदि हमने टिशू पेपर में हाथ पोंछा तो हम सभ्य हैं। हमने एक लबादा ओढ़ रखा है सभ्य होने का। हम होते कुछ और हैं, लेकिन सामाजिक कार्यक्रमों में हमारा रूप कुछ और होता है। हम अपनी स्वाभाविकता को छोड़कर अस्वाभाविक हो गए हैं। हमने एक ऐसी सभ्यता का विकास किया है, जो झूठी है, दिखावटी है, अस्वाभाविक है। वे लिखते हैं :-

''आदिवासी जो स्वाभाविक हैं
उन्हें हमारी तरह सभ्य होना है
हमारी तरह अस्वाभाविक''[9]

जिस तरह हमारे घर पर कुछ चित्र बने होते हैं और बहुत ही आकर्षक होते हैं, उसी तरह आदिवासियों के घरों पर भी चित्र बने होते हैं। आदिवासियों के घरों पर बने चित्र केवल दिखाने के लिए नहीं होते। उन चित्रों से आदिवासी का जंगल के प्रति प्रेम, पशु, पेड़-पौधों से प्रेम साफ तौर पर दिखता है। आदिवासी लोग भले ही रोजी-रोटी की तलाश में शहर आ जाते हैं, लेकिन वे अपनी संस्कृति को नहीं छोड़ते।

''एक गाँव की एक झोपड़ी का गाँव
झोपड़ी की मिट्टी की दीवाल पर
छुही मिट्टी और गेरू से पेड़ बने हैं
कि जंगल में कम हैं
दीवाल पर पक्षी भी बने हैं
जंगल में कम होंगे
अंदर की दीवाल पर शेर का चित्र है
कि जंगल में अब एक भी नहीं''[10]

आदिवासी लोग जब अपने ऊपर होने वाले अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाते हैं तो उन्हें या तो जेल में डाल दिया जाता है या फिर नक्सली आदि कहकर गोली मार दी जाती है। हमें यह भी देखना चाहिए कि हम उनके साथ अन्याय न करें। यहाँ यह भी ध्यान में रखना होगा कि हत्या करना या करवाना किसी भी प्रकार से जायज नहीं ठहराया जा सकता। आलोच्य कविता संग्रह में कवि आदिवासियों के ऊपर होने वाले अत्याचार का प्रतिकार करते हुए पूछ बैठते हैं :-

''तब दुख देने वाले के लिए
हथियार उठाना
कितना गलत होगा
इसको मैं जान लेना चाहता हूँ''[11]

हम देखते हैं कि आदिवासियों का जीवन कितना कष्टप्रद

होता है। वह यहाँ का पुरातनवासी है और उसे ही पीड़ा झेलनी पड़े। यह कहाँ का न्याय है? विनोद कुमार शुक्ल के यहाँ आदिवासियों का चित्रण देखते हुए ही अरविंद त्रिपाठी ने लिखा है, *''वे आदिवासी जीवन के चितेरे कवि भी लगते हैं और प्रागैतिहासिक काल के गायक भी।''*[12] विनोद कुमार शुक्ल की कविताओं की एक खास बात ये है कि उनको पढ़ने पर लगता है कि ये बड़े सामान्य से कथन हैं, लेकिन सामान्य से लगने वाले कथन अपने आप में बड़े महत्वपूर्ण हैं। उनको बहुत ही ध्यानपूर्वक पढ़ने और समझने की आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में विजय मोहन सिंह का कथन उद्धृत करना यथोचित प्रतीत होता है। वे लिखते हैं, *''वे (विनोद कुमार शुक्ल) सामान्य से प्रतीत होने वाले कथन को थोड़ी-सी तुर्शी देकर ऐसा वक्र बना देते हैं कि उसमें अनेक अर्थ छवियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। शायद कुछ लोगों को यह एक सीमा के बाद 'मैनरिज्म' लगता हो, लेकिन उनकी कविता का चरित्र इसी से गढ़ा जाता है।''*[13] आलोच्य कविता संग्रह में भी इस तरह की पंक्तियाँ है, जो सामान्य कथन सी प्रतीत होती हैं।

निष्कर्ष :

इसमें कोई संदेह नहीं है कि विनोद कुमार शुक्ल का यह कविता संग्रह हमारे भीतर आदिवासियों के प्रति एक संवेदना, एक अपनापन का अनुभव कराता है। इसके साथ-साथ हमें सोचने पर भी विवश करता है कि हमारे अपने ही बंधुओं की इस दुर्दशा के लिए जिम्मेदार कौन है? आखिर कौन? शायद हम ही हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. प्रेमचंद रचनावली खंड-7, भूमिका एवं मार्गदर्शन-डॉ. रामविलास शर्मा, संपादक-रामआनंद, प्रथम संस्करण-1996, जनवाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 504
2. इंडिया टुडे (साहित्य वार्षिकी)- मौलिकता की खोज-2019, प्रधान संपादक-अरुण पुरी, साक्षात्कार-शाश्वत गोपाल की विनोद कुमार शुक्ल से बातचीत, लिविंग मीडिया इंडिया लिमिटेड, नोएडा, पृ. 158
3. प्रतिनिधि कविताएँ : विनोद कुमार शुक्ल, संपादक-अरविंद त्रिपाठी, संस्करण-तीसरा संस्करण-2020, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 19
4. हिंदी साहित्य का समग्र इतिहास, प्रो. रामकिशोर शर्मा, प्रथम संस्करण-2019, लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज, पृ. 329
5. आदिवासी कौन, संपादक-रमणिका गुप्ता, संस्करण-2016, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 6
6. मेरे सपनों का भारत, मोहनदास करमचंद गांधी, संग्रहकर्ता- आर. के. प्रभु, संस्करण-दूसरा, मई, 2018, सर्व सेवा संघ प्रकाशन राजघाट, वाराणसी, पृ. 274
7. कभी के बाद अभी (कविता संग्रह), विनोद कुमार शुक्ल, संस्करण-2012, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 23
8. वही, पृ. 24
9. वही, पृ. 27
10. वही, पृ. 103
11. वही, पृ. 32
12. प्रतिनिधि कविताएँ : विनोद कुमार शुक्ल, संपादक-अरविंद त्रिपाठी, संस्करण- तीसरा संस्करण-2020, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 19
13. बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य, विजय मोहन सिंह, संस्करण- पहला संस्करण : 2005, पहली आवृत्ति : 2010, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पृ. 79

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

शिशुपाल सिंह 'शिशु' का काव्य संग्रह

डॉ. भावना सिंह भदौरिया

सहायक प्राध्यापक, हिंदी
शासकीय महाविद्यालय, बानमौर
जिला-मुरैना, मध्य प्रदेश
9039059002
harendrajadaun36gmail.com

शोध सारांश :

कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' महात्मा गांधी के समकालीन होने के कारण उनके काव्य में गांधीवादी विचारधारा के प्रभाव के रूप में सत्य, अहिंसा, सामाजिक एकता, आर्थिक समानता, मानवता और सौहार्द्र के विचारों का उल्लेख मिलता है। कवि सांप्रदायिक एकता के पक्षधर थे। हल्दीघाटी के युद्ध का अपने काव्य में उल्लेख करते हुए महाराणा प्रताप को हिंदू-मुस्लिम एकता का प्रतीक बताया है, क्योंकि कई मुस्लिम सरदारों (जैसे हाकिम खान सूरी आदि) ने हल्दी घटी का युद्ध महाराणा प्रताप के साथ लड़ा। महाराणा प्रताप के लिए इस युद्ध में प्राणों की आहुति दी। शिशु जी का समाजोपयोगी काव्य ही सत्यम् शिवम् सुंदरम् की विशुद्ध पृष्ठभूमि का निर्माता है तथा नवयुवक इस समाजोपयोगी उद्देश्य को पूर्ण करने में सक्षम हैं। अत: उनके चरित्र शूरवीर, त्यागी, तत्क्षण बुद्धि प्रतिभा संपन्न, बलिदानी, कर्तव्य निष्ठ , संयमी, स्वामिभक्त, राष्ट्र, धर्म, समाज हितैषी, परपीड़ा विज्ञ आदि दिव्य विभूतियों से अलंकृत हैं। अपने काव्य में कवि ने नवयुवकों को रूढ़िवादी, कलह, ईर्ष्या, द्वेष, प्रताड़ित, विभाजित, अशिक्षित, शोषित, अवसरवादी आदि कुरीतियों से मुक्त भारत का उद्धार करने का आह्वान किया है। कवि का विश्वास है कि नवयुवकों द्वारा ही राष्ट्र, धर्म व समाज का उत्थान होता है। शिशु काव्य में आध्यात्मिक दर्शन में संत दर्शन के चित्रण, प्रसाद गुणों का अत्यधिक प्रभाव, पौराणिक मिथक, पुरावृत्त और बिंबों का समावेश है। कवि श्री कृष्ण भगवान के अनन्य भक्त थे। उनके काव्य में मीरा की कृष्ण से भक्ति, किसान की उन्नति के लिए कृष्ण आवाहन, दुखिया की वेदना में कृष्ण आवाहन आदि भक्ति की परिकाष्ठा उनके काव्य में प्रत्यक्ष दिखाई देती है। कवि के अनुसार सदमार्ग, सुविचार और प्रभु भक्ति ही संतोषी जीवन का आधार है। 'शिशु' जी का मानना था कि मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं, जिसे सहेज कर रखना प्रत्येक मनुष्य की जिम्मेदारी है ताकि इसका लाभ वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों को मिल सके। कवि का लोक जागरण के लिए महापुरुषों के आदर्शों, जीवन मूल्यों, विचारों और बलिदानों का प्रयोग कविता में जीवंतता प्रदान करता है। भारत की एकता और अखंडता को ध्यान में रखते हुए कवि 'शिशु' जी ने अपने काव्य संग्रह में महापुरुषों के विचारों और कार्यों को बहुत ही सरलता से और प्रभावशाली ढंग से बताया है - जैसे वीर

शिरोमणि महाराणा प्रताप, महात्मा गांधी, नेताजी सुभाष चंद्र बोस आदि के चरित्र की सदाशयता और सामाजिक एकता के गुणों के बारे में उल्लेख किया है। आज की वर्तमान स्थिति में अपने देश के महापुरुषों के विचारों का अनुसरण करना अति आवश्यक है ताकि वर्तमान और आने वाली पीढ़ी एक श्रेष्ठ भारत का निर्माण कर सके।

बीज शब्द :

राष्ट्रीयता, लोकजागरण, अध्यात्म, कुरीतियाँ, सत्य, अहिंसा, मानवता, अखंडता, आस्था, समाज, सौहार्द्र, संस्कृति, भाषा, परंपरा, इतिहास, राष्ट्र, धर्म, जातिवाद, पाप, सद्मार्ग, श्रद्धा, सशक्तिकरण, स्वाभिमान, रुढ़िवाद, अवधारणा, मनोविज्ञान, जनार्दन, मिथक, आध्यात्मिक दर्शन, अबला, सबला, प्रेम, आत्मसंयम।

प्रस्तावना :

लोक जागरण और राष्ट्रीयता के कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' लोकप्रिय कवि रूप के साथ-साथ एक सफल अध्यापक भी रहे। भारत सरकार की ओर से कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' को 23/01/1960 को तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद द्वारा 'राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार' प्रदान किया गया। लोक जागरण और राष्ट्रीयता के कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' का सबसे ज्वलंत और विचारणीय रूप उनके काव्य में दिखाई देता है। उनका काव्य संग्रह काफी विशाल है, जिसमें राष्ट्रीयता, लोक जागरण, सामाजिक सौहार्द्र, प्राकृतिक सौंदर्य, आध्यात्म, सामाजिक कुरीतियाँ आदि को महत्व दिया गया है। 'शिशु' जी ने आजादी से पूर्व और आजादी के बाद कई काव्य लिखे, जिनमें कुछ प्रकाशित हुए, जैसे- यमुना, वीरजा, परीक्षा, हल्दीघाटी की एक रात, अपने पथ पर, दो चित्र, छोड़ो हिन्दुस्तान, नदी किनारे, तीन आहुतियाँ, पूर्णिमा आदि और कुछ अप्रकाशित रह गए, जैसे-अशोक, विषपायी, कलिंग विजय आदि। महात्मा गांधी जी के समकालीन होने के कारण और गांधी जी के जीवन मूल्यों के आदर्शों से प्रभावित होकर 'शिशु' जी ने अपने काव्य में लोक जागरण और राष्ट्रीयता को विशेष महत्व दिया है। शिशु जी ने राष्ट्रीय एवं व्यापक मानवतावादी प्रेरणाओं से प्रेरित होकर काव्य रचना की। कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' निश्चित रूप से चंबल घाटी और इटावा जनपद के निर्विवाद मूर्धन्य महाकवि थे। उनका सरस और ओजपूर्ण काव्य समय की सीमाओं को लाँघकर सहृदय एवं सुधी पाठकों के हृदय को आनंदित करता रहेगा। 'शिशु' जी ने स्वयं और उनके समसामयिक समस्त कवियों ने मंच और साहित्यिक स्तर को बनाए रखा। श्रोताओं की रुचियों के साथ-साथ अपनी गरिमा और मर्यादा को विनष्ट नहीं होने दिया। जिस युग में देशप्रेम और राष्ट्रीयता की चर्चा करना तो दूर, देश और राष्ट्र की बात करना भी राष्ट्रद्रोह का सूचक हो, उस समय शिशु जी ने साहसपूर्वक काव्य को ओजपूर्ण वाणी दी। वास्तव में कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' एक सच्चे साहित्यकार थे, जो स्वयं को समाज से काटकर अलग रख नहीं सकते थे। कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' जी की नजरें समय-समय पर समाज में हो रहे हर परिवर्तन पर होती थीं और उनके काव्य में इसकी झलक मिलती है। एक संस्मरण जो मैंने अपने पिताजी (स्व. स्वरूप सिंह भदौरिया) से सुना था याद आता है। सन 1927 की बात होगी, इटावा (उ.प्र.) की कालीबाड़ी स्थान पर कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया था, जिसमें जिले भर के कवि आमंत्रित थे। कवि सम्मेलन में समस्यापूर्ति का विषय भारतेंदु जी की पंक्ति 'कहने को केवल कहानी रह जायेगी' रखा गया था, जिसमें 16 वर्ष की आयु में शिशु जी ने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। 'शिशु' जी के राष्ट्रीय उद्भावों ने निम्न प्रकार समस्यापूर्ति को छंदबद्ध किया -

''यदि घर के ही तुम भेदी बन जाओगे
तो दुखिया जननि और दुख सह जायेगी
यदि शिवा, गोविंद, प्रताप बन जाओगे
तो शुभाशीष वाले चार शब्द कह जायेगी
यश,अपयश का मिलन यहां है बस
साथ में न करनी यहां से वहां जायेगी
देश शत्रु देशभक्ति कोई भी रहेगा नहीं
'कहने को केवल कहानी रह जायेगी।''[1]

शिशु जी के काव्य संग्रह में उत्कृष्टता उनके कला पक्ष से पहचानी जा सकती है कि किस तरह कवि द्वारा अपने काव्य संग्रह में अलंकारों (उपमा अलंकार,यमक अलंकार, श्लेष अलंकार, रूपक अलंकार, अनुप्रास अलंकार व मानवीकरण अलंकार) को स्वाभाविक एवं सौंदर्यवर्द्धक ढंग से प्रस्तुत किया है, रसों (श्रृंगार रस, शांत रस, भयानक रस व वीर रस) का सटीक उपयोग किया है तथा कवि ने

अपनी रचनाओं को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए मुहावरे एवं लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है। कवि का राजभाषा हिंदी के प्रति सच्चा प्रेम स्पष्ट दिखाई देता है, जो उनकी रचना 'हिन्दी हिन्द देश की वाणी है' से प्रतीत होता है। उन्होंने राजभाषा हिंदी की विशेषता बताते हुए कहा है कि :-

''जैसा लिखना वैसा पढ़ना रक्खा कहीं न घटना बढ़ना,
जिससे सभी मनोवैज्ञानिक सुविधा पावें प्राणी।
हिन्दी हिन्द देश की वाणी है ।।''[2]

शिशु काव्य में राष्ट्रीय धारा :

शिशु जी के तत्कालीन राष्ट्रीय भाव की सराहना आज भी करनी पड़ेगी। यथार्थवाद ही शिशु जी के काव्य की आत्मा है। कवि ने अपने को वितंडावाद से परे रखकर अपनी रचनाओं में व्यावहारिक पक्ष रखते हुए राष्ट्रीयता की भावना रखने में पूर्ण सफल हुए हैं। कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' गांधीवादी विचारधारा के कवि थे इसलिए वह उनके सत्य, अहिंसा और सामाजिक एकता के विचारों से बहुत प्रभावित हुए। कवि द्वारा लिखे काव्य में महात्मा गांधी के विचारों का उल्लेख मिलता है। उसमें से एक काव्य 'नदी किनारे' में कवि कहते हैं :-

''ढूंढ़ा नहीं काम को तुमने, तुम्हें काम ने ढूंढ़ा है
नगरों की क्या कहें तुम्हें, तो ग्राम ग्राम ने ढूंढ़ा
अकर्मण्य हो प्रभु-पूजन की शैली तुम्हें न भाई
'दीन-बन्धु' की झांकी तुमने दीन बन्धु में पाई''[3]

कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' महात्मा गांधी के नि:स्वार्थ सेवा भाव और समर्पण भाव को अपने शब्दों में कुछ इस तरह बताते हैं कि शोषित और पीड़ित लोगों की जनसेवा का रास्ता आपने नहीं चुना, बल्कि शोषित और पीड़ित लोगों ने चाहे वो शहर के हों या गाँव के, आपके नि:स्वार्थ सेवा भाव और समर्पण भाव के कारण आपको चुना है। कवि कहते हैं कि महात्मा गांधी ने 'दीन-बन्धु' (ईश्वर) की पूजा से ज्यादा महत्वपूर्ण दीन-बन्धु (पीड़ित और शोषित जनों) की सेवा को माना है, क्योंकि दीन-बन्धु (पीड़ित और शोषित जनों) की सेवा ही 'दीन-बन्धु' (ईश्वर) की पूजा और सेवा है। कवि 'शिशु' जी ने भारत की एकता और अखंडता को चुनौती देने वाले जाति और धर्म पर किए जाने वाले खून-खराबे तथा संघर्षों की भर्त्सना

की है एवं भारत की एकता और अखंडता तथा मानवता के प्रति आस्था प्रकट की है। उन्होंने अपनी कविताओं में सांप्रदायिक एकता, आर्थिक समानता एवं मानवता के द्वारा राष्ट्रीय जागृति का संदेश दिया है। कवि 'शिशु' जी ने अपने संपूर्ण जीवन काल में भारतीय समाज तथा संस्कृति का निरंतर पतन होते देखा। इसकी पीड़ा उनके काव्य में अभिव्यक्ति पाती रही है। उन्होंने अपने काव्य संग्रह में सामाजिक सौहार्द्र को महत्व देने वाले महापुरुषों के विचारों और कार्यों को बहुत ही सरलता से और प्रभावशाली ढंग से बताया है। वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप हिंदू-मुस्लिम एकता के प्रतीक थे। कई मुस्लिम सरदारों जैसे हाकिम खान सूरी व अन्य ने हल्दी घटी का युद्ध महाराणा प्रताप के साथ लड़ा। महाराणा प्रताप के लिए इस युद्ध में प्राणों की आहुति दी। वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप की वीरता , शौर्य, त्याग, पराक्रम, चरित्र की उज्ज्वलता, सदाशयता और सामाजिक एकता के गुणों को कवि ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि :-

''एक गगन की छत के नीचे
एक धरा पर करके वास
एक हवा में सांसें लेकर
पाते हैं समान उल्लास
परम- पिता है एक उसी की
कहलाते हैं सब संतान
फिर हृदयों में भिन्न-भाव का
कैसे हो सकता है भान।''[4]

कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' का मानना है कि हम सब एक परम पिता परमेश्वर की संतानें हैं। एक धरा (पृथ्वी) पर जन्म लेते और एक गगन (आकाश) रूपी छत के नीचे रहते हैं। फिर हम एक परम पिता परमेश्वर, एक पृथ्वी और एक आकाश के नीचे रहने वाले लोगों के मन में एक-दूसरे के प्रति घृणा और द्वेष का भाव जागृत हो जाता है। इसके लिए हमारी महत्वाकांक्षाएँ और हम स्वयं जिम्मेदार हैं, जिस तरह हल्दी घाटी का युद्ध अकबर की द्वेष भरी महत्वाकांक्षाओं (साम्राज्य विस्तार) का परिणाम था। वहीं वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप के लिए हल्दी घटी का युद्ध द्वेष भरी महत्वाकांक्षाओं (साम्राज्य विस्तार) के विरुद्ध तथा मानवता की रक्षा के लिए था। इसलिए इस युद्ध में राजपूतों के साथ विभिन्न जातियों के जैसे भील आदि व विभिन्न धर्मों के मुस्लिम आदि के लोगों ने उनका साथ दिया। आज के परिप्रेक्ष्य में हमें आपस में प्रेम और सौहार्द बनाए रखना जरूरी है, दूसरों के द्वारा रचित द्वेष भरी महत्वाकांक्षाओं में न पड़कर आपस में प्रेम और सौहार्द्र को नहीं बिगाड़ना चाहिए। भारत में सभी धर्म-जाति के लोग भाईचारे और सौहार्द्र से एक-दूसरे के साथ रहते थे, परंतु भारत को अंग्रेज मजबूरी में आजाद तो कर रहे थे, किंतु देश का सौहार्द्र बिगाड़ कर, जिस पर कटाक्ष करते हुए कवि कहते हैं :-

''पूजा और नमाज राष्ट्र के दृष्टि-कोण में सम हैं
हिंदू की 'हे' मुसलमान की 'मीम' लिए
हम 'हम' हैं
अब तस्बीह और जुन्नारों में गांठें न पड़ेंगी
मंदिर मस्जिद साथ रहेंगे, साथ पुराण कुरान
हमारा छोड़ो हिन्दुस्तान''[5]

सामाजिक लोक जागरण पर शिशु काव्य :

शिशु जी ने अपने काव्य 'तीन आहुतियाँ' द्वारा नवयुवकों को रूढ़िवादी, कलह, द्वेष, प्रताड़ित, विभाजित, अशिक्षित, शोषित, अवसरवादी आदि कुरीतियों से मुक्त भारत का उद्धार करने का आह्वान किया है। कवि का विश्वास है कि नवयुवकों द्वारा ही राष्ट्र, धर्म व समाज का उत्थान होता है:-

''तुमको अपने अन्तस्तल से
जिस पूज्य जननी ने उपजाया।
प्राणों के उज्जवल दीपक को
भौतिकता का घट दिलवाया।
दिन कर से संबंधित कर के
नेत्रों को दिव्य-प्रकाश दिया।
हां, उसी जननी की कुटिया में
अभिशाप अमावस का छाया।''[6]

शिशु जी ने 'तीन आहुतियाँ' में नवयुवकों को चरित्र निर्माण का संदेश दिया है। समाजोपयोगी काव्य ही सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की विशुद्ध पृष्ठभूमि का निर्माता है तथा नवयुवक इस समाजोपयोगी उद्देश्य को पूर्ण करने में सक्षम

हैं। अत: उनका चरित्र, शूरवीर, त्यागी, तत्क्षण बुद्धि, प्रतिभा संपन्न, बलिदानी, कर्तव्य निष्ठ ,संयमी, स्वामिभक्त, राष्ट्र धर्म, समाज हितैषी, परपीड़ा विज्ञ आदि दिव्य विभूतियों से अलंकृत है। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि 'जीत गया तो धरती का सुख ऐश्वर्य भोगेगा और यदि मृत्यु को प्राप्त हुआ तो स्वर्ग का वैभव भोगेगा।' अर्थात वीर के लिए प्रेय और श्रेय दोनों के द्वार खुले रहते हैं। अत: इन द्वारों में प्रवेश हेतु शिशु जी जिस शक्ति का आह्वान करते हैं वह त्यागी, बलिदानी, स्वाभिमानी आदि है, जिसके द्वारा नवयुवक जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है। सत्ता कायम रखने के लिए अंग्रेजी हुकूमत रोज नए षड्यंत्रों के माध्यम से हिंदू और मुसलमान दोनों को आपस में लड़ाया करती थी ताकि देश में सौहार्द्र का वातावरण न बन सके और दोनों धर्मों के लोग आपस में लड़ते रहे। उनके षड्यंत्रों की लगाई आग आज भी स्वतंत्र भारत में कम नहीं हुई है। आज भी अंग्रेजों जैसी मानसिकता के लोग हिंदुओं और मुस्लिमों के बीच में षड्यंत्र को रच कर समय-समय पर आपसी प्रेम और सौहार्द्र बिगाड़ते रहते हैं, जिस पर कटाक्ष करते हुए कवि कहते हैं :-

''जाहर तो यह किया कि सबको है धार्मिक आजादी
किन्तु छिपे ही छिपे तबस्सुम में बदबू फैला दी
'रक्त-बोटियां' गुप्त फेंक कर
आपस में लड़वाकर
'मंदिर-मजिद' के आंगन को बना दिया श्मशान
हमारा छोड़ो हिन्दुस्तान''[7]

'प्रजासुखे सुखं राज्ञ: प्रजानां च हिते हितम्।' श्रीमद्भागवत गीता के सिद्धांत के प्रति कवि अपना दृष्टिकोण रखते हुए वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप द्वारा किए गए सामाजिक उत्तरदायित्व के कार्यों के आधार पर कहते हैं कि वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप ने जनसेवा ही ईश्वर (जनार्दन)की सेवा मानी है। यही उनके लिए ईश्वर (जनार्दन) की पूजा का फल है, क्योंकि मनुष्य में ईश्वर (जनार्दन) का वास होता है। मनुष्य को पापी से नहीं, पाप से घृणा करनी चाहिए, जातिवाद में न पड़कर सद्मार्ग पर चलने वाले अच्छे व्यक्ति का साथ देना चाहिए-भले ही वह किसी भी जाति या धर्म का हो। वर्तमान समय में उच्च पद पर आसीन, समृद्ध और प्रभावशाली व्यक्तियों को महाराणा के उज्ज्वल चरित्र से प्रेरणा लेनी चाहिए:-

''क्योंकि जनार्दन में जनता में
मैंने भेद नहीं जाना
प्रजाजनों की सेवा में ही
प्रभु-पूजन का फल माना
मैं पापी से नहीं पाप से
भाव धृणा के रखता हूं
जाति पाति का प्रशन हटाकर
अत: करण परखता हूं''[8]

शिशु काव्य में आध्यात्मिक दर्शन :

कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' के काव्य में आध्यात्मिक दर्शन का बोध स्वामी शरणानंद जी के सान्निध्य से स्पष्ट देखा जा सकता है। शिशु जी प्राय: आध्यात्मिक गुरु स्वामी शरणानंद जी से मिलने जाते थे, जिसके कारण उनके काव्य में संत दर्शन के चित्रण एवं प्रसाद गुणों का अत्यधिक प्रभाव भी मिलता है। शिशु जी के काव्य में पौराणिक मिथक, पुरावृत्त और बिंबों का समावेश है। इसके माध्यम से कवि ने अपनी मान्यताओं और अवधारणाओं को प्रकट किया है। चाहे वो रिश्तों की वास्तविकता हो, मनुष्य जीवन की व्यथा हो, तत्कालीन परिस्थितियाँ हों या फिर प्रभु की भक्ति हो-हर जगह कवि ने आध्यात्मिक विचारों का अपने काव्य में अच्छा समावेश किया है। 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च। तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।' श्रीमद्भागवत गीता के सिद्धांत के प्रति शिशु जी अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि :-

''सदा रहेगा पंच-तत्व का ऐसा ही ताना बाना
सदा रहेगा जीवन-पथ में ऐसा ही आना जाना
जननी! धैर्य धर, देह बदलने की केवल देरी होगी
पुनर्जन्म को पाकर मुझ से फिर सेवा तेरी होगी''[9]

उपरोक्त पंक्तियों के भाव से कवि ने स्पष्ट किया है कि पंच तत्वों से बना यह शरीर नश्वर है, जन्म-मृत्यु विधि की अटल व्यवस्था है। संपूर्ण सृष्टि का निर्माता एक ही है तथा किसी में कोई भेद नहीं है। मातृभूमि की सेवा ही

मनुष्य का प्रमुख ध्येय होना चाहिए इस जन्म तथा पुनर्जन्म में। कवि ने अपने काव्य में जीवन को एक नदी का सतत प्रवाह माना है। 'शिशु' जी श्री कृष्ण भगवान के अनन्य भक्त थे। उनके काव्य में मीरा की कृष्ण से भक्ति, किसान की उन्नति के लिए कृष्ण आवाहन, दुखिया की वेदना में कृष्ण आवाहन आदि भक्ति की पराकाष्ठा प्रत्यक्ष दिखाई देती है। कवि के अनुसार सद्मार्ग, सुविचार और प्रभु भक्ति ही संतोषी जीवन का आधार है। कवि की कृष्ण भक्ति की पराकाष्ठा निम्न पंक्तियों में देखी जा सकती है -

''शांति बन जाते हो समाधि मंदिरों की, कहीं,
मंदिरों की आरती का शोर बन जाते हो।
ध्यान करने से कहीं ध्यान में न आते कहीं
भक्त मुख चंद्र के चकोर बन जाते हो।
'शिशु' पूजा जाप से पिघलते नहीं हो, कहीं,
प्रेम से ही प्रणय विभोर बन जाते हो।
कहीं भोले बन आप ही तो लुट जाते, कहीं,
चित्त को चुरा के चित्त चोर बन जाते हो''[10]

शिशु काव्य में प्राकृतिक सौंदर्य :

शिशु जी का जन्म प्रकृति के सुरम्य चंबल की घाटी के गाँव उदी, इटावा (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। यह गाँव चंबल नदी के किनारे बसा है। कवि ने अपने काव्य में यमुना-चंबल अंचल के बीहड़ों तथा प्रकृति के अनुपम दृश्यों का सजीव चित्रण किया है, कैसे वहाँ चंबल के सघन बीहड़ों में तरुओं पर कोयल बोलती है एवं द्रूम शाखाओं पर एक स्वर में पक्षी कलरव करते हैं। अपने काव्य के माध्यम से कवि ने जीवन में होने वाले सभी क्रियाकलापों को प्रकृति से जोड़कर जीवंतता प्रदान की है। 'शिशु' जी का मानना था कि मनुष्य और प्रकृति एक-दूसरे के पूरक हैं, जिसे सहेज कर रखना प्रत्येक मनुष्य की जिम्मेदारी है ताकि इसका लाभ वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों को मिल सके। कवि अपने काव्य के माध्यम से प्रकृति को संभाल कर एवं सँजोकर रखने की बात अपने श्रोताओं तक पहुँचना चाहते हैं। 'नदी किनारे' काव्य संग्रह में कवि ने प्रकृति के सौंदर्य का अभूतपूर्व चित्रण किया है तथा कवि के शब्दों का विधान देखते ही बनता है। इस काव्य में कवि ने शांत, वीर, श्रृंगार एवं भयानक रस का प्रयोग किया है तथा कहीं-कहीं कवि ने भाषा में खड़ी बोली, पारिभाषिक, समसामयिक, देशज व तद्भव शब्दों का प्रयोग किया है। 'शिशु' जी प्राय: चंबल नदी के तट पर आया-जाया करते थे तथा नदी के तट पर होने वाली गतिविधियों को कवि ने अपनी कविता में जीवंतता के साथ सजीव चित्रण किया है :-

''सुभद्र मांझी पतवार लेता मिलेगा
प्रबल-धार में नाव खेता मिलेगा
इधर से उधर पार को जाने वाला
पथिक-दल शुभाशीष देता मिलेगा
तरंगें सभी एक ही के सहारे
चलो घूम आयें नदी के किनारे''[11]

'शिशु' जी ने अपने काव्य संग्रह में मनुष्य के जीवन को सूर्य के समान माना है। जिस तरह मनुष्य के जीवन में यदि असफलता रूपी अंधकार विद्यमान होगा, तब उसे धैर्य से अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए कठिन परिश्रम एवं अपने आप पर विश्वास रखना पड़ेगा। असफलता के बाद सफलता सूर्य अस्त के बाद सूर्य उदय के समान है, इसलिए मनुष्य को उदासी त्याग कर सफलता प्राप्त करने के लिए सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। कवि कहते हैं कि :-

''देखो दिवाकर नित्य डूबता
अपने मन से नहीं डूबता
प्रात: काल पुन: लाता है अपने विमल प्रकाश
कुसुम! तुम क्यों हो आज उदास''[12]

शिशु काव्य में महापुरुषों का वर्णन :

'शिशु' जी ने लोक जागरणकारी कविता में लोकप्रिय नायकों को इसलिए चुना, क्योंकि वे लोक मानस में परंपरा से, इतिहास से, संस्कार से और श्रद्धा से विराजे रहते हैं। उन पर रची कविता से श्रोताओं के मन में कविता के साथ-साथ वर्णित महापुरुषों के चलचित्र चलने लगते हैं। यही कारण है कि लोक जागरण के लिए महापुरुषों के आदर्शों, जीवन मूल्यों, विचारों और बलिदानों का प्रयोग कविता में जीवंतता प्रदान करता है। भारत की एकता और अखंडता को ध्यान में रखते हुए कवि 'शिशु' जी ने अपने काव्य संग्रह में महापुरुषों के विचारों और कार्यों को बहुत ही सरलता से और प्रभावशाली ढंग से बताया है, जैसे-

वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप, महात्मा गांधी, नेताजी सुभाष चंद्र बोस आदि के चरित्र की सदाशयता और सामाजिक एकता के गुणों के बारे में उल्लेख किया है। आज की वर्तमान स्थिति में अपने देश के महापुरुषों के विचारों का अनुसरण करना अति आवश्यक है ताकि वर्तमान और आने वाली पीढ़ी एक श्रेष्ठ भारत का निर्माण कर सके। कवि महात्मा गांधी के 'सत्य अहिंसा परमो धर्म' के विचार से अत्यंत प्रभावित थे, जो उनके शब्दों में दिखाई देता है। आपसी प्रेम और सौहार्द्र बनाए रखने के लिए अहिंसा का रास्ता अपनाया जाए :-

''अगर समझ हो तो अहिंसा बापू की ठुकराओ
काले के घर से सब गोरे काला मुंह कर जाओ
वरना नेताजी की आज्ञा से हम हिंसक होकर
वेत बादलों को चीरेंगे बनकर विद्युत बाण
हमारा छोड़ो हिन्दुस्तान'' [13]

'शिशु' काव्य में नारी नेतृत्व :

कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' के मन मस्तिष्क, हृदय और नेत्रों में जो नारी समायी रहती है, वो वीर प्रसविनि, अनिद्य सौंदर्यशालिनी और दर्शनीया है। शिशु जी के काव्य में नारी रीतिकालीन कवियों की रचना-सी रसवंती ही नहीं, वरन् नाहर के भी दाँत गिनने वाले पानीदार वीर पुत्रों को जन्म देने वाली भी है, गृह कार्यरत और श्रमशीला स्वाभिमानी भी है। कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' ने महिला सशक्तिकरण पर अपनी लेखनी चलाते हुए लिखा है कि नारी सिंह के समान है। वो अबला नहीं, सबला है। समय आने पर वह महारानी लक्ष्मीबाई के समान वीरता का परिचय देती है। हमारे देश के पुरुष ही नहीं, महिलाएँ भी इतनी स्वाभिमानी और शक्तिशाली हैं कि वह अपने दम पर देश के दुश्मनों को मुँहतोड़ जवाब देती हैं। कवि कहते हैं :-

''सिंह-नारियों का कोई साहस बखानेगा क्या?
बैरियों के वन को वे आग सोंप देती हैं।
अबला का रूप त्याग,सबला-बला सी बन,
कायरों की हांफनी को झाग सोंप देती है।
दानव के जबड़ों से मानवता छीन 'शिशु',
मानव को 'मानवीय-भाग' सोंप देती है।
गौरव के रक्षण में चण्डिका के खप्पर को-
सानुराग अपना सुहाग सोंप देती है'' [14]

निष्कर्ष :

कवि 'शिशु' जी ने अपने काव्य संग्रह में सामाजिक एकता और अखंडता तथा मानवता को महत्व देने वाले महापुरुषों के विचारों और कार्यों को बहुत ही सरलता से और प्रभावशाली ढंग से बताया है, जैसे- वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप , महात्मा गांधी, नेताजी सुभाष चंद्र बोस आदि के चरित्र की उज्ज्वलता , सदाशयता और सामाजिक एकता के गुणों के बारे में उल्लेख किया है। हमें अपने देश के महापुरुषों के विचारों का अनुसरण करना अति आवश्यक है ताकि वर्तमान और आने वाली पीढ़ी एक श्रेष्ठ भारत का निर्माण कर सके। कवि अपने को वितंडतावाद से परे रखकर अपनी रचनाओं में व्यावहारिक पक्ष रखते हुए राष्ट्रीयता की भावना रखने में पूर्ण सफल हुए हैं। शिशु जी का मानना था कि मनुष्य और प्रकृति एक-दूसरे के पूरक हैं, जिसे सहेज कर रखना प्रत्येक मनुष्य की जिम्मेदारी है ताकि इसका लाभ वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों को मिल सके। कवि अपने काव्य के माध्यम से प्रकृति को संभाल कर एवं सँजोकर रखने की बात अपने श्रोताओं तक पहुँचना चाहते हैं। शिशु जी ने नवयुवकों को चरित्र निर्माण का संदेश दिया है और नवयुवकों को रूढ़िवादी, कलह, द्वेष, प्रताड़ित, विभाजित, अशिक्षित, शोषित, अवसरवादी आदि कुरीतियों से मुक्त भारत का उद्धार करने का आह्वान किया है। कवि का विश्वास है कि नवयुवकों द्वारा ही राष्ट्र धर्म व समाज का उत्थान होता है। स्वामी शरणानंद जी के सान्निध्य से कवि के काव्य में संत दर्शन के चित्रण एवं प्रसाद गुणों का अत्यधिक प्रभाव भी मिलता है। कवि ने अपनी मान्यताओं और अवधारणाओं को प्रकट किया है, चाहे वो रिश्तों की वास्तविकता हो, मनुष्य जीवन की व्यथा हो, तत्कालीन परिस्थितियाँ हों या फिर प्रभु की भक्ति हो- हर जगह कवि ने आध्यात्मिक विचारों का अपने काव्य में अच्छा समावेश किया है। शिशु जी ने अपने काव्य में नारी को समस्त नैतिक, मनोवैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के निर्माण में योगदान देने वाली, सौंदर्यमयी रमणी का रूप पाने वाली पतिभक्ता, वीरांगना

एवं देश प्रेम से ओतप्रोत स्वाभिमानिनी के रूप में चित्रित किया है। कवि के काव्य में नारी चित्रण उच्च कोटि का है। कवि ने काव्य के माध्यम से जीवन में होने वाले सभी क्रियाकलापों को प्रकृति से जोड़कर जीवंतता प्रदान की है। 'शिशु' जी के काव्य में नारी आत्मसंयम के अंकुश से पोषित, सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक और नैतिक मर्यादाओं से युक्त हैं। ये सहज सुंदर नारियाँ साधारण अबला मात्र नहीं हैं तथा श्रृंगारों के साथ अंगारों की माला पहनकर अपने लौकिक तन के अलौकिक आलोक से विश्व चेतना को चकित, चमत्कृत और श्रद्धान्वित कर देती हैं। 'शिशु' ने अपने काव्य में घमंडी और अहंकारी मनुष्य द्वारा अपनी स्वार्थ की पूर्ति के लिए निर्बल व असहाय व्यक्तियों के शोषण को सही नहीं ठहराते हुऐ, उन्हें ऐसा न करने के लिए चेतावनी दी है। उनके काव्य में हिंदू-मुस्लिम तथा सभी जातियों के प्रति एकता के भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। कवि का मानना है कि हम सब एक परम पिता परमेश्वर की संतानें हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हमें आपस में प्रेम, एकता,अखंडता तथा मानवता बनाए रखना जरूरी है। दूसरों के द्वारा रचित द्वेष भरी महत्वाकांक्षाओं में न पड़कर आपस में प्रेम और सौहार्द्र को नहीं बिगाड़ना चाहिए। भारत को विश्व गुरु बनने के लिए सबसे महत्वपूर्ण है कि देश में सौहार्द्रपूर्ण वातावरण बनाए रखा जाना चाहिए। कवि शिशुपाल सिंह 'शिशु' का काव्य वर्तमान संदर्भों में घर-घर पढ़ा जाने योग्य है। ❑

संदर्भ सूची :

1. वीरजा, शिशुपाल सिंह 'शिशु', चतुर्वेदी प्रकाशन समिति, आगरा, प्रथम संस्करण-1940, पृष्ठ सं. 27
2. नदी किनारे, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं.199
3. नदी किनारे, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं.193
4. हल्दी घाटी की एक रात, शिशुपाल सिंह 'शिशु',मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1946, पृष्ठ सं.16
5. छोड़ो हिन्दुस्तान, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1946, पृष्ठ सं. 10
6, तीन आहुतियाँ, शिशुपाल सिंह 'शिशु' , मारवाड़ी नवयुवक मंडल,हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं.181
7. छोड़ो हिंदुस्तान, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1946, पृष्ठ सं. 10
8. हल्दी घाटी की एक रात, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1946, पृष्ठ सं. 14
9. नदी किनारे, शिशुपाल सिंह 'शिशु' , मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं.190
10. नदी किनारे, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं.164
11. नदी किनारे, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं. 6
12. नदी किनारे, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1947, पृष्ठ सं.139
13. छोड़ो हिन्दुस्तान, शिशुपाल सिंह 'शिशु', मारवाड़ी नवयुवक मंडल, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-1946, पृष्ठ सं. 29
14. वीरजा, शिशुपाल सिंह 'शिशु', चतुर्वेदी प्रकाशन समिति, आगरा, प्रथम संस्करण-1940, पृष्ठ सं. 14
15. शिशु स्मृति ग्रंथ, शिशु स्मारक समिति, इटावा (उत्तर प्रदेश), प्रथम संस्करण-2000

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

अवलोकन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय ज्ञान परंपरा

डॉ. ममता कुंवर

सहायक प्रोफसर, हिंदी विभाग
स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय
फतेहपुर, देहरादून, उत्तराखंड
टांडा माजरी ग्रांट
डाक- डोईवाला-248140
9140836100
mamtakunwary49@gmail.com

शोध सार :

'शिक्षा' न केवल अंक और अक्षर ज्ञान प्राप्ति का साधन है, बल्कि यह मनुष्य के भीतर उन गुणों का विकास करती है, जो एक बेहतर और स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए आवश्यक होते हैं। 'मनुष्य' संपूर्ण प्राणी जगत में सर्वश्रेष्ठ और सबसे तेज मेधा युक्त प्राणी है, इसीलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि मनुष्य शिक्षित हो, क्योंकि एक शिक्षित व्यरिक्त स्वस्थ, सुंदर समाज के लिए जितना महत्वपूर्ण है एक अशिक्षित व्यक्ति उतना ही घातक।

विद्वान विचारकों, चिंतकों, शिक्षाविदों ने बालक के सर्वांगीण विकास की आधारशिला शिक्षा को ही माना है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति में उसकी शिक्षा का अहम योगदान होता है, क्योंकि देश की आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक मजबूती में शिक्षित समाज की भूमिका होती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National àßducation Policy) 2020 भारत की शिक्षा व्यवस्था में व्यापक सुधार और भारतीय ज्ञान परंपरा के पुनर्स्थापन के लक्ष्य के साथ प्रस्तुत की गई है। यह नीति भारतीय शिक्षा व्यवस्था को समसामयिक चुनौतियों से निपटने, वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा में भारत को अग्रणी बनाने और शिक्षा में मूलभूत सुधार लाने के उद्देश्य से तैयार की गई है। इस नीति के तहत भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनर्जीवित करने पर विशेष बल दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भारत सरकार द्वारा पेश की गई एक व्यापक शिक्षा सुधार नीति है, जिसका उद्देश्य भारतीय शिक्षा प्रणाली को आधुनिक और समग्र बनाना है। यह नीति 34 वर्षों के बाद शिक्षा क्षेत्र में अमूलचूल परिवर्तन लाने के लिए आई है और प्राथमिक शिक्षा से उच्च शिक्षा तक के सभी स्तरों पर सुधार की नई रूपरेखा के साथ क्रियान्वयन के लिए तैयार हुई है।

बीज शब्द :

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भारतीय ज्ञान परंपरा, भारतीय शिक्षा।

विषय प्रवेश :

स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा के महत्व को बताते हुए कहा है कि ''मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति ही शिक्षा है।''

महात्मा गांधी ने भी शिक्षा के महत्व स्पष्ट करते हुए कहा कि ''शिक्षा से मेरा

तात्पर्य बालक और मनुष्य के शरीर मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है।''

इतिहास साक्षी है कि हमारा देश भारत वैदिक काल से ही संपूर्ण विश्व का मार्ग प्रशस्त कर विश्व गुरु कहलाता आ रहा है। विश्व गुरु का अर्थ ही विश्व को पढ़ने वाला अर्थात संपूर्ण विश्व का शिक्षक। हमारे देश की प्राचीन अर्थव्यवस्था, राजनीति और यहाँ के लोगों का बौद्धिक स्तर इतनी उच्च कोटि का था कि यहाँ शिक्षा ग्रहण करने आजीविका प्राप्त करने के लिए पूरे विश्व से लोग आते थे। प्राचीन भारत में जिस शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था की गई थी, वह समकालीन विश्व के अन्य शिक्षा व्यवस्थाओं से समुन्नत एवं उत्कृष्ट थी। संपूर्ण विश्व को ज्ञान प्रकाश से अलौकिक करने वाले भारत की शैक्षणिक व्यवस्था का दुनिया में कोई सानी नहीं था। कालांतर में भारत के धन, समृद्धि और ज्ञान के लालच में विदेशी आक्रांताओं के द्वारा सबसे पहले भारतीय शिक्षा तंत्र को ही ध्वस्त किया गया। आक्रांता इस बात को जानते थे कि किसी राष्ट्र को गुलाम तभी बनाया जा सकता है, जब वहाँ अशिक्षा हो, वहाँ के नागरिकों को अपने अधिकारों का ज्ञान ना हो, जीवन मूल्यों की पहचान ना हो। हमारे देश के विश्व प्रसिद्ध काशी, तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, वल्लभी, उदंतपुरी जगद्दल, मिथिला, प्रयाग, अयोध्या आदि शिक्षा के ऐसे केंद्र थे, जहाँ देश सहित विदेशों के छात्र भी अध्ययन के लिए आते थे। दक्षिण भारत के अन्नारियम, तिरुमुक्कदल, मलाकपुरम, तिरुवोरियूर बहुत ही उत्कृष्ट शिक्षा केदों में गिने जाते थे।

ब्रिटिश काल में भारतीय शिक्षा का सर्वाधिक ह्रास हुआ। भारतीय शिक्षा में मिशनरियों के प्रवेश ने यहाँ के बौद्धिक चिंतन पर अपना प्रभाव दिखाना प्रारंभ कर दिया। इस काल में मैकाले का घोषणा पत्र 1835, वुड का घोषणा पत्र 1854, हंटर आयोग 1882 में शिक्षा का उद्देश्य अंग्रेजों के शासन और उनके हितों के अधिकार थे, जिसे उन्होंने बलपूर्वक भारतीयों पर थोपना प्रारंभ कर दिया था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात राधाकृष्णन आयोग (1948- 49), माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (1953), कोठारी शिक्षा आयोग (1964) राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) एवं नवीन शिक्षा नीति (1986) के द्वारा आजादी से पूर्व चली आ रही शिक्षा व्यवस्था में आंशिक संशोधन होते रहे। शिक्षा नीतियों में संशोधन तो चलती रहे, किंतु एक आदर्श भारतीय शिक्षा नीति नहीं बन पाई।

34 वर्षों के उपरांत राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020-21वीं सदी की पहली ऐसी शिक्षा नीति है, जिसका लक्ष्य देश के विकास को ऊँचाइयों तक पहुँचाना है। यह नीति भारतीय परंपरा और सांस्कृतिक मूल्यों की नींव पर सृजित हुई है। यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा न केवल साक्षरता और संख्या ज्ञान जैसी बुनियादी क्षमताओं के साथ-साथ उच्चतर स्तर की तार्किक और समस्या समाधान संबंधी क्षमताओं केविकास के लिए हो, बल्कि नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास करने की क्षमता से युक्त हो। यह देश की अपनी पहली शिक्षा नीति है, जो भारतीय ज्ञान और विचारों की संस्कृति, परंपरा को ज्ञान प्रकाश में अलौकिक करती है। भारतीय विचार परंपरा और दर्शन में ज्ञान प्रज्ञा और सत्य की खोज को सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य माना जाता है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था ने चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, नागार्जुन, शंकर देव, पिंगला, मैत्रेयी, चक्रपाणी दत्त, गार्गी, थिरूवल्लुर, कणाद, जैसे कई विद्वानों को जन्म दिया। इन्हीं की बदौलत ज्ञान के विविध क्षेत्रों जैसे

गणित, भूगोल, खगोल विज्ञान, धातु विज्ञान, शल्य चिकित्सा, योग एवं आयुर्वेद, सिविल इंजीनियरिंग, विमान शास्त्र, नौकायन शास्त्र, दिशा ज्ञान, ज्योतिष विज्ञान, ललित कला, अर्थशास्त्र, व्याकरण, संस्कृत आदि में भारत ने विश्व को नेतृत्व प्रदान किया है। भारत की सांस्कृतिक विरासतों ने हमेशा ही विश्व का ध्यान आकर्षित किया है। भाषायी समृद्धता, शास्त्रीय संगीत, शास्त्रीय नृत्य, विविध वाद्य यंत्र, लोक गीत, लोक बोलियाँ, नृत्य, वस्तुकला, असाधारण मूर्ति कला, काष्ठ कला, भारतीय परिधानों की वैविध्यता ने भारत को सदा अलौकिक बनाया है। ये कला, ये हुनर तब इतने समृद्ध थे, जब तकनीकी ना के बराबर थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि चाहे पुश्तैनी कलाकारी हो या शौक से जन्मा कोई हुनर, उसे हर हाल में संरक्षित किया जाना चाहिए और उसका संवर्द्धन भी होना चाहिए। इसलिए नई शिक्षा नीति में कक्षा 6 के बाद इंटर्नशिप की व्यवस्था भी की गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करना है, जो 21वीं सदी की आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ भारतीय संस्कृति और मूल्यों का भी सम्मान करे। इस नीति को 34 वर्षों बाद शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक सुधारों के उद्देश्य से लागू किया गया। यह नीति प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक, सभी स्तरों पर शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने और अधिक समावेशी, सहभागी और परिणाममूलक बनाने पर केंद्रित है। इस नीति का मुख्य उद्देश्य एक बहुमुखी, समावेशी और नवाचारी शिक्षा प्रणाली विकसित करना है, जो भारत को पूर्व की भाँति वैश्विक शिक्षा और ज्ञान का केंद्र बना सके। इसमें प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाई पर जोर दिया गया है और यह तय किया गया कि कक्षा 5 तक की शिक्षा का माध्यम उस राज्य की मातृभाषा में दी जाएगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में 10+2 की परंपरागत शिक्षा प्रणाली को बदलकर 5+3+3+4 का नया ढाँचा प्रस्तावित किया गया है। इसमें प्रारंभिक चरण में बचपन की देखभाल और शिक्षा (àßCCàß) को भी शामिल किया गया है। उच्च शिक्षा में मल्टीपल एंट्री और एग्जिट विकल्प, नई क्रेडिट बैंक प्रणाली, रिसर्च एवं नवाचार को बढ़ावा देने के लिए विशेष संस्थानों की स्थापना का प्रावधान है। यह नीति विद्यार्थियों के बीच व्यावसायिक शिक्षा, डिजिटल साक्षरता और नैतिकता को भी बढ़ावा देती है, जिससे उनका समग्र विकास सुनिश्चित हो सके। इसमें इस बात का ध्यान रखा गया है कि कोई भी बच्चा जन्म या पृष्ठभूमि की परिस्थितियों के कारण सीखने और ऊँचाइयाँ प्राप्त करने का कोई अवसर न खोए। सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूह (एस. ई. डी. जी.) पर विशेष जोर दिए जाने की प्रतिबद्धता है, जो लिंग समावेशी कोष की स्थापना और वंचित बच्चों की शिक्षा के लिए काम करेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मुख्य उद्देश्य :

1. शिक्षा की गुणवत्ता सुधारना :- यह नीति शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करते हुए शिक्षा को अधिक समावेशी, लचीला और रोजगारमूलक बनाने पर बल देती है।

2. भाषायी विविधता का सम्मान :- मातृभाषा या स्थानीय भाषा में प्रारंभिक शिक्षा देने की व्यवस्था को बल दिया गया है ताकि बच्चों की समझ और सोचने की क्षमता का विकास हो सके।

3. भारतीय संस्कृति और परंपराओं का संवर्द्धन :- शिक्षा के माध्यम से भारतीय ज्ञान परंपराओं का संरक्षण और संवर्द्धन किया जाए।

4. सांस्कृतिक पुनर्जागरण :- भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भारतीय ज्ञान परंपरा को शामिल करने से एक नए सांस्कृतिक पुनर्जागरण का आरंभ हो सकता है, जो समाज में नैतिकता और आध्यात्मिकता का प्रसार करेगा।

5. समतामूलक और समावेशी शिक्षा :- इसके अंतर्गत शिक्षा में अल्प प्रतिनिधित्व वाले समूह के उत्थान, अनुसूचित जाति के समुदाय और पिछड़े वर्ग के बच्चों की शिक्षा, आदिवासी समुदाय के बच्चों की शिक्षा, ट्रांसजेंडर बच्चों की शिक्षा, विशेष आवश्यकता वाले एवं शहरी निर्धन परिवारों के बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था है।

6. लिबरल शिक्षा की ओर बढ़ते कदम :- लिबरल शिक्षा के माध्यम से पेशेवर या व्यावसायिक शिक्षा को समृद्ध बनाना।

7. उच्च शिक्षा में सर्टिफिकेट, डिप्लोमा, डिग्री कोर्स का प्रावधान।

8. नवाचार और उत्तरदाई शिक्षाक्रम और शिक्षण शास्त्र को अनुसरित करना।

9. उच्च शिक्षा का अंतर्राष्ट्रीयकरण।

10. उच्च शिक्षा संस्थानों प्रौद्योगिकी में सशक्त और प्रभावी नेतृत्व का निर्माण।

निष्कर्ष :

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय ज्ञान परंपरा का संबंध भारत की शिक्षा प्रणाली को आधुनिक बनाने के साथ-साथ भारतीय मूल्यों, परंपराओं और ज्ञान को पुनर्स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यह नीति एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की दिशा में अग्रसर है, जो न केवल विश्व स्तरीय हो, बल्कि भारतीय जड़ों से भी जुड़ी हो। भारतीय ज्ञान परंपरा के संवर्द्धन और संरक्षण के माध्यम से भारत एक बार फिर से विश्व गुरु बनने की दिशा में आगे बढ़ सकता है। नई शिक्षा नीति में इस ज्ञान परंपरा को केवल जानने और संरक्षित रखने का कार्य नहीं किया गया, बल्कि नई पीढ़ी नवाचार के साथ विविध क्षेत्रों में शोध और अनुसंधान कर इसे अधिक समृद्ध बनाने पर जोर दिया गया है। यह नीति भारत के शिक्षा क्षेत्र में समग्र विकास और भारतीय ज्ञान परंपरा के पुनर्स्थापन के लिए एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शिका है और यदि इसे सही ढंग से लागू किया जाता है तो यह आने वाले समय में भारतीय समाज को एक नई दिशा दे सकती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NàßP 2020) और भारतीय ज्ञान परंपरा का गहरा संबंध है। इस नीति का उद्देश्य भारतीय शिक्षा प्रणाली को वैश्विक मानकों पर पुन: स्थापित करने के साथ-साथ भारतीय मूल्यों, संस्कृति और ज्ञान परंपरा को पुनर्जीवित करना भी है। NàßP 2020 में भारतीय ज्ञान परंपरा के महत्वपूर्ण तत्वों को शिक्षा के सभी स्तरों पर शामिल करने का प्रयास किया गया है, जिससे विद्यार्थी न केवल आधुनिक विज्ञान और तकनीक में कुशल बनें, बल्कि अपनी सांस्कृतिक जड़ों और परंपराओं को भी समझ सकें। इसमें वैदिक गणित, योग, प्राचीन भारतीय साहित्य, दर्शन और अन्य पारंपरिक ज्ञान के पहलुओं को पाठ्यक्रम में समाहित करने पर जोर दिया गया है। नई शिक्षा नीति में शिक्षा प्रणाली को इस तरह से विकसित किया गया है कि वह समग्र होने के साथ-साथ आधुनिकता और परंपरा का संतुलन लिए हुए है और जो छात्रों को न केवल कौशलयुक्त, बल्कि नैतिक-सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भी सशक्त बनाएगी। इससे भारतीय समाज की मूलभूत पहचान और वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा के बीच संतुलन स्थापित हो सकेगा। ❑

संदर्भ सूची :

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : प्रारूप द्वारा (शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार)
2. शिक्षा के माध्यम से राष्ट्र निर्माण : डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'
3. चुनौतियों को अवसरों में बदलता भारत, डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, स्रोत : विकिपीडिया
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति : एक सरल परिचय, डॉ. अलका गुप्ता
6. नए भारत की नींव राष्ट्रीय शिक्षा नीति : 2020, इंजी अवनीश कुमार सिंह

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

विभाजन की पीड़ा को भोगती वर्तमान पीढ़ी
'चहार दर' उपन्यास के संदर्भ में

पायल
शोधार्थी, हिंदी विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय
अमृतसर (पंजाब)
8285166282
payalkhatri4321@gmail.com

डॉ. सपना शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय
अमृतसर (पंजाब)
8285166282
khan8285166282@gmail.com

उपन्यास एक ऐसी साहित्यिक विधा है, जिसमें सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन के अतिरिक्त सामान्य जीवन के विभिन्न द्वंद्व, फैलाव, गति, आयाम अन्य साहित्यिक विधाओं की तुलना में कहीं अधिक होते हैं। प्रेमचंद उपन्यास के विषय में कहते हैं- *''मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ, मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।''*[1] वास्तव में उपन्यास में रचनाकार मानव जीवन के यथार्थ को चित्रित करता है, क्योंकि रचनाकार समाज से जुड़ा होने के कारण समाज के सकारात्मक-नकारात्मक पहलू से प्रभावित होकर ही सृजन करता है।

असगर वजाहत हिंदी कथा साहित्य के बहुचर्चित एवं विख्यात रचनाकारों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनके उपन्यासों में 'चहार दर' एक विशिष्ट उपन्यास है। यह उपन्यास भारत विभाजन की पीड़ा को भोगती वर्तमान पीढ़ी के दर्द की कहानी को बयान करता है। भारत-पाकिस्तान विभाजन ऐसी त्रासदीपूर्ण घटना है, जिसकी पीड़ा कई वर्षों तक ही नहीं, बल्कि आज भी दोनों देशों की सामान्य जनता भोग रही है। रचनाकार अपनी समकालीन परिस्थितियों से प्रभावित रहता है और उसे किसी-न-किसी रूप में अपने साहित्य में उकेरने का प्रयास करता है। इतिहास में जो बीत गया वह सदा के लिए समाप्त नहीं हुआ। इतिहास की घटनाएँ हमारे वर्तमान और भविष्य को भी प्रभावित करती हैं। 'चहार दर' उपन्यास भारत-पाकिस्तान विभाजन पर युवा पीढ़ी के दृष्टिकोण को स्पष्ट करता है।

'चहार दर' उपन्यास एक ऐसी कहानी को बयान करता है, जिसमें देश विभाजन की त्रासदी को बीते पचहत्तर वर्ष से भी ऊपर हो गया, किंतु आज भी पीढ़ियाँ उस दर्द को भोग रहीं हैं। मानव की कोमल भावना जो किसी सीमा रेखा को नहीं मानती, वह केवल इतना जानती है कि इस ओर भी रिश्ते हैं और उसे ओर भी। शेर अली एक ऐसा व्यक्ति है, जो भारत-पाक विभाजन के समय परिवार के साथ पाकिस्तान चला गया, वहीं बस गया। बँटवारे के लगभग छप्पन साल बाद वह रावी तैर कर अमृतसर में प्रवेश करता है, क्योंकि उसने अपनी प्रेमिका अमरता से वादा किया था कि वह एक बार जरूर उससे मिलने आएगा। शेर अली की आयु पचहत्तर

वर्ष से ऊपर हो गई है, परंतु विभाजन ने देश का भूगोल और इतिहास और वर्तमान सभी कुछ बदल कर रख दिया है। डॉ. अंजू देशवाल के शब्दों में- *''काल प्रवाह में कुछ ऐतिहासिक क्षण ऐसे होते हैं, जिनकी छाप परवर्ती युगों से पीढ़ियों तक बनी रहती है और संवेदनशील प्रतिभा के लिए ऐसे युग क्षण सदा ही चुनौती बनते हैं। भारत विभाजन का क्षण इतिहास में ऐसा ही अभूतपूर्व व दूरगामी प्रभाव डालने वाला था। इस क्षण का प्रभाव मात्र आर्थिक ही नहीं, वरन सामाजिक संबंध व जीवन मूल्यों को लगभग नष्ट प्राय: कर देने वाला था।''*[2]

शेर अली की मानवीय प्रेम भावना बँटवारे की सीमा रेखा से भी ऊँची है। यही प्रेम भावना उसे रावी पार करके अमरता के गाँव तक ले आती है। जब वह अमरता के गाँव पहुंचता है तो उसे अरसे पुराना मित्र गुरजोत मिलता है। वह शेर अली से पूछता है-

''तू आया कैसे ?
मैं रावी पार करके आया हूँ।
रावी पार करके ?
हाँ।
तू वीजा लेके क्यों नहीं आया ?
पासपोर्ट कित्थे है मेरे कोल
बनवा लेता
मैं तो दस साल से कह रहा था, करीम बनवाता नहीं था... करीम मेरा लड़का है...अब पासपोर्ट न बने तो मैं यहाँ नहीं आ सकता'', [3] वह हँसने लगा।

विभाजन ने धरती पर ऐसी लकीर खींच दी थी, जिसने स्वाभाविक मानवीय संबंधों, संवेदनाओं को शून्य कर दिया। आपसी प्रेम और मेल-जोल के स्थान पर स्वार्थ भावना प्रबल हो गई। मानव को मानवीय दृष्टि से न देखकर हिंदू-मुसलमान, भारतीय-पाकिस्तान की दृष्टि से देखा जाने लगा। रिश्तोंको मजहबों में बाँट दिया गया।

शेर अली जब अमरता से मिलता है तो अमरता उसे पहचान नहीं पाती, क्योंकि वे दोनों छप्पन सालों बाद मिल रहे थे। वह अमरता को देखकर कहता है, ''मुझे पहचाना नहीं ? वह बोला। अमरता ने उसकी आवाज सुनी...और उसे ध्यान से देखने लगी...चेहरे बदल जाते हैं आवाजे नहीं बदलती।

- तू कौन है ? अमृता की आवाज काँप गई''
- मैं...मैं...ये देख।

उसने दाहिना हाथ सामने कर दिया अमरता ने ध्यान से देखा।

- अब भी पूछेगी मैं कौन हूँ ? शेर अली बोला।

वह हैरत से देखती रही

- मैं...मैं शेर अली हूँ।'' [4]

अमृता उससे कहती है कि वह यहाँ क्यों आया है। शेर अली बताता है कि वह उससे बरसों पहले किया वादा पूरा करने आया है। अमरता समय के साथ भावनात्मक दायरे से बाहर आ चुकी है। वह उसे कहती है कि यहाँ से लौट जाए।

जो शेर अली कभी यहाँ अपने गांव में रहा करता था, आज उसे छिपकर नदी पार करके यहाँ आना पड़ा। वास्तव में बँटवारे ने मानवीय संबंधों में कड़वाहट घोल दी थी। जो गाँव कभी अपना हुआ करता था, आज उसे वहाँ छिपकर रहना पड़ता है। परंतु सच कब तक छिप सकता है- *''दो ही चार दिन बाद पिंड में बात फैल गई कि पाकिस्तान से शेर अली आ गया है और अब यहीं रहेगा, कोई कहता था वह अपना घर और खेत माँग रहा है, कोई कहता मुकदमा डालने जा रहा है, कोई कहता उसने तो पहले ही किसी वड्डे वकील से गल कर ली है... फिर से बात उड़ी कि शेर अली के दोनों लड़के भी आ रहे हैं...उधर पाकिस्तान में शेर अली ने कोई जुरम कर दिया है अब वापस नहीं जा सकता...ये भी बात उड़ी थी कि शेर अली ने बँटवारे टाइम जाते समय घर में पैसे गाड़े थे वो लेने आया है।''*[5]

इस तरह की अफवाहें शेर अली को लेकर गाँव में फैल रही थीं। जितने मुँह थे, उतनी ही बातें हो रही थीं। कल जिस गाँव में वह पला-बढ़ा था, आज एक भौगोलिक सीमा के कारण वह सब की नजरों में गुनहगार बन गया था। हर कोई उसे शक की निगाह से देख रहा था। अचानक एक दिन खबर मिलती है कि अजनाला के इलाके में शेर अली की लाश मिली है और पाकिस्तान से एक पत्रकार रिपोर्टर सायमा को उसकी मौत की खबर लेने के लिए भेजा जाता है। सायमा शेर अली की मौत की जानकारी

लेने गाँव में जाती है तो गाँव वाले सब कुछ जानते हुए भी उसे कुछ नहीं बताते। वह गाँव के एक व्यक्ति से कहती है- *'''ताया जी मैं शेर अली की खोजबीन करने ही यहाँ आई हूँ।*

-पर क्यों? वह तेरा कौन था?

-कोई नहीं था तो तुझे क्या लेना देना।

-ताया जी मैं अखबार में काम करती हूँ.. नौकरी करती हूँ, मुझे यह काम दिया गया है कि शेर अली के बारे में... पता लगा कर लाऊँ..इसी वजह से अमृतसर आई हूँ। पन्द्रह दिन से इलाके की खाक छान रही हूँ।''[6]

सायमा को भारत आए कई दिन हो गए थे। वह लाहौर में रहती है और यहाँ पहुंचकर लगातार भारत-पाकिस्तान की तुलना करती रहती है। बहुत दूर गाँव में सायमा को एक मुसलमान मोमद मिलता है, जो बताता है कि आसपास के बहुत सारे गाँवों में उसका एकमात्र परिवार ही मुसलमानों का है। वह हैरानी में पड़ जाती है पूछती है- *''तुहानू पिंड विच कोई परेशानी, तकलीफ? तो मोमद कहता है - नइ जी कोई नई...सब बड़ा ध्यान रखदे हैं...बहुत ध्यान...।''*[7]

सायमा के भीतर की सभी धारणाएँ जो सीमा रेखा की इस पार और उसे पार को रेखांकित करती थीं, मानो टूट-सी रही थीं। गाँव में पुरानी मस्जिद देखकर वह हैरान हो जाती है, क्योंकि यहाँ कोई मुस्लिम परिवार नहीं रहता था। वह देखती है-*''मस्जिद के अंदर की हवा भारी नहीं है। न ही अबाबीलें हैं और न मकड़ी के जाले। एक ताक में मोमबत्तियां जलाने के ताजा निशान हैं। सायमा का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। उसे लगा की रोंगटे खड़े हो गए हैं। ये सब कौन करता है जोत?*

गाँव वाले करते हैं जोत तो हैरानी हो रही थी कि सायमा उस पर यकीन क्यों नहीं कर रही है, जबकि सायमा एक ऐसी हकीकत को स्वीकार करने की प्रक्रिया में थी, जो उसके लिए चमत्कार से भी ज्यादा बड़ी थी।''[8]

इस प्रकार के कई अनुभव सायमा को हुए, जिससे वह सोचती है की बॉर्डर के उस पार और इस पार के बीच एक ऐसा संबंध है, जिसे कोई विभाजन चाह कर भी मिटा नहीं सकता, क्योंकि किसी भी स्थान पर रहने वाले लोगों द्वारा ही वहाँ की चीजें प्रभावित होती हैं।

डॉ. अभिषेक शर्मा के शब्दों में- *''समुदाय ज्ञान का भंडार है। वह प्रत्येक मूलभूत क्रिया का उदाहरण प्रस्तुत करता है। चाहे यह प्रक्रिया अतीत से संबंधित हो या वर्तमान*

से। हमारे स्थानीय मंदिर-मस्जिद हमारे पूर्वजों की धार्मिक चेष्टाओं को अभिव्यक्त करते हैं।''[9]

बहुत दिनों तक सायमा इलाके की खाक छानती शेर अली की मौत की जानकारी एकत्र करने इधर-उधर भागती रही। इतनी मेहनत के बाद किसी तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि शेर अली की मौत गोली लगने से हुई थी। सायमा तथा उसकी टीम यह माँग करती है कि शेर अली का पोस्टमार्टम दोबारा करवाया जाए। शेर अली की प्रेमिका अमरता का इंटरव्यू भी ले लिया जाता है। सायमा तथा शेर अली की खबर मीडिया में छा जाती है, परंतु अखबार के मालिक हाजी मियाँ सायमा को आगे की जानकारी लिए बिना तथा किसी प्रकार के विवादास्पद मामले में पड़े बिना वापस लौट आने को कहता है। किंतु सायमा, शेर अली को न्याय दिलाए बिना वापस नहीं जाना चाहती। इस पर उपाध्यक्ष साहब कहते हैं- *''अब स्टोरी जिस तरह से अनफोल्ड हुई है उससे भारत सरकार खासतौर पर पंजाब सरकार परेशानी में पड़ गई है... तुम्हें पता है, दोनों मुल्कों के बीच करोड़ों रुपए का कारोबार हो रहा है।''*[10]

सायमा पर कई तरह से दबाव बनाए जाते हैं कि वह वापस लौट आए। उपाध्यक्ष साहब उससे कहते हैं कि इंडियन इम्बैसी इस्लामाबाद तुम्हारा वीजा कैंसिल कर देगी और हाजी साहब अखबार से निकाल देंगे। सायमा बुद्धिजीवी वर्ग से संबंध रखने के कारण समाज के प्रति अपना एक दायित्व समझती है, जो उसकी नजरों में नौकरी से भी बड़ा है।

डॉ. जनार्दन वाघमारे लिखते हैं- *''बुद्धिजीवी वर्ग अगर समाज जीवन से तथा उसके प्रवाह से खुद को विशिष्ट अथवा अलग समझ रहा हो तो उसे समाज रूपी पुरुष का मन कभी समझ में नहीं आ सकता। समाज के प्रति अगर उसके मन में उदासीनता हो तो उसे अपनी बुद्धिमत्ता का उपयोग सामाजिक परिवर्तनशीलता के लिए करना संभव नहीं होता। उसके मन में समाज के प्रति सौहार्द्रपूर्ण आत्मीयता होनी ही चाहिए। ऐसी आत्मीयता के अभाव में स्वतंत्रता, समता, न्याय तथा बंधुता के आधार पर मानवी संस्कृति का सेतु बाँधा नहीं जा सकता।''*[11]

यदि बुद्धिजीवी वर्ग भी चुप्पी साध लेगा तो कहीं कोई परिवर्तन के आस नहीं की जा सकती। भारत विभाजन के इतने वर्षों के बाद भी स्थितियाँ बदली नहीं, आज भी पीढ़ियाँ उस दर्द को भोग रही हैं। उपन्यासकार एक स्थान पर लिखता हैं- *''साठ साल से ज्यादा हो गए हैं... रावी में एक लाश तैर रही है। इस लाश को दादा जी नहीं निकाल सके, पिता जी भी नाकाम हो गए। यह लाश रावी के पानी को जहरीला बना रही है, सुनहरी मछलियाँ मर रही हैं। रावी का पानी पाँचों नदियों के पानी में मिल रहा है... पाँचों नदियों का पानी पंजाब की धरती में सोख रहा है। जहर के रेगिस्तान में जिंदगी क्यों काट रहे हो रावी दे विच लाश पड़ी है। वह निकालो।''*[12]

वास्तव में यदि स्थितियाँ आज भी नहीं सुधारी गईं तो आने वाली पीढ़ी भी इस पीड़ा के भँवर में फँसती चली जाएगी। जो इतिहास में घट चुका है वह बार-बार क्यों भोगा जाए। एक स्थान पर जी.एल. शर्मा लिखते हैं- *''न्याय मिलने में यदि इतना विलंब हो जाए कि उसकी मूल आत्मा ही इस लंबे विलंब के कारण नष्ट हो जाए तो ऐसे न्याय का आप क्या करेंगे। कुछ लोग युवावस्था में न्याय की लड़ाई शुरू करते हैं, मगर बुढ़ापे तक उन्हें न्याय नहीं मिलता। कभी-कभी तो दूसरी पीढ़ी को न्याय की इस अंतहीन लड़ाई को जारी रखनी पड़ती है।''*[13]

ऐसी ही स्थिति शेर अली को इंसाफ दिलाने को लेकर है। आखिर क्यों उसकी मौत का खुलासा नहीं होने दिया जा रहा? सायमा द्वारा शेर अली की मौत गोली लगने से हुई ऐसी खबर खोज निकालने पर शेर अली के जनाजे को कब्र में दफनाने की रस्म पर हजारों की संख्या में लोग एकत्रित हुए। मीटिंग की गई, जिसमें सायमा, उसके पत्रकार साथी, कई युवा तथा अन्य लोग भी शामिल हुए। सभी शेर अली को बेकसूर बताते हुए उसके हक में भाषण दे रहे थे। मीटिंग में सम्मिलित सुरेंद्र शर्मा कहता है -*''ऐसा है जी हरिमंदिर साहब के चार द्वार खुले रहते हैं...अरे मैं कहता हूँ तुम लोग तीन सो किलोमीटर के बॉर्डर में एक दर नहीं खोल सकते?*

-जोर से तालियाँ बजती हैं...स्मगलरों और आतंकवादियों के लिए सब कुछ खुला है...शेर अली के लिए बंद है...क्यों बंद है?''[14]

वस्तुत: शेर अली की मौत को लेकर लोगों में रोष और संवेदना का भाव दिखाई देता है। चाहे वह भारतीय मुल्क का व्यक्ति है या पाकिस्तान से संबंध रखता है, उसे न्याय मिलना चाहिए-यही माँग की जाती है। 'चहार दर' उपन्यास की पृष्ठभूमि पंजाब से संबंधित होने के कारण इसमें पंजाबी भाषा के शब्दों की भरमार है तथा साथ ही रचनाकार ने अरबी, फारसी के शब्दों तथा मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ का भी प्रयोग कर भाषा को सौंदर्य और रोचकता प्रदान की है।

उपन्यास का शीर्षक 'चहार दर' एक फारसी भाषा का शब्द है, जिसमें 'चहार दर' एक विशेषण है, जिसका अर्थ है मकान के चारों ओर बनी हुई दीवार या घेरा अर्थात चार दीवारों से घिरा हुआ स्थान और 'चहार दर' का अर्थ है दहलीज। लेखक ने इस शीर्षक को प्रतीकात्मक अर्थ में लिया है, जहाँ भारत और पाकिस्तान के बीच एक ऐसी दीवार खड़ी हो गई है, जिसके आर-पार जाना एक बहुत बड़ा अपराध है, जिसकी सजा कभी-कभी मृत्यु भी बन जाती है। भाषा के इस सहज स्वाभाविक रूप के कारण पाठक रचना के प्रवाह तारतम्यता के साथ डूबता हुआ बहता चला जाता है।

उपर्युक्त विवेचित उपन्यास विभाजन के सत्तर साल बाद तथा आज भी हो रही ऐसी घटनाओं को प्रस्तुत करता है। वास्तव में रचनाकार का दर्जा इतिहासकार से भी बड़ा होता है, क्योंकि वह मात्र आँकड़े प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि मानवीय परिवेश, पीड़ा, त्रास, अनुभव का भी जीवंत चित्र सामने लाता है। सरहद न केवल एक लकीर है, बल्कि वह कई रिश्तों को चीरती हुई रेखा है। कुछ ऐसे मानवीय रिश्ते होते हैं, जो सरहदों के पार भी बसते हैं और चाहकर भी कोई प्रशासन, सरकार, राजनेता, नियम, कानून, सरहद उन रिश्तों को खत्म नहीं कर सकते। ❑

संदर्भ सूची :

1. प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य, हंस प्रकाशन: इलाहाबाद, 1954, पृ-54
2. अंजू देशवाल, भारत विभाजन और हिंदी उपन्यास, संजय प्रकाशन: दिल्ली, 2008, पृ-1
3. असगर वजाहत, चहार दर, राजकमल प्रकाशन: नई दिल्ली, 2001 पृ-121
4. वही, पृ-128
5. वही, पृ-125
6. वही, पृ-118
7. वही, पृ- 92
8. वही, पृ-90
9. अभिषेक शर्मा, समाज कल्याण प्रशासन, साइंटिफिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, 2012, पृ-69.
10. असगर वजाहत, चहार दर, राजकमल प्रकाशन: नई दिल्ली, 2011, पृ-143
11. जनार्दन वाघमारे, समाज परिवर्तन की दिशाएं, विकास प्रकाशन: कानपुर,1999, पृ-59
12. असगर वजाहत, चहार दर, राजकमल प्रकाशन: नई दिल्ली, 2011, पृ-151
13. जी.एल. शर्मा, सामाजिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशंस: जयपुर, 2015, पृ-352
14. असगर वजाहत,चाहर दर, राजकमल प्रकाशन: नई दिल्ली, 2011, पृ-150

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

उषा महाजन की कहानियों में चित्रित स्त्री-पुरुष संबंध

पारिवारिक संबंध के विशेष संदर्भ में

शिवराज कुमार कल्लूर
शोधार्थी, हिंदी अध्ययन
एवं अनुसंधान विभाग
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय
मैसुरु-570006
8073466950
sbkallur8@gmail.com

डॉ. प्रभुसेन डी
शोध निदेशक एवं विभागाध्यक्ष
हिंदी अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग,
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय,
मैसुरु - 570006
9945653167
drprabhusenksouhindi@gmail.com

सार लेख :

उषा महाजन की कहानियाँ पारिवारिक रिश्तों की गहराई और जटिलता को उजागर करती हैं। उनके पात्रों के माध्यम से वे समाज में परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष को दर्शाती हैं। पति-पत्नी, भाई-बहन, माता-पुत्र और पिता-पुत्री जैसे रिश्तों में आने वाली चुनौतियों, त्याग, प्रेम, और समाज द्वारा लगाए गए मानदंडों को उन्होंने बड़ी संवेदनशीलता से चित्रित किया है। उनकी कहानियाँ हमें यह सोचने पर मजबूर करती हैं कि हम अपने रिश्तों को कैसे बेहतर बना सकते हैं और समाज में एक-दूसरे के प्रति अधिक संवेदनशील कैसे बन सकते हैं।

मुख्य शब्द : स्त्री-पुरुष, संबंध, परिवारऽ मूल्य, संवेदना।

भूमिका :

मानव जीवन में संबंधों का महत्वपूर्ण स्थान है और इन रिश्तों के बीच ही मानव अपनी पहचान बनाता है। परिवार में रहते हुए ही वह समाज और राष्ट्र से परिचित होता है। उषा महाजन की कहानियों में भी मानव जीवन में संबंधों के महत्व को दर्शाया गया है। उनके पात्र परंपरागत और आधुनिक सोच का प्रतिनिधित्व करते हैं। परंपरागत पात्र अपने संस्कारों और रीति-रिवाजों को बनाए रखते हैं, जबकि आधुनिक पात्र शिक्षा और पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित होकर नई सोच को अपनाते हैं और कई बार पुराने रीति-रिवाजों को चुनौती देते हैं। हालाँकि, आधुनिकता के प्रभाव में युवा वर्ग कभी-कभी ऐसे निर्णय ले लेता है, जिससे परिवार और रिश्तों पर नकारात्मक असर पड़ता है। उषा महाजन ने अपने साहित्य में इन दोनों प्रकार के पात्रों का संतुलन दिखाया है, जो समाज में परंपरा और आधुनिकता के संघर्ष को चित्रित करता है।

01. पति-पत्नी संबंध :

पति-पत्नी का संबंध गहरा और जीवन भर साथ निभाने का होता है। भले ही वे दो शरीर हों, लेकिन उनके मन और आत्मा एक हो जाते हैं। उनका संबंध केवल भौतिक या सामाजिक नहीं होता, बल्कि मानसिक, भावनात्मक, और आध्यात्मिक स्तर पर भी जुड़ा होता है। मानव शरीर पंचमहाभूतों से बना है, और कोई भी व्यक्ति रोग, जन्म या मृत्यु से मुक्त नहीं है। जीवन में पति-पत्नी एक-दूसरे के सहायक होते हैं; वे एक-दूसरे के साथ अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष में सहारा बनते हैं।

'मोहभंग' कहानी में नीरा का जीवन एक त्रासदी के रूप में प्रस्तुत होता है। उसके पति निरेन एक दुर्घटना के बाद जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष करते हैं, जबकि नीरा अपने पति के इलाज करने वाले डॉक्टर मधुकर से प्रेम करने लगती है।

इस कहानी में पति-पत्नी के बीच के भावनात्मक दूरी और संवादहीनता को दिखाया गया है। एक-दूसरे के साथ जीवन बिताने के बावजूद भी वे अपने संबंध में प्रेम के अभाव को महसूस करते हैं, लेकिन इसे व्यक्त करने का साहस नहीं कर पाते। इस प्रकार कहानी यह प्रश्न उठाती है कि क्या कुछेक मुलाकातों पर ही सच्चा प्रेम पाया जा सकता है? और क्या विवाह संबंध हमेशा प्रेम पर आधारित होते हैं? साथ ही, यह कहानी बीमारी जैसी समस्या के माध्यम से पति-पत्नी के रिश्ते की वास्तविकता को सामने रखती है।

'सच तो यह है' कहानी में रुनू के जीवन के संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है, जो कम उम्र में दो बच्चों की माँ बन चुकी है और एक शराबी पति के साथ जीवन जीने को विवश है। रुनू का पति परिवार के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को नकारता है, उल्टा उसकी कमाई को अपना हक समझता है। कहानी में यह स्पष्ट किया गया है कि रुनू जैसी स्त्रियाँ अपने जीवनसाथी के साथ मजबूरी में रहती हैं, लेकिन उन्हें विवाह में न तो प्रेम मिलता है, न ही आर्थिक या मानसिक सहारा। कहानी यह भी इंगित करती है कि समाज में विवाह जैसी संस्था कई बार स्त्री-पुरुष संबंधों का एक बेमेल और अन्यायपूर्ण रूप प्रस्तुत करती है, जहाँ स्त्रियों के पास अपने जीवनसाथी को चुनने की स्वतंत्रता नहीं होती।

दोनों कहानियाँ मिलकर स्त्री-पुरुष संबंधों की सामाजिक, मानसिक, और भावनात्मक परतों को खोलती हैं। एक ओर नीरा के भावनात्मक द्वंद्व में प्रेम और कर्तव्य का संघर्ष है, तो दूसरी ओर रुनू के जीवन में गरीबी, उत्पीड़न और अपने अस्तित्व की लड़ाई। ये कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि विवाह और संबंधों में कई बार प्रेम के स्थान पर मजबूरी, त्याग और समाज द्वारा थोपे गए बोझ प्रमुख हो जाते हैं, जो स्त्री की अस्मिता और स्वतंत्रता को प्रभावित करते हैं।

02. भाई-बहन संबंध :

भाई-बहन का संबंध भारतीय संस्कृति में सबसे पवित्र और विशेष माना गया है। इस संबंध में एक गहरी आत्मीयता और त्याग का भाव होता है। भाई-बहन के प्रेम को लेकर कई ऐतिहासिक कथाएँ भी प्रसिद्ध हैं, जिनमें से एक में बताया गया है कि एक हिंदू रानी ने मुगल सम्राट को राखी भेजी, और उसने इस धार्मिक बंधन का मान रखते हुए अपनी जान की परवाह किए बिना उसकी रक्षा की। भारतीय परिवारों में भाई-बहन का प्रेम एक सात्विक प्रेम है, जो किसी भी प्रकार की वासना से दूर होता है।

'एक और श्रवण कुमार' कहानी में बीजी का परिवार विभाजन के समय कठिन परिस्थितियों का सामना करता है। बीजी अपनी बेटी लिल्ली को पढ़ाई से वंचित कर देती है ताकि उसके भाईयों का भविष्य सुरक्षित हो सके। लिल्ली माँ की सहायता करते हुए अपने भाइयों के लिए अपनी इच्छाओं और प्राथमिकताओं का त्याग कर देती है। इस कहानी में भाई-बहन के संबंधों में त्याग और समर्पण का भाव प्रमुखता से दिखाई देता है।

'ढर्रा' कहानी में शिवचरन अपनी दलित जाति के बावजूद अपनी बहन गोविंदी की शादी को भव्य रूप से आयोजित करना चाहता है। वह उसकी शादी के लिए समाज के उच्च वर्ग के लोगों को आमंत्रित करने, खाने-पीने की व्यवस्था करने, और फोटोग्राफी के लिए रील खरीदने जैसी तैयारियाँ करता है। इस कहानी में भाई का अपनी बहन के प्रति प्रेम और समाज के बंधनों के बावजूद उसकी खुशियों के लिए किए गए प्रयास को दर्शाया गया है।

'और सावित्री ने कहा' कहानी में नायिका अपनी बेटी के साथ हो रहे अन्याय का विरोध करती है। उसकी अपनी पढ़ाई रुकवा दी गई थी, लेकिन उसके भाई को इंजीनियरिंग की पढ़ाई जारी रखने की अनुमति मिली। वही भाई, जो बहन की सुरक्षा के नाम पर उसे प्रेम से वंचित कर देता है, और जब वह अपने प्रेमी के साथ मिलती है तो उसे मारता-पीटता है। परंतु जब वही भाई अपनी बहन को ससुराल में कष्ट उठाते देखता है तो उसे अपने पास आने का साहस देता है। यह कहानी भाई के दोहरे मानदंडों और भाई-बहन के जटिल संबंधों का चित्रण करती है।

'ऊब' कहानी में मिस सेन के भाई अपने-अपने परिवार में व्यस्त हैं और अपनी बहन की जरूरतों की ओर ध्यान नहीं देते। उन्हें उसकी समस्याओं को समझने की फुर्सत नहीं है, और पीठ पीछे उसकी शिकायतें करते रहते हैं। इस कहानी में भाई-बहन के संबंधों में उपेक्षा और निष्ठुरता को दर्शाया गया है, जो आधुनिक समाज में पारिवारिक रिश्तों के बदलते स्वरूप को दिखाता है।

इन सभी कहानियों में भाई-बहन के रिश्ते के विभिन्न रूप दिखाई देते हैं, जिनमें त्याग, प्रेम, जिम्मेदारी, उपेक्षा, और मानवीयता के विविध रंग शामिल हैं। ये कहानियाँ बताती हैं कि भाई-बहन का रिश्ता केवल खून का रिश्ता नहीं होता, बल्कि उसमें समाज की अपेक्षाएँ, परिवार के दायित्व, और व्यक्तिगत मान्यताएँ भी गहराई से जुड़े होते हैं।

03. माता-पुत्र संबंध :

माता-पुत्र का संबंध मानव जीवन में सबसे सशक्त और भावनात्मक संबंधों में से एक माना जाता है। स्वतंत्रता के बाद की हिंदी कहानियों में भी माता और पुत्र के बीच के इस संबंध का प्रभावशाली चित्रण मिलता है, परंतु आधुनिकता के प्रभाव से इस संबंध में बदलाव भी देखे जा सकते हैं। पहले की कहानियों में माँ को ममता, त्याग, और वात्सल्य की प्रतिमूर्ति के रूप में देखा जाता था। बेटे के लिए माँ की बाहें उसकी सुरक्षित जगह होती थीं, और माँ की ममता का उसके जीवन में विशेष स्थान था।

हालाँकि, आधुनिक कहानियों में यह पारंपरिक चित्रण कुछ हद तक बदल गया है। आज की माँ को अक्सर बेटे की दया पर निर्भर, उपेक्षित और दीन-हीन प्राणी के रूप में चित्रित किया जाता है। विवाह के बाद बेटे की प्राथमिकताएँ बदल जाती हैं, और माँ का महत्व धीरे-धीरे घटने लगता है। बेटे की शादी के बाद माँ को कई बार उसके परिवार के लिए एक अनचाहा बोझ समझा जाता है। यदि पति जीवित हो तो माँ का परिवार में एक सम्मानजनक स्थान होता है, लेकिन पति के न होने पर बेटे के परिवार में उसकी स्थिति दयनीय हो सकती है।

'ऐसा भी होता है' कहानी में माता-पुत्र संबंधों के जटिल और कटु पक्ष को उजागर किया गया है। यहाँ एक माँ अपने तलाकशुदा बेटे के जीवन में खुशियाँ लौटाने के लिए बेचैन रहती है और उसके लिए एक उपयुक्त बहू की तलाश करती है ताकि वंशवृद्धि हो सके और बेटे का जीवन संवर सके। लेकिन समाज के दोगले मानदंडों के कारण वह तलाकशुदा या विधवा लड़की के बारे में सोचने से हिचकिचाती है, क्योंकि उसके दृष्टिकोण में मर्द और औरत में अंतर होता है। कहानी में तब एक और गहरी पीड़ा उभरती है जब बेटा किसी अमेरिकन लड़की से विवाह कर लेता है और माँ यह कड़वा घूंट पीने के लिए मजबूर हो जाती है।

'एक और श्रवण कुमार' कहानी में मातृत्व का एक और अनूठा और हृदयस्पर्शी पहलू देखने को मिलता है। बीजी, जो तीन बेटों की माँ है, अपने बेटों के द्वारा अलग-अलग कारणों से परित्यक्त कर दी जाती है। निंदर ने अमेरिका जाकर एक अमेरिकी लड़की से विवाह कर लिया और माँ की जिम्मेदारी से हाथ झाड़ लिया। निक्का ने अपनी शादी में माँ को बुलाने की जरूरत तक नहीं समझी और अपने ससुराल वालों को प्राथमिकता दी। लेखिका इस बात से खिन्न हैं कि वह माँ, जिसने अपनी सारी जवानी और जीवन की खुशियाँ बच्चों की देखभाल में लगा दीं, आज उसी माँ का निरादर हो रहा है। जब बीजी का सबसे छोटा बेटा उसे अपने घर पर बड़े प्रेम से बुलाता है, तो बीजी का मन भर आता है। पुत्री के घर से विदा होते समय वह आशा भरे स्वर में कहती है कि उसका छोटा बेटा बाकियों की तरह नहीं होगा और उसी के पास वह खुशी-खुशी चली जाती है।

'औरतें' कहानी में एक और सामाजिक दृष्टिकोण से माँ-पुत्री के संबंधों पर ध्यान दिया गया है। मीतू, जो आधुनिक सोच वाली है, जब अपने भाई की तुलना में अलग व्यवहार देखती है, तो उसे समाज के भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण का एहसास होता है। मीतू को रात की पार्टी में जाने से मना कर दिया जाता है, क्योंकि यह उसकी शादी में बाधा डाल सकता है। लेखिका यहाँ दर्शाती हैं कि बेटा-बेटी के पालन में समाज किस तरह से दोहरा मापदंड अपनाता है। मीतू को यह भी महसूस होता है कि उसकी माँ, जो अपने जीवन में पारंपरिक बंधनों में जकड़ी रही, उसी परंपरा के अनुसार अपनी बहू को भी नियंत्रित करने का प्रयास करती है। यह माँ की एक परंपरावादी सोच का हिस्सा है, जो अपनी बहू को अपनी ही तरह सीमाओं में बांधकर रखना चाहती है।

इन कहानियों के माध्यम से लेखिका ने माता-पुत्र, माता-पुत्री और समाज के बदलते दृष्टिकोण को रेखांकित किया है। आधुनिकता के प्रभाव में पारंपरिक रिश्तों में आई दूरी और सामाजिक मानदंडों के कारण माँ के त्याग और ममता का अनादर होना इन कहानियों का मुख्य संदेश है।

04. पिता-पुत्री संबंध :

भारतीय समाज में पिता-पुत्री के संबंधों को पारंपरिक रूप से भेदभाव से प्रभावित पाया गया है। बेटियों को अक्सर 'पराया धन' समझा जाता है और उनके जन्म को कई बार दुःख का कारण मान लिया जाता है। परिवारों में बेटियों के साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है जैसे वे अस्थायी सदस्य हों, जिनका घर छोड़कर किसी और के पास जाना ही अंतिम लक्ष्य हो। माता-पिता बेटों पर जो खर्च करते हैं, उसे भविष्य में समर्थन और देखभाल के रूप में देखते हैं, जबकि बेटियों पर खर्च को केवल एक अस्थायी और पराए घर के लिए निवेश समझते हैं। इसी वजह से उन्हें पोषण और अन्य सुविधाओं में भी अक्सर कमी महसूस होती है।

'वह एक लड़की' कहानी में मृदुला और उसके पिता के संबंधों में समाज की परंपरागत चिंताओं का प्रतिबिंब देखा जा सकता है। अपने मानसिक विकलांग बेटे की वजह से पिता को बेटी की शादी में बाधा की आशंका है, इसलिए वे इस तथ्य को किसी से साझा नहीं करना चाहते। मृदुला भी इस स्थिति को समझती है और अपनी सहेली को बताती है कि उनके पिता मानते हैं कि यदि किसी को इसके बारे में पता चला तो मृदुला के विवाह में समस्याएँ आ सकती हैं। यह पिता का चिंता भरा व्यवहार समाज में विकलांगता को लेकर मौजूद पूर्वाग्रहों को दर्शाता है, जहाँ एक परिवार के सदस्य की विकलांगता को अन्य सदस्यों के भविष्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला समझा जाता है।

'ढर्रा' कहानी में पिता-पुत्री संबंध एक और स्वरूप में उभरता है। यहाँ मिस गीता, जो होटल के रिसेप्शनिस्ट का काम करती हैं, अपने परिवार का भरण-पोषण करती हैं, क्योंकि उनके पिता पुरानी बीमारी से ग्रस्त और बेरोजगार हैं। यहाँ पुत्री अपने पिता की जिम्मेदारियों को निभाते हुए दिखाई देती है, जो कि पारंपरिक मानदंडों से अलग है। गीता का अपने पिता के प्रति कर्तव्य और परिवार का पालन-पोषण करने का भाव आधुनिक समाज की उस सच्चाई को दर्शाता है जहाँ बेटियाँ भी अपने माता-पिता का सहारा बन रही हैं।

'एक थी निम्मो' कहानी में अमृता के व्यक्तित्व और विचारों में पिता के प्रति स्नेह और माँ के प्रति आक्रोश की झलक मिलती है। अमृता, जो शारीरिक सौंदर्य के मापदंडों पर खरी नहीं उतरती और अपनी शारीरिक बनावट में पिता से मिलती-जुलती है, अपने पिता से गहरा लगाव रखती है। विवाह के अवसर पर जब उसकी माँ अपने पति के प्रति सतही स्नेह का प्रदर्शन करती हैं तो अमृता अपनी माँ के इस व्यवहार से बेहद खफा हो जाती है। अमृता की यह प्रतिक्रिया पिता के प्रति उसकी प्रेम की गहराई और माँ के प्रति उसके आक्रोश का प्रतीक है, जो उसे पिता के साथ हुए अन्याय और उनकी उपेक्षा के कारण हुआ है।

इन कहानियों में पिता-पुत्री संबंधों के विभिन्न पहलुओं का चित्रण किया गया है, जो समाज की पारंपरिक धारणाओं, चुनौतियों और व्यक्तिगत संबंधों में उत्पन्न होती संवेदनाओं को दर्शाते हैं। इन कहानियों के माध्यम से पिता-पुत्री के रिश्ते में निहित विभिन्न भावनाओं, कर्तव्यों और समाज

द्वारा लगाए गए मानदंडों की बारीकियों को लेखक ने बहुत ही सजीव और प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष :

उषा महाजन की कहानियाँ स्त्री-पुरुष संबंधों के जटिल और बहुआयामी पहलुओं को उजागर करती हैं। उनके पात्र पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के बीच संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। पति-पत्नी, भाई-बहन, माता-पुत्र और पिता-पुत्री जैसे संबंधों में आने वाली चुनौतियों, संघर्षों और भावनात्मक उथल-पुथल को उन्होंने अपने लेखन में बड़ी संवेदनशीलता से चित्रित किया है।

महाजन जी की कहानियों में हम देखते हैं कि विवाह जैसे संस्थान में भी प्रेम, विश्वास, और सम्मान के साथ-साथ अक्सर मजबूरी, त्याग, और समाज द्वारा थोपे गए बोझ भी शामिल होते हैं। भाई-बहन के रिश्ते में त्याग, प्रेम, जिम्मेदारी, उपेक्षा और मानवीयता के विविध रंग दिखाई देते हैं। माता-पुत्र का संबंध तो मानव जीवन में सबसे सशक्त और भावनात्मक संबंधों में से एक है, लेकिन आधुनिकता के प्रभाव से इस संबंध में भी बदलाव आए हैं। पिता-पुत्री के संबंधों में समाज की परंपरागत धारणाओं, चुनौतियों, और व्यक्तिगत संबंधों में उत्पन्न होती संवेदनाओं को भी उन्होंने बहुत ही सजीव और प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है।

उषा महाजन की कहानियाँ न केवल मनोरंजन करती हैं, बल्कि हमें समाज के विभिन्न वर्गों के लोगों के मनोविज्ञान को समझने में भी मदद करती हैं। उनके लेखन में सामाजिक परिवर्तन, महिलाओं की स्थिति, और पारिवारिक मूल्यों जैसे विषयों पर गहराई से विचार किया गया है। उनकी कहानियाँ हमें यह सोचने पर मजबूर करती हैं कि हम अपने रिश्तों को कैसे बेहतर बना सकते हैं और समाज में एक-दूसरे के प्रति अधिक संवेदनशील कैसे बन सकते हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. मोहभंग - उषा महाजन की यादगारी कहानियाँ - हिंदी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2011
2. सच तो यह है - उषा महाजन - कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, 2007
3. एक और श्रवणकुमार - उषा महाजन की यादगारी कहानियाँ - हिंदी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2011
4. ढर्रा - उषा महाजन की यादगारी कहानियाँ - हिंदी पाकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2011
5. और सावित्री ने कहा - उषा महाजन की यादगारी कहानियाँ - हिंदी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2011
6. ऊब - उषा महाजन - औरतें तथा अन्य कहानियाँ सरस्वती विहार, नई दिल्ली, जनवरी-2008
7. ऐसा भी होता है - औरतें तथा अन्य कहानियाँ सरस्वती विहार, नई दिल्ली, जनवरी-2008
8. वह एक लड़की - उषा महाजन की यादगार कहानियाँ
9. एक थी निम्मो - उषा महाजन - औरतें तथा अन्य कहानियाँ सरस्वती विहार, नई दिल्ली, जनवरी-2008

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

देशकाल

राष्ट्रव्यापी अराजकता का प्रतीक : 'राग दरबारी'

डॉ. प्रीति राय

सहायक आचार्य
बाबासाहेब भीमराव विश्वविद्यालय,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश
9451888162
pritiraivy.mzu@gmail.com

शोध-सार :

राग दरबारी (1968) श्रीलाल शुक्ल द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण उपन्यास है, जो स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद के ग्रामीण भारत की सामाजिक-राजनीतिक स्थितियों का यथार्थ चित्रण करता है। यह उपन्यास भारतीय ग्रामीण समाज के सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक यथार्थ से गहराई से जुड़ा हुआ है, और इसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। इस उपन्यास में ग्रामीण प्रशासन में फैले भ्रष्टाचार और अव्यवस्था को उजागर किया गया है। शिक्षा, स्थानीय राजनीति और नौकरशाही जैसी संस्थाओं की खामियों को उपन्यास में व्यंग्यात्मक रूप से दर्शाया गया है। आज भी भ्रष्टाचार भारतीय समाज की एक बड़ी चुनौती है, और 'राग दरबारी' में शिवपालगंज गांव के माध्यम से इसे सजीव ढंग से दिखायागया है। उपन्यास में सत्ता और आम लोगों के बीच के संघर्ष को दिखाया गया है। आज भी, राजनीतिक व्यवस्थाओं में शक्ति और सत्ता का घालमेल देखने को मिलता है। उपन्यास में ग्रामीण राजनीति कैसे प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा अपने लाभ के लिए नियंत्रित की जाती है, यह आज के संदर्भ में भी प्रासंगिक है। 'राग दरबारी' ग्रामीण भारत की शिक्षा प्रणाली की अव्यवस्था और राजनीतिकरण पर तीखा प्रहार करता है, जहां वास्तविक शिक्षा का अभाव है। आज भी कई क्षेत्रों में शिक्षा प्रणाली राजनीतिक हस्तक्षेप और ढांचागत समस्याओं से जूझ रही है, जिससे यह उपन्यास अत्यंत प्रासंगिक बन जाता है। यह उपन्यास ग्रामीण भारत के जीवन, सामाजिक मानदंडों और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं को प्रकट करता है। हालांकि शहरीकरण तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन आज भी कई ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे ही सामाजिक ढांचे काम करते हैं, जिससे यह उपन्यास ग्रामीण समाज को समझने में सहायक है। उपन्यास में जाति और आर्थिक स्थिति पर आधारित सामाजिक पदानुक्रमों का उल्लेख है, जो रिश्तों और शक्ति संतुलन को प्रभावित करते हैं। जाति-आधारित भेदभाव और असमानता आज भी भारतीय समाज की समस्याएं बनी हुई हैं, जिससे इस उपन्यास की विषयवस्तु आज भी प्रासंगिक बनी हुई है। 'राग दरबारी' में सिस्टम की विफलता से आम आदमी की निराशा को यथार्थवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। यह उपन्यास सत्ता, नौकरशाही और न्याय व्यवस्था से लोगों की हताशा को प्रकट करता है, जो आज भी प्रासंगिक है। 'राग दरबारी' की प्रासंगिकता इस तथ्य में निहित है

कि यह भ्रष्टाचार, शिक्षा, शक्ति संघर्ष और सामाजिक असमानता जैसी समस्याओं को उजागर करता है, जो आज भी समाज में मौजूद हैं। यह उपन्यास व्यंग्यात्मक ढंग से भारतीय समाज की सामाजिक-राजनीतिक संरचना पर तीखा प्रहार करता है, जिससे यह एक कालजयी रचना बन जाती है।

बीज शब्द :

सत्तालोलुपता, न्याय-व्यवस्था, व्यंग्य, अभिव्यंजना, भ्रष्टाचार।

विश्लेषण :

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध एक अजीब असंतोष, अविश्वास, अस्वीकार, बौद्धिकता तथा वैचारिक संघर्ष, मानसिक कशमकशऔर परम्परागत जीवन पद्धति के खोखलेपन के एहसास का जन्मदाता है। स्वतंत्रता के बाद मूल्यहीन, स्वार्थ, सत्तालोलुपता तथा भ्रष्टाचार के बढ़ने के कारण 1960 तक पहुँचते-पहुँचते भारतीय समाज सर्वाधिक अनुशासनहीन, विघटित, स्वार्थी एवं अव्यवस्थित बन गया। साठोत्तरी हिंदी उपन्यास व्यक्ति, समाज, देश तथा परिवेश मे भोगे हुए क्षणों की तीव्र अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। वह समाज एवं राष्ट्र की भ्रष्ट मान्यताओं, हर दिन टूटकर बिखरती हुई परंपराओं तथा सामाजिक, राजनीतिक अनैतिकता के विरोध में अत्यंत अशांत युवा मानस कीअभिव्यक्ति है। भारतीय जीवन के महानगर, कस्बाई तथा ग्रामीण जिंदगी की विविध समस्या तथा उनके रूप इन उपन्यासों में यथार्थ घरातल पर चित्रित किए गए हैं। इस पीढ़ी के उपन्यासकारों ने समाज के विभिन्न वर्गों की समस्याओं के साथ-साथ भ्रष्टाचार एवं नौकरशाही, दिन प्रतिदिन टूटती न्याय-व्यवस्था, आपातकाल का उत्पीड़न आदि प्रश्नो को प्रस्तुत किया है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज को समझने के लिए जिन रचनाकारों ने अपने तर्क निर्मित किये उनमें श्रीलालशुक्ल का महत्व अद्वितीय है। उनकी सबसे बड़ी खासियत यह है कि वे जटिल और संश्लिष्ट जीवन के प्रति सचेत दिखते हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास रागदरबारी का विशिष्ट स्थान है। यह उपन्यास साठोत्तरी उपन्यासों में मील का पत्थर है। डॉ0 गणपति चंद्रगुप्त के अनुसार किसी विचारों को प्रत्यक्ष रूप में व्यक्त न करके प्रकृति के क्रिया कलापों के माध्यम से ध्वनित करते हैं, उसे व्यग्योक्ति कहते है।[1] संपूर्ण उपन्यास में व्यंग्य के साथ-साथ जीवन के विविध क्षेत्रों के असंगतियों की ऐसी तीक्ष्ण अभिव्यक्ति, विडंबनाओं की ऐसी विद्रूपात्मक अभिव्यंजना तथा दूषित व्यवस्था के विरुद्ध ऐसा तीव्र आक्रोश अन्यत्र उपलब्ध नहीं है।दूधनाथ सिंह लिखते है कि श्री लाल शुक्ल एक व्यंग्यकार की भाषा का इस्तेमाल करते है, क्योंकि कथा के भीतर वैसी परिस्थिति यों है। भाषा ही हमारे देखने के ढंग यानि दृष्टिकोण को निर्धारित करती है। [2] रागदरबारी की शुरूआत शहर के किनारे बसा गाँव शिवपालगंज से होता है ।यह किसी घटना अथवा सीमित पात्रों की कहानी न हो कर समस्त भारत की और आजादी के बाद के परिवेश की कथा है। एक प्रकार से सारा देश ही रागदरबारी के व्यंग्य का आलम्बन है। रागदरबारी का कथानक और उसकी समस्त घटनाओं का केंद्र शिवपालगंज है, जो उत्तरप्रदेश के अवधी भाषी क्षेत्र में किसी बड़े नगर के निकट स्थित है। शिवपालगंज एक गाँव नहीं कस्बा है , गबन है , भ्रष्टाचार है और उठा-पटक की राजनीति है। यह सब कुछ शिवपालगंज में नहीं सारे देश में है। उपन्यास में एक जगह रूप्पन कहता है ङ्क मुझे तो लगता है दादा , सारे मुल्क में यह शिवपालगंज ही फैला हुआ है।[3] लेखक ने शिवपालगंज को बहाना बनाकर सम्पूर्ण देश की दशा पर चुटीला व्यंग्य किया है। एक-एक बात का निरूपण करने के लिए एक-एक व्यंग्य लेख की रचना करनी पड़ी है, वह चाहे भॉग पीने की विधियों पर हो या जुतियाने के तरीकों पर, भाषाबाजी पर हो या ठहाकों की किस्मों पर, कवि कहानी का रोंप रहोया कै लेण्ड रों पर घूसखोरी पर हो या सस्ती इश्क बाजी पर , मेले पर हो या कचहरी पर, लोकतंत्र पर हो या चुनावों पर। स्वयं लेखक के शब्दों में- रागदरबारी का संबंध एक बड़े नगर से कुछ दूर बसे हुए गाँव की जिंदगी से है , जो पिछले बीस वर्षों की प्रगति और विकास के नारों में बावजूद निहितस्वार्थी और अनेक अवांछनीय तत्वों केआधातों के सामने घिसटर ही है। यही उसकी जिंदगी का दस्तावेज है।[4] शिवपालगंज तथा इस की कथा का सूत्र धार है- रंगनाथ नामक शोध छात्र, जो अपना स्वास्थ्य सुधारने हेतु शिवपालगंज में अपने मामा वैद्य जी के यहा आता है। उपन्यासकार के विषय की विशाल परिधि में इन्हीं वैद्य जी

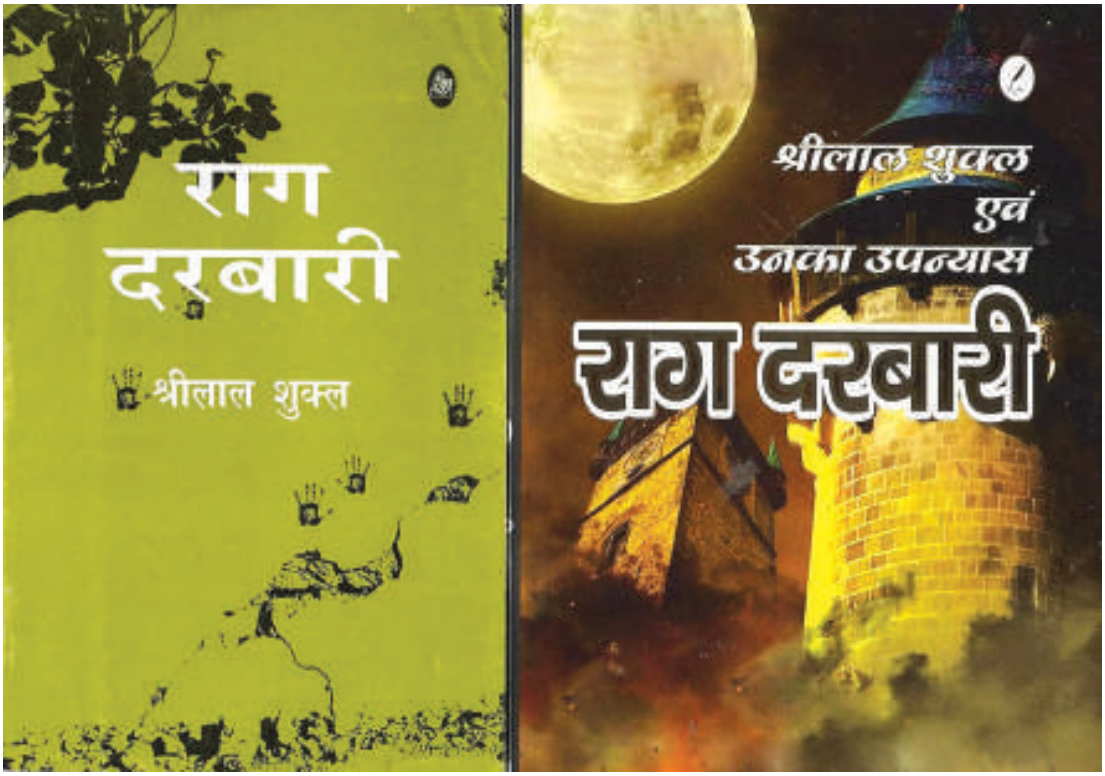

को कथा को केंद्र में रख कर गाँव की सहकारी संस्था, चुनाव, पंचायत, बैंक, पुलिस, शिक्षा- सस्थाएँ, प्रोफेसर, दुकानदार, व्यापार, पहलवान, गुंडे, अखबार और बेकारी आदि विषयों को स्पर्श किया है। वैद्य जी विशुद्ध अवसर वादी नेताओं के प्रतिनिधि है। श्री लाल शुक्ल के अनुसार अंग्रेजों के जमाने में वे अंग्रेजों के लिए श्रद्धा दिखाने लगे ।देशी हुकमत के दिनों में वे देशी हाकिमों के लिए श्रद्धा दिखाने लगे । वे देश के पुराने सेवक थे।[5] भारत के छह लाख से अधिक गाँव, जिसमें उसकी अस्सी प्रतिशत आबादी सुख-दुख की भाव-लहरियों का अनुभव करती है , इस देश की महत्ता का प्रतीक है। राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी ने इन्हें ही भारत की आत्मा माना है । भूदान आंदोलन, जमींदारी उन्मूलन् , विकास खण्डों, सहकारी समितियों , ग्राम पंचायतों की व्यवस्था आदि के बावजूद गाँव की बदहाली बढ़ती जा रही है। सारी संस्थाएँ लूट-खसोट और भ्रष्टाचार के अड्डे बन गए है । यहाँ किसान और कृषि कार्य पूरी तरह गायब है । गाँव छोटे पहलवान, जोगनाथ, रामधीन , शत्रुघ्न सिंह, रिपुदमन सिंह, डॉ. बलराम सिंह जैसे डाकुओं की क्रीडास्थली बन गया है। सबसे बड़े डाकू स्वय वैद्य जी है। श्री लाल शुक्ल जी को जिस वर्ग के माध्यम से उपस्थित करते हैं वह भार तीय वर्णाश्रमी व्यवस्था का कुलीन सवर्ण समुदाय है। इनका वर्णन उपन्यास में कुछ इस प्रकार हुआ है। उनका पूरा कर्म योग सरकारी स्कीमों की फिलासफी पर टिका था। मुर्गी पालन के लिए ग्रांट मिलने पर नियम बना तो उन्हों ने मुर्गियाँ पालने का ऐलान कर दिया ।एक दिन उन्होंने कहा कि जाति-पाँति बिल्कुल बेकार की चीज है और हम बाभन और चमार एक हैं। यह उन्होंने इसीलिए कहा क्योंकि चमडा उद्योग की ग्रांटमि लने वाली थी । चमार देखते ही रह गए और उन्होंने चमडा कमाने की ग्रांट लेकर अपने चमड़े को ज्यादा चिकना बनाने में खर्च भी कर डाली। ..... उनका ज्ञान विशद था। ग्रांटया कर्ज देने वाली किसी नयी स्कीम के बारे में योजना आयोग को सोचने भर की देर थी , वे उसके बारे में सब कुछ जान जाते।[6] रागदरबारी के वैधजी, उनका कुनबा और उनके संगी- साथी लूट तंत्र की इसी ताकत के प्रतिनिधि है। शिव कुमार मिश्र के अनुसार रागदरबारी के वैध जी काल

घुसंस्क रण है, अपने स्वार्थ तथा लक्ष्य पर बराबर निगाह रखने वाले शक्ति, धन तथा सत्ता के तंत्र के हर पुरजे तक उनकी पहुँच है। अपने लक्ष्य के लिए मीठी छुरी से किसी की भी गर्दन काट लेने में इन्हें कोई संकोच नहीं है। [7] रागदरबारी में किसान प्रेमचन्द के होरी, गोबर , दुखीचमार, घीसूमाधव, शंकरऔर हल्कू जैसे दुखी और उत्पीडित नहीं है , बल्कि रादरबारी का किसान पं. कालिका प्रसाद सरीखा है, जिसका पेशासर का रीग्रां ट और कर्जे खाना था। वे सरकारी पैसे के द्वारा सरकारी पैसे के लिए जीते थे। उपन्यासकार के शब्दों में कालि का प्रसाद प्रेमचंद के उन कथानायको में नथे जो लगान वसूलने वाले अमीन को देखते ही घर के भीतर घुस जाते थे और बीबी से घबराहट में कहने लगते थे दरवाजे पर सहना खड़ा है। ये उनमें थे कि अ गर हजार रूपये की कुर्की के लिए अमीन चबूतरे से नीचे खड़ा हुआ खुशामद कर रहा है और वे चबूतरे से ऊपर बैठे हुए निश्चित भाव से कह रहे है आपको कारवाई रोकने में दिक्कत नहो, इसलिए मैंने भी दरख्वास्त लगा दी है।[8] उपन्यास में ग्यासुद्दीन की कुंवारी कन्या जो यौवन की स्वच्छंद प्रतिमा है, फिल्मी शैली में पत्र लेखन करती है। शहरों का बुरा असर अब गाँव पर पड़ रहा है। शहरी वेश भूषा और फिल्मों की बीमारी गाँव में फैल गई है, जिस के परिणामस्वरूप युवा वर्ग दिन-दिन निकम्मा होता जा रहा है। उपन्यासकार का मानना है कि अब गाँवों में कमल नहीं, केवल कीचड़ है। आजादी के बाद क्रमश: हमारा नैतिक पतन होता जा रहा है। उपन्यास मेंग्रामीण शिक्षा का यथार्थ , शिक्षा अधिकारी के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है- गाड़ी छंगामल इण्टर कालेज के सामने से निकली। अंडर वियर पर बुश्शर्ट और धारीधार पैजामे पर बिना बनिया न का कुरता पहने हुए कई लड़के पुलिया पर बैठे थे। दोनों और से तीतर की बोलियों बोली जा रही थी। सेकेंड के एक खंड में उन लड़ कों को देखते ही उन के बेतुकेपन से उन्हों ने भॉप लिया की विद्यार्थी है।[9] स्वाधीनता के बाद भी साक्षरता की मात्रा जन संख्या के अनुपात में नहीं बढ़ी आज भी ग्रामीण लोग का गजपर अंगूठा लगाते है। उपन्यास में स्पष्ट है- दस्तखत कौन करता है ? किसी ने हमारी सात पीढ़ी में भी दस्त खतन हीं किया कि हमीं करेंगे ? देख लो पाँच सौ कागज रखे हैं। हर एक में मैंने अंगूठे का निशान लगाया है।[10] शिक्षा प्रणाली किसी भी राष्ट्र और समाज के निर्माण का आधार भूततत्व होती है। स्पष्ट है कि गाँवों में शिक्षा के बारे में इतना ध्यान नहीं दिया जाता, जितना शहरों में। कॉलेज के छात्र पाठ्य पुस्तकों की जगह फिल्मी और अश्ली लसाहित्य पढ़ते हैं। यूनिवर्सिटी लेक्ररर की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है ।शुक्ल जी इस पर तीखा व्यंग्य करते हुए कहते है- और सच पूछो तो मुझे युनिवर्सिटी में लेक्ररर न होने का भी कोई गम नहीं है। वो तो और नरक है।..... जिसे देखो कोई न कोई रिसर्च प्रोजेक्ट हथियाने मे लगा हुआ है। जिसका खाते है, उसीका गाते हैं और कहलाते क्या है बुद्धिजीवी।[11] शोधार्थी और शोधकी गरिमामें अध: पतन हो रहा है। सारा शोधकार्य पुस्तकालय में नहीं, घरो में होता है- रंगनाथभी दो दिन पहले शहर जाकर युनिवर्सिटी के पुस्तकालय से बहुत सी किताबे उठा लाया था और इस समय नीम पर फैली धूप की मार्फत उसका अध्ययन कर रहा था।[12] आजादी के बाद हमारे देश में शिक्षा का थोड़ा बहुत प्रचार-प्रसार अवश्य हुआ है परसार्थक शिक्षा के अभा वमें हमारा प्रजातंत्र अबभी लड़खड़ाता हुआ चल रहा है। उपन्यास में वर्तमान शिक्षा पद्धति को व्यंग्य शैली में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है वर्तमान शिक्षा पद्धति रास्ते में पड़ी हुई कुतिया है , जिसे कोई भी लातमार सकता है।[13] उपन्यास में रंग नाथ शिक्षा कीविडम्बना और नगरी यसंस्कृति की सार्थकता को प्रस्तुत करता है। भाषात्मक आक्रोशतो है उसमें , परक्रियात्मकताका अभाव है। श्री लाल शुक्ल बहुत बेबाक ढंग से हमारी युवा-वर्ग की शहरी मान सिकता, पश्चिमी संस्कृति काअंधानुकरण तथाअस्मिताकी लुप्तप्राय-चेतना पर व्यंग्य करते हुए प्रिसिपल के माध्यम से कहते हैं, विलायत का एक चक्कर लगाने के लिए यदि साबित करना पड़ जाए किहम अपने बाप की औलाद नहीं है , तो उसे भी साबित कर देंगे।[14] डॉ. नंदलाल कल्ला के मतानुसार उनकी सशक्तता इसमें है कि श्री लाल शुक्ल हिंदी के व्यंग्यो पन्यासों की परम्परा का कीर्तिस्तम्भ रहा है।[15] गाँव अनेक

दृष्टियों से पिछड़ा हुआ है शिक्षा के साथ-साथ गाँवों में शहर की तुलना में स्वास्थ्य के बारे में सामान्य सुविधा भी मुहैया नहीं है - अस्पताल में अगर कोई डाक्टर हुआ भी तो पानी की बोतल पकडा कर कहेगा कि लो भाई, राम का नाम लेकर पी जाओ। .... क्योंकि उसके पास देने की दावा नहीं होगी। होगी भी तो चुराकर बेचने के लिए पहले ही निकाल कर रख ली गई होगी। शहर में हर दिक्कत के आगे एक राह है और देहात में हर राह के आगे एक दिक्कत है। [16] रागदरबारी में अराजकता से परिपूर्णशासन व्यवस्था की उपमा ट्रक के गियर के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है- घर घरा कर ट्रक चली। .... यहाँ पहली बार ड्राइवर टॉपगियर का प्रयोग किया परवह फिसल कर न्युट्र्ल में गिरने लगा।हर सौगज के बाद गियर फिसल जाता और एक्सिलेटर दबे होने से ट्रक की घर घरा कर बढ़ जाती। रंग नाथ ने काहा, ड्राइवर साहब तुम्हारा गियर तो बिल्कुल अपने देश की हुकूमत जैसा है। [17] इस से देश की शासन व्यवस्था की विसंग ति स्पष्ट होता है ।यहाँ जो उपक्रम, योजनाएँ जनता के हित में बनी, फिसल कर शौषण को बढ़ावा देने में सहायक हुई। शिवपालगंज की को-ऑपरेटिव यूनियन अपने यहीं होने वाले गबन के बारे में प्रस्ताव पास करती है कि सुपरवाइजर ने जो हमारी आठ हजार रूपये की हानि की है, उसकी पूर्तिके लिए सरकार अनुदान दे। वैद्य जी के शब्दों में हमने पुलिस को सूचना दे दी है। आगे सरकार का दायित्व है या तो सरकार सुपरवाइजर को बंदी बनाकर हमारे सामने प्रस्तुत करे या उसे हर्जाना भरना पड़ेगा। [18] रागदरबारी आजा दी के बाद भारतीय न्याय व्यवस्था का जीवं तदस्ता वेज है। उपन्यास में अत्यंत निरीहपर तुंनि श्चयी पात्र लंगड ने लगभग सात साल पहले दिवानी का एक मुकदमा दायर किया था ।मुकदमे के लिए एक पुरानी नकल चाहिए थी, जिसके लिए तहसील में दरख्वास्त दी थी। नकल बाबू को पाँच हजार रूपये रिश्वतन देकर वह धर्म की लड़ाई में जीवन पर्यन्त जूझता रहा ।वस्तुत: वह कचहरी के दरवाजे पर टॅगा हुआ एक पोस्टर बनजाता है। न्याय व्यवस्था की सबसे बड़ी कमी है न्यायका देर से मिलना। न्याय प्रक्रिया इतनी धीमी चलती है कि प्रार्थीमर जाता है और निर्णय नहीं हो पाता। थाना पुलिस में व्याप्त भ्रष्टाचार और दुव्यवस्था का चित्रण शिवपालगंज के दरोगा और उनके सिपाहियों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है वह अकेला आदमी बीस गाँवों की सुरक्षा के लिए तैनात है और जिसहालत में जहाँ है, वहाँ से उसी हालत में बीसो गाँवों में अपराधरो कसकता है, अपराध होगया तो उसका पतालगा सकता है और अपराधन हुआ तो उसेक रासकता है।[19] आजादी के बाद राजनीतिक चेतना का विकास भिन्न-भिन्न रूपों में हुआ है । राजनैतिक व्यक्ति अवसरवादी, स्वार्थी और चरित्रहीन उन्माद में उलझ गए।भाई-भतीजा वाद, रिश्वत, भ्रष्टाचार और अनुचित साधन प्रयोगों में नेताओं की रूचि बढ़ने लगी। स्वतंत्रता के बाद भौतिक वादी दृष्टिकोण के कारण भौतिक सुख-सुविधा और ऐश्वर्य को व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य मान लिया गया। उपन्यास में वैद्यजी यूनियन को त्यागपत्र देकर अपने बड़े लड़के बद्री पहलवान को कोऑपरेटिव यूनियन का मैनेजर नियुक्त करते हैं। इससे स्पष्ट है कि त्याग भी अपनों के लिए किया जाता है , समाज के लिए नहीं। रागदरबारी में चुनाव जीत ने के तीन फॉर्मूले बताये गए है ।प्रथम रामनगर वाली , जिसमें दोनों दल एक-दूसरे के विरूद्ध पारस्परिक हिंसा का आरोप लगाते हैं। दूसरी प्रणाली में नेवादा गाँव वाली है, जिसमे राजनीति को धर्म से जोड़ कर जनता को मूर्ख बनाया जाता है । तीसरी प्रणाली महिपालपुरवाली है, जिसमे चुनाव अधिकारी की गलतियों की आड़ में चुनाव को जीतने का प्रयास किया जाता है। यह है विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की यथार्थ तस्वीर ।पंचायत चुनाव में वैद्य जी की नाइंसाफी और अपने बड़े भाई बद्री पहलवान के कारनामों से असं तुष्ट रूप्पन के मनोदशा का चित्रण करते हुए शुक्ल जी कहते हैं-रूप्पन के मन में वह बेचैनी पैदा हो गयी थी, जिसकी वजह से आदमी विभीषण, ट्रॉट्स्की या सुभाष चंद्र बोस बनकर कुछ कर दिखाना चाहता है और अंत में फाँसी के तख्ते पर, जेल में या जय प्रकाश नारायण और अच्युत परवर्धन के सन्यास में जाकर दम लेता है। [20] श्रीलाल शुक्ल ने राजभवनों में आयोजित शपथ समारोह पर तीखा व्यंग्य करते हुए राजनीति तथ्यों

का यथार्थ रूप उद्घाटित किया है- छोटे ने निष्ठापूर्वक गोपनीयता की शपथ ली। पर वह शपथ गोपनीय उन सभी शपथों जैसे है, जो राज भवनों में ली जाती है।[21] स्पर्धा में परिवर्ति त हो चुका है। स्वाधीनता आंदोलन में गांधी स्वतंत्रता पूर्व भारतीयों में राष्ट्रप्रेम निष्काम था। वह भावना स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सत्ता की होड़ और प्रति विचार धारा का जो प्रभाव था, स्वाधी नता के बाद सिर्फ राजनीतिक स्वार्थ के लिए रह गया। उपन्यास में गांधी- चबूतरे के प्रसंग के माध्यम से लेखक कहता है- गाँधी जैसे कुछ लोगों को आज भी याद होगा कि भारत वर्ष में ही पैदा हुए थे और उनके अस्थि कलश के साथ ही उनके सिद्धांत को संगम में बहा देने के बाद यह तय किया गया था कि गाँधी की यादमें सिर्फ पक्की इमारते बनायी जाएंगी और उसी हल्ले में शिवपालगंज में यह चबूतरा बन गया था।[22] गाँधी चबूतरे पर मनुष्य तथा कुत्ते धूप खाया करते थे तथा उसके कोने में पेशाब भी कर देते थे । गाँधी जी के प्रति न किसी के मन में श्रद्धा थी, न ही उनके सिद्धांतों का अनुसरण करना चाहते थे। महात्मा गाँधी के रूप में भारतीय राजनीति में जो पाखंड चल रहा है, उसका पदार्फाश करते हुए उपन्यासकार ने ऐसे पाखंडियों पर कठोर आघात किया है। उर्मिला कुमार केअनुसार उन में भाषा का शालीन संस्कार है। सूक्ति युक्त टिप्पणियो या टकसाली मुहावरों से श्री लाल शुक्ल सतर्क रहे है।[23] भारत में दहेज एक कु प्रथा है। आज भी दहेज के बिना शादी नहीं होती है। उपन्यास में बेला के पिता गयादीन कहता है - जब दामाद खरीदने निकले है तो अच्छी कीमत भी देने को तैयार है। उसपर शादी बिना दिक्कत के तय हो गई, सिर्फ लड़के की कीमत के बारे में बात पक्की नहीं हो पायी।[24] आज शिक्षित नौकरी पेशा युवक भी दहेज की अधिक अपेक्षा रखता है। उपन्यास में श्री लाल शुक्ल कहते है - देश के औसत नौजवान प्रेम अपने साथ पढ़ने वाली लडकियों से और ब्याह अपने बाप के द्वारा दहेज की सीढ़ी से उतारकर लायी गई लड़की से करता है।[25] इससे स्पष्ट है कि शादी- ब्याह में प्रेम से अधिक दहेज को महत्व दिया जाता है। जमीदारी टूटने पर जाति प्रथा का बोल-बाला भारतीय गाँव में पनपने लगा था। उपन्यास में जाति वैमनस्य और वर्गीय शोषण को प्रामाणिक अभिव्यक्ति मिली है। जाति - प्रथा को खत्म करने के लिए शुक्ल जी एक तरकीब बताते हैं। इस देश में जाति प्रथा को खत्म करने की यही एक सीधी सी तरकीब है। जाति से उसका नाम छीन कर उसे किसी आदमी का नाम बना देने से जाति के पास कुछ नहीं रह जाता। वह अपने-आप खत्म हो जाती है।[26] उपन्यास में बद्री पहलवान बेला से शादी की बात छोटे पहलवान से करते है तो वह चकरा जाता है, ऐसा मैंने न तो कभी देखा न सुना। वह कहता है-सोच-समझ कर बोलो। वैद्य महाराज ऐंठ गए तो पूरी स्कीम मसक जाएगी।[27] एक महत्वपूर्ण तत्व है। राज नैतिक दल जाति और जाति वाद को प्रश्रय देता है। गुरु तुम बॉभन्, वह बनिया! जातीयता चुनाव प्रक्रिया में उपन्यास में चुनाव जीतने की राम नगर वाली विधि और नेवा दा वाली विधि इस बात का प्रमाण है। प्रत्याशी के चयन उस के निर्वा चन क्षेत्र में आने वाली जातियों के प्रभाव को ध्यान में स्ख कर किया जाता है। रागदरबारी भारतीय जीवन और आधुनिक मानसिकता को परिवेश गत् आयामों में समेटने वाला एक जीवन्त दस्तावेज है। उपन्यास में श्री लाल शुक्ल ने मध्यवर्गीय राजनीति पर अपना ध्यान केंद्रित कर परिवेश का चित्रण किया है। कथा में मोह, रंजकता के हल्के नुस्खों तथा सपाट बयानी से युक्त जीवन-चित्रण को प्रयत्नपूर्वक टाल कर इस उपन्यास में आधुनिक भारतीय परिवेश और उसमें जीवन-यापन करने वाले प्राणियों के अन्तरंग एवं अन्तर्मन की झाकियों प्रस्तुत कर के शिवपालगंज की सामूहिक मान सिकता कुंठित व्यक्तियों के बौनेपन को उजागर किया गया है। उपन्यास में चित्रित समाज एवं परिवेश के दस्तावेज को पूरे व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करके आधुनिक भाव बोध को नए अंदाज में प्रस्तुत किया गया है। उनका विशेष उद्देश्य सामाजिक प्रतिष्ठा एवं मूल्यो के आधार पर मानव जीवन का महत्व और उसके द्वारा सामाजिक विकास को दर्शाना है। वे रूढ़ियों, संस्कारो में बंधे हुए मनुष्य की विवशता को प्रस्तुत करते है। वास्तव में श्री लाल शुक्ल का व्यक्तित्व और लेखन बहुत पेचीदा नहीं है। उसका सौदर्य

की उसकी सहजता और मौलिकता में है। श्री लाल शुक्ल जी में अफसरी यू भी बहुत कम है, नहीं के बराबर। अवकाश प्राप्ति के बाद तो एक दम नहीं है।[28] उनका उद्देश्य ग्रामीण तथा शहरी जीवन की स्वार्थवृत्ति और हीनभावनाओं से गुंथे हुए ग्रामीण किसान, मजदूर, मध्यवर्ग तथा राजनीतिक पतन केयथार्थ को उजागर करना था। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि रागदरबारी में धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा कला और साहित्य के क्षेत्र में हो रहे विसंगतियों पर प्रहार किया गया है। हर क्षण कदम-कदम पर व्यंग्य के माध्यम से आजादी के बाद के भारत के ग्रामीण परिवेश की स्थितियों को लक्षित किया गया है। श्री लाल शुक्ल ने स्वाधीनता के बाद ग्रामीण और शहरी जीवन की सामाजिक स्थिति, औद्योगी करण की दुर्बलताएँ, आर्थिक अन्याय, धार्मिक स्थिति, शासन की व्यवस्था, शिक्षा एवं शिक्षित वर्ग, न्याय व्यवस्था, राजनीतिक स्थिति, पुलिस व्यवस्था आदि विद्रूपताओं को परिवेश के द्वारा उपस्थित किया है। ❑

संदर्भ :

1. हिंदी भाषा और साहित्य विश्वकोश डॉ. गणपतिचंद्र, पृ. 401
2 तंदभव (पत्रिका) उद्धृत दूधनाथ सिंह का लेख, पृ. 6
3. रागदरबारी : श्री लाल शुक्ल, पृ. 313
4. वही, पृ. 51
5. वही, पृ. 29
6. वही, पृ. 149
7. तदभव (पत्रिका) उद्धृत दूधनाथ सिंह का लेख, पृ. 19
8. रागदरबारी : श्री लाल शुक्ल, पृ. 149
9. वही, पृ. 159
10. वही, पृ. 229
11. वही, पृ. 191
12. वही, पृ. 86
13. वही, पृ. 35
14. वही, पृ. 93
15. व्यंग्यात्मक उपन्यास तथा रागदरबारी : डॉ. नंदलाल शुक्ल, पृ. 41
16. रागदरबारी : श्री लाल शुक्ल, पृ. 29
17. वही, पृ. 8
18. वही, पृ. 75
19. वही, पृ. 12
20. वही, पृ. 239
21. वही, पृ. 237
22. वही, पृ. 100
23. तद्भव (पत्रिका) : उद्धृत - दूधनाथ सिंह का लेख , पृ. 16
24. रागदरबारी : श्री लाल शुक्ल, पृ. 294
25. वही, पृ. 268
26. वहीं, पृ0 22
27. वहीं, पृ0 236
28. श्री लाल शुक्ल की दुनिया (सं.) : अखिलेश, पृ0 89

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

दृष्टिकोण

आधुनिकता के संबंध में इतिहासकारों व विद्वानों के मतों का विश्लेषण : एक अवलोकन

बिभूति बिक्रम नाथ
शोधार्थी, हिंदी विभाग
तेजपुर विश्वविद्यालय
8135073278
bibhutibikramn@gmail.com

डॉ. अंजु लता
सह-आचार्य, हिंदी विभाग
तेजपुर विश्वविद्यालय
8876083066
anju@tezu.ernet.in

शोध-सार :

आधुनिकता एक गतिशील प्रक्रिया है, जो समाज को तर्कसंगतता, मानवतावाद और वैज्ञानिक ज्ञान से सराबोर करती है। यह अकल्याणकारी परंपरा और अंधविश्वास की जंजीरों को तोड़ती है, प्रगति और सामाजिक विकास को बढ़ावा देती है। औद्योगीकरण, साक्षरता और वैज्ञानिकता आधुनिकता के स्वरूप तत्व हैं, जो समाज को सामाजिक-आर्थिक उन्नति की ओर प्रेरित करते हैं। नियतिवादी विचारों को अस्वीकार करते हुए आधुनिकता बौद्धिक स्वतंत्रता और व्यक्तिपरक अनुभवों को अपनाती है, सामाजिक मानदंडों का परिष्करण करती है और स्वीकृत मूल्यों का मूल्यांकन करती है। यह मानव अस्तित्व की अंतर्निहित आयामों को स्वीकार करती है, सहानुभूति और प्रज्ञाबोध का अनुसरण करती है। आधुनिकता की सांस्कृतिक क्रांति भाषा, साहित्य और सामाजिक धारणाओं को नया आकार देती है, नवीनता और समावेशिता की भावना को बढ़ावा देती है। साहित्य के क्षेत्र में आधुनिकता उपनिवेशवाद और सामाजिक विभाजन के खिलाफ प्रतिरोध की आवाज बनकर उभरती है, धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक सुधार की वकालत करती है। यह आधुनिकता महज आधुनिक बोध की प्रतिक्रिया नहीं है, बल्कि मुक्ति और प्रगति की तलाश में निहित एक गतिशील प्रक्रिया है। पारंपरिक मूल्यों को फिर से परिभाषित करके और सामूहिक मुक्ति को बढ़ावा देकर आधुनिकता समानता, मानवीय गरिमा और सामूहिक कल्याण पर आधारित समाज का मार्ग प्रशस्त करती है।

बीज शब्द :

आधुनिकता, मानवतावाद, तर्कसंगतता, समावेशिता, सामूहिक मुक्ति, बौद्धिकता, अवधारणा।

मूल आलेख :

आधुनिकता एक ऐसी यथार्थवादी अवधारणा है, जो तार्किकता और बौद्धिकता के विवेकजन्य प्रकाश में हर एक चीज पर दृष्टि डालती है। एक तरफ आधुनिकता मानवतावादी दर्शन को मूलाधार मानकर संवेदना और अनुभूति को नया बनाती है तो दूसरी और ज्ञान विज्ञान की प्रकाश में अंधविश्वास से समाज को मुक्त कराती है। आधुनिकता सार्वकालिक एवं सापेक्षिक धारणा है, जो मनुष्य के विचारों में, चिंतन

प्रक्रिया में परिवर्तन की नई लहर ले आती है। समाज, देश की प्रगति में आधुनिकता की अवधारणा महत्वपूर्ण है। आधुनिकता ने साहित्य को समाज से जोड़ दिया, आधुनिकता की वक्षस्थल में मनुष्य के बीच इंसानियत को बढ़ावा देने वाली गंगा के धारा की पीयूष रूपी अनमोल विचारधारा है, जिससे विशाल मानवतावाद की प्रतिष्ठा होगी। आधुनिकता हर बंधन को तोड़ने वाले, परंपरा को छिन्न-भिन्न करने वाली एक क्रांति भी है, जो समाज के अकल्याणकारी तत्वों का खंडन कर न्याय, समता, मैत्री का मंडन करती है। आधुनिकता के संदर्भ में अनेक परिभाषाएँ एवं अवधारणाएँ परिलक्षित होती हैं। रामधारी सिंह दिनकर, विजेंद्रनारायण सिंह, रामविलास शर्मा, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि विद्वानों ने आधुनिकता को अपने विचार और दृष्टिकोण से परिभाषित किया है। इस आलेख में इन परिभाषा एवं अवधारणाओं पर दृष्टि डाली जाएगी।

रामधारी सिंह दिनकर हिंदी साहित्य के प्रमुख साहित्यकार और लेखक हैं। 'आधुनिकताबोध' उनकी आधुनिकता पर केंदित पुस्तक हैं। आधुनिकता की परिभाषा क्या है? यह धर्म, साहित्य और समाज को किस हद तक प्रभावित करती है? क्या आधुनिकता में नैतिकता और सौंदर्यबोध जैसा कोई शाश्वत मूल्य हैं? विज्ञान, उद्योग और प्रौद्योगिकी के निरंतर विस्तार के बीच हम अपनी संस्कृति के सार को कैसे बचा सकते हैं? इस तरह के विषय इस पुस्तक के अंतर्गत हैं। आधुनिकता के संदर्भ में रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं- *''वैसे जिसे हम आधुनिक कहते हैं, वह कोई बातों का एक सम्मिलित रूप है, उद्योगीकरण आधुनिकता की पहचान है, साक्षरता का सर्वव्यापी प्रसार आधुनिकता की सूचना देता है, नगर सभ्यता का प्राधान्य आधुनिकता का गुण है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-21)

आधुनिकता अपने आप में विभिन्न भावधाराओं का सम्मिलित रूप है। समाज में प्रगति का लहर फैल जाना एवं देश के उद्योगीकरण का व्यापक विकास होना आधुनिकता की पहचान है। आधुनिकता देश-समाज में शिक्षा के नवीन विचारधारा एवं ज्ञान विज्ञान की सर्वव्यापी कल्याणी रूप का प्रचार-प्रसार कर मानव समाज को अंधविश्वास के बंधन से मुक्त कराती है। निरक्षरता रूपी अंधकार को दूर कर आधुनिकता समाज में विज्ञान की दीप्ति ले आती है। आधुनिकता के नूतन दृष्टिकोण से जब मानव समाज शिक्षित होने लगते हैं, तब समाजिक उत्थान होता है और उस सामाजिक-सांस्कृतिक उत्थान से नगर सभ्यता का विकास हुआ, जो आधुनिकता की सूचक है एवं पहचान भी है। आधुनिकता एक ऐसी अवधारणा है, जो समाज के हर क्षेत्र में होने वाले प्रगति का द्योतक है। आधुनिकता, जैसा कि हम इसे समझते हैं, विभिन्न तत्वों का एक संश्लेषण है, औद्योगीकरण इसकी परिभाषित विशेषता के रूप में खड़ा है। उद्योगों का प्रसार और तकनीकी प्रगति आधुनिकता के सार का प्रतीक है, जो सामाजिक प्रगति और आर्थिक विकास को आगे बढ़ाती है। इसके अलावा साक्षरता का व्यापक प्रसार आधुनिकता के एक प्रमुख संकेतक के रूप में कार्य करता है, जो आबादी के बीच ज्ञान और सूचना के प्रसार की सुविधा प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त शहरी सभ्यता का उदय आधुनिकता की गुणवत्ता को रेखांकित करता है, क्योंकि शहर नवाचार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता के केंद्र बन जाते हैं। साथ में ये कारक आधुनिकता की बहुमुखी प्रकृति का प्रतीक हैं, समकालीन समाजों को आकार देते हैं और उन्हें नवाचार, कनेक्टिविटी और शहरीकरण द्वारा चिह्नित भविष्य की ओर ले जाते हैं। फिर आधुनिकता की अवधारणा को परिभाषित करते हुए दिनकर जी लिखते हैं-*''आधुनिकता बुद्धिवादी मनोवृत्ति को कहते हैं।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-21)

आधुनिकता की एक लक्षण है-बौद्धिकता के प्रकाश में देखने की प्रवृत्ति आधुनिकता का विकसित रूप है। आधुनिकता एक बौद्धिक दृष्टिकोण के रूप में आया, जिसने विज्ञान की प्रगति के लहर को चारों तरफ फैला दिया। आधुनिकता विवेकसम्मत भाव से किसी विषय में तर्क-वितर्क कर बौद्धिक आभा को उजागर करने का नाम है। पहले समाज व्यवस्था सती प्रथा, बाल विवाह आदि अंधविश्वासों से जकड़ा हुआ था। लेकिन जब समाज में आधुनिकता का आगमन हुआ तो उसने इन सामाजिक परंपरा के बंधन को तोड़ते हुए विकास की गति को तीव्रगामी

बनाया। आधुनिकता एक बहुआयामी अवधारणा के रूप में मानव विचार, मूल्यों और सामाजिक संरचनाओं में गहरा बदलाव का प्रतीक है। इस परिवर्तन के केंद्र में तर्कसंगत दृष्टिकोण का उदय है, जो आधुनिक विचार की पहचान है। तर्कसंगत दृष्टिकोण आधुनिकता की एक परिभाषित विशेषता के रूप में खड़ा है, जो मानव इतिहास के पाठ्यक्रम को आकार देता है और समकालीन जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है। इसकी विरासत प्रगति और ज्ञानोदय में से एक है, फिर भी इसकी जटिलताएँ और विरोधाभास बहस और प्रतिबिंब को उकसाते रहते हैं, क्योंकि समाज आधुनिक युग की जटिलताओं से जूझ रहा है। दिनकर जी आधुनिकता की पुनर्व्याख्या पर लिखते हैं-*''जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, वह एक प्रक्रिया का नाम है, अंधविश्वास से बाहर निकलने की प्रक्रिया है, वह प्रक्रिया है - नैतिकता में उदारता बरतने की प्रक्रिया है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-21)

आधुनिकता समाज को रूढ़िबद्धता के बंधन से मुक्त करना अंधविश्वास के जंजीरों से उन्मुक्त करने का काम करती है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो नैतिकता मूल्यबोध में द्वेष रूपी महादानव का खंडन कर उदारता बरतने की काम करती है, जहाँ मानुष प्रेम की पराकाष्ठा है और जिससे मनुष्य के बीच उदारता का विकास होते हैं। पहले भारतीय समाज में बाल विवाह, जाति भेद की कट्टरता थी। अस्पृश्यता की विभीषिका विद्यमान थी, जिसमें नैतिकता के नाम पर लोगों के बीच हिंसा, द्वेष, जात-पात की भावनाओं को स्थापित किया गया था। लेकिन आधुनिकता के प्रकाश पुँज में अंधविश्वास रूपी तमस जलकर राख हो गई और मानव समाज में नैतिकता के मानवीय मूल्यबोध उदारता का सर्वव्यापक प्रभाव सुप्रतिष्ठित हुआ। रामधारी सिंह दिनकर ने आधुनिकता को बौद्धिकता से संलग्न किया है। वह और एक जगह पुन: लिखते हैं-*''आधुनिक वह है, जो मनुष्य की ऊँचाई उसकी जाति या गोत्र से नहीं, बल्कि कर्म से नापता है, आधुनिक वह है, जिसमें मनुष्य मनुष्य को समान समझे।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-21) मनुष्य अपने कर्म से महान एवं बड़ा बनता है। आधुनिक विचारधारा मनुष्य के कर्म पर महत्व देता है। कर्म रूपी पंखों के सहारे ही मनुष्य ऊँचाई पर पहुँच सकता है। आधुनिक दृष्टिकोण में मनुष्य की जाति या गोत्र कुछ मायने नहीं रखते। कर्म की महानता से पोषित मनुष्य को ही आधुनिकता ऊँचा दर्जा देती है। परंपरागत समाज में लोगों के बीच जात-पात एवं वर्णवाद का बोलबाला था, लेकिन आधुनिकता ने यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य-मनुष्य के बीच समानता होनी चाहिए। आधुनिक विचारधारा मनुष्य-मनुष्य को समान मानती है और मनुष्य का जयगान गाती है।

आधुनिकता पर विजेंद्र नारायण सिंह का मत महत्वपूर्ण है। विजेंद्र नारायण सिंह हिंदी साहित्य के आलोचक हैं। उन्होंने राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' और उनकी रचनाओं की आलोचनात्मक सराहना पर विशेषज्ञता हासिल की है। आधुनिकता के संदर्भ में विजेंद्र नारायण जी लिखते हैं-*''निश्चयात्मकता के प्रति अवहेलना का भाव सनातन के प्रति निरपेक्षता, आत्मगत अनुभूति की सूक्ष्मतम विश्लेषणों का रेखांकन आदि आधुनिकता की प्रमुख विशेषता है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-21)आधुनिकता परंपरागत मूल्य एवं रूढ़ि के प्रति मोहभंग की स्थिति को दर्शाती है। इन सभी परंपरागत स्थिति एवं रीति-रिवाजों के प्रति आधुनिकता अवहेलना का भाव रखती है। आधुनिकता धर्म एवं नैतिकता के प्रति निरपेक्षता का दृष्टिकोण रखती है। किसी धर्म या संप्रदाय के धार्मिक मूल्य का पोषण आधुनिकता नहीं करती। वह तो विशाल मानवता के जयगान को घोषित कर सामाजिक सनातनी सभ्यता, संस्कृति, मूल्य के प्रति निरपेक्ष भूमिका का निर्वाह करती है। आधुनिक साहित्य में मनुष्य की सहानुभूतिशीलता, उदारता, व्याकुलता आदि सकारात्मक भाववृत्ति का वर्णन एवं मनुष्य के मनोजगत की चिंता, कोलाहल, अशांति, क्षोभ, रोष, विखंडन, अनास्था आदि आत्मगत अनुभूतियों का सूक्ष्मतम विश्लेषण का रेखांकन आधुनिकता कराती है। विजेंद्र नारायण जी और एक जगह लिखते हैं-*''आधुनिकता यह मानकर चलती है कि मनुष्य का भाग्य अनिवार्य रूप में समस्यागर्भ है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-45) आधुनिकता एक एसी विचारधारा है, जो नूतनता का सापेक्षिक है। आधुनिक विचारधारा से ओत-प्रोत साहित्य

मनुष्य के जयगान गाकर ही शांत नहीं रहती, न ही इंसानियत के डंका बजा-बजा कर स्तुतिमूलक साहित्य की प्रणेता ही बनती है। आधुनिक विचारधारा तो समस्याग्रस्त मनुष्य के विडंबना, व्याकुलता एवं रोष को भी समटे हुए गतिशील बनती है। आधुनिकता मानती है कि मनुष्य का भविष्य समस्या के जंजीरों में जकड़ा हुआ है। इन समस्याग्रस्त परिस्थिति में आधुनिकता का साहित्य चंद्रमुखी की रूपक बांधकर खुशहाली की भव्यता को नहीं दर्शाता, बल्कि दलित, आदिवासी समाज के दुख, दरिद्रता एवं समस्याग्रस्त जीवन की छवि को भी प्रस्तुत करता है। आधुनिकता समस्या के घेरे में तड़पते हुए मुनुस्य के भाग्य का त्राणकर्ता है। विजेंद्र नारायण जी के अनुसार-*''आधुनिकता स्वीकृत मूल्य का मखौल उड़ाती है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-43)

आधुनिकता स्वीकृत मूल्यबोध के बंधन से मनुष्य को मुक्त कर परंपरागत मूल्य का मजाक उड़ाती है। समाज में प्रचलित परंपरागत मूल्यबोध को धर्म एवं नैतिकता के बंधन ने रूढ़ि बना दी। पहले समाज में विवाह के नाम पर बाल विवाह, सती पवित्रता के नाम पर सतीदाह प्रथा कर्म को संप्रदायों में बांधने वाला वर्णवाद मूल्य स्वीकृत थे। यह सब बुरी बात है, लेकिन आधुनिकता ने इन मानवता विरोधी मूल्य को समाज से नष्ट करने का दृष्टिकोण प्रदान किया, जो एक वैप्लविक दृष्टिकोण स्वीकृत मूल्य का मजाक उड़ाने वाला है। विजेंद्र नारायण सिंह आधुनिकता की पुनर्व्याख्या पर लिखते हैं-*''आधुनिकता एक सांस्कृतिक क्रांति है। इस सांस्कृतिक क्रांति का प्रभाव भाषा पर पड़ा, संरचना पर पड़ा, रूप के संयोजन पर पड़ा और सबसे बढ़कर रचनाकार के सामाजिक अर्थ पर पड़ा।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-43)

आधुनिकता समाज के हर क्षेत्र में परिवर्तन लाने वाली सांस्कृतिक क्रांति की सूचक है। आधुनिकता में परंपरागत रूढ़िबद्ध सामाजिक व्यवस्था में नए विचारधारा, नवीन दृष्टिकोण एवं यथार्थवादी व्यावहारिक मूल्य का विकास कराके समाज का, सामाजिक संस्कृति का उत्थान किया। इस उत्थान का प्रभाव भाषा-साहित्य, संरचना एवं भाव विचार, रूप के संयोजन पर पड़ा। आधुनिकता भाषा अभिव्यक्ति के परंपरागत बंधन को तोड़ कर नए प्रतीकों का दर्शन कराती है। साहित्य ने भाषा को जनसाधारण के विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर भाषा को दुरूहता से मुक्त कर उसे जन मर्यादा दी। वर्णन शैली में नूतनता आई, वाक्य विन्यास पूर्ण विराम की जटिलता से मुक्त होकर स्वछंद बन गया। सबसे बढ़कर रचनाकार के सामाजिक कार्य पर आधुनिकता ने क्रिया की कि साहित्य समाज को किस प्रकार देखता है? या उनके साहित्य में समाज प्रतिबिंबित होता कि नहीं? पहले जहाँ व्यक्तिकेंदित विषयों, धर्म एवं नैतिकता ने साहित्य को पकड़ रखा था और रचनाकार वैसे ही लिख रहे थे, लेकिन आधुनिकता उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन लाई और रचनाकार के दृष्टिकोण को सामाजिक अर्थ की अभिव्यंजना, मानवतवादी जयघोष एवं परमश्रेय समाज कल्याणमय विचारों से प्रोषित किया। इस तरह आधुनिकता रचनाकार के दृष्टिकोण को परिवर्तन की आभा से प्रकाशित कर साहित्य के भाषा, भाव, संरचना के रूप आदि में नूतनता ले आई।

आधुनिकता पर डॉ. रामविलास शर्मा का मत भी महत्वपूर्ण है। डॉ. रामविलास शर्मा आधुनिक हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध आलोचक, निबंधकार, विचारक हैं। परंपरा का मूल्यांकन और मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक है। आधुनिकता को परिभाषित करते हुए वह लिखते हैं-*''हमारा आधुनिक साहित्य एक ओर अंग्रेजी राज का विरोध करता है, दूसरी ओर वर्ण और संप्रदाय की कट्टरता का विरोध करता है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन :आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-41)

आधुनिक साहित्य का आरंभ 1857 से माना जाता है। भारतेंदु युग आधुनिक साहित्य का काल है। भारतेंदु हरिश्चंद्र, बालकृष्ण भट्ट आदि कवियों ने अपने साहित्य में अंग्रेजी राज का विरोध किया है। आधुनिकता की अवधारणा से प्रेरित छायावादी काव्य में भी अंग्रेजी सत्ता का विरोध किया गया है। निराला लिखते हैं -शेरों की मांद में आया है आज स्यार /जागो फिर एक बार! नामवर सिंह छायावादी साहित्य को विदेशी पराधीनता से मुक्त करने का साहित्य मानते हैं। आधुनिकता संप्रदाय की कट्टरता का विरोध करती है। परंपरागत समाज शूद्र , वैश्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय-

इन चार वर्णों की आपसी कट्टरता में बँटा हुआ था। वर्ण के आधार पर काम भी बाँटा हुआ था। जैसे ब्राह्मण पूजा-पाठ करेंगे, संस्कृत अध्ययन-अध्यापन करेंगे, शूद्र नीच काम करेंगे। लेकिन आधुनिकता इन वर्णवादी व्यवस्था की कट्टरता का विरोध करते हुए समाज को संप्रदाय एवं जात-पात के बंधन से मुक्त करती है। रामविलास शर्मा और एक जगह लिखते हैं-*''साहित्य में आधुनिकता का प्रसार औद्योगिक विकास को रोकने की ब्रिटिश नीति का परिणाम नहीं था। वह इस नीति के विरोध में स्वदेशी आंदोलन को चलाने का परिणाम था।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-22)

भारतीय समाज व्यवस्था में आधुनिकता का आगमन देश में हो रहे औद्योगिक विकास को रोकने की विदेश नीति का परिणाम नहीं था, बल्कि देश में आधुनिकता की लहर औद्योगिक विकास को रोकने वाली ब्रिटिश नीति के विरोध में चलने वाले स्वदेशी आंदोलन के परिणाम के कारण हुआ। अंग्रेज लोग देश में औद्योगिक विकास नहीं होने दे रहे थे, लेकिन देश के लोगों ने स्वदेशी आंदोलन चलाकर निश्चित कर दिया कि हम विदेशी चीज का प्रयोग नहीं करेंगे। इसी विचारधारा ने देशवासियों के दिलों-दिमाग में यह धारणा विकसित की कि अपने देश में ही स्वदेशी चीज बनाएँगे। इससे एक क्रांति का संचार हुआ, ऐसी भावनाओं में नई-नई चीजों की खोज होने लगी। नई-नई विचारधारा आई। इस विचार के आधार पर नए-नए अविष्कार हुए। जैसे- विदेशी कपड़ा ना पहन कर स्वदेशी कपड़े का निर्माण करना। इस प्रगतिशील विचारधारा का आगमन औद्योगिक विकास को रोकने वाली अंग्रेजी नीति के विरोध में हुआ, जिससे आधुनिकता समग्र देश में व्याप्त होने लगी।

रामविलास शर्मा आधुनिकता की पुनर्व्याख्या पर लिखते हैं- *''साहित्य में आधुनिकता की शुरुआत अंग्रेजी राज के कारण हुई।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-23)

अंग्रेजी राज भारत में स्थापित होने के बाद देश के विभिन्न क्षेत्रों में काफी परिवर्तन होने लगा था। साहित्य के क्षेत्र में विषय, विचार, विधा आदि में नवीनता आई। विषय धर्म-नैतिकता के बंधन से मुक्त होकर विशाल मानवता का प्रतिनिधित्व करने वाला बना। विचार मध्यकालीनता के सामंती रूढ़ियों से उन्मुक्त हुए और साहित्य, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा, कहानी, रेखाचित्र , जीवनी आदि नई विधाओं से सुसज्जित होकर आधुनिक बने। अंग्रेजी राज ने भारतीय साहित्य में आधुनिकता की शुरुआत की, लेकिन उसका विकास भारतीय समाज के मूल्यबोध में ही हुआ, जिसके बारे में राम विलास शर्मा खुद लिखते हैं कि आधुनिकता अंग्रेजी साहित्य की नकल नहीं है। वह पुराने साहित्य की सामंत विरोधी उपलब्धियों की बुनियाद पर विकसित हुई है। शर्मा जी के अनुसार-*''सामंती अंधविश्वासों से बाहर निकल कर जो साहित्य ज्ञान-विज्ञान और कलात्मक सौंदर्य की ओर अग्रसर होता है वह आधुनिक है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-25)

आधुनिकता सामंतवादी व्यवस्था के अंधविश्वास से बाहर निकलने का काम करती है। सामंतवादी व्यवस्था में किसान लोग शोषित होते थे। मनुष्य को दास समझा जाता था। इस व्यवस्था में जनसाधारण की सामंती बहुल प्रभुत्व से पृथक अपनी स्वतंत्र सत्ता नहीं थी। आधुनिकता सामंतवादी व्यवस्था के परंपरागत सामाजिक रूढ़ियों को छिन्न-भिन्न कर देती है। आधुनिकता ऐसी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें तर्कशीलता, बौधिकता के प्रज्ञा की दीप्ति हो, जहाँ मानव कल्याण का प्रगतिवादी ज्ञान हो और उस ज्ञान को सुप्रतिष्ठित करने वाले विज्ञान की व्यावहारिकता हो। तो आधुनिकता सामंती अंधविश्वासों से मुक्त कर साहित्य को ज्ञान-विज्ञान की प्रज्ञा से प्रज्ज्वलित कर कलात्मक सौंदर्य की ओर अग्रसर करती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी के निबंधकार, आलोचक और उपन्यासकार हैं। आचार्य द्विवेदी जी के साहित्य में मानवता का परिशीलन सर्वत्र दिखाई देता है। विचार और वितर्क एवं विचार-प्रवाह उनके महत्वपूर्ण निबंध संकलन हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आधुनिकता की अवधारणा पर प्रकाश डालते हुए आधुनिकता को एक गतिशील प्रक्रिया कहा है। वह लिखते हैं-*''आधुनिकता संप्रदाय का विरोध करती है, क्योंकि आधुनिकता गतिशील प्रक्रिया है। संप्रदाय स्थिति संरक्षक, परंतु परंपरा से*

आधुनिकता का वैसा विरोध नहीं होता। दोनों ही गतिशील प्रक्रिया हैं। दोनों में अंतर केवल यह कि परंपरा यात्रा के बीच पड़ा हुआ अंतिम चरण, जबकि आधुनिकता आगे बढ़ा हुआ गतिशील कदम है।'' (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-25)

आधुनिकता संप्रदाय विशेष का पक्षपात नहीं करती। किसी एक धर्म या संप्रदाय का ही समाज में वर्चस्व हो, आधुनिकता इसको खारिज करती है। पहले भारत में हिंदू धर्म का आधिक्य था। आधुनिकता के आगमन के बाद धर्मनिरपेक्षता की लहर आ गई और आधुनिकता संप्रदाय का विरोध करते हुए गतिशील बनी। आधुनिकता विश्व मैत्री, आपसी भाईचारा की बात करती है। संप्रदाय का विरोध करती है। आधुनिकता बदलती रहती है। किसी एक पर टिककर नहीं रहना उसका गुण है। आधुनिकता परिवर्तन के साथ गतिशील है। परंपरा भी बदलती रहती है। परंपरा की प्रक्रिया में हम जब आगे बढ़ते हैं तो आधुनिकता आ जाती है। आधुनिकता परंपरा के प्रति विवेक भाव है। जो चीज लंबे काल से चली आ रही है, वह परंपरा है। तो उस चली आ रही चीज में क्या अच्छा है, क्या बुरा है, उसका विवेक भाव सहित विचार आधुनिकता है। परंपरा जहाँ जड़ होगी, आगे बढ़ नहीं रही है तो आधुनिकता वहाँ से आगे की प्रक्रिया है। परंपरा का जड़ हो जाना और वहाँ से नयापन आना आधुनिकता का द्योतक है। परंपरा भी गतिशील है, लेकिन एक सीमा पर आकर उसका नयापन खत्म हो जाता है। उसी का अगला चरण आधुनिकता है। द्विवेदी जी और एक जगह लिखते हैं- ''आधुनिकता अपने आप में कोई मूल्य नहीं है। मनुष्य ने अनुभवों द्वारा जिन माननीय मूल्यों को उपलब्ध किया है, उन्हें नए संदर्भों में देखने की दृष्टि आधुनिकता है।'' (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-18) मनुष्य ने अनुभव से विभिन्न मूल्य स्थापित किए हैं।

इन मूल्यों में नैतिकता एवं धार्मिक परंपरा है। लेकिन इन मूल्यबोध में जड़ता आ जाए तो वह कल्याणकारी नहीं बनती। उसे नए संदर्भों में देखना जरूरी हो जाता है। जो कार्य आधुनिकता के द्वारा संपन्न होती है, जैसे-पहले स्त्रियों को पल्लू या घूँघट रखनी पड़ती थी, जो एक सामाजिक मूल्य था। इसमें मूल्य स्त्रियों की इज्जत से संबंधित था। लेकिन वहीं मूल्य में जड़ता आ जाए तो उसे नए संदर्भों में देखने के लिए आधुनिकता की प्रकाशमान दीप्ति चाहिए। पहले नारी को पहन-ओढ़न में बंदीशें रखी गई थीं। नारी सामाजिक स्तर पर प्रेम का इजहार नहीं कर पाती थी। आधुनिकता ने मूल्य का फिर से विश्लेषण किया। उसमें बदलाव लाए। आज लड़की भी पुरुष के समान उच्च शिक्षा ले सकती है, अपनी पसंद से शादी कर सकती है। जो मूल्य पहले निर्धारित किए गए थे, उसको नई दृष्टि से देखने का दृष्टिकोण आधुनिकता है। द्विवेदी जी आधुनिकता की पुनर्व्याख्या करते हुए लिखते हैं - *''आधुनिकता ज्ञान की अत्याधुनिक उपलब्धियों के आलोक में रूप ग्रहण करने का प्रयास करती है। इसीलिए बौद्धिक है।''* (सं शम्भूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-18)

द्विवेदी जी आधुनिकता का संबंध बुद्धि से मानते हैं, क्योंकि इसमें तर्कशीलता की प्रधानता है। पहले समाज में यह निर्धारित कर दिया कि स्त्रियों को पूजा-पाठ नहीं करनी चाहिए, मंदिरों में नहीं जाना चाहिए तो आधुनिकता इस पर सवाल उठाती है क्यों नहीं जा सकती? पहले था कि समाज ने जो कह दिया कि स्त्रियों को मंदिर में नहीं जाने देना है, जिंस नही पहनने देना है, पहले के लोग वैसे ही स्वीकार भी कर लेते थे या पंडित-ब्राह्मण वर्ग ने बोल दिया तो लोग उसका आँख मूँदकर अनुकरण करते थे। अभी आधुनिकता के प्रकाश में यह सवाल उठाया जाता है ऐसा क्यों होता है? तर्क-वितर्क की स्थिति में बौद्धिकता है। आधुनिकता का एक गुण तार्किकता भी है, जो विवेक के तराजू में हर बात को देखती है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार-*''आधुनिक समाज ने निश्चित रूप से मनुष्य की महिमा स्वीकार कर ली है। अगला कदम सामूहिक मुक्ति का है। सब प्रकार के शोषणों से मुक्ति का। अगली मानवीय संस्कृति मनुष्य की समता और सामूहिक मुक्ति की भूमिका पर खड़ी होगी।''* (सं शंभूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, पृष्ठ संख्या-19) आधुनिकता मनुष्य की महिमा पर महत्व देती है। मनुष्य की महिमा से तात्पर्य है उसकी क्षमता, शक्ति से। आधुनिकता की विचारधारा समाज के जात-पात, वर्णवाद, सांप्रदायिक

कट्टरता के बंधन से मुक्ति का स्वर है, जो समाज में समता स्थापित करने का पक्षधर है। आधुनिकता सामूहिक मुक्ति के लक्ष्य को आगे रखकर गतिशील बनाती है। आधुनिकता किसी एक व्यक्ति की प्रगति नहीं करती या किसी व्यक्ति विशेष या वर्ग विशेष का पक्षपात नहीं करती। वह पूरे समुदाय के विकास की अवधारणा साथ लेते हुए सत्ता का विकेंद्रीकरण कर समाज के हाशिए वर्ग का कल्याण करती है, जहाँ शोषणों से मुक्त एक समाज व्यवस्था की परिकल्पना साकार होती है और मानवीय संस्कृति का विजय ध्वजा समता और सामूहिक कल्याण की प्रगति में लहराती हुई दिखाई देती है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं की आधुनिकता की अवधारणा परंपरा की गतिशीलता में आगे बढ़ा हुआ गतिशील कदम है, जो अपनी गहराइयों में मानवतावाद का प्रकाश पुँज, वैज्ञानिक दृष्टिकोण की यथार्थवादिता, ज्ञान-विज्ञान की देदीप्यमान दीप्ति रेखा एवं बौद्धिकता एवं तार्किकता की विवेकजन्य प्रगतिशील रूप को विकसित करती है, जहाँ आधुनिकता नूतनता, प्रगतिशीलता का द्योतक बन क्रांति की लहर से नयापन लाती है। आधुनिकता मनुष्य के सोच-विचार को भी प्रभावित करती है, इसलिए आधुनिकता समाज-देश को बदलने वाली परिवर्तन लाने वाली सर्वकालिक धारणा बन जाती है। आधुनिकता की धारणा परंपरा के विकास में एक गहन शक्ति के रूप में उभरती है, जो समाज को आगे बढ़ाने वाले तत्वों की बहुमुखी श्रृंखला को समाहित करती है। यह मानवतावाद, वैज्ञानिक यथार्थवाद, ज्ञान अर्जन और बौद्धिक प्रगतिशीलता के गतिशील संश्लेषण का प्रतिनिधित्व करता है। आधुनिकता नवीनता और प्रगति के प्रतीक के रूप में खड़ी है, जो क्रांतिकारी परिवर्तन की लहरों की शुरुआत करती है, जो मानव अस्तित्व के हर पहलू में व्याप्त है। इसके अलावा, आधुनिकता का प्रभाव मात्र सामाजिक संरचनाओं से परे तक फैला हुआ है; यह मानव विचार के मूल ताने-बाने में ही व्याप्त है। संक्षेप में, आधुनिकता सामाजिक नवजागरण के लिए उत्प्रेरक के रूप में कार्य करती है, जो प्रगति और वैज्ञानिकता के पहियों को आगे बढ़ाती है। जैसे-जैसे हम आधुनिक युग की चुनौतियों और अस्मिताओं को स्वीकार करते हैं, हम ज्ञान, तर्क और विवेकशीलता की खोज के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि करते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि आधुनिकता की विरासत में विकसित आने वाली पीढ़ियों के लिए आशा और परिवर्तन से भरा नए भविष्य का स्वागत करते हैं। ❑

सहायक ग्रंथ :

1. सं शंभूनाथ, समकालीन सृजन : आधुनिकता की पुनर्व्याख्या, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2008
2. सिंह, बच्चन सिंह, आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2015
3. राम, डॉ. पी.एच., आधुनिकता और भारतीय समाज, नई दिल्ली : रावत प्रकाशन, 2017
4. कृष्णमोहन, आधुनिकता और उपनिवेश. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2006
5. मेघ, रमेश कुंतल, मिथक से आधुनिकता तक, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2017
6. राजकिशोर. स्त्री, परम्परा और आधुनिकता, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2010

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

दलित साहित्य में नए प्रतिमानों के संस्थापक सूरजपाल चौहान

उदीप्त तालुकदार

विभागाध्यक्ष और सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग, आर्य विद्यापीठ
महाविद्यालय (स्वायत्त)
गुवाहाटी-16, कामरूप (म), असम
7002272818
udipta.talukdar@avcollege.ac.in

1.0 भूमिका :

साहित्य वैचारिक पृष्ठभूमि पर खड़ा एक भव्य भवन है। समय के परिवर्तन के साथ-साथ समाज में व्याप्त विचारों में परिवर्तन एक शाश्वत सत्य है, फलस्वरूप परिवर्तनशील वैचारिक पृष्ठभूमि पर निर्मित साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन आता है। संपूर्ण विश्व के भिन्न काल, भाषा एवं स्थानों में रचित साहित्य में नवीन विचारों का संयोजन तथा प्राचीन विचारों का लोप एक स्वाभाविक प्रक्रिया है । संयोजन एवं लोप की प्रक्रिया के बीच साहित्य में विचारों की अक्षय धारा प्रवाहित होती रहती है। प्राय: हजार वर्षों के हिंदी साहित्य का स्वर्णिम इतिहास वैचारिक पृष्ठभूमि के परिवर्तन का एक उत्कृष्ट निदर्शन है । सिद्ध, जैन, नाथ आदि संप्रदायों के धार्मिक विचारों एवं वीरगाथात्मक प्रवृत्ति से ओत-प्रोत होकर अंकुरित हिंदी साहित्य की धारा मध्ययुग में भक्ति की गंगोत्री में डुबकी लगाती है। तत्पश्चात हिंदी साहित्य की यह भव्य धारा मूलत: शृंगार रस की मधुशाला से होकर गुजरती है तो आधुनिक काल में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक-सामाजिक चेतना, छायावादी विचारधारा, प्रगतिवादी विचारधारा, प्रयोगवादी प्रवृत्ति तथा अस्मितामूलक विमर्शों से प्रभावित होकर भिन्नमुखी बन जाती है । स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य की धारा को जिन अस्मितामूलक विमर्शों ने नई मात्रा एवं दिशा प्रदान की है, उनमें दलित विमर्श अन्यतम है। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में दलितों को केंद्र में रखकर दलित लेखकों ने जिस साहित्य का सृजन किया, उसे दलित साहित्य की संज्ञा दी जाती है। उल्लेखनीय है कि दलित साहित्य संबंधी चर्चा से पूर्व दलितों की अवधारणा को स्पष्ट करना अनिवार्य प्रतीत होता है। दरअसल, जो व्यक्ति दलन या शोषण का शिकार हो रहा है, उन्हें दलित कहा जा सकता है। यह 'दलित' शब्द की एक व्यापक अवधारणा है। इससे विपरीत, भारतीय समाज-व्यवस्था में व्याप्त वर्णाश्रम की परंपरा ने जब विकृत होकर जाति-व्यवस्था का रूप धारण कर लिया, तब एक वर्ग के लोगों का सतत शोषण होने लगा। इस वर्ग को समाज-व्यवस्था में अति निम्न स्थान दिया गया। भारतीय समाज-व्यवस्था में इस वर्ग को मुख्य रूप से 'दलित' कहा गया है। इस वर्ग विशेष पर आधारित साहित्य को दलित साहित्य की संज्ञा दी गई है। दलित

साहित्य की व्याख्या करते हुए दलित चिंतक कंवल भारती लिखते हैं—

''दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है। अपने जीवन-संघर्ष में दलितों ने जिस यथार्थ को भोगा है, दलित साहित्य उनकी उसी अभिव्यक्ति का साहित्य है।...'' (वाल्मीकि, 14)

उसी प्रकार दलित साहित्य के संदर्भ में राजेंद्र यादव का मानना है— *''दलित साहित्य उन अछूतों का साहित्य है, जिन्हें सामाजिक स्तर पर सम्मान नहीं मिला। सामाजिक स्तर पर जातिभेद के जो लोग शिकार हुए हैं, उनकी छटपटाहट ही शब्दबद्ध होकर दलित साहित्य बन रही है।''* (वाल्मीकि, 15)

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि हिंदी साहित्य में दलित-चेतना और दलित केंद्रित हिंदी साहित्य दो भिन्न चिंतन-परंपराओं को दर्शाता है। हिंदी साहित्य में दलित-चेतना के बीज आदिकालीन सिद्ध साहित्य एवं भक्तिकालीन संत कवियों के साहित्य में देखने को मिल जाते हैं। हिंदी साहित्य में आधुनिक काल के आगमन के साथ प्रेमचंद सरीखे के यथार्थवादी साहित्यकारों ने साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया और उन्होंने सामाजिक विकृति से उदित कई सामाजिक मुद्दों के समानांतर दलित-जीवन के संघर्षों को भी यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान की। परंतु हिंदी साहित्य की विशाल धारा में यत्र-तत्र बिखरी दलित-चेतना ने तब विमर्श का रूप धारण किया, जब 1960 एवं 1970 के दशकों में अंबेडकर दर्शन से प्रेरित होकर कुछ संवेदनशील दलित लेखकों ने अपने समाज के भोगे हुए संघर्षों को केंद्र में रखकर साहित्य सृजन किया। दलित-चेतना को विमर्श के रूप में प्रतिपादित कर दलित साहित्य का भवन निर्माण करने में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, तुलसी राम, असंग घोष, सूरजपाल चौहान आदि साहित्यकारों की प्रमुख भूमिका है ।

2.0 अध्ययन का महत्व :

साहित्य समाज सापेक्ष होता है। इसलिए सामाजिक संरचना में आए बदलावों से साहित्यकार के अनुभव प्रभावित होते हैं। उन अनुभवों के आधार पर साहित्यकार के लिए यथार्थ का स्वरूप भी बदलता रहता है। ऐसे में साहित्य के प्रतिमानों में भी बदलाव आता रहता है। हिंदी दलित साहित्य के परिप्रेक्ष्य में प्रतिमानों के बदलाव अत्यंत स्पष्ट है। दलित साहित्य को लंबे समय तक केवल सवर्णों के खिलाफ आक्रोश व्यक्त करने का साहित्य मात्र माना जा रहा था। परंतु ओमप्रकाश वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान जैसे दलित साहित्यकारों ने दलित साहित्य को इस संकीर्ण परिधि से बाहर निकालकर दलितों के मर्मस्पर्शी संघर्षों की गाथा को व्यक्त करने के साधन के रूप में प्रतिष्ठित किया। ऐसे प्रतिमानों के संयोजन से दलित साहित्य को नया आयाम मिला। दलित साहित्य के विकास के साथ-साथ उसमें नए आयाम जुड़ते गए। दलित साहित्यकारों ने यह अनुभव किया कि अगर सही अर्थ में दलितों का उद्धार एवं उत्कर्ष करना है तो उनके समाज में निहित अंतर्विरोधों को दूर करना अत्यंत आवश्यक है। दलित साहित्य में इस नए प्रतिमान के संस्थापन की दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन का महत्व है।

3.0 अध्ययन का उद्देश्य :

सूरजपाल चौहान ने अपने प्रमुख कहानी-संग्रह 'नया ब्राह्मण' में संकलित कहानियों के माध्यम से किस प्रकार दलित समाज की कमजोरियों को बेबाकी के साथ प्रस्तुत करते हुए दलित साहित्य में नए प्रतिमानों का संस्थापन किया है, उसका विचार-विश्लेषण प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य है।

4.0 अध्ययन में व्यवहृत पद्धति :

प्रस्तुत शोध-पत्र में विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति अपनाई गई है तथा शोध-पत्र के लिए 'नया ब्राह्मण' कहानी-संग्रह को आधार ग्रंथ के रूप में ग्रहण किया गया है।

5.0 विश्लेषण :

सूरजपाल चौहान हिंदी-दलित साहित्य ही नहीं, अपितु संपूर्ण हिंदी साहित्य के एक मूर्धन्य हस्ताक्षर हैं। उन्होंने भोगे हुए यथार्थ की पृष्ठभूमि पर अपने साहित्य की नींव रखी है। सूरजपाल चौहान की भाँति हिंदी दलित साहित्य में कई साहित्यकारों ने दलित-जीवन के नग्न यथार्थ को अभिव्यक्ति प्रदान की है, जिसमें उन साहित्यकारों ने मुख्य

रूप से सवर्णों द्वारा दलितों का शोषण एवं दलित-जीवन के संघर्षों को मुख्य वर्ण्य-विषय बनाया है। तदुपरांत दलितोद्धार के मुद्दे को भी कई साहित्यकारों ने बेबाकी के साथ अपने साहित्य में अभिव्यक्ति प्रदान की है। परंतु ऐसा होते हुए भी लंबे समय तक दलित साहित्य को केवल दलितों के संघर्षों का साहित्य ही माना गया था, फलस्वरूप यह एक प्रकार से दलित साहित्य का प्रतिमान बन गया था। इस प्रतिमान को आधार बनाकर नए साहित्यकार दलित साहित्य का सृजन कर रहे थे तो आलोचक दलित साहित्य की आलोचना कर रहे थे। परंतु दलित साहित्य के माध्यम से दलित समाज के वास्तविक उद्धार हेतु ऐसे पूर्व प्रतिष्ठित प्रतिमानों में बदलाव अत्यंत आवश्यक बन गया था। अर्थात दलित साहित्य में नए प्रतिमानों का संस्थापन अत्यंत आवश्यक है, जिसमें दलित-जीवन का सर्वांगीण चित्रण कर दलितोद्धार का प्रयास किया जाएगा। इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले साहित्यकारों में सूरजपाल चौहान प्रमुख हैं। सन 2009 में प्रकाशित उनकी सत्रह कहानियों का संग्रह 'नया ब्राह्मण' इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। 'नया ब्राह्मण' कहानी-संग्रह की भूमिका में वीर भारत तलवार लिखते हैं—*''इस कहानी-संग्रह में एक नहीं, ऐसी कई कहानियाँ हैं, जिनमें दलित समाज की कमजोरियों और अंतर्विरोधों की आलोचना की गई है । दलित समाज को कल्पित रूप से हमेशा गौरावान्वित करने और उसको अपने शोषकों से हमेशा जीतते हुए दिखाने वाली साहित्यिक कला के बजाय दलित समाज का यह यथार्थ, उसकी ये कमजोरियाँ और उसकी ये पिछड़ी हुई परंपरावादी चेतना कहीं ज्यादा बड़ी सच्चाई है, जो दलित समाज को बहुत आगे नहीं जाने देती है और बदलावों को रोकती है।''* (चौहान, भूमिका)

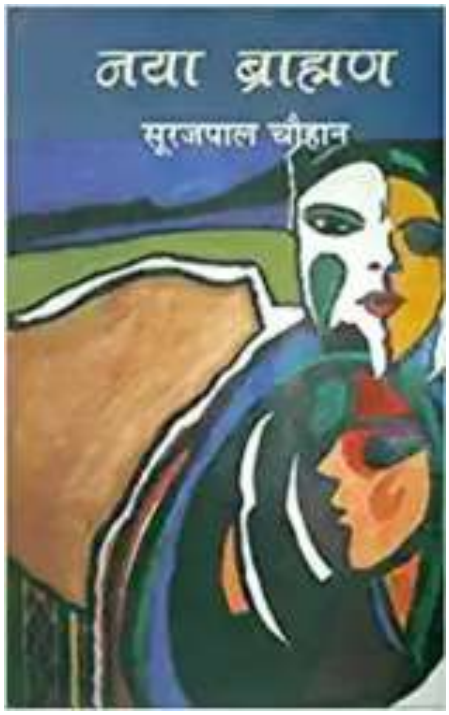

अर्थात सूरजपाल चौहान की कहानियों में दलित समाज में व्याप्त कमजोरियों एवं अंतर्विरोधों को बेबाकी के साथ प्रस्तुत करते हुए दलितोद्धार का प्रयास दिखाई पड़ता है। दलित समाज का शिक्षा से दूरी एक बहुत बड़ी कमजोरी है। सवर्णों द्वारा दलितों को शिक्षा-व्यवस्था से दूर रखते हुए शोषण करने का लगातार प्रयास किया जा रहा है। परंतु इस सत्य के समानांतर दलित समाज का एक कटु सत्य यह भी है कि इस समाज के कई लोग अपनी बेटियों को पढ़ाने के स्थान पर उनकी शादी की चिंता में खोए रहते हैं। दलित समाज के नकरात्मक दृष्टिकोण एवं रक्षणात्मक प्रवृत्ति के कारण कम उर्म में ही लड़कियों की शादी करवा दी जाती है। इसकी झाँकी 'नया ब्राह्मण' कहानी में संकलित 'बदबू' शीर्षक कहानी में देखने को मिलती है। कहानी का प्रमुख पात्र संतोष अपने कस्बे की पहली लड़की थी, जिसने हाईस्कूल की परीक्षा पास की थी। परंतु उसे उसके माता-पिता ने आगे पढ़ाई जारी रखने नहीं दी। जब ऊँची जात का पंडित मंगतराम संतोष के पिता से उसे आगे पढ़ाने की बात समझाता है, तब संतोष के पिता उनसे कहते हैं—*''तुम ऊँची जाति के लोग ही अपनी जवान होती बेटियों को शहर पढ़ने भेज सकते हो, मैं ऐसा करूँगा तो समाज में मेरी नाक कट जाएगी, बिरादरी के सभी लोग ताली देकर हँसेंगे और कहेंगे कि विवाह योग्य लड़की को शहर पढ़ने भेज दिया...ना पंडित जी ना, मैं अब इसके हाथ पीले करके बेटी-ऋण से मुक्त होना चाहूँ।''* (चौहान, 16)

संतोष के पिता के उपर्युक्त कथन से बेटियों की शिक्षा को लेकर उनके नकारात्मक दृष्टिकोण का आभास मिलता है। संतोष के पिता का ही नहीं अपितु घर के सभी सदस्यों का एक स्वर में यह मानना है कि बेटियों को ज्यादा पढ़ाना-लिखाना नहीं चाहिए। बेटियों की शिक्षा को लेकर

दलित समाज में व्याप्त नकारात्मक सोच के अतिरिक्त 'बदबू' कहानी से कहानीकार ने दलित समाज की भाग्यवादी प्रवृत्ति पर भी करारा प्रहार किया है। संतोष की सास द्वारा घर-घर पाखाने साफ करने के काम को खानदानी काम कहना तथा संतोष के पति द्वारा खुद को भंगी मानकर झाड़ू लगाने को अपना पेशा मान लेना दलित समाज में व्याप्त भाग्यवादी प्रवृत्ति को दर्शाता है। इसके अतिरिक्त 'बदबू' कहानी में कहानीकार ने संतोष के ससुराल के सदस्यों द्वारा बदबूदार और गंदगी से भरी हुई बस्ती में बिना किसी शिकायत या झिझक से रहने की मानसिकता को दर्शाया है। इस प्रकार दलितों द्वारा अपनी खराब परिस्थिति के साथ सामंजस्य बनाए रखना और अपने उत्तरण का प्रयास न करना दलित समाज की एक बहुत बड़ी कमजोरी है।

दलित समाज को अंधविश्वास एवं कुप्रथाओं ने जकड़ रखा है। इनको खत्म किए बिना दलित समाज के उत्तरण का सपना सही मायने में साकार रूप नहीं होगा। दलित समाज में व्याप्त अंतर्विरोधों की झाँकी सूरजपाल चौहान ने 'नया ब्राह्मण' कहानी-संग्रह में संकलित 'कारज' शीर्षक कहानी में प्रस्तुत की है। कहानी के मुख्य पात्र मगनलाल बैंक में नौकरी करता है तथा उसे मकान बनाने के लिए बैंक से कर्जे की सुविधा मिलती है। इसलिए वह अपनी पत्नी कमली से शहर में मकान बनाने की इच्छा प्रकट करता है, किंतु कमली चाहती है कि नया मकान बनाने के बदले गाँव के ही पुराने मकान को पक्का करके वहाँ रहने की व्यवस्था की जाए। मगनलाल को न चाहते हुए भी पत्नी की यह बात माननी पड़ती है और वह गाँव में मकान बनाने के लिए पहुँच जाता है। परंतु गाँव वाले चाहते हैं कि मगन पहले वर्षों से चली आ रही कारज की कु-प्रथा का पालन करे और उसके बाद गाँव में मकान बनाए। मगनलाल कई दिनों तक गाँव वालों को समझाने की कोशिश करता है, परंतु उन सभी की आँखों पर अज्ञानता का पर्दा पड़ा हुआ था। मुहल्ले वालों की बातें सुनकर कमली की भी आँखें खुल जाती हैं और वह मगन से शहर में ही मकान बनाने की बात कहती है। इस संदर्भ में मगनलाल द्वारा अपनी पत्नी कमली को कही हुई बातों से दलित समाज की स्थिति का आभास मिलता है— *''कमली, हमारे पास विकल्प है, मैं ऑफिस से कर्जा लेकर शहर में मकान बनवा सकता हूँ...हमारी कोई मजबूरी नहीं कि गाँव में रहें, आजादी के पचास वर्षों से अधिक बीत जाने के बाद कुप्रथाओं और ऊँच-नीच के जंग खाए स्तंभों के सहारे खड़ा है मेरा गाँव।''* (चौहान, 71)

इस प्रकार 'नया ब्राह्मण' कहानी-संग्रह में संकलित 'नया ब्राह्मण' शीर्षक कहानी के माध्यम से कहानीकार ने शिक्षित दलितों द्वारा अपनी जातिगत अस्मिता को सामाजिक स्तर पर स्वीकारने में असहज अनुभव करने की स्थिति को बेबाकी के साथ अभिव्यक्ति प्रदान की है। कहानी के मुख्य पात्र मंगलू की सरकार द्वारा 'आरक्षण कोटा रोस्टर' भरने के अभियान में नौकरी लग जाती है। नौकरी की सुख-सुविधाओं को पाकर वह अपना अतीत भूल जाता है। वह अपने समाज का ही नहीं, अपितु अपनी पत्नी, माँ एवं घर के अन्य सदस्यों का भी उपहास करने लगता है। मंगलू चाहता है कि उसकी पत्नी भी उसके गैर-दलित मित्रों की पत्नियों की भाँति खाना बनाए, उनके जैसे आचार-व्यवहार करे। ऐसा न कर पाने पर वह अपनी पत्नी कमली के साथ दुर्व्यवहार करता है तथा बाद में उससे धोखे से तलाक के कागजों पर दस्तखत करवा लेता है। मंगलू अपने गाँव वालों के सामने सरकारी नौकरी का रौब झड़ने लगता है। बचपन में अभाव एवं संघर्षों से जर्जरित जीवन व्यतीत करने वाले मंगलू जैसे दलित समाज के कई शिक्षित व्यक्तियों के मन में हीनता की भावना पनपने लगती है। इस हीन भावना के कारण वे अपने समाज, संघर्षपूर्ण अतीत एवं जातिगत अस्मिता को भूलना चाहते हैं। उन्हें अपने नाम से भी हीनता का अनुभव होने लगता है। इस अंतर्विरोध की अभिव्यक्ति भी 'नया ब्राह्मण' शीर्षक कहानी में मंगलू द्वारा अपना नाम बदल लेने के प्रसंग के माध्यम से दिखाया गया है। इसके अलावा हीनग्रंथि से युक्त व्यक्ति के चरित्र में विकसित आत्मकेंद्रिकता की प्रवृत्ति को भी कहानीकार ने मंगलू के चरित्र के माध्यम से दर्शाया है। एक बार मंगलू के गाँव के जगमेर ताऊ ने जब बाबा साहेब अंबेडकर का नाम लेकर उसको आशीर्वाद दिया तो उसने बड़ी बे-अदबी से बाबा साहेब की उपेक्षा करते हुए कहा— *''मैं तो यहाँ तक अपनी मेहनत से पहुँचा हूँ, बाबा साहेब आसमान से उतरकर मुझे नौकरी देने नहीं आए, अरे कैसा बाबा, काहे का बाबा।''* (चौहान, 62)

मंगलू जैसा व्यक्ति सवर्णों द्वारा किए गए शोषणों को झेलकर जब उच्च शिक्षा हासिल कर बड़ा ओहदा प्राप्त कर लेता है, तब वह खुद को ऊँची जाति के लोगों के बीच प्रतिष्ठित करने की मिथ्या प्रतिस्पर्धा में शामिल हो जाता है। इस मिथ्या प्रतिस्पर्धा में वह पूर्ववर्ती दलित अस्मिता से खुद को दूर कर नई अस्मिता की खोज करने लगता है। दरअसल, यह पूरी प्रक्रिया ऐसे व्यक्तियों के नए ब्राह्मण बनने की है। ऐसे व्यक्ति जाति-व्यवस्था से जर्जर समाज में खुद को नए ब्राह्मण के रूप में देखने लगते हैं। 'नया ब्राह्मण' कहानी के माध्यम से सूरजपाल चौहान ने दलित समाज के इस नग्न यथार्थ को आक्रमणात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। सूरजपाल चौहान की कहानियों में प्रतिफलित इस बेबाकी पर अपने विचार प्रकट करते हुए डॉ. सूर्यनारायण रनसुभे लिखते हैं—*''सूरजपाल की कहानियों में सुशिक्षित दलितों के जीवन में जो आत्मकेंद्रिक प्रवृत्ति आती जा रही है, उसका व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है। शिक्षित दलित तेजी से मध्यवर्गीय और ब्राह्मण मानसिकता का शिकार कैसे होते जा रहा है, अपनी हीन-ग्रंथि से मुक्त होने के हेतु वह अपनी जाति कैसे छिपा रहा है, इसका बेचैन करने वाला चित्रण इनकी कहानियों में हुआ है, इस वर्ग को ही वे नया ब्राह्मण कहते हैं।''* (चौहान, 75)

इस प्रकार कहानीकार सूरजपाल चौहान ने 'नया ब्राह्मण' कहानी-संग्रह में संकलित कहानियों के माध्यम से दलित समाज में व्याप्त अशिक्षा, अंधविश्वास, भाग्यवादी, रक्षणशील एवं हीन मनोवृत्ति, शिक्षित दलितों की आत्मकेंद्रिकता आदि चित्रण करते हुए दलित साहित्य की चिंतन-परंपरा में नए आयाम का संयोजन किया है। सूरजपाल चौहान ने दलित विमर्श में गैर दलितों के साथ-साथ दलितों की आलोचना करते हुए एक प्रकार से विरेचन की प्रक्रिया को अपनाया है।

6.0 निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि सूरजपाल चौहान हिंदी साहित्य जगत के एक प्रमुख यथार्थवादी कहानीकार हैं। उनकी कहानियों में दलित साहित्य से जुड़े पूर्वाग्रहों से इतर दलित साहित्य में नए प्रतिमानों की संस्थापना का प्रयास दिखाई पड़ता है। दलित साहित्य में जिस प्रकार दलित-जीवन के संघर्षों को यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया जाता है, उसी प्रकार दलित समाज में व्याप्त अंतर्विरोधों को भी यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया जाना चाहिए। अर्थात दलित साहित्य में केवल दलित-जीवन के संघर्षों की यथार्थाभिव्यक्ति जहाँ दलित साहित्य के पूर्व प्रतिष्ठित प्रतिमान है, वहीं बेबाकीपन के साथ दलित समाज के अंतर्विरोधों की अभिव्यक्ति इस साहित्य का नया प्रतिमान है। दलित समाज के वास्तविक उत्कर्ष हेतु इन दोनों प्रतिमानों को आधार बनाकर समानांतर साहित्य-सृजन अति आवश्यक है। इस नए प्रतिमान को स्थापित करने की दिशा में सूरजपाल चौहान के 'नया ब्राह्मण' शीर्षक कहानी-संग्रह की प्रतिनिधि भूमिका रही है, जिसमें कहानीकार द्वारा अपने समाज की कटु आलोचना द्वारा सतत उत्तरण का प्रयास दृष्टिगोचर है। अत: सूरजपाल चौहान को दलित साहित्य में नए प्रतिमानों के संस्थापक कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा। ❑

संदर्भ ग्रंथ-सूची :

1. वाल्मीकि, ओमप्रकाश, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2023
2. सरवदे, प्रदीप, सूरजपाल चौहान कृत 'नया ब्राह्मण' एक अनुशीलन, कानपुर, विनय प्रकाशन, 2017
3. चौहान, सूरजपाल, नया ब्राह्मण. नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2014

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

चिंतन

भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुसार स्व एवं व्यक्तित्व विकास की अवधारणा

आसिया मकबूल
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय,
श्रीनगर, पिन : 190006
9797275989
aasiamaqboolku@gmail.com

ललित मोहन शर्मा
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग
केन्द्रीय विश्वविद्यालय
हिमाचल प्रदेश, धर्मशाला-176215
9816878079
drlalitmahan76@hpcu.ac.in

सार : भारत में स्व के ज्ञान को मानवीय जिज्ञासा के अभिन्न अंग के रूप में देखा गया है। यह काफी सामान्य है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी प्रकार से दूसरों के व्यवहार को कुछ अर्थ देने की कोशिश करता है। मानव व्यवहार को जानने और समझने के प्रयास से यह तथ्य सामने आता है कि लोगों के व्यवहार की स्थिरता में भिन्नता पाई जाती है तथा यह ज्ञात स्थिर व्यवहार पैटर्न उस व्यक्ति के व्यक्तित्व को दर्शाता है। दार्शनिकों, विचारकों, विद्वानों और शिक्षाविदों ने हमेशा स्व और व्यक्तित्व विकास की अवधारणाओं का पता लगाने का निरंतर प्रयास किया गया है जिसके परिणामस्वरूप कुछ विशिष्ट व्यावहारिक प्रतिबिंबों का प्रतिपादन हुआ तथा विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोणों का उल्लेख किया गया है। प्रस्तुत लेख, स्व और व्यक्तित्व के तीन अलग- अलग भारतीय सिद्धांतों की भूमिका पर चर्चा करता है। ये त्रि-दोष का सिद्धांत, त्रि-गुण का सिद्धांत और पंचकोश का सिद्धांत हैं। त्रि-दोष का सिद्धांत व्यक्तित्व के भौतिक, जैविक और बौद्धिक आधार प्रदान करता है। व्यक्तित्व के संतुलित विकास के लिए तीन दोषों को समझना और उनका नियमन करना आवश्यक है। दूसरी ओर, त्रिगुण सिद्धांत प्राकृतिक शक्तियों के गुणात्मक पहलू के आधार पर स्व और व्यक्तित्व के रूप को स्पष्ट स्वरुप प्रदान करता है। अंत में, पंचकोश का सिद्धांत व्यक्तित्व का एक व्यापक ढांचा प्रदान करता है, यह व्यक्तित्व विकास के पदानुक्रमित विकास को प्रस्तुत करता है जो कि इब्राहीम मास्लो द्वारा प्रतिपादित पश्चिमी सिद्धांत के समान है। यह लेख इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि स्व और व्यक्तित्व के भारतीय सैद्धांतिक रूपरेखाएँ मानव स्व के अस्तित्व को व्यक्तित्व विकास द्वारा विशिष्ट व्यक्ति निर्माण तक की यात्रा को चित्रित करते हैं।

मुख्य शब्द : स्व, व्यक्तित्व, त्रि-दोष, त्रि-गुण और पंचकोष।

विश्लेषण :

स्व के वास्तविक स्वरूप को जानना दुनिया भर की विभिन्न बौद्धिक और ज्ञान प्रणालियों में मानवीय जिज्ञासा का मुख्य क्षेत्र माना गया है। मानवीय स्व, जीव के अस्तित्व की प्राप्ति पर आधारित एक व्यवस्थित संज्ञानात्मक योजना है। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा अध्यात्म अर्थात 'आत्मा का अध्ययन' को मूल विज्ञान मानती है। यह स्व के अस्तित्व की भौतिक और अलोकिक वास्तविकता का दावा करती है। मनुष्य का अस्तित्व, पूर्ण पारलौकिक आत्मा की परम चेतना और स्व के

अस्तित्व की भौतिक वास्तविकता की अचेतनता के परस्पर संबंध के परिणामस्वरूप स्व की चेतन अवस्था के रूप में निर्मित होता है। भारतीय ज्ञान प्रणालियों में व्यक्तित्व के विकास के संबंध में चेतना को प्राथमिक चिंतन का विषय माना जाता है। यह सर्वव्यापी है और स्थान और समय के साथ-साथ इनसे परे भी मौजूद है। यह दावा किया जाता है कि व्यक्तिगत चेतना यानी व्यक्तित्व सभी अभिव्यक्तियों से परे एक अलोकिक वास्तविकता है। इस तरह, शाश्वत आत्मा को व्यक्ति में अंतर्निहित स्व चेतना के रूप में स्वीकार किया जाता है। ईशा उपनिषद में, स्व को आत्मा के बराबर माना जाता है, यह दिव्य है और भगवान से जुड़ा हुआ है। यहाँ स्व का तात्पर्य चैत्य पुरुष यानी आत्मा से है। इसका तात्पर्य है कि मानव स्व व्यक्ति के भीतर दिव्य चिंगारी है। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार आत्मा ही शरीर, मन और ज्ञान का स्वामी है। यह केवल शरीर, मन और बुद्धि से निर्मित नहीं है। भौतिक वास्तविकता के ये तत्व व्यक्तिगत स्व के भीतर सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान पूर्ण आत्मा के रहस्य के उपकरण हैं। इससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि दिव्य अस्तित्व के रूप में स्व एवं व्यक्तित्व की अवधारणा भारतीय दृष्टिकोण से मानव व्यक्तित्व के विकास को जानने और समझने के लिए एक प्राथमिक कारक है। हालाँकि, पश्चिमी ज्ञान के अनुसार व्यक्तित्व को संघर्ष-समाधान के परिणामस्वरूप विकसित कहा जाता है क्योंकि पश्चिम में जीवन को बड़े पैमाने पर जीवनपर्यंत होने वाले संघर्षपूर्ण धटनाओं एवं परिस्थितियों के प्रबंधन के रूप में समझा जाता है। भारतीय सांस्कृतिक ज्ञान के संदर्भ में व्यक्तित्व की सामान्य समझ से पता चलता है कि मानव व्यक्तित्व व्यक्ति के स्वभाव के प्रभाव में विकसित होत है। स्वभाव, व्यवहार का बिना शर्त और स्वतंत्र पहलू है। यह स्व की स्वाभाविक स्थिति है और स्व के कारण है। यह व्यक्ति का जन्मजात और अंतर्निहित अनूठा गुण है। इसे स्व और व्यक्तित्व के विकास के पीछे मुख्य शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। पाली-अंग्रेजी शब्दकोश में कहा गया है कि सभाव मन की एक अवस्था, स्वभाव, चरित्र, व्यवहार, सत्य और स्वयं की वास्तविकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि 'सभाव ही स्वभाव' नामक शाब्दिक और तकनीकी शब्द के लिए एक स्थानीय और बोलचाल का शब्द रहा होगा। भगवद गीता में, 'स्वभाव' को मानव के व्यक्तिगत सार के रूप में लिया जाता है जिसमें व्यक्तित्व शामिल होता है। इसमें कहा गया है कि :

कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभाव प्रभवै गुण:

(भगवद गीता, 18.41)

इस श्लोक से यह संकेत मिलता है कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना जन्मजात स्वभाव होता है जिसे व्यक्तित्व के रूप में जाना जाता है। यह हमारे अस्तित्व का सत्य है। यह हमारे आवश्यक स्वभाव की दिव्यता है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि मनुष्य को वास्तव में गुणों और स्वभाव के लक्षणों के रूप में लिया जाना चाहिए न कि व्यव्हार के प्रकारों के रूप में, क्योंकि किसी व्यक्ति का स्वभाव अर्थात व्यक्तित्व उन मनोवैज्ञानिक विशेषताओं से निर्धारित होता है, जो उसे समाज में विशिष्ट भूमिकाओं के लिए उपयुक्त बनाती हैं। स्वभाव की अवधारणा के अलावा, विभिन्न भारतीय विचारकों द्वारा स्व और व्यक्तित्व को अधिक व्यवस्थित रूप से समझाया गया है। भारतीय दर्शन के वैशेषिक स्कूल में वर्णित है कि व्यक्तित्व सर्वव्यापी है। इसका ज्ञान, अनुभूति और क्रियाकलाप शरीर के इर्द-गिर्द घूमता है और मानव शरीर पंच भूतों से बना है जो कि पांच ऊर्जाओं कहलाती हैं। ये पृथ्वी, जल , अग्नि , वायु और आकाश हैं। इन तत्वों के अलग-अलग गुण हैं और ये प्रत्येक मानव शरीर में अलग-अलग अनुपात में मौजूद होते हैं। पंच भूतों को पृथ्वी पर किसी भी जीव के मूल निर्माण इकाइयों के रूप में दर्शाया गया है। वे मानव अस्तित्व की विभिन्न क्षमताओं के लिए जिम्मेदार हैं। ये पाँच सार्वभौमिक ऊर्जाएँ शरीर के महत्वपूर्ण अंगों और इंद्रियों का निर्माण करती हैं। शरीर के महत्वपूर्ण अंग और इंद्रियाँ निम्न मन बनाती हैं तथा निम्न मन बाद में उच्च मन में परिवर्तित हो जाता है जो स्व के अस्तित्व की ओर ले जाता है। स्व की यह प्राकृतिक स्थिति मानव व्यक्तित्व का निर्माण करती है। इस लेख में वर्णित किये गए ये व्यवस्थित सैद्धांतिक ढाँचे त्रि-दोष, त्रि-गुण और पंचकोश का सिद्धांत हैं।

त्रि-दोष का सिद्धांत : आयुर्वेद के अनुसार, पंच भूत व्यक्ति के समग्र विकास से संबंधित हैं। यह स्पष्ट है कि इन मूल पाँच ऊर्जाओं का संयोजन मानव व्यक्तित्व की

तीन आंतरिक प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। इन तीन आंतरिक व्यवहारिक प्रवृत्तियों को त्रि-दोष के रूप में संहिताबद्ध किया गया है। दोष शब्द का अर्थ है वह जो नष्ट हो जाए, खराब हो जाए या खंडन किया जा सके। आयुर्वेद में इन्हें वात, पित्त और कफ कहा गया है। ये शारीरिक, मानसिक और तंत्रिका संबंधी कार्यप्रणाली को विनियमित करके व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण पर बहुत गहरा प्रभाव डालते हैं। त्रि-दोष, परमाणु और कोशिकीय स्तर पर नीचे से ऊपर की प्रक्रिया बनाते हैं ताकि व्यक्ति के बारे में समग्र रूप से समझ मिल सके। त्रि-दोष प्रणाली व्यक्तित्व को समझने की एक समग्र इकाई के रूप में शरीर- मन-आत्मा का निर्माण करती है (सत्पथी, 2018)। त्रि-दोषों की पहचान किसी व्यक्ति की प्रकट और साथ ही अप्रकट जैविक, संज्ञानात्मक और शारीरिक विशेषताओं को खोजने के बाद की जाती है। भारतीय दर्शन के वैशेषिक स्कूल का मानना है कि किसी व्यक्ति में त्रि-दोषों की संरचना पाँच मूल ऊर्जाओं यानी पंचभूतों पर आधारित होती है। इन ऊर्जाओं की विभिन्न संरचना दोषों के संबंधित एकीकरण को निर्धारित करती है। त्रि-दोष एक व्यक्ति के संपूर्ण अस्तित्व के संस्थापक घटक हैं। ये तीन दोष अर्थात वात, पित्त और कफ अलग-अलग व्यक्तित्व विन्यास को संदर्भित करते हैं जो व्यक्तित्व की चरम वास्तविकता पर जोर देते हैं। दोषों के दृष्टिकोण से, व्यक्तित्व एक पदानुक्रमित प्रक्रिया के रूप में विकसित होता है।

वात : यह रूक्ष अर्थात शुष्क है। यह आकाश और वायु से निर्मित है। यह सीत (ठंडा), लघु (हल्का), खरा (खुरदरा), सूक्ष्म और चल यानि गतिमान है। यह गति प्रदान करने की अपनी विशेषता के कारण एक प्रमुख भूमिका निभाता है। वात में किसी भी प्रकार का असंतुलन, भय और तनाव का कारण बन सकता है। वात गुण का प्रमुख प्रभाव व्यक्तित्व को ऊर्जावान, लचीला, रचनात्मक, और बार-बार मूड बदलने वाला बनाता है।

पित्त : यह अग्नि और जल से बनता है। यह प्रकृति में गर्मी और ऊर्जा के सामान है। यह चयापचय कार्यों और भावनात्मक समझ को नियंत्रित करता है। पित्त मांसपेशियों के निर्माण, एथलेटिकता और लक्ष्य-उन्मुख प्रवृत्ति प्रदान करता है। पित्त में कोई भी असंतुलन जीवन में संघर्ष को जन्म दे सकता है। पित्त दोष बुद्धिमत्ता, सीखने की गति और नेतृत्व कौशल निर्धारित करता है।

कफ : यह पृथ्वी और जल से बनता है। यह प्रकृति में स्निग्ध अर्थात तरल है। यह शरीर के जोड़ों में तरल पदार्थ है। एक व्यक्ति में कफ दोष शरीर के ढांचे, हड्डियों की ताकत, शारीरिक और मानसिक दृढ़ता, ज्ञान, परिपक्वता और शांति का नेतृत्व करता है। कफ शरीर में आत्मसात का प्रबंधन करता है। व्यक्तित्व की तीन श्रेणियां - वात, पित्त और कफ, हर व्यक्ति में तीन जीवंत शक्तियाँ हैं। इन्हें एक व्यक्ति के 'स्व' की मूल सक्रिय ऊर्जा कहा जाता है। संतुलित व्यक्तित्व के लिए तीन दोषों का संतुलन होना अति आवश्यक माना जाता है। रोग मुक्त जीवन के लिए निर्धारित आहार संबंधी आदतें और शारीरिक कसरत आवश्यक है। इसलिए, त्रि-दोषों के बारे में जागरूकता व्यक्ति के स्वास्थ्य को बनाए रखने में सहायक है। व्यक्तित्व के सामंजस्यपूर्ण विकास के लिए त्रि-दोषों के पर्याप्त और प्रभावी प्रबंधन की सिफारिश की जाती है।

त्रिगुण का सिद्धांत : भारतीय मनोविज्ञान में त्रिगुण की अवधारणा स्व को जानने और समझने का प्रमुख स्त्रोत है। यह माना जाता है कि शरीर, मन और बुद्धि की प्रकृति भौतिक है और उनमें तीन गुण विद्यमान रहते हैं जो प्रत्येक व्यक्ति के व्यव्हार के तोर-तरीके निर्धारित करते हैं। ये तीन गुण हैं सत्व,जो अच्छाई का प्रतीक है; रजस, जो जनून का पर्याय है और तमस, जो सुस्ती के समान है। भारतीय मनोविज्ञान के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति तीन गुणों से बना एक अनूठा निर्माण है, जिसे त्रिगुण के रूप में जाना जाता है। भारतीय दर्शन के सांख्य स्कूल ने त्रिगुणों की अवधारणा और इसकी अभिव्यक्ति पर विस्तार से चर्चा की है। भगवद गीता में त्रिगुण सिद्धांत की अवधारणा पर विस्तृत विवरण उपलब्ध है। भगवद गीता के अध्याय 14 में प्रत्येक गुण की अवधारणा और विशेषताओं का परिचय दिया गया है। इसके बाद अध्याय 16 और 18 में व्यक्ति के चरित्र और व्यक्तित्व के निर्माण पर गुण के प्रभाव को स्पष्ट किया गया है। अध्याय 14 के श्लोक 5 में कहा गया है कि मानव आत्मा का आविर्भाव त्रिगुणों की शक्ति पर आधारित है : सत्त्वं रजस तम इति गुण: प्रकृतिसंभव:

निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनं अव्ययम्

(भगवद गीता, 14.5)

भगवान कृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि सत्व, रजस और तमस प्रकृति की तीन प्रवृत्तियाँ हैं, जो मानव स्वभाव की नींव रखती हैं। यह स्पष्ट कहा गया है कि मानव स्वभाव प्रकृति से उत्पन्न होता है, जिसका निर्माण इन्हीं त्रि-गुणों से हुआ है। यह माना जाता है कि मानव व्यवहार इन तीन प्रवृत्तियों से निर्धारित होता है। वे विभिन्न मानवीय कार्यों को निर्धारित और नियंत्रित करते हैं क्योंकि प्रत्येक गुण के प्रभाव के अनुसार व्यवहार के विभिन्न आयाम प्रकट होते हैं।

सत्व : यह ज्ञान और प्रसन्नता का स्रोत का है जिसे हर व्यक्ति अनुभव करता है। सत्व स्वभाव ही मनुष्य को आनंद और ज्ञान से बांधता है। यह संतुलन की शक्ति प्रदान करता है जिसमें सद्भाव, सहानुभूति, संतोष और स्पष्टता जैसे गुण शामिल हैं। भगवान कृष्ण ने कहा है -

तत्र सत्त्वं निर्मलत्व प्रकाशकं अनामयं
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ

(भगवद गीता, 14.6)

उपरोक्त श्लोक में कहा गया है कि सत्व गुण से चेतना का प्रकाश निकलता है। इस प्रकार के व्यवहार में बने रहने की प्रवृत्ति से ज्ञान, सुख, अच्छाई और जागृति आती है। सत्व गुण से युक्त व्यक्ति बौद्धिक खोज करने में प्रसन्नता महसूस करता है। ऐसा गुण व्यक्ति को ज्ञान प्राप्ति में संलग्न रखता है। सत्व गुण की उपस्थिति और सत्व गुण में रहने की इच्छा लोगों को ज्ञानवान और संयमी बनाने की क्षमता रखती है। ज्ञान प्रकृति का उत्पाद है और बुद्धि से संबंधित है इस तरह सत्व गुण बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। यह मनुष्य को प्रसन्नचित और समृद्ध बनाता है। एक बार जब व्यक्ति सत्व गुण को आत्मसात कर लेते हैं, तो उनके भीतर और बाहर शांति और सद्भाव की संभावना होती है। इसका तात्पर्य यह है कि जब व्यक्ति ज्ञान की खोज में गहन चिंतन, मनन और केंद्रित प्रयास में लगा होता है, तब मानव व्यवहार का सत्व गुण प्रमुख रूप से प्रकट होता है। सत्व गुण की गतिविधियाँ स्वतंत्र, शांत और निस्वार्थ होती हैं। सत्व गुण मन को जागृत करती है और इंद्रियों को क्रिया के लिए प्रेरणा मिलती है जो हमेशा अच्छा कर्म करने हेतु प्रोत्साहन प्रदान करता है।

राजस : इसे कर्म के प्रति जुनून के रूप में जाना जाता है। यह इच्छा का स्रोत और आसक्ति का कारण है। यह गुण व्यक्ति को सांसारिक गतिविधियों से जोड़ने में अहम् भूमिका निभाता है। कर्म की दुनिया, प्रसिद्धि, धन और शक्ति की इच्छा रजस से निकलती है। यह गतिज शक्ति का प्रतीक है। इसमें प्रयास, परिश्रम और क्रिया जैसे गुण शामिल हैं।

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्भम
तत्रिबध्नाती कौन्तेय कर्मसंगेन देहिनम्

(भगवद गीता 14.7)

भगवद गीता के उपर्युक्त श्लोक से पता चलता है कि रजस गुण व्यक्ति को जुनून, इच्छा, आसक्ति और भौतिक समृद्धि की प्रवृत्ति प्रदान करता है। इसकी प्रकृति बेचैनी है। यह गुण व्यक्ति को कर्मों की दुनिया से बांधता है। परिणामस्वरूप, निरंतर क्रिया व्यक्तिगत व्यवहार की विशेषता बन जाती है। राजसिक स्वभाव व्यक्ति को हर समय सक्रिय रहने में सक्षम बनाता है और क्रियाएँ व्यक्तिगत लाभ के उद्देश्य से होती हैं। रजस के सूचक क्रियाशीलता, लोभ, प्रयास और भौतिक भोग हैं। यही कारण है कि भगवान कृष्ण ने निम्नलिखित श्लोक में रजस के नकारात्मक प्रभावों के प्रति आगाह किया है जिसके अनुसार जुनून का परिणाम दर्द बताया गया है :

राजस असतु फलं दुखम्

(भगवद्गीता 14.16)

उपरोक्त चर्चा से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि कोई व्यक्ति कार्य में शामिल है, लक्ष्यों के प्रति प्रेरित है और परिणामों के लिए काम करता है तो रजस घटक प्रमुख रूप से प्रकट होता है। बेशक क्रोध, आसक्ति, घृणा और ईर्ष्या की व्यवहार प्रवृत्तियाँ मुख्य रूप से राजस व्यवहार से उत्पन्न होती हैं।

तमस : यह अविद्या एवं अज्ञान का गुण है। यह जड़ता को संदर्भित करता है। यह भ्रमित और सुस्त अवस्था है। यह जड़ता की शक्ति है। इसमें अस्पष्टता, सुस्ती और क्षय जैसे गुण शामिल हैं। भगवद्गीता में कहा गया है-

तमस् त्व अज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनम्
प्रमदलस्यनिद्राभिष तं निबध्नति भारत

(भगवद्गीता 14.8)

यह श्लोक इस तथ्य को उजागर करता है कि तामसिक

व्यवहार अंधकार, उदासीनता, नींद, पागलपन, भ्रम और लापरवाही का प्रतिनिधित्व करता है। यह मानव व्यक्तित्व को सुस्ती, आलस्य और उदासीनता को दर्शाने वाले कार्यों में बांधता है। यह स्थूल पदार्थ का प्रतिनिधित्व करता है और नींद, आराम, मानसिक सुस्ती और शिथिलता का कारण है। तामसिक प्रवृत्ति एक व्यक्ति को सीखने, प्रगति करने और आत्म-चिंतन करने से हतोत्साहित करती है। व्यवहार का यह तरीका व्यक्ति के विकास के लिए हानिकारक है। यह व्यक्ति को स्वयं और साथ ही पूरी मानवता की किसी भी तरह की प्रगति से विचलित करता है। व्यवहार का तमस पहलू सत्व के ठीक विपरीत है। यह मानव स्वभाव का अंधेरा पक्ष है। तम की प्रबलता के परिणामस्वरूप अप्रकाश, निष्क्रियता और केवल भ्रम होता है। तामसिक स्वभाव की चारित्रिक विशेषताएँ हैं त्रुटि, गलतफहमी और जड़ता। तामसिक स्वभाव से प्रेरित व्यक्ति मन की अंधकारमय स्थिति में रहता है। ऐसे लोग परिस्थितियों के शिकार बन जाते हैं। उनका भविष्य अंधकारमय हो जाता है। तमस एक नकारात्मक ऊर्जा है और हिंसा, भ्रम, सांप्रदायिकता, सामाजिक विभाजन और विनाशकारी उन्माद के पीछे एक शक्ति के रूप में कार्य करती है। वास्तविकता के ज्ञान के बारे में मनुष्यों की ओर से अज्ञानता यानी तमस उन्हें गैर-जिम्मेदार बना देता है। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, तीनों गुण मनुष्य के लिए महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि प्रत्येक गुण व्यक्तित्व को आकार देने में पूरक भूमिका निभाता है। त्रि-गुण अवधारणा के समर्थकों द्वारा यह वकालत की जाती है कि व्यक्ति के भीतर गुणों की तीव्रता के अनुपात में संतुलन होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के लिए, तीन गुणों के अनुपात में समय-समय पर स्थिति दर स्थिति बदलाव हो सकता है। हालांकि, लंबे समय में, तीनों पहलुओं के बीच संतुलन बनाना अनिवार्य है। गुणों के वर्णन से यह पता चलता है कि तमोगुण और कुछ हद तक रजोगुण की कीमत पर सत्वगुण को बढ़ाना व्यक्ति के लिए एक प्रगतिशील दिशा है, क्योंकि इससे आत्म-निर्देशन और आत्म-विकास की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाया जा सकता है। विकास की दृष्टि से, त्रिगुण के तीन तत्वों की संरचना को धीरे-धीरे बदलना संभव है। गीता में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि जो व्यक्ति सत्व के लिए प्रयास करते हैं वे जीवन में श्रेष्ठता हासिल करते हैं।

पंच-कोष का सिद्धांत : मानव अस्तित्व के भारतीय परिप्रेक्ष्य में, यह माना जाता है कि चेतना ही व्यक्ति का सार है। चेतना का स्वरुप भौतिक और अलौकिक दोनों है, जो स्थूल और सूक्ष्म शरीर के अस्तित्व के माध्यम से प्रकट होता है। प्राचीन भारतीय विद्वानों ने पाया है कि मानव शरीर परतों से ढका हुआ है, जिन्हें कोष कहा जाता है। कोष का अर्थ है आवरण या घेरा (महादेवन एट अल, 2023)। तैतरीय उपनिषद का पंच-कोष सिद्धांत मानव व्यक्तित्व की चेतन अवस्था के बारे में चरणबद्ध समझ प्रदान करता है। यह रूपरेखा चेतना को पाँच परतों से आच्छादित बताती है और यह इन पाँच परतों के परिणामस्वरूप प्रविष्ट और विकसित होती है। पाँच अवरणों में पहला अन्नमय कोष है जो कि भौतिक स्व का आवरण है, दूसरा अवरण प्राणमय कोष है, जो प्राणमय स्व का आवरण से जाना जाता है, तीसरा मनोमय कोष है जो मानसिक आत्म का आवरण कहलाता है , अगला अवरण विज्ञानमय कोष है जो कि आध्यात्मिक स्व का आवरण है और आखिरी अवरण आनंदमय कोष है जिसे मुक्त स्व का आवरण मन जाता है । अन्नमय मानव तंत्र का वह भाग है, जो 'अन्न' अर्थात भोजन से पोषित होता है। 'प्राणमय' वह भाग है, जो प्राण अर्थात जैव ऊर्जा से पोषित होता है। 'मनोमय' भाग, शिक्षा से पोषित होता है। 'विज्ञानमय' अहंकार से पोषित होता है और 'आनंदमय' भाग भावनाओं से पोषित होता है। (श्रीवास्तव, 2012)

अन्नमय कोष

मानव व्यक्तित्व की सबसे बाहरी परत अन्नमय कोष है जो कि भौतिक स्व का प्रतिक है। यह व्यक्ति की स्थूल वास्तविकता का प्रतिनिधित्व करता है, जो शारीरिक स्व का अस्तित्व है। यह अविकृत शुद्ध भौतिक चेतना की नियूनतम इकाई है। चेतना की यह परत शारीरिक संतुलन और स्वास्थ्य का केंद्र है। अन्नमय कोष की शुद्धता स्वास्थ्य को सर्वोत्तम स्थिति में रखने में अत्यधिक प्रभावी है। सामान्यत: अन्नमय कोष को वास्तविक स्व समझने की भूल होती हैं। क्योंकि यह सच है कि शरीर स्व का वाहन है, लेकिन भौतिक स्व किसी व्यक्ति की अंतिम वास्तविकता नहीं है।

प्राणमय कोष : प्राणमय कोष व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण स्व को संदर्भित करता है। यह प्राण ऊर्जा की परत है। यह व्यक्ति के अस्तित्व की गहराई में है। यह कोष शुद्ध, अविकृत, चमकदार प्राण ऊर्जा को वहन करता है। यह सर्वविदित है कि प्राण के बिना, कोई भी जीवित क्रिया संभव नहीं हो सकती है। यह एक शांत, तीव्र, आनंदमय और शक्तिशाली बल है जिसे बाहरी ताकतों द्वारा बदला नहीं जा सकता। यह लगातार अपनी शुद्ध ऊर्जा विकीर्ण करता है। अन्नमय कोष की तरह, यह भी भौतिक तल पर मौजूद है। यह परत जीवन शक्ति की अभिव्यक्ति है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्राण के बिना कोई जीवन संभव नहीं है जो श्वसन प्रणाली का विनियमन है। प्राण आत्मा की परत, भौतिक आत्मा अर्थात अन्नमय परत के पोषण का अनुभव करने में प्रकट होती है।

मनोमय कोष : यह मानसिक आवरण है जो कि शुद्ध मानसिक चेतना है। उपनिषदों के अनुसार मनोमय कोष को 'जीवन और शरीर का नेता' कहा जाता है। यह बौद्धिक क्षमताओं का एक जीवंत केंद्र है। यह परत भौतिक तल पर मौजूद दो बाहरी परतों की तुलना में सूक्ष्म है क्योंकि मनोमय कोष का अस्तित्व केवल भौतिक नहीं है। यह भौतिक के साथ-साथ अलौकिक तल पर भी कार्य करता है। इसमें विचार, भावनाएँ और अन्य संज्ञानात्मक कार्य शामिल हैं। यह इंद्रियों के अनुभवों को ग्रहण करता है और उन्हें भावनाओं, महत्वाकांक्षाओं, आकांक्षाओं और इच्छाओं में परिवर्तित करता है। मनोमय कोष व्यक्ति को बाहरी और आंतरिक दुनिया को समझने में मदद करता है। यह मानवीय अनुभवों के आधार पर व्यक्तित्व को आकार देता है।

विज्ञानमय कोष : यह मन की वह परत है जिसका केवल अलौकिक अस्तित्व है। इसे उच्च मन के रूप में जाना जाता है और यह भौतिक अभिव्यक्ति से परे मौजूद है। अलौकिक तल पर, यह दिव्य रुप में मौजूद रहता है और भौतिक या निम्न मन के पीछे छिपा रहता है। विज्ञानमय कोष बुद्धिमान स्व का प्रतिनिधित्व करता है जो कि पर्दे के पीछे से देखता है और अच्छे और बुरे के बीच अंतर करता है, लेकिन कार्रवाई में भाग नहीं लेता है। यह आध्यात्मिक बुद्धि की परत है। यह प्रबुद्ध मन है। यह ज्ञान को बुधिमत्ता में बदलता है। यह चेतना है जो चीजों का अविभाजित सार यानी आध्यात्मिक सत्य देती है। इस स्तर पर व्यक्ति जानता है, निर्णय लेता है, न्याय करता है और अपने द्वारा संसाधित की जाने वाली जानकारी के बीच अंतर करने के परिणामस्वरूप रचनात्मक बन जाता है। खोज, अनुसंधान और प्रबंधन व्यक्तित्व के इस पहलू से संबंधित प्रमुख कौशल हैं।

आनंदमय कोष : यह स्व की सबसे आंतरिक परत है। यह आनंद की परत है। जब व्यक्ति इस शुद्ध चेतना और वास्तविक अस्तित्व के करीब पहुंच जाता है तो आनंद की परत स्व और व्यक्तित्व का हिस्सा बन जाती है। व्यक्तित्व-विकास के इस स्तर पर पहुँचने के लिए, व्यक्ति को आत्म-विश्लेषण करना और अंतःकरण में आनंदमय जीवन के सही सार को खोजना अति आवश्यक कदम है। यह प्रक्रिया हमें विश्वास के साथ गहराई में परमात्मा से जुड़े रहने के लिए समाधान प्रदान करती है, जोकि अधिक स्थिरता और संतुलन के साथ जीवन जीने में मदद करता है। इस स्तर पर व्यक्ति जीवन के अनुभवों को अधिक स्वतंत्रता के साथ ग्रहण करता है और अचेतन निर्णयों और कार्यों से ऐसी स्वतंत्रता व्यक्ति को यह एहसास कराती है कि उसे रूख स्वरुप वाह्य व्यक्तित्व के पीछे छिपने की आवश्यकता नहीं है।

निष्कर्ष : यह सर्वमान्य है कि व्यक्तित्व का विकास एक विशेष संस्कृति पर निर्भर करता है। व्यवहार के अधिकांश आयाम उस विशेष संस्कृति के संदर्भ में ग्रहण अनुभवों और विशिष्ट परिस्थितियों के अनुसार व्यक्तित्व को अनुकूलित करते हैं। बहरहाल, मानव व्यक्तित्व की वर्तमान समझ उन पश्चिमी सिद्धांतों पर आधारित है जो उस विशेष संस्कृति के संदर्भ में उभरे ज्ञान के अनुरूप विकसित हुई है जो कि भारत के परिप्रेक्ष्य में स्व एवं व्यक्तित्व को समझने के लिए पर्याप्त नहीं है। स्व एवं व्यक्तित्व को भारतीय दृष्टिकोण से जानने, समझने और प्रसारित करने की चुनौती के मध्य प्राचीन भारतीय पारंपरिक ज्ञान एक मार्गदर्शक शक्ति है, जो व्यक्तित्व को भारतीय परिप्रेक्ष्य से निर्धारित करने के लिए नया आयाम स्थापित करने में बड़ी उपलब्धि साबित हो सकती है। भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में मानव व्यवहार और व्यक्तित्व की बारीकियों को जानने

के लिए त्रि-दोष का सिद्धांत, त्रि-गुण का सिद्धांत और पंचकोश का सिद्धांत एक नई अंतर्दृष्टि विकसित करने में पर्याप्त संसाधन प्रस्तुत कर रहे हैं । वास्तव में त्रि-दोष, त्रि-गुण और पंचकोश का सिद्धांत स्व और व्यक्तित्व के विकास की समझ के बारे में नई चर्चा प्रस्तुत करता है। त्रि-दोष की अवधारणा स्व के स्थूल तत्वों की बुनियादी नींव की व्याख्या करती है। इस सिद्धांत के अनुसार शारीरिक और जैविक विकास के आयाम का स्पष्ट रूप से पता लगाया गया है, जिसमें आनुवंशिक रूप से प्राप्त विशेषताएं शामिल हैं। स्व और व्यक्तित्व के विकास से संबंधित एक अन्य सिद्धांत त्रिगुण का सिद्धांत है। यह सिद्धांत स्व और व्यक्तित्व के आधार में प्राकृतिक शक्तियों के गुणात्मक पहलू की व्याख्या करता है। इस सिद्धांत के अनुसार अस्तित्व के तीन अलग-अलग तरीके पहचाने जाते हैं। वे हैं सत्व, रजस और तमस। सत्व गुण अनुभूति, ज्ञान और प्रकाश लाता है। रजस गुण इच्छा, जुनून, क्रिया, लालच और उत्तेजना प्रदान करता है। तमस गुण ज्ञान का अभाव है जो आलस्य, सुस्ती और उदासीनता का कारण बनता है। प्रत्येक व्यक्ति में तीनों गुण अलग-अलग संरचना में मौजूद होते हैं, हालांकि प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार को आकार देने में प्रत्येक गुण अपनी एक विशिष्ट भूमिका निभाता है। रजस और तमस घटकों के नकारात्मक प्रभाव के बावजूद, वे व्यक्ति के जीवन के महत्वपूर्ण क्षणों में आवश्यक।

गुण उपलब्ध : करने में अहम् भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, तमस व्यक्ति को चिंता और आक्रामकता के दौरान शांत करता है। इसी तरह, रजस के भी नकारात्मक प्रभाव होते हैं, लेकिन रजस ही हर सफल व्यक्ति के जीवन में उच्च उपलब्धि के पीछे की जीवन शक्ति है। अकेले सत्व कठोरता लाएगा। अकेले रजस से अराजकता पैदा होगी। अकेले तमस से विघटन होगा। मानव व्यक्तित्व का विकास इन तीनों गुणों के प्रभाव से संभव होता है। एक संतुलित व्यक्तित्व में तीनों का संतुलन होना चाहिए। इससे चरित्र और व्यवहार में सामंजस्य आता है। संतुलित अवस्था में तीनों गुणों को शुद्ध और परिष्कृत किया जा सकता है और उन्हें उनके दिव्य समकक्षों में बदला जा सकता है- सत्व, ज्योति बन जाता है जो प्रामाणिक आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि है; रजस, तपस बन जाता है जो तीव्र दिव्य शक्ति है; तमस क्षमा बन जाता है, जो दिव्य है (अरबिंदो, 1998)। पंचकोश का सिद्धांत स्व और व्यक्तित्व को समझने के लिए एक अलग ढांचा प्रदान करता है। व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में पंचकोश सिद्धांत सांसारिक स्थिति से उच्चतम और परम आत्मा में स्व के परिवर्तन की प्रक्रिया को दर्शाता है। यह सिद्धांत विद्वानों और आम आदमी दोनों को व्यक्ति के वास्तविक स्व को जानने में सक्षम बनाता है। मानव व्यक्तित्व का पंचकोश दृष्टिकोण व्यक्तित्व के लक्षण दृष्टिकोण के समान है जिसमें प्रत्येक कोष कुछ विशेषताओं को प्रदर्शित करता है। पंचकोश व्यक्तित्व विकास का एक पदानुक्रमित सिद्धांत है। निर्धारित पाँच कोष एक दूसरे के अंदर स्थित हैं, जिनमें अन्नमय भौतिक स्तर पर विद्यमान सबसे बाहरी है और आनंदमय सबसे भीतरी कोष है जो दिव्य स्तर पर स्थित रहता है । लेख में प्रस्तुत भारतीय सैद्धांतिक रूपरेखाएँ मानव स्व के अस्तित्व को व्यक्तित्व विकास द्वारा विशिष्ट व्यक्ति निर्माण तक की यात्रा को चित्रित करते हैं। ❑

संदर्भ सूची :

ऑरोबिंदो, एस. (1998) दर्शन और योग पर निबंध. श्री अरबिंदो आश्रम प्रकाशन विभाग हप्पेस एन. (2017) भारतीय मनोविज्ञान: एक अनुभवात्मक दृष्टिकोण. भारतीय मनोविज्ञान संस्थान

महादेवन, बी., भट, वी.आर. और नागेंद्र, पी.आर.एन. (2023) भारतीय ज्ञान प्रणाली का परिचय : अवधारणाएँ और अनुप्रयोग. पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड

राधाकृष्णन, एस. (2006) भगवद गीता .हार्पर कॉलिन्स पब्लिशर्स- (1950) प्रमुख उपनिषद. कलकत्ता विश्वविद्यालय

सतपथी, बी. (2018) व्यक्तित्व का पंच कोष सिद्धांत. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी, 6(2) डीओआई 10.25215/0602.105

श्रीवास्तव, के. (2012) व्यक्तित्व की अवधारणा: भारतीय परिप्रेक्ष्य। इंडियन साइकियाट्री जर्नल, 21(2) : 89-93.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

स्त्री अस्मिता का प्रश्न और 'मेरी आवाज सुनो' उपन्यास

ताबा याना
शोधार्थी, पीएच.डी., हिंदी विभाग,
मिजोरम विश्वविद्यालय,
आइजल, मिजोरम
7085863647
aanejaai36@gmail.com

प्रो. संजय कुमार
आचार्य, हिंदी विभाग, मिजोरम
विश्वविद्यालय, आइजल, मिजोरम
9319105821
sanjaykumarmzu@gmail.com

शोध सार :

20वीं शताब्दी में स्त्री अस्मिता का प्रश्न भारत के संदर्भ में महत्वपूर्ण रहा है। स्त्री की सुरक्षा, स्वतंत्रता और अधिकार स्त्री अस्मिता के मुख्य विचारणीय विषय हैं। पितृ सत्ता के बंधनों से मुक्ति की चाह, उससे विद्रोह और स्त्री-पुरुष की सभी स्तर पर समानता के लिए संघर्ष करना आदि स्त्री अस्मिता के महत्वपूर्ण घटक हैं। हिंदी साहित्य की विविध विधाओं में स्त्री अस्मिता के प्रश्नों को साहित्यकारों ने गंभीरता के साथ उठाया है। स्त्री अस्मिता के प्रश्नों से मुठभेड़ का उदाहरण कई सारे हिंदी उपन्यासों में दिखाई पड़ता है। प्रेमचंद के उपन्यास 'निर्मला' और 'गोदान', यशपाल का उपन्यास 'झूठा सच', जैनेंद्र कुमार का उपन्यास 'त्यागपत्र', मैत्रेयी पुष्पा के 'चाक' और 'कहै ईसुरी फाग', मृदुला गर्ग के 'कठगुलाब' और 'चितकोबरा', फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल', प्रभा खेतान का 'पीली आँधी' आदि उपन्यासों में स्त्री अस्मिता के प्रश्नों को गंभीरता के साथ उठाया गया है। इसी विषय को केंद्र में रखकर और अरुणाचल प्रदेश के गालो जनजाति की पेट विवाह (नेप्प नयीदा) या बाल विवाह की कुप्रथा को आधार बनाकर जुमसी सिराम 'नीनो' ने 'मेरी आवाज सुनो' नामक उपन्यास की रचना की।

बीज शब्द :

गालो जनजाति, पितृ सत्तात्मक समाज, पेट विवाह (नेप्प नयीदा) या बाल विवाह, कन्या मूल्य, स्त्री अस्मिता।

मूल आलेख :

गालो जनजाति के लोग अरुणाचल प्रदेश के सियांग, पूर्वी सियांग, आलो, पश्चिमी सियांग और अपर सुवनसिरी जिलों में रहते हैं। उपन्यास की नायिका आयि गालो जनजाति में जन्मी एक पर्वत-पुत्री है, जिसके दुखांत प्रेम कथा को लेखक ने पूरे मनोयोग से इस उपन्यास में चित्रित किया है और इसी दुखांत प्रेम कथा के वर्णन के दौरान वे गालो जनजाति की एक-एक सामाजिक बुराई का पर्दाफाश करते जाते हैं। लेखक ने पृष्ठभूमि के रूप में आलो क्षेत्र के प्राकृतिक सौंदर्य का नयनाभिराम चित्रण किया है- *''हिमालय से हजारों छोटी-बड़ी नदियाँ निकलती हैं। उनमें से सीपू और सियोम भी हैं, जो आलो घाटी में चार चाँद लगाती हैं। आलो के चारों*

ओर पर्वतों पर जनजातियों के छोटे-छोटे गाँव बसे हुए हैं। गाँव के हर ओर मनोरम जंगल है। घाटियों में मुलायम घास इतनी हरी है मानो प्रकृति ने आलो को लम्बी फुरसत के समय सजाया हो। पर्वत-पुत्री आयि, जिसका जन्म यहीं कहीं एक गाँव में हुआ था, पहाड़ी की सबसे ऊँची चोटी से आलो शहर की ओर ताक रही थी।''[1]

उपन्यास की कथावस्तु का आरंभ आलो घाटी में सीपू और सियोम नदी के मिलन स्थल के पास नायिका आयि और नायक आलुक के मिलन से होती है, जहाँ से दोनों की प्रेम कथा शुरू होती है। लेकिन जल्दी ही उनके प्रेम की चर्चा आलो घाटी के गाँवों में होने लगती है और पितृ सत्तात्मक गालो जनजातीय समाज उद्वेलित और हिंसक हो उठता है। जब एक दिन दोनों जंगल से लौटने वाले थे तभी ताकार के लोग आकर दोनों को पकड़ लेते हैं और पीटते हुए ले जाते हैं- ''तो क्या हम चलें?'' आयि ने उठते हुए कहा। दोनों पहाड़ से उतरने लगे। सहसा देखा कि कुछ दूर पर बहुत से 'न्यीमाक' (आक्रमणकारी), धनुष, तीर, दाव और लाठी लिए उनकी ओर बढ़ रहे हैं। वे सब ताकार के आदमी थे। उनकी पीठ पर भालू, बंदर और हिरण के चमड़े से बने पोशाक और थैले थे तथा बाएँ कंधे से लंबी-लंबी 'योकिस' (तलवारें) लटक रही थीं। वे आयि और आलुक को ढूँढ़ते हुए पहाड़ी तक आ गए थे। उन्होंने सारा जंगल छान डाला था। ताकार ने चिल्लाते हुए कहा- *''आयि-आलुक! भागने की कोशिश की तो तीर चला दूँगा।... तुम्हारा मूल्य तो वर्षों पहले दे रखा है मैंने''- ताकार चीखते हुए बोला। उन्होंने आलुक के दोनों हाथों को बाँधना शुरू कर दिया। फिर उसे पीटते हुए ले गए। मोकीर ने भी अपनी बहन आयि(आयि) की जमकर पिटाई कर दी।''*[2] ताकार की बातों और आयि के बड़े भाई के बात-व्यवहार से यह पता चलता है कि आयि का पेट विवाह (नेप्प नयीदा) या बाल विवाह उसके विधुर जीजा ताकार से उसके जन्म के पहले ही उसके माँ-बाप ने कन्या मूल्य लेकर तय कर दिया था। इसमें लड़की के परिवार वाले लड़के वालों से कन्या मूल्य के रूप में सोना चाँदी, गहने, जानवर-गाय-मिथुन, मांस-मछली, 'ओपो' (शराब) आदि विवाह के पूर्व लेते हैं। लेखक ने अपने इस उपन्यास में कन्या मूल्य का जिक्र बार-बार किया है। गालो जनजाति में अजन्मी बच्ची का विवाह भी माँ के पेट में रहते हुए कन्या मूल्य लेकर किसी बड़े उम्र के व्यक्ति से कर देने की कुप्रथा रही है। बड़ी होने पर न चाहते हुए भी उस लड़की को अपने से अधेड़ उम्र के पति के घर जाना पड़ता है, वरना घर वाले और समाज वाले उसे वहाँ मारपीट कर पहुँचा देते हैं। इस पेट विवाह (नेप्प नयीदा) या बाल विवाह की कुरीति का पालन 20वीं शताब्दी तक गालो जनजातीय समाज क्रूरता के साथ करता आया है, जिसके विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत किसी में नहीं थी। संपूर्ण पितृ सत्तात्मक गालो जनजातीय समाज इसका समर्थक रहा है। पेट विवाह (नेप्प नयीदा) एक प्रकार का बाल विवाह या बेमेल विवाह है, जहाँ स्त्री और पुरुष के बीच आयु का बहुत ज्यादा अंतर होता है, जिसको अंग्रेजी में मिस्मैच मैरेज कहा जाता है। इस उपन्यास में अठारह वर्ष की नायिका आयि की शादी पचास वर्ष के ताकार के साथ जबर्दस्ती कराई जाती है। जबकि आयि अपने हम उम्र नायक आलुक से प्रेम करती है।

लेखक पेट विवाह (नेप्प न्यीदा)/बाल विवाह के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि- *''नेप्प न्यीदा' का मतलब है पेट विवाह, जिसका अर्थ यह है कि जब बच्चा माँ के पेट में हो, तभी उसकी शादी किसी के साथ तय कर दी जाए।''*[3] जब बच्चा माँ के गर्भ में रहता है, तभी उसे बेच दिया जाता है। उसी समय यह तय कर दिया जाता है कि अगर यह बच्चा लड़की हुई तो उसका विवाह कन्या मूल्य देने वाले के साथ बड़े होने पर कर दिया जाएगा और अगर वह बच्चा लड़का हुआ तो वह घर में ही रह जाएगा। इस उपन्यास में नायिका (आयि) को पता ही नहीं होता है कि उसके स्वर्गीय माता-पिता ने उसे उसके विधुर जीजा ताकार को कन्या मूल्य लेकर बेच दिया था, जब वह अपनी माँ के पेट में थी। जब आयि की उम्र सत्रह वर्ष की होने वाली होती है तो उसका भैया (मोकीर) उसका स्कूल छुड़वाकर उसे घर ले आता है ताकि वह पढ़-लिखकर बिगड़ न जाए। उसे लगता है कि अगर आयि ज्यादा पढ़-लिख गई तो वह दूसरा लड़का देख या पसंद कर लेगी और अपने माता-पिता द्वारा तय किए गए पेट विवाह (नेप्प न्यीदा) का विरोध करने लगेगी। आयि के भैया (मोकीर) ताकार से कहते हैं कि *''आप बिल्कुल फिक्र*

मत कीजिए। मेरी बहन का विवाह आपसे होकर रहेगा। पढ़-लिखकर मेरी बहन कहीं बिगड़ न जाए। इसलिए तो मैंने उसे स्कूल से निकलवा दिया है।''[4] पहले के समय में इस तरह का विचार केवल गालो समाज में ही नहीं, बल्कि पूरे देश और तानी समुदाय के बीच में भी दिखाई देता था।

केवल एक आयि की भाभी याजुम है, जिसे लगता है कि उसकी ननद आयि का पेट विवाह (नेप्प नयीदा) गलत आदमी से हो रहा है। याजुम आयि से बहुत प्यार करती है। लेकिन वह अपने पति मोकीर और समाज का खुला विरोध नहीं कर पाती है। वह आयि की मदद करना चाहती है तो उसका पति मोकीर उसे भी जमकर पीटता है। इसलिए याजुम चाह कर भी अपनी ननद आयि की मदद नहीं कर पाती है। याजुम आयि से सहानुभूति दिखाते हुए कहती है कि मैं तुम्हारे भैया को समझाने और मनाने का प्रयास करूँगी। *''हाँ आयि। ताकार की उम्र पचास से कम नहीं है; जबकि तुम्हारी उम्र अठारह वर्ष मात्र है। मेरे ख्याल में यह अच्छी बात नहीं होगी। मगर मुझमें अपनी 'न्यीदा' की परंपरा के विरोध में आवाज उठाने की ताकत नहीं है। फिर भी मैं तुम्हारे भैया को समझाने की कोशिश करूँगी।''*[5]

आयि की भाभी याजुम अपने पति को ताकार द्वारा दिए गए कन्या मूल्य को वापस लौटाने और शादी तोड़ने की सलाह देते हुए कहती है कि *''तुम्हारे स्वर्गीय माँ-बाप ने तुम्हारी बहन के विवाहोत्सव में जितने गाय-मिथुन, मांस-मछली, 'ओपो' आदि ताकार से लिए थे, उसे हमें वापस लौटाना चाहिए।''*[6] लेकिन आयि के भैया, गरीब होने के कारण ताकार द्वारा दिए गए कन्या मूल्य को वापस लौटने में अपने को असमर्थ पाते हैं। इसलिए वे आयि को ताकार के घर पहुँचाने पर जोर देते हैं। जबकि आयि की भाभी कन्या मूल्य को वापस लौटने के लिए बार-बार जोर देती है। तो मोकीर अपनी मजबूरी बताता हुआ कहता है कि *''तुम मुझे क्या करने को कहती हो? हमारे पास जितनी जमीन-जायदाद, पालतू पशु-पक्षी, चल-अचल संपत्ति, यहाँ तक कि घर के बर्तन हैं, उन सबकी बिक्री कर देने पर भी ताकार को उसकी आधी रकम तक लौटा नहीं सकेंगे। इसे हमारा दुर्भाग्य ही कहना चाहिए।... मुझे भी इस बात की चिंता है। गहरा दुख है। मैं इस बोझ से ऐसा दबा हुआ हूँ कि रात को भी नींद नहीं आती है। खाना हजम नहीं होता है। इस कर्ज को तो उतार नहीं सकता हूँ। इस जुए को उतार फेंकने का एक ही उपाय है कि आयि की शादी ताकार से ही हो जाए।''*[7]

इस उपन्यास में लेखक ने स्त्री के संबंध में पितृ सत्तात्मक समाज की क्रूर सोच को स्पष्टता से उजागर किया है। आयि के विवाह, जीवन और भविष्य को तय करने के लिए जब पंचायत होती है तो कोई भी एक स्त्री- आयि की बात को सुनने को तैयार नहीं है। पंचायत का मुखिया (हेडगाम) आयि के जीवन और भविष्य का निर्णय सुनाते हुए बड़े ही घृणित स्वर में कहता है कि नारी जाति का उद्देश्य केवल वंश बढ़ाना ही है- *''आयि, नारी तो भ्रष्ट, कुल्टा और नष्टा है।... मैं इस 'केबा' (पंचायत) में यह कहना चाहता हूँ कि आयि की शादी उसके जीजा जी ताकार के सिवाय अन्य किसी से हो ही नहीं सकती, क्योंकि उसकी बड़ी बहन संतान रहित मरी। यह बहुत ही पुरानी रीति है, जो सदियों से चलती चली आई है कि पुरुष के कार्य में सहायता के लिए नारी को प्रकृति ने रचा है। नारी अपने-आप में कुछ नहीं है। नारी किसी खुशी के लिए जन्म नहीं लेती। उसके जन्म का उद्देश्य किसी वंश की वृद्धि मात्र है। संतान उत्पत्ति के लिए आयि की शादी ताकार से ही होगी।''*[8]

इस उपन्यास में लेखक ने पितृ सत्तात्मक गालो जनजातीय समाज में नारी की दयनीय स्थिति को स्पष्टता से चित्रित किया है। पितृ सत्तात्मक गालो जनजातीय समाज में लोगों का यह मानना था कि नारी केवल पुरुषों की भोग्य सामग्री के लिए बनी है। नारी मनुष्य की कोटि में ही नहीं आती है। सभा में गाँव का मुखिया आयि से कहता है कि *''आयि, तुम अपनी सीमाओं के बाहर जाकर बोल रही हो। तुम्हें यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि नारी बिकाऊ वस्तु के समान ही है। दरअसल नारी, मनुष्य नहीं है। यह केवल मेरे द्वारा कही गई बात नहीं है, बल्कि पूरा समाज मानता है कि नारी केवल मांस का एक लोथड़ा-भर है, जिसको लेकर पुरुष मनचाहे ढंग से खेलता है। नारी तो असल में पुरुषों की भोग्य सामग्री है।''*[9]

लेखक ने गालो जनजातीय समाज में नारी की दशा को पशुओं और कीड़ों-मकोड़ों से भी खराब बताया है और उन्हें सभी अधिकारों से वंचित, लाचार और बेबस

दिखाया है। पंचायत में आयि की दशा को देखकर उसकी भाभी(याजुम) मन ही मन पुरुषों द्वारा स्त्री पर किए जा रहे अत्याचारों पर सवाल खड़ा करते हुए उसकी आलोचना करती है- *''उसे अपनी ननद पर बहुत दया आ रही थी, पर वह कर ही क्या सकती थी। वह नारी है, नारी... जो मर्दों के इशारे पर चलती है। मर्दों की उँगलियों पर नाचना ही नारी के नसीब में लिखा है। औरतों के पैरों की बेड़ियाँ बहुत ही सख्त हैं। स्त्री के लिए धन- दौलत नहीं, शिक्षा-दीक्षा नहीं; यहाँ तक कि उसका तन और मन भी उसका अपना नहीं। क्या स्त्री कि कोई स्वतंत्रता नहीं होनी चाहिए? क्या नारी मनुष्य नहीं है? समाज का अंग नहीं है नारी? नारी ही तो इस पृथ्वी के प्राणियों कि जन्मदायिनी है। लिंग-भेद के कारण ही क्या पुरुषों को अपना या बेटियों को विक्रय करके मुनाफा कमाना चाहिए? छि: छि:! यह कैसी अमानवीय प्रथा है हमारे समाज में। लड़की का मूल्य उसके परिवारवालों को देकर लड़के वाले लड़की ले जाते हैं। लड़की की इच्छा का कोई अर्थ नहीं है। जो चाहे उसे पत्नी या बहू बना ले। न्यीजुम (याजुम) उन मर्दों को मन-ही-मन धिक्कारने लगी। पुरुष का यह विचार एक पागलपन ही है कि नारी को प्रकृति ने सिर्फ पुरुषों के लिए रचा है। समाज ने स्त्री को उपभोग योग्य सामग्री के सिवाय मनुष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया। क्या स्त्रियों को पुरुष जाति के समक्ष झुककर उनका मनमाना अत्याचार सहना चाहिए? स्त्री को विक्रय की जंजीर में बांधा गया है क्या इसीलिए उसे हर अत्याचार हँसते-हँसते झेलना चाहिए?''*[10]

पेट विवाह (नेप्प नयीदा) में लड़की की इच्छा और चाहत का कोई मतलब नहीं होता है और न ही इसमें उससे उसकी राय पूछी जाती है। उसे जबर्दस्ती उसके पति के घर मार-पीटकर परिवार वालों के द्वारा ही पहुँचा दिया जाता है। नायिका आयि भी जब अपने पेट विवाह (नेप्प नयीदा) का विरोध करती है तो उसे पशु के समान पीट-पीटकर पति(ताकार) के घर पहुँचा दिया जाता है और यह काम उसका बड़ा भाई मोकीर खुद करता है। साथ में वह कहता भी जाता है कि- *''तुम्हें पीट-पीटकर सही पटरी पर लाना होगा। इस तरह की बातें कहते हुए मोकीर एक छड़ी से पीटते हुए उसे ताकार के घर ले गया जैसे कि वह एक पशु हो और उसे मालिक के घर हाँककर ले जाया जा रहा हो।''*[11]

लेकिन पेट विवाह (नेप्प नयीदा) की कुप्रथा का विरोध पितृ सत्तात्मक गालो जनजातीय समाज में कोई दूसरा नहीं करता है। समाज के सभी गण्यमान पुरुष और स्त्री इसे सही मानते हैं। यहाँ तक की जो स्त्रियाँ पूर्व में इस बेमेल विवाह की शिकार हुई हैं, वे भी इसका समर्थन करती दिखाई पड़ती हैं। जब आयि ताकार के घर पहुँची तो वहाँ पर एक अधेड़ उम्र वाली औरत आयि को समझाते हुए कहती है कि हर हालत में अपने पति की सेवा करना ही स्त्री का कर्तव्य है- *''आयि बिटिया, इस पृथ्वी पर कई लड़कियों ने ताकार के समान अधेड़ उम्र के पुरुषों से विवाह कर बच्चे जन्मे हैं। पति की उम्र चाहे कैसे भी हो, उसे पूज्य समझकर अपना सर्वस्व उसी पर लुटाना है। यही नारी का कर्तव्य है। तुम्हारे चाचा जी के पचपनवें वर्ष में मेरी शादी उससे कराई गई थी।... उस वक्त मेरी उम्र यही कोई पंद्रह-सोलह वर्ष रही होगी। आयि, अधेड़ उम्र वाले पति तो पत्नी को अपने प्राण से भी अधिक प्रिय समझते हैं।''*[12]

तो दूसरी तरफ धन का भी लोभ होता है। लोगों को लगता है कि अगर लड़का पैसा वाला है तो अधेड़ होने पर भी उसकी शादी कम उम्र की लड़की से करने में कोई दोष नहीं है। स्वयं नायिका आयि का भाई मोकीर उससे कहता है कि हमारे खानदान की पूरी संपत्ति तुम्हारे स्वर्गीय दीदी के पति (ताकार) के पास है और तुम्हें अपनी दीदी की संपत्ति को संभालना है। यही कहकर मोकीर आयि के ऊपर चिल्लाते हुए कहता है कि- *''तुम अक्ल की दुश्मन हो, आयि। हमारे खानदान के पूरे 'गोमिस-दोकमिन' (मणि-मुक्ता या गहने) को तुम्हारी दीदी की शादी में दहेज के रूप में दे दिया गया था। ये सभी गहने ताकार के पास अब भी सुरक्षित हैं। इन सभी का उपयोग तुम्हें करना है। आयि, तुम्हारी दीदी के गहने किसी दूसरे के पास न चले जाएँ।''*[13]

लेखक ने इस उपन्यास में यह भी संकेतित किया है कि इस तरह की घटनाएँ विश्व के अनेक क्षेत्रों में घटित होती हैं। परंतु समाज के अधिकांश लोगों को यही लगता है कि समाज ने जो प्रथाएँ बना रखी हैं, वह समाज और मनुष्य की बेहतरी के लिए है- चाहे उसके बोझ तले मासूम स्त्रियों का जीवन नरक बन जाता हो। थक हार कर आयि की भाभी याजुम भी उसके विवाह को राजी हो

जाती है। *''इस तरह की घटनाएँ तो केवल पर्वतीय अंचल के इस आदिवासी गाँव-कस्बे में ही नहीं, बल्कि विश्व भर में होती हैं। जन मानस को यही लगता है कि वह जो भी निर्णय ले रहा है, वह व्यक्ति की भलाई के लिए ही है। जब याजुम की एक न चली तो उसे भी अपनी सत्रह-अठारह वर्षीय ननद आयि का ब्याह प्रौढ़ ताकार, जिसकी उम्र पचास वर्ष से कम नहीं थी, के साथ करने के लिए न चाहते हुए भी मजबूरन सहमत हो जाना पड़ा।''*[14]

इस उपन्यास में लेखक ने स्त्री स्वतंत्रता और अस्मिता के प्रश्न को गंभीरता से उठाया है, जहाँ नायिका अपने अधिकारों के लिए लड़ते हुए आखिरी दम तक विरोध करती है। आयि अपने भैया की बातों का विरोध करते हुए कहती है कि- *''मैं कोई बाजारू सामान नहीं कि जिसे मन चाहा उसके हाथ बेच दिया।''*[15] आयि अपने जीते जी अपने पेट विवाह (नेप्प न्यीदा) और पति ताकार को स्वीकार नहीं करती है। वह अपने भाई, पति और समाज सभी का इस विषय पर सतत विरोध करती है।

इस उपन्यास में स्त्री के शारीरिक शोषण और उत्पीड़न को भी दिखाया गया है। मोकीर अपनी बहन और पत्नी दोनों की पिटाई करता है। जब आयि की पिटाई कुछ ज्यादा होने लगी तो याजुम बीच-बचाव करते हुए अपने पति से कहने लगी, *''अरे मोकीर, वाह- वाह! तुमको तो जो चाहो वही करने का हक है। आयि को तो उसका प्रतिवाद करने का भी अधिकार नहीं है, क्योंकि वह तुम्हारी बहन है। यानी कि स्त्री-जाति है। नारी की जुबान नहीं है, जो भाई के विरुद्ध कुछ बोल सके।'' मोकीर का गुस्सा याजुम पर भी धधक उठा। आयि को छोड़कर उसने याजुम की भी जबरदस्त पिटाई कर दी तो वह मरणासन्न होकर अचेत सी गिर गई।''*[16] साथ ही ताकार भी अपनी पत्नी आयि को सबके सामने पीटता है।

आयि अपने भैया के हाथों कई बार मार खाती है। इसके साथ ही वह अपने पति ताकार के घर जाकर भी उसके हाथों से पीटती है। आयि का पति ताकार उसकी इच्छा के विरुद्ध उससे शारीरिक संबंध बनाना चाहता है, पर आयि इसके लिए तैयार नहीं होती है और विरोध करती है। तब नाराज हो कर उसका पति सबके सामने उसे बुरी तरह पीटता है- *''सदियों से नारी के प्रति अनैतिक और निष्ठुर आचरण करता आया है यह समाज। मानो स्त्री-जाति कोई कीड़ा-मकोड़ा हो। इसी से तंग आकर न जाने कितनी स्त्रियाँ मौत को गले लगाती हैं; कितनी स्त्रियाँ सुबक रही हैं; इसका लेखा कौन करता है? आयि अपने टूटे सपने लेकर विलाप करती रही; फरियाद करती रही, पर सब व्यर्थ। ताकार अभी भी आयि को वासनात्मक दृष्टि से देखता जा रहा था, जैसे कुत्ते हड्डियों को देखते हैं।...उसने आयि का 'गाले' (एक विशिष्ट प्रकार की लुंगी जिसे औरतें पहनती हैं) खींचकर उतार दिया। वह जोर से चिल्लाई तो पास में पड़ी एक लाठी उठाकर ताकार ने उसकी जमकर पिटाई कर दी।''*[17]

गालो समाज में प्यार करने वाले स्त्री-पुरुष को बुरे रूप में देखा जाता है। इसलिए आयि और आलुक के सच्चे प्यार को गालो समाज के लोग न तो समझ पाते हैं और न ही स्वीकार कर पाते हैं। जब आयि पंचायत सभा में आलुक का नाम लेकर स्पष्ट कहती है कि मैं सिर्फ आलुक को ही प्रेम करती हूँ, आलुक के अलावा किसी दूसरे के साथ शादी नहीं करूँगी। चाहे तो आप मुझे मार डालिए, लेकिन आलुक को कुछ बुरा-भला मत बोलिए। तभी यह सब सुनकर सभा में बैठा एक बूढ़ा बोलता है कि- *''छि: छि:! इतने बड़े-बूढ़ों के बीच प्यार-मुहब्बत की रट लगाई हुई है! चुप रहकर हमें अपना काम करने दे।''*[18]

जब आयि ताकार से शादी करने का विरोध करती है तो उसका बड़ा भैया मोकीर उसकी खूब पिटाई करता है। साथ ही समाज के अन्य लोग भी आयि को ही बुरा-भला कहते हैं। उसकी दशा को देखकर किसी के भी मन में दया का भाव नहीं उठता है। भरी पंचायत में आयि के मुँह से शादी के विरुद्ध बातें सुनकर मोकीर उस पर टूट पड़ता है। *''मैं आलुक को भूल सकती हूँ। मगर ताकार से शादी नहीं कर सकती।'' तभी मोकीर गुस्से से आग बबूला हो जाता है- 'खामोश!' मोकीर ने उसे जोर से चाँटा मारते हुए कहा। फिर उसका बाल पकड़कर खींचा और धक्का दे दिया। आयि मुँह के बल जा गिरी। इस दृश्य को देखकर भी किसी का दिल पसीजा नहीं; बल्कि सभी यायि को कुल कलंकिनी करार दे रहे थे। उपस्थित लोग यायि के प्रति घृणा से भरे हुए थे।''*[19]

इसीलिए पंचायत का फैसला आयि और आलुक के सच्चे प्यार के विरुद्ध होता है और आयि को अधेड़ ताकार से विवाह करने का फैसला सुना दिया जाता है। शादी के बाद भी जब आयि ताकार को अपना पति स्वीकार नहीं कर पाती है और आगे चलकर अपने प्रेमी आलुक से मिलती है तो नाराज होकर उसका पति ताकार अपने समाज वालों के साथ मिलकर उन दोनों की हत्या कर देता है। इस प्रकार इस प्रेम कहानी का दुखद अंत होता है।

लेखक ने इस उपन्यास में स्त्री के विद्रोह को भी चित्रित किया है, जिसमें नायिका गालो जनजातीय समाज के गलत रीति-रिवाजों और रूढ़ियों का विरोध करती है और पितृ सत्ता के खिलाफ खड़ा होने का साहस करती है। गाँव की भरी पंचायत में आयि जवाब देते हुए बूढ़े से कहती है कि *''मैं चुप नहीं रहूँगी क्योंकि इस सभा में मेरी जिंदगी और मेरे भविष्य पर निर्णय होने जा रहा है।''*[20] आयि गालो जनजातीय समाज के गलत रीति-रिवाजों पर व्यंग्य करते हुए आगे कहती है कि ''हमारे बाप-दादों के समय से प्रचलित रीति पुरातन, सख्त और मजबूत हो सकती है; मगर मौन और बेअसर नहीं है। रीति-रिवाज एक सहज नियम हैं, जिन्हें कुदरत ने मानव-जाति के सामाजिक ढाँचे को ध्यान में रखकर बनाया है। अपनी बहन या बेटियों को दबाकर या दम घोंटकर रखना क्या यह कोई रीति है? जो रीति अपनी बहू-बेटियों को दिन-हीन बनाकर अमानुष बनाए, उस रीति को मैं समस्त स्त्रियों की ओर से शाप दे रही हूँ। नारी के बदले में धन-संपत्ति प्राप्त करना किस धर्म में लिखा है? यह तो सीधा क्रय-विक्रय है। यह तो नारी की बिक्री है। इस नियम का आदर तो आपके समान कुछ गिने-चुने मूर्ख ही करते हैं।''

पर आयि का बड़ा भाई मोकीर कुछ सुनने और मानने को तैयार नहीं है। वह कहता है कि ''मगर आयि, तुम्हारी बिक्री तो हमारे स्वर्गीय माँ-पिताजी ने किया है। 'हितुम-जोर' (सृष्टिकर्ता) द्वारा माँ के गर्भ में तुम्हें रचने के पूर्व ही ताकार के घरवालों ने तुम्हारा मूल्य दे रखा है। इसलिए तुम्हें ताकार के पास जाना ही होगा। तुम्हारी नापसन्दगी से हम अपनी रीति नहीं बदल सकते।'' आयि इसका आशावादी जवाब देते हुए भविष्य वाणी करती है कि *''इस रीति का मतलब है- नारी की स्वतंत्रता का अपहरण। नारी भी जीवित प्राणी है। भैया, कान खोलकर सुन लो, इस धरती पर एक ऐसा युग भी आएगा जब इस प्रकार का नारी-व्यापार नहीं चल सकेगा। नारियों को तब पूरा अधिकार प्राप्त होगा जो उन्हें सृष्टि के आदिकाल से मिलना चाहिए था।''*[21] लेखक भी नारी की स्वतंत्रता पर जोर देते हुए लिखते हैं कि *''मनुष्य की सबसे बड़ी जरूरत है स्वतंत्रता। प्रेम करने वालों की स्वतंत्रता को समाज के नीति-नियम, कुरीतियाँ रोकती हैं और प्रेमियों को अमानुष के रूप में परिणत कर देती हैं। असफल प्यार से मनुष्य हत्या या आत्महत्या तक कर डालते हैं।''*[22]

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि लेखक ने 'मेरी आवाज सुनो' उपन्यास में गालो जनजाति की गलत रीति-रिवाज, परंपराएँ, पितृ सत्तात्मक समाज, सामाजिक व्यवस्था और उसमें नारी की दयनीय स्थिति को विस्तार से रेखांकित किया है। लेखक ने जिस तरह नायिका आयि के माध्यम से स्त्री की स्थिति को दिखाया है, वह गालो समाज के साथ साथ तानी समुदाय में भी प्रचलित रही है। जिस तरह से आयि के जीवन और भविष्य का फैसला गाँव के पुरुष मुखिया (गाँव बूढ़ा) द्वारा भरी पंचायत में किया जाता है, वैसा आज भी अरुणाचल के किसी दूर-दराज के गाँव में देखने-सुनने को कभी कभी मिल जाता है। लेकिन इस उपन्यास की नायिका आयि उस निर्णय को चुपचाप स्वीकार नहीं करती है और उसके खिलाफ आवाज उठाती है और संघर्ष करती है। लेखक ने नायिका आयि को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक दिखाया है और स्त्री के प्रति समानता की माँग की है। इस उपन्यास में नायिका आयि शारीरिक और मानसिक तकलीफ को सहने के बाद भी घरवालों से लेकर गाँव के मुखिया तक का विरोध करती है। वह लगातार अपने (स्त्री के) अधिकार और आजादी की माँग करती है और अपनी आजादी और अधिकार की कीमत जान देकर चुकाती है। पर उसका यह बलिदान व्यर्थ नहीं जाता है। उसके बलिदान से प्रेरित होकर अरुणाचल का जनजातीय समाज बदलता है और आगे चलकर स्त्रियों को उनका यथोचित अधिकार और आजादी प्राप्त होती है। अपने जान का बलिदान देकर क्रांति की जो मशाल नायिका आयि ने अरुणाचल के जनजातीय समाज में जलाई थी, उससे अरुणाचल के जनजातीय समाज की

बेटियों का रास्ता आज प्रकाशित हो रहा है और उसे सम्मान के साथ जीने का अधिकार और आजादी प्राप्त हो रही है। प्रसिद्ध आलोचक वीर भारत तलवार इस उपन्यास की 'दो शब्द' शीर्षक भूमिका में लिखते हैं कि *''भारत के ज्यादातर समाजों की तरह अरुणाचल के तानी ग्रुप के समुदायों में भी स्त्रियों की दशा अच्छी नहीं है। अगर भारत के दूसरे समाज में विवाह में दहेज लेने-देने की प्रथा के कारण स्त्रियों की दुर्दशा होती है तो तानी समुदायों में भी विवाह में वधूमूल्य (कन्या- मूल्य) लेने-देने की प्रथा के कारण स्त्रियों की दुर्दशा होती रही है। कई बार तो छोटे-छोटे बच्चों के माता-पिता भी वधू-मूल्य का आदान-प्रदान करके बच्चों का विवाह तय कर देते रहे हैं। इस बुरी प्रथा को केंद्र में रखकर जुमसी सिराम ने इस उपन्यास में स्त्रियों की अपनी पहचान, अपनी इच्छा, अपना स्वतंत्र अस्तित्व और अपने अधिकारों का सवाल उठाया है। उन्होंने अपने समाज की उत्पीड़ित स्त्रियों के हकों की आवाज बुलंद की है और हिंदी में लिखकर इस आवाज को पूरे भारत तक पहुँचा देने की कोशिश की है। इस उपन्यास में एक प्रेमी जोड़े के तीव्र भावावेश के साथ हृदय की सरलता और सच्चाई को दिखाया गया है। गलत और अन्यायपूर्ण परंपराओं के आगे सिर न झुकने की जिद दिखाई गई है। इस उपन्यास में जुमसी हमें एक न्यायपूर्ण तथा और अधिक मानवीय समाज बनाने के लिए प्रेरित करते हैं।''*[23] ❑

संदर्भ सूची :

1. जुमसी सिराम 'नीनो', 'मेरी आवाज सुनो', अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2021, पृ. सं.- 9-10
2. वही, पृ. सं.- 22-23
3. वही, पृ. सं.- 7
4. वही, पृ. सं.- 13
5. वही, पृ. सं.- 14
6. वही, पृ. सं.- 37
7. वही, पृ. सं.- 38-39
8. वही, पृ. सं.- 31
9. वही, पृ. सं.- 31
10. वही, पृ. सं.- 27
11. वही, पृ. सं.- 42
12. वही, पृ. सं.- 42-43
13. वही, पृ. सं.- 33
14. वही, पृ. सं.- 39
15. वही, पृ. सं.- 28
16. वही, पृ. सं.- 43
17. वही, पृ. सं.- 58-59
18. वही, पृ. सं.- 30
19. वही, पृ. सं.- 29
20. वही, पृ. सं.- 30
21. वही, पृ. सं.- 28
22. वही, पृ. सं.- 53-54
23. वही, 'दो शब्द' से, पृ. सं.- 5-6

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

संस्कृति

नेपाली लोक कथाओं में पूर्वोत्तर भारत की लोक मान्यताओं की झलक

(नेपाली लोककथा संग्रह 'गोलसिमल' के विशेष संदर्भ में)

कृतिका विश्वकर्मा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
मिजोरम विश्वविद्यालय,
आइजल, मिजोरम
8415819509
gazmerkritikazw@gmail.com

प्रो. संजय कुमार
आचार्य, हिंदी विभाग,
मिजोरम विश्वविद्यालय,
आइजल, मिजोरम
9319105821
sanjaykumarmzu@gmail.com

शोध सार :

लोक साहित्य लोक संस्कृति का दर्पण होता है। ठीक उसी प्रकार जैसे साहित्य समाज का दर्पण होता है। लोक साहित्य में लोक संस्कृति की झलक दिखाई पड़ती है। प्रस्तुत शोध पत्र में नेपाली लोक कथाओं में अभिव्यक्त पूर्वोत्तर भारत में निवास करने वाले नेपाली समाज की संस्कृति का उद्घाटन किया गया है। इसमें प्रत्यक्ष रूप से पूर्वोत्तर भारत के नेपाली समाज की लोक मान्यताओं, त्योहार, रीति-रिवाज, लोक विश्वास, मिथक, सामाजिक रूढ़ियाँ, परंपराओं, प्रेम संबंध आदि से संबंधित लोक कथाओं का और अप्रत्यक्ष रूप से पूर्वोत्तर भारत के अन्य स्थानीय लोगों की संस्कृति से संबंधित लोक कथाओं के वैशिष्ट्य का अवलोकन किया गया है।

बीज शब्द :

लोक संस्कृति, पूर्वोत्तर भारत, नेपाली समाज, लोक कथा, लोक परंपरा, मिथक, लोक मान्यताएँ, सभ्यता, रूढ़िवादिता।

मूल आलेख :

संस्कृति शब्द 'सम्' उपसर्ग 'कृ' धातु से निष्पन्न होता है, जिसका शाब्दिक अर्थ संस्कृत रूप या परिष्कृत संस्कार अथवा सजाने के अर्थ में लिया जाता है। विस्तृत अर्थ में संस्कृति किसी समाज में व्याप्त गुणों की गहनता के समग्र स्वरूप का नाम है, जो उस समाज के सोच-विचार, आहार-विहार एवं कार्य करने के स्वरूप में अंतर्निहित होता है।

नेपाली भाषा का संबंध भारतीय आर्य भाषा परिवार से है, जो नेपाल देश की राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा है। नेपाली भाषा को भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में भी स्थान प्राप्त है। नेपाली भाषा को बोलने वाले भारत के अनेक राज्यों जैसे- पश्चिम बंगाल, सिक्किम, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश, असम, मेघालय, मणिपुर, हिमाचल प्रदेश आदि में बड़ी संख्या में रहते हैं। नेपाली समाज के लोग *''प्राचीन काल से ही पूर्वोत्तर भारत में रहते आ रहे हैं। हालाँकि भारतीय प्रांतीय भाषा की आड़ में जाति निर्माण की प्रक्रिया उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में इतनी प्रभावी नहीं थी। लोग का यहाँ की भाषा और संस्कृति से रमने का अनुभव दिखाई पड़ता है।''*[1]

लोक-साहित्य विभिन्न जीवन संस्कृतियों के आग्रहों और उनकी सांकेतिक

मुखरता का साहित्य है। डॉ. भगवतशरण उपाध्याय लिखते हैं कि *''लोक साहित्य, लोक-मानस को प्रतिबिंबित करने वाला, सामान्य जनता को जनता द्वारा जनता के लिए मौखिक, पारंपरिक वह साहित्य है जो अनायास नि:सृत होता है, जिसमें सहजावस्था युक्त निरक्षर जनता अपनी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, जीवन-मरण, लाभ-हानि व्यक्त करती है।''*[2] अर्थात लोक अभिव्यक्ति अकृत्रिम और प्रवृत्तियों से जुड़ी हुई चेतना है। इससे स्पष्ट होता है कि लोक साहित्य जनमानस के सरलतम आग्रहों और भावनाओं का विकास है। लोक साहित्य के क्षेत्र में लोक कथाओं का एक विशिष्ट स्थान है, जिसमें भारतीय समाज का लोक विश्वास, लोक मान्यताओं तथा समाज की संस्कृति झलकती है। इस संबंध में कृष्णदेव उपाध्याय लिखते हैं कि-*''सच तो यह है कि इन लोक कथाओं के द्वारा सर्व साधारण जनता के मन का जितना अनुरंजन होता है, उतना अन्य किसी साधन के द्वारा नहीं होता। भारतवर्ष लोक कथाओं की उत्स भूमि है। यहाँ की प्राचीन कथाओं ने समस्त संसार के कथा साहित्य को प्रभावित किया है।''*[3] नेपाली भाषा में लोक साहित्य सृजन का कार्य प्राचीन काल से ही होता आया है। नेपाली लोक साहित्य के आरंभ के संबंध में खेमराज नेपाल लिखते हैं कि-*''नेपाली लोक साहित्य की परंपरा उतना ही प्राचीन है, जितना की नेपाली भाषा।''*[4]

भारत के हर एक कोने में नेपाली बसे हुए हैं, खास करके हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग राज्य और पूर्वोत्तर भारत आदि में। पूर्वोत्तर भारत में नेपाली लोग प्राचीन काल से मौजूद हैं। इसका प्रमाण पुष्प शर्मा द्वारा संकलित नेपाली लोक कथा संग्रह 'गोलसिमल' में दिखाई पड़ता है। इन लोक कथाओं के माध्यम से नेपाली समाज एवं पूर्वोत्तर भारत के राज्य की परंपरा, लोक मान्यता, लोक विश्वास तथा संस्कृति की झलक दिखाई पड़ती है। भारत में हर संस्कृति एवं परंपरा के पीछे कोई-ना-कोई कथा या यूँ कहें कि कोई मिथक जरूर रहता है। मिथ से तात्पर्य ऐसे संदर्भ से है, जिसके पीछे पूर्व धारणा या विश्वास शक्ति निर्मित होती है। मैथिली प्रसाद भारद्वाज के अनुसार, *''ऐसी किसी भी कथा को, जो विचारणा और आलोचना शक्ति से सर्वथा शून्य, आदिम चेतना की स्वयं-स्फूर्त उद्भावना होती है, उसे मिथ कहा जाता है।''*[5] मिथक को परिभाषित करते हुए 'वृहत हिंदी कोश' में लिखा गया है कि *''प्राचीन पुराकथाओं का तत्व जो नवीन स्थितियों में नए अर्थ का वहन करे''*[6] उसे मिथक कहते हैं।

पूर्वोत्तर भारत के नेपाली समाज में प्रचलित लोक कथाओं में कई प्रकार के लोक विश्वास, लोक मान्यताएँ और मिथक दिखाई पड़ते हैं, जिनका चित्रण पुष्प शर्मा द्वारा संकलित नेपाली लोककथा संग्रह 'गोलसिमल' में दिखाई पड़ता है। नेपाली समाज में गुरास के फूल का गहरा एवं प्रतीकात्मक महत्व है। गुरास के फूल को अक्सर पवित्रता, प्रेम और देशभक्ति से जोड़ा जाता है, अर्थात नेपाली समाज में इसे लाली गुरास के नाम से भी जाना जाता है। गुरास का लाल रंग नेपाली समाज में बहादुरी का प्रतीक होने के साथ-साथ स्थाई भावना का भी प्रतीक माना जाता है। नेपाली समाज में गुरास का महत्व ऐसे ही नहीं है, इसके पीछे उत्तिस और गुरदास की लोक कथा है, जो पुष्प शर्मा द्वारा संकलित लोककथा 'उत्तिस र गुरास को प्रेम कथा' (उत्तिस और गुरास की प्रेम कथा) में दिखाई पड़ता है। इस कथा में उत्तिस और गुरास नामक दो प्रकार के फूल के बीच प्रेम संबंध दिखाया गया है। जहाँ उत्तिस एक उच्च वर्ग तथा सर्वगुण संपन्न फूलों के रूप में उभरता है तो वहीं गुरास निचले वर्ग का फूल है, जो कद में छोटा है और दिखने में भी कुरूप है। उत्तिस की एक बेटी होती है, जिसका नाम सुरीली और गुरास के बेटे का नाम रोज्जा रहता है। इन दोनों में प्रथम मुलाकात में ही एक-दूसरे के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो जाती है। दोनों एक-दूसरे से शादी भी करना चाहते थे; लेकिन उत्तिस को यह कतई मंजूर नहीं था कि सुरीली और रोज्जा की शादी हो। सुरीली एक अत्यंत सुंदर कन्या थी और इस बात पर उत्तिस को बहुत घमंड था। *''सुरीली तो ठहरी, उत्तिस की बेटी, जो सुंदर, सुडौल, लंबी तथा सर्वगुण संपन्न थी। उसकी इन कलापूर्ण एवं शारीरिक विशेषताओं के कारण उसकी गणना मूल्यवान फूलों में की जाती थी।''*[7] जबकि गुरास की कुरूपता और छोटे कद के कारण उत्तिस उससे घृणा करता था। अनेक प्रयास करने के बाद भी अंत में दोनों का प्रेम अधूरा रह जाता है, जिसके कारण सुरीली आत्महत्या कर लेती है। इस प्रकार उत्तिस और गुरास का

प्रेम अधूरा होने के बावजूद समाज में अमर हो जाता है। इस कारण गुरास का फूल नेपाली समाज की संस्कृति में जीवन की कठिनाइयों से लड़ने के लिए शक्ति के प्रतीक के रूप में माना जाता है।

इस शृंखला की एक अन्य लोक कथा 'सुनौलो रेशमी मजेत्रो' है। यह कथा पूर्वोत्तर भारत के मेघालय के गारो समाज व लोक मान्यताओं पर आधारित है। गारो समाज में जब धूप, वर्षा एवं इंद्रधनुष का एक साथ आगमन होता है तो उनके द्वारा बाहर सुखाए जा रहे कपड़े झट से नहीं उतारे जाते हैं, क्योंकि इस समाज में ऐसी वर्षा को अमृत वर्षा मानते हैं। इनका मानना यह है कि इस वर्षा में स्नान करने से मनुष्य की काया कंचन हो जाती है। इसलिए ऐसी वर्षा में गारो समाज के लोग भीगा करते हैं। गारो समाज की इस मान्यताओं का आधार सुनौलो रेशमी मजेत्रो की कथा है। पूरे भारत में मेघालय एक ऐसा राज्य है, जहाँ मातृ सत्तात्मक समाज है, जहाँ लड़के शादी के बाद लड़की के घर रहने आते हैं और जो घर की सबसे छोटी बेटी होती है, उसे ही घर के वारिस का दर्जा दिया जाता है। *''गारो समाज मातृ त्तात्मक समाज है। गारो जनजाति के रीति अनुसार बेटी ही घर की वंश व संतान मानी जाती थी।''*[8] इस कथा में भैरू भी सुनौली के साथ विवाह के बाद सुनौली के घर में आकर रहने लगता है। सुनौली अपने माता-पिता की इकलौती संतान थी। इसलिए उसके माता-पिता के बाद उनकी जितनी भी संपत्ति थी, वह सुनौली की हो जाती है, जिसमें एक सुनहरे रंग का मजेत्रो यानी शॉल भी है, जो उनका खानदानी शॉल था। सुनौली की माँ वह शॉल उसे भेंट के रूप में देती है और कहती है कि उनके अपने कुल के बाहर जितने भी लोग हैं उन्हें यह शॉल कभी छूने नहीं देना। यह कहकर उसने सुनौली के कान में कुछ मंत्र कहा। अगर किसी को इस मजेत्रो को छूना है तो पहले उसे इस मंत्र को दोहराना होगा। तब जा के उस मजेत्रो को छू पाएगा। यह बात सुनौली ने भैरू को नहीं बताई और इस तरह अपनी माँ को दिए वचन का पालन वह कई सालों तक करती रही। एक दिन की बात है कि सुनौली ने उस मजेत्रो का प्रयोग करने के बाद उसे सूखने के लिए बाहर रख दिया था। लेकिन अचानक तेज वर्षा होने पर बाहर सुखाए जा रहे शॉल को भीगने से बचाने के लिए भैरू उस मजेत्रो को उतारने के लिए जाता है। जैसे ही वह उस मजेत्रो को छूता है, वैसे ही वह एक मोर के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इतने में सुनौली भी वहाँ आ जाती है। सुनौली जैसे ही भैरू को बचाने लिए उसे छूती है तो वह स्वयं भी एक मोरनी के रूप में बदल जाती है। इसलिए आज भी जब गारो समाज में धूप और वर्षा या इंद्रधनुष का एक साथ आगमन होता है, तब गारो समाज की मान्यताओं के अनुरूप भैरू और सुनौली मोर-मोरनी के रूप में नाचते हुए दिखाई पड़ते हैं, जो एक मनमोहक दृश्य होता है। इस तरह के लोक विश्वास और मान्यताओं से पता चलता है कि अनुभव बोध ही संस्कृति का मूल तत्व है।

सिक्किम के लेपचा समुदाय में बाँसुरी बजाना अशुभ माना जाता है। इसी लोक विश्वास पर आधारित 'आतेक की बाँसुरी की धुन' नामक इस शृंखला की यह लोक कथा है, जिसमें आतेक नाम का लड़का जो एक ग्वाला होता है। उसे बाँसुरी बजाना बहुत पसंद था; लेकिन उसके द्वारा बाँसुरी बजाने के कारण उसे हिममानव (एक प्रकार का राक्षस) परेशान करता था, क्योंकि उसे भी आतेक की बाँसुरी की धुन सुनना अच्छा लगता था। अंत में हिममानव उसे बाँसुरी बजाने के लिए बहुत परेशान करने लगा तो आतेक ने उससे छुटकारा पाने के लिए उसे जिंदा जला दिया और उसके बाद उसने कभी बाँसुरी को हाथ नहीं लगाया। इसलिए *''आज भी लेपचा समुदाय में सुबह-शाम सीटी बजाना, जोर से चिल्लाना और खास करके बाँसुरी बजाना इस समुदाय में वर्जित है। यदि किसी ने संयोगवश बाँसुरी बजा भी दी तो हिममानव उसको परेशान करने लगेगा ऐसा लोक विश्वास है।''*[9]

इसी तरह लेपचा समाज में प्रेम एवं संसार में मानव जीवन का विकास कैसे हुआ, उस पर आधारित एक प्रेम कथा 'सुम्निमा और पारुहाङ' की प्रेम कथा है, जिसमें मनुष्य और प्रकृति एवं जीव-जंतु के आपसी गहरे संबंध का भी चित्रण मिलता है। *''सुम्निमा हवा, पानी, पाताल, पक्षियों और वन्य पशुओं की भाषा समझ लेती थी।''*[10] इस कथन से मनुष्य और प्रकृति के बीच एक अटूट संबंध का अनुभव होता है, जिसमें सुम्निमा जीव-जंतुओं के साथ रह कर उनकी भाषा समझने लगती है। सुम्निमा और पारुहाङ संसार के पहले स्त्री और पुरुष के रूप में सामने

आते हैं। इनके माध्यम से स्त्री कैसे पुरुष की तरफ आकर्षित होती है, इसका वर्णन भी किया गया है। इनके प्रेम में आत्मसमर्पण एवं आस्था का भाव दिखाई देता है। यही कारण है कि लेपचा संस्कृति में प्रेम को पवित्र माना जाता हैं। सुम्निमा और पारुहाङ की प्रेम कथा सिक्किम के लेपचा समाज में बहुत प्रसिद्ध है। इसलिए आज भी लेक्सेप में स्थिर शिव मंदिर के प्रवेशद्वार के सामने सुम्निमा और पारुहाङ की तस्वीर लगी हुई है, जिन्हें वहाँ के स्थानीय लोग उन्हें शिव-पार्वती का प्रतीक मानते हैं।

जिस प्रकार भारत में गंगा को एक पवित्र नदी के रूप में माना जाता है, ठीक उसी प्रकार पूर्वोत्तर भारत के सिक्किम राज्य के 'रोंगीत और रोंगनू' को पवित्र नदी मानते हैं। ये दोनों सिक्किम में बहने वाली नदियों के नाम हैं। 'रोंगीत और रोंगनू' शीर्षक लोक कथा में रोंगीत प्रेमिका है और रोंगनू प्रेमी है, जिसके माध्यम से प्रेमियों के संघर्ष एवं वेदना के साथ-साथ ईश्वर के प्रति उनकी आस्था दिखाई गई है ताकि उनकी मनोकामना पूरी हो। यह दो नदियाँ अलग-अलग दिशा में बहने के करण कभी एक-दूसरे से नहीं मिल पाती हैं- *''ये दो नदियाँ संसार के महान प्रेमी में से एक थे। एक का निवास स्थान उत्तरी हिमालय की गोद में था तो दूसरे का पश्चिमी हिमालय की गोद में, इसलिए दोनों का मिलना असंभव था।''*[11] अंत में बहुत संघर्ष के बाद दोनों का मिलन हो जाता है, जिसे आज भी सिक्किम के स्थानीय लोग रोंगीत व रोंगनू के प्रेम को अनुभव कर स्वर्गीय अनुभूति से आप्लावित होते हैं।

भारतीय प्राचीन ग्रंथों में जिस तरह पुनर्जन्म का उल्लेख मिलता है, ठीक उसी प्रकार पूर्वोत्तर की लोक कथाओं में भी दिखाई देता है। 'आँककको रुखको जन्म' (आँक के वृक्ष का जन्म) लोक कथा में पुनर्जन्म का वर्णन मिलता है। इस लोक कथा में एक वृक्ष और एक सुंदर कन्या को एक-दूसरे से प्रेम करते दर्शाया गया है। इस लोक कथा में एक पेड़ रात होते ही सुंदर युवक के रूप में परिवर्तित हो जाता था, जिससे उस कन्या को प्रेम था; लेकिन जैसे ही सुबह होती थी तो वह फिर से एक विशाल वृक्ष बन जाता था। जब यह बात कन्या के पिता को पता चली तो उन्होंने उस वृक्ष को ही कटवा दिया। जब वृक्ष काटा जा रहा था तो पेड़ के टुकड़े जहाँ-जहाँ गिरे वहाँ-वहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के वृक्ष उगते गए, जैसे- कदंब, आँक ,च्वा, करबीर आदि। जो वृक्ष उगे इनमें से सबसे खास वृक्ष आँक का था, क्योंकि इस वृक्ष में सफेद सुंदर और घने पत्ते निकलते थे। इसलिए आँक का पेड़ चिकित्सा और धार्मिक रूप से महत्वपूर्ण माना जाता है। *''इसमें काँटे, पत्ते, कीटनाशक, औषधि और आंतरिक विष प्रतिकारक पदार्थों के गुण थे। अधूरे प्रेम के कारण छूटे प्रेमी-प्रेमिकाओं की ग्रहदशा को ठीक करने और उन्हें मिलाने में, बहुविवाह और पति-पत्नी के बीच होने वाले झगड़े के निवारण करने में भी यह वृक्ष विशेष रूप से लाभदायी है, ऐसा लोक विश्वास समाज में बहुत ही प्रचलित है।''*[12] इस तरह इस कथा में एक तरफ तो एक अधूरे प्रेम का मार्मिक चित्रण मिलता है तो दूसरी तरफ पिता की एक गलती के कारण अपनी बेटी को खो देने का पछतावा दिखाई देता है।

भारतीय संस्कृति में माता-पिता का विशेष महत्व है। मनुष्य के जीवन में पिता का भी वही स्थान है, जो माँ का होता है। लेकिन आज का समाज यह भूल रहा है जो इस कथा में दिखलाया गया है। 'बुढो बाबु फाल्ने थोत्रे डोको' कथा में वृद्धावस्था की समस्या का वर्णन मिलता है कि किस प्रकार माता-पिता बूढ़े होने पर बच्चों को बोझ लगने लगते हैं। उनके अपने बच्चे उनसे पीछा छुड़ाना चाहते हैं। जैसे इस कथा में अपना ही बेटा पिता को लकड़ी ढोने वाली टोकरी (डोको) में डालकर पहाड़ से गिराने की तैयारी करता है; लेकिन जब यही बात उसका खुद का बेटा कहता है तो उसे अहसास होता है कि जो जैसा करेगा वैसा ही भरेगा। तब वह अपने पिता को घर ले जाता है। उनकी देखभाल और प्यार से सेवा करने लगता है ताकि भविष्य में उसका बेटा भी उसका ख्याल ऐसे ही प्यार से रखे। इसलिए नेपाली समाज में घर पर पुरानी टोकरी(डोको) रखना अशुभ माना जाता है। *''आज भी नेपाली समाज में ये लोक विश्वास है कि अगर कोई डोको पुराना हो जाता है या फट जाता है तो उस डोको से घर का नजर उतार कर उसे मिट्टी में गड्ढा खोदकर गाड़ दिया जाता है और उसके ऊपर एक पौधा लगाया जाता है। अगर ऐसा नहीं किया गया तो घर के लिए अशुभ माना जाता है, ऐसी लोक मान्यता प्रचलित है।''*[13] इस तरह इस कथा का उद्देश्य भारतीय संस्कृति के विशिष्ट गुण मर्यादा को उजागर करना

है। इस तरह संस्कृति, मानवीय विश्वासों और उनके द्वारा निर्मित सामाजिक जीवन मूल्य के आपसी संवाद से गतिशील होती है और अपने को लगातार संशोधित और नवीनीकृत करती चलती है। टायलर इसे जटिल इकाई मानते हैं- *''जिसके अंतर्गत ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, विधि, रीति और अन्य वे क्षमताएँ और अभ्यास सम्मिलित हैं, जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में अर्जित करता है।''*[14] इस परिभाषा को स्वीकार कर लेने पर संस्कृति के उन संकुचित संदर्भ में बदलाव की आवश्यकता अपेक्षित होती है, जो इसे मानसिक प्रवृत्ति या अनुकरण तक सीमित कर देती है। डॉ. डी.एन. मजूमदार के अनुसार, *''संस्कृति के अंतर्गत मनुष्यों की रीति-नीति, लोक विश्वास, आदर्श, कलाएँ तथा मानव द्वारा उपलब्ध समस्त कौशल एवं योग्योताओं को लिया जा सकता है।''*[15]

निष्कर्ष :

इस तरह हमें पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति के दो रूप देखने को मिलते हैं- एक प्रत्यक्ष और दूसरा परोक्ष या यूँ कहें कि व्यक्त और अव्यक्त। व्यक्त संस्कृति, परंपराओं और मान्यताओं का क्रिया रूप है, जिसमें नेपाली लोक कथाओं में पूर्वोत्तर की पारिवारिक प्रथाएँ, रीति-रिवाज, सामाजिक मान्यताएँ, मर्यादाएँ और ऐसी ही विभिन्न प्रकार की जन-सामान्य के उत्सव और आदतें शामिल हैं। वहीं दूसरी ओर अव्यक्त संस्कृति में पूर्वोत्तर की परंपराओं का विचारगत और भावगत रूप भी दिखाई देता है, जिसमें समय और इतिहास के पारंपरिक अभिप्रायों और प्रामाणिकता के दस्तावेज होते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि संस्कृति सभिप्राय और सोद्देश्य हुआ करती है। यह मानव जीवन का एकत्रीकरण तो है ही, साथ ही स्वतंत्रत जीवन दृष्टि की एक मनोवैज्ञानिक और वैविध्यपूर्ण प्रणाली भी है। संस्कृतियों के प्रभाव में मानवीय अंतरानुभवों और सभ्यताओं के जो अनिवार्य पड़ाव ऐतिहासिक तौर पर हमें देखने को मिलते हैं। उसमें लोक व्यवहार और लोकाचार की महत्वपूर्ण उपस्थिति रहती है। नेपाली लोक कथाएँ पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक वैशिष्ट्य का उद्घाटन करती हैं और इनमें लोक विश्वास, लोक मान्यताएँ और मिथकों की सुंदर अभिव्यक्ति मिलती है। ❑

संदर्भ सूची :

1. खेमराज नेपाल, नेपाली लोक साहित्यको रूपरेखा, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2003, पृ. सं.- 15
2. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, कला और संस्कृति, साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद, 1952, पृ. सं.- 122
3. कृष्णदेव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, पन्नालाल रोड, इलाहाबाद, 2014, पृ. सं.- 263
4. खेमराज नेपाल, नेपाली लोक साहित्यको रूपरेखा, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2003, पृ. सं.- 37
5. मैथिली प्रसाद भारद्वाज, पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत, दिल्ली, 1994, पृ. सं.- 296
6. कालिका प्रसाद एवं अन्य (संपा), वृहत हिंदी कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, 2013, पृ. सं.- 894
7. पुष्प शर्मा, गोलसिमल, उपमा प्रकाशन, कालेबुङ; पश्चिम बंगाल, 2021, पृ. सं.- 57
8. वही, पृ. सं.- 94
9. वही, पृ. सं.- 81
10. वही, पृ. सं.- 43
11. वही, पृ. सं.- 52
12. वही, पृ. सं.- 105
13. वही, पृ. सं.- 134
14. टायलर, प्रिमिटिव कल्चर, 1871, पृ. सं.- 1
15. डॉ. डी. एन. मजूमदार, मदान-एन इंट्रोडक्शन टू सोसल एंथोपोलाजी, 1860, पृ. सं.- 14

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि और भाषा का महत्व

आशु मंडोरा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय
7982589573
kavyaashi92@gmail.com

प्रो. चर्ल अन्नपूर्णा
अध्यक्ष एवं आचार्या, हिंदी विभाग
हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय
9509250803
annapurna.cherla@gmail.com

शोध सार :

भाषा समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई है। भाषा के माध्यम से मानव जीवन में आने वाली विविध परिस्थितियों एवं पहलुओं को समझने में सहायता मिलती है। भाषा के बिना मानव जीवन नीरस है। वहीं दूसरी ओर साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है। साहित्य समाज का वास्तविक चित्र समाज में रहने वाले सामान्य लोगों के सामने प्रस्तुत करता है। साहित्य समाज से समाज के नए स्वरूप की ओर बढ़ने की यात्रा है। समाज से इतर जैसे मनुष्य की पहचान मुश्किल है, उसी प्रकार भाषा के बिना समाज एवं साहित्य दोनों का अस्तित्व बनना कठिन है। समाज में आने वाले निरंतर परिवर्तनों के साथ उसकी भाषा भी बदलती है और इस परिवर्तन का प्रमाण साहित्य में देखने को मिलता है।

बीज शब्द :

साहित्य, समाज, भाषा, संस्कृति, संरचना, समन्वय, रचना, आधुनिक, विधा, सर्जनात्मक, शाब्दिक, चित्रण, मानवता।

मूल आलेख :

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन यापन के लिए सर्वप्रथम जिस इकाई का प्रयोग करता है, वह भाषा होती है। मनुष्य जाति के जन्म के साथ ही भाषा का भी निर्माण हुआ। भाषा मनुष्य के विकास की ओर जाने के मार्ग में सर्वथा उसके साथ रही। भाषा एक ऐसी इकाई है, जिसके बिना व्यक्ति का जीवन अधूरा है। तो जब साहित्य की बात आती है, जो समाज एवं मनुष्य विशेष को केंद्र में रखकर ही लिखा जाता रहा है। भाषा से इतर इसका अस्तित्व मुश्किल है। हमें अपने समाज एवं संस्कृति से अवगत करने के लिए सबसे प्रथम रूप में जो शिक्षा प्राप्त हुई, वह पंचतंत्र की कहानियों के रूप में हुई। कथा का समाज में यह आरंभिक रूप था। यहीं से हम समाज एवं साहित्य में कथा साहित्य के महत्व को समझ सकते हैं। कथा के रूप में मिलने वाली शिक्षा एवं भाषा का यह पहला प्रयोग समय के साथ अपने अंदर कई परिवर्तन लाया है। भाषा के आधार पर इन परिवर्तनों को जानने एवं समझने के लिए यहाँ

विस्तार से इसका विश्लेषण आवश्यक हो जाता है। परंतु उससे पहले भाषा, साहित्य एवं कथा साहित्य के विषय में संक्षिप्त जानकारी आवश्यक है।

साहित्य की परिभाषा पर दृष्टि डाली जाए तो प्राचीन एवं वर्तमान समय में कई विशिष्ट परिभाषाएँ मिलती हैं। समय के साथ बदलते साहित्य के स्वरूप के समान इसकी परिभाषा में भी विविधता देखने को मिलती है। आचार्य भामह ने 'काव्यालंकार' में साहित्य को इस तरह परिभाषित किया है – *''शब्दार्थौ सहितौ काव्यं''*[1] अर्थात शब्द और अर्थ के सहभाव से काव्य की रचना होती है। साहित्य में शब्द और अर्थ का अभिन्न साहचर्य रहता है। शब्द किसी भी भाषा की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई माना जाता है। शब्द का स्वरूप ही हमें भाषा विशेष का बोध कराता है। अर्थ के अभाव में किसी भी शब्द का अस्तित्व स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रत्येक शब्द एक अर्थ विशेष का बोध कराता है व इसी प्रकार के अर्थसहित शब्दों की माला से साहित्य रचना संभव होती है ।

महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के अनुसार, *''ज्ञानराशि के संचित कोश का नाम ही साहित्य है।''*[2] अर्थात किसी प्रकार के ज्ञानबोध से प्रभावित होकर जब कोई व्यक्ति रचना करता है तो उसे साहित्य कहा जाता है। यह ज्ञान बोध जीवन में मिलने वाले अनुभवों के आधार स्वरूप आसपास उपस्थित सामान्य जन को प्रभावित करने के लिए रचना करता है, जिससे साहित्य का निर्माण होता है। लिखित रूप में दर्ज समस्त सामग्री को साहित्य की श्रेणी में रखा जाता है। स्वरूप में चाहे वह नाटक के रूप में हो या कहानी के रूप में, लयबद्ध कविता हो या गद्य रूप में कोई उपन्यास। कोई भी विधा जब कलम के माध्यम से एक व्यक्ति के अनुभवों को विश्वभर से जोड़ती है तो वह साहित्य होता है। प्रेमचंद साहित्य के विषय में विचार करते हुए कहते हैं कि *''कवि या साहित्यकार में अनुभूति की जितनी तीव्रता होती है, उसकी रचना उतनी ही आकर्षक और ऊँचे दरजे की होती है।''*[3] अर्थात अनुभव के आधार रची गई रचना सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि समाज में रहने वाला व्यक्ति जिस सत्य को व्यक्तिगत स्तर पर अनुभव करता है, उसी की सृष्टि अपनी रचना में करता है। साहित्य को समाज से अलग होकर नहीं देखा जा सकता।

साहित्य का सदैव सामाजिक प्रयोजन अवश्य रहता है। कोई भी रचना व्यक्तिगत नहीं हो सकती। किसी भी रचना का उसके समाज से और उसमें रहने वाले लोगों से विशेष संबंध अवश्य रहता है ।'प्रेषण' साहित्य की विशेष इकाई है। आत्मनिवेदन के साथ-साथ व्यक्ति जिस तरह समाज से पृथक नहीं हो सकता, उसी प्रकार साहित्य में भी वह आत्मप्रकाशन के साथ ही अपने आत्मीय विचारों, स्थितियों व घटनाओं को पाठक वर्ग के बीच प्रेषित करने का कार्य भी करता है। यहाँ जनार्दन राव चेलेर का यह कथन आवश्यक हो उठता है, *''साहित्य का सृजन समाज की जागृति, प्रबुद्धता और सचेतनता का द्योतक है।''*[4] अर्थात समाज के विविध अंग एवं तथ्य साहित्य के माध्यम से एक नवीन अर्थ और सौंदर्य के साथ प्रस्तुत होते हैं। साहित्य समाज को जागृत भी करता है और साथ ही समाज के अनुसार परिवर्तन भी स्वीकार करता है। साहित्य समाज के लोगों को सचेत भी करता है तो समय-विशेष की अच्छी-बुरी बातों को उजागर भी करता है। साहित्य सतत प्रगतिशील और परिवर्तन स्वीकार करने वाली विधा है।

''साहित्य कुछ अवधारणाओं पर आधारित होता है। उसका एक धर्म भी होता है और उसकी अभिव्यक्ति कई विधाओं में हो सकती है। साहित्य गद्य में लिखा जाता है और पद्य में भी लिखा जाता है। वह अपने समय की उपज होता है और अपने समय का अतिक्रमण भी करता है।''[5] अर्थात साहित्य के कई रूप हो सकते हैं। किसी विधा विशेष का निर्धारण रचनाकार अपनी बुद्धि, कौशल एवं भाव के आधार पर करता है। इस प्रकार साहित्य व्यक्ति जीवन का आईना है।

इस संबंध में नगेंद्र कहते हैं, *''जब तक वह निश्छल आत्माभिव्यक्ति करता रहेगा, उसकी कृति मूल्यहीन नहीं हो सकती।''*[6] भाषा की सुगमता किसी रचना की सबसे महत्वपूर्ण इकाई होती है, जिससे उसकी संप्रेषण क्षमता का विस्तार होता है, जो किसी रचना को सजीवता प्रदान करती है।

साहित्य में भाषा की संरचनात्मक स्थिति कई रूपों में देखी जा सकती है। साहित्य और भाषा का संबंध उतना ही घनिष्ठ है, जितना साहित्य और समाज का है। यह तीनों शब्द एक-दूसरे से संबंधित हैं। जहाँ साहित्य का निर्माण समाज की अनुपस्थिति में होना संभव नहीं, उसी प्रकार भाषा के बिना न ही समाज में विचरण किया जा सकता है और न ही साहित्य रचना संभव है। *''भाषा बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती, क्योंकि समाज मनुष्यों के आपसी संपर्क का परिणाम है।''*[7] भाषा की सार्थकता उसे बोलने वाली सामाजिक जनता ही है। भाषा समाज की सर्वप्रथम एवं मूल इकाई है। भाषा ही समाज का प्राण होती है। साहित्य और भाषा का सीधा संबंध इस रूप में भी देखा जा सकता है कि साहित्य का प्रभाव उसकी भाषा से ही होता है। जितनी भी कालजयी रचनाएँ साहित्य में हुई हैं, उनके प्रभावी होने में लेखक का वह भाव रहा, जो वह भाषा के माध्यम से व्यक्त करता है एवं सामान्य जन तक अपनी बात पहुँचाता है।

साहित्य की जहाँ तक बात है, साहित्य समाज से जुड़े बिना नहीं रह सकता। इसका प्रमाण साहित्य के विकास क्रम में आने वाले विविध काल एवं आंदोलन विशेष और भाषा के माध्यम से रची जाने वाली रचनाएँ हैं। काल विशेष की स्थिति ही नहीं, उस समय की भाषा की स्थिति भी साहित्य में देखी जा सकती है। साहित्य के प्रत्येक काल से हमें कुछ-न-कुछ विशेष सीखने को मिलता है। वैदिक युग ने सामान्य जन में धार्मिक भावना जगाने की नींव तैयार की। जैन एवं बौद्ध युग ने भारतीय समाज में अहिंसा, सत्य और विरक्ति का प्रचार किया। साहित्यिक गतिविधियों को मद्देनजर रखा जाए तो आदिकाल में वीरगाथाओं के माध्यम से ओजस्वी रचनाएँ रची गईं, जिससे युद्ध की ओर अग्रसर योद्धाओं के अंदर वीरता का भाव उत्पन्न हुआ। फिर जब मानव मन निरंतर होने वाले युद्धों एवं मानवीय ह्रास से निराशा की ओर जाने लगा, तो भक्ति काव्य ने उन्हें भक्ति गुण के सहारे जीवन जीने की एक नई दिशा दिखाई। मध्यकाल में विविध संदर्भों में रचना कार्य संभव हुआ। उस समय के समाज को एक ओर सामंती वर्चस्व से बाहर निकलने की आवश्यकता थी, वहीं दूसरे ओर सामाजिक रूढ़ियों से लड़ने की आपसी मुठभेड़ चल रही थी। इसलिए इस काल में कई विचारधाराओं में साहित्य रचना हुई। तुलसीदास ने मनुष्य के मानस में मर्यादा पुरुषोत्तम राम के माध्यम से एक आदर्श समाज की स्थापना की, जो समयातीत बना रहे। कबीर दास ने भक्ति के साथ-साथ सामाजिक सुधार की बात कही। वहीं जायसी, रसखान जैसे कवियों से प्रेममयी रचनाएँ कीं। इसके उपरांत रीतिकाल में भी दो विविध प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं, विलास की ओर उन्मुख कोरी शृंगारिक रचनाएँ और कविराज भूषण की रचना के समान वीर रस से परिपूर्ण रचनाएँ। आधुनिक काल के साथ साहित्य अपने कलेवर में विस्तार करता है।

आधुनिक काल के उपरांत कई नई विधाओं के आगमन से लेकर भाषा के स्वरूप पर भी कवि एवं लेखक गण का ध्यान जाता है। भारतेंदु एवं द्विवेदी काल में भाषा पर विशेष ध्यान दिया गया। यहाँ से गद्य रचनाओं के आरंभ के साथ ही उसमें प्रयुक्त होने वाली भाषा के शुद्ध प्रयोग पर जोर दिया गया। भाषा के स्तर पर इससे पूर्व कभी विचार नहीं किया गया था। खड़ी बोली हिंदी के शुद्ध प्रयोग को लेकर कई प्रयत्न हुए। इसके साथ ही सामाजिक समस्याओं, मानवीय मूल्यों एवं प्रत्येक वर्ग व जाति के मनुष्य को साहित्य रचना की स्वतंत्रता प्राप्त हुई। इस काल का साहित्य मानवता के पथ में भटके मानव मन को पथ प्रदर्शित करता है। यह साहित्य अपनी कमियों को सुधारते हुए समाज में उपस्थित त्रुटियों को सुधारता है।

साहित्य की भाषा का क्षेत्र अत्यंत विशाल एवं विस्तृत है। साहित्य के क्षेत्र में जितनी भी तरह की विधा, शैली एवं विमर्शों की रचना की गई है, सभी का सबसे मूल एवं प्रथम आधार भाषा ही है। इसका एक महत्वपूर्ण कारण ये भी है कि जिस प्रकार व्यक्ति के मन में आने वाला विचार अपनी भाषा गढ़ चुका होता है, उसी प्रकार किसी भी वाद-विमर्श का आरंभ सबसे पहले मनुष्य के विचारों में अपनी विशिष्ट भाषा निर्मित कर चुका होता है। सामान्य भाषा एवं साहित्यिक भाषा की आधारभूत सामग्री (ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, अर्थ आदि) समान होती है, परंतु अंतर उस सामग्री के प्रयोग में होता है। सामान्य भाषा में भाषिक तत्वों का प्रयोग ज्यों-का-त्यों किया जाता है, जिस रूप में वह मस्तिष्क में होते हैं, उसी रूप में व्यक्ति की मौखिकी

में भी होता है। साहित्यिक भाषा में इन भाषिक तत्वों को कच्ची मिट्टी के रूप में स्वीकार करते हुए लेखक अपनी कल्पना-शक्ति एवं सर्जनात्मकता का प्रयोग करते हुए एक नया अर्थ, नया संदर्भ, एक नई आकृति प्रदान करता है। *''साहित्यिक भाषा में सामान्य भाषा के लिए निर्धारित नियमों का प्राय: अतिक्रमण अथवा विपथन होता है।''*[8] लेखक वर्ग अपनी कल्पना शक्ति के सहयोग से एक नए अर्थ, नई शैली का निर्माण करता है।

इसी तरह साहित्य में प्रयुक्त होने वाली भाषा और सामान्य भाषा में एक बड़ा अंतर 'बिंबात्मकता' का आता है। साहित्य में भाषा के माध्यम से कवि अपने पाठकों को एक बिंब प्रदान करता है, जो भाषा के विशिष्ट प्रयोग से ही पाठक तक पहुँचता और उन्हें प्रभावित करता है। भोलानाथ तिवारी इस विषय में कहते हैं, *''साहित्यिक भाषा बिंबात्मक होती है, किंतु यह गुण सामान्यत: सामान्य भाषा में नहीं होता। वस्तुत: इस बिंबात्मकता और चित्रात्मकता के कारण ही साहित्यिक भाषा अधिक व्यंजक और प्रभावशाली हो जाती है।''*[9] उदाहरण के लिए चित्रा मुद्गल द्वारा रचित कहानी 'बंद' का यह वाक्य देखा जा सकता है, 'क्षणांश के लिए कमरे में सन्नाटा व्याप गया।' इस वाक्य को सामान्य भाषा में कहा जाएगा तो कुछ इस तरह कहा जाएगा, 'कुछ देर के लिए कमरे में शांति हो गई।' साहित्य की भाषा में लेखक अपनी भाषा को प्रभावित बनाने के लिए विविध शब्दों के माध्यम से नए बिंब की रचना करता है।

यह तो हुई साहित्य की बात। अब भाषा के संदर्भ में भी विचार करना आवश्यक है। आदि मानव के समय से देखा जाए तो जब मनुष्य जानवर की प्रवृत्ति से निकलते हुए मनुष्यता की ओर आकर्षित हुआ तो उसने सर्वप्रथम अपने दैनिक जीवन के कार्यों को पूर्ण करने के लिए भाषा के माध्यम से अपने विचारों की अभिव्यक्ति आरंभ की, जिसके उपरांत वह निरंतर तेजी से इस ओर अग्रसर हुआ। ध्वनियों के माध्यम से उसने गुनगुनाना शुरू किया, जिससे उसने कविता की रचना आरंभ की। अपने विविध भावों को जैसे प्रेम, शृंगार एवं भोग आदि को व्यक्त करने के लिए उसने काव्य रचना की। यह गुनगुनाहट शब्द रूप लेकर कविता बनी और कविता से उसने साहित्य तक की यात्रा तय की। *''उस साहित्य के पिता थे 'भाव' और उसकी माँ थी 'भाषा'- 'भाव' और 'भाषा' का समन्वित रूप- 'साहित्य'।''*[10] इस प्रकार मनुष्य के निर्माण में भाषा के सहयोग से साहित्य का जन्म हुआ। इस रूप में भाषा का निर्माण व्यक्ति जीवन को आगे बढ़ने की दृष्टि से हुआ।

भारतीय भाषाओं के निर्माण एवं विकास की दिशा में भाषा के अंतर-भाषायी स्वरूप ने भारतीय साहित्य के अलग-अलग भाषा में रचे जाने के बाद भी उन्हें एक सामूहिकता प्रदान की है। भारत में पर्याप्त बहुलता के बाद भी एकता का एक बीज तत्व हमेशा बना रहा, जिसके माध्यम सर्जनात्मक चेतना निर्माण हुआ। जिस प्रकार विविध संस्कृति के बीच भारतीय जन एकजुट रहे, उसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में भी विविध भाषाओं के साथ भारतीय साहित्य की गरिमा में विस्तार हुआ। *''साहित्य पूर्णत: भाषा पर आधारित होता है और भाषा एक सांस्कृतिक घटना है।''*[11] अर्थात साहित्य रचना में भाषा का महत्वपूर्ण योगदान है। भारत में संस्कृति के आधार पर समाज विशेष को जाना जाता है तो भाषा भी किसी समाज विशेष की पहचान है। यहाँ विविध भाषाएँ होने के बाद भी कभी संप्रेषण की समस्या नहीं सामने नहीं आई। लिपिगत वैविध्य के कारण कभी-कभी साहित्य के क्षेत्र में समस्या आती है, परंतु आधुनिक काल के साथ अनुवाद के प्रक्रिया के माध्यम से अन्य साहित्य की आवश्यक रचनाओं का अनूदित रूप हिंदी साहित्य में भी उपलब्ध होने लगा है।

साहित्य का भाषा से सीधा संबंध है। *''साहित्य उसी रचना को कहेंगे, जिसमें कोई सच्चाई प्रकट की गई हो, जिसकी भाषा प्रौढ़, परिमार्जित और सुंदर हो, और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हों और साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप से उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाइयाँ और अनुभूतियाँ व्यक्त की गई हों।''*[12] केवल साहित्य ही नहीं, भाषा भी अपने समय का सजीव चित्र होती है। साहित्य के क्षेत्र में मध्यकाल को देखा जाए तो उस समय के साहित्य की भाषा ध्यान देने योग्य है। उस समय के साहित्य का सामान्य जन के जीवन से कोई संबंध नहीं था। उस समय जीवन और साहित्य दो विरोधी वस्तुएँ समझी जाती थीं, जिस कारण

उस समय मूलत: काव्य रचना की जाती थी, जिसमें 'व्यक्तिवाद' था। प्रेम केवल वासनाओं को मिटाने के अर्थ में लिया जाता था और सौंदर्य नयनसुख प्राप्ति की वस्तु। कवियों का काम शृंगार से परिपूर्ण रचनाएँ करना मात्र था। साहित्य अपने काल का शीशा होता है; जिसमें देखकर उसके स्वरूप को जाना जा सकता है।

''मानव समाजों का आंतरिक भेद उनकी भाषाओं में प्रकट होता है, क्योंकि हम एक भाषा भाषी समुदाय के सदस्य होने के नाते यह जानते हैं कि भिन्न-भिन्न सामाजिक वर्ग भिन्न-भिन्न रूप से अपनी भाषा का प्रयोग करते हैं। यह सर्वमान्य बात है कि भौगोलिक सीमाओं से जिस प्रकार क्षेत्रीय बोलियों का निर्धारण किया जाता है और जो क्षेत्रीय बोलियों में जितनी भौगोलिक दूरी होगी, भाषा की दृष्टि से वह उतनी ही असमान होगी, इसी प्रकार भाषा के सामाजिक प्रभेद सामाजिक सीमाओं एवं सामाजिक अंतर से पहचाने जाएँगे।''[13] भाषा का स्वरूप सामाजिक वर्ग, आयु, जाति, शिक्षा एवं धर्म आदि के आधार पर परिवर्तित होता है।

भौगोलिक दृष्टि से भाषा में एक गाँव से दूसरे गाँव तक क्षेत्रीय बोलियों के व्यवहार में लाने का तरीका परिवर्तित हो जाता है। यह बोलियाँ मुख्य रूप से किसी छोटे नगर में व्यावसायिक बातचीत के लिए प्रयुक्त की जाती हैं, जिसमें वहाँ का सामान्य जन अपनी रोजमर्रा के जीवन की छोटी-मोटी आवश्यकताओं को पूरा करता है। साहित्य में जिस भाषा या बोली विशेष का प्रयोग किया जाता है, वह इससे कुछ मामलों में भिन्न होती है। उदाहरण के लिए, ब्रज प्रदेश में कृष्ण काव्य की रचना करते समय ब्रजभाषा का प्रयोग किया गया। अवध प्रदेश में राम काव्य अवधी में लिखा गया। यह रचनाएँ धर्मप्रचार की दृष्टि सी की गई रचनाएँ थीं। परंतु इन रचनाओं के सहयोग से ब्रज एवं अवधी भारत की प्रमुख भाषा के रूप में जानी जाने लगीं। *''भाषा जीवन के सभी पक्षों एवं अनुभवों से संबंधित रहती है। वह किसी संकल्पनात्मक संप्रेषण के लिए नहीं होती, वरन पूरे समाज को अपने साथ लेकर चलती है। इसमें अंत:वैयक्तिक संबंध तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य, सायास या अनायास रूप में, समाहित रहते हैं। यह परस्पर संप्रेषण का एक ऐसा उपादान है, जिसकी सहायता से सामाजिक प्राणी विशेष परिस्थिति तथा विशिष्ट प्रयोजन में इसका प्रयोग करता है और वह प्रयोग उसी संदर्भ एवं परिस्थिति में सटीक बैठता है।''*[14] अर्थात भाषा सामाजिक प्राणी के लिए अत्यंत आवश्यक वस्तु है, जिसके माध्यम से न केवल वह अपने सामाजिक दायित्व निभाता है, अपितु शैक्षिक, व्यावसायिक एवं राजनीतिक दायित्वों का निर्वाह भी करता है।

भाषा की संरचना या उसकी भाव-प्रकृति की बात की जाए तो आज साहित्य और सामान्य दोनों तरह की भाषाओं में अंग्रेजी का प्रभाव विशेष रूप से देखने को मिलता है। हिंदी का प्रयोग केवल हिंदी के रूप में नहीं, बल्कि हिंग्लिश के रूप में हो रहा है। इससे भाषा की शुद्धता का नुकसान अवश्य हुआ है, परंतु यह परिवर्तन एक सामाजिक परिवर्तन के साथ आया है। इसलिए समकालीन साहित्य में भी हिंग्लिश के शब्दों को शामिल किया जाने लगा है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भर हो रहा है, शब्द संरचना हमारी ही है। अर्थात जब हम अंग्रेजी शब्दों का उपयोग करते हैं तो उन शब्दों को अपनी भाषिक संरचना में परिवर्तित करके करते हैं। कर्ता, क्रिया और विशेषण आदि के स्थान हिंदी व्याकरण के अनुरूप ही रहते हैं।

भाषा और साहित्य के संबंध को नकारा नहीं जा सकता। जहाँ सामान्य जीवन में भाषा का प्रयोग विचार-विनिमय के लिए किया जाता है, उसी प्रकार साहित्य भी किसी भाव, घटना या परिस्थिति को सामान्य जन के मध्य रखने का एक माध्यम ही है। भाषा वह ताकत है, जिसके सहयोग से हम अपने सशक्त विचारों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करते हैं। *''विचार-विनिमय का सबसे सशक्त और प्रभावी औजार यदि भाषा है तो वैचारिक और भावनात्मक मुद्दों की खुली बहस का सबसे विराट और उदार मंच साहित्य है। भाषा और साहित्य के माध्यम से अनवरत चलने वाली विचारमंथन की इस प्रक्रिया से सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों का उद्भव और विकास होता है । समाज के ज्ञान-विज्ञान, मूल्य-प्रतिमान, परम्परा और प्रयोगों का सूक्ष्म और विस्तृत वर्णन साहित्य में उपलब्ध होता है।''*[15] अर्थात साहित्य के माध्यम से न केवल हमें समाज के व्यावहारिक पक्ष की जानकारी मिलती है, अपितु देश-विदेश की वैज्ञानिक समझ

बनाने में भी सहयोग मिलता है। भाषा एक ऐसा तत्व है, जो किसी भी क्षेत्र में हमारे लिए पहली आवश्यकता पूर्ण करता है।

अंतत: यह कहा जा सकता है कि साहित्य और भाषा का सीधा संबंध हम अपने जीवन के प्रत्येक पड़ाव पर देख सकते हैं। साहित्य भाषा के माध्यम से समाज से जुड़ता है तो भाषा की गुणवत्ता का परिष्कार साहित्य से संभव होता है। यह दोनों मनुष्य के जीवन को सरल बनाने में सहायक पहलू है। *''हमारी भाषा, हमारा साहित्य, हमारी राजनीति- सभी का उद्देश्य यही हो सकता है कि इनको दुर्गतियों से बचाकर किस प्रकार मनुष्यता के आसन पर बैठाया जाए।''*[16] ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. भामह, काव्यालंकार, द श्री बलामनोरमा प्रेस, मद्रास 1953, श्लोक 16, पृष्ठ सं.13
2. महावीर प्रसाद द्विवेदी, हिंदी भाषा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ सं. 104
3. सं. नंदकिशोर नवल, हिंदी साहित्यशास्त्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ सं.24
4. सं. डॉ. भ.ह. राजूरकर एवं डॉ. राजमल बोरा, आधुनिक सहित्य और अनुसंधान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1997, पृष्ठ सं.196
5. डॉ. राजेन्द्र मिश्र, भारतीय साहित्य की अवधारणा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृष्ठ सं.10
6. डॉ. नगेंद्र, विचार और विवेचन, गौतम बुक डिपो, दिल्ली, 1949, पृष्ठ सं.58
7. भोलानाथ तिवारी, भाषा और संस्कृति, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1984, पृष्ठ सं.126
8. डॉ. राम प्रकाश, मानक हिंदी : संरचना एवं प्रयोग, सन्मार्ग प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2000, पृष्ठ सं.91
9. भोलानाथ तिवारी, भाषा और संस्कृति, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1984, पृष्ठ सं.129-130
10. भोलानाथ तिवारी, भाषा और संस्कृति, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1984, पृष्ठ सं.126
11. डॉ. राजेन्द्र मिश्र, भारतीय साहित्य की अवधारणा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृष्ठ सं.13
12. प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य, भार्गव प्रेस, इलाहाबाद, 1954, पृष्ठ सं.2
13. सं. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव एवं रमानाथ सहाय, हिंदी का सामाजिक संदर्भ, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, 1990, पृष्ठ सं.103
14. सं. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव एवं रमानाथ सहाय, हिंदी का सामाजिक संदर्भ, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, 1990, पृष्ठ सं.115
15. सं. डॉ. मुकुंद द्विवेदी, भाषा-विमर्श, हिंदी अकादमी, दिल्ली, 2002, पृष्ठ सं.43
16. सं. नंदकिशोर नवल, हिंदी साहित्यशास्त्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ सं.37

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

अतीत मंथन

सम्राट अशोक की नीति का ऐतिहासिक विश्लेषण

(विशेषत: कालसी शिलालेख के संदर्भ में)

ललित सिंह

डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज,
देहरादून, (हे.न.ग. गढ़वाल
(केंद्रीय) विश्वविद्यालय
श्रीनगर (गढ़वाल) से संबद्ध)
देहरादून, उत्तराखंड, पिन-248199
8266834541
ranalalitwzy@gmail.com

शोध-सार :

विश्व के किसी भी देश का प्राचीनतम और गौरवमयी, विश्वसनीय, प्रामाणिक इतिहास जानने के लिए वहाँ प्राप्त विभिन्न प्रकार के साक्ष्यों में अभिलेखीय साक्ष्य सबसे विश्वसनीय और महत्वपूर्ण दस्तावेज होते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो हमारा देश विश्व के सबसे धनी देशों में से एक है। मौर्यवंश के महान सम्राट अशोक प्रियदर्शी द्वारा प्रवर्तित कुल 40 अभिलेख प्राप्त हुए हैं, जिन्हें अशोक ने स्तंभों, शिलाओं (चट्टानों) और गुफाओं की दीवारों में अपने 269 ई.पू. से 232 ई.पू. चलने वाले शासन काल में खुदवाया था। ये आधुनिक बांग्लादेश, भारत, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और नेपाल में जगह-जगह पर मिलते हैं, जो तत्कालीन सांस्कृतिक-समन्वय (सामंजस्य) के अस्तित्व के सबसे प्राचीन प्रमाण हैं। इन अभिलेखों को सर्वप्रथम 1837 ई. में जेम्स प्रिंसप नामक विद्वान ने पढ़ने में सफलता प्राप्त की थी। 1915 ई. में मास्की के लेख में अशोक का नाम भी पढ़ लिया गया। अशोक के 14 दीर्घ शिलालेख (वृहद शिलालेख), विभिन्न लेखों का समूह है। ये आठ यथा- धौली (उड़ीसा), शहबाजगढ़ी (पाकिस्तान), मानसेहरा (पाकिस्तान), कालसी, (भारत-उत्तराखंड-देहरादून), जौगड़ (उड़ीसा), सोपारा (महाराष्ट्र), एर्रगुडि (आंध्र प्रदेश) और गिरनार (गुजरात)। अशोक के लघु शिलालेख- रूपनाथ (मध्य प्रदेश), गुजरी (मध्य प्रदेश), भाबरू (राजस्थान), मास्की (कर्नाटक), सहसराम (बिहार), महास्थान (बांग्लादेश) आदि स्थलों पर स्थित हैं। अशोक के स्तंभ लेख दिल्ली/टोपरा (हरियाणा), दिल्ली/मेरठ (उत्तर प्रदेश), लौरिया अरेराज (बिहार), लौरिया नंदनगढ़ (बिहार) में स्थित हैं। अशोक के लघु स्तंभ-लेख सांची (मध्य प्रदेश), सारनाथ (उत्तर प्रदेश), रुम्मिनदेई (नेपाल), कौशाम्बी (उत्तर प्रदेश), निग्लीवा (नेपाल), ब्रह्मगिरि (मैसूर), सिद्धपुर (मैसूर), जतिंग रामेश्वर (मैसूर), एर्रगुडि (आंध्र प्रदेश), गोविमढ़ (मैसूर), पालकिगुण्क (मैसूर), राजुल मंडागिरि (आंध्र प्रदेश), अहरौरा (उत्तर प्रदेश), सारो-मारो (मध्य प्रदेश) तथा नेतुर (मैसूर) स्थलों में स्थित हैं। अशोक के गुहालेख दक्षिण बिहार के गया जिले में स्थित बराबर नामक तीन गुफाओं की दीवारों पर उत्कीर्ण हैं। अशोक का तक्षशिला के पास से भग्न अभिलेख और कंधार के शारे-कुना से द्विभाषीय अभिलेख

स्थित हैं। उपरोक्त वर्णित लेखों से स्पष्ट होता है कि महान सम्राट अशोक के सांस्कृतिक-समन्वय फैलाने के प्रयास भू-मध्य सागर के क्षेत्र तक सक्रिय थे और मिस्र और यूनान तक की राजनैतिक परिस्थितियों से भली-भाँति परिचित थे। इन अभिलेखों, शिलालेखों स्तंभ लेखों, गुफालेखों में मनुष्य को आदर्श जीवन जीने की सीख का वृहद वर्णन है। पूर्वी क्षेत्रों में यह आदर्श प्राचीन मगधी में ब्राह्मी लिपि के प्रयोग में लिखे गए हैं। पश्चिमी क्षेत्रों के शिलालेखों में खरोष्ठी लिपि का प्रयोग किया गया है। एक शिलालेख में खरोष्ठी लिपि का प्रयोग है, जबकि एक अन्य में यूनानी और अरामाई भाषा में द्विभाषीय आदेश दर्ज हैं। इन अभिलेखों के वर्णन बताते हैं कि अशोक ने भारतीय शासकों के साथ-साथ यूनानी शासकों को भूमध्य सागर तक दूत भेजे थे। इन लेखों में उसके समकालीन यूनान से उत्तरी अफ्रीका तक के बहुत से यूनानी शासकों के सही नाम लिखे हैं, जिससे ज्ञात होता है कि वह भारत से हजारों मील दूर की राजनैतिक परिस्थितियों पर नजर रखे हुए थे। इन लेखों में तत्कालीन विभिन्न समुदायों की भी जानकारी प्राप्त होती है। इन लेखों में तत्कालीन राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियों को वास्तविक रूप से वर्णित किया गया है। इनमें जनसामान्य की भाषा का प्रयोग किया गया है ताकि जनमानस को भली-भाँति समझाया जा सके। इस शोध लेख के माध्यम से सम्राट की नीति का ऐतिहासिक विश्लेषण (विशेषत: कालसी शिलालेख के संदर्भ में) का अध्ययन किया जाएगा।

कुंजी शब्द :

सम्राट अशोक, विदेश नीति, कालसी शिलालेख, ऐतिहासिक विश्लेषण।

मूल आलेख :

दुनिया भर में अपनी महानता के लिए प्रसिद्ध सम्राट अशोक की एक नायाब, पुरातात्विक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक महत्व की उत्तर भारत में स्थित एक मात्र अक्षुण्ण, लुप्तप्राय पौराणिक धरोहर उत्तराखंड के देहरादून जिले के कालसी नामक स्थान पर स्थित है। सम्राट अशोक का यह एकमात्र शिलालेख प्राचीनतम दून के इतिहास को बताता है। 1860 में अपने अथक प्रयास द्वारा जॉन फारेस्टर ने खोज निकाला कि इस कालसी स्थित शिलालेख पर मगध में मौर्यवंशी महान सम्राट अशोक (269 ई.पू.-232 ई.पू.) ने अपनी चौदह राजाज्ञाओं को शिलालेख पर उत्कीर्ण करवाया था। इसमें तत्कालीन सामाजिक-सांस्कृतिक सौहार्द्र के साथ-साथ पाँच यवन राजाओं का भी वर्णन है। कालसी उत्तराखंड प्रांत के देहरादून जिले की चकराता तहसील में स्थित है। यह स्थल ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक दृष्टिकोण से बहुत ही महत्वपूर्ण है। ये शिलालेख एक चट्टान पर अंकित है। यह शिलालेख सम्राट अशोक के साम्राज्य की उत्तरी सीमा को भी दर्शाता है। यह स्थल समुद्र तट से 750 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यह स्थल जौनसार-बावर आदिवासी क्षेत्र का प्रवेश द्वारा माना जाता है, जो दो नदियों यमुना-टोंस नदी के संगम पर स्थित है।

महान सम्राट अशोक से पूर्व इस स्थल की प्राचीनता के बारे में जानकारी मिलती है कि महाभारत काल में कालसी का शासक राजा विराट था और उसकी राजधानी विराट नगर थी। यमुना नदी के किनारे कालसी में अशोक के शिलालेख प्राप्त होने से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि ये क्षेत्र कभी काफी संपन्न था। सातवीं सदी में इस क्षेत्र को 'सुधनगर' के रूप में प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी देखा था। यह 'सुधनगर' ही बाद में कालसी के नाम से पहचाना जाने लगा। यह शिलालेख प्राचीन काल के समृद्ध भारत का प्रामाणिक सबूत है। कालसी पूरे हिमालयन रेंज में एकमात्र ऐसी जगह है, जहाँ सम्राट अशोक ने तेरहवाँ शिलालेख लिखवाया। कालसी में स्थित यह अभिलेख इस बात का प्रमाण है कि सम्राट अशोक द्वारा प्रतिपादित उपदेश व्यावहारिक नियम है। इसी कारण अशोक की गणना दुनिया में महान शासकों में की जाती है। सम्राट अशोक ने अपने शासन काल में न केवल साम्राज्य के अंदर और पड़ोसी देश के अतिरिक्त दक्षिण और पश्चिमी देशों के समकालीन शासकों यथा-सीरिया, इजिप्ट, मेसीडोनिया, सीरीन व इपिरस के साम्राज्य में भी आर्थिक-सांस्कृतिक समन्वय प्रसारित किया। यह तेरहवाँ शिलालेख पूर्णत: सम्राट के राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण को प्रदर्शित करता है।

भारत प्राचीन समय में कई समृद्ध और विकसित सभ्यताओं और सम्राटों का स्थान रहा है। यह तथ्य हमें समय-समय पर मिलते रहे पुरातात्विक अवशेषों से प्रमाणित

होता है। भारत में सर्वप्रथम मौर्य वंशीय सम्राट अशोक के समय तक राष्ट्रीय राजनीतिक एकता स्थापित हुई। इसी काल में प्रथम ऐतिहासिक साम्राज्य की भी स्थापना हुई। साप्तांक सिद्धांत के आधार पर गृह और 'पर राष्ट्र' (विदेश) नीति का संचालन किया गया। देशों और राज्यों के मध्य राजनयिक संबंध उतने ही प्राचीन हैं, जितने राज्य/सम्राट अशोक की विदेश नीति में सांस्कृतिक राजनय का महत्वपूर्ण योगदान है। इस काल में सांस्कृतिक एवं राजनैतिक सौहार्द्र (समन्वय) बनाए रखने के लिए ही सम्राट अशोक ने सीरिया तथा पश्चिम एशिया के एंटीयोकस थियोस, मिस्र के टालमी फिलाडेल्फस, मकदूनिया के एंटीगोनस गोनाटस, साईरीन के मेगास तथा एपाईरस के अलैक्जैंडर आदि राजनयिकों से वृहद संबंध बनाए।

अशोक के कुछ अभिलेखों से उसकी विदेश नीति पर भी आंशिक प्रकाश पड़ता है। उसकी विदेश नीति मुख्य तीन बातों –शांति, अहिंसा व धर्म पर आधारित थी। पश्चिम के विभिन्न राज्यों के साथ अशोक ने न केवल अपने पूर्वजों के कूटनीतिक संबंधों को बनाए रखा, अपितु उसे प्रेम एवं सद्भावना पर और भी घनिष्ठ बनाने के लिए उद्योगशील रहा। डॉ. स्मिथ का विचार है कि टालेमी फिलाडेलफस का राजदूत डायोनीसियस अशोक के दरबार में उसका राजदूत था। अशोक ने लोकहित एवं धर्म प्रसार की भावना से अनेकों दूत विदेशों में भेजे थे। इसी संदर्भ में उसने अपने दूतों को सीरिया, मिस्र, सायरीन, एपिरस और मैसीडोनिया आदि राज्यों में भेजे थे। रीज डेविड्ज इस पर शंका व्यक्त करते हुए इसे 'राजकीय प्रलाप से परिपूर्ण और गर्व का सूचक' मानते हैं। परंतु उनकी शंका तथ्यों से परे है। अत: उसे उपयुक्त नहीं माना जा सकता। अपनी धर्म प्रसार नीति को स्पष्ट करते हुए अशोक ने कहा है कि ''अविजित सीमांत प्रदेश के राजाओं के मस्तिष्क में संभव है कि यह प्रश्न उठे, हमारे प्रति राजा के विचार क्या हैं? सीमांत राजाओं के प्रति मेरी एकमात्र इच्छा है कि इस बात को समझें कि देवताओं का प्रिय यह चाहता है कि वे मुझसे किसी प्रकार की शंका न करें। मुझ पर विश्वास करें। वे मुझसे सुख ही पाएँगे, दु:ख नहीं।''

इससे वस्तुस्थिति स्वत: स्पष्ट हो जाती है। उसने विदेशों में कूटनीतिक संबंध स्थापना मात्र की दृष्टि से केवल दूत ही नहीं भेजे, वरन लोकहित में वहाँ लोकोपयोगी कार्य भी करवाए। दूसरे शिलालेख से ज्ञात होता है कि उसने सीमावर्ती राज्य, यथा– चोल, पाण्ड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र, ताम्रपर्णी तथा यवनराज अन्तियोक व उसके समीप जो सामंत राजा थे, उन सबके देशों में देवताओं के प्रिय, प्रियदर्शी ने दो प्रकार की चिकित्सा का प्रबंध किए थे। पहला मनुष्यों की चिकित्सा के लिए और दूसरा पशुओं की चिकित्सा के लिए। औषधियाँ भी मुनष्यों और पशुओं के लिए जहाँ–जहाँ नहीं थीं, वहाँ–वहाँ लाई और रोपी गईं। इसी तरह फूल और फल भी जहाँ–जहाँ नहीं थे, वहाँ–वहाँ सब जगह लाए और रोपे गए। मार्गों में पशुओं और मनुष्यों के आराम के लिए वृक्ष लगाए गए और कुएँ खुदवाए गए। इस प्रकार विदेशों से उसका कूटनीतिक संबंध राजनीतिक ही नहीं, सांस्कृतिक व आध्यात्मिक स्तर पर भी स्थापित हो गया था।

आधुनिक राज्य विश्व–समुदाय का लगभग वैसा ही सदस्य बनता जा रहा है, जैसा व्यक्ति अपने समाज का सदस्य होता है। राष्ट्र में यह तथ्य विशेष रूप से प्रकट हो रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ इसका उदाहरण है। संयुक्त राष्ट्र किसी मामले में चाहे प्रभावी कार्रवाई करने में अक्षम रहे, किंतु उसके मंच पर तत्संबंधी होने वाले वाद–विवाद की अनदेखी कोई राज्य सामान्यत: करना नहीं चाहता। इस परिप्रेक्ष्य पर अंतर्राष्ट्रीय संबंध के मूल में निहित सिद्धांतों एवं उनके व्यवहार का अध्ययन अधिकाधिक महत्वपूर्ण हो गया है। विदेश नीति नीति राज्यों के पारस्परिक संबंध का मुख्य उपकरण है।

विदेश नीति के दो पक्ष होते हैं–सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक। सैद्धांतिक पक्ष के अंतर्गत (1) हम उन अनुप्रेरक तत्वों का, जिनसे किसी देश की विदेश–नीति निर्धारित होती है तथा (2) उसके मूल, गौण एवं तात्कालिक लक्ष्यों का अध्ययन–विश्लेषण करते हैं। उसका व्यावहारिक पक्ष वस्तुत: नीति–निर्धारकों द्वारा निर्णीत एवं स्वीकृत नीतियों का कार्यान्वयन विदेश नीति का क्रियात्मक रूप है।

इस प्रकार विदेश नीति के अंतर्गत वे सभी सिद्धांत (एवं आचरण– संहिताएँ) आएँगे, जिनसे संप्रभु सरकारें अंतरराज्य संबंधों के परिचालन में निर्देशित होती हैं। इनके अतिरिक्त तथा कदाचित अधिक महत्वपूर्ण होती हैं विभिन्न

राज्यों के संदर्भ में राज्य सरकारों द्वारा अपने स्वीकृत लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु की जाने वाली विभिन्न कार्रवाइयाँ। अपने सीमांतों के परे, स्वीकृत लक्ष्यों की उपलब्धि के उद्देश्य से सरकार जो कुछ भी करती है- शांति या विग्रह, सहयोग या प्रतिस्पर्धा, सौहार्द्र या शत्रुता, सुलह-समझौता या चुनौती देना, पुनर्मेल या तनाव में वृद्धि - यह सब विदेशी नीति के अंतर्गत आता है। कुल मिलाकर विदेश नीति के अंतर्गत उसके लक्ष्य, आंतरिक एवं अंतर्राष्ट्रीय परिवेश, स्थायी एवं तात्कालिक अनुप्रेरणाएँ, कार्य पद्धतियाँ, उपकरण, तरीके, कार्रवाइयाँ तथा परिणाम आदि आ जाते हैं।

आधुनिक राज्य की विदेश नीति का निर्धारण एक जटिल प्रक्रिया है। नीति-निर्धारण के सर्वोच्च बिंदु पर निर्णय के पूर्व अनेक कारक उसे रूपायित करने में योगदान करते हैं। अनेक स्तर पर दिशा-निर्देश होता है। सर्वोच्च नीति-निर्धारक के हाथ सर्वथा स्वतंत्र नहीं होते। चाहे वह अमेरिकी राष्ट्रपति हो, अथवा भारतीय मंत्रिमंडल, सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का प्रथम सचिव अथवा जनवादी चीन का चेयरमैन, अंतिम दायित्व इनके होते हैं; इनके निर्णय देश के निर्णय के रूप में लागू किए जाते हैं, पर इन्हें भी प्राधिकार का उपयोग लोकमत की प्रेरणा, सूचनाओं एवं आँकड़ों का अध्ययन, आंतरिक तथा अंतर्राष्ट्रीय स्थितियों का सर्वेक्षण, विचार-विमर्श, विभागीय टिप्पणियाँ, मंत्रणाएँ आदि की प्रक्रियाओं के शीर्षस्थ अंतिम कड़ी के रूप में ही करना होता है। जनतंत्रों के नीति-निर्धारकों की अपेक्षा अधिनायकों के हाथ उतने बंधे नहीं होते। नाजी अधिनायक हिटलर दूसरों के परामर्श की अपेक्षा अपने संकल्प तथा अंत:प्रेरणा पर अधिक विश्वास करता था।

पर क्या आधुनिक राज्य भी विदेश नीति-निर्धारण के मामले में सर्वथा या शत प्रतिशत संप्रभु कहे जा सकते हैं? वैसे कुछ हद तक प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व भी गुप्त संश्रयों में संबद्ध यूरोपीय शक्तियाँ अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लेते समय अपने संश्रित के हितों का भी यत्किंचित ध्यान रखा करती थीं। फ्रांसीसी राष्ट्रपति पायकारे त्रिदलीय समझौता-सदस्यों की मंत्रणा के बिना ऐसे निर्णय लेने का यथाशक्ति विरोधी था, जिनसे समझौता की सुदृढ़ता पर किसी तरह के व्याघात की आशंका हो। प्रथम विश्व युद्ध के बाद के एक-डेढ़ दशक की अवधि में राष्ट्रसंघ तथा सदी के उत्तरार्द्ध में संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य देशों ने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के संदर्भ में एक आचार संहिता तथा विश्व-संस्था का आदर करना स्वीकार किया है। इनके अतिरिक्त दशाधिक क्षेत्रीय संधि-संगठनों के सदस्य देशों को मनमानी करने की छूट नहीं रह गई है।

राष्ट्र-राज्यों की विदेश नीति :

अन्य राज्य या राज्यों के संदर्भ में जो निर्णय लेता है एवं कार्रवाइयाँ करता है, वे उसकी विदेश नीति होती हैं। इस संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य पर राज्य सरकारों की विशेष परियोजनाओं, कार्यक्रमों के निर्धारण तथा संचालन के अध्ययन का विशेष महत्व होता है। ये योजनाएँ या कार्यक्रम नर्तक, पर्यटक, गायक आदि के आदान-प्रदान से लेकर सैन्य 'बातचीत' तक हो सकते हैं; विदेश नीति के ये विशिष्ट अंग होते हैं ।

राष्ट्र-राज्यों का विकास यूरोप में मध्य युगों के अवसानकाल में हो रहा था। पर विदेश नीति का इतिहास तो उतना ही पुराना है, जितना राज्य के रूप में संगठित सामुदायिक जीवन का इतिहास। कौटिल्य और हेरोडोटस जैसे प्राचीन चिंतकों ने विदेश नीति के आधार, उद्देश्य तथा स्वरूप की चर्चा की है। कौटिल्य ने राज्यों के मंडलों की चर्चा करते हुए लिखा है कि राज्य के सीमांतवर्ती पड़ोसी उसके संभावित शत्रु तथा उनके सीमांतवर्ती उसके संभावित मित्र होंगे। प्राचीन युगों में मिस्र, चीन, भारत, फारस, यूनान, साइराक्युज, कारथेज, रोम आदि में सुसंगठित राज्यों तथा साम्राज्यों का उद्भव हुआ था। इनमें कई ने दौत्य संबंध, संधि-व्यवस्थाएँ, कूटनयिक आचार-व्यवहार आदि का पर्याप्त विकास किया था। शक्ति-संतुलन जैसी विदेश नीति के आधारभूत सिद्धांत के कई उदाहरण इन राज्यों के पारस्परिक संबंधों में लक्षित होंगे।

किंतु प्राचीन युगों में यातायात तथा संचार की कठिनाइयों एवं कई अन्य कारणों से अंतरराज्य संबंधों का अधिक विकसित तथा प्रसारित होना कठिन था। अधिकतर राज्य एक-दूसरे को अपना शत्रु समझते थे। दिग्विजय राज्यों के अधिपतियों की सर्वाधिक प्रिय महत्वाकांक्षा बनी रहती थी। राजनीति अधिपतियों की आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु संचालित की जाती थी तथा अक्सर उनके या उनके मंत्रियों के 'खेल' के समान होती थी ।

सम्राट अशोक ने सभी धर्मों का सरल स्वरूप स्थापित किया, जो धम्म कहलाया। अशोक ने अपने अधिकारियों व प्रजा को धम्म का संदेश दिया, जिसका वर्तमान संदर्भ में भी प्रासंगिकता है। अशोक के धम्म का स्वरूप मानवतावादी था। अशोक का धम्म नैतिक नियमों के पालन पर जोर देता है। अशोक के धम्म में बड़ों का आदर, सेवक तथा दासों के प्रति उदार व्यवहार तथा दूसरे संप्रदायों के प्रति आदर की भावना सम्मिलित है। वर्तमान युग में हम देखते हैं कि नई युवा पीढ़ी बड़ों (माता-पिता) को बोझ समझती है। उन्हें उपेक्षित एवं अकेला छोड़ देती है। धनी तथा शक्तिशाली लोग गरीब एवं उपेक्षित लोगों के अधिकारों को दबाकर उनका शोषण करते हैं। व्यक्ति अपने धर्म को अच्छा बताकर दूसरे धर्मों की बुराई करता है। अशोक के धम्म में जिन आदर्शों का उल्लेख किया गया है, व्यक्ति उन्हें अपने जीवन में उतार कर एक आदर्श एवं सुखी जीवन जी सकता है। अशोक का धम्म एवं उसकी नीतियाँ सार्वजनिक, सार्वभौमिक तथा सार्वयुगीन हैं, जो संपूर्ण विश्व की धरोहर हैं।

वर्तमान समय में अंतर्राष्ट्रीय जगत एक परिवार के समान बन गया है और उसमें प्रेम, सहयोग, सद्भावना तथा मित्रता का संबंध जोड़ना एक कुशल राजनय का कार्य होता है। इस परिप्रेक्ष्य में सम्राट अशोक कालीन अभिलेखीय वर्णनों का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन करना वर्तमान की अत्यंत आवश्यकता है, क्योंकि हमारे प्रधानमंत्री जी भी तत्कालीन शांति और सद्भाव की पद्धति के द्वारा विदेश नीति को आगे बढ़ाना चाहते हैं। उन्होंने अपने महत्वपूर्ण संबोधन में 'हमें युद्ध नहीं, बुद्ध चाहिए' का उद्घोष किया था। उस काल में इस नीति का पालन करके ही सम्राट अशोक ने अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक एकता स्थापित करने के साथ-साथ प्रथम ऐतिहासिक साम्राज्य की स्थापना की थी। आने वाले समय में भारत को देश में ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व से नए सिरे से राजनैतिक-सांस्कृतिक समन्वय स्थापित करने की अत्यंत आवश्कयता है। ❑

संदर्भ सूची :

1. कौटिलीय अर्थशास्त्र (हिंदी भाषानुवादित), वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वारणासी-1, 1962
2. कनिंघम, अलेक्जेंडर, 'कम्पलिट वर्क ऑफ अलेक्जेंडर कनिंघम : इंस्क्रिप्शंस ऑफ अशोक', वॉल्यूम-1, इंडोलॉजिकल बुक हाउस, वाराणसी, 1969
3. घोष, ए., 'ऐन इनसाइक्लोपीडीया ऑफ इंडियन आर्कियोलॉजी', दिल्ली, 1989
4. बरुवा, वी.एम., अशोक एंड हिज इंस्क्रिप्शंस' (पार्ट-1), न्यू ऐज पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, कलकत्ता-12, नई दिल्ली-1, 1996, 1955
5. मुखर्जी, बी.एन., 'स्टडीज इन आरामाइक एडिक्ट्स ऑफ अशोका', कलकत्ता, 1984
6. चौधरी, एच.सी., 'एज ऑफ दी नंदाज एंड मौर्याज (ट्रांस्लेट बाई- के.एन. नीलकंठ शास्त्री), मोतीलाल बनारसीदास, बनारस, 1952
7. थापर, डॉ. रोमिला, 'अशोक एंड दि डिक्लाइन ऑफ दि मौर्यज', ऑक्सफोर्ड, 1961
8. थापर, रोमिला, 'दि मौर्याज रिविजिटेड', (एस.जी., देउस्कर लिटरेचर ऑन इंडियन हिस्ट्री), सेंटर फॉर स्टडीज इन सोशल साइंसेज, कलकत्ता, 1987
9. मुखर्जी, डॉ. राधाकुमुद, 'अशोक', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1962
10. लहरी, नयनजोत, 'अशोक इन एंशेंट इंडिया', परमानेंट ब्लैक इन एसोसिएशन विद अशोका यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली, 2015
11. ओझा, गोरीशंकर हीरानंद, 'अशोक कालीन धार्मिक अभिलेख', भारतीय कला प्रकाशन, दिल्ली, 2002

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

धरोहर

संविधान के प्रति जन जागरूकता में रामबहादुर राय का अवदान

आशीष द्विवेदी

शोधार्थी, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
पता : हाउस नं. 225, 226
तृतीय तल्ला ई- ब्लॉक
नेहरू विहार, तिमरपुर के समीप
दिल्ली- 110054
9871523421
ashish987152@gmail.com

हम 'विकसित भारत : 2047' के संकल्प के साथ अमृत काल में प्रवेश कर चुके हैं। लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में 26 जनवरी, 1950 को शुरू हुई हमारी यात्रा का 75वां वर्ष हम 'अमृत महोत्सव' के रूप में मना रहे हैं। इन वर्षों में भारत ने लगातार विकास किया है। भारतीय संस्कृति में लोकतांत्रिक मूल्यों का सर्वोच्च स्थान है और आधुनिक शासन प्रणाली भी इन्हीं मूल्यों की उपज है। भारतीय लोकतांत्रिक मूल्य जैसे – समरसता, स्वतंत्रता, स्वीकार्यता, समानता और समावेशिता नागरिकों के गरिमापूर्ण जीवन को रेखांकित करते हैं ।

स्वाधीनता आंदोलन का प्रमुख लक्ष्य स्वराज्य की स्थापना था और संविधान उसका साधन था, लेकिन ऐतिहासिक परिस्थितियों के चलते संविधान का निर्माण ही मुख्य लक्ष्य बन गया। संविधान में भारत का नागरिक ही सत्ता का स्रोत है। संविधान की साक्षरता किसी भी लोकतांत्रिक गणराज्य के लिए बहुत आवश्यक है। इस संदर्भ में रामबहादुर राय का मानना है कि *''संविधान को इसलिए जानना जरूरी है, क्योंकि हम जहाँ भी जाते हैं अपने मोहल्ले में, अपने घर में या स्कूल, कॉलेज में या विश्वविद्यालय में या जहाँ भी हैं, उसका संबंध संविधान से है। जिस शासन प्रणाली में हम जी रहे हैं उसका जो मूल ग्रंथ है वह संविधान है।''* [1] आगे और विस्तार से बात रखते हुए वह स्पष्ट करते हैं कि *''आज संविधान हमारे जीवन को नियंत्रित करता है। जो आज की राजनीतिक व्यवस्था है, उसके मूल में संविधान है। संविधान हमारे जीवन में मायने रखता है। क्यों मायने रखता है? क्योंकि भारतीय जन-जीवन के नियम उससे निकलते हैं। उससे संस्थाएँ निकलती हैं। चाहे संसद हो, चाहे न्यायपालिका हो या जो नरेंद्र मोदी की सरकार है और उसी तरह से जो राज्यों में सरकारें हैं, वे इस संविधान से निकलती हैं। जब संविधान का दायरा इतना बड़ा हो और आजकल परिवार भी संविधान से तय हो रहे हों, तब संविधान का महत्व बढ़ जाता है। वह सर्वव्यापी हो जाता है। आप कैसे रहें, यह संविधान से तय हो रहा है। जब संविधान का इतना व्यापक फलक हो, तब मैं कहूँगा कि उस संविधान को जानना जरूरी है।''* [2] संविधान निर्माण के दौरान भी जयप्रकाश नारायण और आचार्य नरेंद्र देव जैसे विद्वानों ने भी जनता में संविधान के प्रति जागरूकता की कमी की तरफ इशारा किया था। उनका मनाना था

कि *''लोक शिक्षण के अभाव में जनता को संविधान के निर्माण में कोई दिलचस्पी नहीं दिखती है।''*[3]

आज जब हम अमृत काल मना रहे हैं तो नई पीढ़ी को यह मालूम होना चाहिए कि संविधान क्या है? उसका निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ? और संविधान का महत्व क्या है? यह ऐसे प्रमुख बिंदु हैं, जिन्हें आने वाली पीढ़ी के सामने स्पष्टता से रखना बहुत आवश्यक है। 2014 से पहले भारत में 'संविधान को मानो' पर बल था, किंतु 2014 के बाद यह 'संविधान को जानो' पर बल दिया गया। जानने और मानने के अर्थ को स्पष्ट करते हुए रामबहादुर राय लिखते हैं कि *''जानने और मानने में बड़ा फर्क है । बिना जाने, अगर लोग मानते हैं, तो वहीं मानेंगे, जो उन्हें बताया जाएगा। जानकर मानने के बाद किसी नागरिक को संविधान के बारे में भ्रमित नहीं किया जा सकता है।''*[4] पूर्व में संविधान आम जन की भावना से बहुत दूर एक बौद्धिक वर्ग तक सीमित रहा। इन वर्षों में संविधान न सिर्फ वकीलों के पुस्तकालय की शोभा बढ़ाने वाले रहे इसके साथ ही उन पर वकीलों का कब्जा भी रहा। इस प्रकार वह धीरे-धीरे आमजन की भावना और उसकी चेतना से दूर होता रहा। इस संदर्भ में जवाहरलाल नेहरू ने संसद में कहा था- *''हमने यह पाया कि हमने जो शानदार संविधान बनाया था बाद में वकीलों ने उसे अगवा कर कब्जे में ले लिया।''*[5]

इस दौरान संविधान से जुड़े अनेक विषयों पर लेख लिखे जा रहे थे। कई विद्वानों ने संविधान को जानने और समझने की दिशा में कई बौद्धिक अभियान चलाए। उन्हीं में से एक प्रमुख नाम रामबहादुर राय का है। रामबहादुर राय ने संविधान को जानने के साथ उसके इतिहास और निर्माण की तत्कालीन परिस्थितियों को भी समझने का काम किया। इस संदर्भ में उनका विचार है कि *''संविधान को जानना आधुनिक भारत में नए 'प्रश्नोपनिषद्' की रचना करने जैसा एक बौद्धिक प्रयास है। जिन्हें भी राज्य-व्यवस्था को 'रामराज्य' की राह पर ले जाने में रुचि है और थोड़ा संकल्प भी है, उन्हें संविधान को नहीं, संविधान के इतिहास को पहले जानना चाहिए। बिना इतिहास के भविष्य को सुधारने की मंशा वैसी ही होगी, जैसे मानो अंधेरे में तीर चलाने का कार्य हो और ऐसा करने वाला इस भ्रम में रहे कि निशाना तो ठीक ही जगह पर लगेगा।''*[6]

रामबहादुर राय ने संविधान को केंद्र में रखकर आधुनिक भारत के इतिहास को पढ़ा और शब्दबद्ध किया। संविधान को पढ़ने पर जो स्वीकारता और नकारता के दो भाव थे उस भाव से अलग रामबहादुर राय ने तीसरी दृष्टि अपनाई। वह लिखते हैं, *''संविधान को दो पद्धतियों से ही देखने के प्रयास होते रहे हैं एक पद्धति नकारने की है तो दूसरी है संविधान जैसा है, वैसा मानने की। क्या कोई तीसरा तरीका भी हो सकता है ? क्यों नहीं? अवश्य हो सकता है। मैंने तीसरा ढंग अपनाया। संविधान की माया ने स्वाधीनता संग्राम के इतिहास को किस-किस तरह लुभाया? 'माया महाठगिनी हम जानी' की तर्ज पर संविधानवाद को स्वाधीनता संग्राम के इतिहास के दर्पण में जाँचने-समझने का प्रयास आरंभ किया। जो समझा वह लिखा।''*[7]

रामबहादुर राय संविधान को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाए जाने का समर्थन करते हैं। वे अपने एक लेख में लिखते हैं, *''संविधान को पाठ्यक्रम का हिस्सा क्यों बनाया जाना चाहिए? यह सवाल अब अधिक महत्वपूर्ण हो गया है।*

इसलिए संविधान का शिक्षण आवश्यक है, क्योंकि संविधान ही है, जिससे शासन चलता है और समाज का जीवन उससे संचालित होता है। संविधान वह संहिता है, जो अपने देश और समाज को चलाने के लिए रची गई है। संविधान की शिक्षा से बहुत बड़ा अज्ञान दूर हो सकेगा।''[8] संविधान को समझने के क्रम में वह कहते हैं, *''संविधान के निर्माण और उसके गुणों के बारे में अधिकतर जानकारी मिथक और महिमामंडन के रूप में उपलब्ध है। संविधान के सच को जानने के लिए हमें इस संविधान को मिथक और महिमामंडन से इतर समझना होगा।''*[9] संविधान का सच अगर जान लें तो उसका यथार्थ समझना आसान हो जाता है। इस आधार को समझने में 'संविधान एक अनकही कहानी' पुस्तक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो संविधान के मौलिक बहसों पर आधारित पुस्तक है। संविधान निर्माण की तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन करती यह पुस्तक संविधान का निर्माण किस प्रकार से हुआ, इसका भी विश्लेषण करती है।

रामबहादुर राय संविधान को अंग्रेजों के चलाए संविधानवाद की फसल मानते हैं। इस पर विस्तार से चर्चा करते हुए वह अग्रेजों के इस चक्र को समझाने का प्रयास अपने लेखों के माध्यम से करते हैं। उनका मानना है कि अग्रेजों ने जब यह देखा की देश में राष्ट्रीयता का उभार हो रहा है तो उन्होंने उससे बचने के लिए संविधानवाद का जाल फेंका। इस संदर्भ में वह कहते हैं कि *''अपने उपनिवेशों को बनाए रखने के लिए अंग्रेजों ने संविधानवाद चलाया। इसमें उनके तीन लक्ष्य रहते थे- एक, उपनिवेश की जनता यह समझे कि उसे स्वशासन मिल रहा है। दूसरा, वि-उपनिवेशीकरण की रफ्तार को जितना हो सके, धीमा किया जाए। तीसरा लक्ष्य था कि उपनिवेश अगर स्वशासन में आ जाते हैं तो वे उनकी राज्य व्यवस्था और जीवन प्रणाली में ही रहें।''*[10]

स्वाधीनता आंदोलन और संविधान की यात्रा जब से शुरू होती है, तभी से ब्रिटिश सरकार ने दमन और संविधानवाद की दोहरी नीति अपनाई। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान भारतीय संविधानवादी जो-जो माँगें प्रस्तुत करते थे, उन पर ब्रिटिश शासक संसदीय राजनीति के नुस्खों के रूप में किसी कमेटी या आयोग की रिपोर्ट बहस को नया मोड़ देते थे। रामबहादुर राय संविधानवाद के बारे में आगे लिखते हैं, *''इस तरह एक तरफ दमन का कुचक्र चलाया तो दूसरी तरफ सुधारों की प्रक्रिया चलाई। इसी नीति के तहत अंग्रेजों ने राष्ट्रीय आंदोलन को संविधानवाद के दायरे में लेने वाले कदम उठाए। हमें यह आभास दिया कि वे स्वशासन दे रहे हैं। कानूनी अधिकार दे रहे हैं। अंग्रेज अपने शब्दजाल से हमें बताते रहे कि संसदीय लोकतंत्र और उत्तरदायी शासन की विवेकपूर्ण परंपरा से वे भारत को समर्थ बना रहे हैं। ब्रिटेन के इस प्रयास से हमारा नेतृत्व एक व्यामोह में पड़ गया। उसने समझा कि ब्रिटेन संवैधानिक सुधार का लचीला रास्ता अपना रहा है। इसी का दूसरा पहलू भी है कि ब्रिटेन ने यह अनुभव कर लिया था कि इन्हीं तरीकों से वे अपना प्रभाव बनाए रख सकते हैं।''*[11]

रामबहादुर राय संविधान के पिरामिड कि चर्चा करते हुए लिखते हैं कि *''हमारे संविधान का पिरामिड उल्टा है। वह इसलिए है कि हमारे संविधान का मूल ढाँचा औपनिवेशिक है।''*[12] राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान संविधान की आवश्यकता लगातार बढ़ती गई। इस संदर्भ में, अंग्रेजी शासन ने 1909 और 1919 में संवैधानिक सुधार किए। इसी प्रक्रिया में 1935 का भारत शासन अधिनियम भी आया। हालाँकि, इन सभी सुधारों को राष्ट्रीय नेताओं ने अस्वीकार कर दिया और पूरे देश में इसका संगठित विरोध किया गया। इसके बावजूद, हमारे संविधान का अधिकांश हिस्सा 1935 के अधिनियम से लिया गया।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के संविधान संबंधी भाषणों पर केंद्रित एक पुस्तक 'नए भारत का सामवेद' आई है। इस पुस्तक का पुरोकथन रामबहादुर राय ने लिखा है। इसके पुरोकथन में वे लिखते हैं, *''संविधान वनवास में था। इसका स्पष्टीकरण यहाँ जरूरी है, नहीं तो अनर्थ का खतरा है। संविधान के वनवास से अभिप्राय है कि वह भारत के जन-जीवन के केंद्र में स्थापित नहीं हो पाया था।''*[13] इस वनवास के कारण ही संविधान एक नागरिक के लिए अमूर्त हो गया, निराकार हो गया। रामबहादुर राय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को एक मननशील प्रधानमंत्री कि संज्ञा देते हैं। नरेंद्र मोदी मननशील प्रधानमंत्री हैं। ऐसा सिर्फ इसलिए कि उन्होंने संविधान के प्रति साक्षरता का एक आंदोलन खड़ा किया। उन्होंने संविधान को मानने

से पहले संविधान को जानने पर बल दिया है। उन्होंने न सिर्फ संविधान को सरकार का 'धर्मग्रंथ' घोषित किया, बल्कि संविधान के प्रति जागरूकता और चेतना के विकास के लिए 26 नवंबर को 'संविधान दिवस' के रूप में मनाने की घोषणा भी की। पूरा देश संविधान दिवस का साक्षी बना और संविधान दिवस में संविधान को जानने का एक बौद्धिक विमर्श शुरू हुआ। रामबहादुर राय प्रधानमंत्री द्वारा संविधान दिवस की घोषणा की सराहना करते हुए कहते हैं, *''संविधान दिवस से एक और बड़ी बात हुई है। वह है, लोकतंत्र की कुलीन तंत्र के बंधन से मुक्ति। यह है, सामाजिक तंत्र के लिए बंद दरवाजे को खोलने का साहस। इससे स्वतंत्रता को नया अर्थ मिला है। संविधान शंकर की जटा में बंद हो गया था। वह संविधान दिवस से जन-जीवन में एक पवित्र प्रवाह बन कर उतरा है। इस रूप में नरेंद्र मोदी पहले प्रधानमंत्री हैं, जिन्होंने संविधान की सुध इस तरह ली कि उसे देश का राष्ट्रीय पर्व बना दिया।''* [14]

संविधान हमें शक्ति देता है, प्रेरणा देता है और हमें जोड़ता है। वर्तमान संदर्भ में संविधान को जानना और फिर उसे मानना बहुत ही प्रासंगिक हो चुका है। संविधान को जानने का ये अभियान रामबहादुर राय की सकारात्मक सोच का परिचायक है, जो भारत के नागरिकों को मशाल दिखाकर संविधान के प्रति जागरूकता उत्पन्न कर रहे हैं। 'यथावत' और 'अनायास' के विभिन्न लेख व संविधान पर पुस्तकें रामबहादुर राय के इस अभियान को विशिष्ट स्थान दिलाते हैं।

'विकसित भारत : 2047' के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि अमृत काल में हम अपने संविधान निर्माण की प्रक्रियाओं और उनके संदर्भ को समझें। भारत की 'मदर ऑफ डेमोक्रेसी' के रूप में पहचान को और मजबूत बनाना महत्वपूर्ण है। संविधान की चर्चाओं को समझे बिना यह संभव नहीं है। इसके बिना न केवल संविधान को जन-जन तक पहुँचाना मुश्किल होगा, बल्कि इसे आत्मसात करना भी संभव नहीं होगा। ❑

संदर्भ सूची :

1. 13वां वार्षिक सत्यवती स्मृति व्याख्यान, वक्ता : रामबहादुर राय, पृ.1
2. वही, पृ.2
3. भारतीय संविधान अनकही कहानी, रामबहादुर राय, पृष्ठ 402, प्रभात प्रकाशन, संस्करण 2023
4. नए भारत का सामवेद, पुरोकथन : रामबहादुर राय, पृ.22, प्रभात प्रकाशन, संस्करण 2023
5. वही, पृ. 17
6. भारतीय संविधान अनकही कहानी, पृ. 18
7. वही, पृ. 19
8. लेख-संविधान दिवस सार्थक कैसे बने ?, यथावत पत्रिका, दिनांक 1-15 दिसंबर 2015
9. 13वां वार्षिक सत्यवती स्मृति व्याख्यान, पृ. 3
10. भारतीय संविधान अनकही कहानी, पृ. 159
11. 13वां वार्षिक सत्यवती स्मृति व्याख्यान, पृ.6
12. वही, पृ. 10
13. नए भारत का सामवेद, पृ. 5
14. नए भारत का सामवेद, पृ. 14

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' का समाज और दलित चेतना

नीलाक्षी पावे

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी- 781001, असम
8724092152
nilakshi.pawe007@gmail.com

शोध सार :

उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' जगदीश चंद्र द्वारा दलित समाज पर लिखा गया एक उपन्यास है। यह उपन्यास-त्रयी का तीसरा और अंतिम खंड है। इसके पहले खंड 'धरती धन ना अपना' और 'नरककुण्ड में बास' उपन्यास हैं। इसी कड़ी को कायम रखकर 'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास को लिखा गया है। इसे उपन्यास-त्रयी के रूप में भी पढ़ सकते हैं और एक संपूर्ण स्वतंत्र कृति की तरह भी ग्रहण कर सकते हैं। यहाँ आजादी के बाद का भारतीय समाज परिलक्षित होता है। दलित जीवन पर केंद्रित यह उपन्यास विभिन्न बिंदुओं को प्रस्तुत करता है, जैसे- गरीब व्यक्ति का जमीन से जुड़ाव, समाज व्यवस्था में भ्रष्टाचार, दलित परिवार का गरीबी से गुजरकर सुविधाभोगी स्थिति तक का सफर, गरीबों का अपनों द्वारा धोखा मिलना, एक बेटी का शादी के बाद का सफर, अंधविश्वासी ग्रामीण परिवेश, सम्मान का मोह, भविष्य की योजना, एक अच्छे पिता का कर्तव्य, शिक्षा की ताकत, वर्गीय भेदभाव एवं छुआछूत, दो पीढ़ियों के बीच का मानसिक फर्क, दलित वर्ग का संघर्ष, समाज का विकास, दलित जाति का अस्तित्व, शहर और गाँव समाज की बदलती रूपरेखा, भारतीय समाज व्यवस्था की यथार्थ अभिव्यक्ति आदि विषय हैं। यह उपन्यास दलित जीवन को रेखांकित कर वर्तमान समाज की समस्याओं का चित्रण करता है और सामाजिक विकास के द्वंद्वात्मक स्वरूप को रेखांकित करता है।

बीज शब्द :

दलित, उपन्यास, जमीन, शिक्षा, भेदभाव, वर्ग विभेद, नई पीढ़ी, समाज, समस्या, यथार्थ चेतना, परिवर्तन, विकास।

प्रस्तावना :

उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' दलित जीवन पर आधारित उपन्यास है। यह उपन्यास-त्रयी का तृतीय खंड है। इसके पूर्व खंडों में हैं- 'धरती धन ना अपना' (प्रथम खंड) और 'नरककुण्ड में बास' (द्वितीय खंड)। इसी उपन्यास-त्रयी को बरकरार रखते हुए 'जमीन अपनी तो थी' लिखा गया है। यह अंतिम खंड है, जहाँ कथानक को सार्थकता मिली है। उपन्यास के बारे में लेखक चमन लाल कहते हैं, *'' 'मीन अपनी तो थी' अत्यंत महत्वपूर्ण रचना है और इसी से तीनों उपन्यास एक*

अभिन्न कड़ी का रूप धारण करते हैं।''[1] इसके लेखक जगदीश चंद्र ने इस उपन्यास में जीवंत घटनाओं का दर्शन करवाए हैं। यह उपन्यास सन 2001 में प्रकाशित हुआ था। हालाँकि, यह उपन्यास प्रकाशन वर्ष से बहुत पहले ही लिखकर तैयार हो गया था। इसे सन 1995 में पूरा लिख लिया गया था और दो बार उपन्यास को संशोधित भी किया गया, क्योंकि इसकी कथा बहुत विस्तृत थी। 10 अप्रैल, 1996 में लेखक जगदीश चंद्र के स्वर्गवास होने के कारण उपन्यास के प्रकाशन में वक्त लग गया। जैसा उपन्यास का नाम है, ठीक उसी तरह की यह कथा भी है। सरकार ने गरीबों को जमीन दी तो थी, पर वह उसके ही भ्रष्ट अधिकारी द्वारा छीन ली जाती है। इसलिए कहा गया है कि जमीन अपनी तो थी सही, पर कभी अपनी हुई नहीं। यह जमीन अपनी होते-होते रह जाती है। लेखक चमन लाल इस संदर्भ में लिखते हैं कि *''जमींदारों, उद्योगपतियों व अफसरों में मिलीभगत है। जमींदार अपनी जमीनें बचा लेते हैं। कहीं-कहीं बंजर जमीनें दलितों को मिलती हैं व कहीं-कहीं जमींदार व अफसर बेईमानी से उनसे दस्तखत करवा जमीनें हड़प जाते हैं। अदालतें भी दलितों की मदद नहीं करतीं, क्योंकि कागजों में उन्होंने जमीनें बेच दी हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नेहरूवादी भूमि सुधारों का असली हश्र 'जमीन अपनी तो थी' में अपनी पूरी वस्तुगतता में चित्रित हुआ है।''*[2]

इसके शीर्षक से ही विषय-वस्तु का अंदाजा लगाया जा सकता है। इस उपन्यास के अंतर्गत 13 अध्याय हैं। उपन्यास का शीर्षक कहानी के अनुकूल है। यहाँ आजादी प्राप्त भारतीय समाज का चित्रण हुआ है। इस उपन्यास को एक खंड के रूप में न पढ़कर एक स्वतंत्र उपन्यास के रूप में भी पढ़ा जा सकता है। यह कृति अपने आप में परिपूर्ण है। द्वितीय खंड 'नरककुण्ड में बास' में कथानक जहाँ समाप्त होता है, उसी दृश्य से 'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास का प्रारंभ होता है। यहाँ भी काली मुख्य पात्र है और पूरा कथानक उसी के जीवन पर आधारित है। काली समूचे दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला सशक्त पात्र है। उपन्यास के तीनों खंड दलित जीवन के संघर्ष को दर्शाते हैं। यह ग्रामीण और शहरी परिवेश के सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत करता है। 'जमीन अपनी तो थी' में शहर और गाँव दोनों का वातावरण है। उपन्यास का विषय स्थल पंजाब प्रांत है, पर लेखक ने पंजाब के बहाने से संपूर्ण भारतीय समाज व्यवस्था के यथार्थ को इस उपन्यास में रेखांकित किया है। उपन्यास में दलित जीवन से जुड़े समाज के हर एक पक्ष एवं समस्या को दिखाया किया गया है। दलित समाज के विकास में अवरोधों को रेखांकित किया गया है। 'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास में दलित वर्ग का संघर्ष है और अन्याय के प्रति विरोधी स्वर भी है। काली नामक पात्र उसी का मजबूत उदाहरण है। यह उपन्यास दलित चेतना का यथार्थवादी चित्रण करता है। दलित चेतना को उजागर करने वाला दलितों के संदर्भ में लिखा गया यह उपन्यास समाज के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण रचना है। इसके अध्ययन से समाज की समस्या एवं इसके समाधान दोनों को बेहतर समझ सकते हैं।

विश्लेषण :

उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' में कथानक की शुरुआत काली के नंदसिंह के साथ उसके घर जाने से होती है। काली का अपना कहने को कोई नहीं था और न ही उसके पास रहने को कोई स्थान था। इसलिए नंदसिंह ने उसे अपने घर में रहने को कहा। काली वहीं रहने लगता है और नंदसिंह के साथ काम करने लगता है। नंदसिंह की बेटी पाशो और काली का विवाह होता है। काली अपनी जूतों की दुकान चलाता हुआ अपनी गृहस्थी जीवन को संभालता है। यह उपन्यास दलित जीवन को दर्शाने वाला समाज केंद्रित उपन्यास है। यहाँ काली और अन्य कुछ गाँव के गरीबों को सरकार जमीन देती है पर वह जमीन उन्हें कभी नहीं मिलती। दलित वर्ग से आया हुआ सरकारी पद पर नियुक्त कुलतारसिंह जौहल षड्यंत्र करके गाँव वालों के लिए आवंटित जमीन को अपने और अपने घरवालों के नाम करवा लेता है। यहाँ एक दलित व्यक्ति ही अपनों को धोखा देता है। गाँव वालों के हक व अधिकार को छीन लेता है। जब काली और अन्य गाँव वालों को इस धोखाधड़ी के बारे में पता लगता है तो सब विरोध करने कुलतारसिंह जौहल के दफ्तर पहुँच जाते हैं। सबको विरोध करता देख कुलतारसिंह का अहलमद रामगोपाल उसके आदेश पर सबको पैसे देकर चुप कराने की कोशिश करता है। सब पैसे लेकर चुप हो जाते हैं, पर केवल काली पैसे नहीं लेता,

बल्कि वह अपनी जमीन चाहता था। उसे पैसों का मोह नहीं था। वह रामगोपाल से झगड़ कर जेल तक चला जाता है। उसने जमीन को पाने के लिए हर मुमकिन प्रयास किया। उसकी जितनी चाह थी जमीन को लेकर उतनी चाह उसके बेटों में नहीं थी। काली इन सबसे अलग सोच रखता था। इस तरह से काली अंत तक अपनी जमीन के लिए आवाज उठाता रहता है। काली के लिए या साधारणत: किसी भी गरीब व्यक्ति के लिए जमीन केवल एक मिट्टी का टुकड़ा नहीं है, अपितु यह जमीन समाज में मान-सम्मान का चिन्ह है, जिसका दलित समाज में अभाव है। काली एक विरोधी स्वर का प्रतीक है, जो अपने अधिकार के लिए लड़ता है। समाज के सही विकास के लिए ऐसे ही साहसी, समर्थ, मजबूत और प्रभावशाली व्यक्तित्व की जरूरत है। 'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास में अपनों द्वारा मिले धोखे के कारण गरीबों को अपनी जमीन कभी नहीं मिलती। काली चाहता था कि उसका बड़ा बेटा ज्ञानप्रकाश जो कि एक बड़े सरकारी अधिकारी के पद पर नियुक्त था, वह जमीन के काम में उसकी मदद करे। पर ज्ञानप्रकाश को जमीन के संदर्भ में कोई रुचि नहीं थी। यही बात काली को दुखी करती थी। काली बड़ी मेहनत से जूतों की दुकान चलाता हुआ दोनों बेटों को अच्छी शिक्षा देता है। पर उसके बेटे अपने पिता के इस व्यवसाय के प्रति शर्म अनुभव करते थे। उपन्यास में दलित स्वयं को दलित कहलाना पसंद नहीं करते हैं। जैसे- गाँव से निकलकर कुलतारसिंह शहर में अपने नाम के आगे उच्च जाति की उपाधि लगाता है। काली का बड़ा बेटा ज्ञानप्रकाश गाँव छोड़ शहर में रहना पसंद करता है। गाँव का घर और अपने पिता का काम उसको सम्मानजनक नहीं लगता है।

काली के दो पुत्र- ज्ञानप्रकाश (लाटू) और सतप्रकाश (काकू) दोनों ही बेटे पढ़ाई-लिखाई में काफी अच्छे थे। काली एक आदर्श पिता के रूप में बहुत मेहनत से दोनों को पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाता है। ज्ञानप्रकाश एक आई.ए.एस. अधिकारी था और सतप्रकाश एक डॉक्टर। ज्ञानप्रकाश को शहर में सरकार से सभी सुख-सुविधाएँ प्राप्त थीं। वह अपने माता-पिता को शहर में आराम से रहने को कहता है और सब एक साथ रहने लगते हैं। काली पहले शहर में रहने को तैयार नहीं था, पर पत्नी और बेटों के आग्रह से वह भी शहर चला जाता है, पर कुछ दिनों के बाद फिर वापस गाँव आ जाता है। बेटों की सफलता व तरक्की से काली बहुत संतुष्ट था, पर पीढ़ियों के बीच सोच का फर्क उसे निराश करती है। काली अपने बेटे ज्ञानप्रकाश के व्यवहार से नाखुश होकर वापस अपने गाँव चला जाता है। उपन्यास के विषय-वस्तु के संदर्भ में लेखक चमन लाल लिखते हैं, *''काली अपने बेटों को सुविधाभोगी जीवन तक पहुँचा देता है। उसने पूरा जीवन संघर्ष किया है, लेकिन अपने लिए उसने हमेशा संघर्ष किया- अब उसका आई.ए.एस. बेटा ही उसकी लानत-मलानत कर देता है, क्योंकि उसके बेटे के अफसर दोस्त को 'जूता मुरम्मत करवाने की नेक सलाह' दे दी है। जीवन के अंतिम दौर में भी काली के लिए जीवन को आराम-चैन से जीने, बैठ कर सुविधाएँ भोगने का अवसर नहीं है। बेटे के रवैये से उदास होकर काली अपनी पत्नी पाशो के साथ गठड़ी उठाए गाँव चला आता है और यहीं पर इस शानदार उपन्यास-त्रयी का अंत होता है।''* [3] ज्ञानप्रकाश को अपने पिता का अपने शहर के अधिकारी दोस्तों के साथ बैठकर बात करना पसंद नहीं था, क्योंकि बातों के बीच काली अपने दलित होने का परिचय दे देता था या अपनी पुरानी जूतों की व्यवसाय पर चर्चा करता था। ज्ञानप्रकाश को अपने पुराने गाँव की गरीबी की कथा अपने दोस्तों को सुनाने में आपत्ति थी। गाँव की गरीबी और स्वयं का दलित वर्ग से संबंधित होना उसके लिए शर्म की बात थी। इसी संदर्भ में चमन लाल लिखते हैं, *''राजनीतिक क्षेत्र में सेठ रामप्रकाश जैसे दलित नेता व प्रशासनिक क्षेत्र में कुलतारसिंह जौहल जैसे अधिकारी किस प्रकार व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के लिए अपने वर्ग से द्रोह करते हैं और किस प्रकार नौकरियों का आरक्षण दलित वर्ग के भीतर एक ऐसे सफेदपोश तबके को पैदा कर रहा है, जो अपनी ही वर्ग पृष्ठभूमि से कट कर सुविधाभोगी व शोषक वर्ग का हिस्सा बनने में फख्र महसूस करता है व यह हिस्सा अपनी जातिगत पहचान तक छिपाना चाहता है।''* [4] यहाँ स्वयं दलित को दलित कहकर परिचय देना खुद दलितों के लिए कठिन बात हैं।

इस उपन्यास में विभिन्न विषयों को समझने का अवसर मिलता है। वे हैं - गरीब व्यक्ति का अपनी जमीन से

जुड़ाव, सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त धोखाधड़ी एवं भ्रष्टाचार, अपने लोगों द्वारा धोखा मिलना, दलित परिवार का गरीबी से गुजरकर सुविधापरस्त जीवन प्राप्त करना, एक बेटी का शादी के बाद का सफर, अंधविश्वासी ग्रामीण परिवेश, सम्मान का मोह, भविष्य से जुड़ी योजनाएँ, एक अच्छे पिता का कर्तव्य, शिक्षा की ताकत, जातिगत भेदभाव एवं छुआछूत, दो पीढ़ियों के बीच का मानसिक फर्क, दलित वर्ग का संघर्ष एवं अस्तित्व, समाज की समस्या, समाधान और विकास, ग्रामीण और शहरी समाज का यथार्थ, दलित चेतना का आविर्भाव आदि विषय हैं।

'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास शीर्षक से ही स्पष्ट होता है कि यहाँ विषय-वस्तु जमीन है। गरीब व्यरिक्त जिसके पास अपनी संपत्ति कहने को कुछ नहीं होता है, ऐसे में जमीन के प्रति जुड़ाव होना स्वाभाविक है। इसी संदर्भ में लेखक चमन लाल कहते हैं कि ''किस प्रकार सहकारिता, भूमि सुधार कार्यक्रम गाँव के बड़े जमींदारों ने अपने हित के सुरक्षित रखने के लिए असफल बनाए और गरीब किसान/दलित की दशा पहले-सी ही बनी रही, इसे उपन्यासकार ने बड़े सटीक शीर्षक से ही जाहिर कर दिया है- 'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास 'त्रयी' के पहले भाग में जो ब्रिटिश इंडिया के दौर को प्रस्तुत करता है। दलित का दर्द है कि उसके पास जमीन का एक टुकड़ा भी अपना नहीं। यहाँ तक कि उसके घर की जमीन का टुकड़ा भी उसका अपना नहीं है, इसलिए उसका दर्द इन शब्दों में प्रकट हुआ- *'धरती धन न अपना।'*[5] अपनी जमीन का होना अपने आप में ही बड़ी उपलब्धि है। उपन्यास का पात्र काली के लिए जमीन अत्यंत महत्वपूर्ण संपत्ति थी। जमीन के मिलने से उसे समाज में वह दर्जा मिलता, जिसकी वह सिर्फ कल्पना ही करता था। सरकार दलित वर्ग के सशक्तिकरण के लिए जमीन देती है, पर वह जमीन कभी गरीबों के हाथ नहीं आती। काली को अपनी सरकारी जमीन नहीं मिली। कथानक के अंत तक काली का जमीन के प्रति प्रेम बना रहा।

उपन्यास में सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त धोखाधड़ी एवं भ्रष्टाचार का चित्रण किया गया है। यह वर्तमान समाज की सच्ची तस्वीर है। इलाके का मजिस्ट्रेट कुलतारसिंह जौहल गाँव का ही दलित था। वह पढ़-लिखकर शहर में बड़ा अधिकारी बन गया था। वह अपने पद के सहारे अपने ही लोगों के साथ अन्याय करता है। काली और अन्य गाँव वालों के नाम पर आवंटित सरकारी जमीनों को धोखे से अपने नाम कर लेता है। फिर लोगों के विद्रोह करने पर उन्हें पैसे द्वारा चुप करा देता है। हालाँकि, काली पर उसके पैसों का जादू नहीं चलता। काली अपने साथ हुए अन्याय के विरुद्ध खड़ा होता है और अपनी जमीन की माँग करता है। इस संदर्भ में साहित्यकार चमन लाल लिखते हैं, *''गाँव की को-ऑपरेटिव सोसाइटी, जिसकी कार्यकारिणी का सदस्य काली भी है, का तमाम धन बड़े जमींदार ही इस्तेमाल करते हैं। सोसाइटी का उद्देश्य गरीब किसानों/दलितों को कर्ज देना है और गरीब किसानों से कर्जे की अर्जी पर दस्तखत करवाए जाते हैं, जबकि कर्जे की रकम का इस्तेमाल जमींदार/सामंत लोग करते हैं। यही हाल जमीन की हदबंदी का कानून बनने पर होता है। जमींदार/सामंत लोग एक ही परिवार में कागजों में तलाक तक दिखाकर जमीन को अनेक जगहों पर बाँट कर जमीन का एक टुकड़ा भी हाथ से नहीं जाने देते।''*[6] उपन्यास में कुलतारसिंह जौहल एक भ्रष्ट अधिकारी का उदाहरण है। इसके साथ ही रामगोपाल, छोटा सरदार पृतपालसिंह आदि जैसे पात्र भी दलितों के साथ अन्याय करते हुए दिखाए गए हैं।

यहाँ उपन्यास में दलित लोग अपने ही वर्ग द्वारा धोखे का शिकार हुए हैं। इस बारे में चमन लाल लिखते हैं, *''दलितों की जमीन बेईमानी से हड़पने वाला अफसर यहाँ खुद दलित वर्ग का उन्हीं के गाँव का दिखाया गया है, जिसे कुछ आलोचक दलित विरोध के रूप में भी देख सकते हैं, जिसे सेठ रामप्रकाश इन दलित अफसरों के बचाव में अपने भाषण में कहता है, जब काली उसके पास अपनी फरियाद लेकर जाता है।''*[7] पहले गाँव में रहने वाला कुलतारसिंह अपने पद का गलत प्रयोग कर काली और अन्य गाँव वालों को जमीन के मामले में धोखा देता है। गरीबों के लिए सरकार जो जमीन देती है, उन सब जमीन को कुलतारसिंह अपने और अपने परिवार जनों के नाम कर लेता है। इस तरह से वह स्वयं दलित होकर दलितों की संपत्ति छीन लेता है। कुलतारसिंह को स्वयं को दलित बताने में शर्म आती थी। इस कारण उसने अपना नाम परिचय तक बदल लिया था।

उपन्यास में एक दलित परिवार का गरीबी से गुजरकर सुविधापरस्त जीवन प्राप्त करने की त्रासद कथा है। काली का जीवन अत्यंत संघर्षों से बीता था। एक वक्त था, जब उसका अपना कहने को कोई नहीं था। फिर नंदसिंह ने उसे सहारा दिया और उसकी शादी पाशो से हुई। पाशो और काली को दो बेटे हुए- ज्ञानप्रकाश और सतप्रकाश। काली ने बड़ी मेहनत से दोनों बेटों को अच्छी शिक्षा दी। ज्ञानप्रकाश आई.ए.एस. अधिकारी बन जाता है और सतप्रकाश एक डॉक्टर। काली ने अत्यंत गरीबी में जीवन बिताया, पर अपने बेटों को अच्छी शिक्षा दी और इसी प्रकार समय के साथ उसके जीवन स्थितियों में बदलाव आता गया। जूतों की दुकान में काम करने वाले के बेटे अब उच्च पदों में नियुक्त थे। यहाँ पारिवारिक दशाओं में परिवर्तन होना समाज को विकास का मार्ग दिखाता है।

यहाँ उपन्यास में एक बेटी का शादी के बाद का सफर देख सकते हैं। उपन्यास में व्यक्त किया गया है कि शादी के बाद बेटी का अपना घर उसके पति का घर होता है। उदाहरण के लिए पाशो को देख सकते हैं। शादी के बाद जब तक वह अपनी माँ के घर पर थी, उसे सारे काम करने के बावजूद अपनी माँ से उलाहने-ताने सुनने पड़ते थे। पाशो दुखी होकर काली से कहती है, *''कुछ नहीं हुआ। मुझे यहाँ से निकाल... नहीं तो मरी का मुँह देखेगा।''*[8] हालाँकि, पाशो जब काली के साथ अलग घर रहने जाती है तो उसकी माँ ठाकरी को अपनी गलती का एहसास होता है और पाशो को खूब प्यार भी देती है। वह बचपन से जिस घर में बड़ी हुई थी, वह घर शादी के बाद अब उसे पराया सा अनुभव कराता है। खून के रिश्ते भी शादी के बाद अंजान लगने लगते है। यहाँ स्पष्ट दिखाया गया है कि लड़की को समाज पराया धन समझता है। लड़की की जल्दी से शादी कर उसे पति के घर भेजने की पुरानी परंपरा है। अधिकतर घरों में बेटी को बोझ समझा जाता है। ऐसी सोच व मानसिकता में बदलाव लाने की आवश्यकता है।

उपन्यास में गाँव का वातावरण प्रस्तुत हुआ है। इस ग्रामीण माहौल में गाँव वालों की अंधविश्वासी प्रवृत्ति को दिखाया गया है। असल ग्रामीण समाज में भी लोग अधिकतर अंधविश्वासी होते हैं। ग्रामीण माहौल में अंधविश्वास काफी प्रचलित है। लखबीरसिंह और भागो की बेटी बलजीतो जब अपने घर से गायब हो गई थी तो उसकी माँ भागो उपायहीन होकर पखौरा गाँव के संत पखौरावाले महाराज के पास जाने का फैसला किया। लखबीरसिंह ने भी अपनी पत्नी को संत के पास जाने से नहीं रोका. बल्कि उसने भागो को जरूर ही इस संत से मदद लेने को कहा। संत के पास जाकर मानो उनको संतुष्टि हुई थी। यह घटना यहीं बात को दिखाता है कि गाँव में अंधविश्वास की जड़ कितनी मजबूत है और गाँव के लोग किस हद तक अंधविश्वास का सहारा लेते हैं। समाज को ऐसी अंधविश्वासी सोच को दूर करने की जरूरत है।

दलित वर्ग में सम्मान का मोह हमेशा से रहा है, क्योंकि उनको कहीं भी कभी भी सम्मान नहीं मिलता है। समाज में उनकी कोई इज्जत नहीं करता। उच्च वर्ग व समाज दलितों के प्रति भेदभाव एवं छुआछूत की भावना रखता है। उपन्यास में भी दलितों की ऐसी ही स्थिति दिखाई गई है। जमीन की चाह में काली समाज में अपना सम्मान स्थापित करना चाहता था। अपनी जमीन का होना काली की विशेष उपलब्धि होती, जो समाज में उसका व दलित का स्तर ऊँचा करता। गाँव के उच्च वर्ग दलितों के साथ छुआछूत करते थे। जब ज्ञानप्रकाश मैट्रिक पास हुआ तो काली ने दुकानदार मुरारीलाल का मुँह मीठा कराना चाहा, पर उसने नहीं खाया। काली चमार था, इसलिए उसके हाथों से दी गई मिठाई नहीं खाई थी। इस तरह दलितों को हर जगह हर अवसर पर अपमानित होना पड़ता है और यही कारण है कि उनको हमेशा सम्मान का मोह रहता है।

उपन्यास में काली अपने जीवन के संघर्षों को देख अपने बेटों के भविष्य को अच्छा बनाने का पूरा प्रयास करता है और इसमे वह सफल भी होता है। वह अपने बेटों को अच्छी शिक्षा देता है ताकि उनका भविष्य उज्ज्वल हो सके। काली जमीन भी अपने बेटों के लिए ही चाहता था। बेटों की सफलता में पिता काली का अहम योगदान रहा है। जीवन के सामाजिक, पारिवारिक एवं आर्थिक अनुभवों से सीखकर अपने भविष्य को सुधारने में काली सक्षम रहा है। वह अपने बेटों का जीवन अपने जीवन जैसा नहीं बनाना चाहता था। इसलिए उसने बहुत मेहनत करके बेटों को अच्छी शिक्षा दी और सफल, स्वतंत्र एवं आत्मनिर्भर व्यक्ति बनाया।

काली एक आदर्श पिता के रूप में अपने हर कर्तव्य का पालन करता है। अपने जीवन के संघर्षों और अनुभवों से सीखकर अपने बेटों का भविष्य सँवारने का प्रयास करता है। वह नहीं चाहता था कि उसके बेटे भी उन्हीं नारकीय मुश्किलों से गुजरे, जिससे वह निकला था। बहुत मेहनत करता हुआ बेटों को शिक्षा द्वारा बड़ा आदमी बनाने में काली का मुख्य योगदान रहा है। एक पिता के रूप में वह सफल रहा है। वह स्वयं अनपढ़ था, लेकिन शिक्षा का महत्व जानता था।

शिक्षा कितनी शक्तिशाली होती है, यह हमें इस उपन्यास में स्पष्ट देखने को मिलता है। काली के बेटे ज्ञानप्रकाश और सतप्रकाश ने शिक्षा द्वारा समाज में अपना विशेष स्थान बनाया था। जहाँ शुरुआत में उनको दलित होने के कारण समाज में अछूता रखा जाता था, वहीं दूसरी ओर शिक्षित होने पर उनको सम्मान मिलने लगा था। नौकरी मिलने के कारण आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आ गया था। समाज में लोग दलित वर्ग के साथ भेदभाव करते थे, पर शिक्षित होने के कारण वह फर्क नहीं रहा था। हालाँकि, ज्ञानप्रकाश के शहरी मित्र संजीव और राजीव उसके दलित होने पर भी उससे दोस्ती रखते हैं। यह बात यही प्रमाणित करती है कि शिक्षा व ज्ञान की सहायता से संपूर्ण समाज को बदला जा सकता है। आज शिक्षित होना समाज के विकास में एक महत्वपूर्ण विषय है।

उपन्यास में जाति वर्ग के बीच भेदभाव एवं छुआछूत को दिखाया गया है। उच्च वर्ग निम्न वर्ग के साथ भेदभाव करते थे। दलितों को अधर्मी चमार कहकर संबोधित करते थे और उनके साथ छुआछूत रखते थे। कथानक में काली जब अपने बेटे के परिणाम से खुश होकर व्यापारी मुरारीलाल को बर्फी का टुकड़ा खाने को देता है तो वह वहाँ अपनी छुआछूत प्रवृत्ति को दिखाता है और कहता है, *''कैसा जमाना आ गया है। अधर्मी-चमार महाजनों का मुँह मीठा कराने लगे हैं।''*[9] यहाँ साफ छुआछूत वाली मानसिकता दिखाई देती है। गाँव में जब निम्न वर्ग का लखबीरसिंह और भागो की बेटी बलजीतो उच्च वर्ग के गंडासिंह के बेटे नसीबसिंह के साथ भाग गई थी तो नम्बरदार गंडासिंह को आपत्ति इस बात से नहीं थी कि उसका बेटा एक लड़की को भगा ले गया है, अपितु इस बात से तकलीफ थी कि नसीबसिंह दलित लड़की को भगा ले गया है। उसे लगता है कि अधर्मी दलित लड़की का नाम उसके बेटे से जुड़ना, उसकी इज्जत को कम करता था। उच्च वर्ग का निम्न वर्ग के साथ भेदभाव एवं छुआछूत का व्यवहार लोगों की गलत मानसिकता को उजागर करता है, जिसे बदलने की अति आवश्यकता है।

उपन्यास में दो पीढ़ियों के बीच सोच में फर्क का चित्रण भी किया गया है। काली और उसके बेटों की मानसिक सोच और उनके समाज की समझ में बहुत अंतर है। काली पुरानी समझ-बूझ के साथ लगा रहता है और उसके बेटे ज्ञानप्रकाश और सतप्रकाश आधुनिक सोच से काम करते हैं। काली का मानना था कि गाँव में जमीन का होना प्रयोजनीय बात है, पर उसके बेटे ऐसा नहीं मानते थे। जमीन के संदर्भ में काली को लगा कि ज्ञानप्रकाश एक बड़े सरकारी पद पर है तो उसे वह जमीन दिलाने में मदद करेगा। परंतु ज्ञानप्रकाश को इस संदर्भ में कोई रुचि ही नहीं थी। अंत में ज्ञानप्रकाश अपने पिता को जमीन को भूल जाने की सलाह देता है। इस संदर्भ में काली ज्ञानप्रकाश से कहता है, *''तू तो कुलतारसिंह से भी बहुत बड़ा अफसर है। क्या इस मामले में तू कुछ नहीं कर सकता?'' काली ने बहुत देर के बाद अपने बेटे के साथ अधिकारपूर्ण लहजे से बात की थी।*

ज्ञान को अपने पिता की सादगी पर हँसी आ गई, ''डैडी, जब वह कानून की गिरफ्त में नहीं आया तो मैं क्या कर सकता हूँ... वैसे आप जमीन के पीछे क्यों पड़े हैं... अगर मिल भी जाए तो क्या आप उस बंजर जमीन पर खेती करने जाएँगे?''

''काका, बात खेती की नहीं, मिल्कियत की है। वैसे खेती भी कर सकता हूँ। अपनी मिट्टी से जूझने का अपना ही सुख होता है,'' काली उत्तेजित हो गया।

''मैं तो यही कहूँगा कि आप इस मामले को भूल जाएँ,'' ज्ञान अपने कमरे की ओर बढ़ गया।''[10]

ज्ञानप्रकाश को गाँव की जमीन से कोई मोह नहीं था। अनपढ़ काली अपने शिक्षित बेटे से मदद की आशा करता है, पर ज्ञानप्रकाश उल्टा उसे जमीन के विषय को भूल जाने की सलाह देता है। काली को गाँव में रहना पसंद था, जबकि उसके बेटों को शहर की हवा अच्छी लगती थी।

ज्ञानप्रकाश चाहता था कि क्योंकि उसके पास अब शहर में अब कुछ है तो उसके माँ-बाप आराम से उसके पास शहर में रहे, पर अंत में बेटे के बहुत समझाने के बाद भी काली ज्ञानप्रकाश की बातों से दुखी होकर वापस गाँव लौट जाता है। कथानक में दो पीढ़ियों के बीच सोच-विचार में फर्क को दिखाया गया है।

'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास की कहानी में दलित वर्ग का जीवन संघर्ष चित्रित है। दलितों के अस्तित्व की पहचान को यहाँ विषय बनाया गया है। उदाहरण के लिए काली के जीवन को ही ले सकते है। उसका जीवन आरंभ से ही संघर्षों से पूर्ण रहा है। केवल इस खंड में नहीं, बल्कि उपन्यास-त्रयी के शुरुआत से ही काली के संघर्षमय जीवन को दिखाया गया है। काली अपनी गरीबी को पार करके लंबे वक्त के बाद सुविधापरस्त जीवन को हासिल करता है। हरेक गरीब दलित के हालत कुछ इस प्रकार के ही होते हैं। उनका अपना अस्तित्व नहीं होता। उनको समाज में बड़ी मुश्किल और संघर्ष से सम्मान हासिल करना पड़ता है। शिक्षा द्वारा दलित वर्ग की स्थिति में बदलाव लाया जा सकता है। कथानक में प्रस्तुत काली के बेटों द्वारा प्राप्त उपलब्धि इसी का प्रमाण है।

इस उपन्यास में समाज की यथार्थ समस्याएँ, इसके समाधान एवं समाज के विकास के लिए मार्ग दर्शन दिया गया है। काली ने जिस तरीके से असंभव परिस्थितियों को पार करके जीवन को संभव बनाया है, यह दिशा समाज के प्रगति में सहायक है। यहाँ उपन्यास में पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, मानसिक, प्रशासनिक आदि जैसी समस्याओं को उजागर किया गया हैं। ये समस्याएँ समाज में हर जगह फैली हैं। इस उपन्यास के संदर्भ में लेखक चमन लाल लिखते हैं, *'' 'जमीन अपनी तो थी' के अड्डे के पास के गाँव के काली समेत तेरह चमार परिवारों के साथ यही दुखांत घटना है, जिनकी पैंसठ एकड़ जमीन पर कुलतारसिंह जौहल, जो उनके ही गाँव का, उनकी बिरादरी से बना अफसर है, का फार्म बन जाता है। जबकि इन परिवारों का दो-दो अढ़ाई-अढ़ाई सौ रुपए का खर्चा भी डूब जाता है। बाद में बात सुलझाने पर इन लोगों को पाँच-पाँच सौ रुपए देकर इनका मुँह बंद करवा दिया जाता है। काली अपनी चारित्रिक प्रकृति के अनुरूप प्रतिरोध करता है तो पहले तो गिरफ्तार करवाया जाता है- बाद में कोर्ट से वह केस हार जाता है, क्योंकि उसने अपनी जमीन बेच दी है- कागजी कारवाई पूरी है, अत: अदालत कोई राहत नहीं दे सकती।''*[11] इन्हीं स्थितियों से अनुभव ग्रहण करके बहुत कुछ सीखा जा सकता है। काली का जीवन इसी विषय बिंदुओं का प्रमाण है। उसने अपने जीवन के अनुभवों से सीखकर अपने भविष्य को सँवारा था। अपने बेटों के जीवन में सफलता का आधार स्वयं पिता काली था। वह कभी नहीं चाहता था कि उसने जो नारकीय जीवन को भोगा है, वैसा उसके बेटों को अनुभव करना पड़े। इसी कारण उसने तय किया कि वह अपने बेटों को शिक्षित कर अच्छी दिशा में ले जाएगा। यहाँ उपन्यास में दिखाया गया है कि समाज के विकास के लिए शिक्षा एक आवश्यक माध्यम है।

यह उपन्यास शहर और गाँव दोनों का वातावरण दिखाता है। शहरी और ग्रामीण समाज का यथार्थ परिवेश यहाँ प्रस्तुत हुआ है। लेखक ने शहर के सामाजिक एवं राजनीतिक पक्ष को सामने लाने का प्रयास किया है। यहाँ गाँव की गरीबी और समाज की मानसिकता पर ध्यान आकर्षित किया है। गाँव का दलित शहर जाकर कैसे बदल जाता है, यह कुलतारसिंह जौहल जैसे पात्र से पता लगता है। वह अपने ही लोगों को धोखा देता है जो उस पर बहुत भरोसा करते थे। काली के बेटे भी शहर जाकर बदल जाते हैं। शहर और गाँव समाज की वास्तविकता और इसके बदलते परिस्थितियों का यहाँ यथार्थ चित्रण हुआ है। काली एक गाँव प्रेमी व्यक्ति था, जबकि उसके बेटे उसके विलोम थे। गाँव की स्थिति से निकलकर प्राय: लोग शहर बस जाते हैं।

उपन्यास में लेखक ने दलित चेतना को रेखांकित किया है। दलित वर्ग के विकास के लिए इस चेतना का होना अनिवार्य है। कथानक में दलित नेता सेठ रामप्रकाश दलितों के हक के लिए आवाज उठाता है, पर वह भी काली के साथ हुए अन्याय पर उसकी सहायता नहीं करता है। उपन्यास पर चर्चा करते हुए चमन लाल कहते हैं, *''सेठ रामप्रकाश जो एक स्तर पर काशीराम जैसे नेता का प्रतिरूप लगते हैं, भी दलित वर्ग में निहित स्वार्थों का हित साधन करते हैं, उन्हें जौहल आदि अफसरों के हितों का ख्याल है, न कि*

काली आदि उत्पीड़न के शिकार दलितों का।'' [12] इस संदर्भ में जगदीश चंद्र ने समाज में व्याप्त भ्रष्ट प्रवृत्तियों को उजागर किया है। स्वयं दलित अपने दलित लोगों के साथ बुरा करते हैं। अपनी पद की शक्ति से कुलतारसिंह जौहल ने जो काली और अन्य दलितों के साथ किया, वह बिल्कुल गलत था। इस पर बाकी लोग पैसे लेकर चुप हो गए, पर केवल काली अंत तक अपने हक के लिए लड़ता रहा। दलित समाज में विकास के लिए काली जैसे विरोधी स्वरों की आवश्यकता है, जो अपने हक, सम्मान एवं अधिकार की माँग करना जानता है। ऐसे स्वरों से ही दलित चेतना का आविर्भाव संभव होता है।

निष्कर्ष :

उपन्यासकार जदगीश चंद्र का उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' एक समाज केंद्रित दलित उपन्यास है। उपन्यास में प्रस्तुत समाज का यथार्थ भारतीय समाज के वास्तविकता को दर्शाता है। समाज का दलित वर्ग के प्रति जो असल व्यवहार है, यह कथानक में स्पष्टता से देख सकते हैं। एक दलित परिवार की परिस्थितियाँ, गाँव में लोगों का जमीन से प्रेम, शिक्षा का महत्व, दो पीढ़ियों के बीच मतभेद, दलित वर्ग का संघर्ष, विद्रोह, चेतना तथा विकास पर लेखक ने विशेष दृष्टि दी है। काली जैसे पात्र द्वारा समाज में मजबूत दलित प्रतिनिधि की पहचान की गई है, जो अपने अधिकार के लिए अंत तक लगा रहता है और कुलतारसिंह जौहल जैसे पात्र द्वारा सरकारी क्षेत्र में भ्रष्ट लोगों की भी पहचान हुई है, जो हर तरफ से काम की आड़ में दूसरों को धोखा देते हैं। लेखक ने कुलतारसिंह जौहल जैसे पात्र के संबंध में लोगों को सजग किया है। काली का अपनी जमीन की माँग करना जैसे एक सशक्त स्वर का आरंभ है, जो दलित समाज के विकास का आधार होता है। काली जैसे पात्र समाज में दलित चेतना के मुख्य विषय-बिंदु हैं।

अत: निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि उपन्यास 'जमीन अपनी तो थी' में सामाजिक यथार्थ प्रस्तुत हुआ है एवं यहाँ दलित चेतना का आविर्भाव हुआ है। यहाँ समाज के लिए विकास का मार्ग दिखाया गया है। यह उपन्यास एक सजीव और सजग विषय पर आधारित एक सफल कृति है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. लाल, चमन, जगदीश चन्द्र : दलित जीवन के उपन्यासकार, प्रथम संस्करण, पंचकूला (हरियाणा) : आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2010, पृष्ठ. 8,
2. वही, पृष्ठ. 14, 15
3. वही, पृष्ठ. 15
4. वही, पृष्ठ. 22
5. वही, पृष्ठ. 22, 23
6. वही, पृष्ठ. 23
7. वही, पृष्ठ. 24
8. चंद्र, जगदीश, जमीन अपनी तो थी, प्रथम आधार संस्करण, पंचकुला (हरियाणा) : आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2013, पृष्ठ. 71
9. वही, पृष्ठ. 135
10. वही, पृष्ठ. 201
11. लाल, चमन, जगदीश चंद्र : दलित जीवन के उपन्यासकार, प्रथम संस्करण, पंचकूला (हरियाणा) : आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2010, पृष्ठ. 23,
12. वही, पृष्ठ. 24, 25

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

भाषा-तत्व

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास निरूपण

प्रभाकर सुयाल

शोधार्थी, संस्कृत विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
पत्ता : सी-33, विकास विहार
ककरोला मोड़, द्वारका सेक्टर-15
नई दिल्ली- 110078
9958564679
Psuyalvx@gmail.com

परस्पर व्यवहार के लिए मानव को ईश्वर द्वारा प्रदत्त सर्वोत्तम साधन भाषा है। संस्कृत इस विश्व की सबसे प्राचीन भाषा तथा सभी भाषाओं की जननी मानी जाती है। भाषा परिवर्तनशील है, व्याकरण भाषा को एकरूप में बांधने तथा साधु शब्दों के ज्ञान कराने का कार्य करती है। जैसा कि कहा गया है 'यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्। स्वजन: श्वजनो मा भूत सकलं शकलं सकृच्छकृच्च॥'[1] भारतीय ऋषि-महर्षियों ने इस विषय में चिंतन कर संस्कृत भाषा का यथा स्वरूप तथा शुद्धता बनाए रखने के लिए व्याकरण की रचना की, जिनमें आचार्य पाणिनि द्वारा रचित अष्टाध्यायी को सर्वाधिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। आचार्य पाणिनि से पूर्व तथा पश्चात भी कई व्याकरणों की रचना हुई, परंतु अष्टाध्यायी के समान प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं कर सके। यद्यपि वर्तमान युग में पाणिनीय व्याकरण ही सर्वांगपूर्ण और विद्वानों द्वारा समादृत है, परंतु पाणिनि की अद्‌भुत कृति में पूर्ववर्ती आचार्यों के योगदान को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

बीज शब्द :

व्याकरण, समास, अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुब्रीहि, द्वंद्व, व्यतिरेक, उत्तरवर्ती।

पाणिनीय अष्टाध्यायी : संस्कृत वाङ्गमय में व्याकरण परंपरा का अनुशीलन करते हुए एकाएक दृष्टि पाणिनीय अष्टाध्यायी पर ठहरती है। वस्तुत: आचार्य पाणिनि से पूर्व तथा उत्तर अनेक संस्कृत व्याकरणों की रचना हुई, परंतु पाणिनीय व्याकरण की सुव्यवस्थितता, सुनियोजितता, सुपाठ्यता, सुग्राह्यता और संपूर्णता के समक्ष पूर्व तथा परवर्ती व्याकरण पाणिनीय शब्दानुशासन के प्रकाश में उन्मीलित हो जाते हैं। पाणिनि के विषय में विद्वानों ने कहा है- काणादं पाणिनीयञ्च सर्वशास्त्रोपकरकम्।

त्रिमुनि व्याकरण : वाक्यकारं वररुचिं भाष्यकारं पतञ्जलिम्।
पाणिनिं सूत्रकारञ्च प्रणतोऽस्मि मुनत्रयम्॥

आचार्य पाणिनि ने अपने शब्दानुशासन में लगभग 4000 सूत्रों द्वारा संस्कृत भाषा के नियमन करने का प्रशंसनीय कार्य किया, परंतु भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण कालांतर में कुछ पदों को पाणिनीय परंपरा द्वारा सिद्ध करने में विद्वानों को किंचित काठिन्य का अनुभव हुआ, जिसके फलस्वरूप 500 ई.पू. आचार्य

कात्यायन ने पाणिनीय सूत्रों पर वार्तिक तथा 300 ई.पू. महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य की रचना कर पाणिनीय शब्दानुशासन को संपूर्णता तथा सुग्राह्यता प्रदान कर परिपुष्ट करने का कार्य किया।

कृतेऽथ पतञ्जलिना गुरुणा तीर्थदर्शिना।
सर्वेषाम् न्यायबीजानां महाभाष्ये निबन्धनम्॥

पाणिनीय उत्तरवर्ती व्याकरण :

महर्षि पाणिनि दर्शन के प्रमुख आचार्य हैं। इनका प्रभाव उत्तरवर्ती व्याकरणों पर प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। पठन-पाठन में पाणिनीय व्याकरण के प्रचलन होने पर भी कालांतर में संस्कृत व्याकरण को अधिक सरल, सुबोध विधि से जन-सामान्य को समझाने के लिए अनेक विद्वानों ने स्व-ग्रंथों की रचना की। ये सभी ग्रंथ सूत्र शैली तथा लौकिक भाषा में रचे गए। कालांतर में स्वर तथा वैदिक प्रक्रियाओं में व्यापक चिंतन के अभाव होने के कारण उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में वैदिक विषयों की विवेचना का अभाव मिलता है। उत्तरवर्ती व्याकरणों की रचना का मुख्य प्रयोजन पाणिनि व्याकरण में व्याप्त जटिलता को दूर कर उसे सरल बनाने का रहा है। पाणिनीय उत्तरवर्ती व्याकरण ग्रंथ जैन तथा बौद्ध संप्रदायों से प्रभावित होकर रचे गए हैं। पाणिनीय परवर्ती मुख्य व्याकरण संप्रदाय इस प्रकार है-

कातन्त्र व्याकरण - कातन्त्र व्याकरण की रचना का समय ईसा की प्रथम शताब्दी के लगभग माना गया है। इस व्याकरण के रचयिता शर्ववर्मा है। कातन्त्र का प्रक्रिया क्रम इस प्रकार विभाजित है- संधि, नामचतुष्टय आख्यात तथा कृत्। यह ग्रंथ 1400 सूत्रों में निबद्ध है। यह व्याकरण बंगाल तथा कश्मीर में अधिक प्रचलित हुआ।

चान्द्र व्याकरण - आचार्य चन्द्रगोमिन् ने पाणिनीय शब्दानुशासन तथा महाभाष्य को आधार बनाकर पाँचवीं शताब्दी में संक्षिप्त व सुव्यवस्थित ग्रंथ चान्द्र व्याकरण की रचना की। इस ग्रंथ में लगभग 3100 सूत्र हैं, जिन्हें 6 अध्यायों में विभक्त किया गया है। अष्टाध्यायी के समान ही प्रत्येक अध्याय को 4 पादों में विभक्त किया गया है।

जैनेन्द्र व्याकरण - पाणिनीय रचना शैली को आधार मानकर जैन संप्रदाय के आचार्य देवनन्दि द्वारा छठी शताब्दी के पूर्वार्ध में रचा गया व्याकरण ग्रंथ है। यह व्याकरण चान्द्र व्याकरण से भी प्रभावित मिलता है। इस ग्रंथ में 3700 सूत्र प्राप्त होते है, जिन्हें 5 अध्यायों में विभक्त किया गया है तथा प्रत्येक अध्याय को 4 पादों में विभक्त किया गया है।

शाकटायन व्याकरण - जैनाचार्य पाल्यकीर्ति द्वारा शाकटायन व्याकरण की रचना नवीं शताब्दी में की गई। शाकटायन व्याकरण में कुल 3236 सूत्र रचे गए हैं, जिन्हें चार अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद हैं। पाणिनीय से शाकटायन की शब्दसिद्धि प्रक्रिया भिन्न है।

सरस्वतीकण्ठाभरण - पाणिनीय एवं चान्द्र व्याकरण को आधार मानकर ग्यारहवीं शताब्दी में आचार्य भोज द्वारा लिखा गया व्याकरण ग्रंथ है। भोज ने सूत्र रचना व प्रकरण विभाजन के लिए पाणिनि व्याकरण की अपेक्षा चान्द्र व्याकरण का आश्रय लिया है। यह ग्रंथ आठ अध्यायों में विभक्त है तथा प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद हैं। इसके सात अध्यायों में लौकिक व आठवें अध्याय में वैदिक पाठ मिलता है। इस ग्रंथ में 6411 सूत्र प्राप्त होते हैं।

सिद्धहेमशब्दानुशासन - आचार्य हेमचन्द्र द्वारा रचित व्याकरण जैन संप्रदाय के आचार्यों द्वारा रचित सर्वोत्तम व्याकरण है। ग्याहरवी शाताब्दी में लिखे गए इस ग्रंथ में संस्कृत एवं प्राकृत दोनों भाषाओं के व्याकरण हैं। इसमें कुल 4685 सूत्र हैं, जिन्हे आठ अध्यायों में विभक्त किया गया है। सात अध्यायों में संस्कृत भाषा व आठवें अध्याय में प्राकृत भाषा का अध्याय है।

मुग्धबोध व्याकरण - तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बोपदेव द्वारा विरचित व्याकरण ग्रंथ है। कातन्त्र व्याकरण के समान ही बोपदेव ने संक्षिप्त शिक्षण की दृष्टि से अपना स्वतंत्र व्याकरण ग्रंथ लिखा है। प्रक्रिया शैली में लिखे इस ग्रंथ में कुल 1184 सूत्र हैं।

सारस्वत व्याकरण - चौदहवीं शताब्दी में रचित व्याकरण ग्रंथ है। सारस्वत व्याकरण का मूलरूप आचार्य नरेन्द्र द्वारा रचित माना जाता है तथा अनुभूतिस्वरूपाचार्य को सारस्वत प्रक्रिया का कर्ता कहा जाता है। इस व्याकरण ग्रंथ को केवल 700 सूत्रों में निबद्ध किया गया है।

सुपद्म व्याकरण : चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में

आचार्य पद्मनाभदत्त ने सुपद्म व्याकरण ग्रंथ लिखा। यह एक प्रक्रिया ग्रंथ है, जिसे पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है। आचार्य पद्मनाभदत्त ने अष्टाध्यायी के प्रत्ययाहारों, पारिभाषिक शब्दों तथा अनेक सूत्रों का यथावत ग्रहण कर प्रयोग किया है।

हरिनामामृत व्याकरण – जीवगोस्वामी द्वारा सोलहवीं शताब्दी में रचा गया कृष्ण भक्तिपरक व्याकरण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में अनेक सूत्रों, संज्ञाओं, उदाहरणों को भगवान के नाम पर रख प्रस्तुत किया गया है। भक्ति से ओत-प्रोत होने के कारण एकमत को लेकर चलने वाला होने से यह मतवादी संप्रदाय है।

उत्तरपाणिनीय व्याकरणों का कालक्रम इस प्रकार है –

व्याकरण-ग्रंथ	व्याकरण-प्रकार	व्याकरण-कर्ता	काल
कातन्त्र	प्रक्रिया-ग्रंथ	शववर्मा	प्रथम शताब्दी
चान्द्र	प्रकरण-ग्रंथ	चन्द्रगोमिन्	5वीं शताब्दी
जैनेन्द्र	प्रकरण-ग्रंथ	देवनन्दि	525 ई.
शाकटायन	प्रकरण-ग्रंथ	पाल्यकीर्ति	9वीं शताब्दी
सरस्वतीकण्ठाभरण	प्रक्रिया-ग्रंथ	भोज	11वीं शताब्दी
सिद्धहेमशब्दानुशासन	प्रक्रिया-ग्रंथ	हेमचन्द्रसूरि	11वीं शताब्दी
मुग्धबोध	प्रक्रिया-ग्रंथ	बोपदेव	13वीं शताब्दी
सारस्वत	प्रक्रिया-ग्रंथ	अनुभूतिस्वरूपाचार्य	14वीं शताब्दी
सुपद्म	प्रक्रिया-ग्रंथ	पद्मनाभदत्त	14वीं शताब्दी
हरिनामामृत	प्रक्रिया-ग्रंथ	जीवगोस्वामी	16वीं शताब्दी

समास परिचय – समर्थ साकाङ्क्ष दो या दो से अधिक पद जिस प्रक्रिया विशेष से परस्पर एकपद हो, वह समास प्रक्रिया है। एक पद का दूसरे पद के साथ समस्त होना पद-विधि है।[2] विधि उन्हीं पदों की होती है, जिनका परस्पर सामर्थ्य होता है अर्थात जिन्में परस्पर समस्त होने की योग्यता होती है।[3] सामर्थ्य दो प्रकार का होता है- 1.व्यपेक्षा और 2. एकार्थीभाव।

1. व्यपेक्षा – व्यपेक्षा सामर्थ्य में पदों का आकाङ्क्षा4, योग्यता[5] और सन्निधि[6] के कारण परस्पर संबंध होता है। यथा- राज्ञः पुरुषः।

2. एकार्थीभाव – एकार्थीभाव में भिन्न-भिन्न पदों की एकार्थ में एकपद रूप में उपस्थिति होती है। एकार्थीभाव समस्त पदों में पाया जाता है। यथा- राजपुरुषः।

आचार्य पाणिनि ने अष्टाध्यायी के दूसरे अध्याय के पहले पाद के तीसरे सूत्र 'प्राक्कडारात्समासः' से दूसरे अध्याय के दूसरे पाद के अड़तीसवें सूत्र 'कडाराः कर्मधारये' तक 110 सूत्रों में समास विधान करने वाले विशेष नियमों का उल्लेख किया है। 'समास' शब्द की निष्पत्ति 'सम् उपसर्ग' पूर्वक 'असु क्षेपणे' धातु से 'घञ् प्रत्यय' करने पर होती है। 'नाम्नामन्वये सति समासः' अर्थात् प्रथमादि विभक्त्यन्त पदों का परस्पर अन्वय जिस विधि से होता है, वह समास विधि कहलाती है। सिद्धान्त चन्द्रिका की सुबोधिनी टीका में समास पद का विग्रह इस प्रकार है-

''सामानि एकभूतानि पदानि अर्था वाऽसते यस्मिन्स समासः। आस उपवेशने अस्मादाधारे घञ्। सममेकमर्थमासन्यति दीपयन्त्यस्मिन्समुदाये इति वा समासः। अस् दीप्तौ। व्यंतादस्मात्स्वरादित्याधारेऽप्रत्ययः। संश्लिष्टानि एकीभूतानि पदानि अस्यन्ते उच्चार्यन्तेऽस्मिन्निति वा समासः। आधारे घञ् । समानां संश्लिष्टानां पदानामेकतामापन्नानामासनमुच्चारणमिति वा समासाः। भावे घञ्। समसनं समासो वा। सम्पूर्वकादास्यतेर्भावे घञ्। अनेकस्य पदस्यैकपदिभवनमित्यर्थः समस्यते इति वा समासः। अकर्तरि च कारके संज्ञायामिति कर्मणि घञ् ।''[7]

पाणिनीय व्याकरण ग्रंथों में आचार्यों के दिए समास के भिन्न-भिन्न लक्षण प्राप्त होते हैं। ग्रंथों में भिन्न लक्षण होने पर भी सभी का तात्पर्य समान ही प्रतीत होता है।

पाणिनीय व्याकरण ग्रंथों में प्राप्त समास लक्षण –

- समासाधिकारपठितत्वं समासत्वम्।
- समसनं समासः। अनेकेषु पदेषु ऐक्यसम्पादनमिति।
- संक्षेपणं समासः। समस्यते अनेकं पदमिति समासः।
- अनेकपदस्यैकीभवनं समासः।
- यस्मिन् समुदाये पदद्वयं समस्यते स समासः।
- संक्षेपीकरणं समासः। समसनं संक्षेपीकरणमिति।
- समासहारः समासः।
- पृथगर्थानामेकार्थीभावः समर्थवचनमिति।

उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में प्राप्त समास लक्षण –

- नाम्नां युक्तार्थः समासो भवति।
- पृथगर्थानामेकार्थीभावः समास इत्युच्यते।
- परस्परापेक्षयोः पूर्वोत्तरपदयोः एकत्वेन न्यसनं समासः।
- एकार्थीभावः समासः।

- ऐकपद्यं समासः।
- अनेकपदस्यैकपदत्वं समासः।
- समसनं पदयोः पदानां वैकपदिकरणं समासः।
- द्वयोर्बहूनां वा दानामैक्यं समासः।
- अन्तर्भिन्नपदत्वेऽप्येकनामत्वेन योजनं समासः।

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास संबंधी संज्ञाएँ :

उत्तरपाणिनीय व्याकरण सम्प्रदायों में कुछ वैयाकरणों ने पाणिनीय अष्टाध्यायी में प्रयुक्त समास संज्ञाओं का यथावत ग्रहण किया है तथा कुछ वैयाकरणों ने पाणिनि की अपेक्षा लघ्वक्षरी संज्ञाओं का प्रयोग किया है, जिसके फलस्वरूप उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास संज्ञाओं में पाणिनीय समास संज्ञाओं से व्यतिरेक मिलता है ।

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में अव्ययीभाव समास संज्ञा विधायक सूत्र –

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरण	*अव्ययीभाव समास संज्ञा विधायक सूत्र*
पाणिनीय	अव्ययीभावः 2.1.5
कातन्त्र	पूर्वं वाच्यं भवेद्यस्य सोऽव्ययीभावः इष्यते 2.5.14
चान्द्र	
जैनेन्द्र	ह संज्ञा – हः 1.3.4
शाकटायन	मिथोग्रहणे प्रहरणे च सरूपं सुद्धेऽव्ययीभावः 2.1.6
सरस्वतीकण्ठाभरण	अव्ययीभावः 3.1.8
सिद्धहेमशब्दानुशासन	तत्रादाय मिथस्तेन प्रहृत्येति सरुपेण युद्धेऽव्ययीभावः 3.1.26
मुग्धबोध	वः भिन्नान्यैकार्थं द्वयादिसङ्ख्याव्यादीनां च-ह-य-ष-ग-वाः 318
सारस्वत	पूर्वेऽव्ययेऽव्ययीभावः 18.2
सुपद्म	अव्ययीभावः 4.3.3
हरिनामामृत	अव्ययीभावः 6.2.151

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में तत्पुरुष समास संज्ञा विधायक सूत्र –

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरण	*समास संज्ञा विधायक सूत्र*
पाणिनीय	तत्पुरुषः 2.1.22
कातन्त्र	विभक्तयो द्वितीयाद्या नाम्ना परपदेन तु समास्यन्ते समासो हि ज्ञेयस्तत्पुरुषः स च 2.5.8
चान्द्र	
जैनेन्द्र	षम् 1.3.19
शाकटायन	तदुस्वत्याङ्कवन्यस्तत्पुरुषः 2.1.20
सरस्वतीकण्ठाभरण	तत्पुरुषः 3.2.33
सिद्धहेमशब्दानुशासन	गतिक्रन्यस्तत्पुरुषः 3.1.42
मुग्धबोध	वः भिन्नान्यैकार्थं द्वयादिसङ्ख्याव्यादीनां
	च-ह-य-ष-ग-वाः 318
सारस्वत	अमादौ तत्पुरुषः 18.11
सुपद्म	तत्पुरुषः 4.3.16
हरिनामामृत	पीताम्बरात् प्राक् समासाः कृष्णपुरुषसंज्ञाः 6.2.8

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में कर्मधारय समास संज्ञा विधायक सूत्र –

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरण	*कर्मधारय समास संज्ञा विधायक सूत्र*
पाणिनीय	तत्पुरुषः सामानाधिकरणः कर्मधारयः 1.2.42
कातन्त्र	पदे तुल्याधिकरणे विज्ञेयः कर्मधारयः 2.5.5
चान्द्र	विशेषणमेकार्थेन 2.2.18
जैनेन्द्र	पूर्व कालैकसर्वजरत्पुराणनवकेवलं यश्चैकाश्रये 1.3.44
शाकटायन	विशेषणं व्यभिचार्येकार्थे कर्मधारयश्च 2.1.58
सरस्वतीकण्ठाभरण	
सिद्धहेमशब्दानुशासन	विशेषणं विशेष्येनैकार्थं कर्मधारयश्च 3.1.99
मुग्धबोध	विशेषणं विशेष्येनैकार्थं कर्मधारयश्च 318
सारस्वत	कर्मधारयस्तुल्यार्थे 18.25
सुपद्म	विशेषणमेकार्थेन कर्मधारयो बहुलम् 4.3.48
हरिनामामृत	तेष्वयं श्यामरामसंज्ञः 6.2.9

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में द्विगु समास संज्ञा विधायक सूत्र-

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरण	*द्विगु समास संज्ञा विधायक सूत्र*
पाणिनीय	सङ्ख्यापूर्वो द्विगु: 2.1.52
कातन्त्र	सङ्ख्यापूर्वोद्विगुरिति ज्ञेय: 2.5.6
चान्द्र	सङ्ख्यादि समाहारे 2.2.76
जैनेन्द्र	सङ्ख्यादी रश्च 1.3.47
शाकटायन	सङ्ख्या समाहारे च द्विगुश्चानाम्ययम्
सरस्वतीकण्ठाभरण	
सिद्धहेमशब्दानुशासन	सङ्ख्या समाहारे च द्विगुश्चानाम्ययम् 3.1.99
मुग्धबोध	व: भिन्नान्यैकार्थं द्वयादिसङ्ख्याव्यादीनां च-ह-य-ष-ग-वा: 318
सारस्वत	सङ्ख्यापूर्वो द्विगु: 18.17
सुपद्म	द्विगु सङ्ख्यातद्धितार्थ समाहारयो: 4.3.71
हरिनामामृत	सङ्ख्यापूर्वोऽसौ त्रिरामीसंज्ञ: 6.2.48

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में बहुब्रीहि समास संज्ञा विधायक सूत्र-

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरण	*बहुब्रीहि समास संज्ञा विधायक सूत्र*
पाणिनीय	अनेकमन्यपदार्थे 2.2.24
कातन्त्र	स्यातां यदि पदे द्वे तु यदि वा स्युर्बहुन्यपि तान्यन्यस्य पदस्यार्थे बहुव्रीहि: विदिक् तथा 2.1.9
चान्द्र	अनेकमन्यार्थे 2.2.46
जैनेन्द्र	अन्यपदार्थेऽनेकमं बम् 1.3.76
शाकटायन	सुज्वार्थे सङ्ख्या सङ्ख्यया सङ्ख्ययेये बहुव्रीहि: 2.1.2
सरस्वतीकण्ठाभरण	
सिद्धहेमशब्दानुशासन	सुज्वार्थे सङ्ख्या सङ्ख्येये सङ्ख्याया बहुव्रीहि: 3.1.19
मुग्धबोध	व: भिन्नान्यैकार्थं द्वयादिसङ्ख्याव्यादीनां च-ह-य-ष-ग-वा: 318
सारस्वत	बहुव्रीहिरन्यार्थे 18.19
सुपद्म	अनेकमन्यार्थे बहुव्रीहि: 4.3.72
हरिनामामृत	अनेकमन्ये पदार्थे पीताम्बर: 6.2.102

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में द्वन्द्व समास संज्ञा विधायक सूत्र-

पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरण	*द्वन्द्व समास संज्ञा विधायक सूत्र*
पाणिनीय	चार्थे द्वन्द्व: 2.2.29
कातन्त्र	द्वन्द्व समुच्चयो नाम्नोर्बहूनां वापि यो भवेत् 2.5.11
चान्द्र	चार्थे 2.248
जैनेन्द्र	चार्थे द्वन्द्व: 1.3.92
शाकटायन	द्वन्द्व सहोक्तौ 2.1.80
सरस्वतीकण्ठाभरण	चार्थे युगपदधिकरणवचनतायां द्वन्द्व: 3.3.19
सिद्धहेमशब्दानुशासन	चार्थे द्वन्द्व: सहोक्तौ 3.1.117
मुग्धबोध	व: भिन्नान्यैकार्थं द्वयादिसङ्ख्याव्यादीनां च-ह-य-ष-ग-वा: 318
सारस्वत	चार्थे द्वन्द्व: 18.15
सुपद्म	चार्थे द्वन्द्व: 4.3.77
हरिनामामृत	इतरेतरयोग-समाहारयो: रामकृष्ण: 6.2.117

उत्तरपाणिनीय व्याकरणों मे समास के भेद :

कातन्त्र व्याकरण में समास भेद - कातन्त्र व्याकरणकार ने समास के चार भेद स्वीकार किए हैं तथा कर्मधारय और द्विगु समास को तत्पुरुष का भेद स्वीकार किया है, यथा-

'स चतुर्विध:। तत्पुरुषबहुव्रीहिद्वन्द्वाव्ययीभावभेदात्। पुनरुत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुष:। अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहि:। सर्वपदार्थप्रधानो द्वन्द्व:। पूर्वाव्ययपदार्थप्रधानोऽव्ययीभाव:।'

चान्द्र व्याकरण में समास भेद - चान्द्र व्याकरण में समास के चार भेद माने गएँ और कर्मधारय तथा द्विगु को तत्पुरुष का भेद माना गया है।

जैनेन्द्र व्याकरण में समास भेद - जैनेन्द्र व्याकरण में समास के चार भेद माने गए हैं तथा पाणिनीय व्याकरण में प्रयुक्त समास संज्ञाओं से भिन्न समास की लघु संज्ञा प्रयुक्त की है। यथा अव्ययीभाव के स्थान पर 'व', तत्पुरुष

समास के स्थान 'षम्', कार्मधारय समास के स्थान 'य', द्विगु समास के स्थान 'र' तथा बहुव्रीहि समास के स्थान 'बम्' लघु संज्ञा का प्रयोग किया है। आचार्य देवनन्दि ने य स तथा र स को षम् स के अंतर्गत ही माना है।

शाकटायन व्याकरण में समास भेद - आचार्य शाकटायन ने समास के चार भेद माने हैं और कर्मधारय समास को तत्पुरुष समास का भेद तथा द्विगु समास को कर्मधारय समास का भेद माना है। आचार्य शाकटायन नें पहले बहुव्रीहि समास का निरुपण कर समासों के पाणिनीय परम्परागत क्रम को भंग किया है। स च षोढा। बहुव्रीहिरव्ययीभावस्तत्पुरुषः कर्मधारयो द्विगुर्द्वन्द्वश्चेति। तत्र बहुव्रीहिस्त्रिधा-उत्तरपदार्थप्रधानः, उभयपदार्थप्रधानः, अन्यपदार्थप्रधानश्चेति। उतरपदार्थप्रधानो यथा- द्विदशाः पुमान्। उभयपदार्थप्रधानो यथा- द्वित्राः पुरुषाः। अन्यपदार्थप्रधानो यथा- उपविंशाः

सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण में समास के भेद - आचार्य भोज ने समास के चार भेद माने हैं तथा सूत्रों के माध्यम से समास के लक्षण दर्शाए हैं, यथा-

प्रायेणपूर्वपदार्थप्रधानोऽव्ययीभावः ।
उत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः। अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः। उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः।

सिद्धहेमशब्दानुशासन में समास के भेद - आचार्य हेम ने शाकटायन व्याकरण का अनुसरण कर समास के भेद स्वीकार किए हैं तथा समास का क्रम भी शाकटायन व्याकरण के अनुसार ही रखा है।

मुग्धबोध व्याकरण में समास भेद - मुग्धबोध व्याकरण में समास के चार भेद माने गए हैं तथा पाणिनीय व्याकरण में प्रयुक्त समास संज्ञाओं से भिन्न समास की लघु संज्ञा प्रयुक्त की है। यथा द्वन्द्व समास के लिए 'च', बहुव्रीहि समास के लिए 'ह' कार्मधारय समास के लिए 'य', तत्पुरुष समास के लिए 'ष', द्विगु समास के लिए 'ग', तथा अव्ययीभाव के स्थान पर 'व' लघु संज्ञा का प्रयोग किया है। 'स च चतुर्धा। सर्वदार्थप्रधानः, सर्वदार्थाप्रधानः, उत्तरदार्थप्रधानः, पूर्वपदार्थप्रधानः।'

'भिन्नार्थानां दानां सश्चसंज्ञः, अन्यर्थानां दानां हसंज्ञः, एकार्थानां दानां यसंज्ञः, द्वयादिक्त्यन्तपूर्वदानां षसंज्ञः, संख्यापूर्वदानां गसंज्ञः, व्यपूर्वदानां व संज्ञः'

सारस्वत व्याकरण में समास भेद - अनुभूति स्वरूपाचार्य ने समास के छह भेद माने हैं- 'स च षड्विधः। अव्ययीभावस्तत्पुरुषो द्वन्द्वो बहुव्रीहिकर्मधार्यो द्विगुश्चेति। तत्र पूर्वपदप्रधानोऽव्ययीभावः। द्विगुतत्पुरुषौ परपदार्थप्रधानौ। द्वन्द्वकर्मधारयौ चोभयपदार्थप्रधानौ। बहुव्रीहिरन्यपार्थप्रधानः।' सारस्वत व्याकरणकार ने कर्मधारय समास में दो पदों की तुल्यार्थता को मानते हुए तथा द्विगु समास में संख्यावाचक पूर्वपद पदार्थ अथवा समाहार अर्थ को मानते हुए कर्मधारय समास तथा द्विगु समास को तत्पुरुष समास से भिन्न कर दिया है।

सुपद्मव्याकरण में समास भेद - सुपद्म व्याकरण में समास के छह भेद माने गए हैं तथा कर्मधारय समास व द्विगु समास को तत्पुरुष का भेद नहीं माना गया है।

हरिनामामृत व्याकरण में समास भेद - आचार्य जीवगोस्वामी ने समास के छह भेद स्वीकार किए हैं तथा पाणिनीय व्याकरण में प्रयुक्त समास संज्ञाओं से भिन्न समास संज्ञा प्रयुक्त की है। यथा कार्मधारय समास के लिए 'श्यामराम', द्विगु समास के लिए 'त्रिरामी', तत्पुरुष समास के लिए 'कृष्णपुरुष', बहुव्रीहि समास के लिए 'पीताम्बर' तथा द्वन्द्व समास के लिए 'कृष्णपुरुष' संज्ञा का प्रयोग किया है। 'तत्र श्यामरामकर्मधारयौ, त्रिरामीद्विगु, कृष्णपुरुषतत्पुरुषौ, पीताम्बरबहुव्रीही, रामकृष्णद्वन्द्वौ, समानार्थी ज्ञेयौ अव्ययीभावस्तु षष्ठः।' आचार्य जीवगोस्वामी ने श्यामराम समास तथा त्रिरामी समास का कृष्णपुरुष समास में परिगणन किया है

अवलोकनीय है कि पाणिनीय ने जिस क्रम में समास व्यवस्था की है उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में उस क्रम का व्यतिरेक भी देखने को मिलता है तथा किन्हीं व्याकरणों में भिन्न समास सज्ञाएँ प्राप्त होती हैं।

निष्कर्ष : भाषा परिवर्तनशील है, व्याकरण भाषा को एकरूप में बांधने तथा साधु शब्दों के ज्ञान कराने का कार्य करती है। विशेषतः संस्कृत भाषा की तो आत्मा ही व्याकरण है। अनेक वैयाकरणों ने संस्कृत व्याकरण रचकर भाषा की शुद्धता और सौंदर्य को यथावत बनाए रखने का सुंदर प्रयास किया है, जिनमें पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि का त्रिमुनि व्याकरण सर्वाधिक सम्मानित हुआ। उत्तरवर्ती

वैयाकरणों ने जन सामान्य को समास में होने वाली क्लिष्टता को दूर कर व्याकरण को सरल और सुगम बनाकर व्याकरण संबंधी तथ्यों को स्पष्ट किया है तथा पाणिनि की अपेक्षा सूत्रों को सरल बनाकर रूप सिद्धि की प्रक्रिया को सरल बनाया है। उत्तरवर्ती व्याकरणों ने कालक्रम से भाषा में प्रयुक्त नवीन शब्दों व अर्थों को व्याकरण की दृष्टि से नियमबद्ध करने का श्लाघनीय प्रयास किया है, जिससे व्याकरण के अध्येताओं को नवीन दृष्टि प्राप्ता होती है। ❑

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. आचार्य डॉ. सुदर्शनदेव, पाणिनीय अष्टाध्यायी प्रवचनम्, संस्कृत सेवा संस्थान, रोहतक : 2000
2. जिज्ञासु ब्रह्मदत्त, अष्टाध्यायी-भाष्य प्रथमावृत्ति, रामलालकपूर ट्रष्ट, रेवली : 2011
3. जीवगोस्वामी, सं. तीर्थस्वामी, हरिनामामृतव्याकरण, श्रीचैतन्य रिसर्च इन्स्टीट्यूट, कलकत्ता : 1972
4. सं. शास्त्री श्रीगुरुप्रसाद, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी,, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी : 2012
5. आचार्य श्रीमद् शर्ववर्म, कातन्त्र रूपमाला, दिगम्बर जैन त्रोलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर, मेरठ, संस्करण- 2 : 1992
6. चन्द्रगोमिन्, चान्द्र व्याकरण भाग- 1, चटर्जी के.सी., डेक्कन कॉलेज, पूना : 1953
7. सं. त्रिपाठी पं. शम्भुनाथ, जैनेन्द्र व्याकरण (अभयनन्दि कृत जैनेन्द्र महावृत्ति सहित) देवनन्दि, भारतीय ज्ञानपीठ काशी, प्रथम संस्करण: 1956
8. सं. त्रिपाठी पं. शम्भूनाथ, शाकटायन व्याकरण, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन : 1973
9. आचार्य भोजदेव, सरस्वतीकण्ठाभरणम् (हृदयहारिणि वृत्ति सहित), संशोधित शास्त्रि के. शाम्बशिव, राजकीय मुद्रण यंत्रालय : 1938
10. श्रीमदनुभूतिस्वरूपाचार्य, सारस्वत व्याकरण, चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पंचम संस्करण : 1982
11. हेमचन्द्राचार्य, श्रीसिद्धहेमचन्द्रशब्दानुशासन, श्रीजैन श्राविका संघ, राजस्थान
12. बोपदेव, मुग्धबोध व्याकरण, प्रकाशन भट्टाचार्य जीवानन्द विद्यासागर, सिद्धेश्वर यंत्रालय, द्वितीय संस्करण : 1902
13. भट्टोजिदीक्षित, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी - समासप्रकरणम्, आ. जगदीश शास्त्री एवं श्रीमती मधुबाला शर्मा, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण : 1979
14. भट्टोजिदीक्षित, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी (बालमनोरमा टीका), पाण्डेय गोपालदत्त, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी : 2007
15. पद्मनाभदत्त, सुपद्म व्याकरण, सं. सैनी डा. आर.एस., भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण: 1989
16. मीमांसक युधिष्ठिर, संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास - भाग 2, रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत : 1994
17. ग्रोवर डा. शन्नो, उत्तरपाणिनीय व्याकरण सम्प्रदायों में भाषा दर्शन, अभिषेक प्रकाशन, दिल्ली : 2017
18. उपाध्याय बलदेव, संस्कृत शास्त्रों का इतिहास, चौखम्बा, विद्याभवन : 2006

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অনুবাদ তত্ত্ব : ভাষিক আৰু যোগাযোগমূলক দৃষ্টিভঙ্গী

ড° হিমাদ্রী শইকীয়া

সহকাৰী অধ্যাপক
মাজুলী সাংস্কৃতিক বিশ্ববিদ্যালয়
চিতাদাৰচুক, গড়মুৰ
মাজুলী -৭৮৫১০৪, অসম
৯৭৬৫২২১১৭২
himadrispanish@gmail.com

প্রস্তাৱনা ঃ

অনুবাদ এক অতিশয় জটিল কার্য্য। ভাষাৰ বৈচিত্রপূর্ণ পৃথিৱীখনত অনুবাদ প্রক্রিয়াই বিশ্বভাতৃত্ববোধৰ ধাৰণাক মূর্তৰূপ প্রদান কৰাত অতিজৰে পৰা অৰিহণা যোগাই আহিছে। অনুবাদ মৌলিক কৃতি নহয়। এই কার্য্যৰ দ্বাৰা এটা ভাষাত ৰচিত বা লিখিত কোনো সামগ্রীৰ ৰূপান্তৰণ আন এটা ভাষাত কৰা হয়। সেয়েহে অনুবাদ মৌলিক ৰচনাতকৈ অধিক দুৰুহ, কাৰণ মৌলিক ৰচনাৰ ক্ষেত্রত লিখকে বিচৰাধৰণেৰে কৃতি এখনৰ ৰচনা কৰিব পাৰে। কিন্তু অনুবাদকৰ ক্ষেত্রত এনে স্বাধীনতা নাথাকে। মূল লিখকৰ অভিব্যক্তিখিনিক আন এটা ভাষাত উপস্থাপন কৰোতে বিভিন্ন নিয়ন্ত্রণৰ সন্মুখিন হ'ব লগা হয়। এই নিয়ন্ত্রণসমূহ অতিক্রম কৰি আন এটা ভাষাত পাঠ এখন প্রস্তুত কৰিবলৈ কেনে ৰণনীতি অৱলম্বণ কৰিব লাগে সেই সম্পর্কে অনুবাদবিদসকলে অতিজৰে পৰাই চিন্তা-চর্চা কৰি আহিছে যাৰ ফলস্বৰূপে বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন ধৰণৰ অনুবাদ তত্বসমূহে বিকাশ লাভ কৰিছে আৰু অনুবাদ এক শিক্ষণৰ বিষয় হিচাপে অগ্রসৰ হৈছে। এই লেখাটোত অনুবাদৰ প্রকৃতি তথা অনুবাদ তত্বসমূহৰ বিকাশৰ ধাৰা সম্পর্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

অনুবাদ, বর্ণনাত্মক অনুবাদ, যোগাযোগমূলক অনুবাদ, অভিযোজন, মডুলেচন, শ্বিফ্ট

১.০ বিষয় পৰিচয় ঃ

'অনুবাদ' সংস্কৃত ভাষাৰ শব্দ যদিও সংস্কৃত ভাষাত এই শব্দৰ অর্থ আৰু বর্তমান আমি যি অর্থত অনুবাদ শব্দৰ ব্যৱহাৰ কৰোঁ তাৰ মাজত পার্থক্য থকা দেখা যায়। প্রাচীন ভাৰতত গুৰু-শিষ্যৰ পৰম্পৰা অনুসৰি গুৰুৱে মন্ত্রসমূহৰ উচ্চাৰণ কৰিছিল আৰু পিছে পিছে শিষ্যসকলে সেই মন্ত্র আওৰাইছিল। এই প্রক্রিয়াটোৰ বাবে 'অনুৱদতি' বুলি শব্দৰ প্রচলন আছিল কিন্তু পিছলৈ ইংৰাজী 'Translation' শব্দৰ সমার্থক ৰূপত অসমীয়া, হিন্দী আদি বিভিন্ন ভাৰতীয় ভাষাত 'অনুবাদ' শব্দৰ ব্যৱহাৰ হয়। বিভিন্ন সময়ত অনুবাদ কার্য্যক এক গৌন বিধা হিচাপে গন্য কৰা হয় যদিও ব্যৱহাৰিক পটভূমিত অনুবাদ এক অত্যন্ত জটিল প্রক্রিয়া। সেয়েহে ভাৰতৰ প্রথম ৰাষ্ট্রপতি ড° ৰাজেন্দ্র প্রসাদদেৱে মত পোষণ কৰিছিল যে 'মৌলিক লিখন সহজ কিন্তু অনুবাদ অধিক জটিল'। এক শ্বতন্ত্র অনুশাসন হিচাপে শিকন-শিক্ষণৰ ক্ষেত্রখনত অনুবাদ যদিও বেছি পুৰণি নহয় কিন্তু বাস্তৰিক প্রেক্ষাপটত অনুবাদ মানুহৰ বিকাশ প্রক্রিয়াৰ লগে-লগেই মানুহৰ

সহচৰ হৈ পৰা এক প্ৰক্ৰিয়া। সভ্য মানব জগতত ধৰ্ম, সাহিত্য, ব্যৱসায় ইত্যাদিৰ প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰৰ প্ৰয়োজনতেই অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ ব্যাপক প্ৰয়োগ আৰম্ভ হবলৈ লয় আৰু কালক্ৰমত প্ৰশাসনিক দিশৰ ফালৰ পৰাও এই বিধাই অধিক গুৰুত্ব লাভ কৰে। অনুবাদৰ ভাৰতীয় ইতিহাসলৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে ব্যৱসায় সূত্ৰে ভাৰতলৈ আগমন ঘটা আৰব সকলে বিভিন্ন সংস্কৃত গ্ৰন্থৰ অনুবাদ আৰবী ভাষালৈ কৰি লৈ গৈছিল। তাৰ ভিতৰত ভাৰতীয় গণিত শাস্ত্ৰৰ কথা বিশেষভাৱে উল্লেখ কৰিব পাৰি। তাৰোপৰি বৌদ্ধধৰ্মৰ বিভিন্ন গ্ৰন্থৰাজি চীনা ভাষালৈ অনুবাদ কৰা হয়। পশ্চিমীয়া দেশসমূহত বাইবেল অনুবাদৰ পৰা আৰম্ভ কৰি আন আন সাহিত্যিক তথা দাৰ্শনিক সাহিত্যসমূহৰ অনুবাদ আৰম্ভ হয়। লগে লগেই অনুবাদ কাৰ্য্যত সন্মুখিন হোৱা বিভিন্ন সমস্যা আৰু তাৰ সমাধানৰ ক্ষেত্ৰত চিন্তা-চৰ্চা আৰম্ভ হয়। ফলস্বৰূপে অনুবাদৰ বিভিন্ন তত্বসমূহে বিকাশ লাভ কৰে।

অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াত অনুবাদকে উৎস ভাষাৰ মূল গাঁথনিক লক্ষ্য ভাষাৰ মূল গাঁথনিলৈ ৰূপান্তৰিত কৰে। এই ৰূপান্তৰণ বা প্ৰতিস্থাপন সদায় বীজ বাক্যৰ একেবাৰে সমাৰ্থক হোৱাকৈ কৰিবলৈ যত্ন কৰা হয়। এনেধৰণেৰে অনুবাদ কৰিলে মূল বাক্যৰ অৰ্থৰ বেছি হেৰফেৰ হোৱাৰ সম্ভাৱনা যথেষ্ট হ্ৰাস পায়। বীজ স্তৰত উৎস ভাষা আৰু লক্ষ্য ভাষাৰ সাম্যতা অধিক থকা দেখা যায়। অনুবাদত যি প্ৰতিস্থাপন কৰা হয় তাত মূলতঃ অৰ্থৰ প্ৰতিস্থাপনৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া হয়। এই প্ৰক্ৰিয়াত লক্ষ্য ভাষাত অৰ্থৰ ৰূপান্তৰণ হয় য'ত অৰ্থৰ আংশিক লোপ বা সংযোজন হয়। সাহিত্যিক অনুবাদত লোপ বা সংযোজন অধিক হোৱা দেখা যায়। বিশ্লেষনত পাঠৰ নিৰ্দেশাত্মক অৰ্থৰ ব্যাকৰণিক আৰু অৰ্থবৈজ্ঞানিক বৰ্ণনাৰ লগতে প্ৰসংগৰ ওপৰতো গুৰুত্ব দিয়া হয়। এনেধৰণেৰে বিশ্লেষনৰ জৰিয়তে ভাষিক আৰু ভাষাৰ লগত জড়িত বিভিন্ন প্ৰসঙ্গগত তথা সাংস্কৃতিক অৰ্থসমূহ স্পষ্ট হৈ পৰাত সহায় হয়। অনুবাদৰ এনে ব্যৱহাৰিক চিন্তা-চৰ্চাৰ ফলস্বৰূপে অনুবাদ বিজ্ঞানৰ ক্ষেত্ৰখনত বিভিন্ন তত্বসমূহৰ বিকাশ আৰম্ভ হয়। ইয়াত অনুবাদ বিজ্ঞানৰ এনে কিছু তত্বৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে যিসমূহে অনুবাদ বিধাৰ ক্ষেত্ৰখনত এক নতুন দিগন্তৰ সূচনা কৰি ইয়াক আৰু অধিক সমৃদ্ধ কৰি গৈছে। এনে কেইটিমান অনুবাদ তত্বৰ বিষয়ে ইয়াত এক চমু আলোচনা যুগুত কৰা হ'ল।

গৱেষণা পদ্ধতি ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.১ এণ্টন প'প'ৰিচৰ অনুবাদ তত্ত্ব ঃ

এণ্টন প'প'ৰিচ আছিল এজন শ্লোভাক অনুবাদ বিজ্ঞানী আৰু পাঠ তত্ত্ববিদ। ১৯৩৩ চনৰ ২৭ জুলাইত জন্ম গ্ৰহণ কৰা এণ্টন নিট্ৰা জ্ঞান সম্প্ৰদায়ৰ লগত জড়িত আছিল। এণ্টনৰ ১৯৭৫ চনত লিখা Teória umeleckého prekladu (কলাত্মক অনুবাদৰ তত্ত্ব) নামৰ গ্ৰন্থখনত অনুবাদৰ অধ্যয়নত প্ৰতীক বিজ্ঞানৰ তত্ত্ব প্ৰয়োগ কৰাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে। তেওঁ সচৰাচৰ ব্যৱহাৰ হোৱা "উৎস পাঠ" আৰু "লক্ষ্য পাঠ"ৰ সলনি 'প্ৰ'ট' টেক্সট ' আৰু 'মেটা টেক্সট' এই দুয়োটা পদ ব্যৱহাৰৰ প্ৰস্তাৱ দিছিল। তেওঁ 'অনুবাদতা' (prekladovos) শব্দটোও উদ্ভাৱন কৰিছিল, যাৰ অৰ্থ হৈছে কোনো গ্ৰন্থৰ বৈশিষ্ট সমূহ যাৰ বাবে অনুবাদ কাৰ্য্য দুৰুহ হৈ পৰে। আনহাতে তেওঁ "ক্ৰেঅ'লাইজেচন" শব্দটোৰো বৰঙণি আগবঢ়াই, যাৰ অৰ্থ হৈছে উৎস সংস্কৃতিৰ পাঠ আৰু লক্ষ্য সংস্কৃতিৰ পাঠৰ মাজত থকা কিবা এক ধাৰণা। তেওঁৰ গ্ৰন্থসমূহ ইটালীয়, জাৰ্মান আৰু ৰাছিয়ান ভাষালৈ অনুদিত হৈছে।

প'প'ৰিচ অনুবাদ বিধাত শ্বিফ্ট শচত্ৰষ্ক্ৰন্দ্ৰৰ্দ্ধগ্ন ধাৰণাটোৰ বাবে বিশেষভাৱে পৰিচিত আৰু অনুবাদ তত্ত্বৰ ক্ষেত্ৰখনলৈ এই ধাৰণাটোক সম্প্ৰসাৰণ কৰাৰ কৃতিত্বও তেওঁক দিয়া হয়। অনুবাদ সম্পৰ্কে তেওঁৰ দৃষ্টিভংগী যথেষ্ট ব্যাপক আছিল। পপৰিচৰ মতে "The aim of a translation is to transfer certain intellectual and aesthetic values from one language to another. This transfer is not performed directly and is not without its difficulties. … translation by its very nature entails certain shifts of intellectual and aesthetic values." তেখেতে অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ লগত সংযোজিত হৈ থকা সমাজ-সাংস্কৃতিক আৰু ভাষা-নিৰ্দিষ্ট প্ৰকাশভংগীৰ বাবে হোৱা ক্ষতি আৰু লাভ এই দুয়োটা বিষয়কে কেন্দ্ৰত ৰাখি অনুবাদ কৰা পাঠ্যৰ পৰিৱৰ্তনৰ দিশসমূহ বিশ্লেষণ কৰিছিল। অনুবাদ কৰ্মৰ সময়ত হোৱা পৰিৱৰ্তনক তেওঁ এনেদৰে সংজ্ঞায়িত কৰিছে যে "মূলৰ ক্ষেত্ৰত যিবোৰ নতুন যেন লাগে, বা আশা কৰা মতে নহয়, সেইবোৰক পৰিৱৰ্তন বুলি ব্যাখ্যা কৰিব পাৰি"। লক্ষ্য ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত যিটো নতুন যেন লাগে, বা য'ত এনে অভিব্যক্তিসমূহ আশা কৰা ধৰণে লক্ষ্য ভাষালৈ হুবহু অনুবাদ কৰাটো সম্ভৱ নহয়, তাক পৰিৱৰ্তন বুলি ক'ব পাৰি। প'প'ৰিচৰ মতে

সাংস্কৃতিক আৰু ভাষিক পার্থক্যই এই পৰিৱর্তনৰ সৃষ্টি কৰে। অনুবাদকৰ অক্লান্ত প্রচেষ্টা স্বত্বেও অনুবাদ সম্পূর্ণভাৱে আপোচবিহীন হৈ নপৰে কাৰণ অনুবাদ কৰা গ্রন্থত মূল গ্রন্থখন সম্পূর্ণৰূপে প্রতিষ্ঠাপন কৰাটো সম্ভৱ নহয়। এই ভিন্নতাসমূহ বিশ্লেষণ কৰাৰ বিশেষ প্রয়োজনৰ ওপৰত তেখেতে গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল কাৰণ ইয়াৰ দ্বাৰা উৎস ভাষাৰ পাঠ্যৰ লগতে অনুবাদক আৰু অনুবাদ প্রক্রিয়াৰ বিষয়েও বহু কথা উন্মোচিত হয়। প'প'ৰিচৰ মতে অনুবাদৰ ব্যৱধানৰ মাজেৰে যি হেৰাই যায়, সেইখিনিয়ে অনুবাদ কৰা গ্রন্থখনৰ সাংস্কৃতিক প্রসংগ উন্মোচন কৰে। তেওঁৰ তত্ত্বই অনুবাদৰ মধ্যস্থতাকাৰী প্রকৃতিৰ ওপৰত আলোকপাত কৰাৰ ক্ষেত্রত ভাষাৰ গাঁথনিগত দিশৰ লগতে সাংস্কৃতিক মাত্রাৰ কথাও যোগ দিছিল।

কিন্তু গেন্টজলাৰৰ মতে লেভো আৰু প'প'ৰিচৰ তত্ত্বই বিষয়বস্তুতকৈ গাঁথনিৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। তেওঁ আঙুলিয়াই দিয়ে যে এই নীতিসমূহ আধুনিকতাবাদী গ্রন্থসমূহৰ বাবে উপযুক্ত হ'ব পাৰে য'ত ভাষাই প্রধান ভূমিকা পালন কৰে, কিন্তু পুৰণি গ্রন্থসমূহৰ অনুবাদৰ ক্ষেত্রত এই নীতিসমূহ অপর্যাপ্ত যেন লাগে য'ত গ্রন্থখনৰ কলাত্মকতা কেৱল ভাষা আৰু ভাষিক উপাদানৰ ওপৰতে নির্ভৰশীল নহয়। তদুপৰি বিষয়বস্তুৰ পৰিৱর্তে ৰূপৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়াৰ ফলত পাঠ একোখন ইয়াৰ সমাজ-সাংস্কৃতিক ভিত্তিৰ পৰা সম্পূর্ণৰূপে পৃথক হৈ পৰিব পাৰে আৰু এইদৰে বাহ্যিক বাস্তৱতাৰ উল্লেখ নকৰাকৈ ইয়াক স্বায়ত্তশাসিত সত্তা হিচাপে বিবেচনা কৰা হ'ব পাৰে। কিন্তু তথাপিও অনুবাদ তত্ত্বৰ ক্ষেত্রখনত ভাষাবৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভঙ্গীৰ গুৰুত্ব হ্রাস পোৱা নাই। এই ক্ষেত্রত জিন-পল ৱিনয় আৰু জিন ডার্বেলনেটৰ অনুবাদ প্রক্রিয়াৰ কথা উল্লেখ কৰিব পাৰি।

১.২ জিন-পল ৱিনয় আৰু জিন ডার্বেলনেটৰ অনুবাদ প্রক্রিয়া ঃ

১৯৫০ চনত ফ্রান্সৰ দুজন পণ্ডিত জিন-পল ৱিনয় আৰু জিন ডাৰবেলনেটে অনুবাদৰ ভাষিক দিশসমূহৰ বিষয়ে গৱেষণা কৰিছিল। ১৯১০ চনৰ ১৮ জুলাইত পেৰিছত জন্মগ্রহণ কৰা জিন পল ৱিনয় একাধাৰে এজন অভিধানবিদ, অনুবাদক, ধ্বনিবিজ্ঞানী, অধ্যাপক, টেলিভিছন কার্য্যসূচী পৰিচালক, শিল্পী আৰু সংগীতজ্ঞ আছিল। ১৯৩৭ চনত লণ্ডন বিশ্ববিদ্যালয়ৰ পৰা ধ্বনিবিজ্ঞান আৰু ভাষাবিজ্ঞানত স্নাতকোত্তৰ ডিগ্রী লাভ কৰি গ্রেট ব্রিটেইন আৰু চাৰট্রেছত তথা পৰৱর্তী সময়ত পেৰিছ চহৰৰ বিদ্যালয়সমূহত আধুনিক ভাষাৰ মুখ্য পৰিদর্শক হিচাপে তেখেতে কার্যনির্বাহ কৰে। ১৯৪৬ চনত তেওঁ কানাডালৈ যায়। আনহাতে ১৯০৪ চনত পেৰিছত জন্মগ্রহণ কৰা ডার্ৱেলনেটে ৱেলছ, এডিনবার্গ আৰু মানচেষ্টাৰ বিশ্ববিদ্যালয়ত ৰীডৰ হিচাপে কাম কৰাৰ পূর্বে ছ'ৰবনত অধ্যয়ন কৰিছিল। ১৯৩৮-৩৯ চনত তেওঁ হার্ভার্ডত ফৰাচী ভাষা অধ্যাপনা কৰাৰ পিছত ১৯৪০ চনত কানাডালৈ গুচি যায়, আৰু ১৯৪৬ চনলৈকে মেকগিল বিশ্ববিদ্যালয়ত অধ্যাপনা কৰাৰ লগতে অনুবাদৰ নৈশ ক্লাছৰ তিনি বছৰীয়া পাঠ্যক্রমো আৰম্ভ কৰে। পিছলৈ তেওঁ ব'ড'ইন কলেজ আৰু লাভাল বিশ্ববিদ্যালয়ত অধ্যাপনা কৰে। এই দুয়োজনা পণ্ডিতৰ যুটীয়া সহযোগত অনুবাদৰ ক্ষেত্রখনত এক নতুন তত্ত্বৰ সংযোজন ঘটে।

শৈক্ষিক শাখা হিচাপে অনুবাদ অধ্যয়ন সেই সময়ত প্রকৃততে নাছিল, গতিকে ৱিনয় আৰু ডাৰবেলনেটৰ কৃতিসমূহক, তুলনামূলক সাহিত্য বুলি গণ্য কৰা হৈছিল। ৱিনয় আৰু ডাৰবেলনেটৰ কামৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি ভিন্নতামূলক ভাষাবিজ্ঞান শব্দটো অধিক উপযুক্ত যেন লাগে, কিয়নো তেওঁলোকৰ তত্ত্বই দুয়োটা ভাষাৰ পার্থক্য নিৰীক্ষণ কৰি অনুবাদৰ স্বৰূপ ব্যাখ্যা কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে। তেওঁলোকৰ লেখাসমূহ 'Stylistice comparée du français et de l'anglais Ê. méthode de traduction' হিচাপে প্রকাশ পাইছিল। অনুবাদ অধ্যয়নৰ ভাষিক দৃষ্টিভংগী স্পষ্ট কৰাৰ উদ্দেশ্যে লিখা এই কৃতিয়ে অনুবাদ জগতত এক সুকীয়া স্থান দখল কৰি আহিছে। ৱিনয় আৰু ডাৰবেলনেটে অনুবাদক কলাৰ শাৰীত ৰখাৰ ক্ষেত্রত বিৰোধ প্রকাশ কৰি কয় যে "Translation is,…, an exact discipline, with its own methods and particular problems,… we believe that it would be a great disservice to translation were we summarily to range it among the arts- perhaps as the eighth art." ৰৱং তেওঁলোকে অনুবাদৰ ক্ষেত্রখন ভাষাবিজ্ঞানৰ লগত জড়িত বুলি মত পোষণ কৰি কয় যে অনুবাদক কলা বুলি গণ্য কৰিলে, ভাষাবিজ্ঞানৰ লগত থকা অনুবাদৰ সম্পর্কক উলাই কৰা হব, "… we would deny translation one of its intrinsic properties, namely its place within the framework of linguistics…" তেওঁলোকৰ এই কৃতি প্রায় চাৰি দশকৰ পিছত 'Comparative stylistics of French and àßnglishÊ. a methodology for translation' শীর্ষক শিৰোনামেৰে ইংৰাজীলৈ অনুবাদ কৰা হৈছিল। প্রায় ডেৰ শতিকাৰ

পিছতহে এই গুৰুত্বপূৰ্ণ লিখনী ইংৰাজীলৈ অনুবাদ কৰা হয়। কিতাপখনত ৰিনয় আৰু ডাৰ্বেলনেটে উল্লেখ কৰিছে যে যিকোনো অনুবাদৰ সময়ত মূল সাতটা প্ৰক্ৰিয়াই বিশেষভাৱে ক্ৰিয়া কৰে। এই প্ৰক্ৰিয়াসমূহক তেওঁলোকে দুটা ভাগত ভাগ কৰিছিল: প্ৰত্যক্ষ অনুবাদ আৰু পৰোক্ষ অনুবাদ। এই দুয়োটা ভাগৰো আকৌ কেইবাটাও প্ৰকাৰৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছে।

১.২.১ প্ৰত্যক্ষ অনুবাদৰ প্ৰকাৰসমূহ ঃ

প্ৰত্যক্ষ্য অনুবাদৰ তলত উল্লেখ কৰা ধৰনে তিনিটা প্ৰকাৰৰ বিষয়ে কোৱা হৈছে ঃ

১.২.১.১ আদান ঃ

ইয়াৰ অৰ্থ হ'ল উৎস ভাষাৰ পৰা এটা শব্দ লক্ষ্য ভাষাত হুবহু ধৰি ৰখা প্ৰক্ৰিয়া। অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ ভিতৰত ইয়াক আটাইতকৈ সহজ বুলি গণ্য কৰা হয় আৰু ইয়াক দুই ধৰণৰ পৰিস্থিতিত ব্যৱহাৰ কৰা হয়। প্ৰথমতে, লক্ষ্য ভাষাত এনে কোনো শব্দ নাথাকিলে নতুন প্ৰযুক্তিগত প্ৰক্ৰিয়াৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ সময়ত ইয়াক ব্যৱহাৰ কৰা হয়। দ্বিতীয়টো হ'ল যেতিয়া কোনো শব্দক শৈলীগত প্ৰভাৱৰ বাবে উৎস ভাষাৰ পৰা হুবহু ৰূপত গ্ৰহণ কৰি লক্ষ্য ভাষাত বিদেশী বা উৎস-ভাষিক শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

১.২.১.২ কেল্ক ঃ

কেল্ক হৈছে এনে এক প্ৰক্ৰিয়া য'ত উৎস লিখনীৰ প্ৰকাশ সম্পূৰ্ণৰূপে লক্ষ্য ভাষালৈ স্থানান্তৰ কৰা হয়। এই প্ৰক্ৰিয়াত লক্ষ্য ভাষাৰ বাক্য গাঁথনিগত নিয়মক আওকাণ কৰি, উৎস ভাষাৰ গাঁথনিগত নিয়মৰ অনুসৰণ কৰি প্ৰতিটো শব্দৰ আক্ষৰিক অৰ্থত অনুবাদ কৰা হয়। এই প্ৰক্ৰিয়াৰ ফলত লক্ষ্য ভাষাত কেতিয়াবা অদ্ভুত বাক্যৰ গঠন হয়।

১.২.১.৩ আক্ষৰিক অনুবাদ ঃ

এই অনুবাদ পদ্ধতি সন্দৰ্ভত বিনয় আৰু ডাৰ্বেলনেটে বিশ্বাস কৰে যে ইয়াক কেৱল কিছুমান বিশেষ পৰিস্থিতিতহে ব্যৱহাৰ কৰা উচিত। মূলতঃ ই হৈছে উৎস ভাষাৰ পাঠ্যৰ ধাৰণা আৰু অৰ্থক ক্ষতিগ্ৰস্ত নকৰাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি শব্দৰ পিছত শব্দ অনুবাদৰ এক কৌশল। সহজ ভাষাত ক'বলৈ গ'লে আক্ষৰিক অনুবাদ হৈছে কেল্ক ৰ এটা সম্প্ৰসাৰণ কিন্তু কেল্কতকৈ অধিক মূল পাঠৰ কায চাপিব পৰা ধৰণে ৰূপায়ণ কৰা হৈছে।

১.২.২ পৰোক্ষ অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়া:

১.২.২.১ ট্ৰেন্সপজিচন ঃ ৰিনয় আৰু ডাৰবেলনেটে ট্ৰেন্সপজিচনক অৰ্থ সলনি নকৰাকৈ শব্দ শ্ৰেণী সলনি কৰাৰ প্ৰক্ৰিয়া বুলি উল্লেখ কৰিছে। ইয়াৰ দ্বাৰা অনুবাদকসকলে শব্দৰ ধৰণ সলনি কৰাৰ প্ৰক্ৰিয়াক বুজায়, যেনে বিশেষ্যৰ পৰা ক্ৰিয়ালৈ। বিনয় আৰু ডাৰ্বেলনেটে ট্ৰেন্সপজিচনক অপৰিহাৰ্য হোৱাৰ লগতে ঐচ্ছিক বুলিও বিবেচনা কৰিছে। লগতে তেওঁলোকে উৎস লিখনীক 'ভিত্তি অভিব্যক্তি' আৰু লক্ষ্য লিখনীক 'ট্ৰেন্সপ'জড অভিব্যক্তি' বুলি মত পোষন কৰিছে।

১.২.২.২ মডুলেচন ঃ

বিনয় আৰু ডাৰ্বেলনেটৰ পঞ্চম প্ৰক্ৰিয়াটো হ'ল মডুলেচন। মডুলেচনে লক্ষ্য পাঠত কোনো অভিব্যক্তি উৎস পাঠৰ প্ৰকাশভংগীৰ দৃষ্টিকোণৰ পৰা পৃথক ধৰণে উপস্থাপন কৰাটো বুজায়। বিনয় আৰু ডাৰবেলনেটে এই প্ৰক্ৰিয়াটোক তেতিয়াহে প্ৰয়োজনীয় বুলি গণ্য কৰে যেতিয়া আন প্ৰক্ৰিয়াসমূহ অপৰ্যাপ্ত হয়। অৰ্থাৎ যেতিয়া ব্যাকৰণগত, বাক্য গঠন আৰু আভিধানিকভাৱে শুদ্ধ হোৱাৰ পিছতো কোনো শব্দৰ এক অদ্ভুত অনুবাদ হয়। মডুলেচন প্ৰক্ৰিয়াই উৎস পাঠ্যৰ পৰা উদ্ভৱ হোৱা যিকোনো অৰ্থ বা ধাৰণাৰ সঠিক ৰূপ অক্ষত ৰাখি লক্ষ্য পাঠ্যৰ স্বাভাৱিক প্ৰবাহ বজাই ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰে। এই প্ৰসংগত ইংৰাজী আৰু ফৰাচী ভাষাৰ কথা উল্লেখ কৰি বিনয় আৰু ডাৰবেলনেটে কৈছে যে ইংৰাজীত ব্যৱহৃত বাইনাৰী অভিব্যক্তিটোৱে কেতিয়াবা ফৰাচী ভাষাৰ প্ৰসংগত সমানে কাম নকৰে। এনে পৰিস্থিতিত মডুলেচন প্ৰক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা এনে সমস্যা সমাধান কৰিব পাৰি।

১.২.২.৩ সমতুল্যতা ঃ

অনুবাদ অধ্যয়নত সমতুল্যতাৰ ধাৰণাটো সহজ আৰু জটিল দুয়োটা হ'ব পাৰে। এই প্ৰক্ৰিয়াটো ব্যাখ্যা কৰিবলৈ বিনয় আৰু ডাৰবেলনেটে বিষ প্ৰকাশৰ উদাহৰণ দাঙি ধৰি কয় যে ইংৰাজীত অকস্মাত দোষ পোৱাৰ সময়ত "ouch" শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰা হয়, কিন্তু ফৰাচী ভাষাত এই অভিব্যক্তিটোৱে কোনো অৰ্থ প্ৰকাশ নকৰে। বৰঞ্চ "ouch" ৰ ফৰাচী সমতুল্য হৈছে "ঞ্ৰথঙ্গহু"। দুয়োটা শব্দই লগে লগে পাঠকক সংকেত দিব যে ইয়াৰ লগত কিছু পৰিমানৰ যন্ত্ৰণা জড়িত হৈ আছে। সমতুল্যতা প্ৰবচনমূলক অভিব্যক্তিৰ সৈতেও জড়িত, য'ত সকলো আভিধানিক আৰু ব্যাকৰণগত উপাদান থাকে, কিন্তু আক্ষৰিক অৰ্থত অনুবাদ কৰিলে পাঠকক বিভ্ৰান্ত কৰিব পাৰে। উদাহৰণস্বৰূপে, ফৰাচী ভাষাত "চয়তান" ৰ কথা কোৱা নহয়। এই ধৰণৰ অভিব্যক্তিৰ বাবে এই ভাষাত সমতুল্য অভিব্যক্তি হ'ল "Wolf" মানে কুকুৰনেছিয়া।

১.২.২.৪ অভিযোজন ঃ

বিনয় আৰু ডাৰবেলনেটৰ অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ ভিতৰত আটাইতকৈ জটিল প্ৰক্ৰিয়াটো হ'ল অভিযোজন। অভিযোজনৰ প্ৰক্ৰিয়াটো সমতুল্যতাৰ সৈতে একে। দুয়োজন তত্ত্ববিদে কয় যে এই পদ্ধতিত অনুবাদকসকলে অনুবাদৰ চূড়ান্ত সীমা অতিক্ৰম কৰে। তেওঁলোকে কয় যে উৎস পাঠ্যত উল্লেখ কৰা কোনো সংস্কৃতি লক্ষ্য ভাষাৰ পাঠকৰ বাবে অজ্ঞাত হ'লে এই প্ৰক্ৰিয়া ব্যৱহাৰ কৰা হয়। এনে স্থিতিত অনুবাদকে নতুন স্থিতিৰ নিৰ্মাণ কৰিবলগা হয়।

জিন-পল ৱিনয় আৰু ডাৰবেলনেটৰ তত্ত্বই অনুবাদ জগতত এক নতুন দিগন্তৰ সূচনা কৰে। অনুবাদৰ ভাষাবৈজ্ঞানিক দিশটোৰ ওপৰত আধুনিক তত্ত্ববিদ সকলৰ বিশেষ ৰুচি দেখিবলৈ পোৱা যায়। ইয়াৰ অন্যতম উদাহৰণ হিচাপে বিভিন্ন তত্ত্ববিদসকলৰ ভাষাবৈজ্ঞানিক অনুবাদ তত্ত্বসমূহৰ সংখ্যালৈ মন কৰিলেই স্পষ্ট হৈ পৰে। এই প্ৰসঙ্গত গিডেন ট্যুৰীৰ অনুবাদ তত্ত্বৰ কথাও উল্লেখ কৰিব পাৰি।

১.৩ গিডেন ট্যুৰীৰ অনুবাদ তত্ত্ব ঃ

১৯৪২ চনৰ ছ জুনত হাইফাত ইতিহাসবিদ জেকব ট্যুৰীৰ প্ৰথম সন্তান হিচাপে ট্যুৰীয়ে জন্মগ্ৰহণ কৰে। অনুবাদ বিধাত তেখেতে অনুবাদ তত্ত্ব আৰু বৰ্ণনাত্মক অনুবাদ অধ্যয়নৰ ওপৰত বিশেষভাৱে গৱেষণা কৰে। এই ক্ষেত্ৰত তেখেতে বাইবেলৰ হিব্ৰু অনুবাদ ইতিহাসৰ ওপৰত বিশেষভাৱে অধ্যয়ন কৰে।

অনুবাদ অধ্যয়নত গিডেন ট্যুৰীয়ে উল্লেখযোগ্য অৱদান আগবঢ়াই থৈ গৈছে। তেওঁ অনুবাদৰ এক অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ তত্ত্ব প্ৰণয়ন কৰিছিল আৰু অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ ক্ষেত্ৰত কঠোৰ নিয়মৰ সলনি ভাষা পেছাদাৰীসকলৰ বাবে নমনীয় ব্যৱহাৰিক নিৰ্দেশনা প্ৰদান কৰিছিল। তেওঁ উৎসমুখী আৰু লক্ষ্যমুখী ধাৰণাসমূহৰ বিষয়ে বিশদভাৱে উল্লেখ কৰিছিল আৰু পাঠ এখন আন এটা ভাষালৈ অনুবাদ কৰাৰ সময়ত প্ৰয়োগ কৰিবলগীয়া দুটা ভিন্ন কৌশলৰ সংজ্ঞা দিছিল। নিজেও এজন অনুবাদক হিচাপে কাম কৰাৰ বাবে অনুবাদকসকলে সন্মুখীন হোৱা অসুবিধাসমূহৰ বিষয়ে তেওঁ যথেষ্ট সচেতন আছিল আৰু স্ব-দৃষ্টিভংগীৰে অনুবাদ অধ্যয়নক সমৃদ্ধ কৰিছিল। গিডেন ট্যুৰীৰ অনুবাদ সম্বন্ধীয় তত্ত্বসমূহ আজিও বিশেষভাৱে প্ৰযোজ্য হোৱা দেখা যায়, আনকি সৃষ্টিশীল বিজ্ঞাপনৰ দৰে পাঠসমূহ অনুবাদ কৰাৰ ক্ষেত্ৰতো ট্যুৰীৰ তত্ত্বৰ গুৰুত্ব মনকৰিবলগীয়া। এই গবেষণা পত্ৰখনত বিশেষকৈ ট্ৰেন্সক্ৰিয়েচনে কেনেকৈ লক্ষ্যমুখী পদ্ধতিৰ এটা সুনিৰ্দিষ্ট উদাহৰণ প্ৰতিনিধিত্ব কৰে আৰু বিজ্ঞাপন আৰু বিপণন গ্ৰন্থৰ ক্ষেত্ৰত এনে কৌশল কিয় আটাইতকৈ উপযুক্ত হয় সেই বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

গিডেন ট্যুৰী আছিল ইজৰাইলী অনুবাদ পণ্ডিত আৰু টেল আভিভ বিশ্ববিদ্যালয়ৰ তুলনামূলক সাহিত্য আৰু অনুবাদ অধ্যয়নৰ অধ্যাপক। শৈক্ষিক জীৱন আৰম্ভ কৰাৰ আগতে তেওঁক সামৰিক সেৱাৰ বাবে কিবুটজলৈ পঠিওৱা হৈছিল। তাত তেওঁ প্ৰশিক্ষণৰ অংশ হিচাপে খেতিৰ কামত সহায় কৰিছিল। ছয় বছৰ তাত থাকি ট্যুৰীয়ে কিবুটজ জার্নেলত কাম কৰাৰ লগতে সাংস্কৃতিক অনুষ্ঠান আয়োজন কৰাৰ সুযোগ লাভ কৰে। এই অভিজ্ঞতাই তেওঁক এখন শিশু আলোচনীত কাম কৰাৰ সুযোগ প্ৰদান কৰিছিল, য'ৰ পৰা তেওঁ অনুবাদৰ জগতখনত প্ৰথম খোজ দিবলৈ আৰম্ভ কৰিছিল। ১৯৭০ চনত টেল আভিভ বিশ্ববিদ্যালয়ৰ পৰা হিব্ৰু ভাষা আৰু সাহিত্যত সন্মানেৰে স্নাতক ডিগ্ৰী লাভ কৰি ট্যুৰীয়ে শৈক্ষিক জগতত নিজৰ কেৰিয়াৰ আৰম্ভ কৰে আৰু পিছলৈ তেওঁৰ পি এইচ ডি ডিচার্টেচন 'Translational Norms and Literary Translation in Hebrew' গ্ৰন্থ হিচাপে প্ৰকাশ পায় আৰু এইখন তেওঁৰ অন্যতম প্ৰধান গ্ৰন্থ হৈ পৰে। ৰজ্মজ্জ্ম চনত তেওঁ চি.এছ.লুইছৰ 'দ্য ভয়েজ অৱ দ্য ডন ট্ৰেডাৰ'ৰ হিব্ৰু ভাষালৈ অনুবাদৰ বাবে হান্স খ্ৰীষ্টিয়ান এণ্ডাৰছন বঁটা লাভ কৰে। ১৯৮৯ চনত জোচে লেম্ফাৰ্টে সৃষ্টি কৰা অনুবাদ অধ্যয়নৰ গৱেষণা কাৰ্যসূচী ট্ৰখৰূশ্বত্মট্ট ৰ প্ৰথম অধ্যক্ষ অধ্যাপক হয়। ১৯৭০ চনৰ পৰা ১৯৮৩ চনলৈকে ট্যুৰীয়ে বেঞ্জামিন হৰ্ষৰ, ইতামাৰ ইভেন-জোহৰ, মেনাচেম পেৰীকে ধৰি অন্যান্য ভাষাবিদসকলৰ সৈতে লিটাৰেচাৰ আলোচনীত কাম কৰি টার্গেট, ইণ্টাৰনেশ্যনেল জার্নেল অৱ ট্ৰেন্সলেচন ষ্টাডিজ প্ৰতিষ্ঠা কৰে।

গিডিয়ান ট্যুৰীক বৰ্ণনাত্মক অনুবাদ অধ্যয়নৰ পথ প্ৰদৰ্শক বুলি গণ্য কৰা হয় আৰু এই বিষয়ত তেওঁৰ দুখন প্ৰধান গ্ৰন্থ 'হিব্ৰু ভাষাত অনুবাদ নীতি আৰু সাহিত্য অনুবাদ', 'অনুবাদৰ তত্ত্ব আৰু বৰ্ণনাত্মক অনুবাদ অধ্যয়ন' ৰ জড়িয়তে তেওঁৰ উদ্ভাৱনী দৃষ্টিভংগী প্ৰতিফলিত হয়। অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ ধাৰাসমূহৰ বিশ্লেষণৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি তেওঁ এক সমালোচনাত্মক পদ্ধতি স্থাপন কৰিছিল যাৰ নিয়মসমূহ নমনীয় আছিল। অনুবাদ সম্পৰ্কে তেওঁ মত পোষণ কৰে যে "Translation activities should … regarded as having cultural significance. Consequently, "translatorship"

amounts first and foremost to being able to play a social role, i.e., to fulfil a function allotted by a community- to the activity, its practitioners and/or their products- in a way which is deemed appropriate in its own terms of reference." অনুবাদ বিজ্ঞানৰ ধাৰাসমূহ বৰ্ণনাৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁৰ অৱদান অনুবাদকসকলক ব্যৱহাৰিক নিৰ্দেশনা প্ৰদানৰ বাবে সবাতোকৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ। ইয়াত তেওঁৰ দুখন গ্ৰন্থত বৰ্ণনা কৰা অনুবাদ অধ্যয়নৰ সৈতে জড়িত ধাৰণাসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

১.৩.১ উৎসমুখী আৰু লক্ষ্যমুখী ঃ

১৯৮০ চনত প্ৰকাশিত 'ইন চার্চ অৱ এ থিয়ৰী অৱ ট্ৰেন্সলেচন' নামৰ ৰচনাখনত ট্যুৰীয়ে দুবিধ অনুবাদ কৌশল শ্চ 'উৎসমুখী' আৰু 'লক্ষ্যমুখী'গ্ন অন্বেষণ কৰি অনুবাদ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰখনত গুৰুত্বপূৰ্ণ অৱদান আগবঢ়াইছিল। ট্যুৰীৰ মতে ভাষাৰ গাঁথনিৰ মাজত পাৰ্থক্য থকাৰ বাবে উৎসমুখী কৌশল ৰূপায়ণ কৰাটো কঠিন। আনহাতে লক্ষ্যমুখী অনুবাদৰ লক্ষ্য হৈছে লক্ষ্য ভাষাৰ গাঁথনি আৰু সাংস্কৃতিক প্ৰেক্ষাপটৰ সৈতে পাঠ্যক খাপ খুৱাই লোৱা।

সেয়েহে ট্যুৰীয়ে দুটা নীতি প্ৰণয়ন কৰিছিল যিয়ে অনুবাদৰ দুটা পদ্ধতিৰ সংজ্ঞা দিয়ে: গ্ৰহণযোগ্যতা আৰু পৰ্যাপ্ততা। 'গ্ৰহণযোগ্য' অনুবাদে লক্ষ্য ভাষাৰ নিয়ম আৰু গাঁথনি মানি চলিব লাগিব। উৎস ভাষিক সংস্কৃতিৰ ভাষা গঠনসমূহ গভীৰ স্তৰত বুজিবলৈ উৎস পাঠ্যৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা, পঠনযোগ্যতা বৃদ্ধি কৰা, আৰু পাঠ্যৰ প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি মনোযোগ দিয়া আদি এই পদ্ধতিৰ প্ৰাথমিক লক্ষ্য। আনহাতে, 'পৰ্যাপ্ত' অনুবাদ উৎস ভাষাৰ প্ৰতি নিষ্ঠাবান হৈ থাকে আৰু মূল গ্ৰন্থৰ গাঁথনি অনুসৰণ কৰে। অৰ্থাৎ অনুবাদৰ স্বৰূপ অনুবাদ কৰা গ্ৰন্থখনত স্পষ্টকৈ দেখা যায়। সম্পূৰ্ণ পৰ্যাপ্ততাৰ লক্ষ্যৰে অনুবাদ কৰাটো গ্ৰহণযোগ্য নহয় কাৰণ ইয়াত লক্ষ্য পাঠকৰ দাবীৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰখা নহয়। দুয়োটা পদ্ধতিৰ মাজৰ পৰা এটা বাছি লোৱাটো কোনো সহজ কাম নহয়। সকলো প্ৰয়োজনীয়তা অনুবাদৰ প্ৰকাৰ আৰু ইয়াৰ উদ্দেশ্যৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। কিন্তু, লক্ষ্যমুখী বা উৎসমুখী দৃষ্টিভংগী যিয়েই নহওক কিয়, অনুবাদৰ উদ্দেশ্য হৈছে মূল কৃতিৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা।

১.৩.২ অনুবাদ আৰু পোষ্টুলেট ঃ

অনুবাদ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰখনৰ আন এখন ক্লাছিক গ্ৰন্থ 'ডিচক্রিপটিভ ট্ৰেন্সলেচন ষ্টাডিজ এণ্ড বিয়ণ্ড' ১৯৯৫ ট্যুৰীয়ে অনুবাদ সমালোচকৰ বাবে এটা মানক তত্ত্বৰ ওপৰত আলোকপাত কৰিছে। এই তত্ত্ব হৈছে অনুবাদক আৰু পৰ্যালোচকৰ বাবে কঠিন নিয়মৰ প্ৰস্তাৱ নিদিয়া, বৰঞ্চ অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াত পৰ্যবেক্ষণ কৰিব পৰা প্ৰৱণতাৰ শৃংখলা উপস্থাপন কৰা তত্ত্ব। ট্যুৰীৰ মতে, পৰ্যালোচকসকলে অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ বৰ্ণনাৰ বাবে ধাৰাসমূহৰ ওপৰত গৱেষণা কৰা উচিত, অৰ্থাৎ অনুবাদকসকলক ব্যৱহাৰিক নিৰ্দেশনা দিয়া উচিত। কঠিন নিয়মবদ্ধ মানক পদ্ধতিয়ে অনুবাদকসকলক গ্ৰন্থ কেনেকৈ অনুবাদ কৰিব লাগে তাৰ এটা সূত্ৰও প্ৰদান নকৰে। অত্যাৱশ্যকীয় আৰ্হিৰ কিছুমান কথাক গুৰুত্বপূৰ্ণ বুলি বিবেচনা কৰি ট্যুৰীয়ে এই মতামত প্ৰকাশ কৰিছে যে অনুবাদৰ সময়ত কিছুমান কথা অনুসৰণ কৰাটো প্ৰয়োজনীয় যাতে ইয়াক 'অনুবাদ' বুলি ক'ব পাৰি: উৎস পাঠৰ প্ৰস্তাৱনা অটুত থাকিব লাগিব; অনুবাদ কৰা পাঠখন "স্থানান্তৰ" প্ৰক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা উৎপাদন কৰিব লাগে; মূল পাঠ আৰু অনুবাদ কৰা পাঠ্যৰ মাজত সম্পৰ্ক বা সাদৃশ্য থাকিব লাগে।

ট্যুৰীয়ে অনুবাদকসকলক ব্যৱহাৰিক পৰামৰ্শ আগবঢ়োৱাত সফল হৈছে, দুটা সম্ভাব্য কৌশল আৰু পদ্ধতি চিনাক্ত কৰিছে, পেছাদাৰীসকলক পাঠ্য অনুবাদ কৰাৰ সময়ত কিহৰ ওপৰত চিন্তা কৰিব লাগে তাৰ আৰম্ভণিৰ বিন্দু প্ৰদান কৰিছে। অনুবাদৰ উদ্দেশ্য আৰু ইয়াৰ সম্ভাব্য পাঠকৰ বিষয়ে চিন্তা কৰিলে উত্তম কৌশল বাছনি কৰাত সহায়ক হ'ব পাৰে। কিন্তু সদায় মনত ৰখা উচিত যে অনুবাদ কৰা গ্ৰন্থৰ প্ৰধান লক্ষ্য হৈছে মূল কৃতিৰ বাৰ্তা প্ৰেৰণ কৰা।

লক্ষ্য সংস্কৃতিৰ সৈতে অভিযোজন হিচাপে গ্ৰহণযোগ্যতাৰ এটা উদাহৰণ ট্ৰেন্সক্ৰিয়েচনে প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। ট্ৰেন্সক্ৰিয়েচন শব্দটো হৈছে 'অনুবাদ' আৰু 'সৃষ্টি'ৰ মিশ্ৰণ, যিয়ে অনুবাদত সৃষ্টিশীল পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰৰ ইংগিত দিয়ে আৰু ই বিপণন বিক্ৰী আৰু বিজ্ঞাপনৰ সৃষ্টিশীল ভাষাৰ সৈতে জড়িত। ট্ৰেন্সক্ৰিয়েচনে এটা সংস্কৃতিৰ পৰা আন এটা সংস্কৃতিলৈ কোনো ৱেণ্ডৰ বাৰ্তা স্থানান্তৰ কৰাত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে আৰু উৎস পাঠ্যৰ ভাষা আৰু গঠন সলনি কৰিলে কেনেকৈ এটা বাৰ্তা প্ৰেৰণ কৰাত সহায় কৰে তাৰ এক উত্তম উদাহৰণ আগবঢ়ায়।

ট্যুৰীৰ নীতিয়ে অনুবাদ অধ্যয়নত এক নতুন দিগন্তৰ সূচনা কৰিছিল। ভেনুটিয়ে দুটা কৌশলৰ বৰ্ণনা কৰিছিল: ঘৰচীয়াকৰণ আৰু বিদেশীকৰণ। নিডাই আনুষ্ঠানিক সমতুল্যতা আৰু গতিশীল সমতুল্যতাৰ ধাৰণাসমূহ সম্প্ৰসাৰিত কৰিছিল। ট্যুৰীৰ পদ্ধতিয়ে অনুবাদ অধ্যয়নৰ বাবে

এক বিকল্প পদ্ধতি প্রতিষ্ঠা কৰিছিল আৰু তাত্ত্বিক ধাৰণাসমূহৰ পৰা আৰম্ভ কৰি অনুবাদ প্ৰক্ৰিয়াৰ প্ৰত্যক্ষ পৰ্যবেক্ষণৰ দিশত আগবাঢ়িছিল, শেষত পেছাদাৰীসকলে অনুসৰণ কৰিবলগীয়া ব্যৱহাৰিক নিৰ্দেশনা প্ৰদান কৰিছিল।

১.৪ পিটাৰ নিউমার্কৰ অনুবাদ তত্ত্ব ঃ

নিউমার্কৰ অনুবাদ তত্ত্বসমূহ অনুবাদৰ প্ৰয়োগত বহুলভাৱে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে আৰু অনুবাদ অধ্যয়নত ইয়াৰ মূল্য অতিশয় বেছি। অনুবাদক সংজ্ঞায়িত কৰি তেখেতে মত পোষণ কৰে যে "…, it is rendering the meaning of a text into another language in the way that the author intended the text." অনুবাদৰ ক্ষেত্ৰত পিটাৰ নিউমার্কৰ পদ্ধতি অনুবাদক প্ৰশিক্ষণ পাঠ্যক্ৰমত ব্যাপকভাৱে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে আৰু অনুবাদৰ ক্ষেত্ৰত ব্যৱহাৰিক প্ৰয়োগৰ সৈতে অৰ্থৰ ভাষিক নীতিৰ বহু ব্যৱহাৰিক উদাহৰণ প্ৰদান কৰা হৈছে। নিউমার্কে কৈছে যে যোগাযোগমূলক অনুবাদে ইয়াৰ পাঠকৰ ওপৰত মূলৰ পাঠকৰ যিমান পাৰি ওচৰৰ প্ৰভাৱ পেলাবলৈ চেষ্টা কৰে। অৰ্থবোধক অনুবাদে আন ভাষাৰ অৰ্থবোধক আৰু বাক্য গঠনৰ সঠিক প্ৰসংগভিত্তিক অৰ্থক যিমান পাৰি ওচৰৰ পৰা প্ৰতিনিধিত্ব কৰাৰ চেষ্টা কৰে। য়ালান কাইয়ে 'A Brief Analysis of Peter Newmark's Communicative Translation Theory' ত উল্লেখ কৰিছে যে "The Communicative Translation Theory is proposed by Peter Newmark, who first put forward that texts should be divided into expressive, informative and vocative texts and distinguishes semantic translation and communicative translation based on this." দৰাচলতে অনুবাদ তত্ত্বৰ অধ্যয়ন আৰু বিকাশত নিউমার্কৰ অনুবাদ পদ্ধতিয়ে ইমানেই গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰিছে যে ইমানবোৰ অনুবাদক, শিক্ষক আৰু অনুবাদ সম্পৰ্কীয় সামগ্ৰীয়ে অনুবাদৰ অনুশীলন আৰু ক্ৰছ-কলচাৰেল পৰিস্থিতিত যোগাযোগমূলক অনুবাদ পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰিছে। অনুবাদ পদ্ধতিয়ে দ্বিভাষিক আৰু দ্বি-সাংস্কৃতিক যোগাযোগৰ নিয়ম বা নিত্যতাৰ প্ৰেক্ষাপটত কিছুমান লক্ষ্যত উপনীত হ'বলৈ এক নিৰ্দিষ্ট দিশ প্ৰদান কৰিছে। তথাপিও নিউমার্কৰ যোগাযোগমূলক অনুবাদ প্ৰয়োগ কৰাৰ সময়ত কিছু বিভ্ৰান্তিৰ সৃষ্টি হ'ব পাৰে আৰু যোগাযোগমূলক অনুবাদৰ পদ্ধতিৰ নিৰ্দেশনাতো ব্যৱহাৰিক অনুবাদত কিছুমান অমীমাংসিত আৰু অবাস্তৱিক সমস্যা থাকিব পাৰে।

আদৰ্শ অনুবাদৰ অৰ্থত সঠিক হোৱাৰ লগতে লক্ষ্য ভাষাৰ স্বাভাৱিক আৰু ব্যৱহৃত গ্ৰহণকাৰী ভাষিক ৰূপসমূহৰ প্ৰসংগত সাৱলীল হ'ব লাগে। উৎস লিখনীৰ সৈতে অচিনাকি লক্ষ্য ভাষাৰ পাঠকে লক্ষ্য পাঠখন সহজে বুজিব লাগে। অনুবাদৰ সফলতা এই ধাৰণাবোৰৰ লগত কিমান মিল আছে এই মাপদণ্ডৰ দ্বাৰা জুখিব পাৰি। এই দৃষ্টিৰে আৰ্হি অনুবাদৰ কেইটিমান বৈশিষ্ট পোৱা যায়:

১। সঠিকতা ঃ উৎস পাঠৰ অৰ্থ যিমান পাৰি সঠিকভাৱে পুনৰুৎপাদন কৰা।

২। ভাৱিক ঃ অনুবাদ কৰা পাঠৰ ধৰণৰ অনুকূলভাৱে গ্ৰহণকাৰী ভাষাৰ প্ৰাকৃতিক ৰূপ ব্যৱহাৰ কৰা।

৩। যোগাযোগমূলক ঃ অৰ্থৰ সকলো দিশ এনেদৰে প্ৰকাশ কৰা যাতে উদ্দেশ্যপ্ৰণোদিত দৰ্শকে সহজে বুজিব পাৰে।

ওপৰৰ ব্যাখ্যাৰ ভিত্তিত অনুমান কৰিব পাৰি যে আটাইতকৈ আদৰ্শ অনুবাদ পদ্ধতি হ'ল যোগাযোগমূলক অনুবাদ। ইয়াত পাঠকে বুজিব পৰা কথোপকথনৰ সৰল ভাষা ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। অনুবাদৰ ক্ষেত্ৰখনলৈ পিটাৰ নিউমার্কৰ আটাইতকৈ বিখ্যাত অৱদানসমূহ হ'ল তেওঁৰ যোগাযোগমূলক অনুবাদ তত্ত্ব আৰু অৰ্থবোধক অনুবাদ তত্ত্ব। বিশেষকৈ বেছিভাগ অনুবাদকে যোগাযোগমূলক অনুবাদ তত্ত্বক অনুবাদ অনুশীলনৰ সৈতে সংযুক্ত কৰাৰ প্ৰৱণতা অধিক থকা দেখা যায়, বিশেষকৈ সাহিত্যিক অনুবাদ অনুশীলনৰ দিশত। কিন্তু সাধাৰণ নিয়ম অনুসৰি পৰীক্ষামূলক ভিত্তিত প্ৰতিটো তত্ত্বৰ নিজস্ব গুণ আৰু অসুবিধা আছে বুলি কোৱাটো অনুচিত নহ'ব আৰু যোগাযোগমূলক অনুবাদ তত্ত্বও ইয়াৰ বাহিৰত নহয়। অনুবাদৰ যোগাযোগমূলক অনুবাদ তত্ত্বৰ বিশ্লেষণাত্মক পৰ্যালোচনা কৰি এই তত্ত্বৰ গুণ আৰু অসুবিধাসমূহ পৰীক্ষা কৰাটো অতি প্ৰয়োজনীয়। তেতিয়া অনুবাদকসকলে যোগাযোগমূলক অনুবাদ তত্ত্বৰ ভালদৰে ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰে আৰু ইয়াৰ বিভিন্ন অসুবিধাসমূহ এৰাই চলিব পাৰে, আৰু অনুবাদ অনুশীলনৰ দিকদৰ্শক হিচাপে উৎকৃষ্ট অনুবাদ প্ৰস্তুত কৰিবলৈ ইয়াৰ সৰ্বোত্তম ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰে।

সামৰণি ঃ অনুবাদ তত্ত্বৰ গতিশীল প্ৰকৃতিয়ে অনুবাদৰ নমনীয় আৰু অভিযোজিত পদ্ধতিৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ ওপৰত আলোকপাত কৰে। ফলপ্ৰসূ অনুবাদৰ বাবে উৎস পাঠ্যৰ প্ৰতি কেৱল নিষ্ঠাই সৰ্বস্ব নহয় বৰং ই লক্ষ্য পাঠকৰ সাংস্কৃতিক আৰু প্ৰসংগভিত্তিক বাস্তৱিকতাৰ প্ৰতি দায়বদ্ধতাৰো দাবী কৰে। একাধিক তাত্ত্বিক দৃষ্টিভংগীৰ একত্ৰীকৰণে অনুবাদকৰ এই

জটিলতাসমূহ সমাধান কৰাৰ ক্ষমতা বৃদ্ধি কৰিব পাৰে আৰু অধিক সঠিক আৰু সাংস্কৃতিকভাৱে অনুৰণিত অনুবাদ উৎপন্ন কৰিব পাৰে। অতি সীমিত অধ্যয়নক্ষেত্ৰৰ ভাষা আৰু সংস্কৃতিসমূহত অনুবাদ তত্ত্বৰ প্ৰয়োগৰ অনুসন্ধান কৰিলে এই তত্ত্বসমূহৰ সাৰ্বজনীনতা আৰু অভিযোজন ক্ষমতাৰ বিষয়ে মূল্যৱান অন্তৰ্দৃষ্টি লাভ কৰিব পৰা যাব। অনুবাদৰ ক্ষেত্ৰখনৰ বিকাশ অব্যাহত থকাৰ লগে লগে অনুবাদ সম্পৰ্কীয় দৃষ্টিভংগীৰ পৰিশোধন আৰু অনুবাদ পদ্ধতি উন্নতকৰণৰ ক্ষেত্ৰত অধিক অনুসন্ধানৰ প্ৰয়োজন হ'ব। বিভিন্ন তাত্ত্বিক অন্তৰ্দৃষ্টিক সামৰি লোৱা সামগ্ৰিক দৃষ্টিভংগীক আকোৱালি লৈ অনুবাদক আৰু পণ্ডিতসকলে একেদৰেই এই গুৰুত্বপূৰ্ণ অধ্যয়ন ক্ষেত্ৰখনৰ অন্তৰ্নিহিত প্ৰত্যাহ্বান আৰু সুযোগসমূহ ভালদৰে মোকাবিলা কৰিব পাৰে। ❑

তথ্যসূত্ৰ ঃ

1. Das, Bijay Kumar. A Handbook of Translation Studies. India, Atlantic Publishers & Distributors (P) Limited, 2005.
2. The Translation Studies Reader. United Kingdom, Routledge, Taylor & Francis Group, 2021.
3. Routledge àßncyclopedia of Translation Studies. United Kingdom, Routledge, 2001.
4. The Nature of Translation: àßssays on the Theory and Practice of Literary Translation. Germany, De Gruyter, 2011.
5. Translators' Strategies and Creativity: Selected Papers from the 9th International Conference on Translation and Interpreting, Prague, September 1995. In Honor of Jiøí Levý and Anton Popoviè. Netherlands, John Benjamins Publishing Company, 1998.
6. Hatim, Basil, and Munday, Jeremy. Translation: An Advanced Resource Book. United Kingdom, Routledge, 2004.
7. Translation: Theory and Practice, Tension and Interdependence. Netherlands, John Benjamins Publishing Company, 1991.
8. Toury, Gideon. Descriptive Translation Studies and Beyond. Netherlands, J. Benjamins Pub., 1995.
9. lûrî, Gid»ôn. In search of a theory of translation. Israel, Porter Inst. for Poetics and Semiotics, 1980.
10. Newmark, Peter. A Textbook of Translation. Japan, Prentice-Hall International, 1988.
11. https://archive.nptel.ac.in/content/storage2/courses/109104050/lecture9/9_5.htm
12. https://api.pageplace.de/preview/DT0400.9789027283467_A24761950/preview- 9789027283467_A24761950.pdf

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমীয়া চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনা

(*জোনাকী পৰুৱা Fireflies*- চলচ্চিত্রৰ আধাৰত)

ড° দিগন্ত ৰাজবংশী

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
ধমধমা আঞ্চলিক কলেজ,
ধমধমা-৭৮১৩৪৯
৯৪৩৫৩০৮৮৮৮
diganta.rajbongshi03@gmail.com

০.০ সাৰাংশ ঃ

সাম্প্রতিক অসমীয়া ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতিক পল্লৱিত কৰি ৰখা একেবাৰে শেহতীয়া এটা চেতনা হ'ল 'কুইয়ৰ'। নাৰী আৰু পুৰুষকেন্দ্রিক বিষমলিংগীয় ধাৰণাৰ বিপৰীতে এই 'কুইয়ৰ' চেতনাই লিংগ বৰ্ণালীক তাৰ স্বৰূপগত ধাৰণাৰে প্রতিনিধিত্ব কৰে। অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ ইতিহাসত এনে চেতনাৰ সংযোজন একেবাৰে নতুন। ভাৰতীয় চলচ্চিত্রৰ বুকুৰে আহি এই চেতনাই একবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয় দশকতহে অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ স'তে সংযোজিত হোৱা দেখা যায়। বিশ্ব কুইয়ৰ আন্দোলনৰ পৰিপ্রেক্ষিতত ভাৰত আৰু অসমৰ সামাজিক প্রেক্ষাপটত যি নতুন জোৱাৰৰ উন্মেষ ঘটিল, তাৰ ফলস্বৰূপে অসমৰ লগতে সমগ্র উত্তৰ-পূর্বাঞ্চলৰ ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ ক্ষেত্রখনতো উক্ত চেতনাই এটা আলোড়নৰ সৃষ্টি কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। সম্প্রতি এই আলোড়নৰ প্রভাৱতে অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ ভঁৰালত ভালেকেইখন নতুন শৈলীৰ চুটি আৰু দৈর্ঘ্য চলচ্চিত্রৰ নাম সংযোজিত হোৱা দেখা গৈছে। কুইয়ৰসকলৰ সামাজিক,পাৰিবাৰিক তথা মানসিক সমস্যাবোৰক বাস্তৱসম্মত ৰূপত তুলি ধৰি সংশ্লিষ্ট প্রসংগক সর্বগ্রাহ্য কৰাৰ ক্ষেত্রত এই চলচ্চিত্রৰ ভূমিকা আছে। অনুসন্ধানৰ জৰিয়তে জানিব পৰা মতে এতিয়ালৈকে উক্ত বিষয়ত কোনো বিজ্ঞানসম্মত অধ্যয়ন হোৱা নাই আৰু তাৰ পৰপ্রেক্ষিততে "অসমীয়া চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনা (*Fireflies-জোনাকী পৰুৱা* চলচ্চিত্রৰ আধাৰত)" শীর্ষক অধ্যয়নৰ প্রাসংগিকতা আছে। এই ক্ষেত্রত প্রস্তাৰিত অধ্যয়ন বিভিন্ন উপশ্রেণীৰে সিদ্ধান্তৰ দিশে অগ্রসৰ হৈছে। উল্লেখ্য যে এই সিদ্ধান্ত কুইয়ৰসকলৰ জীৱন-যন্ত্রণাৰ আধাৰত প্রতিস্থাপিত। সাম্প্রতিক সমাজৰ প্রেক্ষাপটত তৃতীয় লিংগৰ প্রতি যিদৰে অৱহেলা তথা অনাদৰ কৰি থকা হৈছে ,তেনে সময়ত অন্ততঃ পৰিয়ালৰ সমর্থন প্রয়োজনীয় বুলি ভবা হয়; কিন্তু পর্যৱেক্ষণ কৰিলে দেখা যায় যে পৰিয়াল বিশেষকৈ পিতৃ-মাতৃ বা বাই-ভনীৰ ফালৰ পৰা সমর্থন আদায় কৰিবলৈ কুইয়ৰসকল আজিৰ প্রেক্ষাপটত যেন অসমর্থ হৈছে। এই প্রসংগবোৰকে আগত ৰাখি চলচ্চিত্রই লিংগ আৰু যৌনতাকেন্দ্রিক শিক্ষাৰে কিদৰে সমাজক শিক্ষিত কৰি কুইয়ৰসকলৰ সামাজিক সহজ গ্রাহ্যত্বক ত্বৰান্বিত কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে,সেয়া আজি দৃষ্টিগোচৰ হয়। এই ক্ষেত্রত প্রস্তাৰিত চলচ্চিত্রখনৰ সফলতা বা বিফলতা উন্মোচিত কৰাৰ প্রয়োজন আছে আৰু এয়াই প্রস্তাৰিত গৱেষণা পত্রখনৰ মুখ্য উদ্দেশ্য তথা তাৎপর্য। প্রসংগতঃ উল্লেখ্য যে এই অধ্যয়ন মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক আৰু তুলনাত্মক পদ্ধতিৰে আগ বাঢ়িছে

যদিও প্রয়োজনভেদে পৰিচয়মূলক পদ্ধতিয়ো অগ্রাধিকাৰ পাইছে। প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখনত কুইয়ৰসকলৰ সামাজিক স্থিতি আৰু তাৰ কাৰণ, কুইয়ৰসকলৰ প্রতি সমাজৰ কৰণীয় আৰু তাৰ উপায়, সামাজিক শিক্ষাৰ ক্ষেত্রত শিল্পী-সাহিত্যিকৰ ভূমিকা, চলচ্চিত্রৰ ভূমিকা আদি বিভিন্ন প্রসংগক নির্দ্দিষ্ট শিতানত বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰি সামৰণিত এটা সিদ্ধান্ত দিয়া হৈছে। এই সিদ্ধান্ত নিশ্চিতভাৱে আলোচনাৰ বাবে ধার্য কুইয়ৰ চলচ্চিত্রৰ বিষয় ভিত্তিক অধ্যয়নৰ ফল।

বীজ শব্দ ঃ

চলচ্চিত্র, কুইয়ৰ,বিষমলিংগ,জোনাকী পৰুৱা আদি।

১.০ অৱতৰণিকা ঃ

অসমীয়া চলচ্চিত্র প্রায় নব্বৈ বছৰীয়া পৰিক্রমাৰ ফল। আৰম্ভণিৰ পৰা আজিলৈকে নানা ধৰণৰ চিন্তা-চেতনাই চলচ্চিত্রৰ বিষয়বস্তুক পল্লৱিত কৰি আহিছে। চলচ্চিত্রৰ ঐতিহাসিক প্রেক্ষাপট অধ্যয়ন কৰিলে এতিয়ালৈকে নির্মিত চলচ্চিত্রবোৰৰ বিষয়গত গুৰুত্ব উপলব্ধি হোৱাৰ লগতে এক শৈল্পীক সচেতনতাও অনুভূত হয়। সময়ে-সময়ে বিভিন্ন ভাব-অনুভূতি বা চেতনাই অসমীয়া চলচ্চিত্রক ৰাজ্যৰ পৰা ৰাষ্ট্র হৈ আন্তঃৰাষ্ট্রীয় পৰিমণ্ডল প্রদান কৰিছে। 'কুইয়ৰ' তেনে এক বিশ্বজনীন চেতনা যাৰ স্বৰূপ সাহিত্যৰ বিভিন্ন শাখাভেদে বিস্তাৰিত হোৱাৰ উপৰিও চলচ্চিত্রতো স্থান লাভ কৰিছে। মূলতঃ নাৰী আৰু পুৰুষ হিচাপে দুটা শাখাত বিভক্ত সমাজত তৃতীয় লিংগৰ স্থান আৰু মান নির্ণয়ৰ সংকতে সংশ্লিষ্ট ব্যক্তিৰ জীৱন যাপনৰ মানদণ্ডক যেনেদৰে নসাৎ কৰিছে,তাৰ পৰিপ্রেক্ষিততে সমাজত জৈৱিক দ্বন্দ্ব বাঢ়ি আহিছে।

অধিকাৰ আৰু মান্যতাৰ দাবীদাৰ হিচাপে তৃতীয় লিংগৰ দ্বাৰা সমাজৰ সর্বস্তৰতে সংঘটিত হৈছে হৰতাল আৰু প্রতিবাদ। এফালে বিষমকামী সমাজৰ দ্বৈত্ববাদী

নীতিনিষ্ঠতা আৰু আনফালে সমকামী বা কুইয়ৰসকলৰ পিতৃতান্ত্রিক দ্বৈত্ববাদী ধাৰণা ওফৰাই পেলোৱাৰ প্রৱণতা। সচেতন সংগঠক আৰু কুইয়ৰ লেখক বা সাংস্কৃতিক কর্মীসকলে এই কথাবোৰ পর্যৱেক্ষণ কৰি কুইয়ৰসকলৰ স্বার্থত মাত মতা দেখা গৈছে। এনে এক স্বার্থ জড়িত কার্য ব্যৱস্থাপনা হ'ল প্রকাশ ডেকাৰ ৰচনা আৰু পৰিচালনা তথা মিলিন দত্তৰ প্রযোজনাৰে *Fireflies- জোনাকী পৰুৱা* শীর্ষক চলচ্চিত্র। অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ ইতিহাসত কেইবাটাও বঁটা-বাহনেৰে এক চমকপ্রদ সাফল্য দেখুৱাবলৈ সক্ষম হোৱা এই চলচ্চিত্রখনে সমকামী, ৰূপান্তৰকামী নাৰী-পুৰুষ বা লিংগ অসংযত, ৰূপান্তৰকামী নাৰী আৰু হিজৰাৰ কথাবোৰ দেখুৱাই দিছে। এই ক্ষেত্রত কুইয়ৰ ব্যক্তিৰ দ্বাৰা অভিনয় সম্পাদন কৰা কার্যটোক এই সাফল্যৰ অন্যতম চাবিকাঠি হিচাপে ধৰা হৈছে। অসমীয়া চলচ্চিত্রত কুইয়ৰসকলৰ স্থিতি, কুইয়ৰ চেতনাৰ প্রেক্ষাপট আৰু অনুসংগ,বিষয়বস্তু আৰু উদ্দেশ্যগত সফলতা আদি বিভিন্ন দিশক কুইয়ৰ চেতনাৰ আলোকেৰে উদাহৰণসহ ব্যাখ্যা কৰাৰ প্রয়োজন আছে। তাৰ বাবে অসমীয়া চলচ্চিত্র আৰু কুইয়ৰসকলৰ সামাজিক অৱস্থানটো জানি বুজি লৈ খুব সাৱধানেৰে চিত্রনাট্য লেখক-পৰিচালক আৰু চলচ্চিত্র প্রযোজকেপৰিস্থিতিগত আৰু জৈৱিক তাগিদাৰে আগবাঢ়িছে। এই তাগিদা মানৱীয়তাৰ পক্ষত আৰু ভাৱনাত্মক দায়ৱদ্ধতাৰ অনুকূল। "অসমীয়া চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনা (*Fireflies-জোনাকী পৰুৱা* চলচ্চিত্রৰ আধাৰত)" শীর্ষক অধ্যয়নে এনে অনুকূলতাকে প্রতিষ্ঠাপিত কৰে।

১.০. ৰবিষয় পৰিধি ঃ প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখনে অসমীয়া চলচ্চিত্র আৰু অসমৰ কুইয়ৰ সমাজখনৰ প্রসংগ উত্থাপন কৰি Fireflies-

জোনাকী পৰুৱা শীর্ষক চলচ্চিত্রখনৰ চেতনা,বিষয় আৰু উদ্দেশ্যগত ধাৰণাক সামৰি ল'ব।

১.০.২ অধ্যয়ন সমীক্ষা ঃ "অসমীয়া চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনা (Fireflies-জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্রৰ আধাৰত)"ক অধ্যয়নকালত সংশ্লিষ্ট বিষয়ত বিভিন্ন চর্চা দেখা গৈছে। তাৰ ভিতৰত কেইটামান হ'ল—

ক) ফিল্মবাফ—আন্তঃৰাষ্ট্রীয় চলচ্চিত্র পত্রিকা (Filmbuff- A International Film Journal) খনত গৱেষিকা এলিচিয়া শইকীয়াই Fireflies-Jonaki Poru এ শীর্ষক আলোচনাটোত ভাৰতৰ উত্তৰ পূর্বাঞ্চলৰ প্রথমখন কুইয়ৰ চলচ্চিত্র হিচাপে যৌনতা আৰু লিংগ পৰিচয়ৰ ওপৰত সঠিক প্রশ্ন উত্থাপন কৰা বুলি মন্তব্য কৰিছে।

খ) GALAXY Empowering expressions, ১৫ নৱেম্বৰ, ২০২১ সংখ্যাত লেখক ডেভিদ লাগাচু (Devid Lagachu) ৰে Queering Assamese Cinema : The Journey So Far শীর্ষক লিখনিত প্রকৃত কুইয়ৰ নায়কৰ দ্বাৰা অভিনীত আৰু অতি সংবেদনশীল বিষয় উপস্থাপন কৰা প্রথম গৌৰৱময় অসমীয়া কথাছবি বুলি প্রশংসা কৰিছে।

গ) Queer Identity and Rights: Experiences From Assam শীর্ষক প্রতিবেদনত কৃষ্টি খাণ্ডেলৱালে অসমৰ কুইয়ৰসকলৰ বিভিন্ন সমস্যাৰ দিশত বিষদ ব্যাখ্যা আগবঢ়াই উক্ত দিশৰ সমাধান বিচাৰিছে।

ঘ) Quora Cheer Experience ৰ ব্লগাৰ চাৰু জৈনে Fireflies-Jonaki Porua শীৰ্ষক মতামত শিতানত চলচ্চিত্রখন তৃতীয় লিংগক নিন্দা কৰাৰ এক তিক্ত বাস্তৱতা হিচাপে অভিহিত কৰিছে।

১.০.৩ উদ্দেশ্য ঃ প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখনৰ মুখ্য উদ্দেশ্য হ'ল অসমৰ কুইয়ৰ সমাজখনৰ জীৱন চিত্রিত কৰি জনজাগৰণ সৃষ্টি কৰা। তদুপৰি চলচ্চিত্রখনৰ অন্তর্নিহিত চেতনা, বিষয় আৰু উদ্দেশ্যগত ধাৰণাৰ মূল্যায়গৱেষণা পত্রখনৰ অন্যতম উদ্দেশ্য।

১.০.৪ পদ্ধতি ঃ প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখনৰ বাবে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্রহণ কৰা হ'ব যদিও প্রয়োজন বিশেষে পৰিচয়মূলক পদ্ধতিও গ্রহণ কৰা হ'ব।

১.০.৫ সম্ভাব্য ফলাফল ঃ প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখনৰ অধ্যয়ন সম্পূর্ণ হ'লে নিম্নলিখিত ধৰণে কেইটামান ফলাফল আশা কৰিব পাৰি। যেনে—

ক) কুইয়ৰ চলচ্চিত্র হিচাপে আলোচ্য চলচ্চিত্রখনৰ বিষয়গত বৈশিষ্ট্যাৱলী উন্মোচিত হ'ব।

খ) কুইয়ৰ চেতনাৰ উদ্দেশ্যগত সফলতাই প্রতিষ্ঠা পাব।

গ) কুইয়ৰসকলৰ জীৱন ব্যাখ্যাই সামাজিক সহজ গ্রাহ্যত্ব লাভ কৰিব।

ঘ) কুইয়ৰ সম্পর্কীয় জাগৰণে এটা নতুন মাত্রা লাভ কৰিব।

ঙ) চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনাৰ নতুন অধ্যয়নৰ পথ প্রশস্ত হ'ব।

২ .০ অসমীয়া চলচ্চিত্র আৰু কুইয়ৰ ঃ

অসমীয়া চলচ্চিত্র বুলিলে মূলতঃ অসম প্রদেশত নির্মাণ কৰা চলচ্চিত্রসমূহক বুজা যায়। বিংশ শতিকাৰ তৃতীয়-চতুর্থ দশকৰ পৰা একবিংশ শতিকাৰ আজিৰ তাৰিখলৈকে যিমানবোৰ অসমীয়া চলচ্চিত্র নির্মাণ হৈছে, সেই সকলোৰে অন্তঃস্থলত সামাজিক আৰু সাংস্কৃতিক প্রকার্য সাধনেই একমাত্র যুক্তি হিচাপে দেখা গৈছে। জ্যোতিপ্রসাদ আগৰৱালাৰ দ্বাৰা প্রথম জয়মতী (১৯৩৫) আৰু দ্বিতীয়তে ইন্দ্রমালতী (১৯৩৯) কথাছবিৰ নির্মাণৰ জৰিয়তে অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ শুভাৰম্ভ আৰু সম্প্রসাৰণৰ যি যাত্রা আৰম্ভ হৈছিল, সেয়া প্রায় নব্বৈ বছৰীয়া পৰিক্রমাৰে আহি আহি আজিও বিষয় আৰু শৈলীৰ পৰিৱর্তন আৰু পৰিশোধনৰ মাজত বর্তি আছে। এইপৰিৱর্তন-পৰিশোধন সময়সাপেক্ষ আৰু পৰিস্থিতি নির্ভৰ যদিও তাৰ মাজতে কিন্তু সামাজিক দায়ৱদ্ধতাই এটা তাড়না হৈ ছবি নির্মাতাসকলক সততে উদ্বুদ্ধ কৰি ৰখা দেখা গৈছে। প্রাৰম্ভকালৰ পৰা অসমীয়া চলচ্চিত্রৰ এই নির্মাণ আৰু প্রসাৰ এডাল সৰল ৰেখাৰ দৰে পোন হোৱাৰ বিপৰীতে বহু উত্থান-পতনৰ মাজেৰে চন্দময়। তথাপি তাৰ মাজতো কিন্তু কেতিয়াও উদ্দেশ্যগত প্রাথমিকতা—'মনোৰঞ্জন','অৱসৰ বিনোদন' বা 'প্রাত্যহিক অৱসাদ দূৰীকৰণ' আদিৰ পৰা অসমীয়া চলচ্চিত্র বিচ্ছিন্ন হোৱা

নাই; বৰং শিল্পীসকলৰ সামাজিক মত প্রকাশৰ সহজ পন্থা হিচাপে নতুন লেখক,পৰিচালক আৰু ছবি নির্মাতাৰ হাতত অসমীয়া চলচ্চিত্রই নানানা বিষয়ৰ অন্বেষণ-অধ্যয়নৰ স'তে সাঙো�ৰ খাই পৰা দেখা গৈছে। ইয়াৰ লগে লগে আঞ্চলিক কোনো ইছ্যু বা স্পর্শকাতৰ বিষয়ৰ সৈতে দর্শকক সংলগ্ন কৰি সংশ্লিষ্ট দিশত এটা জাগৰণৰ সৃষ্টি কৰাত এই ছবি নির্মাণ কার্যটো সকলোৰে শিক্ষা-সংস্কাৰৰ ক্ষেত্রত অতি প্রাসংগিক হিচাপে বিবেচিত হৈছে। সেইবাবেই হয়তো সময়ে সময়ে নানা সমস্যাৰ সম্মুখীন হ'লেও অসমীয়া চলচ্চিত্রই উদ্দেশ্যগত মূল লক্ষ্যৰ যেনে—অসমীয়া সংস্কৃতিৰ প্রসাৰ-সম্প্রসাৰণৰ বাবে মঞ্চ নির্মাণ,সামাজিক বিষয়ৰ অন্বেষণ আৰু উপস্থাপন, সামাজিক শিক্ষা আৰু মনোৰঞ্জন প্রদান, জাতীয় গৌৰৱ সৃষ্টিৰে ঐক্যৰ ধাৰণা সম্প্রসাৰণ, সাংস্কৃতিক প্রতিভাৰ বিকাশৰ ক্ষেত্রত পদক্ষেপ গ্রহণ আৰু ৰাষ্ট্রীয় সংহতি সম্প্রসাৰণ আদিৰ পৰা বিচলিত হোৱা নাই। এই ক্ষেত্রত অসম চৰকাৰৰ অধীনস্থ অসম ৰাজ্যিক চলচ্চিত্র সংস্থায়ো উক্ত লক্ষ্য- উদ্দেশ্যকে উৎসাহিত কৰিবলৈ নিজৰ ৰেবছাইটত কেইটামান লক্ষ্য আৰু কার্য প্রণালী নির্দ্ধাৰণ কৰি ৰাখিছে।চ'এই লক্ষ্য আৰু কার্য প্রণালী অধ্যয়ন কৰিলেও দেখা যায় যে অসমীয়া চলচ্চিত্রক উৎসাহিত কৰিবলৈ চৰকাৰৰ তৰফৰ পৰা সকলোতকৈ গুৰুত্ব দিয়া বিষয়টো হ'ল ৰাজ সাহার্য অর্থাৎ আর্থিক অনুদান। ইয়াৰ দ্বাৰাই অনুমান কৰিব পাৰি যে চলচ্চিত্রক কেবল সামাজিক স্তৰতে নহয় ৰাজকীয় (চৰকাৰী) স্তৰতো এটা সামাজিক দায়ৱদ্ধতা হিচাপে বিবেচনা কৰা হয়। গতিকে ইয়াৰ দ্বাৰাই চলচ্চিত্রত সমাজ চিত্রণৰ প্রাসংগিকতা বা প্রয়োজনীয়তা কিমান নীতিনিষ্ঠ হোৱা উচিত সেয়া বুজিব পাৰি।

শিল্প-সংস্কৃতিৰ এটা শাখা হিচাপে চলচ্চিত্রই সদায়ে কোনো এখন সমাজ,সেই সমাজৰ সামাজিক ব্যৱস্থা বা কোনো ব্যৱস্থা আধাৰিত নীতি-নিয়মক কেন্দ্র কৰি আগ বাঢ়ে। সাহিত্যৰ দৰে চলচ্চিত্রৰ বুকুতো সময় বা সমাজৰ ক্রমানুপাতিক চৰিত্র

তাৰ স্বৰূপগত বৈশিষ্ট্যৰে সংৰক্ষিত হয়। শেহতীয়াভাৱে সাম্প্ৰতিক অসমীয়া চলচ্চিত্ৰত কেন্দ্ৰীয় বিষয় হিচাপে সংৰক্ষিত হোৱা তেনে এখন সমাজ হ'ল কুইয়ৰ সমাজ। এই 'কুইয়ৰ' হ'ল তৃতীয় লিংগৰ সকলো প্ৰকাৰৰ লিংগ বৰ্ণালীক বুজাবলৈ সম্প্ৰতি ব্যৱহাৰ কৰা ছাতিৰ ধাৰণাবাহী (Umbrella Term) এটা অভিধা। এই অভিধাটোৱে নাৰী সমকামী (Lesbian), পুৰুষ সমকামী (Gay), উভয়কামী (Bisexual), ৰূপান্তৰকামী (Transgender), আন্তঃলিংগী (Intersex), অদ্ভুত-অদ্বিতীয়-প্ৰশ্নবোধক (Queer), অযৌন (Asexual) আৰু অন্যান্যসকল যেনে—সৰ্বকামী (Pansuxual), সৰ্বলিংগী (Omnisexual), অৰ্ধযৌন (Demisexual) বহুযৌন (Polysexual), অযৌনতা (Abrrosexual), বৌদ্ধিকযৌন (Sapiosexual), একযৌন (Morosexual), ধূসৰ অযৌন (Quaisexual), পাৰস্পৰিক যৌন (Reciprosexual) আৰু বৰ্ণালী যৌন (Spectrasexulity) আদি যৌন আৰু লিংগীয় সংখ্যালঘুৰ জীৱন শৈলী,আশা-আকংক্ষা, সামাজিক, সাংস্কৃতিক, ৰাজনৈতিক আৰু মানসিক আদি সকলো স্তৰক সামৰি এটা পৃথক গোট হিচাপে আত্ম প্ৰকাশ কৰা দেখা গৈছে। লিংগ বৰ্ণালীৰ সমন্বয়ত গঠিত এই বৃহৎ গোটটোৰ স্বৰূপ বিচাৰ কৰিলে উপলব্ধ সত্যটো হ'ল যে ইয়াৰ অন্তৰ্গত প্ৰত্যেকটো শাখাই একোটা পৃথক বৈশিষ্ট্যক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। মন কৰিবলগীয়া যে বৈশিষ্ট্য পৃথক হ'লেও সকলো শাখাৰ প্ৰাথমিকতা হ'ল বিষমকামী ব্যৱস্থাৰ দ্বাৰা 'স্বাভাৱিক' আৰু 'প্ৰাকৃতিক' হিচাপে তৃতীয় লিংগৰ প্ৰতি স্বতঃস্ফূৰ্ত আৰু চৰ্তহীন স্বীকৃতি। এই দাবীৰে অসমত গঠন হোৱা সুকীয়া (দ্ধহুন্দট্ট), কুইয়ৰ প্ৰাইড গুৱাহাটী (QUEER PRAID GUWAHATI), সমন্বয় (XOMONNOY), শব্দ (XOBDO), দৃষ্টি (Drishti), ৰেইনব'হোম অৰ চেভেন চিচ্টাৰচ্ (Rainbow Home Seven Sisters), অল আচাম ত্ৰান্সজেণ্ডাৰ এছোচিয়েচন (All Assam Transgender Association) আদি কুইয়ৰ সংগঠনবোৰে সকলো স্বীকৃতিৰ উপৰিও সমাজৰ তৃণমূল পৰ্যায়তো বস্তুগত আৰু ভাৱগত আদৰ বাঞ্ছা কৰিছে। ইয়াৰ যুক্তি হিচাপে এই গোটবোৰে আত্মপক্ষ সমৰ্থনত কয় যে নাৰী বা পুৰুষ শ্ৰেণীভুক্ত হৈ বিষমকামী হোৱাটো যিদৰে স্বাভাৱিক আৰু প্ৰাকৃতিক; সমকামী, উভয়কামী, ৰূপান্তৰকামী, আন্তঃলিংগী, অদ্ভুত-অদ্বিতীয়-প্ৰশ্নবোধক, অযৌন আৰু অন্যান্য সকলো প্ৰকাৰৰ হোৱাটোও সেই একেদৰে স্বাভাৱিক আৰু প্ৰাকৃতিক। সেইবাবে পুৰুষতন্ত্ৰৰ দ্বাৰা সৃষ্ট বিষমকামী ব্যৱস্থাৰ ৰক্ষকসকলে সমাজৰ সৰ্বস্তৰত অস্বাভাৱিক বা অপ্ৰাকৃতিক জ্ঞান কৰি কুইয়ৰসকলক বৰ্জন কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিলেও, এক সংঘৱদ্ধ ব্যৱস্থাৰ মাজেৰে কুইয়ৰসকলে নিজকে একত্ৰিত কৰি ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। সামাজিক অধিকাৰ আৰু সুৰক্ষাৰ বিপৰীতে কুইয়ৰসকলে ভিন্ন প্ৰত্যাহ্বান যেনে—সামাজিক গ্ৰহণযোগ্যতাৰ অভাৱ, পক্ষপাতমূলক হিংসা আৰু বৈষম্য, মানসিক স্বাস্থ্যজনিত সমস্যা, প্ৰান্তীয়কৰণ, আৰ্থিক অনিশ্চয়তা, সম্প্ৰদায়গত সমৰ্থনৰ অভাৱ,নেতিবাচক সংবাদ পৰিৱেশন আৰু লিংগ নিৰপেক্ষ প্ৰচাৰগাৰৰ অভাৱ আদিৰ উপৰিও মুখ্য চাৰি প্ৰকাৰৰ প্ৰত্যাহ্বান যেনে— পাৰিবাৰিক প্ৰত্যাখ্যান, শাৰীৰিক তথা আৱেগিক হিংসা, লিংগভিত্তিক বৈষম্য আৰু শৈশৱকালীন যৌন ধৰ্ষণ আদিৰ স্থায়ী সমাধানৰ ওপৰত জোৰ দিছে। ইয়াৰ বাবে এক গনতান্ত্ৰিক সহণশীলতাৰে পৰম্পৰাগত বিষমকামী ব্যৱস্থাক প্ৰত্যয় নিয়াবলৈ তেওঁলোকে নেৰানেপেৰা অহো-পুৰুষাৰ্থ কৰিছে। ইয়াৰ পৰিপ্ৰেক্ষিততে শেহতীয়াভাৱে সাম্প্ৰতিক সমাজ প্ৰেক্ষাপটত কুইয়ৰসকলৰ প্ৰতি সহজ গ্ৰাহ্যত্বৰ মানসিকতা এটা গঢ় লৈছে যেন বোধ হয়। এই মানসিকতাৰ পৰা উত্থিত বোধ বা চেতনাৰে উদ্বুদ্ধ হৈ অসমৰ শিল্পী-সাহিত্যিক আৰু সাংস্কৃতিক কৰ্মীসকলে কুইয়ৰ গ্ৰাহ্যত্বক অধিক ত্বৰান্বিত কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিছে। ফলত অসমৰ সম্প্ৰদায় আৰু সমাজ নিৰ্বিশেষে কুইয়ৰকেন্দ্ৰিক এটা নতুন জাগৰণৰ সূচনা হৈছে আৰু ইয়াৰ আধাৰতে গল্প, কবিতা , উপন্যাস, নাটক, গীত আৰু চলচ্চিত্ৰ আদি নিৰ্মাণ সম্ভৰ হৈছে।

কুইয়ৰ চেতনাই অসমীয়া চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাতাসকলক প্ৰভাৱিত কৰাৰ ফলস্বৰূপে অসমত ভালেকেইখন তেনেধৰণৰ চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাণ হোৱা দেখা গৈছে। তেনে চৰিত্ৰসমূহৰ ভিতৰত পূৰ্ণদৈৰ্ঘ্যৰ কেনী বসুমতাৰীৰ ল'কেল কুংফু-21(2017), ণ্ঠমিলিন দত্তৰ Fireflies-জোনাকী পৰুৱা (2020), তিলোত্তমা তালুকদাৰৰ সত্যঃ দ্যা ট্ৰুথ (2024) আৰু সুব্ৰত কাকতিৰ বিদুৰভাই (2024) আদি আৰু চুটি ছবিসমূহৰ ভিতৰত দ্বীপজ্যোতি ডেকাৰ বালা- এচেন্স অৰ লাভ (2020), গৌৰৱ বাৰুৱা আৰু প্ৰজ্ঞান বল্লভ গোস্বামীৰ দ্বাৰা পৰিচালিত চাইলেন্স ইন দ্যা উইণ্ড (2020), অৰিন্দম বৰুৱাৰ উইং ওৱানচ্ ওৱে...(২০২১), সীমান্ত ফুকনৰ টিয়াৰছ অৰ ৰেইন-দ্যা অদাৰছ (২০২১), পাৰ্থজিৎ বৰুৱাৰ দ্যা ছিলখেকম অৰ গড্-

ঈশ্বৰ সন্ধান (২০২২), ভাৰ্গব লহকৰৰ দ্যাকেৰেছ (২০২২), আদি অন্যতম। ইয়াৰ ভিতৰত মিলিন দত্তৰ প্ৰযোজনা কিন্তু প্ৰকাশ ডেকাৰ দ্বাৰা ৰচনা আৰু পৰিচালনাৰে 'Fireflies-জোনাকী পৰুৱা' চলচ্চিত্ৰখন পূৰ্ণ পৰ্যায়ৰ কুইয়ৰ চলচ্চিত্ৰ হিচাপে বিবেচিত হৈছে। যথা স্থানত হোৱা বিচাৰ-বিশ্লেষণে এই কথা স্পষ্ঠ কৰিব।

৩.০ Fireflies- **জোনাকী পৰুৱাত কুইয়ৰ চেতনা ঃ**

Fireflies- জোনাকী পৰুৱা শীৰ্ষক চলচ্চিত্ৰখনৰ লেখক-পৰিচালক হ'ল প্ৰকাশ ডেকা আৰু প্ৰযোজক হ'ল মিলিন দত্ত। ভ'ৰটেক্চ ফিল্ম (Vortex Films) ৰ সহযোগত ২০২০ চনত নিৰ্মাণ কৰি উলিওৱা এই চলচ্চিত্ৰখনৰ সহযোগীসকলৰ ভিতৰত আছে সংগীত ব্যৱস্থাপক তৰালী শৰ্মা, শব্দ যন্ত্ৰী দেৱজিৎ গায়ন, সম্পাদক ৰতন শীল শৰ্মা আৰু চলচিত্ৰণ সম্পাদক পাৰ্থ বৰগোহাঁই আদি। ইয়াৰ উপৰিও অন্যান্য কলাকুশলী যেনে— বেঞ্জামীন দৈমাৰী, বিতোপি দত্ত,নিবেদিতা কলিতা, পলাশ মেছ, মানস ৰঞ্জণ, লিকুমণি চৌধুৰী, মীনা ইংতি,অপূর্ব গোস্বামী, উদয় শংকৰ,অতনু মহন্ত আদিয়েও উক্ত চলচ্চিত্ৰৰ চিত্ৰায়ণত পূৰ্ণ সহযোগিতা আগবঢ়াইছে। গুৱাহাটী, তেজপুৰ আৰু নলবাৰীৰ বিভিন্ন অঞ্চলত চিত্ৰগ্ৰহণ কৰা এই চলচ্চিত্ৰখনে ২০২১ চনৰ ছজ্জ সংখ্যক ৰাষ্ট্ৰীয় চলচ্চিত্ৰ বঁটা লাভ কৰাৰ উপৰিও অষ্টম ৰাজ্যিক চলচ্চিত্ৰ মহোৎসৱতো শ্ৰেষ্ঠ সাজ-পোছাক, শ্ৰেষ্ঠ সংগীত পৰিচালনা আৰু শ্ৰেষ্ঠ অভিনয়কে সামৰি শ্ৰেষ্ঠ চলচ্চিত্ৰ বঁটা লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। ইয়াৰ উপৰিও কুইয়ৰ বিষয়ত গৱেষণা কৰা বিশ্বৰ আগ শাৰীৰ ভালেকেইখন প্ৰতিষ্ঠিত বিশ্ববিদ্যালয়ে গৱেষণাৰ বিষয় হিচাপে এই চলচ্চিত্ৰখনক বাচনি কৰিছে।প্ত উল্লেখ্য যে মূল চৰিত্ৰ কুইয়ৰ বেঞ্জামীন দৈমাৰীৰ দ্বাৰা ৰূপায়ন কৰা 'জাহ্নু'ৰ অভিনয়ে লিংগ পৰিচয় আৰু যৌনতাৰ প্ৰসংগত প্ৰশ্ন উত্থাপন কৰি কুইয়ৰ চলচ্চিত্ৰৰ উদ্দেশ্যগত সফলতাৰ বাট কাটিছে। Fireflies-জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্ৰত কুইয়ৰ চেতনা প্ৰসংগত প্ৰথমতে কেইটামান কথা জানি লোৱা ভাল হ'ব। সেইবোৰ হ'ল যে চলচ্চিত্ৰখনৰ লেখক- পৰিচালক প্ৰকাশ ডেকা এগৰাকী স্বতন্ত্ৰ ছবি পৰিচালক আৰু তৃতীয় লিংগৰ জীৱন ধাৰণৰ প্ৰতি আগ্ৰহী ব্যক্তি। আমাক ব্যক্তিগতভাৱে জনোৱা মতে তেখেতে সৰুৰে পৰাই হিজৰা বা তেনে অন্যান্য তৃতীয় লিংগসকলক দেখি তেওঁলোকক জানিবলৈ এক মানসিক টান অনুভৱ কৰি আহিছিল। ইয়াৰ বাবে তৃতীয় লিংগৰ জীৱনকেন্দ্ৰিক ঘটনাবোৰ জানিবলৈ তেখেতে এটা প্ৰচেষ্টা চলাই ছিল। ইয়াৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত অসমৰ বিভিন্ন কুইয়ৰ ব্যক্তিসকলৰ প্ৰতি দৃষ্টি দিয়াত অসহনীয় আৰু মৰ্মান্তিক কিছু তথ্য তেখেতৰ হাতলৈ আহিছিল। এই তথ্যবোৰে মনত গভীৰ প্ৰভাৱ পেলাই কাহিনীকাৰ প্ৰকাশ ডেকাৰ জীৱনবোধক যি ধৰণে উদ্বেলিত কৰি তুলিছিল তাৰ ফলতে তেখেতে এই কুইয়ৰ সমাজখনৰ প্ৰতি কিবা এটা কৰাৰ মন পুহি ৰাখিছিল। তেনে সময়তে এখন বিবাহ অনুষ্ঠানত অসমৰ লগতে সমগ্ৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ জেষ্ঠ্য কুইয়ৰ কৰ্মী তথা ৰূপান্তৰকামী পুৰুষ (trans man) মিলিন দত্তৰ সৈতে তেখেতৰ প্ৰথমবাৰৰ বাবে সাক্ষাৎ হয়। ২০১৩ চনত উচ্চতম ন্যায়ালয়ে সমকামিতাক অপৰাধ বুলি গন্য কৰি ৩৭৭ ধাৰা প্ৰৱৰ্তন কৰাত, বিৰোধ বা বিক্ষোভৰ অৰ্থে ভাৰতবৰ্ষৰ লগতে অসমৰ গুৱহাটীত ২০১৪ চনৰ ৯ ফ্ৰেব্ৰুৱাৰীত প্ৰথমবাৰৰ বাবে যি কুইয়ৰ প্ৰাইড বা গৌৰৰ যাত্ৰাৰ আয়োজন কৰা হৈছিল, মিলিন দত্ত সেই অনুষ্ঠানৰ আয়োজক আছিল। অসমৰ কুইয়ৰসকলৰ সামাজিক আৰু ৰাজনৈতিক অধিকাৰৰ হকে জীৱনযোৱা আন্দোলন আৰু অন্যান্য জাগৰণমূলক কার্য সম্পাদন কৰা ব্যক্তি হিচাপে কুইয়ৰসকলৰ প্ৰতি দত্ত জৈৱিকভাৱে প্ৰচুৰ দায়ৱদ্ধ আছিল। তেনে এক দায়ৱদ্ধতাৰ প্ৰভাৱতে উপযুক্ত ব্যক্তি জ্ঞান কৰি প্ৰথম সাক্ষাততে মিলিন দত্তই কুইয়ৰ বিষয়ক তথ্যচিত্ৰ এখন নিৰ্মাণ কৰাৰ প্ৰস্তাৱ দিছিল। অকশ্যে ডেকাৰ ইচ্ছা মতেই তথ্যচিত্ৰৰ ঠাইত চিত্ৰনাট্য লিখি চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাণৰ কথাটো পৰৱৰ্তী সময়ত আগবঢ়াইছিল। উল্লেখ্য যে প্ৰকাশ ডেকাৰ দ্বাৰা এই প্ৰস্তাৱ গ্ৰহণ কৰাৰ মাজেৰে কুইয়ৰসকলৰ তদানীন্তন স্থিতিৰ ভিত্তিত ভৱিষ্যতৰ আদর্শাত্মক বাস্তৱতাৰ প্ৰতি মিলিন দত্তৰ একালৰ যি আশা —'গৌৰৱ যাত্ৰা'ৰ মাজেৰে অসমৰ কুইয়ৰসকলে যি গৌৰৱবোধ লাভ কৰিছে, সিয়েই পৰৱৰ্তী সময়ত বার্ষিক অনুষ্ঠানৰ ৰূপত কুইয়ৰসকলৰ শক্তি-সামর্থক চিহ্নিত কৰিব।৬ —সেয়াহে যেন বাস্তৱায়িত হ'বলৈ ওলাইছিল। গতিকে ক'ব পাৰি যে চলচ্চিত্ৰখনৰ চিত্ৰনাট্য ৰচক আৰু পৰিচালক প্ৰকাশ ডেকাৰ অন্তৰস্থ কুইয়ৰ চেতনা পৰিৱেশ বা পৰিস্থিতিগত হোৱাৰ বিপৰীতে প্ৰযোজক মিলিন দত্তৰ কুইয়ৰ চেতনা আছিল এশ শতাংশই জৈৱিক।

Fireflies-জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্ৰত কুইয়ৰ চেতনাৰ প্ৰসংগত কুইয়াৰ চেতনাৰ মর্ম উপলব্ধি কৰাটো অতিকৈ প্ৰয়োজনীয়। এই ক্ষেত্ৰত অধ্যয়ন কৰিলে বুজা যায় যে সাহিত্যত বা চলচ্চিত্ৰত কুইয়ৰ চেতনা মানে সেই অনুভূতি

বা সচেতনতা, যি সঁচাকৈয়ে কুইয়ৰ ব্যক্তিৰ আভ্যন্তৰীণ আৰু বাহ্যিক অস্তিত্ব,লিংগ আৰু যৌন অভিমুখিতাৰ প্ৰভাৱ বা প্ৰসংগৰ আধাৰত বৰ্তি থাকে। অৰ্থাৎ কুইয়াৰ ব্যক্তিৰ জীৱনকেন্দ্ৰিক ঘটনা-পৰিঘটনাৰ প্ৰভাৱত লেখক(যি কুইয়ৰ নহ'বও পাৰে)ৰ মনত যি চিন্তা,অনুভৱ বা অনুভূতি জাগ্ৰত হয়, সিয়ে পাৰিপাৰ্শ্বিকতাৰ প্ৰভাৱত নতুন ৰূপ ধৰি সাহিত্য বা চলচ্চিত্ৰৰ দৰে সাংস্কৃতিক কাৰ্যৰ দ্বাৰা প্ৰতিস্থাপিত হয়। এই চেতনাৰ ব্যাখ্যা প্ৰায়ে বিষয়ভিত্তিক যদিও কেতিয়াবা ই চৰিত্ৰ বা পৰিৱেশভিত্তিক হোৱাৰো সম্ভাৱনা থাকে। গল্প,কবিতা, উপন্যাস,স্মৃতিকথা,নাটক, সংগীত বা চলচ্চিত্ৰ যি আকাৰতে নহওক কিয়, এই চেতনাই কুইয়ৰ সমাজৰ সমস্যা আৰু অন্যান্য অনুষংগবোৰক ভালকৈয়ে প্ৰতিপালিত কৰে। ইয়াৰ জৰিয়তে কুইয়ৰ বা তৃতীয় লিংগকেন্দ্ৰিক বিষয়বোৰ সহজভাৱে চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্যাৱলীৰে সৈতে উন্মোচিত হৈ পৰে। ফলত পৰম্পৰাগত লিংগ ভূমিকাক প্ৰত্যাহ্বান জনাই বৈচিত্ৰ্যময় যৌনতাক অন্বেষণ কৰিব পৰা ভিন্ন আখ্যানৰ জন্ম হয়। কিন্তু এই ক্ষেত্ৰত লেখক বা ছবি নিৰ্মাতা যদি স্বয়ং কুইয়ৰ ব্যক্তি হয়, তেতিয়া হ'লে ব্যক্তিগত জীৱন অভিজ্ঞতাৰ আধাৰত তেনে ব্যক্তিয়ে সংশ্লিষ্ট চেতনাৰে স্বতঃস্ফুৰ্তভাৱে উদ্বুদ্ধ হোৱাৰ সম্ভাৱনা থাকে। আনহাতে সেই উদ্বুদ্ধতাখিনিয়ে সামাজিক দায়ৱদ্ধতাৰে পৰিপূৰ্ণ হৈ কোনো কাৰ্য-ক্ৰমণিকাৰে বিকশিত হোৱাৰ অৱকাশ থাকে। ইয়ে কোনো সাহিত্য বা শিল্প-সংস্কৃতিৰ ধাৰণা বহণকাৰী চলচ্চিত্ৰৰ জন্ম দি বিষমকামী ব্যৱস্থাৰ সম্মুখত লিংগ বা যৌনতা সম্পৰ্কত নতুন প্ৰশ্নৰ অৱতাৰণা কৰে। মন কৰিবলগীয়া যে সেই প্ৰশ্নৰ বুকুতে থাকে তৃতীয় লিংগৰ অস্তিত্ব ৰক্ষাৰ প্ৰসংগ।

৩.০.১ Fireflies- জোনাকী পৰুৱাৰ বিষয়গত ধাৰণা ঃ

Fireflies - জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্ৰখনৰ বিষয়গত দিশত কুইয়ৰ চেতনা বিচাৰ কৰিলে দেখা যায় যে কথাছবিখন কুইয়ৰ অৰ্থাৎ 'এল জি বি টি কিউ আই এ প্লাচ' লিংগীয় সংখ্যালঘু ব্যক্তিৰ জীৱন আধাৰিত। কাহিনীভাগলৈ চালে আমি দেখোঁ যে সহজ-সৰল পিতৃ-মাতৃৰ নুমলীয়া সন্তান 'জাহ্নু' জৈৱিকভাৱে পুৰুষ কিন্তু আত্মিকভাৱে নাৰী (trans woman)। বায়েক 'জুমু'ক ৰূপান্তৰকামী পুৰুষ (trans man)যেন লাগিলেও অদ্ভুত-প্ৰশ্নবোধক অথবা লিংগ অসংযত ব্যক্তি হিচাপে যৌন অভিমুখ, যৌন পৰিচয় বা লিংগৰ ধাৰণাৰ বাহিৰত বিষমকামী, সমকামী বা উভয়লিংগীয় কোনো শাখাৰে অন্তৰ্ভুক্ত কৰিব নোৱাৰি। এনে অৱস্থাত 'জাহ্নু' আৰু 'জুমু'ৰ বাবে পৰিয়াল লজ্জিত হ'বলগীয়া বুলি ভাবি ককায়েক 'বাবা' অনবৰতে খণ্ডত অগ্নিশৰ্মা হৈ থাকে। জাহ্নুক পৰিয়ালৰ সকলোৱে মৰমতে 'মইনা' বুলি মাতে যদিও গাঁৱৰ আন ডেকা-বুঢ়া সকলোৱে সুবিধা পালেহ 'লেডিচ', 'ছোৱালী' বা 'মাধুৰী' বুলি তুচ্ছ-তাচ্ছিল্য কৰে, শাৰীৰিক আৰু যৌন নিৰ্যাতন চলায়। অৱশ্যে বিশ্বাসী বান্ধৱী নিবিয়ে জাহ্নুৰ লিংগ বা যৌনতা সম্পৰ্কে মূৰ নঘমাই আৰু কোনো আপত্তি বা প্ৰশ্ন উত্থাপন নকৰি যেনে আছে তেনেকৈয়ে তাক গ্ৰহণ কৰে। তথাপি ঘৰে-বাহিৰে ইতিকিং আৰু অসম্মান পোৱাৰ পাছত নিজৰ মানসিক অৱস্থাটো নৈখনৰ আগত ব্যক্ত কৰি নৈৰ উৎস বিচাৰি গৈ থাকোঁতে সমকামী পলাশক জাহ্নুৱে লগ পায় আৰু বুজিবলৈ সমৰ্থ হয় । ভাল লগা বা ভাল পোৱাৰে আগবাঢ়ি এটা সময়ত পৰস্পৰে পৰস্পৰৰ প্ৰেমত পৰে আৰু অপাৰেশ্বন কৰি ছোৱালী হৈ হ'লেও বিয়াৰ বাবে জাহ্নুৱে পলাশক প্ৰস্তাৱ দিয়ে। কিন্তু সমাজৰ পৰা চিৰবিচ্যুত হোৱাৰ ভয়ত পলাশে এই প্ৰস্তাৱ প্ৰত্যাখ্যান কৰে আৰু এই কথাবোৰ বিৰূপ ভাৱেৰে গাঁৱৰ সকলোৰে মাজত বিয়পি পৰাত জাহ্নুৱে ককায়েক আৰু গাঁৱৰ আন ডেকাৰ দ্বাৰা শাৰীৰিক, মানসিক আনকি যৌন নিৰ্যাতন পৰ্যন্ত পাবলগীয়া হয়। এনেকৈয়ে আত্মীয়-স্বজন, স্কুলৰ সহপাঠী; গাঁৱৰ মানুহ আৰু শেষত পলাশৰ দ্বাৰাও প্ৰত্যাখ্যিত হৈ জাহ্নুৱে চহৰৰ এটা 'হিজৰা' সম্প্ৰদায়ত যোগদান কৰে। কোনোমতে জীৱনটো চলাবলৈ প্ৰায়ে যৌনকৰ্মী হিচাপে আত্মনিয়োগ কৰিব লগা 'হিজৰা'ৰ জীৱন জাহ্নুৰ বাবে কোনোমতে সহজসাধ্য নহয়; তথাপি বিষমকামী সমাজৰ পৰা নাতিদূৰত নিত্য নিৰ্যাতনৰ পৰা মুক্ত হৈ জীয়াই থকাৰ বাহিৰে তাৰ হাতত আন উপায় নাথাকে। — মূলতঃ এয়াই Fireflies-জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্ৰখনৰ কথাবস্তু। আখ্যানভাগক একত্ৰিত কৰা ঘটনাসমূহৰ মাজত মাক-বাপেক আৰু বায়েক জুমুৰ মৰম, ভালপোৱা আদি থাকিলেও সৰহকৈ ককায়েকৰ শাৰীৰিক নিৰ্যাতন, টিউচন মাষ্টৰৰ দ্বাৰা যৌন নিৰ্যাতন, গাঁৱৰ আন ল'ৰাৰ দ্বাৰা শাৰীৰিক তথা যৌন নিৰ্যাতন আৰু গাঁৱলীয়া বয়োজ্যেষ্ঠৰ দ্বাৰা ঠাট্টা-মস্কৰা ভৰা মানসিক নিৰ্যাতন আদিৰে অনৰৱতে বিষমকামী সমাজৰ হেঁচাত জাহ্নুৰ অসহনীয় মানসিক অৱস্থাটো গোটেই কাহিনীভাগত বিবৃত হৈছে। চলচ্চিত্ৰখনৰ আৱন্তণিত যৌন কৰ্মীৰূপী 'জাহ্নৱী'ৰ অতীত অৱস্থাটো সপোনতে জাহ্নুৰ মাজেৰে চকামকাকৈ দেখুৱাই চলচ্চিত্ৰখনৰ শেষত দ্বৈত্ববাদী বিষমকামী সমাজৰ কথা মতে মৃত পিতৃৰ শৰদাহ কাৰ্য এৰি

অলস, শোকাকুল হৈও শোকহীন যেন আৰু উদাস মনেৰে ঘৰৰ পৰা আঁতৰি যোৱা দেখুওৱা হৈছে। ইয়ে দৰ্শকৰ হৃদয়বৃত্তক আকুল কৰি অনুৰূপ ব্যৱস্থাৰ অৱসান ব্যঞ্জিত কৰিছে। ইয়াৰ মাজেৰে বিষয়গত দিশৰ পৰা আলোচ্য চলচ্চিত্রখন কুইয়ৰ চেতনা প্রধান হিচাপে সফল হোৱাটো প্রায় নিশ্চিত হৈছে।

৩.০.২ Fireflies- **জোনাকী পৰুৱাৰ উদ্দেশ্যগত ধাৰণা ঃ**

Fireflies - জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্রত কুইয়ৰ চেতনা প্রসংগত উদ্দেশ্যগত ধাৰণালৈ চালে দেখা যায় যে শিল্প-সাহিত্যৰ গুৰিত যি ধৰণৰ একোটা নির্দ্দিষ্ট উদ্দেশ্য থাকে বা থাকিব লাগে, সেয়া আলোচ্য চলচ্চিত্রখনতো আছে। সাধাৰণভাৱে অনুসন্ধান কৰিলে সকলো কুইয়ৰ নির্মিতিতে মুখ্য উদ্দেশ্য হিচাপে মানৱীয়তাৰ পক্ষত সর্বপ্রকাৰৰ লিংগকেন্দ্রিক বৈষম্য আৰু পীড়নৰ বিৰোধীতাৰ প্রতি সামাজিক দায়ৱদ্ধতাৰ কথাটো পোৱা যায়। সামাজিক দায়ৱদ্ধতাই আকৌ যৌনতাৰ তৰল আৰু মানৱীয় পৰিৱেশন প্রকৃতিৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰি পুৰুষ নিয়ন্ত্রিত প্রতিষ্ঠিত সামাজিক নীতি বা দ্বৈত্ববাদী গোটসমূহ যেনে-যৌন (বিষমযৌন আৰু সমকামী), লিংগ (পুৰুষ আৰু মহিলা), শ্রেণী (ধনী আৰু দুখীয়া), আৰু বর্ণগত (শ্বেত আৰু অশ্বেত) আদিৰ প্রতি বিভিন্ন প্রশ্ন উত্থাপন কৰে। তদুপৰি সামাজিক আৰু ৰাজনৈতিক বিষয় হিচাপেও কুইয়ৰ চেতনাই যৌনতা আৰু লিংগ প্রকাশৰ বাবে যুক্তি আগবঢ়াই। তদুপৰি এই যুক্তিতে নিহিত থাকে কুইয়ৰ চেতনাৰ শিপামূলীয় আন কিছু গুৰুত্বপূর্ণ উদ্দেশ্য যেনে— অস্তিত্বৰ অধিকাৰৰ পৰা বঞ্চিতসকলৰ মাজত আত্মদৃষ্টিৰ পৰিপোষণ,আভ্যন্তৰীণ পক্ষপাতিত্বৰ প্রতি উমৈহতীয়া ক্ষেত্র নির্মাণ,যৌন বৈচিত্র্যৰে আৰামদায়ক আৰু স্বাধীন জীৱন যাপনৰ প্রতি সমর্থন, কুইয়াৰ সম্প্রদায়ৰ গৌৰৱ-সংহতি আৰু অধিকাৰৰ সত্যক স্বীকৃতি প্রদান,সমকামীসকলৰ স্বকীয় কর্মশৈলী নিৰূপন ,জীৱনদৃষ্টি আৰু পাৰস্পৰিক সম্বন্ধৰ বৈধত্বক উৎসাহিতকৰণ, বিষমকামীৰ ভাৱনাত্মক পৰম্পৰাৰ অৱসান আৰু কুইয়ৰকেন্দ্রিক হীনমন্যতাৰ অৱলুপ্তিকৰণ, বিষমকামীৰ নিগ্রহ-নিপীড়ন মষিমুৰ কৰি পিতৃতান্ত্রিক সমাজ গাঁথনিৰ বিৰুদ্ধাচৰণ, সমলিংগ আৰু যৌনতাৰ ক্ষেত্রত বাধাকাৰী ব্যক্তি বা ব্যৱস্থা আঁতৰাই মানৱ অস্তিত্বৰ প্রাকৃতিক অধিকাৰ প্রতিপালন, সমকামীক বিষমযৌন পৰিভাষাৰ পৰা মুক্তিৰ ধাৰণা সম্প্রসাৰণ, বিষমলিংগীয় সম্পর্কৰ বিকল্প মুক্ত সম্পর্কক সৃজনশীলতাৰ সক্ষমতাৰে বৈধকৰণ আৰু যৌনতাৰে আত্ম পৰিচয়ৰ সম্ভাৱনাক সক্রিয়কৰণ আদি। এই উদ্দেশ্যগত ধাৰণাৰে আলোচ্য চলচ্চিত্রখনৰ কাহিনীভাগলৈ চালে দেখা যায় যে Fireflies - জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্রত জাহ্নু আৰু জুমুৰ লিংগীয় তৰলতাৰ বাবে আত্মগ্লানি আৰু লজ্জিত হোৱা জেষ্ঠ্য ভাতৃ 'বাবা', জাহ্নুক খেদি-খেদি বাৰীৰ বাঁহনিৰ মাজত বলাৎকাৰ কৰা 'বাবা'ৰ উদণ্ড বন্ধুবর্গ, দাঁত নিকতাই লেডিচ,মাধুৰী বা ছোৱালী বুলি ঠাট্টা-মস্কৰা কৰা গাঁৱৰ আড্ডাবাজ ব্যক্তিসকল, লেডিচ বুলি ঠাট্টা কৰা স্কুলৰ সহপাঠী আৰু জাহ্নুৰ ব্লাউজ খুলি চোৱা থানাৰ পুলিচ আদিৰ দৰে মানুহেৰে গঠিত কঠোৰ বিষমকামী সমাজ এখনৰ বৈষম্য আৰু নির্যাতনমূলক কার্য দেখুৱাই কাহিনীকাৰে কৌশলেৰে পুৰুষতান্ত্রিক ব্যৱস্থা বিৰুদ্ধ জনজাগৰণ সৃষ্টি কৰাৰ দায়িত্বহে যেন পালন কৰিছে। মন কৰিবলগীয়া যে ইয়াৰ মাজেৰে যৌনতাৰ যি ভিন্ন তৰলতা, তাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে আৰু পুৰুষ নিয়ন্ত্রিত বিভিন্ন দ্বৈত্ববাদী গোটসমূহৰ প্রতি প্রশ্ন উত্থাপন কৰা হৈছে। অৱশ্যে এই প্রশ্নবোৰ বুজিবলৈ কাহিনীভাগ বিভাজিত কৰি খণ্ড-খণ্ডকৈ চাব লগা হয়। এই ক্ষেত্রত লিংগবাদ বা লিংগনীতিৰ স্বৰূপ বহন কৰা উদাহৰণ কেইটামানে এই ক্ষেত্রত প্রণিধানযোগ্য হ'ব। যেনে—

১) জাহ্নুয়ে ঘৰত কিতাপ পঢ়ি থকাৰ সময়ত অসহ্য গৰমক লৈ বায়েক জুমুৰ সতে হোৱা কথোপকথনৰ দৃশ্য—

জাহ্নু ঃ মোৰ টি চার্টৰ হাতখন তোৰ নিচিনাকে দে না। বৰ গৰম..।

জাহ্নু ঃ মোৰ কিবা লাজ নাই নেকি?

জুমু ঃ কি লাজ তোৰ লৰাটো হৈ?

জাহ্নু ঃ ইচ্,অকল কি ছোৱালী মানুহৰে লাজ থাকিব পাৰে নেকি? একেইতো চব।

২) স্কুলৰ শ্রেণীকোঠাৰ দৃশ্য—অফিচৰ পৰা মাইক্রস্কোপটো আনিবলৈ শিক্ষকে জাহ্নুক কৈছে—

শিক্ষক ঃ যোৱা,জাহ্নু তুমি যোৱা।

ছাত্র ঃ লেডিচ যা। ...

শিক্ষক ঃ অলপ ভাল হ'ব নোৱাৰা নেকি?

ছাত্র ঃ তাকতো সকলোৱে লেডিচ বুলিয়ে মাতে।...ছাত্রঃ সি ফিল্টাৰ পানী দি গা ধোৱে।

৩) জাহ্নুৰ ককায়েক বাবাই ভাত খোৱাৰ দৃশ্য—

ভিতৰৰ পৰা ওলাই অহা জাহ্নুক দেখি—বাবা ঃ অ'ই তোৰ বেলেগ কাপোৰ নাই?

মাকৰ ফালে চাই তাচ্ছিলৰ সুৰত — বাবা ঃ ভাল জন্ম দিছা তুমি এই দুটাক। এটাই ছোৱালী হৈ ল'ৰাৰ নিচিনা থাকি ভাল পায় আৰু এটাই ল'ৰা হৈ ছোৱালীৰ নিচিনা থাকি ভাল পায়। গাঁৱত পূৰা নাম ৰজনজনাই গৈছে আৰু।

৪) নিবিৰ তুলনীৰ খবৰ ল'বলৈ গৈ বাটত বৈ থকা জাহ্নুৰ প্ৰতি আড্ডাবাজ গাঁৱলীয়াৰ ঠাট্টা-মস্কৰাৰ দৃশ্য—

১ম গাঁৱলীয়া— কি হে লেডিচ ?

২য় গাঁৱলীয়া—অ'ই মাধুৰী, ক'ত যোৱা ? বিয়াত যাবা, বিয়াত। এতিয়া ল'ৰা মানুহ যাবা নাপায় হে হে হে।

৩য় গাঁৱলীয়া—অ' তই পাৰবি যা, তই প্ৰদীপৰ জীয়েকহে। হে হে হে...।

৪র্থ গাঁৱলীয়া—অ' কি কয় হে মাধুৰী।

২য় গাঁৱলীয়া— লেংটা কৰি চাব লাগিব,...হে হে হে।

৫) পথাৰত গাঁৱৰ ল'ৰাবোৰে বল খেলি থকাৰ দৃশ্য—

বলটো জাহ্নুৰ ওচৰলৈ যোৱাত বলটো খুজি এজনে কয় ঃ মাৰ লেডিচ।

জাহ্নুৱে ভৰিৰে মাৰি পঠোৱা বলটো পানীত পৰাত সেই ল'ৰাজনেই জাহ্নুক গতিয়াই বগৰাই ধমক দিয়ে ঃ যা লেডিচ, বল আন।

৬) নিবিৰততুলিনী বিয়াৰ দিনা গোৱা গীতৰ দৃশ্য—

গীত— ধুনীয়া ফুলনীত ৰক্তজবা, আজিৰ পৰা নিবি শান্ত হ'বা।

সেউজীয়া দুৰৰি, উৰণীয়া পৃথিৰী। আজিৰ পৰা নিবিও সাৱধানে চলিবি।

মাৰাৰ কথা শুনিবি, ফুৰিবলৈ নেযাবি।

৭) জাহ্নুৰ বায়েক জুমুৰে ছোৱালী হৈও চুলি চুটিকৈ ৰাখে, মটৰ স্কুটি চলাই, লং-পেন্ট চার্ট পিন্ধে আৰু প্ৰসাধন আদি একো নকৰে। অথচ জাহ্নুতকৈ জুমুৰ প্ৰতি সকলোৰে নজৰ কম, ছোৱালী ল'ৰাৰ নিচিনা হ'লে যেন কাৰো সিমান আপত্তি নাই।

এই সকলোবোৰ দৃশ্যলৈ চালে বুজা যায় যে প্ৰতিটো দৃশ্যতে নাৰী-পুৰুষকেন্দ্ৰিক দ্বৈত্ববাদীৰ প্ৰভাৱ অপৰিসীম। প্ৰত্যেকটো দৃশ্যতে আমি দেখিছো যে ছোৱালী 'জুম'ৰে ল'ৰাৰ দৰে থকাটোত আপত্তি নকৰি ল'ৰা 'জাহ্নু' কিয় ছোৱালীৰ দৰে থাকিব— তাত সকলোৱে আপত্তি কৰিছে। নানা ঠাট্টা-মস্কৰা,লাঞ্ছনা-গঞ্জনাৰে জাহ্নুৰ জীৱন নৰক সদৃশ কৰিব খোজা হৈছে। একেটা সময়তে নিবিৰ তুলনী বিয়া উপলক্ষে গোৱা গীতত আমি দেখিছো কিদৰে নাৰীক কেৱল সন্তান জন্মৰ বাবে সাজু কৰা হয়। কাৰণ লিংগবাদী সমাজৰ ধাৰণা মতে পুৰুষত্ব কেৱল পুৰুষৰ মাজত আৰু নাৰীত্ব কেৱল নাৰীৰ মাজত বৰ্তি থাকিব লাগে। অৰ্থাৎ নাৰীত্ব কেৱল নাৰীৰ বাবে, ইয়াত আনৰ স্থান নাই। ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম হ'লেই যেন সেই ব্যক্তিৰ বাবে সময়টো অতি প্ৰত্যাহ্বানমূলক হৈ পৰে আৰু তেনে সমাজত ব্যক্তিয়ে নানা ধৰণৰ বিক্ষিপ্ত লঘু-লাঞ্ছনা সহিব লগা হয়। সেয়েহে চিত্ৰনাট্যত কেৱল এই কথাবোৰকে দেখুৱাই চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাতাই দায়িত্ব শেষ কৰাৰ বিপৰীতে ইয়াৰ বিৰুদ্ধ অৱস্থানত চৰিত্ৰক থিয় কৰাই প্ৰতিবাদো কৰোৱাইছে। ইয়াৰ উদাহৰণস্বৰূপে জাহ্নুৱে গাঁৱৰ ওচৰেৰে বৈ যোৱা নৈৰ পাৰত কোৱা আৰু পলাশক ঝাৰণিৰ মাজতে গোপনে লগ ধৰি কোৱা কথাখিনিলৈ চাব পাৰি। যথা —

ক) জাহ্নুৱে নৈখনৰ প্ৰতি তাক ছোৱালী কৰি দিয়াৰ কাতৰ আহ্বান ৰাখি কৈছে—

জাহ্নু ঃ ...নিবিৰ দৰে মোকো ছোৱালী কৰি দিয়া। মই আজি তোমাৰ ওচৰত শপত খাইছো। মই আৰু কাকো ভয় নকৰোঁ। মই আজিৰ পৰা কেৱল মই হৈ জীয়াই থাকিম। মোৰ মনৰ কথা তোমাৰ বাহিৰে আন কাকো নকওঁ। তুমি মোৰ মনৰ কথাবোৰ উটুৱাই লৈ যায় সাগৰত জমা কৰি ৰাখিবা। ...

খ) নৈৰ পাৰৰ ঝাৰণিৰ মাজত জাহ্নু আৰু পলাশৰ কথোপকথনত জাহ্নুৱে সজোৰে লৈংগীক অধিকাৰ দাবী কৰি কৈছে—

জাহ্নু ঃ আপোনাৰ কিয় সাহস নাই ? ...

জাহ্নু ঃ মই অপাৰেশ্বন কৰি ছোৱালী হৈ আহিলে আপুনি মোক বিয়া কৰাবনে ?

পলাশ ঃ মই তোমাক এনেকৈয়ে ভাল পাওঁ।...সমাজৰ মাজত থাকি সমাজৰ এলাগী হৈ জীৱন চলোৱাটো ইমান সহজ নহয়।

...অসমৰ এখন গাঁৱত ,আমি তেনেকৈ জীয়াই থাকিব পাৰিম নেকি ?

জাহ্নু ঃ সমাজৰ পৰা আঁতৰি থাকিব পাৰে,কিন্তু সমাজৰ লগত যুঁজিব নোৱাৰে ?

ইয়াত জাহ্নুৱে প্ৰথমতে ৰূপান্তৰকামী মহিলা হিচাপে আত্মপ্ৰকাশ কৰিছে আৰু দ্বিতীয়তে সামাজিকভাৱে বহিঃ প্ৰকাশ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। এই প্ৰসংগত জাহ্নুৱে কোৱা

কথাখিনিৰ মাজেৰে বিষমকামী দ্বৈত্ববাদী সমাজৰ প্ৰতি কুইয়ৰ সকলৰ যে চিৰন্তন প্ৰশ্ন যেনে— সমাজৰ স'তে যুঁজিব নোৱাৰোঁ নে? সমাজৰ পৰা আঁতৰি থকা উচিত নে? সমাজৰ স'তে যুঁজা উচিত নে? সমাজৰ স'তে যুঁজিব লগা পৰিস্থিতি থকা উচিত নে? ইত্যাদি বিভিন্ন প্ৰশ্ন উত্থাপন হৈছে। মন কৰিবলগীয়া যে এয়াই যেন কুইয়ৰ চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাণৰ মুখ্য উদ্দেশ্য।

কুইয়ৰ চেতনাৰ উদ্দেশ্যগত আলোচনাত আভ্যন্তৰীণ পক্ষপাতিত্বৰ প্ৰতি উমৈহতীয়া ক্ষেত্ৰ নিৰ্মাণ অন্যতম বিষয়। এই ক্ষেত্ৰত আলোচ্য চলচ্চিত্ৰখনলৈ দৃষ্টি দিলে দেখা যায় যে সমকামী পলাশ আৰু ৰূপান্তৰকামী জাহ্নুৱে গাঁৱৰ পৰা আঁতৰত পৃথকে গোপনে মিলিত হৈছে। এটা সময়ত পৰিস্থিতিগত কাৰণত বাধ্য হৈ জাহ্নুৱে ঘৰৰ পৰা পলাই গৈ এটা 'হিজৰা' সম্প্ৰদায়ত যোগদান কৰিছে আৰু ৰূপান্তৰকামী মহিলা হিচাপে জীৱন নিৰ্বাহৰ নতুন যাত্ৰাত খোজ দিছে। এনেদৰেপৰম্পৰাগত গ্ৰাম্য সমাজৰ পৰা স্থানচ্যুত হৈ মিলিত হোৱা বা 'হিজৰা' হৈ ঘৰ আৰু সমাজৰ পৰা নাতিদূৰত অৱস্থান কৰাটো এফালে বঞ্চনা তথা বৈষম্যৰ চিন আৰু আনফালে বৈষম্যকাৰী সমাজৰ বিৰুদ্ধে আঁতৰত নিৰাপদ আৰু সুখদায়ক একমাত্ৰ উপায় হিচাপে চিহ্নিত হৈছে। ইয়াৰ দ্বাৰা চলচ্চিত্ৰখনত "যৌন বা লিংগীয় বৈচিত্ৰ্যৰে স্বাধীন জীৱন যাপনৰ অধিকাৰ"ক উৎসাহিত কৰা হৈছে। একেদৰে নিবিৰ স'তে জাহ্নুৰ যি বন্ধুত্ব সেয়া সম বা বিষমলিংগীয় ধাৰণাৰ উৰ্দ্ধত অৱস্থিত। পৰম্পৰাগত লিংগ ধাৰণাৰ বিপৰীতে নিবিযে লিংগ বা যৌনতাৰ কথা নভবাকৈয়ে জাহ্নুৰ স'তে মিলামিচাকৰিছে। বিশেষকৈ খেলা-ধূলা, প্ৰথম ঋতুমতী হোৱা আৰু অন্যান্য সময়তো নিবিয়ে জাহ্নুৰ সংগ এৰা নাই। ইয়াৰ দ্বাৰা নিশ্চিতভাৱে "জীৱন দৃষ্টি আৰু পাৰস্পৰিক সম্বন্ধৰ বৈধত্ব"ক উৎসাহিত কৰা হৈছে। আনহাতে চলচ্চিত্ৰখনৰ শেষত পিতৃৰ শৰদাহ কাৰ্য এৰি গুছি যোৱাৰ পৰত জাহ্নুৱে অকস্মাৎ মৃত পিতৃয়ে 'মাইনা' বুলি চিঞৰি মাতা শুনিবলৈ পাইছে। এই চিঞৰ বিষমকামী পৰম্পৰাৰ বুকুৰ পৰা এক ভাৱনাত্মক চিঞৰ। ইয়াৰ জৰিয়তে "বিষমকামীৰ ভাৱনাত্মক পৰম্পৰাৰ অৱসান" বিচৰাৰ আকুলতা সক্ৰিয় হৈ উঠিছে। আলোচ্য চলচ্চিত্ৰখনত যিটো কথাই আটাইতকৈ বেছি প্ৰাধান্য পাইছে সেয়া হ'ল লিংগ বৰ্ণালীৰ প্ৰতি জ্ঞানশূন্য সমাজৰ মধ্যত থাকিও মনে বিচৰা ধৰণে জাহ্নুৰ আত্মপ্ৰকাশৰ শক্তিশালী স্থিতি। এই স্থিতি নিজেই এক বিদ্ৰোহ বা বিক্ষোভ। এই বিক্ষোভৰ দাবানল হৈ জাহ্নুৱে সকলোৰে চকুৰ সম্মুখেৰে ঘৰলৈ আহিছে আৰু পিতৃৰ শ্ৰাদ্ধৰ বাবে খৰচৰ বাবদ নিবিৰ হাতত মাকক দিবলৈ টকাখিনি দি আকৌ গুছি গৈছে। ইয়াৰ দ্বাৰা কুইয়ৰ চেতনাৰ অন্যতম দুই উদ্দেশ্য "কুইয়ৰকেন্দ্ৰিক হীনমন্যতাৰ অৱসান" আৰু "পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজ গাঁঠনিৰ বিৰুদ্ধাচৰণ" প্ৰতিপাদিত হৈছে। সৰ্বশেষত, চলচ্চিত্ৰখনত কুইয়ৰ চেতনাৰ অতি প্ৰাসংগিক অন্যতম উদ্দেশ্যগত সফলতা এটা দেখা গৈছে। সেয়া হ'ল কাহিনীভাগত তৃতীয় লিংগৰ অন্তৰ্গত চাৰিটা অভিমুখ যেনে—ৰূপান্তৰকামী নাৰী 'জাহ্নু', ৰূপান্তৰকামী পুৰুষ যেন লগা লিংগ অসংযত আৰু অস্পষ্ট 'জুমু', সমকামী 'পলাশ' আৰু অন্যান্য 'হিজৰা' আদিৰ সামুহিক উত্থান। বিষম লিংগীয় পৰম্পৰাগত সমাজখনে সৃষ্টি কৰা বাধাৰ প্ৰাচীৰ ভাঙিবলৈ ইয়াত জাহ্নুৰ উন্মুক্ততা, জুমুৰ অৱৰুদ্ধতা বা মৌনতা পলাশৰ পলায়নবাদীতা আৰু হিজৰাসকলৰ নিজস্ব স্বাধীন বৃত্তিয়ে এটা সামূহিক শক্তি হৈ শ্ৰোতা-দৰ্শকক আকৰ্ষিত কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। এই আকৰ্ষণ ইমান মধুৰ আৰু বাঞ্ছিত যে চিত্ৰনাট্য ৰচক তথা পৰিচালক প্ৰকাশ ডেকাক অসমৰ বিভিন্ন কুইয়ৰ ব্যক্তিয়ে ধন্যবাদ জনোৱাৰ লগতে কুইয়ৰ ভাতৃ-ভগ্নী বা সন্তানক একালত শাৰীৰিক-মানসিক নিৰ্যাতন চলোৱা বিষমকামী ব্যক্তিয়েও ফোন যোগে অনুশোচনা প্ৰকাশ কৰিছে। গতিকে ইয়াৰ মাজেৰে কুইয়ৰ চলচ্চিত্ৰ হিচাপে Fireflies-জোনাকী পৰুৱা ৰ অন্তৰ্নিহিত চেতনাই সঁচা অৰ্থত ব্যাখ্যায়িত হৈছে বুলিব পাৰি আৰু এয়াই আলোচ্য চলচ্চিত্ৰখনৰ অন্যতম উদ্দেশ্যগত সফলতা।

৪.০ উপসংহাৰ ঃ

এনেদৰে অসমীয়া চলচ্চিত্ৰত কুইয়ৰ চেতনা শীৰ্ষক অধ্যয়নকালত দেখা যায় যে চলচ্চিত্ৰখনত কুইয়ৰসকলৰ জীৱন যন্ত্ৰনা আৰু অন্যান্য অনুষংগ চিত্ৰিত কৰি তেওঁলোকৰ সন্মান, মৰ্যদা আৰু স্বাধীন জীৱনৰ স্বাৰ্থ জড়িত অতি প্ৰাসংগিক বিভিন্ন প্ৰশ্ন উত্থাপন কৰা হৈছে। এই প্ৰশ্নবোৰে দৰ্শক হিচাপে সহজে আমাৰ চেতনাক জোকাৰি যায় আৰু ইয়াৰ মাজেদিয়ে এখন সমমান বিশিষ্ট, ভেদ-ভাৱহীন একক সমাজৰ আকাংক্ষা জাগি উঠে। কাহিনীটো সহজ-সৰল ভংগীত উপস্থাপন কৰা হৈছে আৰু চৰিত্ৰৰ কথা-কাৰ্যৰ ধৰণবোৰো অতি স্বাভাৱিকভাৱে দিয়া হৈছে। পৰিৱেশক অৰ্থবহ কৰিবলৈ

পোহৰ আৰু সংগীত ব্যৱস্থাপনাও যথোপযুক্ত। চিত্রনাট্যৰ পৰিপূৰক এটা গ্রামীণ পৰিৱেশ অক্ষুণ্ণ ৰাখিবলৈ সকলো পক্ষৰ আকুল প্রয়াস আছে। এই প্রয়াস বাস্তৱায়িত কৰাৰ ক্ষেত্রত আন অভিনেতাসকলৰ উপৰিও 'জাহ্নু' আৰু 'হিজৰা'ৰ চৰিত্রত অভিনয় কৰা তৃতীয় লিংগী অভিনেতাসকলৰ বিশেষ ভূমিকা আছে। লিংগ আৰু যৌনতাৰ ক্ষেত্রত বিষমকামী নাৰী-পুৰুষকেন্দ্রিক ব্যৱস্থাক আইনা দেখুৱাই তৃতীয় লিংগৰ সামাজিক গ্রহণযোগ্যতাক 'প্রাকৃতিক' আৰু 'স্বাভাৱিক' হিচাপে মানি লোৱাৰ কথাটো ইয়াত স্পষ্ট হৈ পৰিছে। এয়া নিশ্চিতভাৱে প্রকাশ ডেকাৰ ৰচনা-পৰিচালনা আৰু মিলিন দত্তৰ প্রযোজনাৰে নির্মিত Fireflies-জোনাকী পৰুৱা চলচ্চিত্রখনৰ সর্বোত্তম সফলতা।❑

প্রসংগ টোকা ঃ

১) 10 Reasons Why Filmmaking Is Important, Indeed Editorial Board,August 18,2024,https://www. indeed.com/career-advice/career-development/why-filmmaking-is-important#:~: text=Since% 20the % 20inception%20of% 20filmmaking, as%20 characters%20in%20other%20worlds

২) Government Of Assam,Department of Cultural Affairs,The Assam State Film (Finance and Develop ment) Corporation , Functions and Objectives,12 Nov/2024,https://filmfinance.assam.gov.in/ about-us/detail/functions-and-objectives-28

৩) Queer Identity and Rights: Experiences From Assam,Krishti Khandelwal, Dr Prateeti along with several others conducted a field study on transgenders and gay men in Guwaht City in Assam. The study revealed that the problem faced by such people are fourfold. These include family rejection, physical and emotional violence, discrimination on the basis of gender and childhood sexual and rape. All of these together are what is called HOMOPHOBIA.-IMPACT AND POLICY RESEARCH INSTITUTE, June 27 2023,https://www.impriindia.com/insights/dr-barman-queer-identity-rights-assam/#:~:text=Dr%20Prateeti%20along%20with%20several,and%20childhood%20sexual%20and%20rape

৪) ibid

৫) Prakash Deka ,Biography, https://m.imdb.com/name/nm11770314/bio/#family

৬) Nabarun Guha,Guwahati's Pride, March 2019,WAGZTER,E-Magazine, https://www.magzter.com/stories/Lifestyle/eclectic-Northeast/Guwahatis-Pridesrsltid=AfmBOopa KArjo9by SbN6KbX 1rr12t_LJburpR88JkeIVqk5f5YWDYqMx

৭) Regarding the reception of the film by the local Assamese people, Prakash Deka says that, "my seniors from the industry forewarned me that I might get negative response from the audiences given the subject matter of the film but fortunately I have got only positive response from the Assamese people, so far. People belonging to the queer community have called me and thanked me personally and shed tears of joy to express their gratitude. People who used to bully queer people, at one point, called me up and expressed regret for their actions.-Queering Assamese Cinema: Devid Lagachu, The Journey So Far,November 15, 2021Art & Culture, GALAXY empowe eXpression, https:/ www.gaylaxymag.com/articles/art-culture/queering-assamese-cinema-the-journey-so-far/

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য সমল—

ডেকা, প্রকাশ ঃ Fireflies-জোনাকী পৰুৱা, দত্ত, মিলিন (প্রযো.),ভৰটেকচ্ ফিল্ম, 2020, https://www.airtelxstream.in/movies/fire-flies-jonaki porua/HUNGAMA_MOVIE_69257138

গৌণ সমল—

দত্ত, জুৰি ঃ সাহিত্য, সমাজ আৰু সাহিত্যতত্ত্ব, প্রথম প্রকাশ,পূর্বায়ণ প্রকাশন, ২০২২

দত্ত, কৰবী,নাথ,শিখা দেৱী,দত্ত , জ্যোতিস্মৃতা (সম্পা.)ঃ বিষয় ঃ তত্ত্ব আৰু সাহিত্য , প্রথম প্রকাশ,জাগৰণ সাহিত্য প্রকাশন, ২০২৩ বেজবৰুৱা, জিতেনঃ প্রসংগঃ এল জি বি টি, প্রথম প্রকাশ,বান্ধৱ, ২০২৩

ইংৰাজী ঃ

Bardoloi, Tridhara & Hazarika, Nabanita (ed.) : Literary Writings From North-East India, First edition, DH International educational Publishers, 2022

Beasley, Chris: Gender & Sexuality: Critical Theories, Critical Thinkers, SAGE Publications Ltd, 2005, online pub June 19, 2012

Indeed editorial Board,10 Reasons Why Filmmaking Is Important, www.indeed.com, August 18,2024, www.indeed.com, https://www.indeed.com/career-advice/career-development/why- filmmaking-is-important#:~:text=Since%20the% 20inception%20of% 20filmmaking, as%2 characters%20in%20other%20worlds
The Assam State Film (Finance and Development),Government Of Assam, Department of Cultural Affairs, Corporation, 12 Nov/2024,https://filmfinance.assam.gov.in/about-us/detail/functions-and-objectives-28 IMPACT AND POLICY RESEARCH INSTITUTE, June 27 2023,https://www.impriindia.com/ insights/dr-barman-queer-identity-rights-assam#:~:text=Dr%20Prateeti% 20along%20 with% 20several, and%20childhood% 20sexual%20and%20rape
Nabarun Guha,Guwahati's Pride, March 2019,WAGZTER,E-Magazine, https:// www.magzter.com/stories/Lifestyle/eclectic-Northeast/Guwahatis-Pride?srsltid=AfmBOopaKArjo9bySbN6KbX1rr12t_LJ burpR88JkeIVqk5f5YWDYqMx
Prakash Deka ,Biography, https://m.imdb.com/name/nm11770314/bio/#family
Lagachu,Devid,Queering Assamese Cinema: The Journey So Far,November 15, 2021Art & Culture, GALAXY empowe eXpression, https://www.gaylaxymag.com/articles/art-culture/ queering-assamese-cinema-the-journey-so-far/

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমৰ শিক্ষা ব্যৱস্থা ঃ ৰাষ্ট্ৰীয় আৰু ৰাজ্যিক শৈক্ষিক পৰিস্থিতিৰ মাজৰ ব্যৱধান

ড° প্ৰতিষা পদ্মশ্ৰী ডেকা

সহকাৰী অধ্যাপক, শিক্ষা বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী
৯৪৩৫০০৭৯৫৬
pratishadeka@gmail.com

বিমূর্ত ঃ

উন্নয়নৰ পথত আগবাঢ়ি যোৱা দক্ষতা আৰু জ্ঞানেৰে সজ্জিত মানৱ সম্পদৰ বিকাশৰ মূল আহিলা হৈছে শিক্ষা। সামগ্ৰিকভাৱে কোনো জাতি বা ৰাজ্যৰ শিক্ষাৰ পৰিস্থিতি বিভিন্ন শিক্ষাৰ সূচকৰ কাৰ্য ক্ষমতাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। ভাৰত চৰকাৰে সাৰ্বজনীন প্ৰাথমিক শিক্ষা, শিক্ষাৰ বিভিন্ন স্তৰত নামভৰ্তি বৃদ্ধি, লিংগ বৈষম্য দূৰ কৰা আদি জাতীয় লক্ষ্যত উপনীত হোৱাৰ বাবে বহু নীতি আৰু আঁচনি গ্ৰহণ কৰিলেও ভাৰতৰ উত্তৰ-পূব অঞ্চলৰ প্ৰধান ৰাজ্য যদিও অসমকে ধৰি বিভিন্ন ৰাজ্যত এইবোৰত একে ধৰণৰ প্ৰাপ্তিৰ আৰ্হি নাই। এই অধ্যয়নত ভাৰত আৰু ৰাজ্য হিচাপে অসমৰ শৈক্ষিক বিকাশৰ মাজৰ ব্যৱধানৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা হৈছে। অসমৰ শৈক্ষিক পৰিস্থিতিৰ প্ৰদৰ্শনত অসম চৰকাৰৰ পদক্ষেপ যেনে 'গুণোৎসৱ', বিদ্যালয়ৰ একত্ৰীকৰণ, মাচুল ৰেহাইৰ ব্যৱস্থাৰ সৈতে উচ্চ শিক্ষানুষ্ঠানত বিনামূলীয়া নামভৰ্তিৰ ব্যৱস্থা, মাধ্যমিক পৰ্যায়ত শিক্ষাৰ বঁটা প্ৰদান, মধ্যাহ্ন ভোজনৰ দৰে কেন্দ্ৰীয় আঁচনি ৰূপায়ণ এই সকলোবোৰে সামগ্ৰিকভাৱে প্ৰভাৱ পেলায়। এই লেখাটোৰ জৰিয়তে অসমৰ শিক্ষাখণ্ডৰ পৰিস্থিতি ৰাষ্ট্ৰীয় দৃষ্টিকোণৰ পৰা আৰু ইয়াৰ আঁৱৰ কাৰণসমূহ বিশ্লেষণ কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

মূলশব্দ ঃ অসম, শিক্ষা, প্ৰত্যাহ্বান, ভাৰতীয় শিক্ষা ব্যৱস্থা।

পাতনি ঃ

ব্যক্তি আৰু সমাজৰ বাবে শিক্ষা অপৰিহাৰ্য, কাৰণ ইয়াৰ অবিহনে যুগ যুগ ধৰি সঞ্চিত সকলো জ্ঞান আৰু সকলো আচৰণৰ মানদণ্ড হেৰুৱাবলগীয়া হ'লহেঁতেন। এজন ব্যক্তিয়ে সমাজৰ সংস্কৃতি বা কাম কৰাৰ গ্ৰহণযোগ্য পদ্ধতি শিকা প্ৰয়োজন। শিক্ষাই মানুহৰ অন্ধবিশ্বাসী চিন্তাক আধুনিক যুক্তিবাদী বিশ্বাসলৈ, পৰম্পৰাগত কৃষি ধাৰণাক আধুনিক প্ৰযুক্তিভিত্তিক ধাৰণালৈ ৰূপান্তৰিত কৰি চিন্তাৰ বিৱৰ্তনৰ সৃষ্টি কৰে আৰু মানুহক নিজৰ জীৱনৰ মূল্য উপলব্ধি কৰাত সহায় কৰে। চহকী সাংস্কৃতিক ঐতিহ্যৰে ডুব যোৱা ভূমি ভাৰতৰ জ্ঞান আৰু শিক্ষা প্ৰদানৰ ইতিহাস প্ৰাচীন কালৰ পৰাই সজীৱ। এই জাতিটোৱে নিজৰ শিক্ষা ব্যৱস্থাত এক বৃহৎ পৰিৱৰ্তন সাক্ষী হৈ পৰিছে। পৰম্পৰাগত গুৰুকুলৰ পৰা আধুনিক বিদ্যালয়লৈ আৰু এতিয়া অনলাইন কলেজলৈ বিকশিত হৈছে। ভাৰতৰ শিক্ষা ব্যৱস্থাই শিক্ষাৰ প্ৰতি অধিক যুক্তিসংগত আৰু ব্যৱহাৰিক দৃষ্টিভংগী গ্ৰহণ কৰিবলৈ যোৱা কেইবছৰমানৰ পৰা চেষ্টা কৰি আহিছে।

ভাৰতীয় শিক্ষা ব্যৱস্থাক মোটামুটিভাৱে প্ৰাক-প্ৰাথমিক, প্ৰাথমিক, মাধ্যমিক, উচ্চতৰ মাধ্যমিক, স্নাতক আৰু স্নাতকোত্তৰ পৰ্যায়ত ভাগ কৰিব পাৰি। ৰাজ্যৰ শিক্ষা ব'ৰ্ডৰ বাহিৰেও ভাৰতত কেইবাখনো শিক্ষা ব'ৰ্ড আছে। কেন্দ্ৰীয় ব'ৰ্ডসমূহ হ'ল চি.বি.এছ.ই, চি.আই.এছ.চি.ই. আৰু এন.আই.অ'.এছ.। এই ব'ৰ্ডসমূহৰ প্ৰতিটোতে পাঠদানৰ লগতে পৰীক্ষা পৰিচালনাৰ বাবেও সুকীয়া পাঠ্যক্ৰমৰ গোট থাকে। ভাৰতৰ শিক্ষা ব্যৱস্থা যথেষ্ট বৈচিত্ৰ্যময় আৰু কেন্দ্ৰীয় চৰকাৰে সামগ্ৰিক শৈক্ষিক উন্নয়নৰ পৰিকল্পনা কৰিলেও ৰাজ্য চৰকাৰসমূহে উল্লেখযোগ্য দিশত স্বায়ত্ত শাসন লাভ কৰে। সেইবাবেই ভাৰতত ৰাজ্যভেদে শিক্ষা ব্যৱস্থা আৰু নীতিৰ অৰ্হতাৰ ক্ষেত্ৰত যথেষ্ট ভিন্নতা আছে। ভাৰতৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ অন্যতম ৰাজ্য হোৱাৰ বাবে অসমৰ অনন্য বৈশিষ্ট্য আৰু প্ৰত্যাহ্বান আছে। অসমত শিক্ষাৰ গাঁথনি প্ৰাথমিক, মাধ্যমিক আৰু উচ্চ শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত ৰাষ্ট্ৰীয় গাঁথনিৰ সৈতে একে। অসম উচ্চতৰ মাধ্যমিক শিক্ষা পৰিষদ (AHSEC) আৰু মাধ্যমিক শিক্ষা ব'ৰ্ড, অসম (SEBA)-এ চি.বি.এছ.ই আৰু আই.চি.এছ.ই.-ৰ দৰে কেন্দ্ৰীয় ব'ৰ্ডৰ লগতে মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ শিক্ষা নিয়ন্ত্ৰণ কৰে। বিশেষকৈ গ্ৰামাঞ্চলত প্ৰায়বোৰ বিদ্যালয়তে অসমীয়া ভাষা প্ৰাথমিক মাধ্যম। অঞ্চল আৰু বিদ্যালয়ৰ ধৰণৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি ইংৰাজী আৰু বাংলাও ব্যৱহাৰ কৰা হয়। বিশেষকৈ গ্ৰাম্য আৰু আৰ্থিকভাৱে বঞ্চিত অঞ্চলত অসমৰ শিক্ষাত শ্ৰেণী এৰি যোৱা শিক্ষাৰ্থীৰ (Drop Out) হাৰ সংখ্যা উচ্চ। অসমৰ শিক্ষাৰ মৌলিক গাঁথনি বহল ভাৰতীয় শিক্ষা ব্যৱস্থাৰ লগত মিল থাকিলেও শিক্ষাৰ ভাষা, সাংস্কৃতিক গুৰুত্ব আৰু নিৰ্দিষ্ট আঞ্চলিক প্ৰত্যাহ্বানৰ ক্ষেত্ৰত সুকীয়া পাৰ্থক্য দেখা যায়। অসমৰ শিক্ষাৰ সমস্যাসমূহৰ সন্দৰ্ভত অপৰ্যাপ্ত শ্ৰেণীকোঠা, উপযুক্ত অনাময় ব্যৱস্থাৰ অভাৱ আৰু প্ৰযুক্তিৰ সুবিধা সীমিত, প্ৰশিক্ষিত শিক্ষকৰ অভাৱ, সাৰ্বজনীন প্ৰাথমিক শিক্ষা লাভ নকৰা, শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত লিংগ বৈষম্য উল্লেখ কৰিব পাৰি। এইদৰে অসমত আন্তঃগাঁথনি, শিক্ষকৰ উপলব্ধতা আৰু উচ্চ শিক্ষাৰ সৈতে জড়িত অন্যান্য সমস্যাৰ সন্মুখীন হৈছে, যিবোৰ ভাৰতৰ আন কিছুমান অঞ্চলত কমকৈ দেখা যায়।

ভাৰত আৰু অসমত শৈক্ষিক অৰ্হতা ঃ

ভাৰত আৰু ইয়াৰ ৰাজ্যসমূহে বছৰ বছৰ ধৰি শিক্ষানুষ্ঠানৰ সংখ্যা আৰু নামভৰ্তিৰ সংখ্যা বৃদ্ধিৰ ক্ষেত্ৰত অবিশ্বাস্য উন্নতি সাধন কৰি আহিছে; কিন্তু ক্ৰমাগতভাৱে উচ্চ পৰ্যায়ৰ শিক্ষাত উচ্চ মাত্ৰাৰ শ্ৰেণী এৰি যোৱা শিক্ষাৰ্থীৰ হাৰ দেখা যায় (MoSPI, 2006)। তদুপৰি ASER-ৰ প্ৰতিবেদন অনুসৰি ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ শিক্ষণ স্তৰ নম্বৰৰ ওপৰত নহয়। অসম ভাৰতৰ উত্তৰ-পূব অঞ্চলৰ অন্যতম প্ৰধান ৰাজ্য আৰু ই দেশৰ অন্যান্য উত্তৰ-পূব ৰাজ্যৰ দুৰাৰমুখ; কিন্তু আৰ্থ-সামাজিক সূচকৰ ক্ষেত্ৰত ভাৰতৰ আন ৰাজ্যৰ তুলনাত ৰাজ্যখন পিছ পৰি আছে। উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ ৰাজ্যসমূহৰ ভিতৰত ৰাজ্যখনৰ সাক্ষৰতাৰ হাৰ সৰ্ব নিম্ন আৰু ৰাষ্ট্ৰীয় গড়তকৈ পিছ পৰি আছিল। বহনক্ষম উন্নয়নৰ লক্ষ্যৰ (SDGs) লক্ষ্য নং ৪ অৰ্থাৎ গুণগত শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত ২০২০-২১ চনত অসমৰ নম্বৰ ১২ৰ পৰা ৪ লৈ হ্ৰাস কৰা হৈছে। গুণগত শিক্ষাৰ সূচকসমূহৰ ক্ষেত্ৰত ৰাজ্যখন আকাংক্ষিত পৰিসৰত আছে (NITI Aayog, 2021)। আকৌ অসমৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ শিক্ষণ কৃতিত্ব বিশেষকৈ অংকৰ ক্ষমতা ৰাষ্ট্ৰীয় গড়ৰ তলত (PRATHAM, 2022)।

বিভিন্ন শৈক্ষিক সূচকৰ ক্ষেত্ৰত ভাৰত আৰু অসমৰ শৈক্ষিক অৱস্থা ঃ

স্বাধীনতাৰ সময়ত ভাৰতৰ শিক্ষাৰ পৰিস্থিতি বৰ ভাল নাছিল। ইয়াৰ বৈশিষ্ট্য আছিল লিংগ, জাতি, ভৌগোলিক অঞ্চল ইত্যাদিৰ ক্ষেত্ৰত এক বৃহৎ বৈষম্য। সামগ্ৰিকভাৱে সাক্ষৰতাৰ হাৰ আছিল প্ৰায় ১৪ শতাংশ; কিন্তু স্বাধীনতাৰ পিছত ভাৰতে সাক্ষৰতাৰ হাৰৰ ক্ষেত্ৰত যথেষ্ট অগ্ৰগতি লাভ কৰিছিল, যিটো ১৯৫১-৫২ চনত ১৮.৩ শতাংশৰ পৰা ২০১১-১২ চনত ৭৩ শতাংশলৈ বৃদ্ধি পাইছিল (মহাপঞ্জীয়ক আৰু লোকপিয়ল আয়ুক্তৰ কাৰ্যালয়, ২০১১)। মানৰ সম্পদ উন্নয়ন মন্ত্ৰালয়ে (২০১৮) প্ৰকাশ কৰা প্ৰতিবেদন অনুসৰি ১৯৮৬-৮৭ চনত মুঠ নামভৰ্তি অনুপাত (GER) ৬৯.৬ শতাংশৰ পৰা ২০০৫-০৬ চনত প্ৰাথমিক পৰ্যায়ত ১০৬.৭ শতাংশ লৈ বৃদ্ধি পাইছিল। এই সময়ছোৱাত প্ৰাথমিক পৰ্যায়ত মহিলাৰ নামভৰ্তিৰ হাৰ ৫১.১ শতাংশৰ পৰা ১০১.৩ শতাংশলৈ বৃদ্ধি পাইছিল। ২০০৬-০৭ চনৰ ভিতৰত সমগ্ৰ ভাৰতীয় পৰ্যায়ত প্ৰাথমিক শিক্ষা বাদ দিয়াৰ হাৰ আছিল ৪৫.৯০ শতাংশ যিটো ২০০৯-১০ চনত আৰু অধিক হ্ৰাস পাই ৪২.৩৯ শতাংশলৈ নামি আহিছিল। মাধ্যমিক পৰ্যায়ত ২০০৬-০৭ চনত ৫৯.৮৮ শতাংশৰ পৰা ২০০৯-১০ চনত ৫২.৭৬ শতাংশ লৈ হ্ৰাস পাইছিল (MoSPI, 2006)। উচ্চ শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত ২০০৬-০৭ চনত মুঠ নামভৰ্তি অনুপাত ১২.৩৯ শতাংশৰ পৰা ২০১৭-১৮ চনত ২৫.৮ শতাংশলৈ বৃদ্ধি পাইছে (MHRD, 2018)। আন এটা সূচক অৰ্থাৎ লিংগ সমতা সূচকাংক (GPI)-এ এটা নিৰ্দিষ্ট শিক্ষাৰ স্তৰত নামভৰ্তি

কৰা মহিলা আৰু পুৰুষৰ অনুপাত সূচায় আৰু তাৰ ফলত লিংগভিত্তিক শিক্ষাৰ প্ৰৱেশ দেখুৱায়। ভাৰতৰ বাবে জিপিআইৰ মূল্য বছৰ বছৰ ধৰি শিক্ষাৰ সকলো স্তৰৰ বাবে উন্নত হৈ আহিছে। প্ৰাথমিক আৰু উচ্চপ্ৰাথমিক শিক্ষাৰ বাবে ১৯৫১-২০১৫ চনৰ ভিতৰত জিপিআই ক্ৰমে ০.৪১-ৰ পৰা ১.০৩ আৰু ০.২২-ৰ পৰা ১.১০ লৈ বৃদ্ধি পাইছে। ফলপ্ৰসূ শিক্ষাৰ আন এটা সূচক অৰ্থাৎ ছাত্ৰ-শিক্ষক অনুপাত (PTR), যিয়ে শিক্ষাৰ এটা বিশেষ স্তৰত প্ৰতিজন শিক্ষকৰ গড় সংখ্যাক সূচায়, বছৰ বছৰ ধৰি ১৯৫০-৫১ চনত ২৪ জনৰ পৰা ২০১০-১১ চনত প্ৰাথমিক পৰ্যায়ত ৪৩ জনলৈ বৃদ্ধি পাইছে; কিন্তু ২০১২-১৩ চনৰ পিছত ই হ্ৰাস পাবলৈ ধৰিলে আৰু ২০১৫-১৬ চনত প্ৰাথমিক পৰ্যায়ৰ বাবে পিটিআৰৰ মূল্য ২৩ হ'ল।

অন্য ৰাজ্যৰ তুলনাত তুলনামূলকভাৱে কম হ'লেও শিক্ষাৰ পৰিমাণ সূচকৰ ক্ষেত্ৰত অসমে যথেষ্ট উন্নতি সাধন কৰিছে। প্ৰাথমিক আৰু উচ্চ প্ৰাথমিক পৰ্যায়ত অসমৰ মুঠ নামভৰ্তি অনুপাত ক্ৰমে ৯৪.৩ শতাংশ আৰু ৬৭.৯ শতাংশ আছিল, যিটো ২০১০-১১ চনৰ ভিতৰত ৰাষ্ট্ৰীয় গড় ১১৬.০ শতাংশ আৰু ৮৫.৫ শতাংশতকৈ কম আছিল (GOI, 2015)। ইয়াৰ বিপৰীতে ভাৰতৰ অন্যান্য ৰাজ্যৰ তুলনাত ৰাজ্যখনৰ ছাত্ৰ-শিক্ষকৰ অনুপাত বহুত বেছি অনুকুল (অসম চৰকাৰ, ২০০৩)।

শিক্ষক আৰু বিদ্যালয়ৰ উপলব্ধতাৰ ক্ষেত্ৰত আন্তঃ জিলা তাৰতম্য দেখা গৈছে। যদিও শিক্ষানুষ্ঠানৰ সংখ্যা অতি দ্ৰুত গতিত বৃদ্ধি পাইছে, তথাপি বেছিভাগ বিদ্যালয়তে খোৱাপানী, পৃথক ল'ৰা-ছোৱালীৰ শৌচাগাৰ, পৰ্যাপ্ত শ্ৰেণীকোঠা আদিৰ অভাৱ পৰিলক্ষিত হৈছে। তদুপৰি ৰাজ্যত শিক্ষা বাদ দিয়াৰ হাৰ উচ্চৰ বাবে অধিক হৈয়েই আছে স্কুল আৰু উচ্চতৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ত যি সৰ্বভাৰতীয় পৰিসংখ্যাৰ বিপৰীত। এইদৰে পৰিমাণগত কৃতিত্বৰ পৰা গুণগত প্ৰদৰ্শন যেনে গুণগত শিক্ষা, ধৰি ৰখাৰ হাৰ, পৰিৱৰ্তনৰ হাৰ আদিলৈ গুৰুত্ব দিয়া হৈছে (অসম চৰকাৰ, ২০০৩)।

অসমৰ শিক্ষা ব্যৱস্থাত NEP 2020-ৰ প্ৰভাৱ ঃ

ভাৰতত ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষানীতি (NEP) 2020-ৰ লক্ষ্য হৈছে দেশৰ শৈক্ষিক পৰিৱেশৰ পৰিৱৰ্তন আৰু অসমেও অন্যান্য ৰাজ্যৰ দৰে এই নীতিৰ বিভিন্ন দিশ ৰূপায়ণ কৰি শিক্ষা ব্যৱস্থাৰ উন্নতি সাধন কৰিবলৈ সাজু হৈছে। NEP 2020-এ শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত অধিক সামগ্ৰিক, নমনীয় আৰু বহুবিষয়ক দৃষ্টিভংগীক প্ৰসাৰিত কৰে, বৃত্তিমূলক শিক্ষাক একত্ৰিত কৰাৰ লগতে সৃষ্টিশীল আৰু সমালোচনাত্মক চিন্তাৰ গুৰুত্বৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। এই নীতিয়ে প্ৰাথমিক শিশুৰ যত্ন আৰু শিক্ষাৰ ওপৰত প্ৰবল গুৰুত্ব আৰোপ কৰে, ৩-৬ বছৰ বয়সৰ সকলো শিশুৱে বিনামূলীয়া, নিৰাপদ, উচ্চ মানৰ শিক্ষা লাভ কৰাটো নিশ্চিত কৰিবলৈ প্ৰাক-প্ৰাথমিক শিশুৰ যত্ন আৰু শিক্ষা (ECCE)-ক সাৰ্বজনীন কৰাৰ প্ৰস্তাৱ আগবঢ়ায়। NEP 2020-ত তৃতীয় শ্ৰেণীৰ ভিতৰত সকলো ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বাবে মূল সাক্ষৰতা আৰু সংখ্যাক অগ্ৰাধিকাৰ দিয়া হৈছে। মাতৃভাষা শিক্ষাৰ ওপৰত NEP-ৰ গুৰুত্বৰ লগত সংগতি ৰাখি অসমে মূল বছৰবোৰত অসমীয়া, বড়ো আৰু অন্যান্য আঞ্চলিক ভাষাৰ প্ৰসাৰত গুৰুত্ব দিব। ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা নীতিয়ে শিক্ষকসকলৰ পেছাদাৰী বিকাশত বিনিয়োগ কৰিবলৈ অসমৰ সম্মুখত প্ৰত্যাহ্বানৰ সৃষ্টি কৰিছে। ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা নীতিয়ে পোষকতা কৰা নতুন শিক্ষা বিজ্ঞানৰ পদ্ধতিসমূহ, ডিজিটেল শিক্ষণ সঁজুলিসমূহ ফলপ্ৰসূ আৰু সুসজ্জিত হোৱাটো নিশ্চিত কৰিছে আৰু সামগ্ৰিক উন্নয়নৰ বাবে সুবিধাসমূহৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা কৰিছে।

অসমৰ শিক্ষাৰ প্ৰাসংগিক বিষয় ঃ

অসমৰ শিক্ষাখণ্ডই অসংখ্য প্ৰত্যাহ্বানৰ সন্মুখীন হৈছে যিয়ে সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীলৈ গুণগত শিক্ষাৰ ফলপ্ৰসূ প্ৰদানত বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছে। এই প্ৰত্যাহ্বানসমূহ আন্তঃগাঁথনি, আৰ্থ-সামাজিক কাৰক, শিক্ষাৰ মানদণ্ড আৰু নীতি ৰূপায়ণকে ধৰি বিভিন্ন মাত্ৰাত বিস্তৃত। কিছুমান মূল বিষয় হ'ল—

১) আন্তঃগাঁথনিৰ অভাৱ ঃ বিশেষকৈ গ্ৰাম্য আৰু দুৰ্গম অঞ্চলৰ বহু বিদ্যালয়ত পৰ্যাপ্ত শ্ৰেণীকোঠা, শৌচাগাৰ, খোৱাপানী, বিদ্যুতৰ দৰে মৌলিক সুবিধাৰ অভাৱ। বিদ্যালয়ৰ ভৱনসমূহৰ ৰক্ষণাবেক্ষণৰ অভাৱ আৰু অপৰ্যাপ্ত আচবাবেও শিক্ষাৰ পৰিৱেশত বাধাৰ সৃষ্টি কৰে।

২) শিক্ষক সম্পৰ্কীয় বিষয় ঃ বিশেষকৈ দুৰ্গম আৰু গ্ৰাম্য অঞ্চলত প্ৰশিক্ষিত আৰু যোগ্য শিক্ষকৰ যথেষ্ট অভাৱ। শিক্ষক নিযুক্তি প্ৰক্ৰিয়াত প্ৰায়ে পলম হয়। শিক্ষকৰ অনুপস্থিতিৰ উচ্চহাৰে শিক্ষাৰ সামঞ্জস্য আৰু মানদণ্ডত প্ৰভাৱ পেলায়।

৩) উচ্চখৰ্চা আউট হাৰ ঃ বিশেষকৈ অৰ্থনৈতিকভাৱে বঞ্চিত অঞ্চলত বহু ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে নিজৰ পৰিয়ালৰ আয়ত

অৱহণা যোগাবলৈ বিদ্যালয় এৰি দিয়ে। চাহ বাগিচা আৰু অন্যান্য খণ্ডত শিশু শ্ৰম এটা উল্লেখযোগ্য বিষয়।

৪) শিক্ষাৰ মানদণ্ড ঃ আওপুৱণি পাঠদান পদ্ধতি আৰু মুখস্থ শিক্ষণে শ্ৰেণীকোঠাৰ পৰিৱেশত আধিপত্য বিস্তাৰ কৰি সমালোচনাত্মক চিন্তা আৰু সৃষ্টিশীলতাক সীমিত কৰি পেলায়। আধুনিক শিক্ষাদান সামগ্ৰী আৰু প্ৰযুক্তিৰ সুবিধাৰ অভাৱে ফলপ্ৰসূ শিক্ষণত আৰু অধিক বাধাৰ সৃষ্টি কৰে।

৫) শিক্ষাৰ ফলাফল ঃ বহু ৰাষ্ট্ৰীয় সমীক্ষা আৰু মূল্যায়নত অসমত শিক্ষাৰ ফলাফল নিম্ন হোৱাৰ কথা প্ৰকাশ পাইছে। অসমত গুণগত মূল্যায়ন আৰু প্ৰতিকাৰ কাৰ্যসূচীত পৰ্যাপ্ত গুৰুত্ব নিদিয়াৰ বাবে বহু ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ পঢ়া আৰু অংকৰ মৌলিক দক্ষতাৰ অভাৱ দেখা যায়।

৬) ভাষা আৰু শিক্ষাৰ মাধ্যম ঃ অসমৰ ভাষিক বৈচিত্ৰ্যই শ্ৰেণীকোঠাত ফলপ্ৰসূ যোগাযোগ আৰু বুজাবুজি নিশ্চিত কৰাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰত্যাহ্বানৰ সৃষ্টি কৰিছে। ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষাত দক্ষতাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ সৈতে আঞ্চলিক ভাষাৰ ব্যৱহাৰৰ মাজত ভাৰসাম্য ৰক্ষা কৰাটো কঠিন হ'ব পাৰে।

শেহতীয়াকৈ শিক্ষক আৰু ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ উপস্থিতি নিৰীক্ষণৰ প্ৰয়াসত শিক্ষা বিভাগে চৰকাৰী নিয়ন্ত্ৰিত বিদ্যালয়সমূহত টেবলেট যোগান ধৰাৰ লগতে 'শিক্ষাসেতু অসম' (Shiksha Setu Axom) নামৰ নতুন মোবাইল এপ এটাও প্ৰৱৰ্তন কৰে; কিন্তু অসমৰ দৈনিক বাতৰি কাকতত প্ৰকাশ পোৱাৰ দৰে চৰকাৰে প্ৰদান কৰা টেবলেট আৰু অবিশ্বাস্য নেটৱৰ্ক সেৱাৰ নিম্নমানৰ গুণগত মানৰ বাবে এই ব্যৱস্থাসমূহৰ কাৰ্যকাৰিতা বাধাগ্ৰস্ত হৈছে। অসম চৰকাৰে বিভিন্ন চৰকাৰী কাম-কাজত শিক্ষকসকলক অংশগ্ৰহণৰ নিৰ্দেশ দিছে। এই পদক্ষেপে একাধিক পক্ষৰ পৰা সমালোচনাৰ সন্মুখীন হৈছে, ৰাজহুৱা শিক্ষা ব্যৱস্থাত ইয়াৰ সম্ভাব্য ক্ষতিকাৰক প্ৰভাৱৰ বিষয়ে উদ্বেগ প্ৰকাশ কৰা হৈছে। বিশেষকৈ শিক্ষক সমাজে এই নিৰ্দেশনাটোক অস্থিৰ বুলি বিবেচনা কৰে কাৰণ ইয়াৰ সম্ভাব্য পৰিণতি হ'ব পাৰে শিক্ষাৰ মানদণ্ডৰ অৱক্ষয়। বিভিন্ন চৰকাৰী কাম-কাজত শিক্ষকসকলক অংশগ্ৰহণৰ বাবে শ্ৰেণীকোঠাৰ পাৱস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপ হ্ৰাস কৰে আৰু শিক্ষক শ্ৰেণীত উপস্থিত থাকিব নোৱাৰে।

বিদ্যালয়ৰ মূল্যায়নৰ বাবে গুণোৎসৱৰ প্ৰৱৰ্তনকো বিভিন্ন দৃষ্টিকোণৰ পৰা সমালোচনা কৰা হৈছে। গুণোৎসৱৰ লক্ষ্য চৰকাৰী বিদ্যালয়ত শিক্ষাৰ মান বৃদ্ধি কৰা আৰু সুসংগঠিত পৰিৱেশ বজাই ৰাখি নিয়মিত আৰু নিখুঁতভাৱে পৰিচালনা কৰা হয়; কিন্তু শিক্ষাবিদসকলৰ পাঠদান পদ্ধতি আৰু ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ শৈক্ষিক অগ্ৰগতিৰ ওপৰত ইয়াৰ প্ৰভাৱ এতিয়াও স্পষ্ট নহয়। গুণোৎসৱৰ সময়ত বাহ্যিক পৰীক্ষক আৰু পৰিদৰ্শকৰ প্ৰতিবেদনত শিক্ষকৰ অভাৱ দূৰ কৰিবলৈ গ্ৰহণ কৰা ব্যৱস্থাসমূহৰ বিস্তৃত পৰ্যালোচনাৰ অভাৱ দেখা যায়। গুণোৎসৱ মূল্যায়নত পোৱা সমস্যাসমূহ সমাধানৰ বাবে কি ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰা হয় সেইবোৰ স্পষ্ট নহয়।

অসমত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ অভাৱৰ বাবে ৰাজ্যৰ বিদ্যালয়সমূহৰ একত্ৰীকৰণ এক উদ্বেগজনক পৰিঘটনা আৰু আমাৰ ৰাজহুৱা শিক্ষাখণ্ডৰ সন্মুখীন হোৱা প্ৰত্যাহ্বানসমূহৰ এক চকুত পৰা ইংগিত। এই সমস্যাটো ফলপ্ৰসূভাৱে সমাধান কৰিবলৈ চৰকাৰে ব্যক্তিগত খণ্ডৰ ইংৰাজী মাধ্যমৰ বিদ্যালয়ত নামভৰ্তি বৃদ্ধি আৰু খৰ্কপ আউটৰ হাৰ অধিক হোৱাৰ আঁৰৰ কাৰণসমূহ চিনাক্ত কৰাটো অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ। এই কাৰকসমূহৰ বিষয়ে ভালদৰে বুজি নাপালে চৰকাৰী বিদ্যালয়সমূহক পুনৰুজ্জীৱিত কৰাৰ প্ৰচেষ্টাত নূন্যতম ফলাফল পোৱাৰ সম্ভাৱনা আছে।

উপসংহাৰ ঃ

অসম চৰকাৰে জিলাসমূহত চিকিৎসা মহাবিদ্যালয়, অভিযান্ত্ৰিক মহাবিদ্যালয়, বিশ্ববিদ্যালয় স্থাপনৰ উদ্দেশ্যেৰে উচ্চ শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত পদক্ষেপ হাতত লৈছে। ইতিমধ্যে কেইবাখনো প্ৰতিষ্ঠান উদ্বোধন কৰা হৈছে যদিও সংবাদ মাধ্যমৰ বাতৰি অনুসৰি চিকিৎসা মহাবিদ্যালয় আৰু চিকিৎসালয়ত অভিজ্ঞ আৰু যোগ্য চিকিৎসকৰ অভাৱৰ ইংগিত পোৱা গৈছে, যাৰ ফলত শিক্ষা আৰু প্ৰদান কৰা স্বাস্থ্য সেৱাৰ মানদণ্ডৰ ওপৰত উদ্বেগ প্ৰকাশ পাইছে।

ভাৰতৰ শৈক্ষিক ব্যৱস্থাপনাত কেন্দ্ৰ আৰু ৰাজ্য চৰকাৰৰ মাজত এক জটিল আন্তঃক্ৰিয়া জড়িত হৈ থাকে, নীতি প্ৰণয়ন, পুঁজি আৰু গুণগত নিশ্চয়তাৰ ক্ষেত্ৰত দুয়োটাৰে সুকীয়া ভূমিকা আছে। অসমত আঞ্চলিক প্ৰত্যাহ্বানসমূহ মোকাবিলা কৰা আৰু স্থানীয় সংস্কৃতি আৰু ভাষাৰ প্ৰসাৰৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰি শিক্ষা পৰিচালনাৰ ক্ষেত্ৰত স্থানীয় সংস্থাসমূহৰ লগতে ৰাজ্য চৰকাৰে গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। পৰিচালনাৰ গাঁথনি, সম্পদ আবণ্টন আৰু কেন্দ্ৰীয় হস্তক্ষেপ কৌশলসমূহ ৰাষ্ট্ৰীয় নীতিৰ সৈতে সংগতি ৰাখি ৰাজ্যৰ নিৰ্দিষ্ট

প্রয়োজনীয়তা পূৰণৰ বাবে তৈয়াৰ কৰা হয়। অসমৰ শিক্ষা ব্যৱস্থা ভাৰতৰ জাতীয় নীতিৰ বহল পৰিসৰৰ ভিতৰত চলি থকাৰ সময়তে অসমৰ নির্দিষ্ট প্রেক্ষাপটৰ দ্বাৰা গঢ় লৈ উঠা অন্যান্য প্রত্যাহ্বান আৰু সুযোগৰ সন্মুখীন হৈছে। এই পার্থক্যসমূহৰ সমাধানৰ বাবে স্থানীয় কৌশল, আন্তঃগাঁথনিত অধিক বিনিয়োগ, নির্দিষ্ট শিক্ষক প্রশিক্ষণ কার্যসূচী আৰু অসমৰ বৈচিত্র্যময় সাংস্কৃতিক আৰু আর্থ-সামাজিক পৰিৱেশক বিবেচনা কৰা নীতিৰ প্রয়োজন। ❑

তথ্যসূত্র ঃ

১) অসম চৰকাৰ (২০০৩), অসম মানৱ উন্নয়ন প্রতিবেদন, ২০০৩, অসম চৰকাৰ।

২) অসম চৰকাৰ (২০০১-২০১৫), অসমৰ অর্থনৈতিক জৰীপ। অসম চৰকাৰৰ অর্থনীতি আৰু পৰিসংখ্যা সঞ্চালকালয়।

৩) অসম চৰকাৰ (১৯৯৬-১০১৮), অসম চৰকাৰৰ ভাৰতৰ নিয়ন্ত্রক আৰু মহানিৰীক্ষকৰ প্রতিবেদন।

৪) অসম চৰকাৰ (২০০০-২০১৭), পৰিসংখ্যা হাতপুথি, অসম, অর্থনীতি আৰু পৰিসংখ্যা সঞ্চালকালয়, অসম চৰকাৰ।

৫) অসম চৰকাৰ (২০০৩),পৰিসংখ্যা হাতপুথি, অসম, অর্থনীতি আৰু পৰিসংখ্যা সঞ্চালকালয়, অসম চৰকাৰ।

৬) অসম চৰকাৰ (২০০৮), অসম চৰকাৰৰ বিত্ত বিভাগৰ তেৰতম বিত্ত আয়োগলৈ স্মাৰক পত্র।

৭) ভাৰত চৰকাৰ (২০১৫), ভাৰতৰ পৰিসংখ্যা বছৰ পুথি। পৰিসংখ্যা আৰু কার্যসূচী ৰূপায়ণ মন্ত্রালয়।

৮) মানৱ সম্পদ উন্নয়ন মন্ত্রালয় (২০১৮), উচ্চ শিক্ষাৰ সর্বভাৰতীয় জৰীপ ২০১৭-১৮, উচ্চ শিক্ষা বিভাগ, ভাৰত চৰকাৰ

৯) PRATHAM (2022), শিক্ষাৰ বার্ষিক অৱস্থাৰ প্রতিবেদন (গ্রাম্য), ASER কেন্দ্র, নতুন দিল্লী।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মহিলাসকলৰ আর্থ-সামাজিক সবলীকৰণত প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা-গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিৰ অৱদান

ড° বিজয় দাস
সহকাৰী অধ্যাপক
পৰিচালনা অধ্যয়ন বিভাগ
অৰুণোদয় বিশ্ববিদ্যালয়
অৰুণাচল প্রদেশ, ৭৯১১১০
৭০০২৬২৫৭১৮
bdas271994@gmail.com

ড° ৰামাচন্দ্র পাৰিদা
অধ্যাপক, বাণিজ্য বিভাগ
ৰাজীৱ গান্ধী কেন্দ্রীয় বিশ্ববিদ্যালয়
অৰুণাচল প্রদেশ, ৭৯১১১২
৯৪৩৬০৪৩১২৯
rama.parida@rgu.ac.in

সাৰাংশ (Abstract) ঃ

ভাৰতৰ উন্নয়নমূলক কার্যসূচীত মহিলা সবলীকৰণ এক গুৰুত্বপূর্ণ বিষয় হৈ আহিছে, কিয়নো সমাজৰ সামগ্রিক প্রগতিৰ বাবে লিংগ সমতা অতি প্রয়োজনীয়। ২০১৬ চনত আৰম্ভ হোৱা প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা-গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিৰ লক্ষ্য হৈছে গ্রাম্য দৰিদ্র লোকসকলক সুলভ মূল্যৰ বাসগৃহ প্রদান।

এই অধ্যয়নত অনুসন্ধান কৰা হৈছে যে প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিয়ে মহিলাসকলক কেনেকৈ নিৰাপত্তাৰ অনুভূতি প্রদান কৰিছে তেওঁলোকৰ সামাজিক মর্যদা উন্নত কৰিছে আৰু ঘৰুৱা সিদ্ধান্ত গ্রহণৰ ক্ষেত্রত তেওঁলোকৰ ভূমিকা শক্তিশালী কৰিছে। নিজৰ নামত বা পৰিয়ালৰ পুৰুষ সদস্যৰ সৈতে যৌথভাৱে গৃহ লাভ কৰি মহিলাসকলে মালিকীস্বত্বৰ অধিকাৰ লাভ কৰিছে, যিটো তেওঁলোকৰ আর্থিক স্বাধীনতা আৰু সামাজিক স্থান বৃদ্ধিৰ বাবে অতি গুৰুত্বপূর্ণ। ইয়াৰ উপৰিও এই আঁচনিখনে পৰোক্ষভাৱে মহিলাসকলক চৰকাৰী ৰাজসাহায্য, বেংক একাউণ্টৰ জৰিয়তে আর্থিক অন্তর্ভুক্তি আৰু ঋণৰ সুযোগৰ সুবিধা প্রদান কৰি তেওঁলোকৰ অর্থনৈতিক সামর্থ্য আৰু অধিক বৃদ্ধি কৰিছে।

মুঠ ১২০ গৰাকী মহিলাৰ ওপৰত অসমৰ শোণিতপুৰ জিলাত জৰীপ আৰু সাক্ষাৎকাৰৰ জৰিয়তে সংগ্রহ কৰা গুণগত আৰু পৰিমাণগত দুয়োটা তথ্যৰ জৰিয়তে এই গৱেষণা পত্রখনে কেৱল গৃহ নির্মাণৰ অৱস্থাই নহয়, ভাৰতৰ গ্রাম্য অঞ্চলৰ মহিলাসকলৰ বহল আর্থ-সামাজিক অৱস্থাও উন্নত কৰাৰ ক্ষেত্রত পিএমএৱাই-জিৰ পৰিৱর্তনশীল ভূমিকাক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে। এই তথ্যই প্রকাশ কৰে যে এই আঁচনিখনে গ্রাম্য মহিলাসকলক অর্থনৈতিক আৰু সামাজিকভাৱে সবল কৰি লিংগ সমতা আৰু বহনক্ষম উন্নয়নত অৰিহণা যোগোৱাৰ যথেষ্ট সম্ভাৱনা আছে।

মূলশব্দ (Key words) ঃ

প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ আঁচনি, মহিলা সবলীকৰণ, আর্থ-সামাজিক, শোণিতপুৰ জিলা

আৰম্ভণি (Introduction) ঃ

ভাৰতৰ উন্নয়নমূলক কার্যসূচীত মহিলা সবলীকৰণ এক গুৰুত্বপূর্ণ বিষয় হৈ

আহিছে, কিয়নো সমাজৰ সামগ্রিক প্রগতিৰ বাবে লিংগ সমতা অতি প্রয়োজনীয়। মহিলাসকলক সবলীকৰণ কৰাটো কেৱল তেওঁলোকক সম অধিকাৰ আৰু সুযোগ দিয়াই নহয় বৰঞ্চ তেওঁলোকে সম্পদৰ সুবিধা আৰু তেওঁলোকৰ জীৱনত প্রভাৱ পেলোৱা সিদ্ধান্ত লোৱাৰ ক্ষমতা নিশ্চিত কৰা। সৱলীকৰণৰ অন্যতম জটিল দিশ হ'ল মহিলাসকলক অর্থনৈতিক স্বাধীনতা আৰু নিৰাপত্তা প্রদান কৰা। এই প্রেক্ষাপটত গৃহ নির্মাণে গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা পালন কৰে, কিয়নো ঘৰৰ মালিক হ'লে মহিলাসকলে তেওঁলোকৰ পৰিয়াল আৰু সম্প্রদায়ৰ ভিতৰত নিৰাপত্তা, স্থিতিশীলতা আৰু সন্মানৰ অনুভূতি লাভ কৰে।

ভাৰত চৰকাৰে ২০১৬ চনত আৰম্ভ কৰা প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিৰ জৰিয়তে ২০২৪ চনৰ ভিতৰত ভাৰতৰ গ্রাম্য অঞ্চলত "সকলোৰে বাবে আৱাস" প্রদান কৰাৰ লক্ষ্য লোৱা হৈছে আৰু গ্রাম্য দৰিদ্রসকলৰ বাবে অনাময় ব্যৱস্থা, মহিলা নেতৃত্বাধীন পৰিয়ালসমূহৰ ওপৰত বিশেষ গুৰুত্ব আৰোপ কৰা। মহিলাক ঘৰৰ মালিকীস্বত্ব বা মহিলাৰ নামত সহ-মালিকত্ব প্রদান কৰি পিএমএৱাই-জিয়ে তেওঁলোকৰ আর্থ-সামাজিক মর্যাদা বৃদ্ধি আৰু তেওঁলোকৰ সবলীকৰণত অৰিহণা যোগোৱাত উল্লেখযোগ্য ভূমিকা পালন কৰে।

প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিয়ে মহিলা সবলীকৰণত অৰিহণা যোগোৱাৰ অন্যতম প্রধান উপায় হ'ল তেওঁলোকৰ অর্থনৈতিক সুৰক্ষা বৃদ্ধি কৰা। গৃহ নির্মাণ এক উল্লেখযোগ্য সম্পদ, আৰু যেতিয়া মহিলাসকলে ঘৰৰ মালিক হয়, তেতিয়া তেওঁলোকে আর্থিক স্থিতিশীলতা লাভ কৰে। বহু গ্রাম্য মহিলাৰ বাবে বিশেষকৈ কম আয়ৰ পৰিয়ালৰ বাবে পিএমএৱাই- জি আঁচনিৰ অধীনত ঘৰৰ মালিক হোৱাটোৱে জীৱন সলনি কৰা সুযোগৰ প্রতিনিধিত্ব কৰে। পৰম্পৰাগত গ্রাম্য পৰিৱেশত মহিলাসকলে প্রায়ে মাটি বা সম্পত্তিৰ দৰে সম্পত্তিৰ সুবিধা নাপায়। পিএমএৱাই-জিৰ সহায়ত মহিলাসকল হয় ঘৰসমূহৰ একক বা যৌথ মালিক, যিয়ে তেওঁলোকক এক স্পষ্ট সম্পত্তি প্রদান কৰে যিয়ে তেওঁলোকৰ অর্থনৈতিক সবলীকৰণত অৰিহণা যোগায়।

পৰম্পৰাগতভাৱে ভাৰতৰ গ্রাম্য মহিলাসকলে সম্পদ, শিক্ষা, কর্মসংস্থাপনৰ সুবিধাৰ অভাৱকে ধৰি উল্লেখযোগ্য সামাজিক বাধাৰ সন্মুখীন হৈছে। ভাৰতীয় সমাজৰ পিতৃতান্ত্রিক স্বৰূপে নাৰীৰ ভূমিকাক প্রায়ে ঘৰুৱা কাম আৰু যত্ন লোৱাৰ মাজতে সীমাবদ্ধ কৰি ৰাখে, তেওঁলোকৰ অৱদানৰ স্বীকৃতি কম। কিন্তু পিএমএৱাই-জি আঁচনিয়ে মহিলাসকলক সম্পত্তিৰ মালিকীস্বত্ব প্রদান কৰি এই আখ্যান সলনি কৰাত সহায় কৰে, যাৰ ফলত তেওঁলোকৰ সামাজিক অৱস্থান উন্নত হয়।

তদুপৰি পিএমএৱাই-জিয়ে ঘৰৰ যৌথ মালিকীস্বত্বক উৎসাহিত কৰি গ্রাম্য অঞ্চলত লিংগ সমতাকো প্রসাৰিত কৰে। যিবোৰ ক্ষেত্রত স্বামীয়েই প্রাথমিক হিতাধিকাৰী হয়, তেনে ক্ষেত্রত পত্নীৰ নামত সহ-মালিকীস্বত্বই মহিলাৰ সম্পত্তিৰ ওপৰত সমান অধিকাৰ থকাটো নিশ্চিত কৰে। এই পদক্ষেপে সম্পত্তিৰ মালিকীস্বত্বৰ লিংগভিত্তিক বৈষম্য হ্রাস কৰে, যাতে মহিলাসকলক পৰিয়ালৰ সম্পদৰ উত্তৰাধিকাৰী বা নিয়ন্ত্রণৰ পৰা বাদ দিয়া নহয়। পৰম্পৰাগত লিংগ নীতিক প্রত্যাহ্বান জনোৱা আৰু নাৰীক সমান হিচাপে দেখা পৰিৱেশ গঢ়ি তোলাৰ ক্ষেত্রত এনে ব্যৱস্থা অতি প্রয়োজনীয়।

পূর্বসাহিত্যৰ পর্যালোচনা (Literature Review) ঃ

সাজীয়ে (২০২০) প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা (PMAY) সম্পর্কে এক অধ্যয়ন চলাইছিল ২০২০ চনত কেৰালাৰ পাঠানমথিটা জিলাৰ মাল্লাপল্লী ব্লক পঞ্চায়তত এই আঁচনিৰ ৰূপায়ণ প্রক্রিয়া আৰু হিতাধিকাৰীৰ ওপৰত ইয়াৰ প্রভাৱ আৰু কাৰকসমূহ জানিবলৈ চেষ্টা কৰে যিবোৰ হিতাধিকাৰীৰ নির্বাচন প্রক্রিয়াত দায়বদ্ধ। এই গৃহ নির্মাণ আঁচনিৰ বিশেষকৈ গ্রাম্য অঞ্চলত মানৱ উন্নয়নৰ ওপৰত ইতিবাচক প্রভাৱ। এই অধ্যয়নত হিতাধিকাৰী নির্বাচনত মূল ভূমিকা লোৱা কাৰকসমূহ হ'ল লিংগ, আয়ৰ স্তৰ আদি। এই আঁচনিৰ অধীনত ৰাজনৈতিক প্রভাৱ, গৃহ নির্মাণৰ বাবে লাভ কৰা ধনৰ সময়মতে কিস্তি, ২০১১ চনৰ আর্থ-সামাজিক জাতি লোকপিয়ল আদিয়ে বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছে এই আঁচনিৰ সঠিক ৰূপায়ণ।

আগৰৱাত (২০২১) বিভিন্ন কাৰক যেনে কেঁচামালৰ মূল্যবৃদ্ধি, মাটি, প্রাকৃতিক দুর্যোগ আৰু Covid-19 মহামাৰীৰ দৰে পৰিস্থিতি, ভুল আর্থিক অনুমান আদিয়েই হৈছে প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ আঁচনিৰ অধীনত ঘৰ নির্মাণত পলম হোৱাৰ মূল কাৰণ। গৱেষকৰ অধ্যয়ন অনুসৰি চৰকাৰী বিষয়াসকলে ঘৰ নির্মাণৰ বাবে উপযুক্ত তথ্য প্রদান কৰা নাছিল। চৰকাৰে হিতাধিকাৰীসকলক টোল ফ্রী নম্বৰ প্রদান কৰিব লাগে য'ত তেওঁলোকে অভিযোগ দাখিল কৰিব

পাৰে আৰু তেওঁলোকে আঁচনিখনৰ প্ৰকৃত ছবিখন ল'বলৈও হঠাতে ঠাইখনলৈ যাব লাগে।

মঞ্জুজুলাই (২০২২) তেওঁৰ গৱেষণা পত্ৰত ভাৰতৰ বিভিন্ন গৃহ নিৰ্মাণ কাৰ্যসূচী অধ্যয়ন কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে, পি এম এ ৰাই ইউ আঁচনিৰ ধাৰণাগত কাঠামো পি এম এ ৰাইৰ ৰূপায়ণ প্ৰক্ৰিয়াও। গৱেষকজনে মূলতঃ আৰ্থ-সামাজিক অৱস্থা, আয় স্তৰৰ উন্নতিৰ বাধা, উত্তৰদাতাসকলৰ সঞ্চয়ৰ অভ্যাস, প্ৰদান কৰা ঋণৰ ব্যৱহাৰ আদি বিভিন্ন দিশ সামৰি লৈছে আৰু জনসাধাৰণৰ জীৱন-যাপনৰ মানদণ্ডৰ বিকাশ আৰু উন্নতিৰ ক্ষেত্ৰত চৰকাৰী আঁচনিৰ তাৎপৰ্য আছে। ভাৰত চৰকাৰে আৰম্ভ কৰা পূৰ্বৰ বিভিন্ন গৃহ নিৰ্মাণ আঁচনিৰ বিফলতাৰ মূল কাৰণ হৈছে ধাৰাবাহিকতাৰ অভাৱ আৰু আন্তঃসংযোগৰ দুৰ্বলতা। গৱেষকে এইটোও পৰ্যবেক্ষণ কৰিছে যে নগৰীয়া জনসংখ্যাৰ দ্ৰুত বৃদ্ধিৰ আঁৰৰ মূল কাৰণ ঘৰৰ নাটনি আৰু নগৰীয়া জীৱন-যাপনৰ দুৰ্বল অৱস্থা।

মালানগৌখৱাই (২০২২) তেওঁৰ অধ্যয়নত প্ৰকাশ পাইছে যে প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা- গ্ৰামীণ (PMAY-G) আঁচনিখনে মানুহৰ জীৱনৰ নিয়োগ আৰু সামাজিক স্থিতিশীলতাৰ বাবে এক ভিত্তি প্ৰদান কৰে।

পাণ্ডে আৰু আগৰৱালে (২০২২) বিশেষভাৱে ভাৰতৰ গ্ৰাম্য অঞ্চলৰ মহিলাসকলৰ মাজত সাক্ষৰতাৰ হাৰ হ্ৰাস পোৱাই হৈছে ভাৰতৰ গ্ৰাম্য উন্নয়নমূলক আঁচনিৰ সঠিক বৃদ্ধি নোহোৱাৰ অন্যতম প্ৰধান চিন্তা। তেওঁলোকে লগতে কয় যে ভূমি আৰু প্ৰযুক্তিগত সংস্কাৰ, সহজলভ্য গ্ৰাম্য অঞ্চলত ঋণ আৰু ঋণৰ ক্ষেত্ৰত সঠিক ৰূপায়ণে ভাৰতত পি এম এ ৰাই-জি আঁচনিৰ উন্নয়নত সহায় কৰিব পাৰে।

ৰাম আৰু শৰ্মাই (২০২৩) "মানৱ অধিকাৰ আৰু সামাজিক দায়বদ্ধতাক প্ৰতিফলন" তেওঁলোকৰ প্ৰবন্ধত "প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীণৰ এক মূল্যায়ন হিমাচল প্ৰদেশ ৰাজ্যত কিছুমান অন্তৰ্দৃষ্টি" হিমাচল প্ৰদেশৰ মাণ্ডি জিলাৰ কাৰ্ছগ ব্লকত PMAY-G আঁচনিৰ সন্দৰ্ভত হিতাধিকাৰীসকলৰ নিৰ্বাচন প্ৰক্ৰিয়া আৰু সন্তুষ্টিৰ স্তৰ কাৰ্যকৰীকৰণ পৰীক্ষা কৰিবলৈ চেষ্টা কৰে। অধ্যয়নত দেখা গৈছে যে সকলো উত্তৰদাতাসকল বিপিএল পৰিয়ালৰ আৰু তেওঁলোকৰ অধিকাংশই অভিযোগ ব্যৱস্থাৰ ওপৰত সন্তুষ্ট নাছিল। গৱেষকসকলে যুক্তি দিছিল যে এই পুঁজি উন্নত ৰ নিৰ্মাণৰ বাবে পৰ্যাপ্ত নহয়। আৱাসৰ ব্যয় অনুসৰি পুঁজিৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য (Objectives of the study) ঃ

অসমৰ শোণিতপুৰ জিলাৰ মহিলাসকলৰ আৰ্থ-সামাজিক সবলীকৰণত প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীণ আঁচনিৰ অৱদান বিষয়ে বিশদভাৱে আলোচনা কৰাটোৱেই হৈছে বৰ্তমানৰ অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য।

গৱেষণাৰ পদ্ধতি (Research Methodology) ঃ

এই অধ্যয়ন শোণিতপুৰ জিলা এককত সীমাবদ্ধ আৰু য'ত ২টা মহকুমা, ৭টা ৰাজহ চক্ৰ, ১৬ টা মৌজা, ৭ টা সম্প্ৰদায় উন্নয়ন ব্লক, ৮২ টা গ্ৰাম পঞ্চায়ত, ১৬১৫ খন গাঁও অন্তৰ্ভুক্ত। এই অধ্যয়নৰ বাবে ৩ টা সম্প্ৰদায় উন্নয়ন ব্লক (Community Developmental Block) নিৰ্বাচিত কৰা হয় অৰ্থাৎ বালিপাৰা, ঢেকীয়াজুলি আৰু ৰঙাপাৰা যত প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীণ আঁচনিৰ হিতাধিকাৰীৰ সংখ্যা সৰ্বাধিক। মুঠ ১২০ গৰাকী মহিলা হিতাধিকাৰীক নমুনাৰ আকাৰ হিচাপে লোৱা হৈছে আৰু ৪০ গৰাকী মহিলা হিতাধিকাৰী প্ৰতিটো সম্প্ৰদায় উন্নয়ন ব্লকৰ পৰা সৰল ৰেণ্ডম ব্যৱহাৰ কৰি যাদৃচ্ছিকভাৱে নিৰ্বাচিত কৰা হয়। এই অধ্যয়নত ব্যৱহাৰ কৰা প্ৰাথমিক তথ্যসমূহ গৱেষকসকলে পূৰ্বে প্ৰস্তুত কৰা এটা গাঁথনিগত প্ৰশ্নাৱলীৰ জৰিয়তে সংগ্ৰহ কৰে আৰু এচ, পি. এচ. এচ (SPSS) চফ্টওৱেৰৰ সহায়ত বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ ওপৰত আলোচনা আৰু ফলাফল লাভ ঃ

গৱেষকসকলে অধ্যয়নক্ষেত্ৰত গৈ সংগ্ৰহ কৰা প্ৰাথমিক তথ্যসমূহৰ বিশ্লেষণৰ ভিত্তিত উত্তৰদাতা হিতাধিকাৰীসকলৰ জনগাঁথনিগত অৱস্থাৰ তথ্যসমূহ তলত উপস্থাপন কৰা হ'ল।

ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নত লাভ কৰা তথ্য অনুসৰি উত্তৰদাতা মহিলাসকলৰ অধিকাংশই (৬৫%) ৩১ পৰা ৪০ বছৰ বয়সৰ ভিতৰত, ২০ শতাংশ উত্তৰদাতা মহিলা ৩০ বছৰৰ কম, ১৫ শতাংশ উত্তৰদাতা মহিলা ৪১ৰ পৰা ৫০ বছৰ বয়সৰ ভিতৰত আৰু ১০ শতাংশ মহিলা উত্তৰদাতা ৫০ বছৰ বয়সৰ বেছি। মহিলা উত্তৰদাতাসকলৰ অধিকাংশই (৬৫%) অবি'চি/এমঅ'বিচি (OBC/MOBC) শ্ৰেণীৰ অন্তৰ্গত। সংখ্যাগৰিষ্ঠ অৰ্থাৎ ৭৮ শতাংশ উত্তৰদাতা মহিলা বিবাহিত আৰু ৪৭ শতাংশ উত্তৰদাতা মহিলা হিন্দু। প্ৰায় ৮৭ শতাংশ মহিলা উত্তৰদাতাসকল নিউক্লিয়াৰ পৰিয়ালৰ শ্ৰেণীৰ আৰু ৬০ শতাংশ মহিলা উত্তৰদাতাৰ তেওঁলোকৰ পৰিয়ালৰ সদস্য ৩ ৰ পৰা ৫ জন। ৩৫ শতাংশতকৈ অধিক মহিলা উত্তৰদাতা হিতাধিকাৰীৰ শিক্ষাগত অৰ্হতা মেট্ৰিক পাছ আৰু ৩৯ শতাংশই উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰী কৃষি

খণ্ডত স্বনিয়োজিত। উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশৰ (৭৭ শতাংশ) মাহেকীয়া আয় প্ৰায় ১০ হাজাৰ টকাৰ তলত।

অৰ্থনৈতিক সবলীকৰণ (Economic Empowerment) ঃ

গৱেষকসকলে অধ্যয়নক্ষেত্ৰত গৈ লাভ কৰা প্ৰাথমিক তথ্যসমূহৰ বিশ্লেষণৰ ভিত্তিত মহিলাসকলৰ অৰ্থনৈতিক সবলীকৰণৰ বিষয়ে তলত উল্লেখ কৰা হ'ল-

	তীব্রভাৱে একমত নহয়	একমত নহয়	নিৰপেক্ষ	সহমত	দৃঢ়ভাৱে একমত
পি এম এ ৱাই-জি আঁচনিখনে মোক গৃহস্বত্বাধিকাৰৰ জৰিয়তে অৰ্থনৈতিক সুৰক্ষা প্ৰদান কৰিছে।	০ (০%)	৮ (৭%)	১৪ (১১%)	৭২ (৬০%)	২৬ (২২%)
পি এম এ ৱাই-জি ৰ পৰা পোৱা আৰ্থিক সাহায্যই মোক ঘৰুৱা খৰচ কমোৱাত সহায় কৰিছে	৪ (৩%)	৮ (৭%)	১৫ (১২%)	৭০ (৫৮%)	২৩ (১৯%)
পি এম এ ৱাই-জি ৰ জৰিয়তে ঘৰৰ মালিক হোৱাৰ বাবে মোৰ টকা সঞ্চয় কৰাৰ ক্ষমতা বৃদ্ধি পাইছে	৫ (৪%)	৪ (৩%)	২৬ (২২%)	৬৫ (৫৪%)	২০ (১৭%)
পি এম এ ৱাই-জি আঁচনিখনে মোৰ আয় সৃষ্টিকাৰী কাম-কাজত (যেনে, ক্ষুদ্ৰ ব্যৱসায়, ঘৰুৱা কাম) জড়িত হোৱাৰ সুযোগ উন্নত কৰিছে।	৪ (৩%)	১০ (৮%)	১০ (৮%)	৬৭ (৫৬%)	২৯ (২৫%)
পি এম এ ৱাই-জিৰ ঘৰ থকাৰ বাবেই মই স্বতন্ত্ৰ আৰ্থিক সিদ্ধান্ত ল'ব পাৰিছো	০ (০%)	০ (০%)	২১ (১৮%)	৮২ (৬৮%)	১৭ (১৪%)

তথ্যসমূহৰ বিশ্লেষণৰ ভিত্তিত মহিলাসকলৰ অৰ্থনৈতিক সবলীকৰণৰ বিষয়ে তলত উল্লেখ কৰা হ'ল-

* উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশই (৬০ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা- গ্ৰামীণ আঁচনিখনে তেওঁলোকক গৃহস্বত্বাধিকাৰৰ জৰিয়তে অৰ্থনৈতিক সুৰক্ষা প্ৰদান কৰিছে বুলি সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* মহিলা হিতাধিকাৰী উত্তৰদাতাসকলৰ অধিকাংশই (৫৮ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীণ আঁচনিখনৰ পৰা পোৱা আৰ্থিক সাহায্যই তেখেতসকলক ঘৰুৱা খৰচ কমোৱাত সহায় কৰিছে বুলি সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* মহিলা হিতাধিকাৰী উত্তৰদাতাসকলৰ অধিকাংশই (৫৪ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীন আঁচনিখনৰ জৰিয়তে ঘৰৰ মালিক হোৱাৰ বাবে টকা সঞ্চয় কৰাৰ ক্ষমতা বৃদ্ধি পাইছে বুলি তেওঁলোকে সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশই (৫৬ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা-গ্ৰামীণ আঁচনিখনে তেওঁলোকক আয় সৃষ্টিকাৰী কাম-কাজত (যেনে, ক্ষুদ্ৰ ব্যৱসায়, ঘৰুৱা কাম) জড়িত হোৱাৰ সুযোগ উন্নত কৰিছে বুলি সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশই (৬৮ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীণ আঁচনিৰ ঘৰ থকাৰ সবলীকৰণৰ বিষয়ে তলত উল্লেখ কৰা হ'ল-

* মহিলা হিতাধিকাৰী উত্তৰদাতাসকলৰ অধিকাংশই (৫৩ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা - গ্ৰামীণ আঁচনিৰ জৰিয়তে সমাজত তেওঁলোকৰ সামাজিক মৰ্যদা উন্নত হৈছে বুলি সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশই (৪৮ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা গ্ৰামীণ আঁচনিয়ে তেওঁলোকক সামূহিক অনুষ্ঠান আৰু কাৰ্যসূচীত অংশগ্ৰহণ কৰাত সহজ কৰি তুলিছে বুলি সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশই

	তীব্ৰভাৱে একমত নহয়	একমত নহয়	নিৰপেক্ষ	সহমত	দৃঢ়ভাৱে একমত
পি এম এ ৱাই-জি আঁচনিৰ জৰিয়তে সমাজত মোৰ সামাজিক মৰ্যদা উন্নত হৈছে	২ (২%)	৭ (৬%)	১৪ (১১%)	৬৩ (৫৩%)	৩৪ (২৮%)
পি এম এ ৱাই-জিয়ে মোক সামূহিক অনুষ্ঠান আৰু কাৰ্যসূচীত অংশ গ্ৰহণ কৰাত সহজ কৰি তুলিছে	০ (০%)	১ (২৭%)	৩২ (৪৮%)	৫৮ (৫৩%)	২৯ (২৪%)
পি এম এ ৱাই-জি আঁচনিৰ অধীনত ঘৰৰ মালিক হোৱাৰ বাবেই মোক সমাজতঅধিক সন্মান আৰু স্বীকৃতি লাভ কৰিছে	০ (০%)	১২ (০%)	৪৩ (১১%)	৫৩ (৬৯%)	১২ (২০%)
এই আঁচনিখনে মোৰ সমাজত মহিলাসকলক সম্পত্তিৰ মালিক হোৱাত সহায় কৰিছে	০ (০%)	০ (২৭%)	১৪ (৪৮%)	৮৩ (৫৩%)	২৩ (২৪%)
পি এম এ ৱাই-জি আঁচনিখনে সামাজিক পৰিৱেশত আনৰ সৈতে মত বিনিময় কৰাৰ ক্ষেত্ৰত মোৰ আত্মবি শ্বাস বৃদ্ধি কৰিছে	০ (০%)	৬ (৫%)	১২ (১০%)	৬৫ (৫৪%)	৩৭ (৩১%)

বাবেই তেওঁলোকে স্বতন্ত্ৰ আৰ্থিক সিদ্ধান্ত ল'ব পাৰিছে বুলি সহমত প্ৰকাশ কৰে।

সামাজিক সবলীকৰণ (Social Empowerment) ঃ

গৱেষকসকলে অধ্যয়নক্ষেত্ৰত গৈ লাভ কৰা প্ৰাথমিক তথ্যসমূহৰ বিশ্লেষণৰ ভিত্তিত মহিলাসকলৰ সামাজিক (৪৪ শতাংশ) প্ৰধানমন্ত্ৰী আৱাস যোজনা- গ্ৰামীণ আঁচনিৰ অধীনত ঘৰৰ মালিক হোৱাৰ বাবেই সমাজত অধিক সন্মান আৰু স্বীকৃতি লাভ কৰিছে বুলি তেওঁলোকে সহমত প্ৰকাশ কৰে।

* মহিলা হিতাধিকাৰী উত্তৰদাতাসকলৰ অধিকাংশই

(৬৯ শতাংশ) প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীন আঁচনিখনে তেওঁলোকক সমাজত সম্পত্তিৰ মালিক হিচাপে অধিক গ্রহণযোগ্য হোৱাত সহায় কৰিছে বুলি সহমত প্রকাশ কৰে।

* উত্তৰদাতা মহিলা হিতাধিকাৰীসকলৰ অধিকাংশই (৫৪ শতাংশ) প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ আঁচনিখনে সামাজিক পৰিৱেশত আনৰ সৈতে মত বিনিময় কৰাৰ ক্ষেত্রত তেওঁলোকৰ আত্মবিশ্বাস বৃদ্ধি কৰিছে বুলি সহমত প্রকাশ কৰে।

উপসংহাৰ (Conclusion) ঃ

বিশেষকৈ ভাৰতৰ গ্রাম্য অঞ্চলত মহিলাসকলৰ আর্থ-সামাজিক সৱলীকৰণৰ প্রসাৰৰ ক্ষেত্রত প্রধানমন্ত্রী আৱাস যোজনা গ্রামীণ (PMAY-G) আঁচনিয়ে গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা পালন কৰিছে। মহিলাৰ নামত বা পৰিয়ালৰ পুৰুষ সদস্যৰ সৈতে যৌথভাৱে ঘৰৰ মালিকীস্বত্বৰ সুবিধা প্রদান কৰি আঁচনিখনে তেওঁলোকৰ আর্থিক স্বাধীনতা আৰু সামাজিক মর্যাদা বৃদ্ধি কৰিছে। এই বৃদ্ধি পোৱা সম্পত্তিৰ মালিকীস্বত্বই মহিলাসকলৰ নিৰাপত্তাবোধ উন্নত কৰাই নহয়, ঘৰুৱা সিদ্ধান্ত গ্রহণৰ ক্ষেত্রতো তেওঁলোকৰ অংশগ্রহণ শক্তিশালী কৰিছে। তদুপৰি, পিএমএৱাই-জিয়ে চৰকাৰী ৰাজসাহায্য, আর্থিক অন্তর্ভুক্তি, আৰু ঋণৰ সুযোগৰ সুবিধাৰ জৰিয়তে মহিলাসকলৰ অর্থনৈতিক সবলীকৰণত পৰোক্ষভাৱে অৰিহণা যোগাইছে। এই আঁচনিখনে মহিলাসকলৰ আত্মবিশ্বাস আৰু সম্প্রদায়ৰ সংযোগকো শক্তিশালী কৰিছে যিয়ে বহল সমাজ উন্নয়নত অৰিহণা যোগাইছে। কিন্তু আমোলাতন্ত্রিক পলম আৰু সীমিত সজাগতাৰ দৰে প্রত্যাহ্বানসমূহ অব্যাহত আছে, যাৰ বাবে আঁচনিখনে ইয়াৰ সম্পূর্ণ সম্ভাৱনা লাভ কৰিবলৈ লক্ষ্য নির্ধাৰণ কৰি হস্তক্ষেপৰ প্রয়োজন। সামগ্রিকভাৱে পিএমএৱাই-জিয়ে মহিলাৰ আর্থ-সামাজিক সবলীকৰণক লালন-পালন কৰি লিংগ সমতা আৰু গ্রাম্য উন্নয়নৰ দিশত এক উল্লেখযোগ্য পদক্ষেপক প্রতিনিধিত্ব কৰে। ❑

সহায়ক গ্রন্থপুঞ্জী আৰু তথ্যসূত্র ঃ

1. Agrawat, P. "A Study on Pradhan Mantri Gramin Awas Yojana - Gramin: Hanumangarh." International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS), vol. 3, no. 3(II), July-Sept. 2021, pp. 47-51.
2. Bai, M. M. "A Study on Public Perception on Pradhan Mantri Awas Yojana." ComFin Research, vol. 10, no. 2, Apr. 2022, pp. 30-39, https://doi.org/10.34293/.
3. Mallanagoudra, K. "An Evaluation of Pradhan Mantri Awaas Yojana (Gramin) in Karnataka." International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), vol. 10, issue 8, Aug. 2022, pp. c473-c481, www.ijcrt.org.
4. Ram, B., and Sharma, D. "An Evaluation of 'Pradhan Mantri Awas Yojana - Gramin' in the State of Himachal Pradesh: Some Insights." Edited by G. Gaur, Indian Society of Professional Social Work (ISPSW), Chandigarh, 2022.
5. Pandey, H., and Agarwal, V. K. "A Study on Development Schemes of Rural India." International Journal of Engineering and Management Research, vol. 12, issue 3, June 2022, pp. 205-211, https://doi.org/10.31033/ijemr.12.3.32.
6. Saji, S. E. "A Case Study on Pradhan Mantri Awas Yojana in Mallappally Block Panchayath, Pathanamthitta District, Kerala." Journal of àßmerging Technologies and Innovative Research (JàßTIR), vol. 7, issue 4, Apr. 2020, pp. 1359-1364, www.jetir.org. https://pmayg.nic.in/

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

নৱকান্ত বৰুৱাৰ কপিলীপৰীয়া সাধু উপন্যাসত নদী ঃ এক অধ্যয়ন

ডিম্পী ৰাণী বৰ্মন
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
বাপুজী মহাবিদ্যালয়, সৰ্থেবাৰী,
বৰপেটা, অসম
৮৬৩৮৮৪৩৮৬৬
ranidimpi95@gmail.com

ড° প্রফুল্ল কুমাৰ নাথ
অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
গৌহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৮৫৯৯৭৩৯৫৩
pkn@gauhati.ac.in

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

নদী প্রকৃতিৰ এটা অন্যতম সম্পদ। মানুহৰ জীৱনধাৰাৰ লগত নদীৰ সম্বন্ধ অবিচ্ছেদ্য। বিশেষকৈ গাঁৱলীয়া জীৱন নদীৰ সৈতে ওতঃপ্রোতভাৱে জড়িত। সভ্যতাৰ লগতো নদীৰ সম্বন্ধ যুগ-যুগান্তৰৰ। হ�ৰপ্পা, মহেঞ্জোদাৰো, নীল নদীৰ সভ্যতা ইত্যাদিৰ লগতে বহুতো ডাঙৰ ডাঙৰ চহৰ (যেনে-গুৱাহাটী,দিল্লী,বাৰানসী ইত্যাদি) নদীৰ পাৰতে গঢ় লৈ উঠিছে। সমাজৰ দাপোনস্বৰূপ সাহিত্যৰ পাততো নদী ভিন্ন ৰূপেৰে চিত্রায়িত হৈ আহিছে। নৱকান্ত বৰুৱাৰ *কপিলীপৰীয়া সাধু* নদীকেন্দ্রিক এখন উল্লেখযোগ্য উপন্যাস। কপিলী নদীৰ ওচৰকাষৰীয়া গাওঁ এখনৰ পটভূমিত উপন্যাসৰ কাহিনী নির্মাণ হৈছে। আমাৰ এই আলোচনা পত্রখনত ঔপন্যাসিকে কপিলী নদীক উপন্যাসৰ জৰিয়তে কেনে ধৰণে উপস্থাপন কৰিছে সেই বিষয়ে বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। কপিলী নদীৰ লগত জড়িত কপিলীপৰীয়া মানুহৰ জীৱন সংগ্রামৰ লগতে কপিলীৰ সোঁতৰ সৈতে মানুহৰ জীৱনৰ গতি কেনেকৈ ধাৰমান হৈছে সেই বিষয়েও আলোকপাত কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে। কপিলীক লেখকে এখন মাত্র নদী হিচাপে বিবেচনা নকৰি প্রাণ সঞ্জীৱিত কৰি উপন্যাসখনৰ এটা মুখ্য চৰিত্র হিচাপে নির্মাণ কৰিছে। কপিলীৰ লগত জড়িত ভিন্ন দিশবোৰ বিশ্লেষণ কৰি পাঠকৰ আগত অসমীয়া ভাষাৰ এনে এখন নাতিদীর্ঘ উপন্যাসৰ বিষয়ে আভাস দাঙি ধৰিবলৈ আমাৰ এই আলোচনা পত্রত যত্ন কৰা হৈছে।

আৰম্ভণি ঃ

বঙালী সাহিত্যৰ দৰে অসমীয়া সাহিত্যত্রে নদীৰ বিশেষ স্থান আছে। মাণিক বন্দোপাধ্যায়ৰ *পদ্মানদীৰ মাঝি*, অদ্বৈত মল্লবর্মনৰ *তিতাস একটি নদীৰ নাম*, সমৰেশ বসুৰ *গংগা*, তাৰাশংকৰৰ বন্দোপাধ্যায়ৰ *কালিন্দী* , অমৰ মিত্রৰ *সুৱর্ণৰেখা* ইত্যাদি হ'ল বাংলা সাহিত্যৰ কেইখনমান উল্লেখযোগ্য উপন্যাস। অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ প্রায় জন্মলগ্নৰ সময়ৰে পৰা ছেগাচোৰোকাকৈ সাহিত্যৰ পৃষ্ঠাত নদীয়ে স্থান পাই আহিছে। উপন্যাস সাহিত্যৰ বিকাশ আৰু সমৃদ্ধিৰ লগে লগে ভালে কেইখন শ্রেষ্ঠ নদীকেন্দ্রিক উপন্যাসৰ স্বাদ অসমীয়া পাঠকে ল'বলৈ সুযোগ পাইছে। এই ক্ষেত্রত লক্ষ্মীনন্দন বৰাৰ *গঙা চিলনীৰ পাখি*, নৱকান্ত বৰুৱাৰ *কপিলীপৰীয়া সাধু*, চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *সূৰ্যমুখীৰ স্বপ্ন*, মামনি ৰয়ছম গোস্বামীৰ *চেনাবৰ সোঁত*, নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ

সেই নদী নিৰৱধি ইত্যাদি অসমীয়া সাহিত্যৰ কেইখনমান সুখপাঠ্য উপন্যাসৰ দৃষ্টান্ত। এই নদীকেন্দ্রিক উপন্যাসবোৰত নদীৰ কাষৰীয়া অঞ্চলটোৰ ৰাইজৰ নদীৰ সৈতে গঢ়ি উঠা আত্মীয়তাৰ ছবিখনৰ লগতে সেই মানুহখিনিৰ বিশ্বাস, ৰীতি-নীতি, আস্থা, সংস্কাৰ, ভাষা ইত্যাদি ভিন্ন দিশবোৰো কথাবস্তুৰ জৰিয়তে সুন্দৰকৈ ৰূপায়িত হয়।

এখুদ ককাইদেউ ৰূপে সকলোৰে পৰিচিত নৰকান্ত বৰুৱা অসমীয়া সাহিত্যৰ এক উজ্জ্বল নক্ষত্ৰ। *ককাদেউতাৰ হাড়ৰ* দৰে কালজয়ী উপন্যাসৰ ৰচক বৰুৱাৰ অসমীয়া আধুনিক কবিতাৰ জগতখনত আছে বিশেষ অৱদান। উপন্যাসৰ বাবে সাহিত্য অকাডেমী বঁটাৰ দ্বাৰা বিভূষিত হ'লেও নৰকান্ত বৰুৱাৰ প্ৰথম পৰিচয় এজন কবি হিচাপেহে। অসমীয়া কাব্য সাহিত্যৰ জগতখনত তেওঁৰ বিশাল অৱদান অনস্বীকাৰ্য।*হে অৰণ্য হে মহানগৰ, এটি দুটি এঘাৰটি তৰা, যতি আৰু কেইটামান স্কেছ, সম্ৰাট, ৰাৱণ , মোৰ আৰু পৃথিৱীৰ আৰু ৰত্নাকৰ* ইত্যাদি হ'ল তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত কেইখনমান কাব্য সংকলন। তাৰোপৰি অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ বিকাশ আৰু বিস্তৃতিত তেওঁৰ ৰৱঙণি অতুলনীয়। *কপিলীপৰীয়া সাধু* হ'ল তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত প্ৰথম উপন্যাস(প্ৰকাশ-১৯৫৩)। ইয়াৰ পিছত *ককাদেউতাৰ হাড়* ,*মানুহ আটাইবোৰ দ্বীপ* ,*অপদাৰ্থ, এহি ভিক্‌খুণী,অহিংসাৰ জুই* (নতুন সীৰলুত প্ৰকাশিত-অসম্পূৰ্ণ) শীৰ্ষক উপন্যাসেৰে অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰি থৈছে। ইয়াৰ বাহিৰেও গীতি সংকলন, নাটক, শিশুমূলক গ্ৰন্থ, প্ৰৱন্ধমূলক গ্ৰন্থ ,অনুবাদ সাহিত্য ইত্যাদি সাহিত্যৰ বিভিন্ন শাখাত তেওঁ যথেষ্ট অৰিহণা যোগাইছে। আমাৰ আলোচনা পত্ৰত তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত *কপিলীপৰীয়া সাধু* নামৰ উপন্যাসত চিত্ৰায়িত নদীৰ বিভিন্ন ৰূপ সম্বন্ধে আলোকপাত কৰিবলৈ লোৱা হৈছে। বৰুৱাৰ কবি মনৰ সুন্দৰ প্ৰতিচ্ছবি এই উপন্যাসখনত দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। উপন্যাসখনৰ বৰ্ণনা কাব্যিক। ঔপন্যাসিকে নিজেই কৈছে- *সেই কপিলীপাৰৰ সাধু শুনাব খুজিছে--শুকান কলঙৰ পাৰৰ এজন কবিয়ে...কলং কলঙৰ মৰাসোঁততো কপিলীয়ে পানী ঢালে কলং উজাই বয়।*[১] উপন্যাসখনত পৰিস্ফুট ছবিখন বাস্তৱ তথা জীয়া সমাজৰ। সৃষ্টিশীলতাৰ পৰশত কল্পনা আৰু বাস্তৱৰ মধুমিশ্ৰ আস্বাদনৰ ফলত বৰুৱাৰ কাপৰ পৰা নিগৰিছে ৰূপাইৰ কাহিনী, কপিলীবাসীৰ কাহিনী। উপন্যাসখনৰ পাতনিত লেখকে কৈছে- *সাধুটো মনেগঢ়া। কোনোবাই ইয়াত চিনাকি আধাচিনাকি কাৰোবাক লগ পালে সম্ভৱতঃ তাৰ দোষে মোক নোচোৱে; কাৰণ কপিলীপৰীয়া সাধু এটা গল্পতকৈ বেছি সঁচা নহয় । আনহাতে মই আত্মপ্ৰসাদো লাভ কৰিম প্ৰচুৰ ; কিয়নো সাধুটোৰ ৰূপাই আৰু তাৰ সংস্পৰ্শত অহা আন আন মানুহবোৰ মোৰ মনৰ চকুত তেজমঙহৰ মানুহেই। এখন জীৱনীত যিমানাখিনি প্ৰয়োজন তাতকৈ বেছি কল্পনাৰ ৰহণো, মোৰ বিশ্বাস মই চৰোৱা নাই।*

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

আমাৰ আলোচনা পত্ৰখনৰ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য -

-অসমীয়া নদীভিত্তিক উপন্যাসৰ বিষয়ে কিছু আভাস দাঙি ধৰা।

-উপন্যাসত প্ৰতিফলিত কপিলী নদীৰ বিভিন্ন দিশ সম্বন্ধে পাঠকক অৱগত কৰোৱা।

-উপন্যাসত বিন্যস্ত প্ৰকৃতি আৰু মানুহৰ সম্পৰ্কৰ বিষয়ে দাঙি ধৰা।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

আলোচনা পত্ৰখন অধ্যয়ন কৰোঁতে বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে ।

উপন্যাসৰ কাহিনী ঃ

কপিলীপৰীয়া সাধু নামৰ উপন্যাসখনি নগাঁৱৰ কপিলীপৰীয়া মানুহৰ জীৱনক কেন্দ্ৰ কৰি ৰচিত এখন নাতিদীৰ্ঘ উপন্যাস। *মানৱীয় প্ৰেম, সংগ্ৰাম আৰু সংঘাত, ভাগ্য আৰু বাস্তৱতাই জীৱনলৈ নমাই অনা পৰিণতি বৰ্ণিত হৈছে এই উপন্যাসখনত।*[২] উপন্যাসখনৰ নায়ক হৈছে ৰজা পোৱালী মনচিঙৰ নাতি তথা ধীৰচিঙৰ তোলনীয় পুতেক ৰূপাই। বেথাৰাম পণ্ডিতৰ 'পাতচেলা স্কুল'ত পঢ়িবলৈ যোৱা ৰূপাইৰ মনটো পঢ়াতকৈ বেছি কপিলীৰ প্ৰতিহে ঢাল খাই থাকে। নগৰৰ উকিলে পঢ়া-শুনাত সহায় কৰিব বুলি তাক ঘৰলৈ লৈ গৈ কাম কৰা মানুহ হিচাপেহে বেছিকৈ খটোৱা হ'ল। তাতে থাকোঁতে স্বৰাজৰ আন্দোলনত যোগ দি ৰূপায়ে জেল খাটে আৰু সেই সূত্ৰে বহুত মানুহৰ সম্পৰ্কলৈ অহাৰ সি সুযোগ পায়। জেলত থাকোঁতেও ৰূপাই কপিলীক এবাৰৰ বাবে হ'লেও দেখা পাবৰ বাবে উদ্ৰাউল হৈ পৰে। জেলৰপৰা ওলাই ৰূপায়ে আপোন গাঁওখনলৈ আহি বন্ধ হৈ যোৱা স্কুলখন পুনর্নিৰ্মাণত লাগে, খেতি-বাতি, পঢ়াশালি পতা আদি কামত মন দিলে। এবাৰ গাঁৱত হোৱা প্ৰবল বানপানীৰ সময়চোৱাত সি গাঁৱলৈ সাহায্য দিবৰ বাবে অহা চৰকাৰী বিষয়াৰ লগত লগ লাগি গাঁৱৰ মানুহক উদ্ধাৰৰ কাম কৰাৰ সময়তে সি

সোণপাহীক উদ্ধাৰ কৰে। তাৰপিছতে নিজৰ দেউতাক ধীৰচিঙৰ মৃত্যুৰ সময়ত তাৰ নিজৰ জন্মৰ আচল ৰহস্যটো তাৰ সন্মুখলৈ আহে আৰু সেই কথাত অত্যন্ত দুখ পাই নিজৰ মাতৃৰূপী কপিলীৰ বুকুত প্ৰাণ বিসৰ্জন দিবলৈ ওলাই যায়; কিন্তু সোণপাহীৰ পৰিয়ালৰ মানুহে তাৰ জীৱনটো ৰক্ষা কৰে। সোণপাহী আৰু ৰূপাইৰ মাজত এক গভীৰ প্ৰেমৰ সম্পৰ্ক গঢ়ি উঠে আৰু গোসাঁই পুখুৰীৰ পাৰত সেই মৰ্মে সিহঁতৰ মাজত হোৱা শাৰীৰিক সম্পৰ্কৰ ফলস্বৰূপে সোণপাহীয়ে ৰূপাইৰ সন্তানক নিজৰ গৰ্ভত ধাৰণ কৰে । কিন্তু সোণপাহীক ৰূপায়ে নিজৰ পত্নী হিচাপে স্বীকৃতি দিবলৈ নোলোৱাত সোণপাহীয়ে কপিলীৰ বুকুত চিৰদিনৰ বাবে হেৰাই যায়। এইয়া সমস্ত কপিলীৰ ইচ্ছা বুলি মানি লৈ দুখত উটি বুৰি নগৈ ৰূপায়ে বসু গোসাঁয়ে বিচাৰি দিয়া ছোৱালীজনী বিয়া কৰাব বুলি মান্তি হয়। ৰূপাইৰ এই সিদ্ধান্ত বসু গোঁসাইৰ বাবে ৰহস্য হৈ থাকিল।

বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

ঔপন্যাসিকে কাব্যময়ী ভাষাৰে বৰ্ণিত প্ৰকৃতিৰ এক সুন্দৰ চিত্ৰৰাজিৰে উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণি কৰিছে।*ক্ৰন্দসী। আকাশৰো নাম। আকাশে কান্দে। খাচিয়া পাহাৰত ৰৰষুণ হয়। বানপানী উপচি পৰে। জয়ন্তীয়া পাহাৰত মনচুন নামে। উমিয়াম জুৰি ঢৌৰ সাপৰ নেগুৰছিঙা বেগ। পাহাৰ ধোৱা পানী,....ঝুম খেতি সাৰুৱা কৰা পানী, কিলিঙৰ বুকুৰেদি ৰিং মাৰি নামি আহে গাঁও ভুই মহতিয়াই।*[৩] উপন্যাসখনত কপিলী মাথোঁ এখন নদী নহয় । উপন্যাসৰ কাহিনীৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈ কপিলী নৈৰ লগত নিবিড় সম্পৰ্ক বিৰাজমান। *আনকি কপিলী যেন ইয়াত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ চৰিত্ৰ- যি চৰিত্ৰ হৈ পৰিছে কাহিনী আৰু নায়ক লগতে আন কেইটামান চৰিত্ৰৰো নিয়ামক।*[৪] কপিলী নৈখনক ৰৰুৱাই এক জীয়া চৰিত্ৰ হিচাপে সঞ্জীৱিত কৰি তুলিছে। কপিলীক অৱলম্বন কৰিয়ে উপন্যাসৰ কাহিনীৰ সোঁত বৈছে। উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত কপিলী নৈখনক আলোচনাৰ সুবিধাৰ্থে তলত দিয়া ধৰণে ভাগ কৰা হৈছে-

১) কপিলী নৈ আৰু মানুহৰ মাজত বন্ধুত্বপূৰ্ণ সম্বন্ধ

২) কপিলী নৈৰ সৈতে জৰিত মানুহৰ আস্থা-বিশ্বাস, ৰীতি-নীতি

৩) জন্মদাত্ৰীৰ ৰূপত কপিলী

৪) কপিলীৰ মানৱ সমাজৰ সৈতে শত্ৰুতা

১) কপিলী আৰু মানুহৰ মাজত বন্ধুত্বপূৰ্ণ সম্পৰ্ক: কপিলী পাৰত বাস কৰা ভু�ৱবন্ধা গাঁওবাসীৰ বাবে কপিলী হিয়াৰ আমঠু। তেওঁলোকৰ জীৱনত আশা-ভৰসাৰ থল কপিলী। কপিলীৰ লগত সিহঁতৰ সম্বন্ধ যুগ-যুগৰ। কপিলীয়ে ধৰি ৰাখিছে নগাঁও বাসীৰ বহু বছৰৰ ইতিহাস। কপিলীৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰিয়েই সেই সমাজে আজীৱন চলাই আহিছে জীৱন সংগ্ৰাম । কপিলীয়ে ভুৱবন্ধাবাসীৰ দিনে নিশাই শৰীৰৰ তেজ পানী কৰা পৰিশ্ৰম দেখিছে , চকুলো দেখিছে। সিহঁতৰ ভোকৰ তীব্ৰতা, পিয়াহৰ আতুৰতা দূ�ৰ কৰে কপিলীয়ে। *এইখনেই কপিলী। নগাঁওৰ চকুলো। বাতৰি কাগজে লিখে। কিন্তু কপিলী পৰীয়া মানুহে জানে.. কপিলী দুখৰ চকুলো.. আনন্দৰ চকুলো। কপিলীয়ে সিহঁতক বানপানীৰে মাৰে। কপিলীৰ পানীয়ে সিহঁতৰ পথাৰত জীপ দিয়ে; কপিলীৰ নিৰ্মল পানীয়েই সিহঁতৰ পিয়াহ গুচায়। কপিলীদিয়েই সিহঁতৰ বেহা বেপাৰ চলে। আজিৰ নহয়, ৰজা দিনৰে পৰা। গোভা, নেলী , ডিমৰুৱাৰ ৰজা গোৱালীবোৰৰ ৰাজ্যবোৰ কপিলী পাৰৰে। আহোম জয়ন্তীয়াৰ বিবাদৰ কেবাখনো যুদ্ধৰ থল কপিলীৰ পাৰ। জয়ন্তীয়াৰ ধেমেলীয়া কটকী কপিলীয়েদি আহি জাগীৰ চকীত পত্ৰ--সন্দেশ দিয়ে। তিনি ৰজা পোৱালীয়ে মাজে মাজে বিদ্ৰোহ কৰে.. ফুল গুৰিৰ হাট বন্ধ কৰে। বাট মাৰে।*[৫]

অসম এখন কৃষিভিত্তিক ৰাজ্য। এই কৃষিভিত্তিক ৰাজ্যত নৈৰ ভূমিকা অনস্বীকাৰ্য। অসমৰ বহুতো গাঁৱলীয়া সমাজে কৃষিৰ বাবে নৈৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। সেই দিশৰ পৰা নৈবোৰ সেই শ্ৰেণীৰ মানুহখিনিৰ বাবে জীৱন জীয়াৰ এক অন্যতম

উৎস। বৰুৱাই কাব্যগন্ধী ভাষাৰে অতি কম কথাতে এই দিশটোক সুন্দৰভাৱে উপস্থাপিত কৰিছে। *কপিলীয়ে কপিলীপৰীয়া মানুহৰ জীৱন। কপিলী জীয়া নৈ... সিহঁতৰ জীৱন আৰু মৃত্যুৰ স'তে এই জীয়া নৈখন মিহলি হৈ থাকে।*[৬]

লেখকে কপিলীৰ লগত কপিলীপৰীয়া মানুহৰ এক আত্মিক সম্পৰ্ক চিত্রিত কৰিছে। এই সম্পৰ্ক প্রতিখন নৈৰ লগত নৈপৰীয়া মানুহখিনিৰ সচৰাচৰ দেখিবলৈ পোৱা যায়। নৈখনৰ জড়তা ভেদ কৰি লেখকে তাত মানুহৰ দৰে প্রাণৰ সঞ্চাৰ কৰিছে। নিজৰ আত্মীয়ৰ দৰে কপিলীয়ে তাৰ মানুহখিনিক খুব মৰম-আদৰ কৰে। মনে-প্রাণে কপিলীয়ে সিহঁতৰ ভাল হোৱাটো কামনা কৰে। *কপিলী জীয়া নৈ। কপিলীয়ে বিচাৰে নদন বদন সংসাৰ। গৃহস্থী ঘৰ। সিহঁতৰ পথাৰত পলস পেলাই সাৱধা কৰি থব-- আকৌ সিহঁতকে কষ্ট দি ভাল পাব।*[৭]

কপিলীপৰীয়া ৰাইজৰ দৈনিক জীৱন-সংগ্রামৰ সাক্ষী হ'ল কপিলী নৈ। কৃষি-কৰ্মৰ বাহিৰেও মাছ মৰা, বেহা-ব্যাপাৰ কৰা, যাতায়াত ইত্যাদি বিভিন্ন ক্ষেত্রৰ বাবে তেওঁলোক কপিলীৰ ওপৰত নির্ভৰশীল। মাছমৰীয়া সমাজৰ এখন চিত্র লেখকে খুব সুন্দৰকৈ চিত্রিত কৰিছে। *সি আঁসৈ মাতিব নোৱাৰে। দেচুৱালী জালোৱাবোৰৰ মাছ মৰা চাবলৈ সঁচায়ে ভাল। সিহঁতৰ দৰে গোটেই ৰাইজে মিলি পৰঙনি জাল, জাকৈ, পল, জুলুকি লৈ সিহঁতে মাছ নামাবে। খেৱালী জালো নামাবে। বাঘজাল জালখনৰ দৰে এখন জালেৰে নৈৰ আধালৈকে বেৰি লাহে লাহে চপাই আনে। বহুত মাছ উঠে....বৰ একোজনী শিলঘৰীয়া।....*[৮]

২) কপিলী নৈৰ সৈতে জড়িত মানুহৰ আস্থা-বিশ্বাস, ৰীতি-নীতি ঃ নৈপৰীয়া ৰাইজৰ নৈৰ লগত এক নিবিড় সম্বন্ধ গঢ় লৈ উঠে। ভাৰতবর্ষত নৈৰ স্থান অতি পৰিত্র। নৈক মানুহে দেৱী ৰূপত বিভিন্ন সময়ত পূজা-অর্চনা কৰি আহিছে। ইয়াৰ ওপৰত অহর্নিশে নির্ভৰ কৰি কৰি কেতিয়া মানুহৰ মনত কি বিশ্বাস শিপাই উঠে মানুহে তাৰ উম্‌ঘামেই নাপায়। কপিলীপৰীয়া ৰাইজো ইয়াৰ ব্যতিক্রম নহয়। কপিলীক লৈ নানা কাহিনী তথা বিশ্বাস তেওঁলোকৰ মাজত শিপাই আছে।

কপিলী একেই আছে। তিনিমূৰীয়া আজো-ককাৰ মুখত শুনা বৰপানী কপিলীৰে লগলগা ঠাইডোখৰৰ পাকটো — তাৰ ওচৰতে সেই গায়ন বায়নৰ ঘূলিটো, এটাইবোৰ একেদৰেই আছে — এতিয়াও বহুৰি দুখন নাও তাত তল যাবই। বেপাৰী নাওবোৰে এতিয়াও তাত তামোল পাণ এটা আগ নবঢ়োৱাকৈ নাও নেমাৰে। তাত হেনো জলকোঁৱৰৰ তলাতল ঘৰ আছে। তাত কমলা কুঁৱৰী জল-কুঁৱৰী হৈ আছে। কমলা কুঁৱৰী আগেয়ে মানুহ আছিল। দেশৰ মংগলৰ কাৰণে জল কোঁৱৰক বৰিলে। মানুহৰ জীয়ৰী, মাজে মাজে হেনো তেওঁ মানুহৰ মুখ চাবলৈ বিয়াকুল হয়। জলকোঁৱৰে তেতিয়া কপিলীৰ পৰা যি পাৰে মানুহ দুনুহ ধৰি লৈ যায়। তেতিয়াহে কমলাকুঁৱৰী শান্ত হয়। তেতিয়াহে কপিলীৰ পাৰৰ শইচবোৰে সেউজীয়াৰ পৰা সোণালী হ'বলৈ পায়।[৯]

কপিলীক কপিলীপৰীয়া ৰাইজে শ্রদ্ধাৰ লগতে ভয়ো কৰে, সমীহ কৰি চলে। কপিলী তেওঁলোকৰ বাবে ভগৱাণ সদৃশ। কপিলীৰো যেন তেওঁলোকৰ ওপৰত অধিকাৰ আছে। *কপিলীপাৰৰ গাঁওবোৰ নুঠে। বহুৰি তল গলেও নুঠে। ৰজা পোৱালী মনচিং এবাৰ উঠি যাব খুজিছিল ক্ষেত্রীৰ পিনে। কপিলীয়ে সেইবাৰ তেওঁৰ হালৰ বলদ হাল লৈ গ'ল। ৰাতি ভকতধূলি বৈৰাগীক কপিলীয়ে সপোন দেখুৱালে— ৰজা পোৱালীৰ ঘৰৰ ল'ৰা যদি কপিলীৰ পাৰলৈ যায় , ময়ো পিছে পিছে যাম। চুলি মেলা, আউলী-বাউলী , চকু দুটা জোৰ দুটাৰৰ দৰে জ্বলিছে — মাতটো ঢেৰেকনিৰ দৰে। এই সপোনৰ কথা শুনি গঁএাই মনচিঙক হাক দিলে। মনচিঙেও ভয় খালে। ৰাইজে কপিলীয়ে নিয়া বলদ হালৰ কাৰণে বৰঙণি তুলি দিলে। ফুলগুৰিৰ হাটৰ পৰা পুতেক ধীৰচিঙৰ লগত গৈ মনচিঙে তিনিদঁতীয়া বলদ এহাল কিনি আনিলেগৈ।*[১০]

নৈপৰীয়া মানুহখিনিৰ নৈৰ সৈতে তেজমঙহৰ সম্পৰ্ক গঢ় লৈ উঠে। ইয়াৰ ওচৰকাষৰীয়া ৰাইজে নৈৰ বুকুত তথা নৈৰ কাষত সিহঁতৰ আঞ্চলিক তথা জাতি-জনজাতিকেন্দ্রিক বিভিন্ন খেল-ধেমালিৰ লগতে উৎসৱ-পার্বনবোৰ উলহ-মালহেৰে পালন কৰে। কপিলীপৰীয়া ৰাইজৰ এনে এক বাস্তৱ ছবি ঔপন্যাসিকে মনোৰম ভাৱে অংকিত কৰিছে। *কপিলীক ভাল পোৱাটো কপিলীপৰীয়া মানুহৰ স্বভাৱেই। আজিৰ নহয়। তাহানিখনৰে পৰা সিহঁতে কপিলীক ভাল পাই আহিছে। ডেকাহঁতে তাত নাও খেলে। বহাগৰ প্রথম দিনা লালুং মানুহৰ বিহু আৰম্ভ হয় — গাভৰুহঁতে নাচে। সিপাৰৰ ডেকাহঁতে জোকায় — গাভৰুহঁতেও ঘূৰি চিঞৰে।...*[১১]

৩) জন্মদাত্রী হিচাপে কপিলী ঃ উপন্যাসখনত কপিলীয়ে কপিলীপৰীয়া ৰাইজৰ বাবে মাতৃৰ ভূমিকা গ্রহণ কৰিছে। উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিৰে পৰা শেষলৈ কপিলীয়ে কপিলীবাসীক মাতৃত্বময়ী স্নেহেৰে আৱৰি ৰাখিছে। এগৰাকী

মাতৃয়ে যেনেকৈ সন্তানৰ লালন-পালন কৰে, সন্তানৰ সুখৰ বাবে যৎপৰোনাস্তি চেষ্টা কৰে ঠিক তেনেদৰেই কপিলীয়েও তেওঁলোকৰ বাবে সেই একেখিনি কামেই কৰিছে। কপিলী কপিলীপৰীয়া মানুহৰ অতি আপোন। কপিলীৰ পাৰৰ জনগণৰ জীৱনত কৰ্মৰ সুৰক্ষা প্ৰদান কৰে কপিলীয়ে । কপিলীয়ে সিহঁতৰ পথাৰত পলস পেলাই অফুৰন্ত সুখৰ আকৰ দিয়ে। আকৌ এগৰাকী মাতৃয়ে যেনেদৰে সন্তানৰ মঙ্গলৰ বাবে তথা সন্তানক ভৱিষ্যত জীৱনৰ বাবে মানসিক ভাৱে শক্তিশালী কৰি তুলিবলৈ সময় অনুসৰি কঠোৰ অনুশাসন কৰে , ঠিক তেনেদৰে কপিলীয়েও যেন সময়ে সময়ে তেওঁলোকক দুখ-কষ্ট দি তেওঁলোকৰ পৰীক্ষা লয়। আৰু এই পৰীক্ষা লৈ কপিলীয়েও যেন মনত অশেষ কষ্ট পায়। মাতৃৰূপী কপিলীৰ এই অনুশাসন কপিলীবাসীয়েও বুজি পায়।..... *কপিলীপৰীয়া মানুহে সুখে দুখে কেতিয়াও কপিলীপাৰৰ পৰা নেযায়।*[১২]

উপন্যাসখনৰ মুখ্য চৰিত্ৰ *ৰূপাইৰ* মাতৃ হিচাপে কপিলীক ঔপন্যাসিকে ইংগিতধৰ্মীতাৰে উপস্থাপন কৰিছে। ৰূপাইৰ মাতৃৰ সকলো দায়িত্ব কপিলীয়ে যেন নিস্বাৰ্থ ভাৱে পালন কৰিছে। উপন্যাসৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈ ৰূপাইৰ জীৱনৰ গতিৰ মোট সলোৱাত কপিলীৰ প্ৰত্যক্ষ ভূমিকা আছে। ঔপন্যাসিকে অতি কৌশলপূৰ্ণ ভাৱে কপিলী আৰু ৰূপাইৰ মাজত মাতৃ-পুত্ৰৰ নিটোল সম্বন্ধ মনপৰশা ৰূপত ফুটাই তুলিছে। লেখকৰ মাতৃ-পুত্ৰৰ মাজৰ এই আৱেগপূৰ্ণ সম্বন্ধ স্থাপন কৰাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰয়োগ কৰা কাব্যময়ী ভাষাই এই সম্বন্ধক জীৱন্ত কৰি তুলিছে। ৰূপাইৰ বাবে কপিলীয়ে সমস্ত। জনা হোৱা বয়সৰে পৰাই সি কপিলীৰ প্ৰেমত মত্ত; বলীয়া। দিনে নিশাই কপিলীক হেঁপাহ পলুৱাই চাই থকাৰ পিছতো ৰাতি সপোনতো কপিলীয়ে তাক দেখা দিয়ে। সন্তানে নিজৰ মাতৃক অভিমান কৰাৰ দৰে ৰূপায়ো কপিলীক মাজে সময়ে খং কৰে। তাক বিচাৰি গৈ ঠাণ্ডা লাগি দদায়েক ঢুকুৱাত তাৰ নিজক জগৰীয়া যেন লাগিল। সেয়ে সি কপিলীক খং কৰিছে।

....তাৰ নিজক জগৰীয়া যেন লাগিল। তাৰ নিজৰ কাৰণেই দদায়েক পানীত নামিছিল। সি কপিলী পাৰলৈ গৈছিল কাৰণেই। কপিলীলৈও তাৰ খং উঠিল। সি কপিলী পাৰলৈ যাবলৈ এৰিলে।....[১৩]

কিন্তু সন্তানৰ মাতৃৰ ওপৰত কৰা অভিমান স্থায়ী নহয়। সন্তানে মাতৃৰ মৰমৰ কোলাত সমস্ত অভিমান পাহৰি যায়। ৰূপায়ো পাহৰে।

পাহৰে — মানুহে পাহৰে। দৈনন্দিন জীৱনৰ গতানুগতিক ধাৰাত এনেধৰণৰ বিশেষ ঘটনাবোৰ মচ খাই যায়। ৰূপায়ে আকৌ কপিলী পাৰত গৰু ৰাখিবলৈ গৈ উভতি আহিবলৈ পাহৰে। ইচকুলৰ পৰা পলাই সৰিয়হ, লা আনিবলৈ যোৱা কামৰূপীয়া কাঁহি বাটিৰ নাওবোৰ চাই থাকে...।[১৪]

আনকি জেলত থকা সময়তো সি কপিলীক এবাৰ চোৱাৰ বাবে হাহাকাৰ কৰিছে। কপিলীক দেখা নোপোৱাৰ দুখত তাৰ হৃদয়ে কান্দি উঠে। আনকি কপিলীক এবাৰ দেখা পোৱাৰ স্বাৰ্থত সি সত্যাগ্ৰহী হৈও মিছা কথা কৈছে। অৱশ্যে পিছত সি সেই কথাটোক লৈ অনুশোচনাত ভুগিছে। মাতৃৰ পৰা বিচ্ছিন্ন পুত্ৰৰ মনৰ কাৰুণ্যক লেখকে সাৱলীল ভাৱে ফুটাই তুলিছে। *ৰেলখনৰ বেগ কমিল। এটা গুমগুমনি শুনা গ'ল। ৰেলখন দলঙত উঠিছে... কপিলীৰ দলং....গাটোৱেদি কিবা এটা বাগৰি যোৱা যেন লাগিল। সি খিৰিকীয়েদি বাহিৰলৈ চালে - এন্ধাৰ! বগা বালিৰ মাজত পানীৰ সোঁতটো চিনি পায়, নীলচীয়া বগা — বুটা তোলা! এইখনেই কপিলী আই — কপিলী আই — জীয়া নৈ! সি মূৰ দোঁৱালে।*[১৫]

লেখকৰ উপস্থাপন শৈলী অতি সুন্দৰ। কপিলীৰ ল'ৰা হিচাপে ৰূপাইক উপস্থাপন কৰিবলৈ লেখকে অতি কম সংলাপৰ দ্বাৰা খুব গভীৰ ভাৱধাৰাক দৃষ্টিগোচৰ কৰাইছে। ১৯৩০ চনৰ প্ৰবল বানপানীৰ সময়ত ওচৰৰ গাঁওখন চাবলৈ চাহাবৰ লগত ৰূপাই যাবলৈ ওলাইছে। তাৰ সতীয়া মাক ৰঙিলীয়ে এই কথাত বাধা দিয়াত ভাঙুৰি ভকতে কৈছে, *আই , কপিলীৰ লৰা কপিলীয়ে চিনি পায়, তুমি ভয়-চয় নকৰিবা।*[১৬]

উপন্যাসখনত ৰূপাইৰ জন্মদাতা পিতৃ-মাতৃৰ কোনো আভাস নাই। কপিলী নৈখনিকে পৰোক্ষভাৱে ৰূপাইৰ জন্ম দাত্ৰী মাতৃ হিচাপে ঔপন্যাসিকে আলোকিত কৰিছে। কপিলীয়ে নিজৰ সোঁতেৰে উটুৱাই আনি নিঃসন্তান ধীৰচিং আৰু ৰঙিলীৰ হাতত ৰূপাইক সন্তান হিচাপে তুলি দিছিল। ৰূপায়ে নিজৰ জন্মৰ লগত জড়িত এই ডাঙৰ সত্যটো গম পাই শোকত ভাঙি পৰিছিল। তাক পালন কৰা পিতৃ-মাতৃতকৈ কপিলীৰ প্ৰতি তাৰ আৱেগ উপচি পৰিছে। কপিলীৰ মৰমত সি বলীয়া হৈ পৰিছে। মাতৃ আৰু পুত্ৰৰ মাজৰ অকৃত্তিম মৰম-স্নেহ লেখকে মননশীল ভাষাৰে ব্যঞ্জিত কৰিছে।

লঘোণীয়া ঘৰ। সোনকালেই আটাইবে টোপনি আহিল। ৰূপায়ে সাৰ পালে।তাক কপিলীয়ে মাতিছে। সি ৰ'ব নোৱাৰা হ'ল! কপিলীয়ে তাক মাতিছে । সি ওলাল! ঘৰৰ পৰা। গাঁৰৰ

পৰা। কপিলী... কপিলীৰ বুকু... কপিলীৰ ল'ৰা সি — সি কপিলীলৈ যাব। কপিলীৰ পাৰে পাৰে সি লৰিবলৈ ধৰিলে। এইটোৱেই উঁই হাফলুটো। সি পানীলৈ জাঁপ মাৰি দিলে... [১৭]

কপিলীৰ বুকুত জাহ যাই সি যেতিয়া আত্মহত্যা কৰিব খুজিছে, তেতিয়া কপিলীয়ে তাক স্বীকাৰ কৰা নাই। এজনী মাতৃয়ে নিজৰ সন্তানৰ সুৰক্ষাৰ বাবে অহোপুৰুষার্থ যিখিনি কষ্ট কৰে, কপিলীয়েও একেই কামকে কৰিছে। ৰূপাইক নিজৰ মৰমৰ আৱেষ্টনীৰ মাজত কপিলীয়ে আঁকোৱালি ৰাখিছে। *সি মৰিব নোৱাৰিলে। সাঁতোৰ জনা মানুহে পানীত পৰি আপোন ঘাতী হ'ব নোৱাৰে। সি নাসাঁতুৰিবলৈ চেষ্টা কৰিলে — অসম্ভৱ! কিয় — কিয় তাক কপিলীয়ে নলয়! কপিলী... ৰঙিলীৰ সন্তান.. তাৰ মাক...*[১৮]

ৰূপাইৰ কপিলীৰ প্রতি হৃদয়ৰ টান অতি গভীৰ। মনে প্রাণে হৃদয়ৰ সর্বোচ্চ উজাৰি সি কপিলীক ভাল পায়। আনকি সোণপাহীতকৈও বেছি তাৰ টান কপিলীলৈহে। সি নিজৰ জীৱনত এনে কোনো ভালপোৱাক স্থান দিব নোৱাৰে যি ভালপোৱাই তাৰ পৰা কপিলীক আঁতৰাই নিব পাৰে। *হঠাৎ তাৰ মনত পৰিল গোসাঁই পুখুৰীত থকা সময়খিনিত তাৰ এবাৰ কপিলীলৈ মনত পৰা নাই। এক মুহূর্তৰ বাবে তাৰ তেজ চলাচল বন্ধ হৈ যোৱা যেন লাগিল। সি কপিলীক পাহৰিলে? সোণপাহীয়ে তাক কপিলীৰ পৰা আঁতৰাই আনিব খুজিছে নেকি?... নাই। এয়া তাইয়েই দেখোন — তায়েই কপিলীৰ কথা সোঁৱৰাই দিছে। তাৰ মাকৰ কথা। তথাপি সি ঠিক কৰিলে গোসাঁই পুখুৰীলৈ সি নাহে। নাহে।* [১৯]

সন্তানে নিজৰ ভৱিষ্যত তথা নিজৰ জীৱনৰ গধূৰ সিদ্ধান্তবোৰ মাক-দেউতাকৰ ওপৰত এৰি দিয়াৰ দৰে, ৰূপাই তাৰ জীৱনৰ সকলো ডাঙৰ সিদ্ধান্ত কপিলীৰ ওপৰত ন্যস্ত কৰি থৈছে। বিশেষকৈ তাৰ বৈবাহিক জীৱন কপিলীৰ ওপৰত নির্ভৰশীল। আৰু সেই মতেই সোণপাহীৰ আত্মহত্যাৰ পিছতো সি শোকত বিয়াকুল নহৈ সেয়া তাৰ মাক কপিলীৰ ইচ্ছা বুলি স্বীকাৰ কৰি সি তাৰ আগন্তুক জীৱনৰ বাটত খোজ দিছে।

উপন্যাসখনত চিত্রিত কৰা ৰূপাই আৰু কপিলীৰ মাজৰ সম্পর্ক অতি মধুৰ তথা আৱেগপূর্ণ।

৪) কপিলীৰ মানৰ সমাজৰ সৈতে শত্রুতা ঃ কপিলী কপিলীবাসীৰ হিয়াৰ আমঠু। লগতে কপিলী সিহঁতৰ বাবে জীৱনদায়িনী এক শক্তি। কিন্তু সেই কপিলীয়ে কেতিয়াবা সিহঁতৰ জীৱনৰ বাবে কাল ধুমুহাও কঢ়িয়াই আনে। কপিলীয়ে যেনেকৈ সিহঁতক দিয়ে অফুৰন্ত মৰম,ঠিক তেনেকৈ কপিলীয়ে সিহঁতৰ জীৱনলৈ লৈ আহে বিষাদৰ প্রবল ঢৌ। কপিলীৰ শান্ত আৰু প্রবল - এই দুয়োটা ৰূপৰ চকুৰে নিৰীক্ষণ কৰাৰ সুযোগ পাইছে কপিলীবাসীয়ে। উপন্যাসখনত কপিলীয়ে কপিলীপৰীয়া বাসীৰ ওপৰত কৰা প্রচণ্ড ক্ষোভৰ দৃষ্টান্ত দাঙি ধৰিছে লেখকে এইদৰে -

কপিলীৰ পাৰ বাগৰে। পথাৰ বুৰ চোতালত ঢোৰা সাপে কিলবিলায়। মজিয়াত উজাই অহা কাৰৈ মাছৰ লানি। ৰাতিপুৱা চোতালত একাঁঠু — আবেলিকৈ এবুকু — বেৰৰ মাটি পানীত চপৰাচপৰে খহে। গধূলি ৰুৱা মাৰলীৰ বেতৰ গাঁথি পানী পাই মুকলি হয়। বানপানী । পশ্চিম নগাঁও এখন অথৈ সমুদ্র হয় মাজে মাজে ওলাই থাকে কেইখনমান গাঁও। গৰু গাঁও উটি যায়। মানুহ গৈ আশ্রয় লয় সেই দ্বীপবোৰত । মানুহ মৰে। পানীত — মাটিত — বেমাৰত — অনাহৰত। [২০]

১৯৩০ চনত অসমত হোৱা ভয়ংকৰ বানপানীৰ জীৱন্ত বর্ণনা এটা ঔপন্যাসিকে কপিলীৰ মাধ্যমেৰে উপন্যাসখনত বিন্যস্ত কৰিছে। অসমৰ দৰে বানপানী সমস্যাৰে জর্জৰিত ৰাজ্য এখনত এনে ঘটনাৰ প্রতি বছৰে মানুহে সন্মুখীন হ'বলগীয়া হয়।

ৰূপাইহঁতৰ গাঁৱৰ কিছুমান মানুহ কেনি গ'ল উৱাদিহ নাই। সিহঁত কেইঘৰমান গোৱালপৰীয়াৰ এৰাবাৰীখনতে উঠি আছে। কেনিও যাব নোৱাৰে। সোঁত,পথাৰতো সোঁত। সিহঁতে ভাগ্যক দোষে। প্রার্থনা কৰে কপিলীক - ঈশ্বৰক! কপিলীক গালি পাৰে এদিল দুদিনকৈ সাদিন । সাতোটা বেলি পানীৰ মাজৰ পৰা ওলাই পানীৰ মাজতে মাৰ গ'ল। পানী , চাৰিওফালে পানী! কপিলীৰ পাৰৰ গাঁও এখনৰ চিন পোৱা যায় বাঁহ গছৰ আগকিটাত । লগতে অনা চাউলপাত চাৰি দিনতে শেষ হ'ল। কচু ঢেঁকীয়া পোৰে-- সেয়েই। জুইকুৰা জ্বলাই ৰাখিবলগীয়া হৈছে. দিয়াচলাইটোত কাঠী নাই। প্রয়োজন,সংকেত, আশা , জীৱনলৈ আশা! ৰাতি হ'লে কোনোবাই পোহৰ দেখিব--দিনত দেখিব ধোঁৱা ! কোনোবা আহিব, কোনোবাই সিহঁতক নিশ্চিত মৰণৰ বুকুৰ পৰা টানি লৈ যাব। [২১]

ইয়াৰ বাহিৰেও ৰূপাই আৰু সোণপাহীৰ মিলনৰ মাজতো কপিলীয়ে যেন শত্রুতা শালিছে। কপিলীয়ে সিহঁতৰ মাজত মিলন কৰাইছিল। কিন্তু শেষ মুহূর্তত কপিলীয়ে সিহঁত দুটাৰ বিচ্ছেদৰো কাৰণ হয়। সেই কথাৰ আভাস যেন সিহঁতে

আগতেই পাইছিল। সোণপাহীয়ে ৰূপাইক কৈছে- *কপিলীয়ে এদিন আমাক চিনাকি কৰিছে ...আকৌ কপিলীয়ে এদিন আমাক আঁতৰাই লৈ যাব।*[২২] সোণপাহীৰ সেই কথাষাৰ সত্য হৈ ৰ'ল।

সামৰণি ঃ অসমীয়া ভাষাত ৰচিত নদীকেন্দ্রিক উপন্যাসবোৰৰ ভিতৰত নৰকান্ত বৰুৱাৰ দ্বাৰা ৰচিত *কপিলীপৰীয়া সাধু* এখন অনুপম উপন্যাস। উপন্যাসখন যদিও চুটি বা ইয়াৰ কাহিনী বিন্যাসত বিশেষ জটিলতা নাই; কিন্তু কাব্যময়ী ভাষাৰে বিন্যস্ত নৈপৰীয়া কাহিনীটোৱে প্রতিজন পাঠকৰ হৃদয়কে স্পর্শ কৰি যাব পাৰে। নৈপৰীয়া সমাজখনৰ জৰিয়তে তথা মুখ্য চৰিত্র ৰূপাইৰ জৰিয়তে অসমীয়া সমাজ-সংস্কৃতিৰ বহুতো দিশ লেখকে বাস্তৱসম্মত ৰূপত অংকিত কৰিছে। উপন্যাসত প্রতিফলিত প্রকৃতি আৰু মানৱৰ অবিচ্ছেদ্য সম্পর্কৰ ছবিখন অতি মননশীল। মানুহৰ জীৱনৰ বিভিন্ন ঘাত-প্রতিঘাতক লেখকে নদীৰ প্রবাহমান সোঁতৰ লগত তুলনা কৰিছে। মানুহৰ জীৱন যেনেকৈ নানা আঘাতত জুৰুলা হৈও গতি কৰি থাকে,নদীয়েও যেন বিভিন্ন দাঁতিত খুন্দা খালেও নিৰৱচ্ছিন্নভাৱে অহৰহ গতি কৰি থাকে। *কপিলীপৰীয়া সাধুই* শিশুৰ পৰা বৃদ্ধ সকলোকে আমোদ দিব পাৰিছে। অসমীয়া সাহিত্যত ইসদায় এখন সুখপাঠ্য উপন্যাস হিচাপে সমাদৃত হৈ ৰ'ব। ❑

প্রসংগ টোকাঃ

১. ঠাকুৰ, নগেন (সম্পা); এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস, প্রফুল্ল চন্দ্র বৰুৱাৰ প্রবন্ধ নৰকান্ত বৰুৱাৰ উপন্যাস, পৃষ্ঠা ৪৫৭,
২. সদ্যোক্ত, পৃষ্ঠা ৪৫৭
৩. বৰুৱা,নৰকান্ত, কপিলীপৰীয়া সাধু, পৃষ্ঠা ১
৪. ঠাকুৰ, নগেন(সম্পা); এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস, পৃষ্ঠা ৪৬০
৫. বৰুৱা, নৰকান্ত ; কপিলীপৰীয়া সাধু , পৃষ্ঠা ২
৬. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ২
৭. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৩
৮. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৫
৯. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ২-৩
১০. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৩
১১. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৬
১২. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৪
১৩. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ১৩
১৪. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ১৩
১৫. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ২৮
১৬. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৪২
১৭. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৪৯-৫০
১৮. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৫০
১৯. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৫৫
২০. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ১
২১. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৪০-৪১
২২. সদ্যোক্ত,পৃষ্ঠা ৬০

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

ঠাকুৰ, ড° নগেন (সম্পা)। এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস। দ্বিতীয় প্রকাশ। গুৱাহাটী: জ্যোতি প্রকাশন, ২০১২। মুদ্রিত।
নাথ, ড° প্রফুল্ল কুমাৰ, উপন্যাস আৰু তুলনামূলক ভাৰতায় উপন্যাস। প্রথম প্রকাশ। জ্যোতি প্রকাশ, ২০১০। মুদ্রিত।
বৰুৱা, নৰকান্ত। কপিলীপৰীয়া সাধু। ষষ্ঠ প্রকাশ। গুৱাহাটী: লয়ার্ছ বুক ষ্টল, ২০০৬। মুদ্রিত।
ভৰালী, শৈলেন। অসমীয়া উপন্যাসৰ গতি প্রকৃতি। তৃতীয় মুদ্রন। সাহিত্য অকাডেমী দিল্লী, ২০১৭ মুদ্রিত।
শর্মা, ড° গোবিন্দ প্রসাদ। অসমীয়া উপন্যাসৰ ইতিহাস। প্রথম প্রকাশ। গুৱাহাটী: জ্যোতি প্রকাশ, ২০১৪। মুদ্রিত।
শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ। অসমীয়া উপন্যাসৰ গতিধাৰা। দ্বিতীয় প্রকাশ। গুৱাহাটী: সৌমাৰ প্রকাশ, ২০০১। মুদ্রিত।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ‘ফেলানী’ উপন্যাস ঃ এক বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়ন

জয় জ্যোতি ডেকা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়,গুৱাহাটী, পাণবজাৰ
৭০৮৬১০৯০০৫
dekajoyjyoti2@gmail.com

ড° দীপাঞ্জলি দাস গোস্বামী
সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-০১
৭৫৭৭৯৮৮৬১০
dipanjali.goswami@ottonuniversity.ac.in

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

বিষয়সাৰ হ’ল তুলনামূলক সাহিত্য অধ্যয়নৰ এক পদ্ধতি । ইংৰাজীত ইয়াক ‘Them’ বুলি কোৱা হয়। তুলনামূলক অধ্যয়নে যিহেতু সূক্ষ্ম বিশ্লেষণক অগ্রাধিকাৰ প্রদান কৰে, সেইগতিকে ‘থিম’ বা ‘বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়নত বিষয়সাৰক সূক্ষ্মাতিসূক্ষ্ম বিন্দুলৈ ভাঙি মূল্যায়ন কৰাৰ প্রয়াস কৰা হয়। যিকোনো সাহিত্য পাঠ (Text) ৰ মূলবিন্দু উদ্‌ঘাটন কৰাৰ পৰাই একোটা থিমৰ সৃষ্টি হয়। প্রত্যেক সাহিত্যিকে একোটা থিমক কেন্দ্র কৰিয়েই নিজৰ সাহিত্য কর্ম আগবঢ়ায়। কিন্তু তাৎপর্যপূর্ণ যে থিম বা বিষয়সাৰ বিষয়ক অধ্যয়ন পাশ্চাত্যত ব্যাপকৰূপত হ’লেও অসমত এতিয়াও চালুকীয়া অৱস্থাতে আছে। সেই উদ্দেশ্য আগত ৰাখিয়েই ‘অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ফেলানী উপন্যাস ঃ এক বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়ন’ শীর্ষক প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখন প্রস্তুত কৰা হৈছে। য’ত উপন্যাসখনৰ অর্থাৎ সাহিত্য পাঠ (Text) টোৰ কেন্দ্রীয় বিন্দু উদ্‌ঘাটন কৰি, ক্রম অনুযায়ী সেই বিন্দুৱে কেনেকৈ বিকাশ লাভ কৰি এটা থিম বা বিষয়সাৰ হৈ উঠে আৰু সেই বিষয়সাৰে কেনেকৈ বিকশিত হৈ এটা বিষয়বস্তু হৈ পৰে সেই সম্পর্কে বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰা হ’ব। লগতে আনুষংগিকভাৱে আহি পৰা অন্যান্য বিষয়সমূহবোৰ বিশ্লেষণৰ যোগেদি উপন্যাসখনৰ মূল সূত্রৰ অনুসন্ধান কৰিবলৈ যত্ন কৰা হ’ব।

বীজশব্দ ঃ উপন্যাস, ফেলানী, থিম, বিষয়সাৰ, ৰূপাঙ্গ, তুলনামূলক অধ্যয়ন।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

তুলনামূলক সাহিত্যৰ প্রসংগত বিষয়সাৰ বা থিম (Theme) শব্দটোৰ বুৎপত্তিগত অর্থই একোটা সাহিত্য পাঠৰ ঘাই সুৰক আঙুলিয়ায়। অর্থাৎ বিষয়সাৰে সাহিত্য পাঠত প্রত্যক্ষ বা পৰোক্ষভাৱে প্রকাশিত যিকোনো বিষয়বস্তু (Subject Matter) ৰ কেন্দ্রীয় ভাবক বুজায়। লগতে ই সমানন্তৰালকৈ সাহিত্য সৃষ্টিৰ পটভূমিৰ প্রতিও লক্ষ্য ৰাখে। একোটা সাহিত্য পাঠৰ মূল বিন্দু উদ্‌ঘাটনৰ পৰা স্তৰ অনুযায়ী সেই বিন্দুৰ বিকাশ আৰু পৰিশেষত একোটা বিষয়বস্তুৰ ৰূপ পোৱালৈ - এই সমগ্র প্রক্রিয়াটোৰ মূল্যায়ন কর্মক ‘বিষয়সাৰতত্ত্ব’ (Thematology) বুলি অভিহিত কৰা হয়। তুলনামূলক সাহিত্যৰ প্রেক্ষাপটত পোনপ্রথমে Thematology শব্দটো প্রয়োগ কৰিছিল হেৰি লেভিন নামৰ তুলনাবিশাৰদ গৰাকীয়ে। আন এগৰাকী প্রসিদ্ধ তুলনাবিশাৰদ হেনৰী ৰেমাকে (১৯১৬-২০০৯) তুলনামূলক সাহিত্য অধ্যয়নৰ পটভূমিত বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়নকে প্রধানকৈ গুৰুত্ব প্রদান কৰিছে। তুলনামূলক ভাৰতীয় সাহিত্যৰ প্রসিদ্ধ তাত্ত্বিক অমিয়দেৱে স্পষ্টভাৱে

মতপোষণ কৰিছে যে- 'সাহিত্যৰ অধ্যয়ন মূলতঃ বস্তু-সচেতন অধ্যয়ন' আৰু তুলনামূলক সাহিত্য প্ৰধানতঃ এই বস্তু-সচেতন অধ্যয়নৰ সৈতেই জড়িত হৈ ৰৈছে' (বৰা, ৪৭)। সাহিত্যৰ বিষয়সাৰ বা বস্তুতাত্ত্বিক অধ্যয়নে এই বাবেই নিৰ্দিষ্ট Pattern ত সাহিত্যৰ বিষয় বা Content ৰ অধ্যয়নৰ ধাৰণাক নুবুজায়, ববং বিভিন্ন ব্যক্তিয়ে ভিন্ন স্থান বা সময়ত ভিন্ন ধৰণে কি দৰে সাহিত্য পাঠ এটাৰ প্ৰতীক বা পৰিস্থিতিসমূহৰ নিজ সাংস্কৃতিক বিশেষত্বসমূহ ব্যাখ্যা কৰিছে, তাৰেই নিৰ্দেশ কৰে।তুলনামূলক সাহিত্যৰ অধ্যয়নত ব্যৱহৃত হোৱা কেইবাটাও পদ্ধতিৰ ভিতৰত 'বিষয়সাৰতত্ত্ব' অধ্যয়ন পদ্ধতি প্ৰধান। এই পদ্ধতি যে কেৱল তুলনামূলক সাহিত্যৰ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰতেই সীমাবদ্ধ, এনে নহয়। সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিধাসমূহৰ সূক্ষ্ম বিশ্লেষণৰ ক্ষেত্ৰত 'থিম' সম্পৰ্কীয় আলোচনা, বৰ্তমান গৱেষণাৰ এক অধিক চৰ্চিত বিষয়। কিয়নো একোটা বিধাগত সাহিত্য পাঠৰ বিষয় সম্পৰ্কীয় বিচাৰ-বিশ্লেষণৰ বাবে কৰা বিষয়সাৰগত অধ্যয়নে পাঠটোৰ অন্তৰ্নিহিত অৰ্থ তথা লেখকে দিব খোজা বাৰ্তাৰ (পাঠটোৰ জৰিয়তে) অনুসন্ধান কৰে। যাৰ যোগেদি সাহিত্য পাঠটোৰ নিৰ্মাণৰ অন্তৰালত থকা কেতবোৰ দিশ জানিব পৰা যায়। বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়নে একোটা সাহিত্যপাঠৰ বিষয়বস্তু নিৰ্মাণৰ প্ৰসংগত এজন লেখকে কোনকেইটা স্তৰ অতিক্ৰম কৰিব লগা হয়, সেই সম্পৰ্কে এনেদৰে দেখুৱাইছে -

ভাব (Sense)
↓
চিহ্ন বা চানেকি (Motif)
↓
সঞ্চাৰণী ভাবস্ৰোত (Recurrent Image)
↓
আৰ্হিৰূপ (Example Image)
↓
ভাবৰেখা (Topograph)
↓
বিষয়সাৰ (Theme)
↓
বিষয়বস্তু (Subject Matter)

(বুজৰবৰুৱা, ৬৩)

এই ৰেখাচিত্ৰৰ অৰ্থোদ্ধাৰ কৰিলে ক'ব পৰা যায় 'ভাব (Sense)ৰ পৰা 'বিষয়বস্তু' এক সুদীৰ্ঘ পৰিক্ৰমা অতিক্ৰম কৰিহে সাহিত্য পাঠ একোটা লেখকে নিৰ্মাণ কৰে। পাঠ একোটা সৃষ্টিৰ প্ৰথম পৰ্যায়টোৱে হ'ল ভাব। অৰ্থাৎ বিষয়সাৰৰ উৎস বিন্দুত থকা এই বিমূৰ্ত ভাব প্ৰথম অৱস্থাত ৰচকৰ মগজুত অৱধাৰণ হিচাপে থাকে। সেই বিমূৰ্তভাৱে আত্মপ্ৰকাশ কৰিবলৈ দ্বিতীয় স্তৰত একোটা চানেকি বা ৰূপাঙ্গ (Motif)ৰ সন্ধান কৰে। অৱশেষত সন্ধান কৰি পোৱা চানেকিত সেই ভাবে আশ্ৰয় লয়। চানেকিত আশ্ৰিত ভাবে ৰচয়িতাৰ মনত প্ৰবলভাৱে সঞ্চাৰিত হৈ এক সঞ্চাৰণী ভাবস্ৰোত (Recurrent Image)ৰ সৃষ্টি কৰে। এই সঞ্চাৰণী ভাবস্ৰোতে কল্পনাৰ সংযোগত এক অস্পষ্ট আৰ্হিৰূপ (àßx-ample Image) নিৰ্মাণ কৰে। এই আৰ্হিৰূপে ৰং-ৰূপ-ৰেখাৰ মাধ্যমত আকৌ একোটা ভাবৰেখা (Topograph) সৃষ্টি কৰে। এই ভাবৰেখাই ৰচকৰ অভিজ্ঞতা আৰু কল্পনাক সাকাৰ অভিব্যক্তি লাভ কৰাই সাহিত্য পাঠটিৰ একোটা 'বিষয়সাৰ' গঠনৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰে। একোটা সাহিত্য পাঠত এক বা একাধিক 'বিষয়সাৰ' থাকিব পাৰে। কেতিয়াবা আকৌ একোটা বিষয়সাৰেই একাধিক সাহিত্য পাঠত থাকে। সৰ্বাধিক তাৎপৰ্যপূৰ্ণ ধাৰণা (Significant idea)ৰ ৰূপত দাঙি ধৰা মুখ্য 'বিষয়সাৰ'টোক ৰচকে নিৰ্মাণ কৰা পাঠটোত দোহাৰি থাকে। এনে দোহাৰি থকা কাৰ্যই 'বিষয়সাৰ'ক দুই ধৰণেৰে বুজি উঠাৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰে—

ক) বিষয় সম্পৰ্কীয় বোধ (Ethematic concept)
খ) বিষয় সম্পৰ্কীয় বিবৃতি (Thematic Statement)

পাঠৰ পঠন, পঠনত পোৱা প্ৰসংগসমূহৰ শৃংখলাবদ্ধ ৰূপ আৰু সেই শৃংখলাবদ্ধৰূপে উদ্ধাৰ কৰা 'তাৎপৰ্যপূৰ্ণ ধাৰণা'ক প্ৰণালীবদ্ধ (coding) কৰা— এই তিনিটা পৰ্যায়ৰ মাজেৰে সম্পাদিত হোৱা 'বিষয়সাৰ' এক কথাত ক'বলৈ গ'লে একোটা পাঠত ব্যাপ্ত হৈ থকা এটি ধাৰণাহে। যি ধাৰণা চৰিত্ৰ, সংলাপ, ঘটনাক্ৰম এইসকলোৰে মাজত পুনৰাবৃত্ত হৈ সামগ্ৰিকভাৱে এক বিষয়বস্তু গঠনৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰে। বিষয়সাৰৰ লগত সদায় একোটা ৰূপাঙ্গ (Motif) জড়িত হৈ থাকে। মূল 'থিম' একোটাৰ গৰ্ভঅংশৰ চিহ্নস্বৰূপে সাহিত্যকৰ্মত ব্যৱহৃত হোৱা ৰূপাঙ্গ হৈছে এক প্ৰকাৰ প্ৰভাৱশালী ধাৰণা। যি তিনিধৰণৰ হ'ব পাৰে -

ক) চৰিত্ৰ
খ) আকস্মিকভাৱে উদয় হোৱা ভাবমূৰ্তি বা আৰ্হি আৰু
গ) মৌখিক কথনৰ নমুনা

(বুজৰবৰুৱা, ৬৩)

এই ৰূপাঙ্গৰ অনুসন্ধানৰ লগতে একোটা সাহিত্য পাঠ (Text) ৰ গঠনত ব্যৱহৃত বিভিন্ন কাৰক বা উপাদানসমূহৰ বিষয়ে এই বিষয়সাৰে অধ্যয়ন কৰে। লগতে ই 'পৰিদৃশ্যমান পাঠগত ব্যাকৰণৰ অৱলম্বনত বস্তুতত্ত্বৰ ব্যাখ্যা আগবঢ়োৱাৰ প্ৰয়াস কৰে' (বৰা, ৪৭) প্ৰদত্ত গৱেষণা পত্ৰখনৰ যোগেদি অৰুপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ফেলানী উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰৰ মূল সূত্ৰ অনুসন্ধানৰ লগতে বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰা অন্যান্য কাৰক তথা ইয়াক (বিষয়সাৰ) পৰিপুষ্ট কৰি তোলা ৰূপাঙ্গসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.১ অধ্যয়নৰ প্ৰাসংগিকতা ঃ

গভীৰ অন্তদৃষ্টিৰে সমাজ পৰ্যবেক্ষণ আৰু সাহিত্যত সেই সমাজৰ বাস্তৱ প্ৰতিচ্ছবি দাঙি ধৰা সাহিত্যিকসকলৰ ভিতৰত অৰুপা পটঙ্গীয়া কলিতা অন্যতম। মৃগনাভি (১৯৮৭) উপন্যাসৰ যোগেদি ঔপন্যাসিক জীৱনৰ পাতনি মেলা কলিতাৰ ফেলানী (২০০৩)উপন্যাসখনে , অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ জগতখনত এক বিশেষ স্থান দখল কৰি আছে। বিভিন্নজনে সাহিত্যৰ বিভিন্ন তত্ত্বৰ তাত্ত্বিক দিশেৰে তথা ভাষিক দৃষ্টিভংগীৰে উপন্যাসখনৰ বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰিছে যদিও বিষয়সাৰতাত্ত্বিক দৃষ্টিকোণেৰে কৰা অধ্যয়ন অদ্যাৱধি পৰিলক্ষিত হোৱা নাই। সেয়ে বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ যথেষ্ট প্ৰাসংগিকতা দেখা যায়।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

'অৰুপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ফেলানী উপন্যাস ঃ এক বিষয়সাৰতাত্ত্বিক অধ্যয়ন' শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনৰ মূখ্য উদ্দেশ্য হ'ল -

ক) ফেলানী উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰগত অধ্যয়ন কৰা।

খ) উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰকেন্দ্ৰিক গঠনগত দিশত দৃষ্টি নিক্ষেপ কৰা।

গ) বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰা মূল বিন্দু বা ৰূপাঙ্গৰ লগতে প্ৰাসংগিক ৰূপাঙ্গ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু সমল সংগ্ৰহৰ উৎস ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে।

গৱেষণা কৰ্মত মুখ্য আৰু গৌণ দুয়ো প্ৰকাৰৰ সমল ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। মুখ্য উৎসকেন্দ্ৰিক সমল হ'ল জ্যোতি প্ৰকাশনৰ দ্বাৰা ২০২২ চনত প্ৰকাশিত অৰুপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ফেলানী উপন্যাসৰ ষষ্ঠ সংস্কৰণ। আনহাতে গৌণ সমল হিচাপে বিষয়ৰ লগত জড়িত বিভিন্ন প্ৰাসংগিক গ্ৰন্থ, আলোচনী আৰু গৱেষণা পত্ৰিকাৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

আলোচ্য বিষয়ৰ পৰিসৰৰ ভিতৰত ফেলানী উপন্যাসৰ বিষয়সাৰগত অধ্যয়নকে আৱদ্ধ কৰা হৈছে যদিও প্ৰয়োজন সাপেক্ষে চৰিত্ৰৰ মনস্তাত্ত্বিক দিশ , নাৰীৰ পৰম্পৰাবাদী চিন্তা চেতনা এই সকলোবোৰক আলোচনাৰ আওতালৈ অনা হৈছে। লগতে বিষয়সাৰে আত্মপ্ৰকাশৰ বাট লওঁতে যিবোৰ ৰূপাঙ্গই সহায় কৰিছে, তাৰো আলোচনা অধ্যয়নৰ পৰিসৰে নিজৰ সীমাৰ ভিতৰত সামৰি লৈছে।

১.০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

১.০.১ বিষয়সাৰৰ মূলসূত্ৰ অনুসন্ধান ঃ

'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ কেন্দ্ৰীয় ভাবৰ উৎস হ'ল ঔপন্যাসিকে বাস্তৱ জগতত পলিঅ' হোৱা ছোৱালীজনীক দেখাৰ পিছত মনত সৃষ্টি হোৱা এক ভাবাৱেগ। জন্মৰ পিছত কুঁৱাত পেলাই দিয়া সেই 'পেলনীয়া'ৰ পৰা তাইৰ নাম ৰখা হয় 'ফেলানী'। বাস্তৱত মৰিবৰ বাবে পেলাই দিয়া পেলনীয়াৰ পৰা সৃষ্টি হোৱা ফেলানী, সমাজে দূৰলৈ নিক্ষেপ কৰা এক জীয়া মানুহৰ প্ৰতীক। সেই বিমূৰ্ত ভাবক আত্মপ্ৰকাশৰ বাবে ঔপন্যাসিকে 'মালতী' বা মণিৰ মাক চানেকি (Motif)টোত আশ্ৰয় লৈছে। (উপন্যাসখনত ফেলানী বুলি অৱগত কৰা হৈছে) এই ভাবকেন্দ্ৰিক চানেকিটোৰ কাৰ্যকলাপে ৰচয়িতাৰ মনত বাৰে বাৰে দোলা দি এক সঞ্চাৰণী ভাবস্ৰোতৰ সৃষ্টি কৰিছে। এই ভাবস্ৰোতক ঔপন্যাসিকে কল্পনা আৰু অভিজ্ঞতাৰ সংমিশ্ৰণত লালন-পালন কৰি তাৰ লগত আনুষংগিক কেইবাটাও ঘটনা-পৰিঘটনা সংযোগ কৰি এটা শৃংখলাৱদ্ধ ভাবৰেখা (Topograph)ৰ সৃষ্টি কৰিছে। ঔপন্যাসিকে সেই ভাবৰেখাক আৰ্হিৰূপৰ লগত সংযোগ ঘটোৱাৰ পৰিণতিত এটা বিষয়সাৰ আপোনা-আপুনি স্পষ্ট হ'বলৈ ধৰে। এই বিষয়সাৰক পৰিপক্ক কৰি তুলিবলৈ প্ৰাসংগিক বিভিন্ন ঘটনা-পৰিঘটনা, চৰিত্ৰৰ সমাৱেশ, চৰিত্ৰৰ জীৱন আধাৰিত সীমাহীন দ্বন্দ্ব— এই সকলোবোৰ উপকৰণে সহায় কৰিছে। শেষত এই উপকৰণসমূহে 'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ এক নিটোল বিষয়বস্তু গঢ় লৈ উঠাৰ ক্ষেত্ৰতো সহায়ৰ হাত আগবঢ়াইছে। ফেলানী উপন্যাসখনত স্পষ্ট হৈ পৰা বিষয়সাৰটো হ'ল— 'অভিশপ্ত সময়ৰ পৃষ্ঠপটত প্ৰান্তীয় মানুহৰ যন্ত্ৰণাক্লিষ্ট জীৱন'।

২.০ বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰা ৰূপাঙ্গ

'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰা ৰূপাঙ্গসমূহক এনেদৰে ভাগ কৰি আলোচনা কৰিব পৰা যায়—

ক) মূল ৰূপাঙ্গ

খ) প্ৰাসংগিক ৰূপাঙ্গ

২.০.১ মূল ৰূপাঙ্গ

'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ কেন্দ্ৰীয় ধাৰণা বা থিমটোক বুজি উঠাৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰিছে উপন্যাসখনৰ কেন্দ্ৰত থকা মূল বিন্দুস্বৰূপ ফেলানী চৰিত্ৰটোৱে। যাক উপন্যাসখনত 'মণিৰ মা' বুলিহে সম্বোধন কৰা হৈছে। উপন্যাসখনত চৰিত্ৰটোৰ অংশগ্ৰহণ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈ সক্ৰিয় ৰূপত দেখিবলৈ পোৱা যায়। এই সক্ৰিয়তাক ভিত্তি কৰিয়ে ফেলানী চৰিত্ৰটোক মূল ৰূপাঙ্গ হিচাপে নিৰ্ণয় কৰা হ'ল। বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰা এই মূল চৰিত্ৰ প্ৰধান 'ফেলানী' ৰূপাঙ্গটোৰ মাজেৰে প্ৰস্ফুটিত হৈ উঠা দিশসমূহক তলত অংকিত ৰেখাচিত্ৰৰ সহায়ত দেখুৱাব পৰা যায়—

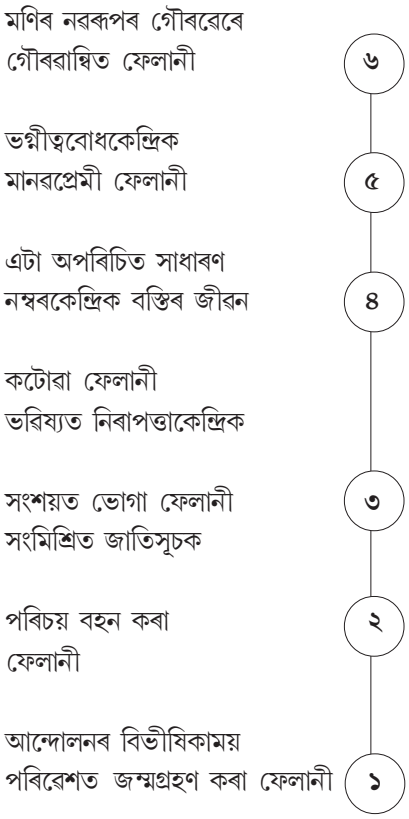

এই ৰেখাচিত্ৰৰ অৰ্থোদ্ধাৰ কৰিলে পোৱা যায়— ফেলানী ৰূপাঙ্গটো উপন্যাসখনৰ মুখ্য ৰূপকো। চৰিত্ৰৰ সমান্তৰালকৈ এই ফেলানীয়ে কেইবাটাও বাৰ্তা পাঠক সমাজক প্ৰেৰণ কৰিছে। এই 'ফেলানী' মুখ্য ৰূপাঙ্গটোৰ মাজত কেইবাটাও গৌণ প্ৰতীকধৰ্মী ৰূপাঙ্গ নিহিত হৈ আছে। সেইকেইটা হ'ল—

ক) আইতাক ৰত্নমালাৰ কৰ্দৈ মণিধাৰ

খ) ককাদেউতাক হাতী মাউত কিনাৰামৰ মাকে বোৱা দখনাখন

গ) ফেলানীয়ে পৰিধান কৰি থকা মাকৰ সোণৰ কাজ কৰা শাঁখাকেইপাত।

এই আটাইকেইটা গৌণ ৰূপাঙ্গই সামগ্ৰিকভাৱে এক হৈ 'ফেলানী' চৰিত্ৰ প্ৰধান চানেকিটোৰ ক্ষেত্ৰত জাতিগত সংমিশ্ৰণতাৰ পৰিচয় প্ৰদান কৰিলেও প্ৰত্যেকটো গৌণ ৰূপাঙ্গৰে কিন্তু একোটা নিজা অৰ্থক্ষেত্ৰ আছে। সেই সম্পৰ্কে প্ৰতীক প্ৰধান ৰূপাঙ্গত আলোচনা কৰা হ'ব।

২.০.২ প্ৰাসংগিক ৰূপাঙ্গ

মূল ৰূপাঙ্গক কেন্দ্ৰ কৰি সৃষ্টি হোৱা কেইবাটাও প্ৰাসংগিক ৰূপাঙ্গই 'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰাত সহায় কৰিছে। এই প্ৰাসংগিক ৰূপাঙ্গসমূহক তলত উল্লেখ কৰা অনুসৰি ভাগ কৰি আলোচনা কৰিব পৰা যায়—

ক) চৰিত্ৰ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ

খ) প্ৰতীক প্ৰধান ৰূপাঙ্গ

গ) বাক্যাংশ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ

চৰিত্ৰ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ

'ফেলানী' উপন্যাসখনত 'কালী বুঢ়ী' চৰিত্ৰটো, বিষয়বস্তুৰ বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত এক প্ৰতীকী অৰ্থ বহন কৰি একাধিকবাৰ উপস্থিত হৈছে। ৰূপাঙ্গৰ আটাইকেইটা বৈশিষ্ট্য এই কালী বুঢ়ীৰ মাজত দেখিবলৈ পোৱা হেতুকে এই কালী বুঢ়ীক 'চৰিত্ৰ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ' হিচাপে নিশ্চিত কৰিব পৰা যায়। উপন্যাসখনত পুৰুষশাসিত সমাজত নাৰী জীৱনৰ দুৰ্দশা আৰু 'কালী বুঢ়ী' পুনৰাবৃত্তিমূলক ৰূপাঙ্গৰ মাজত এক বিষয়ভিত্তিক সংযোগৰ সৃষ্টি হৈছে। এনে চানেকিৰ জৰিয়তে প্ৰতিষ্ঠা হোৱা চাৰিত্ৰিক অনুৰণনে চৰিত্ৰ আৰু চৰিত্ৰকেন্দ্ৰিক অভিজ্ঞতাৰ প্ৰতি পাঠকৰ নিয়োজিততা (engagement) আৰু সহানুভূতি বৃদ্ধি কৰে।

'ফেলানী' ৰূপাঙ্গটোকে প্ৰমুখ্য কৰি বিষয়ৰ প্ৰসংগত উল্লিখিত আন কেইবাটাও নাৰী-পুৰুষ চৰিত্ৰই বিষয়সাৰ

পৰিপক্ক কৰি তোলাত ভূমিকা অৰ্জন কৰিছে যদিও সেইসমূহ চৰিত্ৰৰ মাজৰ পৰা স্পষ্টকৈ এটা 'চৰিত্ৰ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ'ক নিৰ্বাচন কৰিব পৰা নাযায়। কাৰণ—

ক) ৰূপাঙ্গৰ এটা প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হ'ল বিষয়বস্তুত ইয়াৰ পুনৰাবৃত্তি। চৰিত্ৰসমূহ উপন্যাসখনৰ মাজত বিষয়ৰ দাবী অনুসৰি বা পৰিস্থিতিৰ তাগিদাত পৰি পুনৰাবৃত্ত হ'লেও উপন্যাসখনৰ মূল ভাবাৰ্থ বা তাৎপৰ্যক শক্তিশালী কৰি তোলাৰ ক্ষেত্ৰত সেই পুনৰাবৃত্তিয়ে কোনোধৰণৰ সহায়ৰ হাত আগবঢ়োৱা নাই। সেয়ে উপন্যাসখনত বিষয়ৰ প্ৰসংগত উল্লিখিত বিভিন্ন নাৰী-পুৰুষৰ চৰিত্ৰক 'ৰূপাঙ্গ' হিচাপে চিহ্নিত কৰিব পৰা নাযায়। (ফেলানী, কালী বুঢ়ী নাৰী চৰিত্ৰৰ বাহিৰে)

খ) উপন্যাসখনত বিষয়ৰ প্ৰসংগত উল্লিখিত অন্যান্য চৰিত্ৰই কোনোধৰণৰ প্ৰতীকী তাৎপৰ্য বহন কৰা নাই, যিয়ে গভীৰ অৰ্থ বা বিষয়ভিত্তিক উপাদানক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিব পাৰে।

বাক্যাংশ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ

একোটা সাহিত্য পাঠত কেতিয়াবা বাক্যাংশ এটাও ৰূপাঙ্গ হ'ব পাৰে, যদিহে সেই বাক্যাংশটোৱে ৰূপাঙ্গৰ সকলোধৰণৰ বিশেষত্ব ধাৰণ কৰে। ফেলানী উপন্যাসখনত থকা বিভিন্ন বাক্যাংশৰ ভিতৰত ৰূপাঙ্গৰ মৰ্যাদা লাভ কৰা বাক্যাংশকেইটা হ'ল—

ক) মূল নাই... চকু নাই... মলি বাবাক জুই...

খ) মোৰ ল'ৰা এটা থকা হ'লে...

গ) মূৰৰ ওপৰত মানুহ এজন আছে।

'মূৰৰ ওপৰত মানুহ এজন আছে' এই বাক্যাংশৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈ সৃষ্টি হোৱা একে ভাবাশ্ৰিত আন কেইবাটাও গৌণ বাক্যাংশৰ উপস্থিতি উপন্যাসখনত দেখিবলৈ পোৱা যায়। সেইকেইটা হ'ল—

১) মূৰৰ ওপৰত চালি এখন আছে, বেমাৰে ধৰিলেও মূৰৰ ওপৰত মানুহ এটা আছে। (পৃ.১২৩)

২) মূৰৰ ওপৰত লাওৰ আগ বঢ়াদি বঢ়া ল'ৰা এটা আছে। (পৃ.১২৩)

৩) মোৰ মাথাৰ ওপৰত কামানি কৰা মৰদ আছে। (পৃ.১৭১)

৪) বুঢ়া হ'লেও মূৰৰ ওপৰত মানুহটো আছে। (পৃ. ১৭৬)

'মূল নাই... চকু নাই... মলি বাবাক জুই...' এই বাক্যাংশটোৰ বক্তা হ'ল ৰঘু বেঙা। জ্বলাই দিয়া গাঁৱৰ ধ্বংসস্তূপকেন্দ্ৰিক দৃশ্য তথা অভিজ্ঞতাৰ প্ৰত্যক্ষদৰ্শী আছিল এই ৰঘু বেঙা। গাঁও পহৰা দি থকা লম্বোদৰ, সুভাষ মাষ্টৰক দুৰ্বৃত্তই কিদৰে জুই লগাই হত্যা কৰিছিল, ৰঘুৱে দেখিছে। দেখিছে দিদা, দাদুৰ লগতে শিৰাণী, শিৰাণীৰ দেউতাকহঁত মূৰ নথকা, চকু নথকা মানুহ কিজনৰ হাতত কেনেদৰে নৃশংসতাৰ বলি হ'ব লগা হৈছিল। কেনেদৰে জুই লগাই দিছিল সমগ্ৰ গাঁৱত। ৰঘুৰ মুখেৰে ফেলানীয়ে শুনা এই কথাখিনিৰ বৰ্ণনা পৰৱৰ্তী সময়ছোৱাত তাইৰ (ফেলানী) মানসপটত ক্ৰিয়া কৰি থাকিব ধৰিলে। আন্দোলনকেন্দ্ৰিক যিকোনো অস্বাভাৱিক পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হ'লেই ফেলানীৰ ৰঘু বেঙাৰ এই বাক্যাংশটো বা তাৰ সাৰমৰ্মলৈ মনত পৰে। এই বাক্যাংশটোৰ অৰ্থ অৱশেষত ফেলানীৰ মানসপটত এনেভাৱে স্থায়িত্ব লাভ কৰিলে যে, তাইৰ বাবে আন্দোলন মানেই হৈ পৰিল মানুহৰ মৃত্যু। সেই মৃত্যুৰ বাবে দায়ী এই মূৰ নথকা, চকু নথকা ক'লা ক'লা কাপোৰ মুখত বান্ধি অহা মানুহবোৰ। উপন্যাসখনৰ ৩৭,৩৮,৭০,৮২,৮৯ নং পৃষ্ঠাত এই বাক্যাংশটোৰ পৰ্যাবৃত্তই এক প্ৰতীকী তাৎপৰ্য বহন কৰিছে, সেয়া হ'ল— জংগী আচৰণ প্ৰদৰ্শনকাৰী দুৰ্বৃত্তৰ দল। গতিকে ক'ব পৰা যায় প্ৰতীক, পুনৰাবৃত্তৰ সংযোগত মূল বিষয়বস্তুক বুজি উঠাৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰা ই এটা বাক্যাংশ প্ৰধান ৰূপাঙ্গ।

'মোৰ ল'ৰা এটা থকা হ'লে' এই বাক্যাংশটোৰ বক্তা হ'ল— ৰত্নাৰ দেউতাক। পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত সকলো নাৰীয়েই বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত কম-বেছি পৰিমাণে প্ৰান্তীয়। সেই নাৰীসকলৰ ভিতৰত যিসকল 'বাঁজী' আৰু পুত্ৰ সন্তান জন্ম দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত অক্ষম, তেওঁলোক অধিক প্ৰান্তীয় হয়। পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজখনে পুৰুষৰ হাততহে উত্তৰপুৰুষৰ ভৱিষ্যৎ নিৰাপত্তা দেখা পায়। সেই গতিকে সমাজখনে সন্তান পুংলিংগ হোৱাটো বিচাৰে। সামাজিক লিংগ বৈষম্যৰ এই কথাটোৱে উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰকো সক্ৰিয় কৰি তোলাত সহায় কৰিছে। উপন্যাসখনত উল্লেখ থকা অনুসৰি ৰত্নাৰ মাক তিনিগৰাকী ছোৱালী সন্তানৰ মাতৃ। এইটোৱে যেন ৰত্নাৰ মাকৰ জীৱনৰ ডাঙৰ মানসিক যন্ত্ৰণা। এই মানসিক যন্ত্ৰণা ৰত্নাৰ মাকৰ স্বতঃস্ফূৰ্ত নহয়। পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ দ্বাৰা আৰোপিতহে। ৰত্নাৰ দেউতাকে এই বিষয়টোক লৈ নিজ পত্নীক নানান অকথ্য নিৰ্যাতন কৰে। কথাই প্ৰতি 'মোৰ ল'ৰা এটা থকা হ'লে' বাক্যাংশটোৰ ব্যৱহাৰ কৰে। ল'ৰা এটা থকাটো যেন পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ এক সামাজিক চিহ্ন। যি চিহ্নক লৈ সমাজখনে গৰ্ব কৰিব পাৰে।

উপন্যাসখনৰ বিবিধ প্ৰসংগত ৰত্নাৰ দেউতাকে ৮৭, ৯৩, ১১৫, ১১৯, ২২৬ নং পৃষ্ঠাত এই বাক্যাংশটোৰ পৌনঃপৌণ্য কৰিছে। বাক্যাংশটোৰ প্ৰয়োগ উপন্যাসখনৰ সীমিত পৰিসৰৰ মাজত আৱদ্ধ হৈ থাকিলেও তাৰ মূল বীজটো কিন্তু উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈ সক্ৰিয় হৈ আছে। বীজটো হ'ল লিংগ সৰ্বস্ব এখন সমাজ। বীজটোৱে ৰূপকৰ ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰি কেইবাটাও দিশ নিৰ্দেশ কৰিছে। পুৰুষ আশ্ৰিত এই দিশকেইটা তলত উল্লেখ কৰা হ'ল—

ক) সকলো সমস্যাৰ সমাধানৰ মূল চালিকা শক্তি হ'ল পুৰুষ।

খ) ভৱিষ্যৎ নিৰাপত্তাৰ এক চিহ্নস্বৰূপ হ'ল পুৰুষ।

গ) নাৰীৰ যৌন চৰিতাৰ্থ পূৰণৰ এক মাধ্যম হ'ল পুৰুষ।

ঘ) যিকোনো পৰিস্থিতিত চৰম সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰা ব্যক্তিগৰাকীয়ে হ'ল পুৰুষ। (পুৰুষে লোৱা সিদ্ধান্ত সঠিক সিদ্ধান্ত বুলি ভবা কথাটো সমাজ নিৰ্মিত)।

ঙ) নাৰীকেন্দ্ৰিক ঈৰ্ষাৰ মূল আধাৰ হ'ল পুৰুষ।

চ) নাৰীকেন্দ্ৰিক গৰ্ব, অহংকাৰৰ মূল আধাৰ হ'ল পুৰুষ (পৰম্পৰাগত সমাজ ব্যৱস্থাত)।

এই আটাইকেইটা পুৰুষপ্ৰধান দিশ উপন্যাসখনৰ প্ৰতিটো পৃষ্ঠাত বিদ্যমান। আটাইকেইটা দিশেই যেন একত্ৰিত হৈ এই 'মোৰ ল'ৰা এজন থকা হ'লে' বাক্যাংশটোত মিলিত হৈছে। প্ৰভুত্ব স্বৰূপ ল'ৰা এজনৰ প্ৰসংগ প্ৰত্যক্ষ বা পৰোক্ষভাৱে উপন্যাসখনত বাৰে বাৰে উত্থাপিত হৈ মূল বিষয়সাৰক পৰিপক্ক কৰি তুলি উপন্যাসখনৰ কথাবস্তুৰ বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰিছে।

ৰূপাঙ্গৰ মৰ্যাদা লাভ কৰা তৃতীয় বাক্যাংশটো হ'ল 'মূৰৰ ওপৰত মানুহ এজন আছে'। দ্বিতীয় বাক্যাংশটোৰ পৰিবৰ্দ্ধিত ৰূপেই হৈছে এই তৃতীয় বাক্যাংশটো। পুৰুষপ্ৰধান সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীক সদায় এক সম্পত্তি বুলি গণ্য কৰা হয়। সম্পত্তিস্বৰূপ নাৰীক পুৰুষে নিজ ইচ্ছানুসৰি ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰে, নিজৰ আয়ত্তত আনিব পাৰে, বিক্ৰী কৰিব পাৰে, সংৰক্ষণ কৰিব পাৰে আৰু ব্যৱহাৰৰ অন্তত অৰ্থাৎ নিজা স্বাৰ্থ সিদ্ধিৰ শেষত আৱৰ্জনাৰ দৰে দলিয়াই দিব পাৰে। একে পুৰুষপ্ৰধান সমাজতে কিন্তু নাৰীৰ মনোদৃষ্টিভংগী পুৰুষতকৈ পৃথক। এগৰাকী নাৰীৰ বাবে পুৰুষজন শাৰীৰিকভাৱে অসুস্থই হওক, নিজ পত্নীক কেৱল ব্যৱহাৰিক চাহিদা পূৰণৰ মাধ্যম হিচাপেই গণ্য কৰক বা তেওঁৰ চাৰিত্ৰিক স্খলনজনিত কোনো গুপুত কথা জানিলেও সেই সকলোবোৰ সম্পূৰ্ণৰূপে নস্যাৎ কৰি কেৱল নাৰী ধৰ্ম পালনত নাৰীগৰাকী সদা ব্যস্ত থাকে। নাৰীয়ে পুৰুষৰ প্ৰতি প্ৰদৰ্শন কৰা এনে দৃষ্টিভংগী সম্পূৰ্ণৰূপে সমাজকেন্দ্ৰিক। পুৰুষপ্ৰধান সমাজে নাৰীসকলৰ মনঃস্তত্ত্ব এনেদৰে নিৰ্মাণ কৰি দিয়ে যে পুৰুষ অবিহনে তেওঁলোকৰ জীৱন অচল। যিদৰে উপন্যাসখনত বৰ্ণিত বস্তি (Slam)ৰ সমাজখনে নিৰ্মাণ কৰি দিছে জোনৰ মাক, মিনতি, ৰত্না, মণিৰ মাক (ফেলানী)ৰ দৰে প্ৰান্তীয় নাৰীৰ মানসিকতাক। 'মূৰৰ ওপৰৰ মানুহজন'— এই বাক্যাংশটোত পুংলিংগসূচক মানুহজন শব্দটোৱে স্বামী, পুত্ৰ— যিকোনো এজনক বুজাব পাৰে, তাৰ কোনো সীমাৱদ্ধতা নাই। মাথোঁ তাৰ মূল বীজটো হ'ল পুৰুষ। উপন্যাসখনত জোনৰ মাকে অসুস্থ স্বামীৰ প্ৰসংগ অৱতাৰণা কৰাৰ ক্ষেত্ৰত মিনতিয়ে খঙইভাৰণীক তাইৰ চাৰিত্ৰিক স্খলনৰ দিশটোক পুনৰবাৰ দোহাৰি দিয়াৰ প্ৰসংগত এই বাক্যাংশটো ব্যৱহাৰ কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়।

প্ৰান্তীয় সমাজৰ মহিলা এগৰাকীৰ বাবে এজন 'পুৰুষ' কেতিয়াবা গৌৰৱৰ এক আৰ্হি বনাম প্ৰতীক হৈ পৰে। জোনৰ মাক আৰু মিনতিৰ কথাত সেই গৌৰৱবোধৰ ভাব প্ৰত্যক্ষভাৱে ফুটি নুঠিলেও মণিৰ মাকে ভাবি থকা কথা 'মূৰৰ ওপৰত লাওৰ আগ বঢ়াদি বঢ়া ল'ৰা এটা আছে'ত এই গৌৰৱবোধৰ ভাব সুস্পষ্ট। বাক্যাংশটো হুবহু একে ধৰণেৰে পুনৰপি হোৱাৰ বিপৰীতে কিছু সাল-সলনিৰ ৰূপতহে উপন্যাসখনৰ ৭০, ১১৬, ১২৩, ১৭১ আৰু ১৭৬ নং পৃষ্ঠাৰ কথাবস্তুত বাৰে বাৰে প্ৰৱেশ কৰি কেন্দ্ৰীয় বিষয়ক বুজি উঠাৰ ক্ষেত্ৰত সহায় কৰিছে।

প্ৰতীক প্ৰধান ৰূপাঙ্গ

'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ বিষয়ৰ প্ৰসংগত উল্লিখিত কেইবাটাও অনুষংগক প্ৰতীক প্ৰধান ৰূপাঙ্গ হিচাপে নিৰূপণ কৰিব পৰা যায়। সেইকেইটা হ'ল—

ক) কৰ্দৈমণিধাৰা

খ) চেগুণ পাতৰ দৰে ধপলা হাত।

উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিতে উল্লিখিত 'কৰ্দৈমণিধাৰ'ৰ প্ৰসংগ মূল পাঠৰ কেইবাটাও স্থানত পুনৰাবৃত্তি হৈছে। এই 'কৰ্দৈমণিধাৰ'ৰ এক ইতিহাস আছে। এই ইতিহাস ফেলানীৰ আইতাক ৰত্নমালাৰ ইতিহাস। মৌজাদাৰ পৰিয়ালৰ কলংক ইতিহাসৰ প্ৰতীকী অৰ্থ বহন কৰা এই কৰ্দৈমণিধাৰৰ স্থান

সদায় লোকচক্ষুৰ আঁৰত। সেইবাবেই হয়তো কিনাৰামৰ ঘৰখনে মণিধাৰ মাটিত পুতি থয়। মাটিত পুতি থোৱাৰ পিছত যশ লাগে। ওজা আনি জৰা-ফুঁকা কৰাৰ পিছত আকৌ সেই মণিধাৰ লোকচক্ষুৰ আঁৰ কৰি সৰিয়হৰ ডুলিত ভৰাই থয়। আন এক দৃষ্টিকোণৰ পৰা বিচাৰ কৰিবলৈ গ'লে দেখা যায় মৌজাদাৰ পৰিয়ালৰ দুর্নামৰ লগত কিনাৰামৰ ঘৰখনৰ কোনো সম্পর্ক নাই। কিনাৰামৰ ঘৰখনে একমাত্ৰ নিজৰ সুৰক্ষাৰ স্বার্থতহে কৰ্দৈমণিধাৰ লোক দৃষ্টিৰ আঁৰ কৰিছে। মৌজাদাৰ পৰিয়ালৰ অপবাদৰ প্রতীকস্বৰূপ এই মণিধাৰৰ উপস্থিতি উপন্যাসখনৰ কেইবা ঠাইতো দেখিবলৈ পোৱা যায়। যাৰ উপস্থিতিয়ে পৰোক্ষভাৱে বিষয়সাৰক বিকাশশীল কৰি তোলাত সহায় কৰিছে।

উপন্যাসখনৰ আদি অংশত মালতীয়ে (ফেলানী) চেগুণ পাতৰ দৰে ধপলা হাতৰ স্পর্শ অনুভৱ কৰাৰ লগতে এই স্পর্শক স্বচক্ষে দেখা পাইছে। ইয়াৰ বিপৰীতে মালতী যেতিয়া মণিৰ মাকলৈ ৰূপান্তৰিত হ'ল, তেতিয়া মাথোঁ এই স্পর্শ অনুভৱহে কৰিছে। 'চেগুণ পাতৰ দৰে ধপলা হাত'ৰ প্রসংগ উপন্যাসখনৰ ৫৭, ১৪১, ১৬৩, ২২১,২৪৬ নং পৃষ্ঠাত অৱতাৰণা হৈছে। যাৰ প্রতীকী অর্থ হ'ল আশ্বাস প্রদান কৰা। প্রথম অৱস্থাত মালতীয়ে যিদৰে নিজ স্বামী লম্বোদৰৰ পৰা এই আশ্বাসৰ হাতখন পাইছিল, লম্বোদৰৰ মৃত্যু হোৱাৰ পিছত সেই আশ্বাসৰ প্রতীকস্বৰূপ হাতখনৰ অভাৱ তাই (মালতী) বাৰুকৈয়ে অনুভৱ কৰে। কিন্তু নিজ পুত্ৰ মণি, নৱৰূপত তাইৰ আগত উপস্থিত হোৱাত তাই যেন লম্বোদৰৰ সেই খহতা হাতখন আকৌ ঘূৰাই পালে। ভৱিষ্যত শংকাৰ বিপৰীতে এক যেন নিৰাপত্তাকেন্দ্রিক আৱেষ্টনিৰ মাজত তাই সোমাই পৰিল। লম্বোদৰৰ মৃত্যুৰ পিছত জীৱনৰ যিকোনো জটিল সন্ধিক্ষণত অনুভৱ কৰা সেই হাতৰ স্পর্শ এতিয়া যেন মণিৰ মাজেৰে নৱৰূপত ফেলানীয়ে অনুভৱ কৰিব পাৰিলে।

৩.০ সিদ্ধান্ত আৰু সামৰণি ঃ

উক্ত আলোচনাৰ পৰা এই সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি যে -

ক) 'ফেলানী' উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু হৈছে প্রান্তীয় মানুহৰ যন্ত্রণাক্লিষ্ট জীৱন। কিন্তু বিষয়সাৰ হ'ল আশীৰ দশকে ছানি ধৰা সময়ৰ প্রান্তীয় মানুহৰ যন্ত্রণাক্লিষ্ট জীৱন।

খ) উপন্যাসখনৰ বিষয়সাৰকেন্দ্রিক গঠগত দিশত লক্ষ্য ক'ৰা গ'ল যে কেন্দ্রীয় ভাবে কি দৰে আত্মপ্রকাশ কৰিবলৈ মূল ৰূপাঙ্গত আশ্রয়লৈছে। এই ৰূপাঙ্গই সঞ্চাৰণী ভাবস্রোতৰ সৃষ্টি কৰি এক শৃংখলাৱদ্ধ ভাবৰেখাৰ গঠন কৰিছে। শেষত এই ভাবৰেখাক আৰ্হিৰূপৰ লগত সংযোগ ঘটোৱাৰ পিছত এক বিষয়সাৰ পোৱা গ'ল। যি বিষয়সাৰে প্রাসংগিক বিভিন্ন ঘটনা-পৰিঘটনা, চৰিত্রৰ সমাৰেশ আদি বিভিন্ন উপকৰণেৰে বিষয়সাৰক পৰিপক্ক কৰি ফেলানী উপন্যাসৰ এক নিটোল বিষয়বস্তু গঢ় লৈ উঠাৰ ক্ষেত্রত সহায় কৰিছে।

গ) বিষয়সাৰক সমৃদ্ধ কৰা মূল ৰূপাঙ্গ হিচাপে চৰিত্র প্রধান ৰূপাঙ্গ 'মণিৰ মা ওৰফে ফেলানী'ক পোৱা গ'ল। আনহাতে প্রাসংগিক ৰূপাঙ্গ হিচাপে পোৱা গ'ল -

১) চৰিত্র প্রধান ৰূপাঙ্গ
২) বাক্যাংশ প্রধান ৰূপাঙ্গ আৰু
৩) প্রতীক প্রধান ৰূপাঙ্গ।❑

অন্ত্যটীকা ঃ

১) বৰা,প্রাণজিৎ। তুলনামূলক সাহিত্য তত্ত্ব আৰু বিচাৰ। গুৱাহাটীঃ পাঞ্চজন্য বুক্‌ছ, ২০১৮
২) বুজৰবৰুৱা,পল্লৱী ডেকা। তুলনামূলক সাহিত্যতত্ত্ব। ডিব্রুগড় ঃ বনলতা, ২০১৩
৩) প্রাগুক্ত
৪) বৰা, প্রাণজিৎ। তুলনামূলক সাহিত্য তত্ত্ব আৰু বিচাৰ। গুৱাহাটীঃ পাঞ্চজন্য বুক্‌ছ, ২০১৮

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

কলিতা,অৰুপা পটঙ্গীয়া। ফেলানী। জ্যোতিপ্রকাশন, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, সপ্তম সংস্কৰণ, ২০২২
ঠাকুৰ, নগেন (সম্পা)। এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস। জ্যোতিপ্রকাশন,পাণবজাৰ ,গুৱাহাটী,দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০২০
দাস,অমল চন্দ্র (সম্পা)। অসমীয়া উপন্যাস পৰিক্রমা, বনলতা,পাণবজাৰ ,গুৱাহাটী, প্রকাশ সংস্কৰণ,২০১২
বৰা,প্রাণজিৎ। তুলনামূলক সাহিত্য তত্ত্ব আৰু বিচাৰ। পাঞ্চজন্য বুক্‌ছ, গুৱাহাটী, ২০১৮
বুজৰবৰুৱা,পল্লৱী ডেকা। তুলনামূলক সাহিত্যতত্ত্ব। বনলতা, ডিব্রুগড়, ২০১৩
শইকীয়া, গীতাশ্রী (সম্পা)। একবিংশ শতকাৰ অসমীয়া উপন্যাস,অসম বুক ট্রাছ ,পাণবজাৰ ,গুৱাহাটী, ২০২০
শর্মা,গোবিন্দ প্রসাদ। নাৰীবাদ আৰু অসমীয়া উপন্যাস। অসম প্রকাশন পৰিষদ,তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০১৬
হিলৈদাৰী,পৰী। পাঠ প্রতিপাঠ নির্মান বিনির্মাণ। পেপিৰাছ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, ২০২২

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

নিম্নবর্গৰ চেতনা তত্ত্বৰ আধাৰত ফেলানী উপন্যাসৰ আলোচনা

মিনাক্ষী বৰুৱা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
৯১০১১৯৭০৩৬
minaksheeboruah.1000@gmail.com

ড° মহেশ্বৰ কলিতা
প্রাধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
৮৪৮৬৮৮১৪৩২
maheswar.kalita@cottonuniversity.ac.in

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যত উপন্যাস আৰু গল্প দুয়ো ক্ষেত্রতে দক্ষতা প্রদর্শন কৰিবলৈ সক্ষম হোৱা সম অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'ফেলানী' (২০০৩) ত প্রান্তীয় অঞ্চলত বসবাস কৰা এজাক ঠেৰুছিগা মানুহৰ জীৱন সংগ্রামৰ কাহিনী বর্ণনা কৰা হৈছে। ফেলানী উপন্যাসৰ পটভূমি হৈছে মঙ্গলদৈ চহৰৰ পৰা ৩০ কিলোমিটাৰ আঁতৰৰ কলাই গাঁৱৰ পৰা কিছু দূৰত্বত অৱস্থিত বস্তি অঞ্চল। উপন্যাসখনত উল্লেখ আছে যে, বিভিন্ন সময়ত হোৱা আন্দোলনত হিংসাৰ বলি হৈ মূল সূঁতিৰ পৰা বিতাড়িত সকলে একেলগে জীৱন সংগ্রামত লিপ্ত হৈছে। প্রান্তীয় অঞ্চলত বাস কৰা ঠেৰুছিগা মানুহখিনিৰ নিজস্ব এডোখৰ ভূমি নাই। ফেলানী, বুলেন, নবীন আদি চৰিত্রৰ দৰে দৰিদ্র মানুহে উপনিৱেশিক আৰু উগ্র জাতীয়তাবাদী সংঘর্ষৰ বলি হ'বলগীয়া হৈছে। উপন্যাসখনৰ কাহিনী অনুসৰি জন্মৰ পাছতে আন্দোলনকাৰীয়ে পানীলৈ দলিয়াই দিয়া ফেলানী সমাজৰ উপকণ্ঠত বাস কৰা এটা উল্লেখযোগ্য চৰিত্র। পৰৱর্তী কালত হোৱা অন্য এক আন্দোলনত ফেলানীয়ে স্বামী লম্বোদৰক হেৰুৱাইছে। আন্দোলনৰ জুইত ফেলানীৰ ঘৰখন জাহ যোৱাৰ পাছত পুত্র মণিক লৈ বস্তিৰ অন্যান্য মহিলাৰ সৈতে মুড়ি বিক্রী কৰি, মূঢ়া বিক্রী কৰি জীৱন কটাইছে। অস্তিত্ব ৰক্ষাৰ সংগ্রামত বুলেনে পাগলী ঘৈণীয়েকজনীক এৰি বড়োলেণ্ড ৰাজ্য গঠনৰ বাবে ভঙুৱাৰ পুতেকৰ লগ লাগিছে। আলফা-ছালফাৰ সংঘাত, আর্মিৰ অত্যাচাৰ আৰু অস্তিত্ব ৰক্ষাৰ স্বার্থত বিভিন্ন দল-সংগঠনে দিয়া এশ ঘণ্টা, দুশ ঘণ্টা, এহেজাৰ ঘণ্টীয়া বন্ধৰ প্রভাৱ বস্তি অঞ্চলৰ লোকৰ ওপৰত পৰিছিল। তাৰোপৰি আন্দোলনকাৰীয়ে ঘৰে ঘৰে পইচা বিচাৰি অহা, দোকানৰ বস্তু লুটি লৈ যোৱা আদি কার্যই প্রভাৱশালী ৰাজনৈতিক দল আৰু নিম্ন শ্রেণীৰ লোকৰ মাজত সামাজিক বৈষম্য আনি দিছিল। উক্ত চৰিত্রসমূহৰ জীৱন সংগ্রামৰ মাজেৰে লেখিকাই সম-সাময়িক সমাজৰ নিম্নশ্রেণীৰ সুখ-দুখ , আশা-আকাংক্ষাৰ চিত্র উপন্যাসখনত সুন্দৰ ৰূপত তুলি ধৰিছে। এই আলোচনাটিত আমি নিম্নবর্গ অথবা নিম্নশ্রেণীৰ চেতনা উপন্যাসখনত কিদৰে প্রকাশ পাইছে তাৰ বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিম। আলোচনাটিত প্রধানত বিশ্লেষণাত্ম পদ্ধতি প্রয়োগ কৰা হ'ব যদিও প্রয়োজনবোধে তুলনামূলক পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হ'ব।

বীজ শব্দাৱলী ঃ নিম্নবর্গ, সামাজিক বৈষম্য, আন্দোলন, বড়োলেণ্ড।

নিম্নবর্গৰ অর্থ ঃ

ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত সাৱালর্টান (Subaltern) শব্দটো জড়িত হৈ আছে। সাধাৰণ অর্থত সাৱালর্টান শব্দটোৰ অর্থ হৈছে— an officer in the British army below the rank of captain. (Soanes 903)। ইংৰাজী ভাষাত Subaltern শব্দটোৱে সামৰিক সংগঠনত কেপ্তেইনৰ তলতীয়া অফিচাৰক বুজাইছিল। ১৯৬০-৭০ দশকত ইউৰোপত এক নতুন তত্ত্বৰ সহায়ত সামাজিক ইতিহাস চর্চাৰ সূত্রপাত হয়। ফ্রান্সৰ এন্যাল পত্রিকা গোষ্ঠীয়ে এই ক্ষেত্ৰত বিশেষ ভূমিকা গ্রহণ কৰে। ১৯৭০ চনৰ পৰাই শব্দটোৱে ভাৰত উপ মহাদেশৰ উপনিৱেশিক জনগোষ্ঠীসমূহক বুজাইছিল। ১৯৮০ চনৰ ভিতৰত দক্ষিণ এছিয়াৰ ইতিহাস ৰচনাত নিম্নবর্গৰ অধ্যয়ন (Subaltern Studies) পদ্ধতিৰ প্রয়োগ কৰা দেখা যায়। উত্তৰ ঔপনিৱেশিক সমালোচনা তত্ত্বত Subaltern শব্দটোৱে সামাজিক, ৰাজনৈতিক আৰু ভৌগোলিকভাৱে সাম্রাজ্যবাদী উপনিৱেশৰ ক্ষমতাৰ স্তৰ আৰু সাম্রাজ্যৰ মহানগৰীয় গৃহভূমিৰ পৰা বাদ পৰা ঔপনিৱেশিক জনসংখ্যাক নির্ধাৰণ আৰু চিনাক্ত কৰে। ভাৰতত এই ধাৰণাটোৰ প্রসাৰত বিশেষ ভূমিকা পালন কৰা সমালোচকসকল হ'ল— ৰণজিৎ গুহ, সুমিত চৰকাৰ, শাহিদ আমিন আৰু গৌতম ভদ্র।

Sublтern শব্দটি ইটালীয় মার্ক্সবাদত বিশ্বাসী আন্তোনিও গ্রামশি (১৮৯১-১৯৩৭) য়ে তেওঁৰ 'কাৰাগাৰৰ নোটত' প্রথমতে উল্লেখ কৰে। আন্তোনিও গ্রামশিয়ে যেতিয়া মুসোলিনিৰ কাৰাগাৰত বন্দী হৈ আছিল, তেতিয়া (১৯২৯-১৯৩৫) ৰ ভিতৰত গ্রন্থখন ৰচনা কৰে।

তৃতীয় বিশ্বৰ দেশবোৰত বিংশ শতিকাৰ শেষৰ দুই দশকত বিশ্বায়নৰ প্রতিফলন হিচাপে উত্তৰ ঔপনিৱেশিকতা, নিম্নবর্গীয় চেতনা, উত্তৰ আধুনিকতাবাদ, সংগঠনবাদ আদি ধাৰণা প্রকট হৈ উঠে। মার্ক্সবাদৰ সৈতেও নিম্নবর্দীয় ধাৰণাটিৰ সম্পর্ক আছে। Notes on Italian History গ্রন্থত গ্রামশিয়ে নিম্নবর্গ শ্রেণীৰ ইতিহাসক এনেদৰে ভাগ কৰিছে— (ক) বৈষয়িক গঠন (খ) প্রভাৱশালী ৰাজনৈতিক গঠনৰ সক্রিয় আৰু নিষ্ক্রিয় সম্মিলন (গ) প্রভাৱশালী গোষ্ঠীৰ জন্ম (ঘ) নিম্নবর্গীয় লোকৰ দাবী আৰু তাৰ কাঠামো (ঙ) পুৰণি পৰি-কাঠামোৰ মাজত নতুন কাঠামো সৃষ্টি।

ৰণজিৎ গুহই Subaltern শব্দটোৰ প্রতিশব্দ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে 'নিম্নবর্গ'। 'সাম্প্রতিকালে ভাৰতবর্ষের সমাজ ও ইতিহাস নিয়ে আলোচনায় ক্ষেত্রে এর বাংলা প্রতিশব্দ করেছেন 'নিম্নবর্গ'।'(ভদ্র ৫) সাম্রাজ্যবাদীৰ উপনিৱেশত নিম্নবর্গৰ লোকসকলক প্রান্তীয় অঞ্চলত বাস কৰা একোটা শোষিত শ্রেণী হিচাপে ধৰা হয়। আমাৰ এই আলোচনাতো বিভিন্ন আন্দোলনত মূল ঠাইৰ পৰা খেদা খোৱা চৰিত্রবোৰে কিদৰে প্রান্তীয় অঞ্চলত কষ্টকৰ জীৱন-নির্বাহ কৰিছে তাৰ বিষয়ে আলোচনা আগবঢ়োৱা হৈছে।

মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

অৰুপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ফেলানী উপন্যাসখনৰ ঘটনাস্থলী হৈছে মঙ্গলদৈ চহৰৰ পৰা ৩০ কিলোমিটাৰ দূৰৈৰ কলাই গাঁৱৰ পৰা কিছু দূৰত্বত অৱস্থিত বস্তি অঞ্চল। উপন্যাসখনত বিভিন্ন আন্দোলনে ছেদেলি-ভেদেলি কৰি থৈ যোৱা এজাক ঠেৰুছিগা মানুহৰ কাহিনী বর্ণনা কৰিছে। বিদেশী খেদা আন্দোলন, পৃথক বড়োলেণ্ড গঠনৰ আন্দোলন আৰু স্বাধীন অসমৰ বাবে আলফা নামৰ সশস্ত্র সংগঠনৰ জন্ম আদি বিভিন্ন ৰাজনৈতিক মেৰপাকত সংখ্যালঘু মানুহৰ যি বিলাই বিপত্তি ,সেইয়া জীৱন্ত ৰূপত বর্ণনা কৰিছে। উপন্যাসখনত এটা সুনির্দিষ্ট কাহিনী পাবলৈ নাই। ফেলানী নামৰ চৰিত্রটোক কেন্দ্র কৰি বিভিন্ন চৰিত্রৰ জীৱন কাহিনী আগবাঢ়িছে। উপন্যাসখনত সকলো চৰিত্রই সমগুৰুত্ব লাভ কৰিছে। বিদেশী খেদা আন্দোলনত ফেলানীৰ ঘৰখন জুইত জাহ যায়। সেই আন্দোলনতে ফেলানীৰ স্বামীৰ মৃত্যু হয়। পুত্র মণিক বুকুত লৈ ফেলানীয়ে নগৰৰ পৰা বহু নিলগৰ ৰিজার্ভত দিন কটায়। পিছত বুলেনহঁতৰ পৰিয়ালৰ ওচৰতে কালী বুঢ়ীৰ ঘৰত ভাড়াতীয়া হিচাপে থাকে। কালী বুঢ়ীৰ থকা ঘৰটো অর্থাৎ বস্তি অঞ্চলটো ৰিজার্ভৰ লগতে লাগি আছে। নিজৰ ঘৰৰ পৰা বিতাড়িত হোৱা ফেলানীৰ জীৱন পৰিক্রমা আৰম্ভ হৈছে বস্তিত বসবাস কৰা ৰত্নাৰ মাক, জোনৰ মাক, মিনতি, জগুৰ ঘৈণীয়েক, নবীন, বুলেন আদি চৰিত্রবোৰৰ সৈতে। এই চৰিত্রবোৰো বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন ঠাইৰ পৰা খেদা খাই বস্তিত বাস কৰিছে।

In postcolonial studies and in critical theory, the term subaltern designates and identifies the colonial populations who are socially, politically and geographycally excluded from the hiearchy of power of an imperial colony and from the metropolitan homeland of an empire.(www.mrriam-webster.com) date 12/11/2023 time-9.30pm

ড০ গোবিন্দ প্রসাদ শর্মাৰ মতে— বস্তিবাসী ডাল দৰিদ্র

লোকৰ অহৰহ জীৱনযুদ্ধৰ কাহিনীয়েই 'ফেলানী' ৰ কাহিনী। কাহিনী বুলি কিন্তু আদি মধ্য অন্তৰ কোনো নায়ক-নায়িকাৰ জীৱনৰ সুকথিত কাহিনী এটি ইয়াত নাই। ঠেৱঁছিগা জীৱনৰ সমাজ বৰ্হিভূত লোকৰ বস্তি এটিৰ লোকখিনিৰ জীৱনৰ ঘানি টানোতে টানোতে সৃষ্টি হৈ থকা টুকুৰা টুকুৰি ঘটনাৰ সমষ্টিয়েই ইয়াৰ বৃত্তান্ত। (শর্মা ১৪৪)। নিম্নবর্গীয় লোকৰ বংশলতিকাৰ বিশেষ পৰিচয় নাথাকে। মৌজাদাৰৰ কন্যা ৰত্নমালাৰ প্রেম হয় বড়ো ল'ৰা কিনাৰাম মাউতৰ লগত। যুতিমালাৰ জন্মৰ পাছতে ৰত্নমালাৰ মৃত্যু হয়। কিনাৰাম মাউতকো গুলিয়াই হত্যা কৰে। বঙালী ল'ৰা ক্ষীতিশ ঘোষে বিয়া কৰাই যুতিমালাক। আন্দোলনৰ মাজত যুতিমালাই ছোৱালী এজনী জন্ম দিয়াৰ পাছত মৃত্যু হয়। কেচুঁৰাটোক আন্দোলনকাৰীয়ে পানীলৈ দলিয়াই দিয়ে। পানীত পেলাই দিয়াৰ বাবে তাইৰ নামটো হ'ল— ফেলানী। 'ফেলানী' শব্দটোৰ অর্থ হৈছে পেলাই দিয়া, অবাঞ্ছিত, অপ্রয়োজনীয়, আৱর্জনা। ফেলানীৰ দৰে মানুহবোৰো যেন তথাকথিত সমাজ ব্যৱস্থাত অপ্রয়োজনীয়, আৱর্জনা স্বৰূপ। (দেৱচৌধুৰী ৫৯)

ৰতন ঘোষৰ ঘৰত ডাঙৰ হোৱা ফেলানীৰ বিয়া হয় লম্বোদৰ কোঁচ নামৰ এজনলৈ। কিন্তু আন্দোলনে তাইৰ জীৱনটো তচ্‌নচ কৰি দিলে। বিদেশী খেদা আন্দোলন, পৃথক বড়োলেণ্ড গঠনৰ আন্দোলন আৰু আলফা ছালফাৰ যুঁজখনত ক্ষমতাৰ লোভত ফেলানীহঁতৰ দৰে মানুহক অত্যাচাৰ চলাবলৈ ধৰিলে। 'কি পিন্ধিব তাই? কি ল'ব তাই।' বৈশ্যই শাখা কিপাত বাচি থাকিবৰ মন থাকিলে খুলিবলৈ কৈছিল। বুলেনে কৈছে বাচি থাকিব মন আছে যদি দখনাখন পিন্ধিব লাগিব। বন্দুক লোৱা ল'ৰাকেইটাই কৈছে বাৰে-বঙলুৱা মানুহৰ লগত থাকিলে বাচি থাকিব নেৱাৰিব? কেনেকৈ বাচি থাকিব তাই?" *(ফেলানী পৃ-১৫৫)*

মুড়ি ভাজি, মূঢ়া বনাই, মছলা বিক্রী কৰি জীৱন কটোৱা বস্তি অঞ্চলৰ মানুহখিনিৰ বাবে ২০০-৩০০ ঘণ্টীয়া বন্ধই জীৱন-যাপনত ব্যাঘাত জন্মায়। তথাপিও এজনে আনজনক সহায় কৰে। জীয়াই থকাৰ যুঁজখনত সকলোৱে সহযোগিতা কৰে। নিম্নবর্গৰ লোকৰ ওপৰত ক্ষমতাশালী লোকে অত্যাচাৰ চলায়। উপন্যাসখনতো ক্ষমতাৰ বাবে আন্দোলনকাৰীয়ে সর্বহাৰাৰ ওপৰত অত্যাচাৰ চলোৱা দেখা যায়। আনকি জয় আই অসম ধ্বনিৰে আলু-পিঁয়াজ, নেমু, মাংস লুটি লৈ যায়। জগুৰ চাহৰ দোকানখনৰো সকলো মুড়ি, লাড়ু দলিয়াই অত্যাচাৰ কৰি গুচি গৈছে। আকৌ সশস্ত্র উগ্রপন্থীৰ দলবোৰে প্রত্যেকৰ পৰা ত্রিছ হাজাৰ টকাকৈ দাবী কৰিছে। দুবেলা দুমুঠি খাবলৈ নোপোৱা মানুহখিনিয়ে হৰি ভঙুৱাৰ পুতেকক খাটনি ধৰাত ত্রিছ হাজাৰৰ পৰা পাঁচ হাজাৰলৈ কমিল। জোনৰ মাকে গমাৰী এডাল বেছিলে। পাঁচশ টকা পালে। মীৰাৰ মাকৰ হাতৰ খাৰু দুপাত আৰু ৰঙালাওখিনি বেচিলে, নবীনে কিতাপ-পত্র লোৱা মালিকৰ পৰা তিনিশ টকা ধাৰলৈ ল'লে। লাতুৰ মাকে তিনিযোৰ পাৰ বেচিলে, কোনোবাই তামোল বেচিলে, হাঁহ-কুকুৰা, ছাগলী, কাঁহী-বাতি বেচিলে। তাৰ পিছতো গোটেই বস্তিখনত পাঁচ হেজাৰ টকাহে গোট খালে। এনেকৈ দলিত মানুহৰ ওপৰত নির্যাতন চলোৱা দৃশ্য উপন্যাসখনত অংকিত হোৱা দেখা যায়।

বুলেনে বড়োলেণ্ড গঠনৰ বাবে ভঙুৱাৰ পুতেকৰ সৈতে অস্ত্র-শস্ত্র নির্মাণৰ প্রশিক্ষণ লৈছে। পৃথক বড়োলেণ্ডৰ দাবীত তিনিশ ঘণ্টীয়া বন্ধৰ আহ্বান কৰিছে। প্রত্যেককে ক্ষমতা লাগে। বুলেনৰ মতে— "দিম, জুই দিম, গোটেইখন পুৰি শেষ কৰিম,

তথাপি নিজৰ ৰাজ্য লৈহে এৰিম। তহঁতৰ চৰকাৰে আমাৰ মানুহ পুলিচ-মিলিটেৰী লগাই কেনেকৈ মাৰিছে চাগৈ।" *(ফেলানী পৃ-১৭৫)*

উপন্যাসখনৰ কাহিনী শেষত ধনাত্মক দিশেৰে পৰিসমাপ্তি ঘটাইছে। হাজাৰ গণ্ডগোল, অশান্তি, আন্দোলনৰ মাজত জীয়াই থাকিলেও নিজৰ অস্তিত্বৰ সংগ্ৰামৰ যুঁজখনত ইজনে আনজনক সহায় কৰি জীয়াই আছে। জুৱলা হোৱা মানুহখিনিয়ে শেষত কাঁহি বন কাটি ঘৰৰ ছাল চোৱাৰ কথা ভাবিছে। বৰষুণে কাঁহি বনখিনি তিয়াই পচাই পেলালেও আকৌ কাঁহি বন কাটিব। জীয়াই থাকিব। নিম্নবৰ্গীয়ৰ বৈশিষ্ট্যই হৈছে বঞ্চনাৰ মাজতো জীয়াই থকা। "নিম্নবর্গের রাজনীতির চরিত্র নির্ধারিত হচ্ছে নিম্নবার্গের নিজস্ব চেতনার রূপরেখা আনুসারে। সেই চেতনা গড়ে বঞ্চনার মধ্যেও নিজের অস্তিত্বটুকু বজায় রাখার সংগ্রামের ভেতর দিয়ে।" (ভদ্র১২)

নিম্নবর্গৰ ইতিহাসত সর্বহাৰা লোকে নিজৰ মুক্তিৰ বাবে আন্দোলন কৰে। নিজৰ অস্তিত্বৰ কথা বস্তিৰ মানুহখিনিয়ে কেতিয়াও ভবা নাই। কার্ফিউ, এশঘণ্টীয়া, দুশঘণ্টীয়া, এহাজাৰ ঘণ্টীয়া বন্ধৰ মাজতো মানুহখিনিয়ে সংগ্ৰাম কৰি জীয়াই আছে। আর্মী, উগ্রপন্থী, আলফা-ছালফাৰ যুঁজবোৰত বস্তিৰ মানুহখিনিৰে বেছি অনিষ্ট হৈছে যদিও সহ্য কৰি জীয়াই আছে। কিন্তু যেতিয়াই মিলিটেৰীয়ে ভুল-শুদ্ধ বিবেচনা নকৰি খৱইভাৰ আৰু ৰত্নাৰ বাপেকক গুলীয়াই চালনীৰ দৰে কৰি থৈ গ'ল, মানুহখিনিৰ সহ্য নহ'ল— "অঁকৰা মানুহজাক জকি আহিল। ধেমালি পাইছে? সিঁহতে যাকে যি কয় তাকে কৰি আহিছে। কাণত ধৰি উঠা-বহা কৰা। কৰিছে। দিনৰ দিনটো বজাৰ কৰি আহি দে বুলিলতে ৰাতিটো পহৰা দিছে, পুৱাই আকৌ চকুৰে-মুখে পানী মাৰি দৌৰ মাৰিছে। লাগ বুলিলে চাইকেল দিছে। মাতি নিছে, ৰাস্তাত শিলগুটি দিছে, কেম্পত বাঁহৰ চকোৱা বৈ দিছে। সুমলা পাগলী সিহঁতৰ কেম্পৰ মুখত বলী দিয়া ছাগলী এজনীৰ দৰে পৰি থাকিল।' (ফেলানী পৃ-২৩৫)। আর্মিয়ে বস্তিৰ পুৰুষকেইজনক ধৰি নিয়াত ফেলানীৰ সৈতে গোটেইকেইজনী মহিলাই কেম্পৰ সম্মুখত প্রতিবাদ কৰিছিল।

নিম্নবর্গীয় সমাজত নাৰীৰ শোষণ আৰু অত্যাচাৰ বেছিকৈ হোৱা দেখা যায়। ফেলানী উপন্যাসখনত আৰম্ভণিৰে পৰা শেষলৈকে নাৰীৰ ভূমিকা উল্লেখযোগ্য। উপন্যাসখনৰ নামটোৰ পৰাই জনা যায় যে এখন নাৰীকেন্দ্রিক উপন্যাস। উপন্যাসখনত পুৰুষ চৰিত্রতকৈ নাৰী চৰিত্রই সৰহ। প্রত্যেকগৰাকী নাৰীৰ দুখ-কষ্ট আৰু হা-হুমুনিয়াবোৰ প্রায় একেধৰণৰ। লেখিকাই গোটেইকেইগৰাকী নাৰীকেই স্বনির্ভৰশীল হিচাপে অংহন কৰিছে। পুৰুষ কেইজনতকৈ মহিলা কেইগৰাকীয়ে ঘৰৰ দায়িত্ব বেছিকৈ লোৱা দেখা যায়। প্রত্যেক গৰাকী নাৰীৰে নিজস্ব পৰিচয় এটা আছিল যদিও সংসাৰ কৰাৰ লগে লগে আত্মপৰিচয় নোহোৱা হৈ অমুকৰ মাক, তমুকৰ ঘৈণীয়েক হিচাপে পৰিচিত হ'বলগীয়া হয়। উদাহৰণস্বৰূপে— উপন্যাসখনৰ মূল চৰিত্র ফেলানীক মণিৰ মাক বুলিয়েই সকলোৱে মাতে। তেনেকৈ জোনৰ মাক, ৰত্নাৰ মাক, জগুৰ ঘৈণীয়েক, খৱইভাৰণী, মীৰাৰ মাক ইত্যাদি। সংসাৰ পতাৰ পাছত প্রত্যেকগৰাকীয়ে নিজস্ব ধৰণে ঘৰখন, ল'ৰা-ছোৱালী আৰু গিৰিয়েকক সুখত ৰখাৰ চেষ্টা কৰিছে। ৰত্নাৰ মাকে মুড়ি ভাজি, মূঢ়া বনাই বজাৰত বিক্রী কৰি ঘৰখন চলাইছে, যদিও প্রত্যেক মুহূর্ততে ল'ৰা সন্তান জন্ম দিব নোৱাৰাৰ বাবে গিৰিয়েকৰ পৰা ককর্থনা শুনিবলগীয়া হৈছে। ডাঙৰ জীয়েকে লোকৰ ঘৰত কাম কৰি দেউতাকক খুৱাইছে যদিও দেউতাকে ল'ৰা এটা থকা হ'লে.. বুলি হুমুনিয়াহ কাঢ়ি থাকে। সেয়ে ৰত্নাৰ মাকে খণ্ডতে কৈছে— অসুখীয়া এই দুর্বল দেহাত থিয় গোৰ সহ্য আৰু নহয়। শব্দবোৰে তাইক খুঁচি আছে, ইমানটো গোৰ মাৰিব পৰা মানুহটোৰ গাত কাম কৰাৰ শক্তি নাই? হাৰামজাদা, মাইকীৰ ওপৰত খাবি আৰু মাইকীকে গোৰ মাৰিবি, চাল্লা কুত্তা। *(ফেলানী পৃ-১১৬)*

ঠিক সেইদৰে জগুৰ ঘৈণীয়েকে ১৮ বছৰে নাৰিকল ৰুকি লাডু বনাই, সন্দেশ বনাই জগুক দিয়ে। জগুৱে কেৱল চাহৰ সৈতে সেইখিনি বিক্রী কৰেগৈ। নাৰিকল ৰুকি ৰুকি জৰায়ু বাহিৰলৈ ওলাই অহা মানুহজনীৰ প্রতি সি সহানুভূতি দেখুৱাৰ পৰিৱর্তে ৰুগীয়া বুলি গালি পাৰে। সি চাহ বিক্রী কৰি অনা পইচাকেইটা বাহিৰে বাহিৰে খৱইভাৰণীৰ ওচৰলৈ গৈ মদ খাই তাচ খেলে, ৰাতিটো স্ফূর্তি কৰি পইচা শেষ কৰি আহে। সেয়ে জগুৰ ঘৈণীয়েকে কৈছে- মই যেতিয়া নাৰিকল ৰুকি পটাত বটি পাছদিনাৰ দোকানৰ বাবে এইটো লৈ সন্দেশ লাডু বনাই থাকোঁ, মোৰ মৰদে ৰেণ্ডীৰ তাত মৌজ কৰে, দিনটোৰ কামানি তাইৰ হাতত দি আহি মোক ঘৰত লাঠি-গোৰ মাৰে, ভাত-ভাতকৈ ছলিক কোবায়। (পৃ-১০২)।

উপন্যাসখনত প্রত্যেকজন পুৰুষেই নাৰীক অত্যাচাৰ কৰা দেখুৱাইছে। জোনৰ বাপেকৰ শ্বাস-প্রশ্বাসৰ বেমাৰ আছে।

ঘৰখন চলাবলগীয়া হয় জোনৰ মাকে। মুড়ি ভাজি মুঢ়া বনাই ঘৰ চলোৱা সুস্থ মানুহজনীক ৰাতি ৰাতি গিৰীয়েকে শাৰীৰিক অত্যাচাৰ চলায়। জোনৰ মাকে গিৰীয়েকে চলোৱা অত্যাচাৰৰ কথা উল্লেখ কৰিছে এনেদৰে -"তাৰ গাত ৰস পম একো নাই, ৰাতিৰ কাম উঠাব নোৱাৰি সি মোক কি কৰে চা। চাৎ কৰে বিজুলী মাৰিছে। বিজুলীৰ পোহৰত তাইৰ চকুত স্পষ্টকৈ ভাহি উঠিল থেতেলা খোৱা ক'লা জামুৰ ছালখনৰ মাজে মাজে ওলাই থকা ৰঙচুৱা মঙহখিনিৰ কিছুমান ঘাঁ। (ফেলানী পৃ-৭২)। মাৰ কিল খালেও জোনৰ মাকে প্ৰতিটো কথাতে কয়- মূৰৰ ওপৰত মৰদ থকা তিৰী। জোনৰ বাপেকে যেতিয়া জোনৰ মাক শুনচোন বুলি মাতে তেতিয়া তাই সকলো অত্যাচাৰৰ কথা পাহৰি যায়।

মিনতিৰ চৰিত্ৰটো বিশ্লেষণ কৰিলে দেখা যায় যে মিনতিয়ে আন্দোলনকাৰীসকলৰ ডাঙৰ নেতা এজনৰ সন্তানক জন্ম দি অকলে ডাঙৰ কৰিছে। বস্তিত তাইৰ সন্তানক জহৰা বুলি ক'লেই তাই জাঙুৰ খাই উঠে। তাৰ সপোন দেখে, এদিন সি তাইক বিয়া কৰাব আৰু সমাজে স্বীকৃতি দিব। সেয়েহে জিত নামৰ বন্দুকধাৰী আন্দোলনকাৰীজনে যেতিয়াই বিচাৰিছে তেতিয়াই তাই ঘৰৰ দুৱাৰ খুলি ৰাতি থাকিবলৈ সুবিধা কৰি দিছে। কোনোবাই তাৰ কথা বেয়াকৈ ক'লেই মিনতি জ্বলি উঠে— তাৰ কথা কিয় আনিছ? সি কি কৰিলে মোক? তহঁতৰ হিংসা, চবৰে হিংসা, তাৰ দৰে মানুহ এটাই তহঁতক চকু তুলিয়ে নাচাব। সি মোক ভাল পাই, তাৰ ছলি মোৰ কোলাত। তহঁতৰ হিংসা। *(ফেলানী পৃ-১৫৮)* মিনতিৰ সপোনৰ মানুহজনেই এদিন ৰত্নাক দেখি এমাহলৈ ৰিজাৰ্ভৰ হাৰিলৈ লৈ গ'ল। যাওঁতে গাড়ীত নিয়া ৰত্নাক গৰ্ভৱতী কৰি খেদি পঠালে।

উপন্যাসখনত প্ৰত্যেকগৰাকী নাৰীয়েই পুৰুষৰ দ্বাৰা নিৰ্যাতিত হৈছে। মীৰাৰ দেউতাক এজন ৰাজমিস্ত্রী। বস্তিত কমল মিস্ত্রী বুলি পৰিচিত। কমল মিস্ত্রীয়ে গুৱাহাটীলৈ গৈ আঁউসী নামৰ মহিলা এগৰাকীৰ লগত থকা হ'ল। মীৰাৰ মাকে ঘৰলৈ মাতি পঠিয়ালেও কমল মিস্ত্রী নাহে। এদিন মীৰাৰ মাক গুৱাহাটীলৈ গৈ মানুহজনৰ কোঠাত ওলালগৈ। কোনো মহিলাৰ বাবে নিজৰ গিৰিয়েকজন আনৰ লগত নৈশ যাপন কৰাতো সহ্য কৰিব পৰা কথা নহয়। চিনাকি মানুহজনৰ বুকুত অচিনাকি এগৰাকী নাৰীক দেখি মীৰাৰ মাক বিচলিত নহ'ল। কেৱল ভনীয়েকলৈহে মনত পৰিল— আন মানুহে কয় গিৰীয়েক ভাল মানুহ, দোষ তাইৰ। নতুন মাইকী লৈ তাইৰ দোষ নাথাকিলে কিয় যাবগৈ? এতিয়া তাইকো মানুহে ক'ব- মাইকীৰ দোষ, নহ'লে ঘৰৰ মাইকী এৰি আন মাইকী কিয় বিচাৰি যাব। মানুহবোৰে আন এটা যোগ দিব, দুইজনী বাই-ভনীৰ একে দোষ, হাতৰ লগত সংসাৰ কৰিব নোৱাৰে। *(ফেলানী পৃ-১৮৭)* গুৱাহাটীৰ পৰা ঘূৰি আহি মীৰাৰ মাকে দুগুণে কষ্ট কৰিবলৈ লাগিল। অনবৰতে লাগি থকা হাঁহিটো নাইকিয়া হ'ল। পুতেকৰ কষ্ট আৰু মাকৰ কষ্টৰে ঘৰৰ ছালত টিনপাত লগালে। দমকল বহুৱালে। মানুহে সুধিলে কয়— মানুহজনে পইচা পঠিয়াইছে। এদিন মীৰাৰ দেউতাক ঘূৰি আহিল। কিন্তু মীৰাৰ মাকে ঘৰত সোমাবলৈ নিদিলে। এই ক্ষেত্ৰত মীৰাৰ মাকৰ চৰিত্ৰটো প্ৰতিবাদী হৈ উঠিছে। মাৰ-পিট খাইয়ো নিজে গঢ়া ঘৰৰ দুৱাৰ খুলি নিদি খেদি পঠিওৱাত চৰিত্ৰটোৰ পৰম্পৰাবাদী ধাৰণাৰ পৰা উত্তৰণ ঘটিছে।

উপন্যাসখনৰ ফেলানী চৰিত্ৰটোক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই কাহিনীটো আগবাঢ়িছে। ফেলানী নায়িকা নহয়, ঘটনা প্ৰবাহত বাধা দিব পৰাৰ ক্ষমতাও তাইৰ নাই। কিন্তু জন্মৰে পৰা বিভিন্ন আন্দোলনকাৰীৰ হাতত নিৰ্যাতিত হোৱা ফেলানী এটা উপকণ্ঠত বাস কৰা, সমাজে পেলাই দিলেও জীয়াই থকা চৰিত্ৰ। জন্মৰ পাছত আন্দোলনকাৰীয়ে পানীলৈ দলিয়াই দিয়া ফেলানীৰ বিয়াৰ পাছতো একে ঘটনাৰে পুৰনাবৃত্তি হৈছে। ৰোচৰ ঘৰৰ বোৱাৰী হ'লেও, বঙালীৰ তেজ, বড়োৰ তেজ থকা ফেলানীৰ ঘৰখন জ্বলাই স্বামী লম্বোদৰক হত্যা কৰিলে। আন্দোলনকাৰীৰ হাতৰ পৰা কলথৰ্ৱৰাৰ মাজত সোমাই ৰক্ষা পৰা ফেলানী প্ৰতিবাদী চৰিত্ৰ নহয়। আন্দোলনত গৰ্ভৰ সন্তান নষ্ট হ'ল, স্বামীৰ মৃত্যু হ'ল, ঘৰ জ্বলিল, তাৰ পাছতো মুঢ়া বিক্ৰী কৰি জীয়াই আছে। পুত্ৰ মণিক ডাঙৰ-দীঘল কৰিছে। বস্তিৰ মানুহক দুখত এষাৰ মাত দিছে। বুলেনৰ পাগলী ঘৈণীয়েকজনীক আনি ভাত-পানী খুৱাই ৰাখিছে। নাৰীৰ সহজাত গুণকেইটা ফেলানীৰ আছে। অৱশ্যে শেষলৈ চৰিত্ৰটোৱে পৰম্পৰাগত চৰিত্ৰৰ পৰা আঁতৰি আহি প্ৰতিবাদ কৰিছে। বস্তিৰ ল'ৰাখিনিক মিলিটেৰীয়ে ধৰি নিয়াৰ পাছত ৰিজাৰ্ভত প্ৰতিবাদ কৰি মণি, জোনকে আদি কৰি সকলো ল'ৰাক উলিয়াই আনিছে। আকৌ সুমলাক চোৱা-চিতা কৰাৰ বাবে পইচা দিয়া বন্দুকধাৰী বুলেনৰ গালৈ পইচাখিনি দলিয়াই দি কৈ উঠিছে— ক'ৰ পৰা ইমান টকা পালি? ক'ত পালি? মানুহ মাৰি অনা টকা দেখুৱাইছ। হাতত থকা শেষ ন'ট কিখনো তাই তাৰ মুখলৈ মাৰি পঠিয়ালে, 'মতা ওলাবলৈ আহিছ, ঘৈণীয়েকৰ গা শুকাল কাৰণে তাইক গছত বান্ধি থৈ যাব, টকা

দি লোকৰ হাতত থৈ যাবলৈ তোৰ বেয়া নালাগিল। তয়ো যা, তোৰ মানুহ মাৰি অনা টকাও লৈ যা।

(ফেলানী পৃ-১৯৯)

সর্বস্ব হেৰুৱাইয়ো জীয়াই থকা মানুহখিনিৰ মাজেৰে এজনী ফেলানী। টকা-পইচাৰ অভাৱ হ'লেও নিজৰ মানুহজনৰ স্মৃতিখিনি লৈয়ে তাই জীয়াই আছে। কোনো পুৰুষক তাই ওচৰ চাপি আহিবলৈ দিয়া নাই। মানৱীয় গুণেৰে চৰিত্রটো বিৰাজমান। কোনো পৰিস্থিতিক নিয়ন্ত্রণ কৰি নায়িকা হ'ব পৰা নাই যদিও নিজৰ বিবেকেৰে যুক্তিহীন কথাত প্রত্যুত্তৰ দিবও তাই পাৰে— মোৰ নিজৰ পোছাক হ'ল গা ঢাকিব পৰা কাপোৰ এখন। মোক সুকীয়া কাপোৰ নালাগে, সুকীয়া ৰাজ্যও নালাগে। এখন পিন্ধি, এমুঠি খাই থাকিব পাৰিলেই হ'ল। *(ফেলানী পৃ-১৭৫)*

উপন্যাসখনত ফেলানী, কালী বুঢ়ী, সুমলা, ৰত্না, মিনতি, জগুৰ ঘৈণীয়েক, মীৰাৰ মাক, জোনৰ মাক আদি সকলো নির্যাতিত হৈছে। পুৰুষতান্ত্রিক সমাজত সমানে সমানে ঘৰ চলাইছে যদিও বেছিভাগৰে শাৰীৰিক অত্যাচাৰ হৈছে নিজৰ স্বামী আৰু প্রেমিকৰ পৰা। অৱশ্যে ফেলানী আৰু ফুলৰ এই ক্ষেত্রত সুকীয়া। আন্দোলনকাৰীয়ে অত্যাচাৰ কৰাৰ দৰে সুমলাক ধর্ষণ কৰি হত্যা কৰিছে মিলিটেৰীয়ে। ❑

প্রসঙ্গসূচী ঃ

অসমীয়া গ্রন্থ -

শর্মা, গোবিন্দ প্রসাদ ঃ নাৰীবাদ আৰু অসমীয়া উপন্যাস, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, অসম প্রকাশন পৰিষদ, ২০১১, পৃ.-১৪৪

দেৱ চৌধুৰী, বিনীতা ঃ অসমীয়া মহিলা ঔপন্যাসিকৰ উপন্যাস, প্রথম প্রকাশ, পূর্বাঞ্চল প্রকাশ, ২০১১, পৃ.- ৫৯

বাংলা গ্রন্থ -

ভদ্র, গৌতম (সম্পা)ঃ নিম্নবর্গেয় ইতিহাস, প্রথম প্রকাশ, বইপাড়া পাবলিকেশ্বন, ১৯৯৮, পৃ.-৫

উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-১২

ইংৰাজী গ্রন্থ-

Soanes, Catherine, Compact Oxford Dictionary, Thesasurrus & word power Guide, published in the united states by Oxford university press Inc, New York first published in India 2003, p-903

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

পৰিপার্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত মৃদুল শর্মাৰ গঁড় উপন্যাস ঃ এটি অধ্যয়ন

পূবালী বৰা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ,
নর্থ লখিমপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
৯৫৭৭১৪০০৫৮
pubaliborah0@gmail.com

ড° অৰবিন্দ ৰাজখোৱা
সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
নর্থ লখিমপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
৯৪৩৫১৮৯১৭৪
arabindarajkhowa2011@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

'প্রকৃতি সংৰক্ষণ' সাম্প্রতিক সময়ৰ এটি চর্চিত বিষয়। বিশ্বায়নৰ প্রেক্ষাপটত সমগ্র পাৰিপার্শ্বিক অৱস্থাটো ক্রমান্বয়ে নতুনত্বৰ দিশে ধাৱমান হৈছে। এই নতুনত্বই মানুহৰ চিন্তা-ধাৰা, ৰুচিবোধ, আচাৰ-আচৰণ ইত্যাদি বিভিন্ন দিশলৈ পৰিৱর্তন কঢ়িয়াই আনিছে। যাৰ ফলত আটাইতকৈ প্রভাৱান্বিত হৈছে চৌপাশৰ পাৰিপার্শ্বিক জগত। কিয়নো তথাকথিত আধুনিকতাৰ মোহগ্রস্ততাই মানুহক মানুহ-ভিন্ন জগতখনৰ প্রতি ক্রমে উদাসীন কৰি তুলিছে। যাৰ বাবে মানুহকে ধৰি পৃথিৱীৰ সমগ্র প্রাণীজগত এক ভাৰসাম্যহীন পৰিৱেশৰ বশৱর্তী হৈছে। এনে ভয়াবহতাৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি মানুহ আৰু প্রকৃতিৰ পাৰস্পৰিক সম্পর্ক অধ্যয়নৰ প্রয়াসেৰেপাশ্চাত্য সাহিত্য জগতত 'পৰিপার্শ্ব সমালোচনা' (àßcocriticism)তত্ত্বই উৎপত্তি লাভ কৰে। মনকৰিবলগীয়া যে পাৰিপার্শ্বিক সংকটৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি অসমীয়া সাহিত্যতো পৰিৱেশ সচেতন দৃষ্টিভংগীৰে সাহিত্য ৰচনা হ'বলৈ ধৰে। তাৰভিতৰত মূলতঃ এশিঙীয়া গঁড়ক কেন্দ্র কৰি প্রকৃতি সচেতন দৃষ্টিভংগীৰে ৰচিত মৃদুল শর্মাৰ *গঁড়* শীর্ষক উপন্যাসো এইক্ষেত্রত উল্লেখযোগ্য। গঁড় হত্যা, চোৰাংচিকাৰৰ দৰে প্রকৃতি বিৰোধী কার্যকলাপে ভিন্ন প্রাকৃতিক সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰাই নহয়; সমান্তৰালভাৱে ই সামাজিক, সাংস্কৃতিক, অর্থনৈতিক, ৰাজনৈতিক, শৈক্ষিক, ভৌগোলিক আদি ক্ষেত্রসমূহকো স্পর্শ কৰিছে। গতিৰে পৰিপার্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত এই দিশবোৰ বিচাৰ কৰাৰ প্রয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ প্রকৃতি, পৰিপার্শ্ব সমালোচনা, গঁড়, নৃকেন্দ্রিক।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

মানৱ সভ্যতাৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে প্রকৃতিৰ সৈতে মানুহৰ এক এৰাব নোৱাৰা আন্তঃসম্পর্ক আছে। যাৰ বাবে বিভিন্ন যুগৰ সাহিত্যত পৰিৱেশৰ প্রসংগই স্থান লাভ কৰি আহিছে। অৱশ্যে মানুহৰ সৈতে থকা প্রকৃতিৰ এই নিগূঢ় সম্পর্ক প্রাচীন প্রায়সংখ্যক সাহিত্যতে মানৱ স্বার্থ আৰু সন্তুষ্টিৰ উদ্দেশ্যেহে প্রকাশ হোৱা দেখা যায়। অর্থাৎ মানৱ সমাজত প্রকৃতিৰ প্রয়োজন আৰু গুৰুত্ব মানুহৰ স্বার্থ পূৰণ হোৱাৰ পর্যায়লৈকেহে সীমাবদ্ধ আছিল। কিন্তু গোলকীকৰণৰ প্রভাৱত পাৰিপার্শ্বিক অৱস্থাটোলৈ যি পৰিৱর্তন আহিল তাৰ বাবে মানৱ সমাজ বিভিন্ন সমস্যাৰ সন্মুখীন হ'বলৈ ধৰিলে। এনে এক প্রেক্ষাপটত ঔদ্যোগিক বিকাশে সৃষ্টি কৰা পাৰিপার্শ্বিক সমস্যাৰ প্রতি আমেৰিকা

যুক্তৰাষ্ট্ৰৰ বৌদ্ধিক সমাজ সচেতন হৈছিল; আৰু তাৰ ফলস্বৰূপে ১৯৭০ চনৰ শেষৰফালে মানুহৰ জীৱন, কৰ্ম আৰু শিল্পকৰ্মকে আদি কৰি চৌপাশৰ জগতত এইসমূহৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে একোটা সাহিত্য অধ্যয়নৰ বাট মুকলি কৰা হয়। এই সাহিত্যিক অধ্যয়নেই 'পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা তত্ত্ব' (Ecocriticism) হিচাপে পৰিচয় লাভ কৰে।[১] তত্ত্বটোৰ উৎপত্তিগত অৰ্থ অনুসৰি যাৰ জৰিয়তে পৃথিৱীখনত প্ৰকৃতি আৰু মানুহৰ পাৰস্পৰিক ভাৰসাম্য ৰক্ষাৰ মাজেৰে উভয়ৰে বিনষ্ট নোহোৱাকৈ ৰক্ষণাবেক্ষণ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিব পৰা যায়। এই পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা তত্ত্বৰ আধাৰত প্ৰকৃতি সচেতন দৃষ্টিভংগীৰে ৰচিত মৃদুল শৰ্মাৰ *গঁড়* শীৰ্ষক উপন্যাসখন অধ্যয়ন কৰা হৈছে। গঁড়ৰ ক্ৰিয়াকাণ্ড, প্ৰকৃতিৰ সৃষ্টি হিচাপে গঁড়ৰ লগত জড়িত প্ৰাকৃতিক বিজ্ঞান, গঁড় সম্পৰ্কীয় ঐতিহাসিক তথ্য, ঐতিহ্য, লোকবিশ্বাস ইত্যাদি উপন্যাসখনত প্ৰকাশ হৈছে। তদুপৰি এচাম প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ বাবে উৎসৰ্গিত মানুহৰ বিপৰীতে কেনেদৰে আন এচাম মানুহে প্ৰকৃতিক ব্যক্তিগত লালসা আৰু স্বাৰ্থপূৰণৰ মাধ্যম হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে তেনে কেতবোৰ দিশেও উপন্যাসখনত প্ৰকাশ লাভ কৰিছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত মৃদুল শৰ্মাৰ *গঁড়* শীৰ্ষক উপন্যাসখন অধ্যয়ন কৰাৰ উদ্দেশ্য হ'ল—

(ক) পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত *গঁড়* উপন্যাস অধ্যয়নৰ জৰিয়তে মানুহ আৰু মানুহ-ভিন্ন জগতৰ আন্তঃসম্পৰ্ক উন্মোচন কৰা।

(খ) সমসাময়িক পাৰিপাৰ্শ্বিক সমস্যাৰ প্ৰসংগসমূহক লেখকে কেনেদৰে উপস্থাপন কৰিছে বিচাৰ কৰা।

(গ) গঁড়কেন্দ্ৰিক পাৰিৱেশিক সমস্যাসমূহৰ কাৰণ চিনাক্ত কৰা।

(ঘ) পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত *গঁড়* উপন্যাস অধ্যয়নৰ জৰিয়তে প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি মানুহৰ নৈতিক অৱস্থান বিচাৰ কৰা।

(ঙ) আধুনিক নগৰায়ন ব্যৱস্থাই প্ৰকৃতি জগতলৈ পৰিৱৰ্তন কঢ়িয়াই আনিছে নেকি অধ্যয়ন কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

বিশ্বায়নৰ প্ৰক্ৰিয়া ত্বৰান্বিত হোৱাৰ সময়ৰ পৰা জৈৱবৈচিত্ৰ্যৰ ভাৰসাম্য ৰক্ষা কৰা প্ৰসংগবোৰ তাৎপৰ্যপূৰ্ণ হৈ পৰে। যাৰ বাবে পৰিৱেশৰ প্ৰসংগ প্ৰকাশিত সাহিত্য মাত্ৰকে তাক উদ্দেশ্যপ্ৰণোদিতভাৱে চোৱাৰ এটি সমকালীন প্ৰাসংগিকতা আহি পৰে। মৃদুল শৰ্মাৰ *গঁড়* শীৰ্ষক উপন্যাসখনো পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা (Ecocriticism) তত্ত্বৰ অৱধা�ৰণাৰ আধাৰত অধ্যয়ন কৰাৰ গুৰুত্ব আছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা (Ecocriticism)ৰ বিচাৰ্য বিষয় বহুমাত্ৰিক। সেয়ে ইয়াক সাহিত্যৰ আন্তঃঅনুশাসনমূলক (Interdisciplinary) অধ্যয়ন বুলিও ধৰা হয়। য'ত পৰিৱেশতন্ত্ৰ জাতীয় প্ৰাকৃতিক বিজ্ঞানৰ উপৰি সাহিত্য, সমাজ আৰু সংস্কৃতিৰ ভিন্ন বিষয় অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰ হ'ব পাৰে। এই অধ্যয়নত মৃদুল শৰ্মাৰ *গঁড়* শীৰ্ষক উপন্যাসখন পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা (Ecocriticism) তত্ত্বৰ কেইটামান অৱধা�ৰণাৰ আধাৰত বিচাৰ কৰা হৈছে।

০.৫ অধ্যয়ন পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা কৰ্মটো ৰূপায়নৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰয়োগ কৰা পদ্ধতিসমূহ এনেধৰণৰ—

- **বিষয় বিশ্লেষণ পদ্ধতি** (Textual Analytical Method)

সাহিত্য পাঠ এটাৰ বিষয়বস্তু, গঠন আৰু কাৰ্যকাৰিতা বিশ্লেষণৰ বাবে এই পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। এই পদ্ধতিৰ সহায়ত নিৰ্বাচিত বিষয়টো সম্পৰ্কীয় সকলো তথ্য প্ৰণালীবদ্ধভাৱে ব্যাখ্যা কৰা হৈছে।

- **বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি** (Descriptive Method)

বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায়ত সাহিত্য পাঠটোত কি আছে, কি ঘটিছে ইত্যাদি দিশ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা হৈছে।

১.০ পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনাৰ আধাৰত মৃদুল শৰ্মাৰ *গঁড়* উপন্যাসৰ আলোচনা ঃ

১.১ পৰিৱেশতান্ত্ৰিক দায়বদ্ধতা (ecological Responsibility) ঃ

প্ৰকৃতি সাহিত্য অধ্যয়নৰ এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ হৈছে পৰিৱেশতান্ত্ৰিক দায়বদ্ধতা। মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্বন্ধ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰোঁতে পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনাই পৰিৱেশৰ প্ৰতি থকা মানুহৰ দায়বদ্ধতাৰ কথাটোত গুৰুত্ব প্ৰদান কৰে। বিভিন্নজন পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচকে পৰিৱেশৰ প্ৰতি মানুহৰ মনত দায়বদ্ধতাৰ বীজ ৰোপন কৰাৰ প্ৰয়াস সম্পৰ্কত আলোচনা কৰিছে। তাৰভিতৰত উৰসুলা কে. হেইজ (Ursula K.Heise)য়ে প্ৰৱৰ্তন কৰা এটি শব্দ হৈছে 'ইক'-কচম'পলিটানিজম' (eco-Cosmopolitanism)[২]; অৰ্থাৎ 'পৰিৱেশ বিশ্বজনীনতা'। হেইজে মানুহ আৰু মানুহ ভিন্ন জীৱ

প্রজাতিক এটি 'গ্রহৰে সম্প্রদায়' তথা সকলো এখন পৃথিৱীৰে অংশ হিচাপে বিবেচনা কৰে। সকলোকে একত্রিত কৰি হেইজে 'পাৰিপার্শ্বিক বিশ্বনাগৰিকত্ব'ৰ ধাৰণা প্রতিষ্ঠা কৰিব খোজে। য'ত পৃথিৱীৰ সকলো জীৱৰ প্রতি মানুহৰ মনত যত্ন, প্রেম আৰু কৰুণাৰ ভাব প্রকাশ পাব। ***গঁড়*** উপন্যাসখনতো কেতবোৰ চৰিত্র, পৰিৱেশ সংৰক্ষণকাৰী গোষ্ঠী আৰু বনফুটুকী অৰণ্যৰ কাষৰীয়া স্থানীয় কিছু লোকৰ মাজত এনে পৰিৱেশতান্ত্রিক দায়বদ্ধতা দেখিবলৈ পোৱা যায়। মুখ্যতঃ উপন্যাসখনৰ জগত বড়ো চৰিত্রটোৰ মাজেৰে এজন বনসুৰক্ষা কর্মীৰ প্রকৃত দায়বদ্ধতা প্রকাশ পাইছে। পৰিৱেশ সংৰক্ষণৰ স্বার্থত প্রতিজন নাগৰিকেই সৎ, নিষ্ঠাবান আৰু দায়বদ্ধ হোৱাটো যে প্রয়োজনীয় জগত বড়ো চৰিত্রটোৱে তেনে এটি দিশ প্রতিনিধিত্ব কৰি আছে। বনফুটুকী অৰণ্যৰ প্রতি তথা প্রকৃতি জগতৰ প্রতি বড়োৰ দায়বদ্ধতা প্রকাশ হোৱা এটি উদাহৰণ হ'ল এনেধৰণৰ—

ইতিমধ্যে বেলি বুৰ গ'ল। এনে সময়ত আচলতে ফৰেষ্টৰ ভিতৰত গাড়ী সুমুৱাবলৈ ভাল নালাগে বড়োৰ। ঘাঁহ-বন খোৱা জীৱ-জন্তুবোৰে সুবিধাজনক ঠাইত জিৰণি লোৱাৰ সময় এইটো।[৩]

দেখা যায় যে বড়োৱে একে সময়তে বনকর্মী হিচাপে তেওঁৰ কর্তব্য যিদৰে পালন কৰিছে সেই কর্মটোৰ প্রতি তেওঁ কৰা কার্যৰ জৰিয়তে শ্রদ্ধাও প্রকাশ পাইছে। যাৰ বাবে বন্যজীৱৰ সুৰক্ষাৰ লগতে সিহঁতৰ সুবিধা-অসুবিধাৰ প্রতিও বড়ো সচেষ্ট হোৱা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। তদুপৰি ঔপন্যাসিকে প্রকৃতি সুৰক্ষাৰ ক্ষেত্রত পাৰিপার্শ্বিকৰ প্রতিটো প্রসংগই যে জড়িত হৈ থাকে সেই কথা গ্রন্থখনত প্রকাশ কৰিছে আৰু লগতে এই বিষয়বোৰৰ প্রতি মানুহে দায়সৰা মনোভাৱ প্রত্যাহাৰ কৰি দায়বদ্ধ হোৱাটোহে যে প্রয়োজন সেয়া সোঁৱৰাই দিছে। এইক্ষেত্রত বিভিন্ন বনাঞ্চল,অৰণ্য আদিৰ মাজেৰে পাৰ হৈ যোৱা ৰেল লাইনসমূহৰ কথা উল্লেখ কৰি ৰে'ল বিভাগৰ থাকিবলগা দায়বদ্ধতা তথা নৈতিকতা সম্পর্কে ঔপন্যাসিকে কৈছে যে—

ৰে'লে মৰা বন্যজন্তুৰ ক্ষতিপূৰণ বন বিভাগে পায় নে নাপায় নাজানো। যদি নাপায়, সেয়া পোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে। কাৰণ, ৰে'লগাড়ীখন কেৱল পেটত সুমুৱাই নিয়া মানুহখিনিৰ কাৰণে দায়বদ্ধ হ'লেই নহ'ব, একে সময়তে বাটত থকা প্রাণীৰ প্রাণ ৰক্ষাৰ বাবেও দায়িত্বশীল হ'ব লাগিব।[৪]

এনেদৰে উপন্যাসখনত লেখকে বনসুৰক্ষা কর্মী, স্থানীয় লোক, প্রশাসন আৰু চৰকাৰ সকলোকে বনসুৰক্ষাৰ স্বার্থত একত্রিত হ'বৰ বাবে আহ্বান জনাইছে। যাতে প্রত্যেক ব্যক্তিয়েই সামগ্রিক পাৰিপার্শ্বিক সংকটৰ প্রতি দায়বদ্ধ হৈ ইয়াৰ সমাধানৰ বাবে যত্নপৰ হ'ব পাৰে। গ্রন্থখনত লেখকে প্রকাশ কৰিছে যে—

ই যিহেতু মানুহৰ ভৱিষ্যতৰ বাবে, সামগ্রিকভাৱে পৃথিৱীৰ ভৱিষ্যতৰ বাবে ভয়ংকৰ অৱস্থা সৃষ্টি কৰাৰ আশংকা কঢ়িয়াই আনিছে, গতিকে সত্তৰ ভেৰত বনভূমি আৰু বন্যপ্রাণী সংৰক্ষণ কৰাটো মানুহৰ সন্মুখত উপস্থিত হোৱা এটা অৱশ্যপালনীয় কর্তব্য হৈ পৰিছে। ইয়াত জগতৰ আত্মা-অধ্যাত্মা সকলো নিহিত হৈ আছে।[৫]

এইক্ষেত্রত উৰসুলা কে. হেইজে কোৱাৰ দৰে সমগ্র মানব জাতিৰ ভৱিষ্যতৰ কথা উল্লেখ কৰি ঔপন্যাসিকে 'বিশ্ব নাগৰিকত্ব' ধাৰণাৰ ইংগিত প্রকাশ কৰিছে। গতিকে দেখা যায় পাৰিপার্শ্বিক সমস্যা সমাধানৰ হকে গ্রহণ কৰা সকলো কার্যাৱলীয়ে এই কথা নির্দেশ কৰে যে প্রকৃতি জগতত ঘটা সকলো সমস্যাৰে মূল কেন্দ্র হৈছে প্রকৃতিৰ প্রতি মানুহৰ দায়বদ্ধতা নথকাটো। মানুহৰ এনে দায়বদ্ধতাহীনতাই পৃথিৱীত বসবাস কৰা সকলো প্রাণীৰ মৌলিক জীৱন পদ্ধতিলৈ এক স্থবিৰতা কঢ়িয়াই আনিছে। উপন্যাসখনত শর্মাই প্রকাশ কৰাৰ দৰে জগত বড়ো, শ্যামল, মৃগনাভ, বলেন দেউৰী, বনানী, বেলিণ্ডা আদি অতি কম সংখ্যক মানুহহে পৰিৱেশ বিষয়ক দিশবোৰক লৈ সচেতন। মানুহৰ দায়বদ্ধতাহীহে যে এই ভয়াবহ সমস্যা সমাধানৰ পথ মুকলি কৰিব পাৰিব ***গঁড়*** উপন্যাসখনৰ মাজেদি মূলতঃ সেই কথাকে প্রকাশ কৰাৰ যত্ন কৰিছে।

১.২ মানৱকেন্দ্রিক দৃষ্টিভংগী (Anthropocentrism) ঃ

মানৱকেন্দ্রিক দৃষ্টিভংগী বা নৃতাত্ত্বিকতা পৰিৱেশ সমালোচনাৰ আটাইতকৈ চর্চিত বিষয়। পৃথিৱীৰ সকলো প্রাণীৰ ভিতৰত শ্রেষ্ঠ প্রাণী 'মানুহ' বুলি মানুহেই যুগ যুগ ধৰি দাবী কৰি আহিছে। পৰিপার্শ্ব সমালোচনাই মানৱকেন্দ্রিক দৃষ্টিভংগীৰ এনে চিন্তা আৰু কর্মৰ বিৰোধ কৰে। মানুহ আৰু মানুহ-ভিন্ন জগতৰ সকলো উপাদানৰে স্বকীয় মূল্য স্বীকাৰ কৰি পৰিপার্শ্ব সমালোচনাই এটি 'সমতাবাদী দৃষ্টিকোণ' প্রচাৰ কৰাৰ যত্ন কৰে। পৰিৱেশবিদ এহৰেনফেল্ড (Ehrenfeld)এ কৈছে যে—

ৰাজহুৱা স্বার্থতকৈ আমি মানুহবোৰে স্ব-অহংকাৰ আৰু স্বার্থক অধিক প্রাধান্য দিওঁ, আনকি সাধাৰণভাৱে জীয়াই থকাৰ ক্ষেত্রতো অ-যৌক্তিকভাবে আমি নিজকে সকলোতকৈ ভালপাওঁ।[৬]

গঁড় উপন্যাসতো এনে মানৱকেন্দ্রিক দৃষ্টিভংগীৰ বহুকেইটা ঘটনা, উদাহৰণ লেখকে উল্লেখ কৰিছে আৰু সেইসমূহৰ প্রতি শ্যামল চৰিত্রটোৰ মাজেৰে বিদ্রোপ প্রকাশ কৰি কৈছে যে—

সাপ মাৰি কোঁটকোৱা গছৰ কাঁইটত ওলমাই বিকৃত আনন্দ প্রকাশ কৰি আহিছে জীৱশ্রেষ্ঠ মানুহে। কেটেপাৰে নিৰীহ চৰাইবোৰক হত্যা কৰি, আঘাত কৰি আনন্দ কৰা দেখি দেখি বিধ্বস্ত হৈ পৰিছে শ্যামল।[৭]

এনে ঘটনা আৰু পৰিস্থিতিবোৰৰ মূলতে হৈছে মানুহে 'জীৱশ্রেষ্ঠ' বুলি নিজকে সন্তুষ্ট কৰি তোলা ই এক আত্মাভিমানৰ বর্হিপ্রকাশ। মানুহে নিজক 'শ্রেষ্ঠ' বুলি প্রতিপন্ন কৰাৰ স্বার্থত প্রাকৃতিক জগতৰ যিকোনো উপাদানক হকে-বিহকে নিজৰ হাতৰ মুঠিত ৰখাৰ যত্ন কৰি আহিছে। মানুহৰ লোভ, মোহ আৰু ক্ষুধাও ইয়াৰ অন্যতম কাৰণ। যি আত্মকেন্দ্রিকতাই মানুহক আন প্রাণীকূলৰ ধ্বংস অথবা বিলুপ্তিৰ কাৰণ হিচাপেও নির্দেশ কৰিছে। ঔপন্যাসিকেও কেইবা ঠাইতো ক্ষোভ প্রকাশ কৰি কৈছে— 'মানুহ নামৰ নিজকে শ্রেষ্ঠ বুলি দাবী কৰাএই দুঠেঙীয়া জন্তুবিধে দেখিছোঁ পৃথিৱীৰ কাকো ৰেহাই নিদিব। পৃথিৱীক ধ্বংস কৰিহে এৰিব ইহঁতে।' অৱশ্যে লেখকৰ এনে ক্ষোভ আৰু বিদ্রোপ প্রকাশে তেওঁ যে পৃথিৱীখনৰ প্রতিটো জীৱৰে সম-অধিকাৰৰ কথাটোত গুৰুত্ব প্রদান কৰিছে উপন্যাসখনৰ মাজেৰে সেই দৃষ্টি প্রকাশ ঘটিছে।

১.৩ মানুহ আৰু প্রকৃতিৰ সম্বন্ধ অধ্যয়ন (Relation between man and nature) ঃ

মানুহ আৰু প্রকৃতি পৰস্পৰ এৰাব নোৱাৰা আন্তঃসম্পর্কেৰে সম্বন্ধিত। খাদ্য, বস্ত্র আৰু বাসস্থান— এই তিনিটা মৌলিক প্রয়োজনলৈকে যদি লক্ষ্য কৰা যায় তেতিয়া দেখা যায় যে আদিম কালৰে পৰা মানুহে মূলতঃ প্রকৃতিক আশ্রয় কৰিয়ে জীৱন-যাপন কৰি আহিছে। এইক্ষেত্রত পৰিপার্শ্ব সমালোচনাত সূচোৱা 'নেচাৰ' (Nature) শব্দত আৰোপিত ধাৰণাৰ কথা ক'ব পাৰি। কিয়নো সাহিত্যত প্রকৃতিৰ চিত্রণ বিভিন্ন যুগত হৈ আহিছে। কিন্তু পৰিপার্শ্ব সমালোচনাত 'নেচাৰ' ধাৰণাই সাহিত্যত প্রকৃতিৰ চিত্রণ অর্থাৎ ফুল, তৰা, নদী আদিৰ কেৱল চাক্ষুস সৌন্দর্য্যৰ বর্ণনা প্রকাশতে আৱদ্ধ নাথাকে। 'নেচাৰ' শব্দই এক ব্যাপক পৰিসৰত মানুহ আৰু মানুহ ভিন্ন সকলো উপাদান, ধাৰণা অথৱা সামগ্রীক নির্দেশ কৰে।[৮] *গঁড়* উপন্যাসতো এনে দৃষ্টিভংগীৰ প্রকাশ লক্ষ্যণীয়। উপন্যাসখনৰ মাজেৰে মানুহ আৰু প্রকৃতিৰ আন্তঃসম্পর্ক তথা যোগসূত্র উন্মোচনত লেখকৰ বিশেষ দক্ষতা প্রকাশ পাইছে। বিশেষকৈ একান্ত প্রকৃতিপ্রেমী, বনসংৰক্ষক জগত বঢ়োৰ কথাই ক'ব পাৰি। বড়োৱে কেনেদৰে প্রকৃতিৰ লগত এক আন্তৰিক সম্পর্ক অনুভৱ কৰে সেয়া উপন্যাসখনত প্রকাশ কৰিছে এনেদৰে—

ৰেঞ্জাৰ বড়োৰ মানুহজনৰ মুখখনলৈ চাই যিকোনো এজন লোকে কৈ দিব পাৰিব,নিজৰ সন্তানৰ সৈতে সম্পর্ক ৰক্ষা কৰি চলিব নোৱাৰিলেও অৰণ্যৰ বনৰীয়া জীৱ-জন্তুবোৰৰ প্রতি অপত্য স্নেহেৰে ভৰপূৰ হৈ থাকে তেওঁৰ অন্তৰ, তেওঁৰ অন্তৰৰ জগতখন।[৯]

অৱশ্যে ৰেঞ্জাৰ বড়োৰ দৰে সকলো বনকর্মী প্রকৃতিৰ দায়বদ্ধ আৰু সচেতন উপাসক নহ'বও পাৰে। উপন্যাসখনত প্রকাশিত জ্যেষ্ঠ বনবিষয়া বিভোৰ দাসৰ দৰে লোকৰ প্রকৃতিৰ লগত ব্যক্তিগত স্বার্থসিদ্ধিৰ বাদে আন একো আন্তৰিক সম্পর্ক গঢ় লৈ নুঠে অথৱা দাসে সেয়া উ পলব্ধিও কৰিব নোৱাৰে। কর্মক্ষেত্রত বা জীৱিকাৰ ক্ষেত্রত তেওঁ যি বৃত্তিয়ে গ্রহণ নকৰক, তেওঁ যি জাতি-জনগোষ্ঠীৰে লোক নহওঁক কিয় প্রকৃতি আৰু মানুহৰ পৰস্পৰ সম্পর্ক উপলব্ধি কৰিবলৈ তেওঁ প্রথমে অন্তৰ-আত্মাৰে প্রকৃতিক উপলব্ধি কৰিব পৰা, প্রকৃতিক ভালপোৱা শ্যামল, বনানী, দেৱেন তামুলী, মনোময় আৰু মৃগনাভহঁতৰ দৰে 'মানুহ' হ'ব লাগিব। পৰিপার্শ্ব সমালোচনায়ো মানুহ আৰু প্রকৃতিৰ সম্পর্ক ৰক্ষাৰ ক্ষেত্রত এনে মানৱীয় দৃষ্টিভংগীৰ গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। বহুসময়ত প্রকৃতি জগতৰ উপলব্ধিয়ে মানুহক নিজৰ অৱস্থানৰ প্রতিও সচেতন কৰি দিয়ে। য'ত 'নেচাৰ' ধাৰণাত আৰোপিত মানুহ আৰু মানুহ ভিন্ন সকলো উপাদান, ধাৰণা অথৱা সামগ্রীৰ প্রসংগই গুৰুত্ব লাভ কৰে। উপন্যাসখনত প্রকাশিত এনে এটি দিশ হ'ল—

এই যে ডিব্রু চাপৰিৰ মিচিং মানুহখিনি, ইহঁতৰ কাৰণে পৃথিৱীখন খুব সৰু। ইহঁতৰ প্রয়োজনো খুব সীমিত জানেনে? প্রতিবছৰে বানপানীত হাহাকাৰ কৰিও ইয়াতে থাকি ভালপায় ইহঁতে। কাৰণ ইহঁতৰ কাৰণে এই প্রকৃতিয়েই হৈছে মাতৃও, ধাত্রীও। গোবিনৰ নিয়মীয়া উপার্জন একো নাই। তথাপি হাবিৰ চৰাই এটাও নামাৰে সি।[১০]

দেখা যায় যে মিচিং লোকসকলৰ পৰম্পৰাগত জীৱন ধাৰাৰ লগত 'পাহাৰ আৰু নদী'ৰ এক এৰাব নোৱাৰা সম্পৰ্ক গঢ় লৈ উঠিছে। যাৰ বাবে বিভিন্ন প্ৰাকৃতিক সমস্যাক আওকাণ কৰিও মিচিং লোকসকলে নৈপৰীয়া পাহাৰীয়া অঞ্চলতেই সাধাৰণতে বসবাস কৰি আছে। ***গড়*** উপন্যাসত প্ৰকাশ কৰা মিচিং লোকসকলৰ বাবেও বানপীড়িত বুঢ়াচাপৰিয়ে তেওঁলোকৰ আটাইতকৈ নিৰ্ভৰযোগ্য আৰু প্ৰশান্তিকৰ ঠাই। এইক্ষেত্ৰত সাম্প্ৰদায়িক পৰিৱেশতন্ত্ৰৰ ধাৰণাৰ কথাও প্ৰসংগলৈ আনিব পাৰি। জনগোষ্ঠীয় পৰম্পৰাত খাদ্য, বস্ত্ৰ আৰু বাসস্থানক কেন্দ্ৰ কৰি প্ৰকৃতিৰ লগত যুক্ত বিভিন্ন লোকাচাৰ জড়িত হৈ থাকে। ঔপন্যাসিকে কৈছে যে মিচিংসকলৰ কাৰণে অৰণ্য যেনেদৰে মাতৃ আৰু ধাত্ৰী, কাৰ্বিসকলৰ কাৰণে আকৌ গঁড় হৈছে লক্ষ্মী। তেনেদৰে অসমৰ অন্যান্য জনগোষ্ঠীৰ মাজতো প্ৰকৃতিক ভালপোৱা কেতবোৰ পৰম্পৰা, বিশ্বাস বৰ্তি আছে। লোকাচাৰ মানেই প্ৰকৃতি বিৰোধ নহয়। বৰঞ্চ তেনে কিছু লোকাচাৰে গঁড়ৰ দৰে বন্যজীৱসমূহ দীৰ্ঘজীৱি হোৱাৰ ক্ষেত্ৰত সচেতনতাহে প্ৰদান কৰে। লেখকে প্ৰকাশ কৰিছে যে গোবিনৰ একা নিয়মীয়া উপাৰ্জন নাই কিন্তু সি হাবিৰ চৰাই এটাও নামাৰে অৰ্থাৎ প্ৰকৃতিৰ সংস্পৰ্শত ডাঙৰ-দীঘল হোৱা গোবিনে সেই শিক্ষা লাভ কৰিছে, প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি তাৰ এৰাব নোৱাৰ আন্তৰিক টান আছে যিবোৰ কাৰণে সি অভাৱত পৰিলেও হাবিৰ কোনো জীৱকে বধ নকৰে। এনেদৰে মানুহ আৰু প্ৰকৃতি জগতৰ আন্তঃসম্পৰ্ক উন্মোচন পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা অধ্যয়নৰ এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয়।

১.৪ প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় বিজ্ঞানসম্মত চেতনা ঃ

পৰিৱেশ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ যাওতে অৰ্থাৎ পৰিৱেশৰ ভিন্ন তথ্য, উপাদান, বিষয়বস্তুৰ শুদ্ধতা আৰু সত্যতা নিৰূপনৰ বাবে বিজ্ঞান পৰিৱেশৰ লগত অৱধাৰিতভৱে আলোচনালৈ আহে। সেয়ে মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্পৰ্ক অধ্যয়ন কৰিবলৈ যাওতে পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনাই পৰিৱেশ বিজ্ঞানৰ বৈজ্ঞানিক দৃষ্টিৰ সহায় লয়। পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা মানৱীয় আচাৰ-আচৰণৰ লগত সম্পৰ্কিত যদিও ই প্ৰাকৃতিক বিজ্ঞানৰ সাধাৰণ ধাৰণাবোৰ নসাৎ নকৰে। বৰঞ্চ সেই ধাৰণাসমূহৰ আধাৰত বিষয়টোক এটি স্পষ্ট ৰূপ দিয়াৰ যত্ন কৰে। পৰিৱেশবিদ উইলিয়াম ৰোকার্ট (William Rueckert)এ কৈছে যে—

মই সাহিত্য অধ্যয়নৰ বাবে পৰিস্থিতি বিজ্ঞান আৰু পাৰিপাৰ্শ্বিকতাৰ লগত জড়িত ধাৰণাবোৰ পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা কৰাৰ যত্ন কৰিছোঁ। কাৰণ আমি বাস কৰা পৃথিৱীখনত পৰিস্থিতি বিজ্ঞানৰ অধ্যয়ন (বিজ্ঞান হিচাপে, এটি অনুশাসন হিচাপে, মানৱ দৃষ্টিৰ আধাৰ হিচাপে) বৰ্তমান আৰু ভৱিষ্যতৰ বাবে যথেষ্ট তাৎপৰ্যপূৰ্ণ।[১১]

গড় উপন্যাসতো লেখকে পাৰিপাৰ্শ্বিক জগতৰ কোনো ঘটনা বা সমস্যাৰ কথা প্ৰকাশ কৰোতে এইসমূহ বৈজ্ঞানিক দৃষ্টিৰ আওতাত বিশ্লেষণ কৰা দৃষ্টিগোচৰ হয়। যি প্ৰকৃতি সাহিত্য লেখনীৰো এটি অন্যতম বৈশিষ্ট্য। যাতে প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় যিকোনো কথা উপস্থাপন কৰাৰ ক্ষেত্ৰত এজন লেখকে তথ্য আৰু যুক্তিৰে তাৰ বিৱৰণ দাঙি ধৰিব পাৰে। গ্ৰন্থখনত লেখকে গঁড় সম্পৰ্কীয় প্ৰচলিত ধাৰণা, অন্ধবিশ্বাস আদিক ফহিয়াই দেখুওৱাৰ লগতে গঁড়ৰ দৰে প্ৰচলিত প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় যিকোনো ধ্যান-ধ্যৱণাকে যুক্তিসহকাৰে চিন্তা কৰিবলৈ জনসমাজক আহ্বান জনাইছে। উপন্যাসখনত প্ৰকাশিত এনে এটা প্ৰসংগ এনেধৰণৰ—

পৃথিৱী বিখ্যাত এটা খৰ্গযুক্ত গঁড়ৰ সুৰক্ষাৰ ব্যৱস্থা কৰাৰ লগতে অন্যান্য বন্যজন্তুক লৈ মানুহৰ মনত পুৰুষানুক্ৰমে চলি অহা অন্ধবিশ্বাস আঁতৰ কৰিবৰ সময় হ'ল। আচলতে পৃথিৱীৰ আগবঢ়া দেশবোৰে আমাৰ সমাজত চলি থকা এনে অন্ধবিশ্বাসৰ কথা শুনিলে আমাক হাঁহিব। কাৰণ এতিয়া আমেৰিকা, ৰাছিয়া, চীন, জাপান আদি দেশে মঙল গ্ৰহত মানুহৰ কাৰণে বসতি স্থাপন কৰিবলৈ আগবাঢ়িছে। তাৰ বিপৰীতে আমি কি কৰিছোঁ?[১২]

এইসমূহৰ উপৰিও অৰণ্যৰ ঘনত্ব অনুসৰি তাত কেনেধৰণৰ জীৱ বাস কৰিব,অৰণ্যখনৰ জৈৱতন্ত্ৰ কিধৰণৰ হ'ব, মানুহ তাত প্ৰৱেশ কৰাটো কিমান দূৰ সম্ভৱ অথৱা যুক্তিসংগত এনে বিভিন্ন বৈজ্ঞানিক ব্যাখ্যাই উপন্যাসখনত ঠাই অধিকাৰ কৰিছে। গতিকে ***গঁড়*** উপন্যাসখনৰ মাজেদি প্ৰকৃতিৰ লগত জড়িত বৈজ্ঞানিক দিশটোৰ এক আভাস পাব পাৰি। তদুপৰি পৰিৱেশবিদসকলৰ মতে পৰিৱেশ সমালোচনা এনে এটি সাহিত্যিক দৃষ্টিভংগী যাৰ অপৰিসীম সম্ভাৱনা আছে। গতিকে ইয়াক গতিশীল ৰূপ প্ৰদান কৰিবলৈ 'বিজ্ঞান'ৰ পৰিভাষা আৰু পদ্ধতিসমূহৰ লগত 'মানৱীয়তা'ৰ ধ্যান-ধাৰণা যুক্ত কৰাটো নিতান্তই প্ৰয়োজন। গঁড় উপন্যাসতো জগত

বড়ো চৰিত্রটোৰ মাজেৰে এনে কিছু চিন্তা প্ৰকাশ পোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। কাৰণ বড়োৱে ভাবে যে তেওঁ নিজকে সৰ্বজ্ঞ ৰূপত পোৱা হ'লে কোনো বন্যপ্ৰাণীকে বিপদত পৰিবলৈ নিদিলহেতেঁন; আকৌ তেওঁ এইটো ভাবে যে এইবোৰ অবাস্তৱ কথা ভাবিবলৈ তেওঁ অন্ধবিশ্বাসী নহয় বিপদতপৰা গঁড়ক উদ্ধাৰ কৰিবলৈ সদায় নিজৰ অনুমান আৰু শুদ্ধতাৰ ধাৰণাৰহে প্ৰয়োজন। গতিকে এনে কেতবোৰ দিশে ঔপন্যাসিকৰ প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় বৈজ্ঞানিক চিন্তাৰ আভাস দাঙি ধৰে।

প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় বৈজ্ঞানিক লেখনীৰ আন এটা মনকৰিবলগীয়া দিশ হ'ল যে— মানুহে প্ৰকৃতি বা প্ৰাকৃতিক সম্পদক যেনেদৰে ব্যৱহাৰ কৰে ঠিক একেদৰে কোনো সময়ত প্ৰকৃতিক অনুসৰণ কৰিও চলে। ***গঁড়*** উপন্যাসতো মৃগনাভে প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি থকা তাৰ আন্তৰিক উপলব্ধি প্ৰকাশ কৰিছে যে—

জন্তু মই দেখা নাই, ছাৱ। কিন্তু অৰণ্যৰ আত্মাৰ উপস্থিতি যেন মই উপলব্ধি কৰিব পাৰিছোঁ। মই যেন হৃদয়ত প্ৰকৃতিৰ অন্তৰতম আদিম সততাৰ বোধ ধাৰণ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছোঁ।[১৩]

একেদৰে 'ৰেঞ্জাৰ বড়োৱে প্ৰায়েই অৰণ্যৰ শোভা চাই আপোন পাহৰা হয় বুলি শ্যামলে জানে' বুলি কোষা কথাষাৰো ঔপন্যাসিকে প্ৰকাশ কৰিছে। এনে কেতবোৰ প্ৰসংগৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি মনোবিজ্ঞানীসকলে পাৰিপাৰ্শ্বিক পৰিস্থিতি আৰু মানসিক স্বাস্থ্যৰ মাজৰ সম্পৰ্ক অধ্যয়নত গুৰুত্ব প্ৰদান কৰে। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে যে মানুহৰ কিছুমান সামাজিক সমস্যা আৰু মানসিক ৰোগৰ কাৰক হৈছে— প্ৰকৃতিৰ পৰা বিচ্ছিন্নতাবাদী মনোভাৱ। প্ৰকৃতিৰ অন্তৰতম উপলব্ধিয়ে মানুহৰ এই সমস্যাসমূহ বহু পৰিমাণে উপশম ঘটাব পাৰে। উপন্যাসখনৰ বিভিন্ন ঠাইত কোনোসময়ত প্ৰকৃতিয়ে যে শিক্ষকৰ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিব পাৰে সেই দৃষ্টিভংগীৰ প্ৰকাশ ঘটিছে।

১.৫ পৰিপার্শ্ব নাৰীবাদ (Eco-feminism) ঃ

'পৰিপার্শ্ব নাৰীবাদ' হৈছে নাৰীবাদৰ এটি শাখা। যি লিংগ সমতাৰ ওপৰত আধাৰিত। সামাজিক নিয়মবোৰে কিদৰে মহিলা আৰু প্ৰকৃতিৰ ওপৰত আধিপত্য প্ৰয়োগ কৰে এই সম্পৰ্কে পৰিপার্শ্ব নাৰীবাদত আলোচনা কৰা হয়। অৰ্থাৎ পৃথিৱীৰ পাৰিপার্শ্বিক ভাৰসাম্যহীনতা আৰু মহিলাৰ স্থিতিৰ অৱক্ষয় দুয়োটা ক্ষেত্ৰতে দায়বদ্ধ মূলতঃ মানুহে গঢ় দিয়া সামাজিক মতাদৰ্শসমূহ। 'ইক'ফেমিনিজম' পৰিভাষাটোৰ উদ্ভাৱক হৈছে ফ্ৰেনকোইচ ডি'ইউব'ন (Francoise deaubonne)।[১৪] পৰিৱেশ নাৰীবাদে প্ৰকৃতি আৰু নাৰীৰ মাজত এটি গভীৰ সম্পৰ্কসূত্ৰৰ উমান দিয়ে। প্ৰকৃতিৰ ওপৰত মানুহে যেনেদৰে প্ৰভুত্ব বিস্তাৰ কৰিছে, নিজকে প্ৰকৃতিৰ নিয়ন্তা হিচাপে গৰ্ববোধ কৰিছে আৰু হকে-বিহকে প্ৰকৃতিৰ ওপৰত অত্যাচাৰ চলাইছে ঠিক তেনেদেৰে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ-ব্যৱস্থাত নাৰীসকলো পুৰুষৰ দ্বাৰা অৱদমিত আৰু শোষিত। ***গঁড়*** উপন্যাসৰ শ্যামলৰ প্ৰেয়সী বনানী শ্যামৰ জীৱনতো ঠিক এনে এটি ঘটনাই ঘটি গৈছে। আমেৰিকাত ফৰেষ্ট্ৰী সম্পৰ্কীয় গৱেষণা কৰি থকা বনানীৰ গৱেষণাৰ অগ্ৰগতিত তাইৰ তত্ত্বাৱধায়ক ৰিচার্ড এমবাংৱা যেনেদৰে আনন্দিত হৈছিল তাৰ বিপৰীতে তাইৰ সহঃ গৱেষক আৰু তেওঁলোকৰ তত্ত্বাৱধায়ককেইজনমান হৈ পৰিছিল হতাশ আৰু প্ৰতিহিংসাপৰায়ণ। সেই হিংসাৰ পৰিণতিয়েইবনানীৰ শ্যামৰ জীৱনত সামূহিত যৌন নিৰ্যাতনৰ দৰে ঘটনা সংঘটিত কৰিলে। লেখকে প্ৰকাশ কৰিছে—

তাই অনিচ্ছুক, কাৰণ জীৱনত তাই সন্মুখীন হৈছে নিজে নিজৰ শত্ৰু হোৱাৰ অভিজ্ঞতাৰ। নিজৰ সম্পদেই তাইৰ কাৰণে ভয়ংকৰ বিপদ হৈ আহিছে ইতিপূৰ্বে। তাই শুই থাকোতেই তাইৰ খৰ্গটো কাটি লৈ গৈছিল দুৰ্বত্তহঁতে। শায়িত অৱস্থাতে তাইক অচেতন কৰি লৈছিল সিহঁতে।[১৫]

গঁড়ৰ খৰ্গটো যেনেদৰে গঁড়টোৰ বাবেই বৈৰী হ'ল ঠিক বনানী শ্যামৰ অগ্ৰগতিও যেন তাইৰ পতনৰ মূল কাৰণ হৈ পৰিল। ঔপন্যাসিকে চোৰাংচিকাৰীয়ে খৰ্গ কাটি নিয়া গঁড় এজনীৰে সৈতে বনানীৰ অৱস্থাতোৰ তুলনা কৰি কৈছে—

নিজৰ পৰিচিত বনভূমিতে ৰক্তাক্ত মুখমণ্ডলেৰে এজনী অসহায় আৰু উগ্ৰ,গৰ্ভৱতী আৰু যন্ত্ৰণাকাতৰ বনৰীয়া গঁড়। আৰু তাই আছিল আনৰ দেশ এখনৰ আধাচিনা নগৰ এখনৰ সম্পূৰ্ণ অপৰিচিত এটা পৰিস্থিতিত ৰক্তাক্ত যৌনাংগৰে এজনী অসহায়, অকলশৰীয়া অনুগ্ৰ গাভৰু।[১৬]

প্ৰকৃতিয়ে যেনেদৰে মানুহক সম্পদৰ যোগান ধৰে তেনেদৰে নাৰীয়েও ঋতুচক্ৰৰ পৰা আৰম্ভ কৰি সন্তান প্ৰসৱ কৰা আৰু সন্তানক স্তনপান কৰোৱালৈকে পাৰিবাৰিক লালন পালনকাৰীৰ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। কিন্তু সেই সম্পদৰ কাৰণেই প্ৰকৃতিৰ ওপৰত মানুহে ধ্বংসযজ্ঞ আৰম্ভ কৰে একেদৰে বনানী শ্যামৰ দৰে গঢ় লৈ উঠা মানৱ সম্পদো এচাম হিংসুক

মানুহৰ চিকাৰ হ'বলগীয়াত পৰে। খৰ্গ কটা গঁড়জনী আৰু বনানীয়ে চিৰদিনৰ বাবে হেৰুৱাই পেলোৱা সৃষ্টিৰ সম্ভাৰনাখিনি যেন একেই। সেয়ে পৰিৱেশ নাৰীবাদে পৰিৱেশ অৱনতিৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি মহিলাসকলক নিজৰ স্থিতিৰ প্ৰতি অধিক সংৱেদনশীল হ'বলৈ উৎসাহিত কৰে। ***গঁড়*** উপন্যাসখনত শ্যামলেও বনানীৰ সেই অতীত নেওচি তাইক আদৰেৰে গ্ৰহণ কৰিছে।

১.৬ গভীৰ পৰিৱেশতন্ত্ৰ (Deep ecology) ঃ

আৰ্নে নেচে (Arne Naess) ১৯৭৭ চনত 'গভীৰ পৰিৱেশতন্ত্ৰ' অৱধাৰণা উত্থাপন কৰে।পৃথিৱীত বসবাস কৰা প্ৰতিটো জীৱৰে স্বতন্ত্ৰভাৱে জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ আছে। প্ৰকৃতি তথা পাৰিপাৰ্শ্বিকতাৰ প্ৰতি মানুহে কৰি অহা অন্যায় অবিচাৰৰ বিপৰীতে গভীৰ পৰিৱেশতন্ত্ৰৰ আন্দোলনে প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি মানুহৰ থাকিব লগা দায়বদ্ধতা সম্পৰ্কে সচেতনতা সৃষ্টিত গুৰুত্ব দিয়ে। আৰ্নে নেচে প্ৰকাশ কৰা অনুসৰি গভীৰ পৰিৱেশতন্ত্ৰৰ আন্দোলনে কিছু প্ৰসংগক বিশেষভাৱে গুৰুত্ব প্ৰদান কৰে। সেয়া হৈছে—

(ক) সকলো জীৱৰে স্বকীয় মূল্য আছে।

(খ) সমৃদ্ধি আৰু বৈচিত্ৰ্যই পৃথিৱীৰ প্ৰত্যেক প্ৰজাতিৰে গুৰুত্ব বৃদ্ধি কৰে।

(গ) আধুনিক প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ যথাচিত প্ৰয়োগ।

(ঘ) উদ্যোগিক ব্যৱস্থাৰ নিয়ন্ত্ৰণ।

(ঙ) সাধাৰণ জীৱন যাপন।

(চ) মানুহৰ প্ৰকৃতি বিৰোধী কাৰ্যকলাপ ৰোধ।

(ছ) অৰণ্যবিনাশ ৰোধ।

(জ) জনসংখ্যা বৃদ্ধি নিয়ন্ত্ৰণ।[১৭]

গঁড়উপন্যাসতো নেচে প্ৰকাশ কৰাৰ দৰে ঔপন্যাসিকে পৰিৱেশ সচেতন বিভিন্ন দিশ প্ৰকাশ কৰিছে। বিশেষকৈ সকলো জীৱৰে স্বকীয় মূল্যৰ প্ৰতি গুৰুত্ব আৰোপ কৰিলে যে পৃথিৱীখনেই সমৃদ্ধিশালী হৈ পৰিব সেই কথা ঔপন্যাসিকে কৈছে যথা—

ৰাইজ, মই আপোনালোকক তাতযোৰ কৰি অনুৰোধ জনাইছোঁ, এই বনৰীয়া জীৱসমূহক আপোনালোকে নিজৰ সন্তান জ্ঞান কৰকচোন। পৃথিৱীখনৰ ওপৰত অকল মানুহৰ অধিকাৰ আছে জানো? আপোনালোকে জানেনে ৰাইজ, জীৱ-জন্তুবোৰ সৃষ্টি হোৱাৰ পাছতহে আমি মানুহবোৰ সৃষ্টি হৈছোঁ। গতিকে আমাতকৈ বাকী সকলা জীৱৰ জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ বেছি। ইহঁত জীয়াই থকাটো অকল আমাৰ কাৰণেই নহয়, ভৱিষ্যতৰ সমগ্ৰ পৃথিৱীখনৰ কাৰণেই মংগলজনক।[১৮]

এইসমূহৰ উপৰি ঔপন্যাসিকে ৰেঞ্জাৰ জগত বড়োৰ কথাকাণ্ডৰ মাজেৰে প্ৰকাশ কৰিবলৈ বিচাৰিছে যে মানুহে নিজা ধৰণে গঁড় বা অন্যান্য বন্যপ্ৰাণীক নিয়ন্ত্ৰণ কৰিবলৈ গ'লে বনফুটুকী অৰণ্যৰ যি জৈৱতন্ত্ৰ অথবা সি বহু পৰিমাণে ব্যাহত হ'ব। কেতিয়াবা সেই ব্যাহত অৱস্থাত গঁড়ৰ স্থানান্তৰণ হোৱাৰ লগতে এই প্ৰাণীবিধৰ বিলুপ্তিৰ প্ৰক্ৰিয়া আৰম্ভ হোৱাৰো সম্ভাৱনা নোহোৱা নহয়। গতিকে গঁড়ৰ বিচৰণ আৰু স্থানান্তৰণ স্বয়ংক্ৰিয়ভাৱে হ'বলৈ নিদি কিছুমান বনসুৰক্ষা কৰ্মী আৰু ৰাজনীতিবিদে ব্যৱস্থাটোক নিজৰ স্বাৰ্থসিদ্ধি হোৱাকৈ নিয়ন্ত্ৰণ কৰিবলৈ বিচাৰিছে। শ্যামল, বনানী আৰু মৃগনাভহঁতৰ দৰে অৰণ্যপ্ৰেমী একাংশ যুৱক-যুৱতীয়ে অৱশ্যে গঁড়ৰ সুৰক্ষা সম্পৰ্কে ল'ব লগা সৎ আৰু সচেতন উদ্দেশ্যসমূহ জনসাধাৰণক বুজাব পৰাকৈ নিজৰ এটা সংগঠন গঢ়ি তুলিছে। গভীৰ পৰিৱেশতন্ত্ৰৰ আন্দোলনে প্ৰকৃতি সুৰক্ষাৰ হকে গ্ৰহণ কৰা এনে নিকা ব্যৱস্থাসমূহক সদায় সমৰ্থন কৰি আহিছে।

বনফুটুকী অৰণ্যৰ মাজেৰে যোৱা নেশ্যনেল হাইৱে'টোত কিমান বন্যজন্তু মৃত্যুমুখত পৰিছে সেই কথালৈও লেখকে গ্ৰন্থখনৰ বিভিন্ন ঠাইত ক্ষোভ প্ৰকাশ কৰিছে। লেখকৰ মতে আধুনিকতাৰ প্ৰভাৱ আৰু প্ৰসাৰে বন্যজন্তুৰ সুৰক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত নিৰাপত্তা দিয়াতকৈ চোৰাংচিকাৰীক আৰু লগতে অৰণ্য, বন্যজন্তু চাই বিলাস কৰা মানুহখিনিকহে সুবিধা কৰি দিছে। এনে কিছুমান সামাজিক সমস্যাৰে গইনা লৈ আকৌ বিভোৰ দাস, মহান বৈশ্য আদিৰ দৰে কিছু ৰাজনৈতিক কৰ্মী তথা নেতাই ইচ্ছাকৃতভাৱে 'ক্ষমতা' অপপ্ৰয়োগৰ যত্ন কৰি আহিছে। য'ত তেওঁলোকৰ ব্যক্তিগত স্বাৰ্থসিদ্ধিৰ ধাৰণাটো জড়িত হৈ থাকে। এনেদৰে উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে লেখকে জৈৱ-বৈচিত্ৰ্যৰ অক্ষত সংৰক্ষণৰ কঠিনতা সম্পৰ্কে পাঠকক অৱগত কৰিছে লগতে প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ এই কঠিনতাৰ লগতে যে অনেক সামাজিক, ৰাজনৈতিক আৰু অৰ্থনৈতিক কাৰক জড়িত হৈ আছে তাৰো আভাস দাঙি ধৰিছে।

২.০ উপসংহাৰ ঃ পৰিপাৰ্শ্ব সমালোচনা তত্ত্বৰ আধাৰত মৃদুল শৰ্মাৰ ***গঁড়*** উপন্যাস অধ্যয়ন কৰি কেইটামান সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পৰা গ'ল। সিদ্ধান্তকেইটা হ'ল—

➢ পাৰিপাৰ্শ্বিক জগতৰ প্ৰতি নৃ-কেন্দ্ৰিকতাৰ উৰ্দ্ধত

গঁড় উপন্যাসত প্ৰকৃতিৰ জৈৱিক-অজৈৱিক সকলো উপাদানৰ প্ৰতি সহমৰ্মিতা প্ৰকাশ ঘটিছে। কিয়নো পৃথিৱীখনত থকা সৰু-বৰ প্ৰতিটো উপাদানৰে স্বকীয় গুৰুত্ব আছে আৰু এই বিচিত্ৰতাইহে পৃথিৱীখনক সমৃদ্ধ কৰি ৰাখিছে।

➢ পৃথিৱীকেন্দ্ৰিক সকলো সমস্যাৰে মূল কাৰণ হৈছে পৰিৱেশৰ ভাৰসাম্যহীনতা; আৰু এই ভাৰসাম্যহীন পৰিৱেশ গঢ় দিয়াৰ মূলতে হৈছে মানুহ নামৰ প্ৰজাতিটোৰ পৰিৱেশ ধ্বংসী কাৰ্যকলাপ।

➢ প্ৰকৃতি লেখক বা পৰিৱেশবিদসকলে মানুহক পাৰিপাৰ্শ্বিক পৰিৱেশটো ন-কৈ গঢ়ি তুলিবৰ বাবে আহ্বান নজনাই; মাথো সচেতন কৰি দিয়ে যাতে জৈৱতন্ত্ৰটো যি প্ৰাকৃতিক প্ৰক্ৰিয়াত বৰ্তি আছে সেই প্ৰক্ৰিয়াত যাতে কোনোধৰণৰ ব্যাঘাত নজন্মায়।

➢ প্ৰকৃতি সংৰক্ষণৰ বাবে কাম কৰিবলৈ মানুহে অত্যাধিক নগৰায়ন প্ৰক্ৰিয়াক প্ৰত্যাহাৰ কৰিব পাৰিব লাগিব।

➢ প্ৰকৃতি সংৰক্ষণ দৃষ্টিভংগীক ব্যাপক পৰ্যায়ত প্ৰচাৰ তথা প্ৰসাৰ ঘটাবলৈ প্ৰকৃতি সম্পৰ্কত থকা অৰণ্য স্থানীয় মানুহৰ পৰম্পৰাগত চিন্তা-চেতনাক অগ্ৰাধিকাৰ দিব পাৰিব লাগিব। সমগ্ৰ মানৱ জাতিৰ সাংগঠনিক তৎপৰতাইহে এই বিশ্বব্যাপি থকা সমস্যাটোৰ সমাধানৰ পথ মুকলি কৰিব পাৰে। ❑

প্ৰসংগসূত্ৰ—

১. Scott Slovic (Ed.), ***Ecocriticism big ideas and practical strategies***, 'Editor's Preface' Page-vii

২. ibid, 'Glossary of select terms', Page-177

৩. মৃদুল শৰ্মা, ***গড়***, পৃ.— ১৭৩

৪. উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ৮৬

৫. উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ১৩৪

৬. Cheryll Glotfelty and Harold Fromm (Ed.), ***The ecocriticism reader landmarks in literary ecology***, Glen A. Love; 'Revaluing Nature'; Page-226

৭. মৃদুল শৰ্মা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ৩২

৮. জ্যোতিষ্মান দাস, ***পৰিপাৰ্শ্ব-সমালোচনাৰ আধাৰত শুকুলা হাতীৰ খোজ আৰু ইয়াত এখন অৰণ্য আছিল উপন্যাসৰ অধ্যয়ন,*** অ-প্ৰকাশিত গৱেষণা গ্ৰন্থ-কণিকা, অসমীয়া বিভাগ; ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৯বৰ্ষ, পৃষ্ঠা- ২৩

৯. মৃদুল শৰ্মা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ১২

১০. মৃদুল শৰ্মা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ১৩৮

১১. Cheryll Glotfelty and Harold Fromm (Ed.), ibid, William Rueckert, 'Literature and Ecology', Page no-107

১২. মৃদুল শৰ্মা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ২৭৭

১৩. উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ৩৪১

১৪. Dipak kumar Doley & Abul foyes Md Malik (Ed.) ***Rethinking Ecology and Environment 21st Cenntury perspectives***. Amit. Y. Kapoor; 'Re-Imagining Ecofeminism : A critique of select Novels', Page- 1

১৫. মৃদুল শৰ্মা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ৩১০

১৬. উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.—৩১০

১৭. Dipak Kumar Doley & Abul Foyes Malik (Ed.), ibid, Nikumoni Phukon 'Relevance of Applied Ethic : Special reference to medical ethics and environmental ethics', Page- 313

১৮. মৃদুল শৰ্মা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ.— ৩১০

গ্ৰন্থপঞ্জী—

অসমীয়া গ্ৰন্থ ঃ

কলিতা, পুলিন ; ***কাজিৰঙাৰ কাহিনী,*** জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশ, ২০১৮

চমুৱা, নৰ কুমাৰ ; ***অসমত সেউজ সংৰক্ষণ চেতনা আৰু সাহিত্য,*** নক্সা প্ৰিন্ট এণ্ড পাব্লিকেশ্যন, ধেমাজি আৰু ডিব্ৰুগড়, প্ৰথম প্ৰকাশ- এপ্ৰিল, ২০১৭

ডেকা, ৰাতুল ; ***সাহিত্য সমালোচনা তত্ত্ব পৰিচয় আৰু প্ৰয়োগ,*** বান্ধৱ, গুৱাহাটী, ২০১৭

দত্ত, সৌম্যদ্বীপ ; ***অৰণ্যত এখোজ দুখোজ***, ভৰানী প্ৰিণ্ট এণ্ড পাব্লিকেশ্যনছ্, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ; ছেপ্তেম্বৰ, ২০১০

— ***অৰণ্যৰ ছাঁ-পোহৰ,*** বনলতা, ডিব্ৰুগড়, প্ৰথম সংস্কৰণ; অক্টোবৰ-২০১৫

দত্ত, পংকজ কুমাৰ ; ***অৰণ্যৰ ৰ'দ বৰষুণ,*** পূৰ্বায়ণ প্ৰকাশন, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ- ২০২১

নেওগ, মহেশ্বৰ (সম্পা.) ; ***অৰুনোদই,*** অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী, তৃতীয় প্ৰকাশ, ছেপ্টেম্বৰ; ২০০৮

পাঠক, কুলেন্দু (অনু.) ; ***আমাৰ পৰিৱেশ,*** নেশ্যনেল বুক ট্ৰাষ্ট, ইণ্ডিয়া, প্ৰথম প্ৰকাশ-১৯৯৫

বৰগোহাঞি, হোমেন ; ***কিতাপ, মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সংগত,*** ষ্টুডেণ্ট ষ্টৰ্চ্, গুৱাহাটী, ২০০৮

বৰুৱা, ৰূপম ; ***প্ৰসংগ ঃ প্ৰকৃতি,*** নেচাৰ্চ বেকন, ধুবুৰী, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৭-২০০৮

বড়ো, ধৰণীধৰ ; ***কাজিৰঙাত ২৪ বছৰ,*** ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰ্চ্, গুৱাহাটী, ২০১৬

ৰাজখোৱা, অৰবিন্দ (সম্পা.) ; ***অসমীয়া প্ৰকৃতি-সাহিত্য আৰু সৌম্যদ্বীপ দত্ত,*** নৰ্থ লখিমপুৰ কলেজ প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ- ২০২১

শৰ্মা, মৃদুল ; ***গঁড়,*** আঁক-বাক, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ- ২০২২

ইংৰাজী গ্ৰন্থ ঃ

Doley, Dipak kumar & others (Ed.) ; ***Rethinking ecology and environment 21st Century perspectives,*** Akhand publishing house, Delhi, 2021

Glotfelty, Cheryll & Harold Fromm (Ed.) ; ***The Ecocriticism Reader : Landmarks in Literary Ecology***, U of Georgia, P. 1996

Love, Glen A. ; ***Practical ecocriticism : Literature, Biology and the environment,*** U of Virginia P, 2003

Slovic, Scott (Ed.) ; ***Ecocriticism:Big ideas and practical strategies***, The Orient Blackswan USA, 2018

অপ্ৰকাশিত গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

দাস, জ্যোতিষ্মান ; ***পৰিপাৰ্শ্ব-সমালোচনাৰ আধাৰত শুকুলা হাতীৰ খোজ আৰু ইয়াত এখন অৰণ্য আছিল উপন্যাসৰ অধ্যয়ন,*** এম.ফিল. ডিগ্ৰীৰ বাবে দাখিল কৰা গৱেষণা গ্ৰন্থ কণিকা, অসমীয়া বিভাগ; ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৯ বৰ্ষ।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

শূদ্রকৰ ব্যতিক্রমী সৃষ্টি ‘মৃচ্ছকটিকম’ ঃ এক অধ্যয়ন

দীপামণি বৈশ্য
গৱেষিকা, অসমীয়া বিভাগ
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয়
৯৮৬৪১৯৭৪৩১
deepamoni2baishya@gmail.com

ড° বিভূতি লোচন শর্মা
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ,
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয়
৯৪৩৫৩৬৪৫৭০
bls.nalbari@gmail.com

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

প্রাচীন ভাৰতীয় নাট্যসম্ভাৰলৈ লক্ষ্য কৰিলে আমি তাত নাটক শ্রেণীৰ দৃশ্যকাব্যৰ সংখ্যাগৰিষ্ঠতা দেখা পাওঁ। প্রাচীন নাট্যকাৰসকলৰ ভাৰতীয় দর্শকসকলৰ প্রতি থকা দায়িত্ব বা তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত ৰুচিৰ বাবেই হওক পূর্ব প্রস্তুত কাহিনী তথা চৰিত্রসমূহৰ সংযোগ বা বিয়োগ কৰি নাটক ৰচনা কৰাৰ প্রতি আগ্রহী আছিল যেন অনুমান কৰিব পাৰি। স্বাভাৱিকতে তেনেধৰণৰ নাটকসমূহৰ বিষয়বস্তু মহাকাব্য-ৰামায়ণ, মহাভাৰত, উপনিষদ বা বিভিন্ন পু�ৰাণসমূহৰ পৰাই অধিকসংখ্যক লোৱা হৈছিল। লৌকিক, কাল্পনিক বা সমসাময়িক সমাজ জীৱনক আধাৰ হিচাপে লৈ ৰচনা কৰা নাটকৰ সংখ্যা তেনেই তাকৰ। কিন্তু এইখিনিতে এটা কথা উল্লেখনীয় যে সংস্কৃত নাট্যসাহিত্যত সামাজিক বা বাস্তৱধর্মী নাটক বুলি কোনো প্রকাৰ ভিন্নতা নাই। প্রকৰণ শ্রেণীৰ ৰূপকবোৰে তাৰ লক্ষণসমূহ দাঙি ধৰে। কিন্তু ভাৰততে ধ্রুপদী নাটকৰ আর্বিভাবৰ পুর্বেও যে লোকসমাজত বিনোদনৰ মাধ্যম হিচাপে লোককথা বা লোকজীৱনৰ আধাৰত লোকনাট্যই এক বিশেষ ভূমিকা পালন কৰি আহিছে এয়া বর্ত্তমান সর্বজনবিদিত। বিভিন্ন প্রান্তীয় বৈসাদৃশ্য বা আঞ্চলিক ভেদাভেদ থকাৰ পিছতো লোকনাট্যসমূহে আভ্যন্তৰিন যোগসূত্রৰে এক সার্বজনীন চৰিত্র লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। সেয়ে নাট্যবিজ্ঞানী বা নাট্য তত্ত্ববিশাৰদসকলৰ অভিমতত এটা কথা প্রকাশ পাইছে যে তদানীন্তন মজবুত লোকনাট্য ধাৰাটোৰ ভেটিতেই ভাৰতৰ ‘নাট্যশাস্ত্র’ৰো সৃষ্টি হৈছিল আৰু সেইকথা পৰবর্ত্তীকালত ৰচিত সংস্কৃত নাটকবোৰতো গৃহীত হোৱা লৌকিক আচাৰ-অনুষ্ঠানৰ কথাটোৱে প্রতীয়মান কৰায়। লৌকিক অনুষ্ঠান তথা উৎসৱক প্রাধান্য দি ৰচনা কৰা ভৰভূতিৰ নাটকে তাৰ স্বাক্ষৰ বহন কৰে। আদ্যৰংগাচার্যই তেখেতৰ ‘ভাৰতীয় থিয়েটাৰ’ গ্রন্থত ভাৰতীয় ধ্রুপদী থিয়েটাৰ কেনেকৈ লোকসমাজৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক তথা অর্থনৈতিক জীৱনৰ লগত সংগতি ৰাখি ইয়াৰ বিকাশৰ পথ নির্মাণ কৰিছিল তাৰ এক বহল আলোচনা আগবঢ়াইছে। শূদ্রকৰ- ‘মৃচ্ছকটিকম’ নাটকতো লোকসমাজৰ এক প্রভাৱশালী চিত্রায়ন লক্ষনীয়। লোকনাট্য পৰম্পৰাৰ আধাৰতে শূদ্রকে ‘মৃচ্ছকটিকম’ৰ কাহিনী আৰু চৰিত্রবোৰ তুলি ধৰিছে।

০.০১ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ

সুবিশাল সংস্কৃত সাহিত্যত বহু গ্রন্থত ৰজা শূদ্রকৰ নাম পোৱা যায়। অৱশ্যে বিভিন্ন গ্রন্থত বিবিধ প্রসংগ আৰু কাল অনুসৰি শূদ্রক নামৰ উল্লেখ পোৱা যায় যদিও তাৰে

'মৃচ্ছকটিকম'ৰ ৰচক শূদ্রকৰ এক বিশেষ কৃতিত্ব আছে। শূদ্রকে এটি প্রণয়কাহিনীৰ মাজেৰে কিদৰে এখন চিৰাচৰিত সমাজ ব্যৱস্থাৰ পৰা আঁতৰি আহি প্রগতিশীল সমাজ ব্যৱস্থাৰ প্রতিষ্ঠাৰ আদর্শ বাবে নিজৰ নাট্যকর্মৰ মাজেৰে আগুৱাই লৈ যাব বিচাৰিছে আৰু তাৰ বাবে 'মৃচ্ছকটিকম' নাটকখনে কি কি তাৎপর্য বহন কৰিছে সেই দিশসমূহৰ আলোচনাই এই গৱেষণা পত্রখনিৰ উদ্দেশ্য।

০.০২ গৱেষণাৰ সমল ঃ

এই গৱেষণা পত্রখনি প্রস্তুত কৰোঁতে শূদ্রকৰ 'মৃচ্ছকটিকম' (থানেশ্বৰ শর্মা অনুদিত) মতিলাল বেনাৰসীদাস সম্পাদিত 'মৃচ্ছকটিকম' গ্রন্থদুখনক মুখ্যসমল হিচাপে লোৱা হৈছে। গৌণসমল হিচাপে সংস্কৃত নাটক তথা 'মৃচ্ছকটিকম' নাটকখনৰ সর্ম্পকে আলোচনা কৰা বিভিন্ন গ্রন্থ আৰু পত্রিকাৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.০৩ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

এই গৱেষণা পত্রখনি প্রস্তুত কৰোঁতে মুখ্যত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে যদিও বিষয়বস্তুটো স্পষ্টৰূপত প্রতিষ্ঠা কৰাৰ তাগিদাত প্রয়োজন সাপেক্ষে বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো আলম লোৱা হৈছে।

০.০৪ গৱেষণাৰ পৰিসৰ ঃ

সংস্কৃত নাট্যসাহিত্যৰ পৰিসৰ বহল। প্রতিগৰাকী সংস্কৃত নাট্যকাৰে বিভিন্ন দিশত বিভিন্ন আদর্শত নাটক ৰচনা কৰি গৈছে। কিন্তু এই ক্ষুদ্র গৱেষণা পত্রখনিৰ বাবে নাট্যকাৰ শূদ্রকৰ 'মৃচ্ছকটিকম' নাটকখনকহে নির্বাচন কৰা হৈছে। গতিকে এই গৱেষণা পত্রখনিৰ পৰিসৰ তথা আলোচনা শূদ্রকৰ এই নাটকখনৰ মাজতে সীমাবদ্ধ থাকিব।

২.০০ বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

'মৃচ্ছকটিকম' শূদ্রক ৰচিত দহটা অংকযুক্ত এখন নাটক। ইয়াক মুখ্যত ব্রাহ্মণ চাৰুদত্ত আৰু গণিকা বসন্তসেনাৰ প্রণয়কাহিনীক অৱলম্বন হিচাপে লৈ ৰচিত যদিও সম্পূর্ণ লোককথামূলক এই নাটকখনি সংস্কৃত নাট্যসাহিত্যৰ জগতত এক ব্যতিক্রমী সংযোজন। ৰজা-ৰাণী, বিদুষক, অমাত্য তথা ৰাজ্যসভাৰ চিৰাচৰিত কার্যপন্থা অতিক্রমি গৈ গণিকাকে আদি কৰি সর্বস্তৰৰ বিভিন্ন চৰিত্রৰ সমাগম ঘটাই শূদ্রকে সংস্কৃত নাট্যকাৰ হিচাপে এক ব্যতিক্রমী পদক্ষেপ লোৱা দেখা গৈছে। শূদ্রকে সমাজত নীচ বুলি প্রতিপন্ন হোৱা সম্প্রদায়ৰ লোকৰ প্রতিচ্ছবি তুলি ধৰাৰ প্রয়াস কৰিছে। সংস্কৃত নাটকৰ কলা-কুশলৰ পৰা কিছু আঁতৰি আহি সমাজৰ নীচ সম্প্রদায়ৰ প্রতিচ্ছবি নাটকখনত অংকন কৰি শূদ্রকে এক নীৰৱ বিপ্লৱৰ সূচনা কৰিছিল। তেওঁ সমকালিন সমাজখনৰ ৰীতি-নীতি, আচাৰ-আচৰণ, বিচাৰ-ব্যৱস্থা, জাতিগত প্রথা, ধনী-দুখীয়াৰ ব্যৱধান আদি নানা দিশৰ চিত্র দাঙি ধৰিছে অতি সাবলীলভাৱে। চণ্ডাল, গণিকা আদি বৃত্তিধাৰী চৰিত্রবোৰো শূদ্রৰ কাপেৰে জীৱন্ত ৰূপত ধৰা দিছে। শোষিত, অৱহেলিত, অধঃপতিত, লাঞ্ছিত তথা ঘৃণিত আর্তজনৰ অধিকাৰৰ বিষয়ত নাট্যকাৰে এক বিশেষ ভূমিকা পালন কৰিছে। উচ্চ-নীচ তথা ধনী-দুখীয়াৰ মাজত থকা ভেদাভেদ আঁতৰাই এক সমতা স্থাপনৰ বাবে তেওঁ এক মৌন আন্দোলনৰ সূচনা ব্যক্ত কৰিছে। এখন পৰম্পৰাগত সমাজ ব্যৱস্থাৰ বিপৰীতে এখন নতুন তথা প্রগতিশীল সমাজ গঢ়াৰ আদর্শৰে শূদ্রকে এই নাটকখন ৰচনা কৰিছে আৰু ইয়াতেই শূদ্রকৰ বিশেষত্ব প্রকাশৰ লগতে নতুন সমাজ গঢ়াৰ বাবে এক মুকবিপ্লৱৰ কমাৰশাল তৈয়াৰ কৰিছে।

তৎকালিন সমাজ-জীৱন, সামাজিক আচৰণ, জীৱিকা, সামাজিক ন্যায় ব্যৱস্থা, জাতিগত শ্রেণীগত বিভাজনৰ লগতে সমাজৰ অৱহেলিত নীচ মানুহৰ প্রতিচ্ছবি নাটকৰ মাধ্যমেৰে দর্শক-সমাজৰ সমুখত তুলিধৰাৰ প্রয়াস কৰিছে নাট্যকাৰ শূদ্রকে। চৌর্য, গণিকা, চণ্ডাল আদি বৃত্তিবোৰ 'মৃচ্ছকটিকম'ত জীৱন্ত হৈ উঠিছে। গণিকা বৃত্তিক স্বাভাৱিকতে সমাজত সকলোৱে ঘৃণাৰ দৃষ্টিৰে চায়, সমাজৰ নজৰত ই এক প্রকাৰ অপৰাধ। সমাজৰ পৰা এক নির্দিষ্ট দূৰত্বত অৱস্থান কৰিবলগীয়া হয় এই বৃত্তিত জড়িত প্রতিগৰাকী নাৰী। এক মুকলি অথচ দৃষ্টিৰ কাৰাগাৰত বন্দী এওঁলোকৰ জীৱন। এই জীৱিকাত থকা নাৰীসকলক অৱজ্ঞা, অৱহেলা বা ঘৃণাৰ চকুৰে চোৱাৰ সময়ত সমাজে পাহৰি যায় যে কোনো নাৰী জন্মতে গণিকা বা পতিতা হৈ জন্ম নলয় বা মনৰ হেঁপাহত এই বৃত্তিক আকোঁৱালি নলয়। পক্ষপাতযুক্ত সামাজিক প্রতিবন্ধকতা, পাৰিবাৰিক শিক্ষা তথা মূল্যবোধৰ অভাৱ আৰু বিশেষকৈ অর্থনৈতিক অৱস্থা ইত্যাদি নানা পৰিস্থিতিৰ বশৱর্তী হৈহে এগৰাকী নাৰীয়ে গণিকা বা পতিতাৰ দৰে কর্মক জীৱিকাৰূপে বাচি ল'ব লগা হয়। গণিকা বা পতিতাৰ জীৱন পৃথিৱীৰ কোনো নাৰীৰেই কাম্য নহয়। কিন্তু এগৰাকী নাৰী গণিকা হৈ উঠাৰ পৃষ্ঠভূমি বা কাহিনী যিয়েই নহওক কিয় সেয়া সমাজে বিচাৰ কৰি নাচায়, সমাজে কেতিয়াও মানি নলয় যে কোনো নাৰী স্বেচ্ছায় এই বৃত্তি গ্রহণ নকৰে, বৰং ল'ৰলৈ বাধ্য হয়। যি পৰিস্থিতিতে নাৰী এগৰাকীয়ে এই বৃত্তিক গ্রহণ নকৰক কিয় গণিকা হৈ উঠাৰ পিছতো কিন্তু এগৰাকী নাৰী 'নাৰী' হৈয়েই থাকে সমস্ত সত্বাৰে। সমাজৰ অইন নাৰীৰ দৰেই সমানেই

তেওঁলোকৰ আত্মাত, মনত নাৰীসূলভ সুকুমাৰ চিন্তা, দয়া-মমতা, প্ৰেম-ভালপোৱাৰ আকাংক্ষা সমানেই থাকে, পিছে সমাজে এই আকাংক্ষাবোৰক গ্ৰাহ্য নকৰে, মান্যতা নিদিয়ে বা মান্যতা দিব লাগে বুলি প্ৰয়োজন বোধ নকৰে। কাৰণ সমাজৰ চকুত তেওঁলোক নিন্দিত, চৰিত্ৰহীনা আৰু তুচ্ছ বুলি বিবেচিত। সমাজৰ দৃষ্টিত অস্বাভাৰিক বুলি বিবেচিত হোৱা পৃথিৱীখনৰ পৰা তেওঁলোকক স্বাভাৱিক পৃথিৱীলৈ উভতি অহাৰ বাট প্ৰশস্ত কৰি দিয়া উচিত। আমি সততে কৈ থকা মূলসূঁতি বোলা সূঁতিটোলৈ যদি কোনোবা গণিকা উভতি আহিব বিচাৰে তেন্তে তেওঁক অৱহেলা বা ঘৃণাৰ দৃষ্টিৰ পৰা তুলি লৈ স্বাগতম জনোৱাটো সমাজৰ প্ৰতিগৰাকী সদস্যৰে দায়িত্ব হোৱা উচিত। শূদ্ৰকে মৃচ্ছকটিকৰ বসন্তসেনাৰ কথাৰ মাজেৰে সমাজলৈ এই বাৰ্তাই দিব বিছাৰিছে। তেওঁ আঙুলিয়াই দিছে গণিকা হ'লেও তেওঁলোকো সমাজৰ অংগ আৰু অংশ।

গণিকা বসন্তসেনাৰ প্ৰেম-ভালপোৱা অকল চাৰুদত্তৰ মাজতে সীমাবদ্ধ হৈ থকা নাই, প্ৰেমিক চাৰুদত্তৰ পুত্ৰ ৰোহসেনৰ প্ৰতি বসন্তসেনাৰ মাতৃসুলভ প্ৰেমৰ প্ৰদৰ্শন অতি আদৰনীয়। চাৰুদত্তৰ প্ৰতি থকা প্ৰেম-ভালপোৱাৰ বাবে বসন্তসেনাই নিজৰ সৰ্বস্ব উৎসৰ্গ কৰি দিছিল আৰু কুলশ্ৰীস্বৰূপ এই আচৰণৰ বাবে ৰজা আৰ্য্যকৰৰ পৰা 'বধূ' স্বীকৃতি লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল।

যত্নেন সেবিতব্যঃ পুৰুষঃ কুশলীবান দৰি দ্রোপি।
শোভা হি পণস্ত্রীণাং সদৃশজনসমাশ্রয়ঃ কামঃ ।।
(মৃচ্ছকটিকম, ৮/৩৩)

(দৰিদ্ৰ হ'লেও সজ কুলত জন্মা চৰিত্ৰবান পুৰুষক যত্নৰে সেৱা কৰা উচিত। যোগ্যজনক আশ্ৰয় কৰা প্ৰেমবাসনা পণ্যস্ত্ৰীসকলৰ শোভা স্বৰূপ)

নাট্যকাৰ শূদ্ৰকে 'বসন্তসেনা'ৰ চৰিত্ৰটিক এগৰাকী কলাৰসিক, বুদ্ধিমতী, বিদুষী আৰু ধাৰ্মিক নাৰী হিচাপেও তুলি ধৰিছে। গণিকাৰ ঘৰত জন্মলাভ কৰিলেও বসন্তসেনাৰ গাত গণিকাসদৃশ কোনো অৱগুণৰ চাপ নাই। বৰং কুলশ্ৰী আৰু প্ৰকৃত প্ৰেমিকা এগৰাকীৰ গাত থাকিবলগীয়া সকলোগুণ বসন্তসেনাৰ গাত আছিল। চাৰুদত্তৰ দৰিদ্ৰতাৰ কথা জানিও চাৰুদত্তক সৰ্বান্তঃ কৰণে ভাল পায় বসন্তসেনাই, মাত্ৰ চাৰুদত্তৰ মানৱীয় গুণবোৰৰ বাবেহে। শকাৰে বহুবাৰ তেওঁক প্ৰলোভিত আৰু প্ৰৰোচিত কৰিব বিচাৰিও সফল হ'ব পৰা নাছিল। জুৱাত সমস্ত হেৰুৱাই ঋনগ্ৰস্থ হোৱা অচিনাকী সংবাহকক আশ্ৰয়দান, সংবাহকক ঋণমুক্ত কৰিবলৈ নিজৰ অলংকাৰ দি দিবলৈও কুণ্ঠাবোধ কৰা নাছিল বসন্তসেনাই। ইফালে চাৰুদত্তৰ ঘৰৰ পৰা মদনিকাৰ মুক্তিৰ বাবে সোণৰ ভাণ্ড চুৰ কৰি অনা শৰ্বিলক বসন্তসেনাৰ হাতত পুৰস্কৃতহে হ'ল, কাৰণ তাৰবাবে মদনিকাৰ মুক্তি সম্ভৱ হ'ল। আনফালে চাৰুদত্তৰ ঘৰত সোণৰ খেলা গাড়ী বিচাৰি কান্দি থকাবোহসেনৰ প্ৰতি বসন্তসেনাৰ অন্তৰ মাতৃত্বৰ প্ৰেমেৰে ভৰি উঠিছিল। তেওঁ নিজৰ সকলো অলংকাৰ খুলি সোণৰ খেলা গাড়ী সাজি ল'বলৈ ৰোহসেনৰ হাতত অৰ্পন কৰিছিল। চাৰুদত্তৰ ধৰ্মপত্নী 'ধূতা'কো তেওঁ ভগিনী বুলি সম্বোধন কৰিছিল, ঈৰ্ষাভাৱ প্ৰদৰ্শন কৰা নাই। ধূতাৰ বিপদৰ কথা জ্ঞাত হৈ বসন্তসেনা নিজেই চাৰুদত্তক ধূতাৰ ওচৰলৈ পঠিয়াই দিছিল। চাৰুদত্তৰ বিপদৰ বাতৰি পাই বসন্তসেনাৰ বধ্যস্থললৈ গৈ চাৰুদত্তৰ মুক্তিৰ পথ প্ৰশস্ত কৰিছিল।

ত্বদর্থ মেতদবিনিপাত্য মানং দেহংত্বয়ৈব প্রতিমোচিতং মে।
অহো! প্রভাৱঃ প্রিয়সঙ্গমস্য মৃতো পি কা নাম পুনর্ধ্রিয়তে।।
(মৃচ্ছকটিকম, ১০/৪৩)

(তোমাৰ কাৰণে বিনষ্ট হ'বলৈ যোৱা মোৰ এই শৰীৰ তুমিয়েই মুক্ত কৰিলা। এয়া প্ৰিয় মিলনৰ প্ৰভাৱ। মৰিও যে আকৌ জীৱন ধৰিছো)

শূদ্ৰকৰ মৃচ্ছকটিকত বসন্তসেনা এগৰাকী অনিন্দ্য সুন্দৰী, উদাৰ, সৰল, দয়াশীল লগতে এগৰাকী বিদুষী নাৰী, যি গণিকা হৈয়ো চৰিত্ৰৱতী ভাৰতীয় নাৰীৰ আদৰ্শ দাঙি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। গণিকাৰ ঘৰত জন্ম হ'লেও বসন্তসেনা সজগুণৰ অধিকাৰী এগৰাকী পূৰ্ণাঙ্গ নাৰী।

নাটকখনৰ ষষ্ঠ অংকত আমি দেখা পাওঁ নাটকখনৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ চাৰুদত্তৰ শিশুপুত্ৰ ৰোহসেনে প্ৰতিবেশী এগৰাকী ধনী বণিকৰ পুত্ৰৰ সোণৰ খেলা গাড়ীৰে খেলি আছিল, কিন্তু কিছুপৰ পিছত বণিকৰ পুত্ৰই আহি ৰোহসেনৰ হাতৰ পৰা লৈ যায়। ৰোহসেনে শিশু সুলভ খং-অভিমানত কান্দিবলৈ আৰম্ভ কৰে আৰু তাকো এখন সোণৰ গাড়ী লাগে বুলি জেদ কৰিবলৈ লয়। পিতৃ দৰিদ্ৰ চাৰুদত্তৰ অৰ্থনৈতিক অৱস্থা বুজিব পৰাকৈ ৰোহসেন পৰিপক্ক নাছিল। ৰোহসেনৰ কান্দোন দেখি দাসী মদনিকাই এখনি মাটিৰ গাড়ী আনি ৰোহসেনৰ হাতত তুলি দিয়ে. যদিও তাৰ শিশুমনে তাক গ্ৰহণ নকৰিলে বৰং দুগুণ জোৰেৰহে কান্দোনত ভাঙি পৰি সোণৰ গাড়ীৰ বাবে জেদ ধৰিলে। শিশুমনে বুজি নাপায় ধনীদুখীয়াৰ পাৰ্থক্য। বাস্তৱ পৰিস্থিতি অনুধাৱন কৰিব পৰাকৈ ৰোহসেনৰ শিশুমন অবুজন। শিশুৱে নিজৰ আকাংক্ষিত বস্তু নাপালে কন্দাকটা

কৰাটো স্বাভাৱিক প্ৰবৃত্তি। এই কথাটোৰ পৰা নাট্যকাৰে প্ৰদৰ্শন কৰিব বিচৰা তৎকালিন সমাজৰ অৰ্থনৈতিক অৱস্থাটো সমূখলৈ অহাৰ সমান্তৰালভাৱে ব্ৰাহ্মণৰ দৈন্যতাৰ চিত্ৰও সমূখলৈ আহিছে, যিটো কিছু পৰিমাণে আজিৰ সমাজতো বৰ্ত্তমান। অৱশ্যে নাটকখনৰ আৰম্ভণিতে উজ্জয়িনীক এখনি প্ৰতিপত্তিশালী, সমৃদ্ধিশালী নগৰৰূপে তুলি ধৰাৰ লগতে চাৰুদত্তৰ দৈন্যতাৰ কথাও উল্লেখ কৰিছে। প্ৰতিবেশী বণিকৰ পুত্ৰই খেলে সোণৰ খেলা গাড়ীৰে আৰু ব্ৰাহ্মণ পুত্ৰৰ হাতত মাটিৰ গাড়ী। এসময়ত ব্ৰাহ্মণ জাতি আছিল শ্ৰেষ্ঠ পৰিপূৰ্ণ জাতি। সমাজৰ বাকী তিনিটা জাতি ক্ষত্ৰিয়, বৈশ্য আৰু শূদ্ৰ আছিল তেওঁলোকৰ অধীন। সমাজৰ বহু কাম ব্ৰাহ্মণৰ দ্বাৰাই পৰিচালিত হৈছিল। কিন্তু একেখিনি কথাই যে চিৰকাল প্ৰযোজ্য নহয়, শূদ্ৰকে চাৰুদত্তৰ চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে তাকেই প্ৰমান কৰিছে। অইন সম্প্ৰদায়ৰ কথা বাদেই চাৰুদত্তৰ পূৰ্বপুৰুষসকলেও ব্যৱসায়-বাণিজ্যক জীৱিকা হিচাপে বাছি লৈছিল বা ল'বলৈ বাধ্য হৈছিল। শৰ্বিলকৰ চৰিত্ৰটোলৈ লক্ষ্য কৰিলে আমি দেখা পাও যে, শৰ্বিলকে চৰ্তুবেদী ব্ৰাহ্মণ পৰিয়ালৰ সন্তান হৈয়ো পূৰ্বপুৰুষৰ বৃত্তি পৰিহাৰ কৰি চৌৰ্যবৃত্তিত জড়িত হৈ পৰিছে। অৱশ্যে তেওঁ পেশাদাৰী চোৰ নাছিল, মদনিকাৰ প্ৰতি থকা প্ৰেমৰ বাবেই শৰ্বিলকে এই কুকৰ্ম কৰিবলগীয়া হৈছিল। কিন্তু এইখিনিতে উল্লেখনীয় যে চাৰুদত্ত প্ৰথম অৱস্থাৰ পৰা দৰিদ্ৰ নাছিল। তেওঁ বিনয়দত্ত পৌত্ৰ আৰু সাগৰ দত্তৰ দৰে প্ৰতিষ্ঠিত চহকী পৰিয়ালৰ পুত্ৰ আছিল। ব্যৱসায়-বাণিজ্যসূত্ৰে তেওঁৰ পূৰ্বপুৰুষসকলে প্ৰচুৰ ধনসম্পত্তি কৰি থৈ গৈছিল আৰু উত্তৰাধিকাৰীসূত্ৰে সেই ধন-সম্পত্তি চাৰুদত্তই লাভ কৰিছিল যদিও সেয়া তেওঁ সুৰক্ষিত কৰি ৰাখিব নোৱাৰিলে। অকৃপনভাৱে হেলাৰকে আত্মীয়স্বজন, বন্ধু-বান্ধৱক হিচাপ বৰ্হিভূতভাৱে দান কৰাৰ ফলত শেষলৈ চাৰুদত্তই নিজেই নিঃস্ব হ'বলগীয়া হৈছিল। অপৰিকল্পিতভাৱে অযথা ব্যয় তথা ভৱিষ্যত চেতনা নোহোৱাকৈ জীৱন-ধাৰণ কৰিলে যে দুৰ্বিসহ পৰিণতি ভুগিবলগীয়া হয় নাট্যকাৰে চাৰুদত্তৰ চৰিত্ৰৰ মাজেৰে তাৰো দৃষ্টান্ত দাঙি ধৰিছে।

বিচাৰ-ব্যবস্থাৰ এটি সুন্দৰ চিত্ৰ উপস্থাপিত হৈছে নাটকখনৰ নৱম অংকত। বিচৰালয়ক কোৱা হৈছিল অধিকৰণ মণ্ডপ আৰু তাৰ প্ৰধান বিচাৰপতি হৈছে আধিকাৰণিক বা অধিকৃত। বিচাৰালয়ত প্ৰধান বিচাৰপতিক সহায় কৰিবলৈ শ্ৰেষ্ঠী, কায়স্থ আদি একাধিক কৰ্মচাৰী নিযুক্ত কৰা হৈছিল। বিচাৰৰ ৰায়ত অপৰাধী হ'লে শাস্তি হিচাপে শূলত দিয়া হৈছিল। অৱশ্যে এই বিচাৰ ব্যবস্থা কিমানদূৰ নিৰপেক্ষ আৰু নিৰ্ভুল হৈছিল আমি সেয়া চাৰুদত্তৰ ক্ষেত্ৰত দেখা পাওঁ। সমগ্ৰ বিচাৰ ব্যবস্থাত ৰজাই একছত্ৰী ক্ষমতাৰ অধিকাৰী হৈছিল। ফলস্বৰূপে বিচাৰৰ ৰায়ো পক্ষপাতযুক্তয়ে হৈছিল এই বিষয়ত সন্দেশৰ অৱকাশ যথেষ্ঠ। ৰজাৰ ভয়ত কোনেও মুখ খুলিবলৈ সাহস কৰা নাছিল। ৰায় গ্ৰহণৰ ক্ষেত্ৰত সকলো সহ্য কৰি যোৱাৰ বাহিৰে প্ৰজাৰ হাতত কোনো বিকল্প ব্যৱস্থা নাছিল। নাট্যকাৰ শূদ্ৰকে পক্ষপাতযুক্ত এই ৰাজতন্ত্ৰৰ আৰু তাৰ বিচাৰ ব্যবস্থাৰ অৱসান বিচাৰিছিল। হয়তো অকল অৱসানেই নহয় পৰম্পৰাগত এইধৰণৰ পক্ষপাতযুক্ত ৰাজতন্ত্ৰৰ পৰিবৰ্তে প্ৰজাহিতৈষী নিৰপেক্ষ বিচাৰ-ব্যবস্থাৰ প্ৰতিষ্ঠাৰ বিপ্লব হোৱাটো বিচাৰিছিল। নাটকৰ প্ৰথম অংকতে নাট্যকাৰ শূদ্ৰকে সন্ধিয়াৰ এটি চিত্ৰত দেখুৱাইছিল য'ত উজ্জয়িনীৰ ৰাজপথত বিট, শকাৰ প্ৰভৃত্তি দুৰাচাৰী কিছুমানে নানাধৰণৰ অপৰাধমূলক ক্ৰিয়া-কাণ্ডত লিপ্ত হৈছিল। ফলত সাধাৰণ প্ৰজাৰ বাবে ৰাজপথ সুৰক্ষিত নাছিল, বৰং আতংকৰ কাৰণ হৈ পৰিছিল। ৰজাৰ নিকটমানুহ বুলি সেই অপৰাধীবোৰ সাৰি গৈছিল নানা ধৰণৰ অন্যায় কাম কৰাৰ পিছতো, আনকি সেই অপৰাধীবোৰক শাসন বা শাস্তি দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত ৰজাও যেন কোনোবাখিনিত অপাৰগ হৈ পৰিছিল। এইঅপৰাধপ্ৰৱন শকাৰৰ হস্তক্ষেপত চাৰুদত্ত ৰজাৰ সন্মুখত দোষী সাবস্ত্য হ'বলগীয়া হৈছিল। নাট্যকাৰে এই অন্যায়-অবিচাৰৰ অৱসান বিচাৰিছিল। এটা সময়ত পক্ষপাতিত্বসে পূৰ্ণ বিচাৰ-ব্যৱস্থাৰ প্ৰতি সাধাৰণ প্ৰজাৰ যে ক্ষোভ উজাৰিত হৈছিল তাৰ প্ৰমান বধ্য ভূমিত চণ্ডাল আৰু ৰোহসেনৰ কথোপকথনৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছিল।

চাৰুদত্ত সৎ মানুহ, তেওঁৰ যথেষ্ঠ সুনামো আছে। চাৰুদত্তই কেতিয়াও কাকো হত্যা কৰিব নোৱাৰে- এনেধৰণৰ কথাবতৰা সকলোতে আলোচনা হৈ আছিল, কিন্তু এয়া কোনেও মুকলিকৈ প্ৰকাশ কৰিব নোৱাৰে। এনে দুঃসাহস যেন কোনেও কৰিব নোৱাৰে। এই পক্ষপাতযুক্ত বিচাৰব্যবস্থাই জনসাধাৰণক তলে তলে ক্ষুদ্ধ কৰি তুলিছিল তাৰ প্ৰমান হিচাপে আমি বধ্যভূমিত চণ্ডাল আৰু ৰোহসেনৰ কথোপকথনখিনিক ল'ব পাৰে।

দশম অংকত দেখা পাওঁ, বধ্যভূমিৰ ফালে দুজন চণ্ডালে চাৰুদত্তৰ টানি লৈ গৈ আছে আৰু তেনেকুৱাতে চাৰুদত্তৰ পুত্ৰ ৰোহসেন উৎভ্ৰান্তৰ দৰে দৌৰি আহি ৰক্ষীদ্বয়কে 'চণ্ডাল' সম্বোধন কৰি কৈছে-'অৰে চণ্ডালৌ, কূত্ৰ মম পিতৰং নয়থঃ' অৰ্থাৎ ও চণ্ডাল মোৰে পিতৃক তোমালোকে কলৈ লৈ গৈ আছা? উত্তৰত তেওঁলোকে ৰোহসেনক কৈছে-

ণ হু অম্হে চাণ্ডালা চাণ্ডালকূলম্মি জাদপুব্বা বি।
জে অহিভবতি সাধুং তে পাবা তে অ চাণ্ডালা।।
(মৃচ্ছকটিকম, ১০/২২)

(অহে বালক, আমি চণ্ডালৰ কূলত জন্ম লৈছো যদিও আমি আচৰণত চণ্ডাল নহওঁ, কিন্তু যিসকলে সজ্জনক হত্যা কৰে, সাধুলোকক উৎপীড়ন কৰে সেই পাপীসকলহে প্ৰকৃত চণ্ডাল) চণ্ডালসকলৰ এই শ্লেষসূচক বক্তব্য প্ৰকৃততে ৰজা আৰু ৰজাৰ অনুচৰসকললৈহে পোনাইছে সেই কথা স্পষ্টকৈ বুজিব পাৰি। ৰজাৰ অধীনৰ বেতনভোগী কৰ্মচাৰী এয়াই তেওঁলোকৰ জীৱিকা, গতিকে হাত-ভৰি বন্ধা। তেওঁলোকে লগতে ইয়াকো কৈছে যে চাৰুদত্তৰ প্ৰতি তেওঁলোকৰ কোনো বিদ্বেষ বা খং নাই, চাৰুদত্তৰ প্ৰতি তেওঁলোকে অন্যায়ো কৰা নাই, মাত্ৰ ৰজাৰ নিৰ্দেশত তেওঁলোকে কৰ্তব্য পালন কৰি গৈছে। কাৰণ ভিতৰি ভিতৰি তেওঁলোকো অনিয়ন্ত্ৰিত পক্ষপাতিত্বৰে পূৰ্ণ এই বিচাৰ-ব্যৱস্থাক লৈ অকনো সন্তুষ্ট নহয়। উজ্জয়িনীৰ অইন প্ৰজাৰ দৰে তেওঁলোকেও ইয়াৰ পৰা পৰিত্ৰান বিচাৰে। আনকি অসাধু দুষ্টলোকেও ইয়াৰ অৱসান কামনা কৰিছিল। কাৰণ শকাৰৰ অনুচৰ বিট চিৰদিন অসাধুৰ সংগী হ'লেও পৰৱৰ্তী সময়ত বিটেও শকাৰৰ বিৰোধীতা কৰিছে। শকাৰৰ গাড়ীচালকগৰাকীয়ো বহুবাৰ শকাৰৰ বিৰুদ্ধে গৈছে, আদেশ অমান্য কৰিছে, বিদ্ৰোহ কৰিছে। স্থাবৰক নামৰ গাড়ীচালক গৰাকীয়ে শকাৰৰ মৃত্যু পৰ্যন্ত কামনা কৰা দেখা গৈছে। মুঠতে সকলোৱে যেন এক বিবেক দংশনত ভুগিছে। আমি নাটকখনত যদিও ৰজা পালকক প্ৰত্যক্ষ ৰূপত নাপাওঁ, কিন্তু ৰজা পালকৰ অনুচৰ, বশতীয়া কৰ্মচাৰীসকলক প্ৰত্যক্ষ কৰিছোঁ। নাটকখনত শকাৰৰ উপস্থিতিয়ে ৰজাক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে। প্ৰজা-জনসাধাৰনে শকাৰৰ উদ্ধতালি ৰজাৰ প্ৰশ্ৰয়তেই হৈছে বুলি বুজি উঠিছে। যাৰ পৰিণতিত ৰজা পালকৰ বিৰুদ্ধে প্ৰজাসাধাৰণৰ মাজত সৃষ্টি হৈছিল প্ৰচণ্ড ক্ষোভ আৰু অসন্তুষ্টিৰ।

ন্যায়ালয় হ'ল প্ৰকৃত ন্যায়ৰ আলয়, য'ত ন্যায় অৱশ্যসম্ভাৰী। কিন্তু ন্যায়ালয়েই যেতিয়া অন্যায়ৰ কোবত নীৰৱে থাকিবলগীয়া হয়, নিশ্চুপ হৈ সকলো সহ্য কৰিবলগীয়া হয় তেন্তে তাত ন্যায় কিদৰে সম্ভৱ? কিন্তু নাটকীয় উপস্থাপনত তাতেই এক নীৰৱ বিপ্লৱৰ মাজেৰে আচল সত্য উদ্‌ঘাটন কৰিব বিচৰা হৈছে। লগতে ধৰ্ম প্ৰতিষ্ঠাৰো আয়োজন কৰা হৈছে। নাট্যকাৰৰ এই উদ্দেশ্য সফল কৰিবৰ বাবেই মঞ্চত বসন্তসেনাৰ আবিৰ্ভাৱ হৈছে আৰু বসন্তসেনাই প্ৰমান কৰিছে যে চাৰুদত্তই কাকো হত্যা কৰা নাই, চাৰুদত্ত নিৰ্দোষ আৰু তাতেই শকাৰৰ সকলো কপটতা, চল-চাতুৰী উৎঘাটন হৈছে লগতে ৰজাৰ বিচাৰৰ অসাৰতা প্ৰতিপন্ন হৈছে। ইয়াতে ৰজা পালক সিংহাসনচ্যুচ হৈছে তথা ৰজাৰ হত্যাও হৈছে। এয়াযেন জনসাধাৰণৰ মনত ইমানদিনে লুকাই থকা বিপ্লবৰে বহিঃপ্ৰকাশ ঘটিছে। প্ৰজাসাধাৰনে ৰজা আৰ্য্যকৰ সিংহাসনত বহাটো বিচাৰিছিল, সেয়া সম্ভৱ হ'ল। ইয়াতে আমি ক'ব পাৰো ব্ৰাহ্মণ্যধৰ্মৰ সাধান্যত প্ৰতিষ্ঠিত সমাজত এজন গোপসন্তানে ৰজা হৈছে, ইয়াৰ ওপৰিও যি বৌদ্ধ সৈন্নাসীৰ দৰ্শন অপবিত্ৰ বুলি ভবা হৈছিল, সেই বৌদ্ধ সৈন্নাসীকে বৌদ্ধমঠৰ অধিপতি পাতি সমাজৰ চিৰাচৰিত প্ৰথাক শূদ্ৰক উলংঘন কৰিছে আৰু এখন নতুন সমাজ গঢ়াৰ বাবে উদ্যত হৈছে। এয়া শূদ্ৰকৰ বিশেষত্ব আৰু সামাজিক ৰূপান্তৰ তথা বৈপ্লৱিক সূচনা। নাটকখনৰ শেষত গণিকা বসন্তসেনাৰ কূলবধূৰ মৰ্যদা প্ৰদান কৰা, দাসী মদনিকা ব্ৰাহ্মণপত্নীৰূপত আকোৱালি লোৱাও যেন এক বিপ্লৱৰ আখৰা। বসন্তসেনা আৰু চাৰুদত্তৰ দৰেই মদনিকা আৰু শৰ্বিলকৰ প্ৰণয়কাহিনী জটিল। মদনিকা গণিকা বসন্তসেনাৰ দাসী আনহাতে শৰ্বিলক উচ্চবংশজাত বাহ্মণ। গতিকে জাত-পাত তীব্ৰ বিচাৰ থকা এখন সমাজত মদনিকা আৰু শৰ্বিলক প্ৰেম আৰু মিলন সহজ নাছিল। জাত-পাতৰ বৈষম্য ইয়াত অহাটো স্বাভাৱিক বা আহিবই। কিন্তু ইয়াত নতুন কথাটো হ'ল মদনিকাৰ শৰ্বিলক হাতত তুলি দিয়াটো। য'ত বিপ্লব থাকিব তাত নতুনত্ব থাকিবই শূদ্ৰক ইয়াতো এক নতুনৰ নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছে। শৰ্বিলক আৰু মদনিকাই সমাজৰ বাধানিষেধক আওকাণ কৰি দুয়ো দুয়োকে আকোৱালি লৈছে। আৰু ইয়াৰ মাজেৰে শূদ্ৰকৰ বাঞ্ছা পূৰণ হৈছে। সমাজৰ পৰা উচ্চ-নীচ জাতপাতৰ বিভেদ, ধনী-দুখীয়াৰ বিভেদ আতঁৰাই এটা সাম্যৰ সমাজ গঢ়াৰ বাঞ্ছা।

নাট্যশাস্ত্ৰৰ মতে, সাহিত্যদৰ্পন তথা বিশ্বনাথৰ মতে মঞ্চত ৰাষ্ট্ৰবিপ্লব, ৰজাৰ বিৰুদ্ধে বিপ্লব, যুদ্ধ বধ বা ৰাজতন্ত্ৰৰ বিৰুদ্ধাচৰণ কৰা নিষেধ। কাৰণ নাটক যিহেতুহে এক সক্ৰিয় তথা জনপ্ৰিয় জনমাধ্যম গতিকে তাত এইবোৰ মঞ্চস্থ কৰিলে ৰাজতন্ত্ৰৰ বাবে এয়া হানিকাৰক হৈ উঠিব পাৰে। কাৰণ ইয়াৰ পৰাই প্ৰজাসাধাৰণে প্ৰেৰণা লাভ কৰিব পাৰে, বিবেক জাগ্ৰত হ'ব পাৰে। মনুৰ মতে ৰজাই য'ত দেৱতা, তাত দেৱতাৰ বিৰুদ্ধাচৰণ কৰা দৃশ্য থাকিব নালাগে, দেবতাৰ বিৰুদ্ধাচৰণ দেখুৱাই প্ৰজাক উচটনি দিয়া দৃশ্য উপস্থাপিত হ'ব নোৱাৰে। প্ৰাচীন কালৰ বিশেষকৈ সংস্কৃত নাট্যকাৰসকলৰ প্ৰায়ভাগেই এয়া মানি চলিছে যদিও দুই একতাৰ ব্যতিক্ৰম নোহোৱা নহয়। নাট্যকাৰ ভাসো 'উৰুভংগম' নাটকত দুৰ্যোধনক বধ কৰা

দেখুৱাইছে। কিন্তু শূদ্রকে যিধৰণে 'মৃচ্ছকটিকম'ত ৰাজবিদ্রোহ দেখুৱাইছে, ৰজাৰ হত্যা দেখুৱাইছে তেনেধৰনে অইনকোনো সংস্কৃত নাট্যকাৰে দেখুওৱা নাই। ন্যায়পালিকাত ন্যায় প্রতিষ্ঠাৰ বাবে গীতাৰ দৰে শাস্ত্রত ঘটনাক্রম যিদৰে উপস্থাপিত হৈছে, শূদ্রকেও তেনেধৰণে ন্যায় প্রতিষ্ঠা কৰিব বিচাৰিছে। ৰজাক কোনো কাৰণ নোহোৱাকৈ মাত্র হিংসাৰ দাবানলত দগ্ধ হৈ ৰজাত হত্যা কৰা হোৱা নাই মৃচ্ছকটিকমত। প্রজাৰ কল্যাণৰ বাবে যদি ৰজাৰ মৃত্যু, বধ বা বিনাশ কাম্য হয় তেন্তে সেয়া কেতিয়াও অনুচিত হ'ব নোৱাৰে, তাকেই শূদ্রকে প্রমান কৰিছে নাটকখনত। নাট্যবিজ্ঞানীয়ে বান্ধি দিয়া নীতি-নিয়ম উলংঘা কৰি হ'লেও শূদ্রকে প্রজাহিতৰ কথা কৈছে। তেওঁয়ে অকল ধর্ম, সমাজ, ৰাষ্ট্রৰ চিৰাচৰিত প্রথাৰ বিপৰীতে বিপ্লব প্রদর্শন কৰিছে, তেনে নহয় নাট্যশাস্ত্রকাৰে বান্ধি দিয়া নাট্যবিধানৰ লক্ষণৰেখা অতিক্রমিও সমাজ সংস্কাৰৰ বার্তা দিছে। এক ব্যতিক্রমী নতুনৰ অভূত্থান ঘটাইছে শূদ্রকে তেওঁৰ এই ব্যতিক্রমী সৃষ্টি 'মৃচ্ছকটিকম'ত।

উপসংহাৰ ঃ

সংস্কৃত নাট্যসাহিত্যৰ ইতিহাসত কালিদাস অনন্য আৰু একক। কালিদাসৰ কৃতি বিশ্ব-বিশ্রুত, বহু-চর্চিত আৰু জনপ্রিয়। কিন্তু কালিদাসৰ পৰিপ্রেক্ষিতত নাট্যকাৰ শূদ্রকৰ অধ্যয়ন তথা চর্চা যেন পৰিমাণত কিছুকম আৰু উপেক্ষিত হৈ আছে। ক'ৰবাত শূদ্রকৰ অধ্যয়ন স্থৰিৰ হৈছে যেনো অনুভৱ হয়। কালিদাসৰ দৰে বিভিন্ন দৃষ্টিকোণৰে শূদ্রকৰ নাটক আলোচিত হোৱা নাই। 'মৃচ্ছকটিকম' নাটকখন বিশ্বৰ যিকোনো নাট্যসাহিত্যৰ মতে ফেৰ মাৰিব পৰা আৰু সমমর্যদা পাব পৰা এখন উৎকৃষ্ট নাটক।

'মৃচ্ছকটিকম' নাটকখনিৰ কথাবস্তুত দুটা ভাগ আছে। প্রথম অংকৰ পৰা চতুর্থ অংকলৈ চাৰুদত্ত আৰু বসন্তসেনাৰ প্রেম আৰু পঞ্চম অংকৰ পৰা দশম অংকলৈ গোপালদাৰক আর্য্যকৰ ৰাজ্যলাভৰ কথা বর্ণিত হৈছে। ভাসৰ লৌকিক কথা আধাৰিত নাটক 'চাৰুদত্ত' আৰু 'মৃচ্ছকটিকম'ৰ প্রথম কথাবস্তুৰ সাদৃশ্য লক্ষনীয়। বহু পণ্ডিতে ভাসৰ চাৰুদত্তৰ আধাৰতে মৃচ্ছকটিক ৰচিত হৈছে বুলি ইতিমধ্যে মন্তব্য আগবঢ়াইছে।

সূত্রধাৰ আৰু নটীৰ সংবাদৰ মাজেৰে নাটকীয় কার্যৰ শুভ-আৰম্ভণি হোৱা এই নাট্যকৃতিৰ প্রথম চাৰিটা অংকৰ কথাভাগ ভাসৰ চাৰুদত্তৰ আৰু মৃচ্ছকটিকমৰ একেই। ভাসৰ চাৰুদত্তত নাটকৰ অন্তিম অংকত গণিকা বসন্তসেনাই চেটী মদনিকাৰ সজ্জলকৰে সৈতে বিদায় জনাই নিজে অলংকাৰ পৰিধান কৰি, প্রসাধন লৈ চাৰুদত্তৰ সৈতে অভিসাৰ কৰিবৰ নিমিত্তে প্রতিকূল বাতাৱৰণৰ মাজতো যাত্রা আৰম্ভ কৰে আৰু ইয়াতে নাটকৰ সমাপ্তি ঘটে। কিন্তু শূদ্রকৰ মৃচ্ছকটিকতইয়াতে অন্ত পৰা নাই। প্রথম চাৰিটা অংকৰ এই একেখিনি কথাবস্তু হ'লেও শূদ্রকে মৃচ্ছকটিকত অধিক আলংকাৰিক আৰু বিস্তাৰিত ৰূপত অংকণ কৰিছে আৰু তাৰ সৈতে ৰাষ্ট্রবিপ্লৱ, ৰাজনৈতিক পট পৰিবর্ত্তনৰ কথা যোগ কৰিছে। ইপিনে আর্যকৰ আৰু পালকৰ উল্লেখ ভাসৰ চাৰুদত্তত নাই। শূদ্রকে চাৰুদত্ত আৰু বসন্তসেনাৰ প্রেমকথাৰ সৈতে আর্য্যকৰ আৰু পালকৰ বৃত্তান্ত সাৱলীলভাৱে খাপ-খুৱাই দিছে।

শূদ্রকে ভাস ৰচিত 'চাৰুদত্ত'ৰ কথাবস্তুকে 'মৃচ্ছকটিকম'ৰ আধাৰ হিচাপে লৈছে যদিও শূদ্রকে নিজস্ব মৌলিকতাৰে গোটেই ঘটনাক্রমক এক গতিশীল ৰূপ প্রদান কৰিছে। নাটকখনত উপস্থাপিত ৰাজনৈতিক পৰিস্থিতিৰ লগত সামাজিক পৰিস্থিতিক মনোৰমৰূপত সংযোজন কৰি এক নতুন প্রতিষ্ঠাৰ বৈপ্লবিক চেতনাৰে নাটকখনত অভিনৱ ৰূপত আগবঢ়াই থৈ গৈছে নাট্যকাৰ শূদ্রকে।❑

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

মূখ্যসমল ঃ

ত্রিপাঠী, ৰমাশংকৰ ঃ মৃচ্ছকটিকম (সম্পা) মতিলাল বেনাৰসীদাস, দিল্লী, ৬ষ্ঠ সংস্কৰন, ১৯৯৯ ।

শর্মা, থানেশ্বৰ ঃ মৃচ্ছকটিকম (অসমীয়া অনুবাদ), চন্দ্র প্রকাশ, গুৱাহাটী, চতুর্থ প্রকাশ, ২০১০ চন।

গৌণসমল ঃ

বন্দোপাধ্যায়, ধীৰেন্দ্রনাথ ঃ সংস্কৃত সাহিত্যেৰ ইতিহাস, পশ্চিমবংগ ৰাজ্য পুস্তক পৰিষদ, কলকাতা, ১৯৮৮

গোস্বামী, মালিনী ঃ মৃচ্ছকটিকমীমাংসা, চন্দ্র প্রকাশ, গুৱাহাটী, ৬ষ্ঠ প্রকাশ, ২০১৭

গোস্বামী, হৰমোহন দেৱ ঃ সংস্কৃত সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, জ্যোতিপ্রকাশন, গুৱাহাটী, ৭ম প্রকাশ, ২০১৮

মুখোপাধ্যায়, সচ্চিদানন্দ ঃ ভাৰতীয় নাট্যবেদ ও বাংলা নাটক, সংস্কৃত পুস্তক ভাণ্ডাৰ, কলকাতা ১৯৮৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

‘জছনাৰ ঝিটাছ’ উপন্যাসত নাৰীৰ পৰিচয়ৰ সংকট আৰু দলিত নাৰীবাদ

ড° মন্মী বৰুৱা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ,
ডি.হ.সু. কলেজ মহাদ্যিালয়
৯৮৫৯১২২২১০
mbaruah96@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

প্রান্তীয় নিম্নবর্গৰ নাৰীসকলে নিজৰ অধিকাৰ আৰু সমতাৰ বাবে সদায়েই সংগ্রাম কৰি আহিব লগা হৈছে। এওঁলোক সামাজিক, অর্থনৈতিক আৰু সাংস্কৃতিক ক্ষেত্রত সমাজৰ মূলধাৰাৰ পৰা বিচ্ছিন্ন। একবিংশ শতিকাৰ উন্নত সভ্যতাৰ কোনো পোহৰেই এইসকল নাৰীক স্পর্শ কৰিব পৰা নাই। ঔপনিৱেশিক কালৰেপৰাই নাৰীৰ ওপৰত চলি অহা অৱদমন, শোষণ,যৌন শোষণ আদিয়ে নাৰীৰ স্থান সমাজত ক্রমাৎ অৱনমিত কৰি আহিছে। এনে ঔপনিৱেশিক যৌন শোষণ, অৱদমন আৰু বিশ্বাসঘাতকতাৰ বলি হোৱা এটি চৰিত্র হ’ল দুর্গী ভূমিজ। অসমৰ দলিত মহিলা শ্বহীদ দুর্গী ভূমিজ, দুর্গীৰ পৰিচয়ৰ সংকট, মানসিক সংঘাত, মনোঘাত, ক্রমাৎ আত্ম সচেতন হৈ পৰা দুর্গী, ঔপনিৱেশিক শাসকৰ বিৰুদ্ধে দুর্গীৰ সংগ্রাম আৰু দুর্গীৰ গোপন নিধনৰ কাহিনী অৱপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ ‘জছনাৰ ঝিটাছ’ উপন্যাসত তুলি ধৰা হৈছে। প্রস্তাৱিত আলোচনা পত্রত এই দিশবোৰৰ উপৰিও সমাজত নাৰীৰ স্থিতি, দলিত সমাজৰ প্রতিনিধি স্ব ৰূপ দুর্গী ভূমিজৰ যুঁজখনৰ মাজেৰে প্রকাশিত দলিত নাৰীবাদৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰা হৈছে।

বীজ শব্দঃ প্রান্তীয় নাৰী, আত্ম সচেতনতা, দলিত নাৰীবাদ।

১.০ অৱতৰণিকা

১.১ বিষয়ৰ পৰিচয়

বিদ্রিছৰ বিৰোধীতা কৰাৰ বাবে ইতিহাসৰ পাতত ছয়াঁময়াকৈ দৃশমান হোৱা দলিত শ্রেণীৰ চাহ জনগোষ্ঠীয় নাৰী দুর্গী ভূমিজক পূর্ণ ৰূপত আৱিস্কাৰ কৰাৰ প্রচেষ্টাৰে সৃষ্টি কৰা হৈছে ‘জছনাৰ ঝিটাছ’ উপন্যাসখন। উপন্যাস খনত চাহ জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ পৰিচয়ৰ প্রশ্নটো সঘনাই উত্থাপন কৰা হৈছে। বিশেষকৈ উপন্যাসখনৰ এটি প্রধান চৰিত্র চাহ জনগোষ্ঠীয় নাৰী দুর্গীয়ে নিজৰ পৰিচয়ক লৈ সন্দিহান হৈ পৰিছে। চাহ বাগিছাৰ আন নাৰীৰ দৰে সাধাৰণ নাৰী হৈও বাগিছাৰ বগা চাহাবৰ উ পপত্নী হিচাপে থাকি সেই চাহাবৰ সন্তানৰ মাতৃ হোৱাৰ পিছতো চাহাবে এৰি যেতিয়া নিজৰ দেশলৈ আঁতৰি যায়, তেতিয়া দুর্গীৰ পৰিচয় কি ? চাহাবৰ মেম নে চাহ জনগোষ্ঠীয় নাৰী। জীৱনৰ ভিন্ন পৰিস্থিতিয়ে দুর্গীক ক্রমাৎ আত্মসচেতন কৰি তুলিছে। এই সচেতনতাই আন এগৰাকী দুর্গীৰ জন্ম দিছে। এই দুর্গীয়ে বগা চাহাবসকলে চাহ জনগোষ্ঠীয় সমাজৰ ওপৰত চলাই অহা শোষণ আৰু অৱদমনৰ বিৰুদ্ধে যুঁজিবলৈ

অনুপ্রাণিত হৈছে। দলিত সমাজৰ নাৰী দুৰ্গীৰ এই যুঁজৰ মাজতেই প্ৰকাশিত হৈছে দলিত নাৰীবাদ। একবিংশ শতিকাত বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তি বিদ্যাৰ উন্নতিয়ে শীৰ্ষত উপণীত হোৱাৰ সময়তো চাহ বাগিছাৰ নাৰীৰ অৱস্থাৰ পৰিৱৰ্তন হোৱা দেখা পোৱা নাযায়।

সেয়েহে প্ৰস্তাৱিত আলোচনা পত্ৰত চাহ জনগোষ্ঠীয় নাৰীৰ স্থান আৰু অৱদমনৰ বিৰুদ্ধে নাৰীৰ প্ৰতিবাদৰ বিশ্লেষণ আগৰঢ়াবলৈ যত্ন কৰা হ'ব। লগতে দলিত নাৰীবাদৰ বিষয়েও আলোচনা কৰা হ'ব।

১.২ অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ

* এই অধ্যয়নৰ জৰিয়তে দলিত নাৰীবাদ সম্পৰ্কে এত সম্যক ধাৰণা লাভ কৰিব পৰা যাব।

* 'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসত চিত্ৰিত নাৰী চৰিত্ৰৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে প্ৰান্তীয় নাৰীৰ ওপৰত চলা সমাজৰ অবিচাৰৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ সাৰ্থক ৰূপত দাঙি ধৰিব পৰা যাব।

* এই অধ্যয়নত প্ৰান্তীয় নাৰীৰ পৰিচয়ৰ সংকট আৰু ক্ৰমাৎ গঢ় লৈ উঠা আত্মসচেতনতাৰ এখন ছবিও স্পষ্ট হৈ উঠিব।

১.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ

প্ৰস্তাৱিত অধ্যয়ন পদ্ধতি মূলত বিশ্লেষণাত্মক হ'ব। নাৰীৰ মনোসামাজিক দিশৰ অধ্যয়ন কৰিবলৈ যাওঁতে এইক্ষেত্ৰত অধ্যয়ন পদ্ধতি মনোবিশ্লেষণধৰ্মী হ'ব। অসমীয়া সাহিত্যৰ উপন্যাসৰ ধাৰাটোত অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ নাম অন্যতম। তেওঁৰ কেইবাখনো উপন্যাসৰ ভিতৰত অধ্যয়নৰ সুবিধাৰ বাবে প্ৰস্তাৱিত আলোচনা পত্ৰত কেৱল 'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসখন নিৰ্বাচন কৰি লোৱা হৈছে।

১.৪ পূৰ্বকৃত অধ্যয়নৰ সমীক্ষা ঃ

অসমীয়া সাহিত্যত বৰ্তমানলৈকে ***'জছনাৰ ঝিটাছ'*** **উপন্যাসত নাৰীৰ পৰিচয়ৰ সংকট আৰু দলিত নাৰীবাদ** শীৰ্ষক বিষয়ে অতি কম সংখ্যক আলোচনা বা গৱেষণা হোৱা দেখা যায়। অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ উপন্যাসৰ বিষয়ত ইতিমধ্যে যথেষ্ট অধ্যয়ন বিশ্লেষণ হৈছে। তাৰ তথ্য দাঙি ধৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ল -

অসমীয়া উপন্যাসত নাৰীবাদ ঃ গোৰিন্দপ্ৰসাদ শৰ্মা

Gender Violence and the word : A Reading of the Cultural Dynaics in

Arupa Patangia Kalita's Fiction : Deepsikha Saharia

অসমীয়া লেখিকাৰ উপন্যাস ঃ এক সমাজতাত্ত্বিক অধ্যয়ন (পূৰৰী বৰমুদৈ আৰু অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ উপন্যাসৰ বিশেষ উল্লিখনসহ) ঃ ভৱানী দাস

কিন্তু 'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসৰ বিষয়ে বিশেষ আলোচনা হোৱা পৰিলক্ষিত হোৱা দেখা নাযায়।

১.৫ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

নাৰী এক মানৱীয় সত্বা , এক ৰহস্যময় শক্তি। যি শক্তি যুগে যুগে বন্দিত হৈ আহিছে বিভিন্ন ৰূপত। কিন্তু যিখন ভাৰতবৰ্ষত নাৰীক পূজা কৰা হয়, সেইখন ভাৰতবৰ্ষতেই নাৰীয়ে বাৰে বাৰে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্হাৰ দ্বাৰা লাঞ্ছিত হৈ আহিছে। অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসত প্ৰান্তীয় নাৰীৰ পৰম্পৰাগত , প্ৰতিবাদী ৰূপৰ চিত্ৰণ হোৱাৰ উপৰিও নাৰীৰ ওপৰত হোৱা শোষণ-বঞ্চনা, অৱদমনে

চৰিত্ৰৰ মনৰ ওপৰত পেলোৱা প্ৰভাৱৰ ওপৰত অধিক মনোযোগ দিছে। গতিকে এই অধ্যয়নে নাৰীৰ মনৰ স্বৰূপ উদঘাটন কৰিবলৈ বিশেষভাৱে সহায় কৰিব। পুৰুষপ্ৰধান সমাজত বঞ্চিত নাৰীৰ সদা সমৰ্পণমুখী, চিৰন্তন মমতাময়ী ৰূপৰ আঁৰত লুকাই থকা নাৰীৰ জীৱনৰ কঠোৰ সংঘৰ্ষ আৰু যন্ত্ৰণা তথা ক্ষোভ আৰু প্ৰতিবাদৰ প্ৰকৃত ছবিখন উদঘাটন কৰাতো এই অধ্যয়নে সহায় কৰিব। নিৰ্বাচিত উপন্যাসখনৰ আধাৰত কৰা অধ্যয়নৰ যোগেদি নাৰী চৰিত্ৰ আৰু নাৰীৰ কাৰ্যকলাপৰ মনোবিশ্লেষণধৰ্মী অধ্যয়নে ভাৰতীয় নাৰীৰ মনৰ সঠিক ছবি এখন দাঙি ধৰাত সহায়ক হ'ব।

২.০ দলিত নাৰীবাদ ঃ

মানৱ প্ৰজাতিৰ আটাইতকৈ শক্তিশালী অংগ হৈছে পুৰুষ আৰু নাৰী। নাৰী সৃষ্টিয়ে পৃথিৱীক গতি প্ৰদান কৰে। নাৰী অবিহনে এই গতি স্থবিৰ আৰু বৈচিত্ৰ্যহীন। নাৰীয়ে পোৱা নোপোৱাৰ দোমোজাৰ মাজত জীৱনৰ অন্ধকাৰ আঁতৰাই পোহৰময় কৰি তোলে। পুৰুষতান্ত্ৰিক এই পৃথিৱীত নাৰীয়ে নিজৰ অস্তিত্ব জাহিৰ কৰিবলৈ যুগ যুগ ধৰি যুঁজ কৰিব লগা হৈছে। একবিংশ শতিকাৰ এই উত্থান- প্ৰগতিৰ সময়তো নাৰী অৱহেলিত, নিষ্পেষিত। যিখন দেশত নাৰী দেৱীৰূপে পূজিত হয়, সেইখন দেশতেই নাৰীক ডাইনী সন্দেহত হত্যাও কৰা হয়। আজিও নাৰী সামাজিক, সাংস্কৃতিক, অৰ্থনৈতিক আদি প্ৰতিটো দিশতেই নিজৰ প্ৰাপ্যৰপৰা বঞ্চিত। প্ৰাচীন সাহিত্যৰাজিতো নাৰীৰ অৱদমিত ৰূপৰ ছবিয়েই চিত্ৰিত হৈছে। নাৰী আৰু পুৰুষ যিহেতু মানৱ সত্বা, গতিকে এটাৰ অবিহনে

আনটোৰ অস্তিত্ব শূন্য। অৱশ্যে মনস্তাত্ত্বিক দিশেৰে নাৰী আৰু পুৰুষ উভয়েই পৃথক মনস্তত্ত্বৰ অধিকাৰী।

দলিত নাৰীবাদ (Dalit Feminism) হৈছে ভাৰতত দলিত সমাজৰ নাৰীসকলৰ বিশেষ ধৰণৰ নাৰীবাদী আন্দোলন। ভাৰতীয় ইতিহাসত নাৰীৰ অধিকাৰৰ আন্দোলনৰ এক সুদীঘ ইতিহাস আছে। বংগৰ নৱজাগৰণৰ সময়ত যি নাৰীকেন্দ্রিক আন্দোলনে গা কৰি উঠিছিল, সেই আন্দোলন সমাজ সংস্কাৰৰ উদ্দেশ্যে হলেও ব্রাহ্মণ্যবাদৰ জাত-পাতৰ প্রাবল্যই সকলো স্তৰৰ নাৰীকে সামৰিব পৰা নাছিল। সেয়েহে এই আন্দোলন উচ্চ শ্রেণীৰ মাজতেই সীমাৱদ্ধ আছিল। ফলস্বৰূপে এই আন্দোলনৰ পৰা নিম্নবর্গৰ নাৰীসকল বাদ পৰি গৈছিল।

মূলধাৰাৰ নাৰীবাদী আন্দোলনসমূহে নিম্নবর্গৰ নাৰী সমাজক কোনোকালেই স্পর্শ কৰিব পৰা নাছিল । প্রান্তীয় এই নাৰীসকলে শিক্ষা আৰু সমধিকাৰৰ আওঁতাত সোমাবলৈ এক দীঘলীয়া সংগ্রাম কৰিব লগীয়া হৈছিল।

ভাৰতত দলিত নাৰীবাদৰ ইতিহাস দলিত মহিলাসকলৰ দীঘলীয়া সংগ্রাম আৰু সংগঠনৰ ফলত বিকাশ লাভ কৰা এক বিশেষ আন্দোলন। এই আন্দোলন মূলধাৰাৰ নাৰীবাদী আন্দোলনৰপৰা পৃথক ৰূপে বিৱর্তিত হৈছে। দলিত নাৰীবাদী আন্দোলনে দলিত মহিলাসকলৰ ওপৰত হোৱা জাতিগত নিপীড়ণ, যৌন শোষণ, অৱদমন আৰু বঞ্চনাৰ বিৰুদ্ধে কৰা প্রতিবাদ। ভাৰতত দলিত আন্দোলনৰ আৰম্ভণি কৰাৰ ক্ষেত্রত সততে বি.আৰ. আম্বেদকাৰৰ নাম প্রথমেই উচ্চাৰিত হয়। কিন্তু তাৰ বহুপূর্বেই দলিত নাৰীবাদী চিন্তাৰ বীজ ৰোপণ কৰিছিল সাবিত্রী বাই ফুলেই। দলিত নাৰীবাদী চিন্তাৰ ৰেঙণি জ্যোতিবা ফুলেৰ লেখনিৰ মাজতো পোৱা যায়। ভাৰতবর্ষত হিন্দু ধর্মৰ নাৰীৰ ওপৰত হোৱা শোষণ,উৎপীড়ণৰ দুর্ঘোৰ বিৰোধী আছিল জ্যোতিবা ফুলে। সমাজৰ পিছপৰা মহিলাসকলৰ শিক্ষাৰ ক্ষেত্রত জ্যোতিবাই ফুলেই বিশেষ গুৰুত্ব দিছিল। কিয়নো তেওঁ বিশ্বাস কৰিছিল নাৰী শিক্ষিত হ'ব পাৰিলেহে নাৰীৰ সামাজিক অসমতা দূৰ হ'ব। ফলস্বৰূপে জ্যোতিবাই ফুলেই প্রথম পদক্ষেপ স্বৰূপে নিজ পত্নী সাবিত্রী বাইক পঢ়াশালিৰ দুৱাৰ গছকাবলৈ সক্ষম হৈছিল আৰু শিক্ষক প্রশিক্ষণ প্রতিষ্ঠানত ভর্তি কৰাই দিছিল। ক্রমান্বয়ে জ্যোতিবাই ফুলেৰ এই যুঁজৰ সমানেই অংশীদাৰ হৈ পৰিছিল সাবিত্রী বাই। দলিত মহিলা ফেডাৰেচনৰ সন্মিলনত প্রাপ্তীয় লোকসকলৰ শিক্ষাৰ ওপৰত প্রাধান্য প্রদান কৰি পিতৃতান্ত্রিকতাই জাপি দিয়া কঠোৰ নীতি-নিয়মৰ ঘোৰ বিৰোধিতা কৰিছিল। ক্রমাৎ আত্ম-দাবী আৰু শৰীৰৰ প্রতিনিধিত্বৰ অধিকাৰ দলিত নাৰীবাদী আন্দোলনৰ প্রধান নীতি ৰূপে পৰিগণিত হৈছিল। ভাৰতত স্বাধীনতাৰ পৰৱর্তী সময়ত দলিত মহিলা সকলৰ শিক্ষা , সামাজিক সত্বা, অধিকাৰ আৰু সুৰক্ষাৰ ক্ষেত্রত দলিত আন্দোলনে সক্রিয় ভূমিকা গ্রহণ কৰিছিল। ১৯৭২ চনত Dalit Panthers নামৰ সংগঠনে দলিত আন্দোলনত নতুন জোৱাৰ আনিছিল। ৯০দশকত দলিত নাৰীবাদী আন্দোলনে এক বৃহৎ ৰূপ লাভ কৰিছিল। ১৯৯৫ চনত National Federation of Dalit Women প্রতিষ্ঠা কৰা হয়। ইয়াৰ লগে লগেই দলিত নাৰীৰ বাবে কৰা আন্দোলনটোৱে ৰাষ্ট্রীয় স্বীকৃতি লাভকৰে।

২.১ 'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসত' দুর্গী' ঃ প্রান্তীয় নাৰীৰ পৰিচয়ৰ সংকটৰপৰা আত্মসচেতনতালৈ এক সুদীর্ঘ যাত্রা

২.১.১. পৰিচয়ৰ সংকট ঃ

অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ **'জছনাৰ ঝিটাছ'** উপন্যাসত বৃটিছৰ ঔপনিৱেশিক শাসন আৰু শোষণৰ এখন সার্থক চিত্র অংকন কৰা হৈছে। বৃটিছৰ ঔপনিৱেশিক শাসন কালছোৱাত অসমৰ চাহ বাগিছাত কাম কৰিবলৈ অহা এছাম মানুহৰ পৰিচয় হেৰুৱাৰ যাতনা, বৃটিছৰ শাসন আৰু শোষণ, বিশেষকৈ প্রান্তীয় নাৰীক যৌন সম্ভোগৰ আহিলা ৰূপে ব্যৱহাৰ কৰা আৰু এই অন্যায়,অত্যাচাৰৰ বিৰুদ্ধে ক্রমাৎ সোচ্ছাৰ হৈ উঠা এই নিম্নবর্গৰ মানুহখিনিৰ কাহিনী লিপিৱদ্ধ কৰা হৈছে। উপন্যাসখনত যিখন সময়ৰ অসমৰ সমাজ জীৱনৰ চিত্র অংকিত হৈছে সেই সময়খিনিত সেই সমাজত নাৰীৰ অৱস্থা অতি দুখজনক।

মনোবিজ্ঞানী এৰিক এৰিছক্ছনে আগৱঢ়োৱা 'পৰিচয়ৰ সংকট' ধাৰণাটোৰ মূল কথা হ'ল নিজৰ পৰিচয়

সম্পর্কে সন্দেহ বা অনিশ্চিয়তা। নাৰীয়ে যুগ যুগ ধৰি পত্নী, মাতৃ অথবা কন্যা ৰূপে নিজৰ পৰিচয় প্রদান কৰি আহিছে। কিন্তু ব্যক্তি হিচাপে নাৰীৰো স্বতন্ত্র পৰিচয়ৰ অধিকাৰ আছে। নাৰীও মানুহ, নিজৰ সন্মান, নিজৰ অস্তিত্ব সম্পর্কে সচেতনতাই নাৰীক 'মানুহ' হিচাপে মর্যাদা প্রদান কৰিব। এই নিজস্ব ব্যক্তিত্বৰ বোধ বা আত্ম সচেতনতাৰ ভাবনা মূলত নতুন যুগৰ আধুনিক চেতনাৰ দান।

'জছনাৰ ঝিটাছ' উপন্যাসৰ প্রধান নাৰী চৰিত্র চাহ বাগানীয় নাৰী দুর্গীয়ে অলেখ সপোন বুকুত বান্ধি গছত টকা লগা, বালি খান্দিলেই সোণ ওলোৱা, গুটি পুতিলেই ফলৰ

ভৰত গছ ভাগি পৰা মাটিৰ দেশ অসমলৈ দছাৰুৰ লগত এখন নতুন সংসাৰ পাতিবলৈ গুছি আহিছিল। কিন্তু হঠাৎ দছাৰুৰ মৃত্যুৱে দুর্গীৰ নিজা পৰিচয়েই যেন কাঢ়ি লৈ গ'ল। দুর্গীৰ জীৱনৰ গতি সলনি কৰি পেলালে। পৰিস্থিতিৰ চাকনৈয়াত পৰি দছাৰুৰ পত্নী দুর্গীৰ পৰিচয় হৈ উঠিল বগা চাহাবৰ মেম (?) দুর্গী। এই পৰিচয়ৰ বিনিময়ত দুর্গীয়ে হেৰুৱাই পেলালে চাহ শ্রমিকৰ সমাজখনত নিজৰ পৰিচয়। চাহাবৰ সৈতে সম্পর্ক গঢ় লৈ উঠা বাবে চাহ শ্রমিক সকলৰপৰা কিছু সভ্রম লাভ কৰিছে, কিন্তু চাহাব ইংলণ্ডলৈ উভটি যোৱাৰ পিছত দুর্গীয়ে নিজৰ পৰিচয়ক লৈ এক দোদুল্যমান অৱস্থাত পৰিছে। কাৰণ চাহাবৰ তিনিটা সন্তানৰ মাতৃ হোৱাৰ পিছতো দুর্গীয়ে চাহাবৰ পত্নীৰ মর্যদা লাভ কৰা নাই। ফ্রেজাৰ চাহাবৰ দুর্গীৰ প্রতি আকর্ষণ আছিল মুখ্যত শাৰিৰীক কাৰণত। তদুপৰি আর্থিক আৰু মানসিক ভাৱে বিধ্বস্ত হৈ পৰা দুর্গীয়েও নিৰাপত্তাৰ তাড়ণাতেই ফ্রেজাৰ চা হাবৰ আহ্বানক সঁহাৰি জনাইছিল আৰু ক্রমাৎ এই সম্পর্কত দুর্গীয়ে প্রেমৰ সংযোজন ঘটাবলৈ প্রয়াস কৰিছিল। কিন্তু ফ্রেজাৰৰ নির্লিপ্ততা তথা উভটি অহাৰ মিছা প্রতিশ্রুতি দি ফ্রেজাৰে কেতিয়াও উভটি নাহিবলৈ নিজ দেশলৈ গুছি যোৱা কথাটোৱে দুর্গী ৰ মানসিক স্থিৰতাৰ ওপৰত বাৰুকৈয়ে আঘাত হানিলে। নিজৰ সন্তানৰ ওপৰত আধিকাৰহীনতা, আর্থিক নিৰাপত্তাহীনতাই দুর্গীক ক্রমাৎ কোঙা কৰি পেলায়। চাহাবৰ দ্বাৰা পৰিত্যক্ত অৱস্থাত পূর্বৰ মেম পৰিচয়লৈ উভটি যোৱাটোও সম্ভৱপৰ হৈ নুঠে। এনে অসহায় অৱস্থাত দুর্গীয়ে নিজৰ পৰিচয়হীন অৱস্থাটোক লৈ সন্দিহান হৈ পৰিছে।

' তাই কাৰ মানুহ? কোন তাই? তাই সেই ৰঙামাটি দেশখনৰ মানুহ? ঝুমুৰৰ দলৰ আগদহনী আছিল তাই। চাহ পাতবোৰৰ মাজত আহি তাই ঝুমুৰৰ আগদহনী হ'ল। তাই তীৰন্দাজ দচাৰুৰ ঘৈণী আছিল। তাই এদিন ৰাতি ৰৰা ৰঙলাৰ চিৰিটোৰে সেই কোঠাটোলৈ সোমাই গ'ল। তাই মেমবাৰীলৈ আহিল। ল'ৰা এহালৰ মাক হ'ল...."

(জছনাৰ ঝিটাছ, পৃঃ২৭৬)

ফ্রেজাৰ চাহাব আঁতৰি যোৱাৰ পিছত দুর্গীৰ জীৱনত ফ্রেজাৰৰ অস্তিত্বও শেষ হৈ পৰে। বৃটিছৰ পুঁজিবাদী শোষণৰ পৰিণতি হিচাপে এনেদৰে বগা চাহাবৰ 'মেম' হৈ থকা দুর্গীৰ দৰে নাৰীসকলৰ সামাজিক অৱস্থিতি ইমানেই দুর্বল যে তেওঁলোকৰ নিজৰ পৰিচয়ৰ দাবীও উত্থাপন কৰিব নোৱাৰে। দুর্গীৰ দৰে এই প্রান্তীয় নাৰীসকলে আত্মীয় আৰু আত্মীয়তাৰ পৰিচয় হেৰুৱাই সুকীয়া এটি পৰিচয় বিচাৰিবলৈ অধিকাৰ নাই। বৃট্রিছৰ ঔপনিৱেশিক শাসন কালত নাৰীক কেৱল যৌন সম্ভোগৰ সামগ্রী ৰূপেহে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল, নাৰীয়ে নিজৰ অধিকাৰ বিচাৰি, নিজৰ পৰিচয় বিচাৰি যুঁজ কৰাৰ কথা অকল্পনীয়।

২.১.২. আত্মসচেতনতাৰ জাগৰণ ঃ

দুর্গীয়ে অসমলৈ আহি দচাৰুৰ সৈতে কোনো জটিলতা নথকাকৈ জীৱনটো অতিবাহিত কৰিছিল। দেওতা সাপ বধৰ পাছত দচাৰুৰ স্বভাৱৰ পৰিৱর্তন, দচাৰুৰ মৃত্যুৱে দুর্গীৰ জীৱনলৈ ধুমুহা নমাই আনিছিল। দচাৰুৰ সন্তানৰ মাতৃ হোৱাৰ সপোন দেখা দুর্গীয়ে ফ্রেজাৰ চাহাবৰ ঔৰসত তিনিটাকৈ সন্তান জন্ম দিয়ে।কিন্তু পৰৱর্তী সময়ত পৰিস্থিতিৰ চাকনৈয়াত পৰি 'দুর্গী পাগলী'লৈ ৰূপান্তৰিত হৈছে। অর্থাৎ দুর্গীয়ে মানসিক ভাৱসাম্য হেৰুৱাই পেলাইছে। তিনিওটা সন্তানৰ সৈতে মেমবাৰীৰ দুর্গীৰ পৰিয়ালটিও হেৰাই গৈছে।মহামাৰীত এটি সন্তানৰ মৃত্যু, দুলাৰী বেটী বেবীক ফ্রেজাৰ চাহাবে মিছা মাতি বিলাতলৈ লৈ যোৱা, দুর্গীৰ শেষ ভৰসা স্বৰূপ লবকো যেতিয়া বুদ্ধ বৰুৱাই লৈ যায়, তেতিয়া দুর্গী একেবাৰে শূণ্য হৈ পৰিছে। দু র্গী বিধ্বস্ত হৈ পৰিছে। আর্থিক আৰু মানসিক নিৰাপত্তাহীনতাৰ বাবেই দুর্গী 'মেম' দুর্গী 'পাগলী' হৈ পৰিছে। ঔপনিৱেশিক শাসন কালত নাৰীক যৌন সম্ভোগৰ আহিলা ৰূপে কেৱল ব্যৱহাৰ কৰাৰ ফলত এনে নাৰীয়ে বিভিন্ন মনোঘাত (Trauma)ৰ চিকাৰ হৈ মানসিক ভাৱসাম্য হেৰুৱাই পেলায় ।অৱশ্যে এই মানসিক ভাৱসাম্য হে ৰুওৱা সময়ছোৱাতে দুর্গীয়ে ক্রমাৎ অনুভৱ কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিছে যে ফ্রেজাৰৰ জীৱনত প্রকৃততে দুর্গীৰ কোনো অস্তিত্ব বা স্থানেই নাছিল। লাহে লাহে দুর্গী ৰ বুকুত জমা হ'বলৈ আৰম্ভ কৰিছে বগা চাহাবৰ বিৰুদ্ধে অজস্র ক্রোধ।

'বগা কুত্তাসৱকে ই দেশতো খেদাইক লাগি' (জছনাৰ ঝিটাছ, পৃঃ ৩৮৪)

"জছনাৰ ঝিটাছ" উপন্যাসৰ দুর্গা ভূমিজৰ কাহিনী এটি সাধাৰণ কাহিনী। যুগ যুগ ধৰি প্রান্তীয় নিম্নবর্গৰ নাৰীসকলে এইদৰে শোষণ, অৱদমনৰ বলি হৈ আছে। একবিংশ শতিকাৰ বিজ্ঞান আৰু প্রযুক্তি বিদ্যাৰ কোনো পোহৰেই এওঁলোকক স্পর্শ কৰিবলৈ সক্ষম হোৱা নাই। কিন্তু দুর্গা ভূমিজৰ কাহিনীটো আন সাধাৰণ নাৰীতকৈ এইবাবেই পৃথক যে দুর্গীয়ে শোষণ বঞ্চনা ভোগ কৰি, নিজৰ সকলো ভূমিকা পালন ৰূপায়ণ কৰিও নিজৰ অধিকাৰ আৰু সমতাৰ প্রশ্নৰে সাহসী

হৈ উঠিছে। প্রান্তীয় এই নাৰীসকলৰ নাৰীবাদী দৃষ্টিভংগী ইয়াৰ মাজেৰে প্রকাশিত হৈছে। শৰীৰত উইণ্ডচ চাবোনৰ গোন্ধ লৈ ফ্রেজাৰৰ কাষ চপা স্বামীহাৰা দুর্গীয়ে ফ্রেজাৰৰ কাষত বিচাৰিছিল আশ্রয় আৰু নিৰাপত্তা। যি নিৰাপত্তা পৃথিৱীৰ প্রতিগৰাকী অসহায় নাৰীয়ে বিচাৰে। দুর্গীৰ যি কাহিনী,সেই কাহিনী প্রতিগৰাকী অসহায়, অৱলা নাৰীৰে কাহিনী। ফ্রেজাৰৰ বাবে দুর্গী ভালপোৱাৰ সমল নাছিল, সেয়েহে ফ্রেজাৰ আৰু দুর্গীৰ সম্পর্কটোৰ কোন নাম নাছিল। ড. আম্বেদকাৰে শৰীৰৰ ওপৰত নাৰীৰ একমাত্র মালিকীস্বত্ত্বৰ ওপৰত গুৰুত্ব প্রদান কৰিছিল আৰু বিবাহক এক চুক্তি আখ্যা দিছিল। দলিত আন্দোলনে প্রবল ৰূপত নাৰীৰ যৌন অধিকাৰৰ ওপৰত মাত মাতিছিল।

ফ্রেজাৰ চাহাবৰ তিনিওটা সন্তানক বাইবেল পঢ়া, ৰবদিনৰ গীত গোৱাৰ প্রশিক্ষণ , কঠোৰ নিয়মানুৱর্তিতাৰ শিক্ষা প্রদান কৰিছিল যদিও দুর্গীয়ে কন্যা বেবীক নিজৰ ভাষাৰে গীত গাবলৈ শিকাইছিল। নিজৰ ভাষাটোৰ প্রতি থকা গভীৰ আকর্ষণৰ বাবেই ফ্রেজাৰৰ মুখত ব্লাডি কাণ্ট্রি, ফাকিং কাণ্ট্রি শব্দবোৰ বুলেট একোটা হৈ দুর্গীৰ বুকুত সোমাইছিল। দুর্গীয়েও ক্রমাৎ উপলব্ধি কৰিছিল নিজৰ দেশতেই গোলাম হৈ থকাটো কিমান কষ্টকৰ। দুর্গীৰ মাজত যেন লাহে লাহে আন এজনী দুর্গীৰ জন্ম হৈছিল। ফ্রেজাৰ চাহাবে যেতিয়া তাইৰ সন্তান লবক তাইৰপৰা আঁতৰাই বিদেশলৈ পঠিয়ৱলৈ আগ্রহ প্রকাশ কৰিছে। তেতিয়া দুর্গীয়ে প্রচণ্ড ক্রোধত নিজৰ অধিকাৰ প্রকাশ কৰিছে-

"চাহেব, হামৰ বেটাকে ও টুৰত-টাপাৰ ছৱা থাকল আশ্রমমে নি পাঠাবই।' ওকে মা জিঞতে আহে।' (জছনাৰ ঝিটাছ, পৃঃ ৩৩৫)

এই প্রথমবাৰৰ বাবে দুর্গীয়ে নিজৰ সন্তানৰ বাবে মাত মাতিছে। মনকৰিবলগীয়া দুর্গীয়ে কেৱল ইয়াত লবৰ মাক জীয়াই থকাৰ কথাহে কৈছে। পিতৃৰ অস্তিত্বক ধুলিসাৎ কৰি দুর্গীয়ে তাইৰ তিনিটা দুভেছীয়া সন্তানৰ পিতৃৰ পিতৃত্বক অস্বীকাৰ কৰি নিজৰ স্বাধিকাৰ ঘোষণা কৰিছে। বুকুৰ একোণত 'ফকিয়া', 'বেইমান' চাহাবৰ প্রতি জমা হ'বলৈ ধৰিছে প্রচণ্ড ঘৃণা, ক্রোধ আৰু ক্ষোভ। এই পঞ্জীভূত ক্রোধেই এদিন আগ্নেয়গিৰি হৈ উদগীৰণ হৈছে-

'দুর্গীৰ ভিতৰত ভয়ানক খং আৰু ঘৃণা আকৌ উজাৰ খাই আহিল। 'এইসন মেম বাড়ি বানাইকে তহনি কুলী । মাইকীকে কৰে নি পাৰব। ইঠো হামানিকেৰ দেশ। হামানিকেৰ দেশ ছইড়কে তহনি জাইকে পড়ি।'

(জছনাৰ ঝিটাছ, পৃঃ ৪০১)

বগা চাহাবে কৰা বিশ্বাসঘাতকতাই দুর্গীক বগা চাহাবৰ বিৰুদ্ধে কৰা যুঁজখনৰ অংশীদাৰ হ'বলৈ প্রেৰিত কৰিছে। ফলস্বৰূপে চাহাবৰ প্রতি থকা ক্রোধ আৰু ঘৃণা ভাৰে দুর্গীক এগৰাকী সক্রিয় কংগ্রেছৰ ভলণ্টিয়াৰ ৰূপে গঢ় দিয়াত প্রেৰণা যোগাইছে। আকাশৰ 'জছনা' অর্থাৎ জোনাক দুর্গীৰ অতি প্রিয় আছিল আৰু জছনাৰ দৰে শুভ্র শৰীৰৰ ফ্রেজাৰকো দুর্গীয়ে হৃদয়ৰ সমস্ত আকুলতাৰে আকোঁৱালি লৈছিল-- 'চাহাব, তুই ঐ ৰকম'।

কিন্তু জছনাৰ পোহৰ, শুভ্রতা ক্রমশ তীব্র ঘৃণা আৰু বিদ্বেষলৈ ৰূপান্তৰিত হৈছিল। যিগৰাকী দুর্গী ঝুমুৰৰ আগদহনী আছিল, সেই দুর্গীৰ মুখত উচ্চাৰিত হৈছিল 'বন্দে মাতৰম'। অসম্ভৱভাৱে শক্তিশালী বগা শাসকসকলৰ ক্ষমতাৰ কেন্দ্রক দুর্বল প্রান্তীয় অৱস্থিতিৰ মাজৰপৰাই আঘাত হানিছিল দুর্গীয়ে। দুর্গী বগা চাহাবসকলৰ বাবে ত্রাসৰ কাৰণ হৈ পৰিছিল আৰু বগা চাহাবৰ বিৰুদ্ধে সংগোপনে সাজিছিল চক্রৱেহ। এই গোপন অভিযানৰ ভূপাই গোপনে দুর্গীক নিধন কৰে।এই গৰাকী সাধাৰণ প্রান্তীয় নাৰী দুর্গী ভূমিজক শাসক বগা চাহাবে উলাই কৰি চলিব পৰা নাই, দুর্গীৰ এই নতুন স্বতন্ত্রতাপূর্ণ পৰিচয়ক বগা চাহাবে গুৰুত্ব সহকাৰে লোৱা বাবেই দুর্গীক গোপনে নিধন কৰাহৈছিল। দুর্গীয়ে যে চাহাব সকলৰ মনত ভয় বা ত্রাসৰ জন্ম দিবলৈ পাৰিছিল তাৰ মাজেৰে প্রকৃতার্থত তাইৰ ওপৰত হোৱা অন্যায়, অৱদমনৰ প্রতিশোধ লৈছিল।

' দুর্গী নামৰ অনাখৰী সাধাৰণ বাগানৰ পাত তোলা মানুহজনীলৈ বেলি ডুব নোযোৱা সাম্রাজ্যৰ অধিকাৰী বগা চাহাবে ভয় কৰিছিল । তাইক মাৰি পেলাই থৈছিল, শটো কাকো চুবলৈ নিদিছিল, পুলিছৰ আৰেষ্টনীৰ মাজত ৰাখি তাইক কবৰ দিছিল। সেই মাটি আৰু নাই। বৈ যোৱা পানীৰ মাজত ক'ত পাম দুর্গীক?' (জছনাৰ ঝিটাছ, পৃঃ ৪২২)

৩.০ উপসংহাৰ ঃ

"জছনাৰ ঝিটাছ" উপন্যাসখনৰ দুর্গী চৰিত্রটিৰ ক্ষোভৰ প্রধান কাৰণ হৈছে শ্বেতাঙ্গ সমাজে নাৰীৰ ওপৰত কৰা অন্যায়-অত্যাচাৰ। কিন্তু দুর্গীৰ মাজলৈ অহা আত্মসচেতনতাই দুর্গীক বিদ্রোহী কৰি তুলিছে। গায়ত্রী স্পিভাকে নিম্নবর্গৰ সমাজ ইতিহাস অধ্যয়নক কেন্দ্রীয় বিষয় হিচাপে লৈ নিম্নবর্গৰ মাজতো স্ত্রী নিম্নবর্গ অধ্যয়নৰ কৰি তৃতীয় বিশ্বৰ নাৰী কণ্ঠৰ কথা কৈছে, যি কণ্ঠস্বৰ শুনিবলৈ দিয়া নহয়। উপনিৱেশক

আৰু পুৰুষতন্ত্ৰৰ কঠিন হাতোৰা খুলি দুৰ্গীয়ে বগা চাহাবক খেদিবলৈ আগৰাঢ়ি গ'ল। যাৰ পৰিণতিত দুৰ্গীৰ কণ্ঠ ৰুদ্ধ কৰি দিয়া হ'ল। কিন্তু ইংৰাজ উপনিৱেশসকলৰ শোষণ কেৱল নাৰীৰ মাজতেই সীমাৱদ্ধ নাছিল, বৰং তেওঁলোকৰ সতি-সন্ততিলৈকে ইয়াৰ প্ৰভাৱ অনুভূত হৈছিল। এই গৱেষণাৰ যোগেদি প্ৰাপ্ত সিদ্ধান্তসমূহ এনেধৰণৰঃ--

সিদ্ধান্ত ঃ

●পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজখনে নাৰীক পাৰিবাৰিক গণ্ডিৰ মাজত স্বনিৰ্ধাৰিত ভূমিকাতেই সদায় আৱদ্ধ কৰি ৰাখিছে। নাৰীৰ নিজা কোনো পৰিচয় গঢ় লৈ উঠা দেখা নাযায়।

● ঔপনিৱেশিক শাসক সকলৰ বিকৃত যৌনলিপ্সাৰ বাবে প্ৰান্তীয় নাৰী সমাজে নিজৰ সৰ্বস্ব হেৰুৱাই মানসিক বিকাৰগ্ৰস্ত অৱস্থাত উপনীত হোৱাও দেখা পোৱা গৈছে।

● দুৰ্গী ভূমিজৰ কাহিনী অসমত প্ৰান্তীয় চেতনাৰ নাৰীবাদক বুজি পোৱাৰ শক্তিশালী মাধ্যম। কিয়নো দুৰ্গীয়ে নিজৰ পত্নী আৰু মাতৃৰ ভূমিকাৰ উপৰিও নিজৰ অধিকাৰ আৰু সমতাৰ প্ৰশ্নৰে সাহসী হৈ উঠিছে।

● আলোচিত গৱেষণা পত্ৰখনিত নাৰীৰ পৰিচয়ৰ সংকট, দলিত নাৰীবাদ, প্ৰান্তীয় নাৰী ইত্যাদি বিষয়ত এক বিহঙ্গম অৱলোকন কৰাহে হৈছে। ভৱিষ্যতে এনে বিষয়ৰ ওপৰত বিস্তৃত অধ্যয়নৰ সম্ভাৱনা আছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতা ঃ জছনাৰ ঝিটাছ, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ , গুৱাহাটী,প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০২২

গনি, ওচমান আৰু দেৱব্ৰত শৰ্মা ঃ বৃটিছ বিৰোধী মহান ছহিদ আদিবাসী মহিলা দুৰ্গী ভূমিজ, একলব্য প্ৰকাশন, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৯

ঠাকুৰ, নগেন ঃ এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস, জ্যোতি প্ৰকাশ, গুৱাহাটী

শৰ্মা , গোৱিন্দপ্ৰসাদ ঃ নাৰীবাদ আৰু অসমীয়া উপন্যাস, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ,প্ৰথম সংস্কৰণ, ২০০৭, গুৱাহাটী

Arya Sunaina and Rathore Aakash Sing(ed) : Dalit Feminist Theory: A Reader , 2020, Routledge,2 Park Square, Milton Park, Abingdon.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ ‘সংস্কৃতি’ অধ্যয়ন ঃ এক অধ্যয়ন

(বিশেষ উল্লিখন ‘ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি’ গ্ৰন্থ)

ড° ভাস্কৰজিৎ বৰা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
এল টি কে মহাবিদ্যালয়
৯৩৬৫১৭৭২৬২
bjborah82@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যিক সমৃদ্ধিশালী কৰা এগৰাকী সাহিত্যিক ড° বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্যই ‘মৃত্যুঞ্জয়’, ‘ইয়াৰুইংগম’, ‘আই’ প্ৰতিপদ, শতঘ্নী, নষ্টচন্দ্ৰকে ধৰি কেইবাখনো উপন্যাস ৰচনা কৰি অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰি থৈ গৈছে। ড° ভট্টাচার্যই উপন্যাস আৰু গল্প ৰচনাৰ সমান্তৰালভাৱে অসমৰ সংস্কৃতি বিষয়েও অধ্যয়ন কৰিছিল। ‘ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি’ শীর্ষক গ্ৰন্থখনত আঠটা অধ্যায়ত সংস্কৃতিৰ বিভিন্ন দিশসমূহ আলোচনা কৰিছে। প্ৰথম অধ্যায় ‘সংক্ৰান্তি কালত এভুমুকি’ত সংস্কৃতিৰ ধাৰণা, পুৰণি অসমৰ কৃষি ব্যৱস্থা, আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ পুঁজিবাদৰ বিকাশৰ বাবে লোৱা প্ৰচেষ্টা, অসমৰ বনজ সম্পদ, চিকিৎসা সেৱাৰ ব্যৱস্থা, শিক্ষা ব্যৱস্থা, অসমৰ জনজাতিসকলৰ ব্যৱসায়, ব্ৰিটিছৰ শোষণ নীতিৰ বিষয়ে বর্ণনা কৰিছে। দ্বিতীয় অধ্যায় ‘মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ উত্থানৰ যুগ’ত অসমত নতুন মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ উৎপত্তি, ধর্ম, অসমত কংগ্ৰেছ গঠন, ব্যৱসায় সম্পর্কে দাঙি ধৰিছে। তৃতীয় অধ্যায় ‘ধর্ম’ত জাতিভেদ প্ৰথা, জাতিভেদ প্ৰথা দূৰীকৰণ, আধ্যাত্মিকতাৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছে। ‘চতুর্থ’ অধ্যায় ‘সাহিত্য’ত ডেৰশ বছৰত হোৱা অসমীয়া সাহিত্যৰ পৰিৱর্তনৰ বিষয়ে; পঞ্চম অধ্যায় ‘সাংবাদিকতা’ত ‘অৰুণোদই’ জন্মৰ পৰা অসমৰ বিভিন্ন কাকত-আলোচনীৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছে; ষষ্ঠ অধ্যায় ‘সংগীত আৰু কলা’ত নব্যমার্গীয় সংগীত, উচ্চাংগসংগীত, আধুনিক গীত, লোকগীতৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছে; সপ্তম অধ্যায় ‘তলসৰা’ত অসমীয়া মঞ্চৰ ইতিহাস, অসমৰ সত্ৰ আৰু নামঘৰ, যাত্ৰা, ভাওনা, সূত্ৰধাৰী, ৰংগমঞ্চত নাট প্ৰদর্শন আদিৰ আলোচনাৰ লগতে অষ্টম অধ্যায় ‘তিনিটা পৰম্পৰা’ত ডেৰশ বছৰত অর্থাৎ ব্ৰিটিছসকলে অসম দখল কৰাৰ পাছৰে পৰা অসমীয়া সমাজৰ যি পৰিৱর্তন ঘটিল বিশেষকৈ পুঁজিবাদৰ উত্থান, নতুন ভাষা, ধ্যান-ধাৰণা, ধর্ম-ধর্মপদ্ধতিৰ আমদানিকে ধৰি সংস্কৃতিৰ ধাৰা সম্পর্কে বিভিন্ন দিশসমূহ দাঙি ধৰিছে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনিত গ্ৰন্থখনিত উল্লিখিত ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বিষয়ে বর্ণনা কৰিবলৈ যাওঁতে প্ৰতিটো অধ্যায়ত উল্লিখিত বিভিন্ন দিশসমূহ পুংখানুপুংখভাৱে বিশ্লেষণ কৰা হ’ব।

বীজশব্দ ঃ সংস্কৃতি, বেহা-বেপাৰ, পুঁজিবাদ, সাম্ৰাজ্যবাদ, ইংৰাজী, ধর্ম।

০.১ আৰম্ভণি ঃ

ড° বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য একেধাৰে গল্পকাৰ, ঔপন্যাসিক, কবি, নিবন্ধকাৰ,

সাংবাদিক আৰু এগৰাকী সম্পাদক। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যই 'ৰাজপথে ৰিঙিয়ায়', 'আই', 'ইয়াৰুইংগম', 'প্ৰতিপদ', 'শতাব্দী', 'নষ্টচন্দ্ৰ', 'মৃত্যুঞ্জয়'কে ধৰি বহুকেইখন উপন্যাস, 'কলং আজিও বয়', 'সাতসৰী', 'খিৰিকি কাষৰ আসন' গল্প পুথি, ভ্ৰমণ কাহিনী, কবিতা পুথি, নাটক আদিকে ধৰি বহু সাহিত্য ৰচনা কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰি থৈ গৈছে।

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ 'ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতি' শীৰ্ষক গ্ৰন্থত ১৮২৬ চনৰ ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ পিছৰ পৰা ডেৰশ বছৰৰ অসমৰ এখন চিত্ৰ অংকিত কৰিছে। অসমৰ সমাজ জীৱন, ব্যৱসায়, ধৰ্ম, সাহিত্য, পুঁজিবাদীৰ হাতোৰা, শিক্ষা ব্যৱস্থা, স্বাস্থ্য, ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থা, অসমৰ জনজাতিকে ধৰি বিভিন্ন বিষয়ৰ আলোচনা দাঙি ধৰিছে।

০.২ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ এই গ্ৰন্থখনিত ব্ৰিটিছসকল অসমলৈ অহাৰ পৰা ডেৰশ বছৰৰ অসমৰ সমাজ ব্যৱস্থাটোৰ বিষয়ে বৰ্ণনা কৰিছে। সেইফালৰ পৰা চাবলৈ গ'লে গ্ৰন্থখনিত সন্নিবিষ্ট হোৱা বিষয়সমূহৰ অধ্যয়নৰ যথেষ্ট গুৰুত্ব আছে। এই অধ্যয়নৰ জৰিয়তে অসম পৰাধীন হোৱাৰ পাছৰ পৰা ডেৰশ বছৰৰ অসমৰ সমাজ ব্যৱস্থা সম্পৰ্কত অধ্যয়নেই এই গৱেষণা পত্ৰখনিৰ মুখ্য উদ্দেশ্য।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনি প্ৰস্তুত কৰোঁতে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৪ তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

তথ্য আহৰণৰ মুখ্য উৎস হিচাপে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ 'ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি' শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনি লোৱা হৈছে আৰু গৌণ উৎস হিচাপে বিষয়ৰ প্ৰাসংগিকতা থকা কেইবাখনো গ্ৰন্থ আৰু প্ৰবন্ধৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৫ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যই ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে তেখেতে কেইবাটাও অধ্যায়ত বিভক্ত কৰি লৈছে ঃ সংক্ৰান্তি কালত এভুমুকি, মধ্যবিত্ত শ্ৰেণৰ উত্থানৰ যুগ, ধৰ্ম, সাহিত্য, সাংবাদিকতা, সংগীত আৰু কলা আৰু তিনিটা পৰম্পৰা।

প্ৰথম অধ্যায় 'সংক্ৰান্তি কালত এভুমুকি' শীৰ্ষক অধ্যায়টোক পাঁচটা খণ্ডত বিভক্ত কৰিছে।

প্ৰথম খণ্ডত ভট্টাচাৰ্যই 'সাংস্কৃতিক জীৱন'ৰ ধাৰণা দাঙি ধৰিছে। 'নিউ ইউনিভাৰ্চেল এন্‌চাইক্লপেডিয়া (পৃষ্ঠা. ২৫০৬)ৰ প্ৰসংগৰে উল্লেখ কৰিছে যে সাধাৰণ অৰ্থত নৈতিক আৰু বৌদ্ধিক উন্নতিৰ স্তৰেই সাংস্কৃতিক জীৱন আৰু এটা জাতিৰ সামগ্ৰিক সাধাৰণ জীৱনৰ সকলো বিষয় সংস্কৃতিত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হয়। তেখেতে 'নিউ ইউনিভাৰ্চেল' এনচাইক্লপেডিয়া (পৃষ্ঠা. ৪৮৭-৪৮৮)ৰ প্ৰসংগৰে পুনৰ উল্লেখ কৰিছে যে সাংস্কৃতিক নৃতত্ত্বৰ দৃষ্টিত সংস্কৃতি বুলিলে মানুহে সৃষ্টি কৰা সভ্যতাৰ সকলো অংগই সোমাই যায়।

'নিউ ইউনিভাৰ্চেল এনচাইক্লপেডিয়া'ত উল্লেখ থকাৰ দৰে অসমত সংস্কৃতিবিদসকলে সংস্কৃতিৰ ধাৰণাটো বহুলভাৱে লোৱা নাছিল। এই প্ৰসংগত এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে—

'...ঘাই অসমীয়া পণ্ডিতসকলে ইমান বহল অৰ্থত সংস্কৃতিৰ বিচাৰ কৰা নাই; তেওঁলোকৰ বৌদ্ধিক জীৱনৰ মূল চালিকা শক্তি জাতীয়তাবাদহে। পূৰ্ণ সমাজতত্ত্বৰ প্ৰয়োগ কৰি সংস্কৃতিক সামাজিক ব্যৱস্থাৰ উৰ্ধগাঁথনি ৰূপে ব্যাখ্যা কৰিবলৈ সমসাময়িক কালৰ মাৰ্ক্সপন্থীসকলে চেষ্টা কৰি আহিছে।'[১]

অসমলৈ ব্ৰিটিছসকল অহাৰ লগে লগে অসমৰ সমাজ জীৱনলৈ পৰিৱৰ্তন আহিল। আহোম ৰাজত্বৰ কালৰ নিয়ম সমূহ আঁতৰাই তেওঁলোকে নতুন পদ্ধতিৰে কৰ-কাটল সংগ্ৰহ কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিলে। ইয়াৰ লগে আইন-শৃংখলাৰ বাবে আৰক্ষী বাহিনী, প্ৰশাসন, ন্যায়-ব্যৱস্থা, বিষয়া-কেৰাণীৰ সৃষ্টি কৰিলে। নতুন নতুন যন্ত্ৰৰ সহায়ত তেল, কয়লা, চূণ উৎপাদন কৰিছিল, উন্নত মানৰ অস্ত্ৰ-শস্ত্ৰৰে পুৰণি শাসকসকলৰ পদচ্যুত কৰিছিল। অসমতে উৎপাদিত সামগ্ৰীসমূহ অসমৰে লোকক বিক্ৰী কৰিছিল। ব্ৰিটিছৰ দিনতে ৰে'ল, জাহাজ, টেলিগ্ৰাফ অসমলৈ আহিল। ইয়াৰ ফলত ব্যৱসায়, প্ৰশাসন, আইন শৃংখলা ৰক্ষা কৰাত সহায় হৈছিল।

দ্বিতীয় খণ্ডত গুণাভিৰাম বৰুৱা আৰু গেইট চাহাবৰ 'অসম বুৰঞ্জী'ৰ আধাৰত মোৱামৰীয়া বিদ্ৰোহ দমন কৰিবলৈ কেপ্টেইন ৰেলছ অহাৰ পৰাই এচাম লোকে ইংৰাজৰ লগত যোগাযোগ কৰা, কলিয়া ভোমোৰা বৰফুকনে পূৰ্ণানন্দ বুঢ়াগোহাঁইক কোচ বিহাৰৰ দৰে 'লালবন্দী' দি ব্ৰিটিছৰ লগত মিত্ৰতা সূত্ৰত আৱদ্ধ হ'বলৈ দিয়া উপদেশ, বদন বৰফুকনে ব্ৰিটিছৰ সহায় বিচৰা, প্ৰথম অৱস্থাত ব্ৰিটিছসকল ঘূৰি যাব বুলি ভবা, পিছত সেইটো নোহোৱাত চিপাহী বিদ্ৰোহত যোগদান কৰাৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছে।

ব্ৰিটিছসকলে অসমত ব্যৱসায়ৰ পাতনি মেলা সম্পৰ্কত এনেদৰে বৰ্ণনা দাঙি ধৰিছে—

'ব্ৰিটিছবিলাক মূলতঃ বেহা-বেপাৰ আৰু উদ্যোগত উৎসাহী আছিল। অসমত চাহ শিল্প পাতি তেওঁলোকে চাহৰ ব্যৱসায়ত ধৰে আৰু তেলৰ উদ্যোগো গঢ়ে।'[২]

১৮২৩ চনত ৰবার্ট ব্রুছে অসমত চাহৰ সন্ধান পায়। পৰৱর্তী সময়ত ১৮৩৯ চনত আসাম চাহ কোম্পানী গঠন হয়। ১৮৬৬ চনত ইলেণ্ডলৈ চীনৰ পৰা ৯৩ শতাংশ চাহ আমদানি কৰিছিল। কিন্তু পাছত সেই হাৰ দহলৈ নামিল। তাৰ পৰিৱর্তে ভাৰতৰ পৰা শতকৰা ৫৯ ভাগ চাহ ইংলেণ্ডলৈ নিয়া হ'ল আৰু তাৰ সৰহ সংখ্যকেই অসমৰ। চাহ বাগান আৰম্ভ হোৱাৰ লগে লগে স্থানীয় কৃষকে বাগিচাসমূহত চাউলৰ যোগান ধৰিলে, একাংশ স্থানীয় শিক্ষিত লোকে আত্ম সংস্থাপনৰো সুবিধা লাভ কৰিলে।

ব্রিটিছসকলে ১৮৭৪ চনলৈকে অসমক বংগদেশৰ পৰাই শাসন কৰি আছিল। ১৮৭৪ চনৰ পৰা অসম আৰু ছিলেট জিলাক লৈ বেলেগকৈ এখন কমিছনাৰৰ অধীনৰ ৰাজ্য হিচাপে মর্যাদা দিয়ে। আহোম ৰজা পুৱন্দৰ সিংহক ৰাজচ্যুত, বিভিন্ন জনজাতীয় ৰজাসকলৰ ক্ষমতাচ্যুতি, খাজনাৰ প্রৱর্তন, সুকীয়া জনজাতীয় শাসন ব্যৱস্থা, মিলিটেৰী বিষয়াৰ দ্বাৰা শাসন, গড়কাপ্তানি বিভাগৰ সৃষ্টি, ৰাস্তাপথ নির্মাণ, চিপাহী বিদ্রোহ দমন, নতুন বিচাৰ ব্যৱস্থাৰ পৰিৱর্তনকে ধৰি এক আমোল পৰিৱর্তন সংঘটিত কৰিলে।

বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যই 'আসাম বুৰঞ্জী'ৰ আধাৰত সেই সময়ৰ কৃষি ব্যৱস্থাটোৰ বর্ণনা কৰিছে। ইংৰাজসকলে কৃষি ব্যৱস্থাটো উন্নত কৰাৰ পৰিৱর্তে মাটি বন্দিবস্তি আৰু খাজনা তোলাৰ ওপৰতহে গুৰুত্ব দিছিল। অসমত থকা শিল্প বিদ্যা যেনে বিভিন্ন প্রকাৰৰ কপাহ, মুগা, এড়ি, পাটৰ কাপোৰ, তাম, পিতল, কাঁহৰ বাচন, সোণ-ৰূপৰ অলংকাৰ, হাতী দাঁত আদিৰ দ্বাৰা অসমৰ লোকসকলে নিজৰ খেলৰ মাজতে ব্যৱসায় কৰিছিল। কিন্তু ব্রিটিছসকলে এই 'খেল' প্রথা নাইকিয়া কৰিলে। বিদেশী সামগ্রীৰ পয়োভৰত দেশৰ সামগ্রী লোপ পাবলৈ আৰম্ভ কৰিলে।

বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যই গ্রেইটৰ 'এ হিষ্টৰী অৱ অসম' আৰু গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ 'আসাম বুৰঞ্জী'ৰ সম্পর্কে এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে—

'গেইট আৰু বৰুৱা শাসন যন্ত্রৰ অংগ আছিল; কিন্তু গেইট আছিল সম্পূর্ণৰূপে ব্রিটিছ সাম্রাজ্যবাদৰ প্রতিভূ। তেওঁৰ বুৰঞ্জীত অসমীয়া মানুহৰ আন্তৰিক সামাজিক জীৱনৰ সংবাদ পোৱা নাযায় বুলিয়েই হয়। তাৰ তুলনাত গুণাভিৰামৰ বুৰঞ্জীত সংবাদ কিছু আছে। কিন্তু এই দুয়োখন বুৰঞ্জীতেই অসমত ব্রিটিছ শাসনৰ সুফলবিলাকৰ কথাকে ঘাইকৈ লিপিবদ্ধ কৰিছে।'[৩]

কিন্তু মাজে ভাৰতত ব্রিটিছ শাসনৰ ফলত হ'বপৰা সমস্যা, বিশেষকৈ যন্ত্রৰ প্রৱর্তন আৰু ৰে'লৰে স্থাপনৰ ফলত ভাৰতীয় গ্রাম্য অর্থনীতি যে ক্ষতিগ্রস্ত হ'ব সেই বিষয়ে উল্লেখ কৰিছিল—

'...যেতিয়ালৈকে ভাৰতত হিন্দুসকলে নিজ শক্তিৰ বলেৰে ব্রিট্রিছৰ শাসন ওফৰাই নেপেলায়, অথবা গ্রেট বৃটেইনৰ শাসনত অধিষ্ঠিত নহয়, তেতিয়ালৈকে ব্রিট্রিছ বুর্জোৱা শ্রেণীয়ে ভাৰতত প্রৱর্তন কৰা নতুন ব্যৱস্থা বা উপাদানসমূহৰ ফল ভাৰতবাসীয়ে ভোগ কৰিবলৈ নাপায়।'[৪]

মণিৰাম দেৱানে খেতিয়কৰ ওপৰত পৰা অত্যাধিক ঋণ আৰু খাজনাৰ বিৰুদ্ধে ব্রিটিছক অভিযোগ দিছিল। কিন্তু এই বিষয়তকৈ তেওঁ পুনৰ আহোম ৰাজ্য উত্থানৰ দিশটোতহে গুৰুত্ব দিছিল যিটো সম্ভৱ নাছিল। ঠিক একেদৰে গোমধৰ কোঁৱৰ, পিয়লি ফুকনেও একেটাই ভুল কৰিছিল—

'তেওঁ আহোম ৰাজ্য পুনৰ উদ্ধাৰ কৰাৰ সপোনহে দেখিছিল। এই শাসনৰ আধাৰ সামন্ত উৎপাদন ব্যৱস্থাৰ ভেটি ভাঙি পেলোৱাত সেই ৰাজ্য যে পুনৰ পতা সম্ভৱ নাছিল সেই কথা তেওঁ বুজিব পৰা নাছিল.....গোমধৰ কোঁৱৰ, পিয়লি ফুকন, খাছি, নগা, মণিপুৰী, কছাৰী, জয়ন্তীয়া, চিংফৌ আদি জনজাতিসকলে নতুন শক্তিটোক বাধা দিওঁতেও প্রায় একে ধৰণৰ দৃষ্টিভংগীৰ সীমাবদ্ধতা দর্শাইছিল।'[৫]

তৃতীয় খণ্ডটিত আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে অসমৰ উদাৰনৈতিক পুঁজিবাদ বিকাশৰ বাবে কেনেদৰে অহোপুৰুষার্থ চেষ্টা চলাইছিল তাৰ বিষয়ে বিস্তৃতভাৱে বর্ণনা কৰিছে। ঢেকিয়াল ফুকনৰ 'অৰুণোদই'ত প্রকাশিত 'ইংলেণ্ডৰ বিৱৰণ' (১৮৪৭ চনৰ এপ্রিল সংখ্যা)ত উল্লেখ কৰিছিল—

'হে প্রিয় মিত্রসকল, যদি সভ্য আৰু গিয়ানি আৰু সুখী হ'বৰ বাবে বাঞ্ছা কৰা তেন্তে টোপনিৰ উঠা।'[৬]

'ইংলেণ্ডৰ বিৱৰণ'ত ঢেকিয়াল ফুকনে বিদ্যাৰ উপকাৰী, কৃষি আৰু শিল্পৰ কর্মত গুৰুত্ব প্রদান কৰি অসম 'হাবি গুচি ফুলবাৰী' কৰিবলৈ আহ্বান জনাইছিল।

বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যই উল্লেখ কৰিছে যে ঢেকিয়াল ফুকনৰ এই আহ্বান অথলে যোৱা নাছিল। সংখ্যাত কম হ'লেও অসমীয়াই কৃষি, উদ্যোগ আৰু বাণিজ্য দিশত মন দিছিল। মণিৰাম দেৱান, জগন্নাথ বৰুৱা, নাৰায়ণ বৰুৱা, কে কে বৰুৱা, ৰাধা সন্দিকৈ, চন্দ্র আগৰৱাল, নীলাম্বৰ দত্তই চাহৰ ব্যৱসায়; মাণিকচন্দ্র বৰুৱা, ভোলানাথ বৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই কাঠৰ ব্যৱসায়ত মনোনিবেশ কৰিছিল। কিন্তু মূলধনৰ সমস্যাৰ বাবে ব্রিটিছৰ লগত ফেৰ মাৰিব পৰা নাছিল। তৎসত্বেও এই সময়ত অসমীয়া লোকে ব্যৱসায়ত আত্মনিয়োগ কৰাটো এক বৃহৎ সফলতা বুলিব পাৰি। সেই সময়ত শিক্ষাৰ প্রসাৰ বৰ মন্থৰ আছিল।

গ্ৰন্থখনিত উল্লেখ কৰা মতে নগাঁও জিলাত ১৯০০-০১ চনত হাইস্কুলত ৪৩০ গৰাকী, পাঠশালা স্কুলত ৪০৬৩ গৰাকী ছাত্ৰ আছিল আৰু শিক্ষিতৰ হাৰ আছিল মাত্ৰ ১.৫ শতাংশ। উল্লেখযোগ্য যে এই শিক্ষা কোনো কাৰিকৰী দিশত প্ৰদান কৰা নহৈছিল মাত্ৰ কেৰাণী চাকৰিৰ বাবেহে এই শিক্ষা প্ৰদান কৰিছিল। ইয়াৰ লগতে সেই সময়ত চাহ বাগানবোৰত থকা বনুৱাসকলে কেনে এক অৱস্থাৰ মাজত জীৱন অতিবাহিত কৰিছিল তাৰ চিত্ৰও প্ৰতিফলিত কৰিছিল। বনুৱা পৰিয়ালৰ আয়ৰ পৰিমাণ একেবাৰে কম। দাসত্ব প্ৰথাৰ প্ৰচলন আৰু আহাৰৰ অভাৱতো বনুৱাসকল ভূগিবলগা হৈছিল।

'চতুৰ্থ খণ্ড'ত ব্ৰিটিছসকলে পৰ্বতীয়া জনজাতিসকলৰ ৰাজ্য দখলৰ বিষয়ে বৰ্ণনা কৰিছে। নগাসকলে ভৈয়াম আক্ৰমণ কৰা আৰু চাহবাগান লুট-পাত কৰে বুলি বৃটিছসকলে নগা পাহাৰত তেওঁলোকৰ শাসন ব্যৱস্থাৰ পাতনি মেলিলে। পূৰ্বৰে পৰা চলি অহা লোণ, সোণ, বস্ত্ৰ, কৃষি শিল্পসমূহ ইংৰাজৰ হাতলৈ আনিলে। তাৰ লগে লগে কৰ-কাটলৰ সংখ্যা পূৰ্বৰ ৰজাৰ দিনতকৈ কেইবাগুণ কৰিলে। ইয়াৰ ফলত বিদ্ৰোহৰ সূচনা হৈছিল যদিও উন্নতমানৰ অস্ত্ৰ-শস্ত্ৰৰে সুসজ্জিত ইংৰাজে সকলোকে দমন কৰিলে। মণিপুৰ, কাছাৰ, জয়ন্তীয়া, অসম, গাৰো অঞ্চলক ব্ৰিটিছে নিজৰ অধীনলৈ আনে। পৰৱৰ্তী সময়ত ড° গ্ৰিগৰশ্যন আৰু তেওঁলোকৰ লগৰীয়াসকলক আদিসকলে হত্যা কৰাত ব্ৰিটিছে শদিয়া আৰু বালিৰ পাৰা অঞ্চল দুটা নিজৰ অধীনলৈ আনে।

'পঞ্চম খণ্ডত' ১৮৩৫ চনত হাদিৰা চকীত উঠাই অসমৰ শুল্ক আয় নোহোৱাৰ ফলত বাহিৰৰ লোণ সাধাৰণ মানুহে খাবলৈ নোপোৱাৰ কথা বৰ্ণনা কৰিছে। ইয়াৰ লগতে সেই সময়ত গোসাঁই, পুৰোহিত, সেনাবাহিনী, চকী চলোৱা বিষয়া, পঞ্চায়তী আৰু কৰ-কাটল আদায় দিয়াৰ সকলো নিয়ম সলনি কৰি এইসকলৰ আয়, প্ৰতিপত্তি আৰু ক্ষমতা নাইকিয়া কৰিলে। খেতিয়কসকলক অত্যাধিক শোষণ কৰিবলৈ ধৰিলে, সৰহসংখ্যক মানুহৰে উপাৰ্জনৰ পথ বন্ধ হ'ল। অসমীয়া জাতিৰ সাংস্কৃতিক ঐতিহ্যৰ কথা তেওঁলোকে চিন্তা কৰা দেখা নগ'ল। ঊনবিংশ শতিকাৰ শেষভাগৰ মধ্যবিত্ত অসমীয়াসকলৰ প্ৰচেষ্টাতহে অসমীয়া সংস্কৃতিৰ নৱজাগৰণৰ সৃষ্টি হয়।

দ্বিতীয় অধ্যায় 'মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ উত্থানৰ যুগ'ত তেখেতে মণিৰাম দেৱানৰ প্ৰাসংগিকতা আলোচনা কৰিছে। এই প্ৰসংগত উল্লেখ কৰিছে যে মণিৰাম দেৱানে আধুনিক অসমীয়াৰ জীৱনক গঢ়িবলৈ চেষ্টা কৰিছিল। তেখেতে অৰুণোদই আলোচনীলৈ আৰ্থিক অনুদান আগবঢ়াই এক কথাত আধুনিক সাহিত্যৰ পৃষ্ঠপোষকতা কৰিছিল আৰু ল'ৰা-ছোৱালীক ইংৰাজী পঢ়াত উৎসাহ যোগাইছিল। হলিৰাম ঢেকিয়াল ফুকনেও সেইসময়ত বাংলা ভাষাত 'আসাম বুৰঞ্জী' ৰচনা কৰিছিল। ইয়াৰ সমান্তৰালভাৱে অসম এছ'ছিয়েছনৰ জন্ম, অসম কাউন্সিল গঠন, অসম সাহিত্য সভা, অসম ছাত্ৰ সন্মিলনৰ গঠনে অসমৰ সাংস্কৃতিক জীৱনলৈ নতুন ছন্দ কঢ়িয়াই আনিলে। সংগীতৰ ক্ষেত্ৰত পাৰ্বতীপ্ৰসাদ ৰৰুৱা, জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা, বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভা; ব্যৱসায়ৰ ক্ষেত্ৰত মাণিক চন্দ্ৰ ৰৰুৱা, ভোলানাথ ৰৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা প্ৰণিধানযোগ্য। খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম প্ৰচাৰ কৰিবলৈ মিছনেৰীসকল অসমলৈ আহিছিল যদিও অসমীয়া সমাজক আকৃষ্ট কৰিব নোৱাৰিলে। তাৰ পৰিৱৰ্তে পৰ্বতীয়া জনজাতিসকলৰ মাজতহে খ্ৰীষ্টান ধৰ্মই প্ৰসাৰতা লাভ কৰিলে। এই সম্পৰ্কত লেখকে এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে—

'অসমীয়া শিক্ষিতসকলৰ মনত ইংৰাজী শিক্ষা, চাল-চলন, সাজ-পোছাক, ইংৰাজ চিন্তানায়ক আৰু সাহিত্যিকসকলৰ প্ৰভাৱহে অনুভৱ হ'ল।'[৭]

খ্ৰীষ্টান ধৰ্মৰ প্ৰসাৰ নহ'লেও অসমত ক্ষীণকৈ হ'লেও ব্ৰহ্মধৰ্মৰ প্ৰসাৰ ঘটিছিল। গুণাভিৰাম ৰৰুৱা, কমলাকান্ত ভট্টাচাৰ্য, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই ব্ৰাহ্মধৰ্ম গ্ৰহণ কৰিছিল। সেই সময়তে অসমলৈ ইউৰোপীয় ধাৰণাটো সোমাই আহিছিল। এই ক্ষেত্ৰত যজ্ঞৰাম খাৰঘৰীয়াৰ নাম উল্লেখযোগ্য। যজ্ঞৰাম খাৰঘৰীয়াৰ বিষয়ে এনেদৰে বৰ্ণনা কৰিছে—

'শুনামতে তেওঁৰ ঘৰত ইটালীয় মেহোগনি কাঠৰ মনোহৰ চেলাৰ আছিল আৰু য়ুৰোপীয় বিষয়াসকলৰ লগত বহি সুন্দৰভাৱে সুৰাপান আৰু আহাৰ কৰিছিল। তেওঁৰ সাজপাৰো য়ুৰোপীয় আছিল।'[৮]

ইয়াৰ লগে লগে ব্ৰিটিছসকল অহাৰ লগে লগে অসমৰ ঘৰ-দুৱাৰৰ নিৰ্মাণ প্ৰণালীৰো পৰিৱৰ্তন হ'ল। সেই সময়ত ঘৰবোৰৰ বৰ্ণনা এনেদৰে পোৱা যায়—

'চাং-বঙলা, 'আসাম টাইপ' ঘৰ, দীঘলীয়া বহুত কোঠাযুক্ত চাৰিচলীয়া স্কুল বা কাছাৰী, প্ৰশস্ত বাৰাণ্ডা, সমুখলৈ ওলোৱা দুৱাৰমুখ.....চ'ৰাঘৰ, মাৰল ঘৰ, বৰঘৰ.....অতীতৰ অসমীয়া ঘৰবোৰৰ আৰ্হি এই নতুন যুগত নামমাত্ৰ ৰ'ল।'[৯]

তৃতীয় অধ্যায় 'ধৰ্ম' শীৰ্ষক আলোচনাত বিভিন্নগৰাকী ব্যক্তিৰ ধৰ্ম সম্পৰ্কীয় মতবাদসমূহৰ আলোচনা আগবঢ়াইছে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই নিজকে অনীশ্বৰবাদী বুলি কৈছিল। আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ মতে 'পৰমেশ্বৰ এক'; মফিজুদ্দিন আহমদ হাজৰিকাই কৈছিল যে জ্ঞান বিবৰ্জিত ধৰ্ম ধৰ্মই নহয়;

কমলাকান্ত ভট্টাচার্যই উল্লেখ কৰিছিল—ধর্মৰ সংস্কাৰ নহ'লে সাহিত্যৰ সংস্কাৰ হ'ব নোৱাৰে। ধর্ম সংস্কাৰ কৰিব খুজিলে বিশ্বধর্মৰ মাজেদি যাব লাগিব। লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই উল্লেখ কৰিছিল যে সকলো ধর্মৰ সাৰ নাম ধর্ম, সকলো ধর্মৰ প্ৰাণ ধর্ম আৰু আমাৰ জীৱনৰ হোৱা উচিত নামধর্ম।

এনেদৰে বিভিন্নগৰাকীৰ দৃষ্টিৰে ধর্ম বিষয়টো উত্থাপন কৰিছে। লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে সেই সময়ত অসমত সমাজ সংস্কাৰ গঢ় লৈ উঠিছে। পূৰ্বৰ দৰে বাল্যবিবাহ, যৌতুক প্ৰথা, কন্যাপণ প্ৰথাৰ অৱসান ঘটিল। ইয়াৰ সমান্তৰালভাৱে অসমত বসবাস কৰা বহু জনজাতি হিন্দু ধর্মৰে দীক্ষিত হ'ল, তাৰ বিপৰীতে বড়োসকলে ব্ৰহ্মধর্ম গ্ৰহণ কৰিলে। পৰ্বতৰ আৰু ভৈয়ামৰ জনজাতিৰ মাজত খ্ৰীষ্টান ধর্মৰ প্ৰসাৰ লাভ কৰাটো এই সময়ৰ এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ।

গ্ৰন্থখনিৰ 'চতুৰ্থ অধ্যায়'ত 'সাহিত্য' বিষয়ত ডেৰশ বছৰীয়া অসমীয়া সাহিত্যৰ পৰিৱৰ্তন সম্পৰ্কত আলোচনা দাঙি ধৰিছে। প্ৰাচীন অসমীয়া সাহিত্যৰ যি ধাৰা সেই ধাৰা ব্ৰিটিছসকল অহাৰ পৰা নাইকিয়া হৈ গ'ল। ১৮১৩ চনত প্ৰথম অসমীয়া বাইবেল ছপা হোৱাৰ লগে লগে অসমীয়া ভাষা ছপাশালৰ যুগত প্ৰৱেশ কৰে। ১৮৪৬ চনত অৰুণোদই প্ৰকাশে অসমীয়া সাহিত্যত এক নতুন যুগৰ সূচনা কৰিলে। 'অৰুণোদই'ত প্ৰবন্ধ, পদ্য, সংবাদ-সাহিত্য আদি প্ৰকাশ পায়। 'অৰুণোদই' যুগতে হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা আৰু গুণাভিৰাম বৰুৱাই উদাৰনৈতিক প্ৰগতিশীল মানৱতাবাদৰ প্ৰৱৰ্তন কৰে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ 'ব্যংগ সাহিত্যৰ ধাৰা পৰৱৰ্তী সময়ৰ সাহিত্যিকসকললৈ প্ৰৱাহিত হ'ল। পৰৱৰ্তী সময়ত বেজবৰুৱাই অসমীয়া সাহিত্যৰ ধাৰাটিক শক্তিশালী কৰি তোলে। জোনাকী যুগতে অসমীয়া সাহিত্য বিচিত্ৰ ৰূপ পৰিধান কৰে।

এই অধ্যায়ত চল্লিশৰ দশকত জয়ন্তী আৰু ৰামধেনু আলোচনীয়ে লোৱা ভূমিকা, হেম বৰুৱা, কেশৰ মহন্ত, নলিনীধৰ ভট্টাচার্য, ৰাম গগৈ, নৱকান্ত বৰুৱা, অজিত বৰুৱা, ভবেন বৰুৱা, নীলমণি ফুকন আদিকে ধৰি আধুনিক যুগৰ কবিসকলৰ কবিতা সম্পৰ্কে বিস্তৃতভাৱে বর্ণনা দাঙি ধৰিছে। কবিতাৰ লগতে উপন্যাস, চুটিগল্প, নাটক, সমালোচনা সাহিত্য, জীৱনী সাহিত্য, প্ৰবন্ধ আদিৰ বিষয়ে বর্ণনা কৰিছে।

পঞ্চম অধ্যায়ত 'সাংবাদিকতা'ৰ বিষয়ে ব্যাখ্যা আগবঢ়াইছে। লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে বঙালী ভাষাত আলোচনী ওলোৱাৰ প্ৰায় ডেৰকুৰি বছৰৰ পাছতহে অসমীয়াত 'অৰুণোদই' প্ৰকাশ পায়। 'অৰুণোদই'ৰ পাছত হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ 'আসাম নিউজ', গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ 'আসাম বন্ধু'; চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰালা আৰু পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা- বেণুধৰ ৰাজখোৱাৰ সম্পাদনাত ক্ৰমে 'আসাম নিউজ', 'আসাম বন্ধু', 'জোনাকী' আৰু 'বিজুলী' এই চাৰিখন কাকত প্ৰকাশ পায়। 'অৰুণোদই'ৰ আৰ্হিতে অসমীয়া কাকতবোৰ প্ৰকাশ পাইছিল যদিও জোনাকী, বাঁহী, ঊষা, চেতনা, আৱাহন আদি আলোচনীবোৰত বিষয়ৰ যথেষ্ট পৰিৱৰ্তন পৰিলক্ষিত হয়। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্যই এই অধ্যায়ত প্ৰকাশিত আলোচনী যেনে 'টাইমছ অৱ আসাম', 'আসাম বন্তি', 'আসাম বিলাসিনী'কে ধৰি প্ৰকাশিত বিভিন্ন বাতৰি কাকত আৰু আলোচনীৰ বর্ণনা দাঙি ধৰিছে। অসমৰ সাংবাদিকতা প্ৰসংগত লেখকে উল্লেখ কৰিছে—

'অসমত সাংবাদিকতা পয়া লাগি আছে। তাৰ প্ৰধান কাৰণ ইয়াত বাতৰি-কাকত প্ৰকাশৰ খৰচ অধিক, যাতায়াত ব্যৱস্থা খুউব উন্নত নহয় আৰু ব্যক্তি স্বাধীনতাৰ পৰম্পৰা বৰ গভীৰ নহয়।'[১০]

'সাংবাদিকতা' শীৰ্ষক আলোচনাত লেখকে ৰেডিঅ'ৰ প্ৰসংগও দাঙি ধৰি উল্লেখ কৰিছে যে ৰেডিঅ'ই অসমত বসবাস কৰা বিভিন্ন জাতি জনগোষ্ঠীৰ গীত-মাত পৰিবেশন কৰাত সহায় কৰিছে কিন্তু ৰেডিঅ'ই সাংস্কৃতিক জাগৰণ আনিব পৰা নাই। অসমৰ সংবাদ মাধ্যম সম্পৰ্কত তেখেতৰ মনোভাৱ এনেধৰণৰ—

'মানৱ সমাজৰ সাধাৰণ উদ্দেশ্য ন মানুহ আৰু ন সমাজ সংস্কৃতি নির্মাণতো সংবাদ পত্ৰৰ দায়িত্ব সর্বাধিক হোৱা উচিত। ....ব্যক্তি পূজা নিন্দনীয় আৰু প্ৰকাশৰ স্বাধীনতাৰ অপব্যৱহাৰ।'[১১]

ষষ্ঠ অধ্যায়ত 'সংগীত আৰু কলা'ৰ বিষয়ে বর্ণনা কৰিছে। এই প্ৰসংগত উল্লেখ কৰিছে যে অসমত মার্গীয় আৰু দেশী সংগীতৰ পৰম্পৰা অতীতৰ পৰাই চলি আহিছিল। আধুনিক অসমত নব্য মার্গীয় সংগীত লক্ষ্মীৰাম বৰুৱাৰ হাততে আৰম্ভ হয় বুলি লেখকে উল্লেখ কৰিছে। অসমৰ বিভিন্ন ঠাইত উচ্চাংগ সংগীতৰ চর্চাও আছিল। এইক্ষেত্ৰত গুৱাহাটীত শশী চন্দ্ৰ গোস্বামী, পর্বতীয়া গোসাঁই, নগেন্দ্ৰ নাৰায়ণ চৌধুৰী, তিলক দাস আদিৰ নাম উল্লেখযোগ্য। স্বাধীনতাৰ পাছত বিজ্ঞানসন্মত পদ্ধতিৰে ছাত্ৰই সংগীত চর্চা আৰম্ভ কৰিছিল। অসমৰ আধুনিক সংগীতৰ বিষয়ে লেখকে এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে—

'অসমৰ আধুনিক সংগীতক বিশুদ্ধ আৰু সচেতন মার্গীয় আধাৰত প্ৰতিষ্ঠিত বুলিব নোৱাৰি। তথাপি ইয়াতো এটা যে ৰীতি আছে তাক নুই কৰা ভুল হ'ব। মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ দৈনন্দিন মনোৰঞ্জনক সংগীত ৰূপে ইয়াৰ জনপ্ৰিয়তা সন্দেহাতীত আৰু চিনেমাৰ আৰু ৰেডিঅ'ৰ মাধ্যমেদি লক্ষ লক্ষ শ্ৰোতাৰ

বিনোদনৰ সহায়ক হৈ পৰিছে। আধুনিক সংগীত সম্পূৰ্ণৰূপে সংস্কাৰমুক্ত।'[১২]

শিল্পীসকলে আধুনিক গীতক কলাসন্মত আৰু উদ্দেশ্যধৰ্মী কৰাৰ বাবে প্ৰচেষ্টা লয়। এই প্ৰসংগত লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে সমাজতত্ত্বৰ দৃষ্টিৰ পৰা মানৱ সমাজৰ যি সনাতন মানৱীয় লক্ষ্য, তাকহে উদ্দেশ্য ৰূপে গ্ৰহণ কৰাটো বিধেয়, কলাধৰ্মিতা বিসৰ্জন দি আধুনিক গীতে যদি কেৱল শ্লগান বা সাময়িক কাৰ্যসূচীক প্ৰচাৰ কৰিবলৈ বিচাৰে, তেন্তে ই প্ৰচাৰধৰ্মী আৰু আৱেদনৰহিত হৈ পৰাৰ সম্ভাৱনা থাকে।

অসম লোক গীতত চহকী। বিভিন্ন জাতি জনগোষ্ঠীৰ মাজত লোকগীতৰ মেটমৰা ভঁৰাল আছে। এই লোকগীতৰ শিক্ষা বা চৰ্চা অসমত ভালকৈ হোৱা নাই। লোকগীতৰ সম্পৰ্কত লেখকে কৈছে—

'লোক সংগীতৰ ক্ষেত্ৰত সৃষ্টিৰ পূৰ্ণতা লাভ কৰাৰ অৱকাশ বেছি, কাৰণ ইয়াত নতুন উপাদান সৃষ্টিৰ সুযোগ সৰহ। ই লুইতৰ দৰে গতিশীল। কেৱল গোষ্ঠীৰ সচেতনতাত আৱদ্ধ নাথাকি শিল্পগত চেতনাৰে লোক কলাসমূহৰ চৰ্চা, শিক্ষা আৰু নব্য সৃষ্টি আৱশ্যক।'[১৩]

এই অধ্যায়তে লেখকে অসমৰ চিত্ৰ কলাৰ সম্পৰ্কে এক বৰ্ণনা দাঙি ধৰিছে। অসমৰ প্ৰাচীন ভাস্কৰ্য নিৰ্মাণৰ বাবে প্ৰয়োজন হোৱা শিল, কাঠ, হাতী দাঁত, বাঁহ, তাম, পিতল আদি সামগ্ৰীৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ লগতে প্ৰাচীন মঠ-মন্দিৰ, দৌল-দেৱালয়সমূহৰ শিল আৰু ইটাৰে নিৰ্মাণ কৰিছিল সেই কথাও উল্লেখ আছে। আধুনিক যুগ আৰম্ভ হোৱাৰ লগে লগে চিত্ৰকলা, স্থাপত্য কলা আৰু ভাস্কৰ্য সুকীয়া ৰীতি পৰিগ্ৰহণ কৰিলে। অসমলৈ পাশ্চাত্যৰ প্ৰভাৱ আহিল।

গ্ৰন্থখনিৰ সপ্তম অধ্যায়ৰ নামকৰণ কৰিছে 'তলসৰা' নামেৰে। এই অধ্যায়ত মহাপুৰুষ শংকৰদেৱৰ সময়ৰ পৰা চলি অহা ভাওনাৰ অভিনয়, লোক নাট্যানুষ্ঠান 'যাত্ৰাভিনয়', 'এই 'যাত্ৰাভিনয়'ৰ প্ৰসাৰতা বঢ়াৰ লগে লগে নামনি অসমত ভাওনাৰ প্ৰচলন কমি অহা, ভাওনাৰ পৰা ফালৰি কাটি সুকীয়া ৰূপ পোৱা সূত্ৰধাৰী, চালি নৃত্য, অসমীয়া মঞ্চত নাট প্ৰদৰ্শনৰ লগতে অসমত পূৰ্বৰে পৰা চলি অহা বিভিন্ন লোক নাট্যানুষ্ঠান যেনে ওজাপালি, দেওধনি, দেৱদাসী, পুতলা নাচ, ঢুলীয়া আৰু খুলীয়া ভাওনাৰ প্ৰসংগও উল্লেখ আছে।

ব্ৰিটিছসকল অহাৰ পাছৰ পৰাই আধুনিক নাট্যানুষ্ঠানবোৰ গঢ় লৈ উঠিল। পৌৰাণিক নাটক, ঐতিহাসিক, সামাজিক নাট ৰচনা হ'বলৈ ধৰিলে। অসমত বোলছবি নিৰ্মাণৰ কাম আৰম্ভ হ'ল। ১৯৩৫ চনত জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ 'জয়মতী' মুক্তি পায়। 'জয়মতী' সম্পৰ্কত লেখকে উল্লেখ কৰিছে—

"জয়মতী' তাৎপৰ্যপূৰ্ণ বোলছবি। এই বোলছবিত সাহিত্যধৰ্মী নাটক এখন অতিশয় নিষ্ঠাৰে বোলছবিলৈ ৰূপায়িত কৰা হৈছিল। তাৰ কাৰণে নিয়মিতভাৱে এদল আশাশুধীয়া মানুহে পুৰণি সংস্কৃতিৰ ওপৰত গৱেষণা কৰিছিল।'[১৪]

এই অধ্যায়টিত শংকৰদেৱৰ সময়ৰ পৰা মঞ্চ নাটক, বোলছবিলৈকে এক বিস্তৃত বৰ্ণনা দাঙি ধৰিছে।

অষ্টম তথা অন্তিম অধ্যায় 'তিনিটা পৰম্পৰা' শীৰ্ষকত ডেৰশ বছৰত হোৱা অসমীয়া সমাজৰ পৰিৱৰ্তনৰ বিষয়ে ব্যাখ্যা আগবঢ়াইছে। পুঁজিবাদীৰ ফলত গ্ৰাম্য অসমৰ উৎপাদন আৰু কৰ্মস্পৃহা কমি আহিল। সেইবাবে বাহিৰৰ বনুৱা আহিল। যোগাযোগৰ সুবিধা হোৱাৰ বাবে বজাৰ দখল কৰিবলৈ বাহিৰৰ ব্যৱসায়ীসকল অসমলৈ আহিল। অসমীয়াৰ সবল নেতৃত্বৰ অভাৱত অসমত নতুন নতুন প্ৰথাৰ আমদানি হ'ল। তথাপিও এই সময়ত অসমত মানৱতাবাদী সাহিত্য, গৱেষণাৰ বিকাশ নঘটাকৈ থকা নাছিল। স্বাধীনতাৰ পিছৰ পৰা অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীয়ে নিজস্ব সংস্কৃতি সংৰক্ষণৰ বাবে বিভিন্ন প্ৰচেষ্টা হাতত লৈছে।

লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে অসমত তিনিটা সংস্কৃতিৰ ধাৰা প্ৰৱাহমান হৈ আছে—

ক) আদিম কলা আৰু মৌখিক সাহিত্য ঃ এইবোৰ আধুনিকতাৰ ফলত শেষ হৈ যাবলৈ ধৰিছে। গতিকে এইবোৰ প্ৰকাশ কৰি স্বৰূপ উদ্‌ঘাটনৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে।

খ) মধ্যযুগৰ ৰস সাহিত্য, শাস্ত্ৰীয়, চিত্ৰকলা, নৃত্য, সংগীত আৰু ভাস্কৰ্য এইকেইটা পৰিবৰ্ধন আৰু মূল্যায়নৰ প্ৰয়োজন আছে।

গ) অসমীয়া, প্ৰবাসী বঙালী, মণিপুৰী আদি ভাষাত যি নতুন মধ্যবিত্ত সাহিত্য সংস্কৃতি গঢ় লৈ উঠিছে তাৰ নন্দনতাত্ত্বিক মূল্যায়ন।

এই তিনিও প্ৰকাৰৰ সাংস্কৃতিক ধাৰা একেলগে প্ৰৱাহিত হ'লেহে অসমক সহায় কৰিব। ইয়াৰ লগতে বিজ্ঞানৰ শিক্ষা আৰু চৰ্চাৰ প্ৰয়োজন আছে। অষ্টম অধ্যায়টিত লেখকে পুঁজিবাদৰ বিৰুদ্ধে গ্ৰাম্য অৰ্থনীতি সবল কৰা, অতীজৰে পৰা প্ৰৱাহিত সংস্কৃতিৰ ধাৰাসমূহ অক্ষুণ্ণ ৰখাৰ কথা ব্যক্ত কৰিছে।

০.৬ উপসংহাৰ ঃ

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ 'ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি' শীৰ্ষক গ্ৰন্থত ব্ৰিটিছসকলে অসম দখল

কৰাৰ পৰা স্বাধীনতাৰ সময়লৈকে এই সুদীর্ঘ সময়ৰ সাংস্কৃতিক দিশসমূহ আলোচনা কৰিছে। 'সংস্কৃতিয়ে মানৰ সভ্যতাৰ সকলো দিশ সামৰি লয়', সেয়ে ভট্টাচার্যই অসমৰ প্রতিটো দিশ যেনে ৰাজনীতি, অর্থনীতি, শিক্ষা, স্বাস্থ্য, ব্যৱসায়, কৃষি, শাসন যন্ত্র, ধর্ম, সাহিত্য, গীত, নৃত্যকে ধৰি সকলোখিনি বিষয় আলোচনা কৰিছে। প্রকৃততে গ্রন্থখনক 'ডেৰশ বছৰীয়া' অসমৰ এক জীৱন্ত দলিল বুলিব পাৰি।

০.৭ সিদ্ধান্ত ঃ

গৱেষণা গ্রন্থখনৰ অন্তত কেইটামান সিদ্ধান্তলৈ আহিব পাৰি—

১। ক) প্রথম অধ্যায়টিৰ জড়িয়তে ব্রিটিছসকল অসমলৈ অহাৰ লগে লগে অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ পৰিৱর্তন, আৰু নতুন নতুন যন্ত্রপাতিৰ ব্যৱহাৰ পৰিলক্ষিত হৈছে।

খ) অসমত চাহখেতিৰ পাতনি, আহোম আৰু অন্যান্য জনজাতীয় ৰজাসকলক ক্ষমতাচ্যুৎ কৰাৰ বিৱৰণ পোৱা যায়।

গ) আনন্দৰাম ফুকনে অসমৰ উদাৰনৈতিক পুঁজিবাদ বিকাশৰ বাবে কৰা চেষ্টা, অসমত ব্যৱসায় আৰম্ভ কৰা অসমীয়াসকলৰ বিৱৰণ পোৱা যায়।

ঘ) ব্রিটিছসকলে কেনেদৰে জনজাতিসকলক দমন কৰিছিল তাৰ সবিশেষ গ্রন্থখনত পোৱা যায়।

ঙ) অসমত লোণৰ অভাৱ হোৱাৰ বর্ণনা কৰ-কাটলৰ নিয়ম সলনি কৰাৰ বিষয়ে পোৱা যায়।

২। দ্বিতীয় অধ্যায়ত আধুনিক অসমীয়া সাহিত্য, সংগীত, ধর্মৰ বিষয়ে পৰিচয় পোৱা যায়।

৩। তৃতীয় অধ্যায়ত বিভিন্ন গৰাকী পণ্ডিৰ ধর্ম সম্পর্কীয় মতবাদ আৰু অসমত হোৱা বিভিন্ন সমাজ সংস্কাৰমূলক কার্যাৱলীৰ বর্ণনা পোৱা যায়।

৪। চতুর্থ অধ্যায়ৰ যোগেদি ব্রিটিছসকল অহাৰ পৰা স্বাধীনতাৰ সময়লৈকে অসমীয়া সাহিত্যৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰ বিষয়ে অৱগত হ'ব পাৰি।

৫। পঞ্চম অধ্যায়ত অসমীয়া সংবাদ জগতত সাংবাদিক আৰু ৰেডিঅ'ৰ তথ্য দাঙি ধৰিছে।

৬। ষষ্ঠ অধ্যায়ত সংগীতৰ বিভিন্ন ধাৰা, চিত্রকলা, স্থাপত্য, ভাস্কর্যৰ বিশদ বিৱৰণ পোৱা যায়।

৭। সপ্তম অধ্যায়ৰ জড়িয়তে শংকৰদেৱৰ সময়ৰ ভাওনা, অসমৰ বিভিন্ন লোক নাট্যানুষ্ঠান, বোলছবি সম্পর্কে জানিব পাৰি।

৮। অষ্টম অধ্যায় অধ্যয়নৰ যোগেদি অসমৰ গ্রাম্য অর্থনীতি সবল কৰা আৰু প্রাচীন অসমীয়া সংস্কৃতিৰ ধাৰা সম্পর্কে বর্ণনা পোৱা যায়। ❑

পাদটীকা ঃ

১। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য ঃ ডেৰশ বছৰৰ অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি, পৃষ্ঠা-২
২। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৪
৩। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৮
৪। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৯
৫। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৯
৬। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৯
৭। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৩২
৮। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৩৯
৯। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৪০
১০। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৭৫
১১। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৭৮
১২। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৮১
১৩। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-৮৬
১৪। পূর্বোক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা-১০২

প্রসংগ গ্রন্থ ঃ

১। গগৈ, লীলা ঃ বুৰঞ্জী সাহিত্য, বনলতা সংস্কৰণ, ডিব্রুগড়, দ্বিতীয় প্রকাশ, ২০২২
২। নেওগ, মহেশ্বৰ ঃ অসমৰ সাংস্কৃতিক ঐতিহ্য, নৃত্য-গীত-অভিনয়, কৌস্তুভ প্রকাশন, ডিব্রুগড়, অসম, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৫
৩। বৰুৱা, যতীন ঃ আধুনিক শিক্ষাত নতুন চিন্তাধাৰা, লয়ার্ছ বুক ষ্টল, গুৱাহাটী, দ্বিতীয় প্রকাশ, ১৯৯২
৪। ভট্টাচার্য, বীৰেন্দ্রকুমাৰ ঃ ডেৰশ বছৰীয়া অসমীয়া সংস্কৃতিত এভুমুকি, অসম প্রকাশন পৰিষদ, বিশেষ সংস্কৰণ, ফেব্রুৱাৰী, ২০২৩
৫। শইকীয়া, নগেন ঃ গৱেষণা পদ্ধতি পৰিচয়, কৌস্তুভ প্রকাশন, ডিব্রুগড়, দ্বিতীয় প্রকাশ, ২০০৫
৬। শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ ঃ অসমীয়া নাট্য সাহিত্য, সৌমাৰ প্রকাশ, পুনৰ মুদ্রণ, ২০০৩
৭। শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, দশম সংস্কৰণ, পুনৰ মুদ্রণ, ২০১৮
৮। শর্মা, হেমন্ত কুমাৰ ঃ অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত, বীণা লাইব্রেৰী, গুৱাহাটী, অসম, ঊনৈশ সংখ্যক সংস্কৰণ, ২০২১

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

ত্রৈলোক্য নাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী

ডালিমী পাঠক

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ বিশ্ববিদ্যালয়, নগাওঁ
৮১৩৫০০৮৮৬৫
babludalimipathak@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া গদ্যসাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনক সমৃদ্ধিশালী কৰি তোলাৰ ক্ষেত্ৰত ত্ৰৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ গদ্যৰ ভূমিকা মনকৰিবলগীয়া। বিশেষকৈ সমালোচনা সাহিত্যৰ সৈতে জড়িত ত্ৰৈলোক্য নাথ গোস্বামীয়ে ভালেসংখ্যক গদ্য ৰচনা কৰি অসমীয়া গদ্য সাহিত্যৰ ভঁৰাল টনকীয়াল কৰি গৈছে। অসমীয়া আত্মজীৱনী সাহিত্যৰ ইতিহাসত গোস্বামীৰ আত্মজীৱনী 'অতীতৰ কথা'ৰ গদ্যত বিশেষ বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। এনে গদ্যশৈলীয়ে ত্ৰৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ গদ্যক স্বকীয়তা প্ৰদান কৰিছে। বৰ্ণনীয় বিষয় স্পষ্ট কৰিবলৈ একাধিক বিশেষণীয় শব্দৰ প্ৰয়োগ, প্ৰেক্ষাপটৰ বিশদ বিৱৰণ দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত অসমাপিকা ক্ৰিয়াৰ প্ৰয়োগৰে বাক্য দীঘল কৰি নীয়াৰ ৰীতি, প্ৰচুৰ পৰিমাণে ইংৰাজী শব্দৰ প্ৰয়োগ, দীঘল বাক্যৰ ক্ষেত্ৰত যতিচিহ্ন বিশেষকৈ চেমিকলন (;) ৰ প্ৰয়োগৰ জৰিয়তে পাঠকৰ আগত বক্তব্য বিষয় অধিক স্পষ্ট ৰূপত তুলি ধৰাৰ প্ৰয়াস, প্ৰবাদ-প্ৰবচন, খণ্ডবাক্য, জতুৱা ঠাঁচৰ যথাযথ ব্যৱহাৰ, বৰ্ণনীয় বিষয়ক পাঠকৰ আগত অধিক স্পষ্টৰূপত তুলি ধৰিবলৈ ৰচনাৰ মাজত বিভিন্ন লেখকৰ উক্তিৰ প্ৰয়োগ আদিয়ে ত্ৰৈলোক্য নাথ গোস্বামীৰ গদ্যক এক সুকীয়া ৰূপ প্ৰদান কৰিছে।

সূচক শব্দ ঃ আত্মজীৱনী, গদ্য, শৈলী, ত্ৰৈলোক্যনাথ গোস্বামী।

০.১ অৱতৰণিকা ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ আন আন বিভাগৰ দৰে বৰ্তমান সময়ত আত্মজীৱনী সাহিত্যইও বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰা দেখা যায়। ভিন্ন ধৰণৰ বিষয়বস্তু লৈ সুকীয়া সুকীয়া প্ৰেক্ষাপটত স্বকীয় দৃষ্টিভংগীৰে সুকীয়া সুকীয়া আত্মজীৱনী ৰচনা অসমীয়া সাহিত্যত দেখা যায়। অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল সমৃদ্ধ কৰাত এই আত্মজীৱনীৰ ভূমিকা অপৰিসীম। ত্ৰৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ সকলো প্ৰকাৰৰ ৰচনাই তেওঁৰ স্বকীয় গদ্যশৈলীৰ ৰূপৰেখাই সমসাময়িক কালৰ আধুনিক অসমীয়া ভাষাৰ ৰূপ নিৰ্ণয় কৰে। সমসাময়িক সামাজিক, সাংস্কৃতিক বিন্যাসৰ সৈতে সংযুক্ত তেওঁৰ আত্মজীৱনীক একক আৰু অনন্য কৰি তুলিছে বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ কথাশৈলীয়ে। বিষয় যিয়ে নহওক তেওঁৰ লেখা সদায় সাৱলীল।

গদ্যৰীতিৰ ক্ষেত্ৰত বৰ্ণনাত্মক আৰু যুক্তিনিষ্ঠ ৰীতিয়ে বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰাৰ সমান্তৰালভাৱে বিভিন্ন চিন্তামূলক, বাৰ্তাবাহক বা জ্ঞানজ্ঞাপক, কথোপাকথনমূলক আদি ৰীতিয়ে প্ৰাধান্য পাইছে। এনে ভিন্ন ৰীতিয়ে লেখকৰ বিষয় অনুসৰি দৃষ্টিভংগী স্পষ্ট কৰাত বিশেষভাৱে সহায় কৰিছে। ইয়াৰ সমান্তৰালকৈ আন কেতবোৰ শৈলীগত প্ৰসংগ

যেনে এপ্রিগ্রাফ (Epigraph)ৰ প্রয়োগ সমান্তৰালবাদ (Parallelism) আদিয়ে ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যক এক সুকীয়া শৈলীগত বৈশিষ্ট্য প্রদান কৰিছে।

০.২ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

বিশেষকৈ সমালোচনা সাহিত্যৰ সৈতে জড়িত ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীয়ে ভালেসংখ্যক গদ্য ৰচনা কৰি অসমীয়া গদ্য সাহিত্যৰ ভঁৰাল টনকীয়াল কৰিছে। তেওঁৰ আত্মজীৱনী 'অতীতৰ কথা'ৰ গদ্যত এক বিশেষ বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। এনে বৈশিষ্ট্য গোস্বামীৰ গদ্যত কেনেদৰে সোমাই আছে সেয়া বিচাৰ কৰি চোৱাৰ গুৰুত্ব অপৰিসীম।

ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী শীৰ্ষক অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য সমূহ এনেধৰণৰ —

ক) ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্য শৈলীত কোনবোৰ দিশে বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰিছে বিচাৰ কৰা।

খ) ত্রৈলোক্য নাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলীৰ বিভিন্ন ৰীতি সম্পর্কে আলোচনা কৰা।

গ) শৈলীয়ে বিষয়গত দৃষ্টিভংগী স্পষ্ট কৰাত কেনেদৰে সহায় কৰিছে সেয়া বিচাৰ কৰা।

ঘ) ব্যক্তিশৈলী আৰু যুগশৈলী সৃষ্টিৰ ক্ষেত্রত ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ ভূমিকা বিচাৰ কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী — শীৰ্ষক বিষয়টি অধ্যয়নৰ বাবে শৈলীবৈজ্ঞানিক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৪ গৱেষণাৰ প্রশ্ন ঃ

ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী — শীৰ্ষক বিষয়টি অধ্যয়নৰ গৱেষণা সমস্যা বা গৱেষণা প্রশ্নসমূহ এনেধৰণৰ —

ক) ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী কেনেধৰণৰ ।

খ) ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্য শৈলীয়ে গদ্যক শক্তিশালী কৰাত কেনে ভূমিকা গ্রহণ কৰিছে।

গ) ব্যক্তিশৈলী সৃষ্টি ক্ষেত্রত ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ ভূমিকা কেনেধৰণৰ।

শৈলীয়ে লেখকৰ দৃষ্টিভংগী তুলি ধৰাত কেনে ভূমিকা গ্রহণ কৰিছে।

০.৫ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী — শীৰ্ষক বিষয়টি অধ্যয়নৰ পৰিসৰত সামৰি লোৱা গ্রন্থখন হ'ল 'অতীতৰ কথা'। এই মূল গ্রন্থৰ সমান্তৰালভাৱে গদ্যশৈলী সম্পর্কীয় আন আন গ্রন্থ, প্রবন্ধৰ সহায়ো লোৱা হৈছে।

০.৬ বিষয় প্রৱেশ ঃ

০.৬.১ ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী ঃ

ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ ভাষা গাম্ভীর্যপূর্ণ, যুক্তি নিষ্ঠ, সংগত আৰু ভাবৰ উপযুক্ত বাহন। যুক্তিসহকাৰে ভাব এটাক গোস্বামীয়ে বিভিন্ন উক্তিৰ প্রসংগ অৱতাৰণাৰে নিজা দৃষ্টিভংগীয়ে বিশ্লেষণ কৰি তুলি ধৰিছে। বক্তব্য বিষয়ক অধিক স্পষ্ট কৰি তুলিবলৈ গোস্বামীয়ে বিভিন্ন প্রসংগত বিভিন্ন মহৎলোকৰ বাণী বা উদ্ধৃতি ব্যৱহাৰ কৰিছে। কেতিয়াবা অর্থটো অধিক স্পষ্ট কৰিবলৈ অন্য ভাষাৰ উদ্ধতিৰ অসমীয়া অনুবাদ দাঙি ধৰিছে —

"অকল ভাৰতৰ কাৰণেই নহয় সমগ্র বিশ্বৰ কাৰণে গান্ধীজীৰ তিৰোধান আছিল এটা উজ্জ্বল নক্ষত্রৰ অন্তর্ধান। গান্ধীজীয়ে বিশ্ববাসীক দি গৈছিল এটা নতুন আদর্শ আৰু অভিনৱ কার্যপন্থা। গান্ধীজীৰ তিৰোধানৰ পিছত এই কার্যপন্থাৰ

ভূয়সী প্রশংসা শুনা গৈছিল। গান্ধীজীৰ পৰলোকৰ পিছত শ্রেষ্ঠ বৈজ্ঞানিক এলৰ্বাট আইনষ্টাইনে এনেদৰে কৈছিল — "Gandhi the greatest political genius of our time, indicated the Path to he taken. He gave proof of what sacrifice man is capable once be has discovered the right path. His work on behalf of India's liberation is living testimong to the fact that man's will, sustained by and indomitable conviction, is more powerful than material forces that seem insurmountable"

(অ. ক.পৃ. ১১৫)

অসমাপিকা ক্রিয়াৰ প্রয়োগৰ সহায়ত বাক্য দীঘল কৰি নিয়াটো গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ এক বিশেষ ৰীতি। প্রেক্ষাপটৰ বিশদ বিৱৰণ দিয়াৰ ক্ষেত্রত গোস্বামীয়ে এনে বাক্য ব্যৱহাৰ কৰিছে —

"একেজন মানুহৰ গাতে ছবি আঁকা, সৰস্বতী প্রতিমা গঢ়া, সংগীত চর্চা কৰা, সাহিত্যচর্চাত লাগি থকা প্রভৃতি নানান গুণৰ সমাবেশ দেখি আমি তেওঁৰ ওচৰত শ্রদ্ধাৰে অবনত হৈ পৰিছিলোঁ, বুজিছিলোঁ চাত্র অৱস্থাতে শিকিন আৰু জানিবলগীয়া কথা কিমানহ'ল"

(অ. ক. ৩১)

শৈলীৰ বিচাৰত বাক্যিক শৈলীৰ বিশেষ গুৰুত্ব আছে। বাক্যিক শৈলী বিচাৰে যিদৰে যুগশৈলীৰ সৃষ্টি কৰে সেইদৰে ব্যক্তিশৈলীও সুনিদিষ্ট কৰে। বর্ণনীয় বিষয় স্পষ্ট কৰিবলৈ লেখকে বাক্যত বিবিধ কৌশল ব্যৱহাৰ কৰে। ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনী গদ্যলৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে গোস্বামীয়ে বর্ণনীয় বিষয় এনে স্বকীয় বাক্যিক শৈলীতে আগবঢ়াই নিছে। এনে ক্ষেত্রত ক্রিয়াহীন বাক্যৰ বর্ণনাৰ ক্ষিপ্রতা আনিবলৈ কৰা প্রয়াস দেখা যায়। এনে বাক্যৰ ব্যৱহাৰে লেখকৰ ভাষাক সংলাপধর্মী কৰি তুলিছে। নিদর্শনৰূপে —

"— তাৰপৰা সি অস্পষ্ট কণ্ঠেৰে ক'লে 'শুন ভন্দো'।"

"কোন তই ?"

"তোক টকা লাগে?"

"লাগেতো।"

(অ.ক.পৃ. ২১)

ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ আন এক বৈশিষ্ট্য হৈছে ইংৰাজী শব্দবোৰ কোনো লিপ্যন্তৰ নকৰি বা প্রতিশব্দ ব্যৱহাৰ নকৰি মূল শব্দটোকে হুবহু প্রয়োগ কৰাটো। পৰিবেশ আৰু পৰিস্থিতি অনুযায়ী ইংৰাজী শব্দ, বাক্য বা বাক্যাংশৰ সঘন ব্যৱহাৰ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ এক উল্লেখযোগ্য বৈশিষ্ট্য। গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীত এই বৈশিষ্ট্য সর্বাধিক। গোস্বামীৰ এই শৈলীয়ে তেখেতৰ গদ্যক অধিক শক্তিশালী কৰি তুলিছে —

"End justifies the mean's' শ্লোগানৰ প্রতি মহাত্মা গান্ধীৰ আকর্ষণ নাছিল।"

(অ.ক. পৃ. ৮৫)

"সময় চাই ১৯৪২ চনত তেওঁ প্রখ্যাত ভাৰত-ত্যাগ (Quit - India) প্রস্তাৱ গ্রহণ কৰোৱালে।"

(অ. ক. পৃ. ৮৭)

"প্রভাত চৌধুৰীয়ে দলৰ associated member হৈ নির্বাচন যুঁজত নমাৰ ইচ্ছা প্রকাশ কৰিলে।"

(অ.ক. পৃ. ১৮৯)

"কিন্তু power, temper, over প্রভৃতি শব্দবোৰ অসমীয়া কথা বতৰাৰ মাজত সঘনে উচ্চাৰিত হ'লে কাণত বাজে।"

(অ. ক. পৃ. ১৭১)

বর্ণনীয় বিষয় এটা আগবঢ়াই নিওতে গোস্বামীয়ে ভালেসংখ্যক 'ডেছ' (-) -ৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে। ই গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যক এক বিশেষ শৈলীগত বৈশিষ্ট্য প্রদান কৰিছে। যেনে —

"তেতিয়া অসম ৰাজ্যৰ ভিতৰত দুখনেই কলেজ — এখন ব্রহ্মপুত্র উপত্যকাত কটন কলেজ আৰু আনখন সুৰমা উপত্যকাত — মুৰাৰী চাঁদ কলেজ।"

(অ.ক. পৃ. ৩৯)

০.৬.২ যুক্তিনিষ্ঠ ঃ

যুক্তিনিষ্ঠতা গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ এটা প্রধান বৈশিষ্ট্য। গোস্বামীৰ আত্মজীৱনী 'অতীতৰ কথা'ত এই শৈলী বিশেষভাৱে মনকৰিবলগীয়া। বিষয়বস্তু বিভিন্ন দৃষ্টিভংগীৰে আলোচনা কৰি পাঠকৰ আগত তুলি ধৰিবলৈ যাওঁতে গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যত এই ৰীতিয়ে বিশেষ প্রাধান্য পাইছে। প্রথম মহাসমৰৰ বিভীষিকাময় যুদ্ধৰ বর্ণনা সম্পর্কে গোস্বামীয়ে তেওঁৰ আত্মজীৱনীত লিখিছে —

"চার্বিয়া আৰু অষ্ট্রিয়া — হাংগেৰীৰ মাজত যুদ্ধ আৰম্ভ হ'ল। জার্মানিয়ে অষ্ট্রিয়াক সমর্থন দিলে আৰু ৰুচিয়াই সর্মথন দিলে চার্বিয়াক। লাহে লাহে যুদ্ধৰত জাতিসমূহ দুটা প্রবল শক্তিশালী দলত বিভক্ত হৈ পৰিল। অষ্ট্রিয়া, হাংগেৰী, জার্মানি,

তুর্কিস্থানৰ বিপক্ষে যুঁজিলে চার্বিয়া, ৰুছিয়া, ফ্রান্স, বেলজিয়াম, ইংলেণ্ড, জাপান আৰু শেষৰফালে আমেৰিকা। এক প্রলয়ংকাৰী আগ্নেয়গিৰিয়ে সমগ্র ইউৰোপ কঁপাই তুলিলে অগণন লোক মৃত্যুৰ মুখত পৰিল, অনেক সম্পদ পুৰি ছাৰখাৰ হ'ল। শেহত ১৯১৮ চনৰ নবেম্বৰ মাহত জার্মানিয়ে আত্মসমর্পণ কৰিলে।"

(অ.ক. পৃ. ১১)

০.৬.৩ বর্ণনাত্মক ঃ

বর্ণনাত্মক ৰীতি ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ এক অন্যতম প্রধান শৈলী। বিভিন্ন বিষয়ৰ বিভিন্ন প্রসংগ পাঠকৰ আগত তুলি ধৰিবলৈ যাওঁতে লেখকে এই শৈলী প্রয়োগ কৰিছে।

"১৯১৪ চনত প্রথম মহাসমৰ আৰম্ভ। সেই সময়ত ইউৰোপৰ ভিন ভিন দেশৰ মাজত আছিল পাৰস্পৰিক সন্দেহ আৰু অবিশ্বাস। বিস্তীর্ণ বাণিজ্যিক প্রভাৱ বিস্তাৰৰ গোপন আকাংক্ষাই কেইবাখন পশ্চিমীয়া দেশকে মতলীয়া কৰি তুলিছিল। কেইবাখনো দেশৰ নৌ আৰু স্কুল বাহিনীৰ ক্রমবর্ধমান শক্তিয়ে বিস্ফোৰণৰ বাবে এটি অগ্নিস্ফুলিংগৰহে অপেক্ষাত আছিল।

(অ.ক. পৃ. ১১)

০.৬.৪ চিন্তামূলক বা মননশীল ঃ

চিন্তামূলক শৈলীৰ জৰিয়তে লেখকৰ বিষয় সম্পর্কীয় দৃষ্টিভংগী পৰিস্ফুট হয়। গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যত এনে চিন্তামূলক শৈলী মন কৰিবলগীয়া। বিভিন্ন ধৰণৰ বিষয়ে গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যত স্থান লাভ কৰাৰ সমান্তৰালভাৱে সেই সংশ্লিষ্ট বিষয়সম্পর্কত তেখেতৰ চিন্তামূলক দৃষ্টিভংগী পৰিস্ফুট হৈছে। গোস্বামীয়ে 'চর্দা আইন' সম্পর্কত তেওঁৰ আত্মজীৱনীত লিখিছে —

"চর্দা আইন বলবৎ হোৱা দহ বাৰ বছৰ মানৰ ভিতৰতে উচ্চ হিন্দুৰ মাজতো গাভৰু ছোৱালী বিয়া দিয়াৰ দস্তৰ গঢ়ি উঠিল। ইয়াৰ আন এটা কাৰণো আছিল। আগেয়ে গাঁৱে-ভূঞে ল'ৰা ছোৱালীক শিক্ষা দিবলৈ আৱশ্যকীয় শিক্ষানুষ্ঠান গঢ়ি উঠা নাছিল। লাহে-লাহে এনে অনুষ্ঠান ঠায়ে-ঠায়ে গঢ়ি উঠিবলৈ আৰম্ভ কৰিলে আৰু ল'ৰাৰ লগতে ছোৱালীয়েও শিক্ষা লাভ কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিল। ছোৱালীক শিক্ষা-দীক্ষা দিয়া আগ্রহৰ কাৰণেও হয়তো ছোৱালীক আজলী অৱস্থাতে বিয়া দিয়াটো অনুচিত বুলি অভিভাৱকসকলে ভাবিলে। যি কি নহওক চর্দা আইন বলবৎ হোৱাৰ পোন্ধৰ বছৰ মানৰ পিছত বালিকা বিবাহ একৰকম বন্ধ হৈ গ'ল।"

(অ.ক. পৃ. ৫৫)

০.৬.৫ বার্তাবাহক বা জ্ঞানজ্ঞাপক ঃ

বার্তাবাহক বা জ্ঞানজ্ঞাপক শৈলী ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ এক মনকৰিবলগীয়া দিশ। বিভিন্ন বিষয়ৰ তথ্যৰ সমাহাৰ গোস্বামীৰ গদ্যৰ সন্নিবিষ্ট হৈছে। সেই সময়ৰ বিভিন্ন সমাজ ৰাজনৈতিক পৰিবেশৰ বর্ণনা আত্মজীৱনীখনত ৰক্ষিত হৈছে।

"সংগীতৰ দিশত প্রথমেই নাম লব লগা ব্যক্তি আছিল কীর্তিনাথ ৰৱদলৈৰ দেউতাক। এই সূত্রেই মই কীর্তি ৰৱদলৈক নিচেই ওচৰৰ পৰা লগ পোৱাৰ সুবিধা পাওঁ। ৰৱদলৈয়ে নিজেই গান গোৱা মই শুনা নাছিলোঁ কিন্তু ল'ৰা- ছোৱালীক শিক্ষাই সংগীত সমাৰোহত অংশ গ্রহণ কৰোৱা দেখিছিলোঁ। দুয়ো পিতা-পুত্রই কেইখনমান গীতিনাট্য লিখি অসমীয়া সাহিত্যৰ অভাৱ পূৰাইছিল।"

(অ.ক.পৃ. ৮১)

০.৭ উপসংহাৰ ঃ

'ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ 'অতীতৰ কথা' আত্মজীৱনীৰ গদ্যশৈলী ' — শীর্ষক বিষয়টো আলোচনা কৰি নিম্নলিখিত সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি —

ক) সমালোচনা ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ এক উল্লেখযোগ্য বৈশিষ্ট্য। আত্মজীৱনীৰ ক্ষেত্রখনতো লেখকৰ এনে বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। এনে শৈলীয়ে ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ গদ্যক স্বকীয়তা প্রদান কৰিছে।

খ) বর্ণনীয় বিষয় স্পষ্ট কৰিবলৈ ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যত একাধিক বিশেষণীয় শব্দৰ প্রয়োগ কৰা দেখা যায়।

গ) অসমাপিকা ক্রিয়াৰ প্রয়োগ ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ এক বিশেষ ৰীতি। প্রেক্ষাপটৰ বিশদ বিৱৰণ দিয়াৰ ক্ষেত্রত গোস্বামীয়ে এনে শৈলী প্রয়োগ কৰিছে।

ঘ) প্রচুৰ পৰিমাণে ইংৰাজী শব্দৰ প্রয়োগ ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ আন এক উল্লেখযোগ্য শব্দগত বৈশিষ্ট্য। বিষয়ৰ ভিন্নতা অনুসৰি বিভিন্ন ধৰণৰ ইংৰাজী শব্দই ৰচনাসমূহত স্থান লাভ কৰিছে। বহু সময়ত এই ইংৰাজী শব্দবোৰ ৰোমান লিপিতেই প্রয়োগ হৈছে যদিও কেতিয়াবা লিপ্যন্তৰ কৰিও ব্যৱহাৰ কৰিছে।

ঙ) ত্রৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ

বাক্যতাত্বিক বৈশিষ্ট্য মনকৰিবলগীয়া। চুটি বাক্যৰ প্ৰয়োগে বিষয়বস্তুক পাঠকৰ আগত যুক্তিনিষ্ঠতাৰে সহজবোধ্যলৈ তুলি ধৰাত যেনেদৰে সহায় কৰিছে ঠিক তেনেদৰে দীঘল বাক্যৰ প্ৰয়োগেও পাঠকক বৰ্ণনীয় ধাৰণা দিয়াত সফল হৈছে। এনে দীঘল বাক্যৰ ক্ষেত্ৰত যতিচিহ্ন বিশেষকৈ চেমিকলন (;) আৰু ডেছ(-)ৰ প্ৰয়োগৰ জৰিয়তে বাক্যবোৰ দীঘল কৰি নিয়াটো গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যৰ এক উল্লেখযোগ্য শৈলী।

চ) ত্ৰৈলোক্যনাথ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যত ইংৰাজী বাক্যৰ প্ৰয়োগ মনকৰিবলগীয়া। এনে ইংৰাজী বাক্য কেতিয়াবা স্বতন্ত্ৰ ভাৱে প্ৰয়োগ ঘটিছে আৰু কেতিয়াবা ইংৰাজী বাক্যটোৰ সমান্তৰালভাৱে অসমীয়া অনুদিত ৰূপটো সন্নিবিষ্ট হৈছে। ফলত পাঠকৰ সহজবোধ্য হোৱাত অধিক সহায়ক হৈছে যিয়ে গোস্বামীৰ আত্মজীৱনীৰ গদ্যক বিশেষ প্ৰভাৱশালী কৰি তুলিছে।

ছ) বৰ্ণনীয় বিষয়ক পাঠকৰ আগত অধিক স্পষ্টৰূপত তুলি ধৰিবলৈ ৰচনাৰ মাজত বিভিন্ন লেখকৰ উক্তিৰ প্ৰয়োগ গোস্বামীৰ আত্মজীৱনৰ গদ্যৰ এক বিশিষ্ট শৈলী। লেখকে বিভিন্ন প্ৰসংগত বিভিন্ন পণ্ডিতৰ উদ্ধৃতিৰ প্ৰয়োগ তেওঁৰ আত্মজীৱনীত প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কোৰৰ, অৰ্পণা। আধুনিক অসমীয়া গদ্যশৈলী। ডিব্ৰুগড়ঃ বনলতা। ২০১৬। মুদ্ৰিত।

গোস্বামী, ত্ৰৈলোক্যনাথ। অতীতৰ কথা। গুৱাহাটী ঃ বাণী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড। ১৯১১। মুদ্ৰিত।

দুৱৰা, সপোন। ভাষা আৰু শৈলী। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্টৰচ, ২০০৪। মুদ্ৰিত।

নেওগ, সুব্ৰতজ্যোতি। শৈলী আৰু সাহিত্যৰ শৈলী। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ০১৫, মুদ্ৰিত।

শৰ্মা, অনুৰাধা। শৈলী আৰু শৈলীবিজ্ঞান। গুৱাহাটী ঃ বান্ধৱ, ২০১৫। মুদ্ৰিত।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

প্ৰাচীন গোৱালপাৰা জিলাৰ শৈৱ পৰম্পৰা ঃ এক অৱলোকন

হৰ্ষজিৎ কলিতা
গৱেষক, ইতিহাস বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯১০১৫৪৫২৯৫
harshajitbns3203@gmail.com

পাৰমিতা দাস
অধ্যাপিকা, ইতিহাস বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
paromitadas_history@gauhati.ac.in

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

প্ৰাচীন গোৱালপাৰা জিলা তথা বৰ্তমানৰ গোৱালপাৰা, বঙাইগাও, ধুবুৰী, কোকৰাঝাৰ, দক্ষিণ শালমাৰা- মানকাচৰত আদি খ্ৰীষ্টীয় শতিকাত প্ৰতিষ্ঠাপিত আৰু বিকশিত হোৱা হিন্দু, বৌদ্ধ আৰু জৈন ধৰ্মৰ বিভিন্ন ধাৰাৰ ভিতৰত ৰাজকীয় পৃষ্ঠপোষকতা আৰু জনগনৰ কদৰ পাই প্ৰস্ফুটিত হোৱা এটা অন্যতম শক্তিশালী ধাৰা আছিল শৈৱবাদ। গোৱালপাৰা জিলাৰ শৈৱবাদক লৈ অদ্যাপি হোৱা পুৰাতাত্বিক গৱেষণাত অনেক গুৰুত্বপূৰ্ণ তথ্যৰ উদঘাটন হৈছে আৰু এই অঞ্চলত চলি থকা বিচিত্ৰ, অৰ্ধসত্য জনশ্রুতিৰ সৈতে লগ লাগি এই তথ্যসমূহে সৃষ্টি কৰিছে একপ্ৰকাৰৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ সামাজিক ইতিহাস। এই অঞ্চলত বিকশিত হোৱা শৈৱ সংস্কৃতিৰ আদি ৰূপ, ইয়াৰ বিৱৰ্তনৰ বিভিন্ন পৰ্যায় আৰু ক্ৰমবিৱৰ্তনৰ পৰৱৰ্তী পৰ্যায়ৰ শৈৱবাদ আদিৰ বিষয়ত বিস্তাৰিত গৱেষণাৰ সুযোগ আছে। কিন্তু তৎসত্বেও আমাৰ অনুভৱ হয় যে আজিকোপতি বিভিন্ন ঐতিহাসিক গৱেষণাত গোৱালপাৰা জিলাৰ বিস্তীৰ্ণ বৌদ্ধ সংস্কৃতিক যি ধৰণে বিজ্ঞানসন্মত আলোচনাৰ বাবে গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে বাকী ধাৰাবোৰক সেই ধৰণে গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হোৱা নাই। সেয়েহে আমাৰ এই গৱেষণাপত্ৰত প্ৰাচীন গোৱালপাৰা জিলাৰ বিভিন্ন অঞ্চল বিশেষকৈ সূৰ্য পাহাৰ, পাগলাটেক, যোগীঘোপা, পঞ্চৰত্ন আদি অঞ্চলত শৈৱ উপাসনা বিকাশৰ বিভিন্ন স্তৰসমূহক আলোড়িত কৰা ঐতিহাসিক পৰিক্ৰমাবোৰক আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ শৈৱ, উপাসনা, পৰম্পৰা, দেৱতা।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

ভাৰতত শৈৱ উপাসনাৰ পৰম্পৰা যথেষ্ট পুৰণি। প্ৰাগ ঐতিহাসিক হৰপ্পা-মহেঞ্জোদাৰো সভ্যতাত শিৱৰ অনুৰূপ দেৱতাৰ উপাসনাৰ পৰা আদি কৰি পৰৱৰ্তী বৈদিক সংস্কৃতিত ৰুদ্ৰৰ নামত অনাৰ্য দেৱতা শিৱক উপাসনা কৰাকে লৈ কৰ্ণাটকৰ লিংগায়ত আৰু বীৰশৈৱ পৰম্পৰাকো সাঙুৰি পৰৱৰ্তী ভাৰতীয় সভ্যতাত বিভিন্ন ৰূপত শিৱৰ উপাসনা চলি আহিছে। অসমতো ভাৰতৰ আন প্ৰান্তৰ নিচিনাকৈ শৈৱ উপাসনাৰ পৰম্পৰা যথেষ্ট পুৰণি। বহল অৰ্থত প্ৰাচীন কামৰূপত জনসাধাৰণে প্ৰকৃতিৰ ৰূপত উপাসনা কৰা প্ৰথমজন দেৱতাই আছিল শিৱ। অসমৰ প্ৰাচীন কিৰাট অধ্যুষিত অনাৰ্য জীৱনযাত্ৰাত শিৱৰ দৰে এজন দেৱতাৰ আগমন অৱশ্যম্ভাৱী আছিল যেনেই ভাৱ হয়। অসমৰ শৈৱ উপাসনাৰ এক অন্যতম পীঠ হিচাপে গোৱালপাৰা জিলাৰ প্ৰাচীনতম

গৌৰৱ বিদ্যমান। এই অঞ্চলত প্ৰাৰম্ভিক খ্ৰীষ্টীয় শতিকাসমূহত বিকশিত হোৱা ব্ৰাহ্মণ্য ধৰ্মৰ এটা স্বতন্ত্ৰ ধাৰা হিচাপে বিভিন্ন শৈৱ পীঠসমূহত শিৱক মূল দেৱতা হিচাপে উপাসনা কৰি আহিছে। জিলাখনৰ বিভিন্ন অঞ্চলত সিঁচৰতি হৈ থকা এই পীঠসমূহৰ ভিতৰত ভিতৰত শ্ৰী সূর্য পাহাৰ, পঞ্চৰত্ন, পাগলাটেক, যোগীঘোপা, মহাদেৱ পাহাৰ, কাকৈজানা ইত্যাদি ঠাই অন্যতম।

০.১ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ

এই গৱেষণাপত্ৰখন মূলতঃ নিম্নোক্ত দিশকেইটাক উদ্দেশ্য কৰি ৰচনাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে-

ক) প্ৰাচীন গোৱালপাৰা জিলাৰ শৈৱবাদ আৰু শৈৱ পৰম্পৰাৰ বিষয়ে অৱগত হোৱা।

খ) গোৱালপাৰা জিলাৰ শৈৱপীঠসমূহৰ বিষয়ে সম্যক আলোচনা আগবঢ়োৱা।

০.২ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণাপত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোতে ঠায়ে ঠায়ে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি আৰু ঠায়ে ঠায়ে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে।

০.৩ গৱেষণাৰ সমল ঃ

গৱেষণাৰ বিভিন্ন পৰ্যায়ত সাক্ষাৎকাৰ, আৰ্কাইভৰ নথি ইত্যাদিক প্ৰাথমিক সমল হিচাপে লোৱাৰ উপৰিও বিভিন্ন গৌণ সমল যেনে- বিষয়বস্তুক সামৰি লোৱা গ্ৰন্থ, আলোচনী ইত্যাদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

প্ৰাচীন ভাৰতীয় ধৰ্মীয় পৰম্পৰাত সম্ভৱতঃ আটাইতকৈ বেছি গুৰুত্ব বহন কৰা দেৱতাটোৱেই হ'ল শিৱ। শিৱৰ লিংগ ৰূপত কৰা উপাসনা প্ৰাচীন ভাৰতীয় সভ্যতা-সংস্কৃতিৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ সংযোজন। হৰপ্পা মহেঞ্জোদাৰোৰ পশুপতি শিৱৰ পৰা আদি কৰি কৰ্ণাটকৰ লিংগায়ত, বীৰশৈৱ ধৰ্মলৈকে শিৱৰ বিভিন্ন ৰূপত কৰা জনপ্ৰিয় উপাসনা পদ্ধতি সৰ্বজনবিদিত। প্ৰাক-ঐতিহাসিক আৰু আদি ঐতিহাসিক সময়ে ঢুকি পোৱা হাজাৰ বছৰীয়া ইতিহাসত অসমৰ জনসাধাৰণে প্ৰকৃতি ৰূপত উপাসনা কৰা প্ৰথমজন অনাৰ্য দেৱতাই আছিল শিৱ। হয়তো কামৰূপৰ সমাজ জীৱনেও অৱধাৰিতভাৱে সেয়াই দাবী কৰিছিল। প্ৰাচীন গোৱালপাৰা অঞ্চলতো এইদৰেই বিকাশ হৈছিল এক শৈৱ পৰম্পৰা। গছ আৰু শিলক দেৱতাৰূপে পূজা কৰা আদিম জীৱনযাত্ৰাত লাহে লাহে শিলৰ ঘুৰণীয়াকৈ কাটি লোৱা লিংগাকৃতিৰ অৱয়ৱবোৰে ঠাই লবলৈ লৈছিল। হাজাৰ বছৰীয়া সেই পৰম্পৰাৰ বিকাশ আৰু বিৱৰ্তনৰ বিভিন্ন স্থান আৰু স্তৰৰ বিষয়ে তলত আলোচনা কৰা হ'ল।

১.১ শ্ৰী সূর্য পাহাৰ ঃ

ঐতিহাসিক বিৱৰ্তনৰ কোনো এক পৰ্যায়ত শ্ৰী সূর্য পাহাৰ সম্ভৱতঃ (সেই সময়ৰ পূণ্যগিৰি) জনপ্ৰিয় শৈৱপীঠ আছিল বুলি অনুমান কৰা যায়। অৱশ্যে সূর্য পাহাৰৰ ইতিহাসৰ এক বৃহৎ সময় ই এক সূর্য, শিৱ, বিষ্ণু, বৌদ্ধ, জৈন ধৰ্মাৱলম্বী লোকৰ একত্ৰ উপাসনাৰ স্থল হিচাপেই বিবেচিত হৈ আহিছে। এই কথা সহজে অনুমেয় যে কামৰূপৰ সমাজ ব্যৱস্থাত শিৱৰ দৰে এজন অনাৰ্য দেৱতাৰ আগমন এটা অৱধাৰিত ঘটনা আছিল। আৰু প্ৰকৃতি ৰূপত লিংগৰ দৰে কৰা উপাসনাৰেই শিৱৰ উপাসনা এই অঞ্চলত ক্ৰমাৎ জনপ্ৰিয় হৈ উঠিছিল। জনশ্ৰুতি অনুসৰি ব্যাসদেৱে সূর্য পাহাৰত (সম্ভৱত তাহানিৰ সাতালী পৰ্বত / ৰবিক্ষেত্ৰ / পূন্যগিৰিক) দ্বিতীয় কাশীৰূপে প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ মানস কৰি ইয়াত ১,০০,০০০ শিৱলিংগ প্ৰতিষ্ঠা কৰাৰ কৰিবলৈ ইচ্ছা কৰিছিল যদিও ৯৯,৯৯৯ টা শিৱলিংগহে প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল[১]। অৱশ্যে বৰ্তমানে ইয়াত ইমানবোৰ শিৱলিংগৰ উপস্থিতিক ঐতিহাসিকভাৱে প্ৰমাণ কৰিব নোৱাৰি। এই তথ্যৰ পৰা এটা কথাত অন্ততঃ নিশ্চিত হ'ব পাৰি যে সূর্য পাহাৰত ব্ৰাহ্মন্য ধাৰাৰ শৈৱ উপাসনাই শক্তিশালী ৰূপত প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰিছিল। অৱশ্যে পৰৱৰ্তী সময়ত সৌম্যদ্বীপ দত্তৰ দৰে বিশ্লেষকে এই শিৱলিংগসমূহক বৌদ্ধ স্তুপ বুলিহে বৰ্ণাবলৈ বিছাৰিছে[২]। এইক্ষেত্ৰত সূর্য পাহাৰৰ শিৱলিংগ সমূহৰ চাৰিওফালে থকা ঘুৰণীয়া আকৃতিৰ গড়টোক যোনীপীঠ বুলি গণ্য কৰি উক্ত আকৃতিসমূহক শিৱলিংগ বুলি মানি লোৱাৰ সপক্ষে অনেক যুক্তি আছে। প্ৰাচীন কামৰূপৰ ধৰ্মৰ ধাৰা অনুসৰি লিংগ আৰু যোনীক একেলগে পূজা কৰি তন্ত্ৰ উপাসনা কৰাকহে বুজাইছিল। শ্ৰী সূর্য পাহাৰতো শিৱ আৰু শক্তিক একেলগে অৰ্ধনাৰীশ্বৰ ৰূপত পূজা কৰা হৈছিল। লিংগ আৰু যোনীৰ পূজাই পৰৱৰ্তী সময়ত সূর্য পাহাৰত বজ্ৰযান বুদ্ধ ধৰ্মৰ উত্থানৰ বিষয়ে তথ্য প্ৰদান কৰে একেদৰে লিংগ আৰু যোনীৰ পূজাই বহুসময়ত এই অঞ্চলত নাৰী শক্তিপূজাৰো সন্ধেদ দিছে। সি যিয়েই নহওক এই কথা অন্ততঃ মানি লব লাগিব যে সূর্য পাহাৰত শৈৱ উপাসনা আৰু বৌদ্ধ উপাসনাৰ মাজত বিশেষভাৱে প্ৰকট স্পষ্ট দেৱাল নাছিল। অৰ্থাৎ এই দুই মতৰ বিবাদহীন সহাৱস্থান (Co-existance) সূর্য পাহাৰৰ সামাজিক

পৰিৱেশত সম্ভৱ আছিল। এই কথাৰ প্ৰমান আমি পৰৱৰ্তী সময়ত বিকশিত হোৱা নাথ-যোগী সম্প্ৰদায়ৰ ধাৰ্মিক আচৰণৰ পৰা পাব পাৰো। নাথ-যোগীসকল মূলতঃ বৌদ্ধ আছিল যদিও সূৰ্য পাহাৰৰ এই পবিত্ৰ ক্ষেত্ৰক উপাসনাস্থলী হিচাপে লোৱা নাথ-যোগীসকলে বিশ্বাস কৰিছিল যে বুদ্ধই শিৱৰ ৰূপ লৈ এই ধৰাত আৱিৰ্ভাৱ হ'ব[৩]। নাথ-যোগীসকলে মহাযান বুদ্ধ ধৰ্মীসকলৰ দৰে তেওলোকৰ ঈশ্বৰ শিৱকো অলৌকিক ঈশ্বৰত্ব আৰোপ কৰি উপাসনা কৰিছিল। সূৰ্য পাহাৰৰ বাহিৰত প্ৰাচীন কামৰূপৰ অন্যান্য ঠাইতো আমি শৈৱধৰ্ম আৰু বৌদ্ধধৰ্মৰ সমিলমিল দেখিবলৈ পাও। নীলাচল পাহাৰত প্ৰবলভাৱে শৈৱ আৰু শক্তিবাদৰ সৈতে বৌদ্ধ ধৰ্মৰ আচাৰ-নীতিৰ সংমিশ্ৰণ ঘটিছে। বৌদ্ধ ধৰ্মৰ এটা অতি জনপ্ৰিয় দেৱতা হেৰুকাক নীলাচলত ইয়াৰ সহযোগিনী শ্বেততাৰা কুৰুকিল্লাৰ সতে পূজা কৰা হয়[৪]। কামৰূপৰ মুৰ্তি, মন্ত্ৰসাহিত্য আৰু প্ৰাচীন অৰ্ধ-ঐতিহাসিক পুথিসমূহেও শৈৱবাদ আৰু বৌদ্ধধৰ্মৰ সংমিশ্ৰণৰ কথা কৈছে।

অদ্যাপি সম্পাদন হোৱা গৱেষণাত সূৰ্য পাহাৰত দুটা প্ৰাচীন মন্দিৰৰ ভগ্ন অৱশেষ পোৱা গৈছে। তাৰে দুয়োটা মন্দিৰৰ স্থাপনৰ সময়সীমা প্ৰায় ষষ্ঠৰ পৰা দ্বাদশ শতিকা বুলি অনুমান কৰিব পাৰি। ইয়াৰে এটা মন্দিৰ বৌদ্ধ মন্দিৰ হোৱাৰ বিপৰীতে আনটো মন্দিৰ হিন্দু মন্দিৰ বুলি প্ৰায় নিশ্চিত তথ্য পোৱা হৈছে। হিন্দু মন্দিৰটোৰ শিলৰ দ্বাৰা নিৰ্মিত গৰ্ভগৃহত বিষ্ণু, সোঁফাল আৰু বাঁওফালে শিৱ পাৰ্বতী আৰু গণেশ-কাৰ্তিকৰ শাখা মন্দিৰ আছিল বুলি অনুমান কৰিব পাৰি।

১.২ পাগলাটেক মন্দিৰ ঃ

গোৱালপাৰা চহৰৰ পৰা প্ৰায় ১৫ কিঃমিঃ দূৰত্বত অৱস্থিত পাগলাটেক মন্দিৰ নান্দনিক সুষমাৰে ভৰপূৰ এক উল্লেখযোগ্য শৈৱপীঠ। পাগলাটেক মন্দিৰৰ নামানুসাৰে এই মন্দিৰ "পাগলা বাবা" বা ভগৱান শিৱৰ মন্দিৰ। এই মন্দিৰৰ সৈতে জড়িত অনেক কিংবদন্তিৰ এটা কিংবদন্তি জড়িত হৈ আছে পদ্ম পুৰাণৰ চান্দ সদাগৰৰ কাহিনীৰে[৫]। পৰম শৈৱভক্ত তথা এইটো কাৰণৰ বাবেই পদ্মাক উপাসনা কৰিবলৈ অমান্তি হোৱা চম্পক নগৰ (ছয়গাঁও) ৰ সদাগৰ চান্দৰ নাও পদ্মাই বুৰাইছিল এই ঠাইতেই। অৱশ্যে ড° নবীন শৰ্মা সম্পাদিত পদ্মাপুৰাণৰ ভাটিয়ালী খণ্ডত উল্লেখ থকা অনুসৰি চান্দ সদাগৰৰ উক্ত প্ৰবাদে কোনোবাখিনিত ঐতিহাসিকভাৱে বণিক শ্ৰেণী বা সমাজৰ উচ্চ শ্ৰেণীৰ শৈৱ ধৰ্মৰ প্ৰতি থকা সোহাদ্যতাৰ কথাও বুজাব পাৰে। সূৰ্য পাহাৰৰ পুৰাতাত্বিক অধ্যয়নৰ সমান্তৰালকৈ পাগলাটেক অঞ্চলতো প্ৰত্নতাত্বিক গৱেষণা চলিছিল আৰু এই গৱেষণাতেই এটা ভগ্ন মন্দিৰৰ অৱশেষ উদ্ধাৰ হৈছে। এই মন্দিৰ শিৱৰ মন্দিৰেই হোৱাৰ সম্ভাৱনা অধিক। এই মন্দিৰৰ গুহাত প্ৰতিষ্ঠাপিত শিৱলিংগৰ অনেক কাহিনীয়েও বহুকেইটা প্ৰবাদক ঐতিহাসিকভাৱে বিচাৰৰ বাট মুকলি কৰি দিয়ে। এই স্থানতেই এটা শিলত কটা গুহা ব্ৰহ্মপুত্ৰ নদৰ ফালে মুখ কৰি আছে। ইয়াত পোৱা এটা শিলৰ মন্দিৰৰ খণ্ড, মন্দিৰৰ নক্সাৰ ভগ্নাৱশেষ আৰু এটা যোনিপীঠ আনুমানিক ১১০০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ওচৰ পাজৰৰ বুলি ঠাৱৰ কৰা হৈছে। এই পাগলাটেক মন্দিৰৰ দাতিৰ ৰৱভিটা অঞ্চলতেই পৰৱৰ্তী গুপ্তযুগৰ তথা অসমৰ ইতিহাসৰ আটাইতকৈ প্ৰাচীন মুদ্ৰাৰ আৱিষ্কাৰ হৈছে।

১.৩ যোগীঘোপা ঃ

যোগীঘোপা অঞ্চলত দুগ্ধনাথ পাহাৰৰ দাঁতিত ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পাদদেশত পাঁচটা গুহাৰ প্ৰামাণিক অৱশেষ পোৱা গৈছে। অৱশ্যে স্থানীয় মানুহৰ মতে ইয়াত প্ৰায় ১৮ টা গুহা আছে। বৰ্তমান বঙাইগাও জিলাৰ অন্তৰ্গত এই গুহাসমূহৰ নিৰ্মাণৰ সময় ৬৫০ ৰ পৰা ৯০০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ভিতৰত অনুমান কৰিব পাৰি। অৰ্থাৎ বৰ্মন বংশৰ পতনৰ পিছত শালস্তম্ভ বংশৰ স্থাপনৰ সময়ত অসমত বিকশিত হ'ব ধৰা নাথ-যোগী সম্প্ৰদায়ৰ ধাৰ্মিক উত্থানৰ সাক্ষী হিচাপে এই গুহাকেইটা কোনো নাথ-যোগী শৈৱ উপাসক সন্যাসীৰ ধ্যানস্থলী হিচাপে অনুমান কৰিব পাৰি। এই গুহাকেইটা প্ৰায় ১.৯ মিটাৰ ওখ, ২.৬ মিটাৰ পথালি আৰু ১.৮ মিটাৰ গভীৰ; এই গুহাকেইটাৰ প্ৰত্যেকটোৰে আছে একোটাকৈ বাৰাণ্ডা আৰু এই বাৰাণ্ডাই গুহাকেইটাৰ সৌন্দৰ্য্যক আৰু অধিক আকৰ্ষিত কৰি তোলে। প্ৰবাদ মতে এই দুগ্ধনাথ পাহাৰতেই সুবাসিনী নামৰ ঘোপাৰ ওচৰৰ ইটাৰ বেষ্টনী (যি অদ্যাপি অক্ষত অৱস্থাত আছে)য়েই আছিল ভগৱান শিৱ আৰু পাৰ্বতীৰ বিয়াৰ ৰভা[৬]। যোগীঘোপা নামটোৰ অৰ্থ সহজ অৰ্থত যোগীসকলৰ ঘোপা বা গুহা বুলি কব পাৰি। এই গুহাসমূহক অনেক বিশ্লেষকে উৰিষ্যাৰ উদয়গিৰি আৰু খণ্ডগিৰিৰ গুহাসমূহৰ লগত সাদৃশ্য ৰিজাই এক বিস্তৰ সাংস্কৃতিক আদান-প্ৰদানৰ সম্ভাৱনীয়তাও ব্যক্ত কৰিছে।

১.৪ পঞ্চৰত্ন ঃ

পঞ্চৰত্ন গোৱালপাৰাৰ পৰা প্ৰায় ৭ কিঃ মিঃ নিলগৰ এখন উল্লেখযোগ্য শৈৱপীঠ। বৰ্তমানৰ নৱনাৰায়ণ সেতুৰ পৰা কেইশমিটাৰমান নিলগত পথৰ দাঁতিতেই ইয়াত অকণমান

পৰিসৰৰ ভিতৰতে পৌৰাণিক শিৱলিংগ, যোনীপীঠ, বৌদ্ধ স্তূপ উদ্ধাৰ হৈছে। লগতে এই অঞ্চলতে উদ্ধাৰ হোৱা এটা প্ৰাচীন গুহামন্দিৰ আৰু এখন শিলালিপিয়েও অনেক ঐতিহাসিক তথ্যৰ সন্ধেদ দিছে।

২.০ উপসংহাৰ ঃ

প্ৰাচীন গোৱালপাৰা জিলাৰ শৈৱ উপাসনা মূলতঃ গঢ় লৈ উঠিছে এই অঞ্চলৰ শিখৰে-কন্দৰে উদ্ধাৰ হোৱা অনেক পৌৰাণিক শিৱলিংগৰ প্ৰচুৰ ঐতিহাসিক সমলেৰে। এই লেখাত বিস্তাৰিতভাৱে বৰ্ণোৱা সমল আৰু ঠাইসমূহৰ ওপৰিও জিলাখনৰ বিভিন্ন স্থানৰ শৈৱিক ইতিহাসৰ সমল যেনে ডেকধোৱা অঞ্চলৰ বিস্তীৰ্ণ যোনীপীঠবোৰে কোনোবাখিনিত তাৰ লগত সংপৃক্ত হৈ থকা এই অঞ্চলৰ বিস্তীৰ্ণ শৈৱ উপাসনাৰ কথাকেই নিৰ্দেশ কৰে। একেদৰে সূৰ্য পাহাৰৰ পৰা সামান্য নিলগৰ মহাদেৱ পাহাৰৰ অজস্ৰ সৰু-বৰ লিংগ আৰু লিংগ আকৃতিৰ শিলক লৈ গঢ়ি উঠা প্ৰকৃতি উপাসনা, বৰ্তমানৰ বঙাইগাও জিলাৰ কাকৈজানা অঞ্চলৰ মাটিৰ ওপৰত উদ্ধাৰ হোৱা পৌৰাণিক ইটা আৰু অলেখ শিৱলিংগ, যোনীপীঠৰ অৱস্থিতি, টুক্ৰেশ্বৰী দেৱালয়ৰ সতীক লৈ চলি অহা পৌৰাণিক জনশ্ৰুতি ইত্যাদিয়ে বৃহত্তৰ প্ৰাচীন গোৱালপাৰা অঞ্চলৰ শৈৱিক সংস্কৃতিৰ এক দৃশ্যমান নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছে। আকৌ ঐতিহাসিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা প্ৰাচীন গোৱালপাৰা জিলাৰ ধাৰ্মিক সংস্কৃতি সমকালীন বংগৰ চন্দ্ৰকেতুগঢ়, ভাইতবাৰী তথা ৰাৰী বটেশ্বৰৰ সৈতে সদৃশ। সম্ভৱতঃ এক বৃহৎ ধৰ্মীয় সংস্কৃতিৰ অংশ হিচাপে এই দাঁতিকাষৰীয়া সভ্যতাসমূহৰ মাজত তাহানিতে এক সুসম্পৰ্কও বৰ্তি আছিল। ❑

প্ৰসংগ সূচী ঃ

১) Barpujari, H K: "A Comprehensive History of Assam", Publication Board of Assam, Guwahati, 1989, Page. 344

২) দত্ত, সৌম্যদ্বীপঃ "অসমৰ বৌদ্ধ ধৰ্ম আৰু বৌদ্ধ সংস্কৃতি", বনলতা, গুৱাহাটী, ২০১৮, পৃ ২৭৩

৩) দত্ত সৌম্যদ্বীপঃ পূণ্যগিৰি শ্ৰী সূৰ্য বৌদ্ধক্ষেত্ৰ, "সাহিত্যম" (সম্পাদনা-ড° পৰিতোষ চক্ৰৱৰ্তী, ড° ভৱেশ দাস), সাহিত্য চৰ্চা কেন্দ্ৰ অসম, গুৱাহাটী, ২০২৪, পৃঃ ৫০

৪) Deka, Pranav Jyoti: "Nilachal Kamakhya: her History and Tantra, Guwahati, 2004, Page 46

৫) শৰ্মা, দিলীপ কুমাৰঃ "গোৱালপাৰা দৰ্পন", সুন্দৰ নিকেতন, গোৱালপাৰা, ২০২১, পৃ ১৬৮

৬) নেওগ, মহেশ্বৰঃ "পৰিত্ৰ অসম", লয়াৰ্চ বুক পাৱলিকেশ্যন, গুৱাহাটী, ১৯৬০, পৃ ৩১৫

অন্যান্য সহায়ক গ্ৰন্থঃ

ইংৰাজী ঃ

১) Kakati, Banikanta:" Mother Godess Kamakhya", Publication Board of Assam, Guwahati, 1989 2)Sarma, Pradip: "Architecture of Assam", Agam Kala Prakashan, Delhi, 1988

অসমীয়া ঃ

১) দেৱচৌধুৰী, ৰবীনঃ "অসমত পু�ৰাতাত্ত্বিক অধ্যয়নৰ অগ্ৰগতি", পাৰ্বতী প্ৰকাশন, গুৱাহাটী, ১৯৯৮

২) বৰদলৈ, নিৰ্মলপ্ৰভা, "শিৱ", সাহিত্য প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, ১৯৯৭

৩) বৰুৱা, মাধুৰ্যমণ্ডিতঃ "অসম বুৰঞ্জী (প্ৰথম খণ্ড)" ৰেখা প্ৰকাশন, গুৱাহাটী, ২০২২

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ চুটিগল্পৰ আংগিক ঃ এক বিশ্লেষণ

দীপজ্যোতি বৰা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৬০০২১-০৬৮৯৫
deepjyotishmanbora@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

সাহিত্য পাঠ একোটাৰ আলোচনাৰ ক্ষেত্ৰত মুখ্যতঃ দুটা দিশত দৃষ্টি নিক্ষেপ কৰিবলগীয়া হয়— এটা হ'ল ভাব বা বিষয়বস্তু (Theme or Content) আৰু আনটো হ'ল আংগিক বা প্ৰকাশভংগী (Form or Technique)। ইংৰাজীৰ 'Form' শব্দৰ প্ৰতিশব্দ হিচাপে 'ৰূপ' শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা অধিক সমীচীন যদিও ইয়াত 'আংগিক' শব্দৰেই ৰূপগত আৰু কলা-কৌশলগত সকলো দিশকে সামৰি লোৱা হৈছে। আংগিক হ'ল লেখক একোজনৰ বিষয়বস্তু উপস্থাপনৰ কৌশল; যাক লেখকে নিজেই বাচি উলিয়ায় অথবা সুবিধা অনুসাৰে পূৰ্বসুৰীসকলে ব্যৱহাৰ কৰা কৌশলকে কিছু নব্য ৰূপত গ্ৰহণ কৰে। অন্য কথাত, লেখকৰ জীৱন সম্পৰ্কে ধাৰণা, তেওঁৰ প্ৰতীতি, প্ৰকাশভংগী, তেওঁৰ দৃষ্টিভংগী বা দৰ্শন— এনে বহু উপাদানে প্ৰতিগৰাকী লেখকৰ এটা সুকীয়া শৈলীৰ নিৰ্মাণ কৰে। আকৌ, যুগ পৰিৱৰ্তনে সাহিত্যৰ বিষয়-ভাৱনাৰ পৰিৱৰ্তন সাধন কৰাৰ দৰেই সময়ৰ লগে লগে সাহিত্যত ন ন আংগিকৰ প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। অসমীয়া চুটিগল্পৰ ক্ষেত্ৰতো জন্মলগ্নৰে পৰা সাম্প্ৰতিক সময়লৈকে আংগিকৰ ক্ষেত্ৰত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ পৰিৱৰ্তন লক্ষ্য কৰিব পাৰি। আমাৰ এই অধ্যয়নত একবিংশ শতিকাৰ এগৰাকী গুৰুত্বপূৰ্ণ গল্পকাৰ অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়া (১৯৬২)ৰ চুটিগল্পৰ আধাৰত তেখেতৰ গল্পৰ বিষয়-উপস্থাপন বা আংগিকৰ আলোচনা আগবঢ়োৱা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ চুটিগল্প, অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়া, বিষয়বস্তু, উপস্থাপন, আংগিক, গল্পভাষা।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয় প্ৰৱেশ ঃ

বিংশ শতিকাৰ শেষৰ দশকত গল্পচৰ্চাৰ পাতনি মেলা যিকেইজন গল্প-লেখকে অসমীয়া চুটিগল্পৰ ক্ষেত্ৰখনত তীব্ৰ সচেতনতাৰে বিষয় আৰু আংগিক উভয় দিশতে সম্পৰীক্ষা চলাই আহিছে; সেইসকলৰ ভিতৰত গল্পকাৰ অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়া অগ্ৰগণ্য। ইতিমধ্যে অসম সাহিত্য সভাৰ অম্বিকাগিৰী ৰায়চৌধুৰী বঁটা আৰু সাহিত্য অকাডেমি বঁটাৰে সন্মানিত শইকীয়াৰ বিষয়-চয়নৰ বিচিত্ৰতা আৰু ইয়াৰ বহুমাত্ৰিকতা, ভাষিক চাতুৰ্য তথা ব্যতিক্ৰমী কথনৰীতিয়ে তেখেতৰ গল্পসাহিত্যক অসমীয়া গল্পধাৰাত এক সুকীয়া স্থানত অধিষ্ঠিত কৰিছে। তদুপৰি, চিন্তনীয় বিষয় একোটাক পাঠকৰ দৃষ্টিগোচৰ কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিলেও তেখেতৰ গল্পৰাজিৰ অন্তৰ্ভাগত এক সুকোমল হাস্য-ব্যংগৰ ভাব সততে লক্ষ্য কৰিব পাৰি। চৌপাশৰ জগতখনৰ প্ৰতি থকা লেখকৰ সূক্ষ্ম

পর্যবেক্ষণে তেখেতক এক নিজস্ব অন্তর্দৃষ্টি দান কৰিছে— যাৰ বাবে গল্প এটা ক'বৰ পৰত পাঠক কিছু পৰিমাণে হ'লেও আলোড়িত হয়।

নগাঁৱৰ চৰকাৰী হাইস্কুলৰ মুখপত্ৰ *উদয়*-ত 'জীৱনৰ মমতা ক'ত' শীৰ্ষক গল্পৰে গল্প চৰ্চা আৰম্ভ কৰা অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্প লিখনৰ ধাৰাটোক দুটা প্ৰধান ভাগত ভাগ কৰি দেখুৱাব পাৰি। সেয়া হ'ল— (ক) তেখেতৰ প্ৰথম চাৰিখন সংকলন ক্ৰমে *ব্যৰ্থ নায়ক (১৯৯৮), প্ৰেমৰ সংবিধান(২০০০), মাটি আখৰা(২০০৩)* আৰু *বজাৰত এদিন(২০০৭)*-এ প্ৰতিনিধিত্ব কৰা পৰম্পৰাগত গল্পৰ সহজাত ধাৰা আৰু (খ) *লিংগমুক্ত পৃথিৱীৰ সাধু এটা(২০১১), বেংছতা(২০১৬), চ'তৰ উৰহী(২০২০)* তথা *মনৰ ডাক্তৰ(২০২২)*-এ প্ৰতিনিধিত্ব পৰা আধুনিক মননশীল গল্পৰ ধাৰা। উল্লেখযোগ্য যে, প্ৰথম পৰ্যায়ৰ গল্পসমূহত বিষয়গত বিচিত্ৰতা, ভাবগত গভীৰতা আৰু সমাজভিত্তিক সমকাল চেতনাৰ উন্মেষে তেখেতৰ গল্পকাৰ-সত্তাক প্ৰকট কৰি তুলিছিল; যদিও সেই গল্পসমূহত আংগিক আৰু ভাষিক বলিষ্ঠতা তুলনামূলকভাৱে দুৰ্বল আছিল। অৱশ্যে সময়ৰ লগে লগে গল্পকাৰে সেই দুৰ্বলতাক অতিক্ৰম কৰি নিজকে এক নতুন ৰূপত উদ্ভাসিতও কৰিছে। প্ৰথম পৰ্যায়ৰ পৰা দ্বিতীয় পৰ্যায়লৈ তেখেতৰ উত্তৰণে গল্পকাৰৰ অধ্যয়নপুষ্টতা আৰু বুদ্ধিদীপ্ততাৰ পৰিচয় দিছে— যি অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াক অসমীয়া গল্পসাহিত্যত সৌৰভ কুমাৰ চলিহা, অপূৰ্ব শৰ্মা, কুল শইকীয়া আদি গল্পকাৰৰ উত্তৰসুৰী হিচাপে প্ৰতিষ্ঠিত কৰিছে।

০.২ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ

আমাৰ আলোচনাৰ উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল—

(ক) অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্পৰ আলোচনাৰ মাধ্যমেৰে একবিংশ শতিকাৰ অসমীয়া গল্পকাৰসকলৰ প্ৰকাশভংগী বা আংগিকৰ ক্ষেত্ৰত থকা অভিনৱ সচেতনতা সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা।

(খ) শইকীয়াৰ গল্প-লিখনত প্ৰয়োগ কৰা ভাষা সম্পৰ্কে আলোচনা আগবঢ়োৱা।

(গ) পূৰ্বৱৰ্তী তথা সমসাময়িক গল্পকাৰসকলৰ মাজত আংগিক আৰু ভাষাগত দৃষ্টিকোণেৰে অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ স্বকীয়তা প্ৰতিপন্ন কৰা।

০.৩ গৱেষণাৰ গুৰুত্ব ঃ

অসমীয়া চুটিগল্পৰ ভিন্ন স্তৰ সম্পৰ্কে তথা নিৰ্দিষ্ট ভাৱধাৰা সম্পৰ্কে ইতিমধ্যে ভালেকেইটা মূল্যৱান গৱেষণা কৰ্ম সম্পন্ন হৈছে। যদিও জোনাকী, আৱাহন বা ৰামধেনু যুগৰ চুটিগল্প সম্পৰ্কে যিদৰে আলোচনা-বিলোচনা হৈছে, তাৰ তুলনাত সাম্প্ৰতিক অসমীয়া চুটিগল্প সম্বন্ধীয় আলোচনা তেনেই সীমিত। সমান্তৰালভাৱে অসমীয়া চুটিগল্পৰ বিষয়বস্তুগত যথেষ্ট আলোচনা হ'লেও আংগিকৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰায় আলোচনা হোৱা নাই। প্ৰায় এশ ত্ৰিছ বছৰীয়া অসমীয়া চুটিগল্পৰ ইতিহাসত বহু গল্পকাৰে পৰিৱৰ্তনশীল বিষয়বস্তুৰ অনুৰূপে ন ন আংগিক আৰু ভাষিক উপাদানেৰে অসমীয়া চুটিগল্পক বৰ্ণাঢ্যতা আৰু বিচিত্ৰতা প্ৰদান কৰিছে। তেনে পৰিপ্ৰেক্ষিতত একবিংশ শতিকাৰ গল্পকাৰসকলে বিষয়বস্তু উপস্থাপনৰ বাবে প্ৰয়োগ কৰা কলা-কৌশল বা আংগিক আৰু ভাষা সম্পৰ্কে গৱেষণা কৰাৰ যথেষ্ট গুৰুত্ব আছে।

০.৪ গৱেষণাৰ পৰিসৰ আৰু পদ্ধতি ঃ

আমাৰ অধ্যয়ন মূলতঃ গল্পকাৰ অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ চুটিগল্পতে সীমাবদ্ধ থাকিব। অৱশ্যে গল্পকাৰগৰাকীৰ চুটিগল্পৰ আংগিকৰ দিশটো আলোচনাৰ বাবে নিৰ্বাচন কৰা হৈছে, যদিও আনুষংগিকভাৱে বিষয়বস্তু সম্পৰ্কীয় প্ৰসংগকো সামৰি লোৱা হ'ব। উল্লেখযোগ্য যে, প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা কৰ্মত মূলতঃ বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হ'ব। কিন্তু এই আলোচনা আগবঢ়াওতে চুটিগল্পৰ তাত্ত্বিক দিশসমূহো নজৰত ৰখা হ'ব।

১.০০ মূল আলোচনা ঃ

সমালোচক প্ৰভাত বৰাই অসমীয়া চুটিগল্পত আধুনিকতাৰ বাৰ্তাবাহক গল্পকাৰ সৌৰভ কুমাৰ চলিহাৰ গল্পৰ সৈতে জাৰ্মান সাহিত্যৰ সম্পৰ্ক স্থাপন কৰি কৈছে— "যি সময়ত গুণ্টাৰ গ্ৰাছৰ নাম আমাৰ ইয়াত কোনেও শুনাই নাছিল; সেই সময়তেই আমাৰ সাহিত্যত জাৰ্মান সাহিত্যৰ প্ৰতি সজাগতাৰ প্ৰথম প্ৰকাশ ঘটিছিল সৌৰভ চলিহাৰ গল্পসমূহত।"(*যথাৰীতি* ঃ ৭৬)। মন কৰিবলগীয়া যে, গুণ্টাৰ গ্ৰাছে জাৰ্মান ভাষাক দাৰ্শনিকসকলে আ�ৰোপ কৰা দুৰ্বোধ্য দাৰ্শনিকতাৰ পৰা মুক্ত এক প্ৰাঞ্জল পৰিচ্ছন্ন গদ্যৰূপৰ সন্ধান কৰিছিল আৰু সফলো হৈছিল। অসমীয়া ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত তেনে দাৰ্শনিকতাৰ সমস্যা কোনোদিন নাছিল যদিও চলিহাৰ গল্পত গ্ৰাছৰ অনুৰূপ প্ৰচেষ্টা পৰিলক্ষিত হয়। প্ৰভাত বৰাৰ মতে "গ্ৰাছৰ লগত চলিহাৰ সাদৃশ্য নিতান্তই আপতনিক। জাৰ্মান সাহিত্য সম্পৰ্কে চলিহাৰ সজাগতা উল্লেখ উদ্ধৃতিৰে জোখ ল'ব নোৱাৰি। তেওঁৰ গল্পত এই সজাগতা অনুভৱহে কৰিব পাৰি, কোনো ধৰণৰ প্ৰভাৱ আৱিষ্কাৰ কৰিব নোৱাৰি।"

(যথাৰীতি ঃ ৭৬)। একেদৰে, অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ চুটিগল্পতো সৌৰভ কুমাৰ চলিহাৰ বুদ্ধিদীপ্ততা-মননশীলতাৰ প্ৰেৰণা পোৱা যায় কিন্তু প্ৰভাৱ পোৱা নাযায়। শইকীয়াই চলিহাৰ মননশীলতাক নিজস্ব ধ্যান-ধাৰণাৰে, স্বকীয় প্ৰকাশভংগীৰে পাঠকৰ সমুখত তুলি ধৰিছে। এই ক্ষেত্ৰত বৈপৰীত্যমূলক অলংকাৰ, শ্লেষ, বক্ৰোক্তি, ব্যংগাত্মক সুৰ আদিৰ প্ৰয়োগে শইকীয়াৰ গল্পক অনন্য ৰূপত গঢ় দিছে। বিশেষকৈ ভাষা ব্যৱহাৰৰ অগাধ কুশলতাই তেখেতৰ গল্পক অনন্য সুন্দৰ ৰূপত তুলি ধৰিছে। পৰম্পৰাগত কথনৰীতিৰ লগতে চেতনা প্ৰবাহ, আত্মভাষণ, নাটকীয় একোক্তি, সমধৰ্মী দ্বৈত কাহিনীৰে বিষয় উপস্থাপন, ইংগিতময়তা, ক্ৰীড়াসুলভতা, চিকিৎসা বিজ্ঞানৰ অনুষংগ আদিৰ ব্যৱহাৰেৰে সমৃদ্ধ শইকীয়াৰ গল্পৰাজিৰ এক স্বকীয় বৈশিষ্ট্যযুক্ত আংগিক পৰিলক্ষিত হয়।

১.০১ পৰম্পৰাগত কাহিনী কথনৰীতি ঃ

পৰম্পৰাগত কাহিনী কথনৰীতিত কাহিনী বা বিষয়বস্তু একোটাক আদিৰ পৰা অন্তলৈ নির্দিষ্ট ক্ৰমত বর্ণনা কৰা হয়। প্ৰতিজন গল্পকাৰেই নিশ্চিতভাৱে পৰম্পৰাগত ৰীতিত অল্প সংখ্যক হ'লেও গল্প ৰচনা কৰিছে। অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ ক্ষেত্ৰতো প্ৰথম অৱস্থাত পৰম্পৰাগত শৈলীত ৰচনা কৰা বহু গল্পৰ উদাহৰণ আছে। সেইসমূহৰ ভিতৰত শইকীয়াৰ 'ঈশ্বৰৰ ভুল' গল্পটোৰ আলোচনা কৰিব পাৰি। গল্পটোত এজন পুৰুষৰ মনঃস্তত্ত্ব, তেওঁৰ যৌনতা, সমকামিতা আৰু একাকিত্বৰ দিশ প্ৰকাশিত হৈছে। মানুহৰ জন্ম প্ৰক্ৰিয়াৰ প্ৰসংগেৰে আৰম্ভ কৰা এই গল্পটোত চৰিত্ৰৰ নাম উল্লেখ নকৰাকৈ তৃতীয় পুৰুষ(মানুহজন/তেওঁ)ত ইয়াৰ কাহিনী বর্ণিত হৈছে। চমুকৈ ক'বলৈ গ'লে, গল্পটো হৈছে কোনোধৰণৰ প্ৰেম-যৌনতাৰ প্ৰতি আসক্তি নোহোৱাকৈ নিজকে সংযমৰ শিকলিৰে বান্ধি কৈশোৰ আৰু যৌৱনৰ সময়চোৱা অতিবাহিত কৰা এটি পুৰুষ চৰিত্ৰৰ মানসিক সংঘাতৰ গল্প। উল্লেখ্য যে, গল্পটোত আদহীয়া পুৰুষ চৰিত্ৰটো তীব্ৰভাৱে নিঃসংগতাত ভুগিছে আৰু ইতিপূর্বে অবৈধ বা অসামাজিক বুলি গণ্য কৰি অহা সমকামিতাক স্বীকাৰ কৰি তেওঁৰ তত্ত্বাৱধানত গৱেষণা কৰি থকা এজন ছাত্ৰৰ প্ৰতি আকর্ষণ অনুভৱ কৰিছে। কিন্তু সেই অনুৰাগ ছাত্ৰজনৰ সমুখত প্ৰকাশ কৰি যেতিয়া তেওঁ প্ৰত্যাখ্যিত হৈছে; সেইপ্ৰত্যাখ্যান সেইসহিব পৰা নাই। চৰম অহংবোধসম্পন্ন চৰিত্ৰটোক নিজৰ পৌৰুষৰ পৰাজয় আৰু একাকীত্বই হতাশগ্ৰস্ত কৰি তুলিছে। ফলত চৰিত্ৰটোৱে নিজৰ লগতে ৰুগ্ন বৃদ্ধা মাতৃৰ জীৱনটোও শেষ কৰাৰ সিদ্ধান্ত লৈছে। সম্পূর্ণ বর্ণনাধর্মী এই গল্পটোত পুৰুষ চৰিত্ৰটোৰ মানসিক অৱস্থাৰ সূক্ষ্ম উপস্থাপন নাই যদিও তাৰ ইংগিত আছে। যিহেতু গল্পটো ৰচনাৰ সময়ত ভাৰতীয় আইনী ব্যৱস্থাত '৩৭৭ ধাৰা' অনুসৰি দুজন ব্যক্তিৰ সমকামী সম্পর্কক অপ্ৰাকৃতিক আৰু আইনবিৰুদ্ধ গণ্য কৰা হৈছিল; তেনে পৰিপ্ৰেক্ষিতত গল্পকাৰ শইকীয়াৰ 'ঈশ্বৰৰ ভুল' গল্পটো অত্যন্ত প্ৰাসংগিক আছিল।

১.০২ প্ৰথম পুৰুষ শৈলী ঃ

গল্প-পৰম্পৰালৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে গল্পকাৰ শইকীয়াৰ প্ৰাৰম্ভিক স্তৰৰ গল্পসমূহৰ অধিকাংশ চুটিগল্পই প্ৰথম পুৰুষত বর্ণিত হৈছে। যদিও এই কথা নিশ্চিত যে তেওঁৰ গল্পৰ কথক বা 'মই' চৰিত্ৰ প্ৰায়বোৰ গল্পতে পৃথক বা ভিন্ন। বিশেষকৈ 'মই' হিচাপে গল্পটো আৰম্ভ কৰিলেও বহু সময়ত তাৰ বিষয়বস্তুত নাৰী চৰিত্ৰ হিচাপেও উপস্থাপিত হৈছে। ফলত প্ৰথম পুৰুষ হ'লেও যে সেয়া সদায় গল্পকাৰৰ আত্মিক চৰিত্ৰ নহয়— সেই কথা নিশ্চিত হৈ পৰে।

অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ 'এটা বন্দুকৰ ভাষাৰে' যোৱা শতিকাৰ শেষৰ ফালে অসমৰ সামাজিক, অর্থনৈতিক আৰু ৰাজনৈতিক ক্ষেত্ৰত দেখা দিয়া স্বাধীন অসমৰ দাবী তথা সশস্ত্ৰ বিদ্ৰোহক মুখ্য বিষয় হিচাপে লৈ ৰচনা কৰা এটা গুৰুত্বপূর্ণ গল্প। মানুহৰ অদম্য অর্থলিপ্সা, ক্ষমতালিপ্সা আৰু যৌনলিপ্সাৰ ফলত সমাজত সৃষ্টি হোৱা অসহনীয় বাতাৱৰণত কিদৰে অসংখ্য মানুহে নিজকে একোটা আগ্নেয়াস্ত্ৰলৈ পৰিণত কৰিছিল, তাৰ আভাস গল্পটোত আছে। দাৰিদ্ৰ, ব্যক্তিগত মতাদর্শ, স্বভাৱজাত ক্ৰূৰতা, ঐশ্বর্য বাসনা অথবা বৈৰাগ্য-নৈৰাশ্য ইত্যাদি বিভিন্ন কাৰণত বহুতো বিপ্লৱৰ পথ বাচি ল'লেও এটা উন্মুক্ত শিখালৈ এজাক ছগাৰ আকর্ষণৰ সৈতে তুলনা কৰি গল্পকাৰে বিপ্লৱৰ পথক অশুদ্ধ আৰু ধ্বংসমুখী আখ্যা দিছে। প্ৰথম পুৰুষ শৈলীৰ ৰচিত গল্পটোত সশস্ত্ৰ বিদ্ৰোহত যোগদান কৰা এটা পুৰুষ চৰিত্ৰই নিজৰ ভাষাত গল্পৰ কথাবস্তু উপস্থাপন কৰি বিপ্লৱৰ বাবে ৰক্তপাতৰ সপক্ষে মত দিছে। কিন্তু তাৰ বিপৰীতে, ঘটনাক্ৰমে বিপ্লৱকালত 'মীনা' নামৰ এগৰাকী নাৰীৰ প্ৰেমত পৰিছে আৰু সেই নাৰী চৰিত্ৰই হিংসা, ৰক্তপাতৰ বিৰুদ্ধে মত পোষণ কৰিছে। চৰিত্ৰটোৰ মতে এটা সুস্থ, সবল পূর্ণাংগ শিশুৰ জন্ম প্ৰক্ৰিয়াত ৰক্তপাতৰ প্ৰয়োজন আছে, কিন্তু—

পার্থক্যটো হ'ল সময়ৰ। অসামাজিকভাৱে, অসময়ত হোৱা ৰক্তপাতে কেতিয়াও সুস্থ-সবল শিশু এটিৰ জন্ম দিব নোৱাৰে। সুস্থ, সবল শিশু এটিৰ জন্মৰ আগেয়ে মাকৰ যদি

ৰক্তপাত হয়, তেনেহ'লে সেইটো মানুহগৰাকীৰ এটা বেমাৰ বুলি কোৱা হয়। আৰু জন্মৰ কিছু সময়ৰ পাছত অলপ ৰক্তপাত হোৱাটোৱেই আমি সকলোৱে এটা নিয়ম বুলি ভাবোঁ।

(এটা বন্দুকৰ ভাষাৰে : ৰান্ধনি বেলি : ২৬)

একেদৰে, প্ৰথম পুৰুষতে বৰ্ণিত 'বজাৰত এদিন' গল্পটোত টকাৰ অভাৱত আৰু ৰোগাক্ৰান্ত বৃদ্ধা মাতৃৰ চিকিৎসাৰ বাবে ধনৰ প্ৰয়োজনত নিজেই বীৰ্যদাতাৰ কাম কৰিবলৈ ওলোৱা এজন নিম্ন মধ্যবিত্তীয় গাঁৱলীয়া যুৱকৰ অন্তৰ্মনৰ অস্থিৰতা আৰু মানসিক যুদ্ধৰ শেষত সেই পথ বৰ্জন কৰি নিজৰ পথলৈ উভতি অহাৰ বিষয়বস্তু উপস্থাপিত হৈছে। তেখেতৰ 'গল্প আৰু জীৱন' শীৰ্ষক গল্পটোতো মুখ্য চৰিত্ৰৰ ৰূপত যেন গল্পকাৰে নিজৰ জীৱনৰেই একোটা ঘটনাক কুশলীভাৱে পাঠকৰ সমুখত তুলি ধৰিছে।

ব্যক্তিচেতনা, সমাজ চেতনা আৰু মানৱতাবাদ একাকাৰ হৈ থকা 'মই' অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ এটা প্ৰথম পুৰুষ শৈলীত ৰচিত এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ গল্প। সাম্প্ৰতিক সমাজ ব্যৱস্থাক ব্যংগ কৰি গল্পকাৰে ৰচনা কৰা এই গল্পটোত কথক চৰিত্ৰৰ চিন্তন আৰু কৰ্মৰাজিৰ মাজেৰে বিৰল মানৱীয়তাৰ নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছে।

১.০৩ দ্বিতীয় পুৰুষ শৈলী ঃ

'প্ৰভু তুমি প্ৰথম পুৰুষ' গল্পটোত গল্পকাৰ কথকে(নাম অপূর্ব) ঈশ্বৰৰ সৈতে বার্তালাপ কৰিছে আৰু তাৰ মাজেৰে নিজৰ জীৱনৰ কিছুমান সৰু সৰু অথচ বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ ঘটনা বৰ্ণনা কৰিছে। অৱশ্যে গল্পটোৰ বার্তালাপত ঈশ্বৰৰ উপস্থিতি অনুভৱ কৰিব পাৰি কিন্তু এইখিনিতে 'ঈশ্বৰ' উপস্থিত আছে বুলি আঙুলিয়াই দিব নোৱাৰি। কথকে অহৰহ ঈশ্বৰক উদ্দেশ্যি কথা কৈ আছে; কিন্তু গল্পটোত ঈশ্বৰৰ কোনো সঁহাৰি নাই। অৱশ্যে ঈশ্বৰৰ কথাৰ প্ৰত্যুত্তৰ কথকে দিছে। দ্বিতীয় পুৰুষত উপস্থাপন কৰা এই গল্পটোত কথকক একাকীত্ব, প্ৰেমহীনতা আৰু আশংকাই কিদৰে মানসিকভাৱে অস্থিৰ কৰি তুলিছে; তাৰ ছবি ৰক্ষিত হৈছে। লগতে গল্পকাৰৰ সমকালীন সামাজিক চেতনাও কথকৰ জীৱন-বীক্ষণৰ মাজেৰে প্ৰস্ফুটিত হৈছে।

আনহাতে, বাহ্যিক দৃষ্টিৰে চাবলৈ গ'লে একে শৈলীত ৰচিত তেখেতৰ 'ইডিপাছ' গল্পটো এটা দীঘলীয়া সংলাপ মাথোন। কিন্তু প্ৰকৃততে ই এগৰাকী বৃদ্ধ কথক চৰিত্ৰৰ মানসিক কথোপকথনহে। কথকে সমগ্ৰ গল্পটোত অবিবাহিত জীয়েক 'লৰণু'ক উদ্দেশ্যি অনৰ্গল কথা কৈ আছে; তাইক প্ৰশ্ন কৰি আছে। 'প্ৰভু তুমি প্ৰথম পুৰুষ'ৰ দৰেই ইয়াতো দ্বিতীয় পুৰুষৰ মুখত সংলাপ দিয়া হোৱা নাই অথচ পাঠকে দ্বিতীয় পুৰুষৰ সঁহাৰি পদে পদে অনুভৱ কৰিব পাৰে। 'ইডিপাছ' গল্পটিত কথকৰ আত্মকথনে এগৰাকী বৃদ্ধৰ অথর্ব অৱস্থা, তেওঁৰ মানসিক স্থিতি, অবিবাহিত কন্যাক লৈ বৃদ্ধৰ শংকা আৰু জীয়েকৰ সৈতে চিন্তাৰ শীতল অন্তর্দ্বন্দ্ব এখনক উজাগৰ কৰিছে।

১.০৪ চেতনা প্ৰবাহ পদ্ধতি ঃ

শইকীয়াৰ 'ব্যর্থ নায়ক' গল্প প্ৰকৃততে এজন ব্যক্তিৰ চেতনাৰ প্ৰবাহ— যিজন ব্যক্তিয়ে আজীৱন কমিউনিষ্ট বা বামপন্থী বুলি দাবী কৰি জীৱনটো অতিবাহিত কৰিলে; অথচ মার্ক্স বা লিনিনক তেওঁ আত্মাৰ পৰা কোনোদিন গ্ৰহণ কৰা নাই। বামপন্থীৰ চোলা এটা পিন্ধি 'শইকীয়া' চৰিত্ৰটোৱে গোটেই জীৱন প্ৰতিটো মুহূর্ততে সামাজিক স্কেলডালত উঠাবলৈ যৎপৰোনাস্তি চেষ্টা কৰি আহিল। জীৱনৰ শেষ সময়ত তেওঁ অতীজৰ সেই ব্যর্থ চেষ্টা আৰু দেশৰ সমসাময়িক দুৰাৱস্থা দেখি ব্যতিব্যস্ত হৈছে। বার্ধক্য অৱস্থাত তেওঁ নিজৰ নির্বিশেষ জীৱনটোতকৈ এটা ভোবোলা ছাগলী বা এটা ভেকোলা হৈ জন্ম লোৱাটোৱেই শ্ৰেয় বুলি ভাবিছে। তেওঁৰ মতে—

> আজীৱন ধৰি শইকীয়া পৃথিৱীখনত এজন নিঃকিন, নিঃসম্বল মানুহ হৈ জীয়াই থাকিল। বিশেষ পাপো কৰা নহ'ল, পুণ্যও অর্জা নহ'ল। এজন সাধাৰণ মানুহৰ আশা-আকাংক্ষাৰ চাৰিঅনা মাত্ৰ বাস্তৱায়িত হ'ল। তাতোকৈ দুখৰ কথা— কোনো বস্তুৰে চৰম ৰূপটোক শইকীয়াৰ প্ৰত্যক্ষ কৰা নহ'ল। ('ব্যর্থ নায়ক'; *ৰান্ধনি বেলি* ঃ ৪৩-৪৪)

সমান্তৰালভাৱে চৰিত্ৰটিৰ মনগহনত বিশৃংখলিতভাৱে কিছুমান অদ্ভূত কল্পনায়ো ক্ৰিয়া কৰি থাকে। কেতিয়াবা যদি তেওঁ ভেকোলা হৈ জন্ম পালে কিদৰে ডিঙিৰ স্বৰমোনা ফুলাই ফুলাই ছন্দোৱদ্ধ শব্দৰে প্ৰেমকাতৰ স্ত্ৰী-ভেকুলীক আকর্ষণ কৰিব, সেয়া চিন্তা কৰি আছে; আন কেতিয়াবা আকৌ তেওঁৰ মৃত্যুৰ পাছত পত্নীয়ে সতী সাবিত্ৰীৰ দৰে যমৰাজৰ পৰা কৌশলেৰে তেওঁৰ প্ৰাণ ফিৰাই আনিব; তাৰ হাস্যমধুৰ কল্পনা কৰিছে। আনহাতে, চৰিত্ৰটিৰ চিন্তাপ্ৰবাহৰ মাজেদিয়ে

সামাজিক অৱনতি আৰু জীৱনৰ প্ৰতি গল্পকাৰৰ দৃষ্টিভংগীও আংশিকভাৱে প্ৰকাশিত হৈছে। বিশেষকৈ জীৱনৰ ভুৱা আদৰ্শ, উচ্চাকাংক্ষা আৰু অক্ষমতা-অপ্ৰাপ্তিৰে সৈতে চৰিত্ৰটো এটা ট্ৰেজিক চৰিত্ৰ হিচাপে ৰূপায়িত কৰাত চেতনা প্ৰবাহ ৰীতি সহায়ক হৈছে।

১.০৫ ইংগিতময়তা ঃ

প্ৰথম পুৰুষত বৰ্ণিত 'এটা হেৰোৱা গেঞ্জিৰ কাহিনী' গল্পটোৰ আৰম্ভণিতে এটা নাৰী চৰিত্ৰৰ যৌন শীতলতা বা ফ্ৰিজিডিটিৰ ধাৰণা প্ৰকাশ কৰি গল্পকাৰে চৰিত্ৰটোৰ ভাষাতেই তেওঁৰ মনত ক্ৰিয়াশীল হৈ থকা আভ্যন্তৰীণ সংঘাত তথা অন্তৰ্দ্বন্দ্বৰ কথা প্ৰকাশ কৰিছে। প্ৰথমাৱস্থাত নিজৰ চহকী স্বামীৰ সৈতে নাৰী চৰিত্ৰটোৰ মানসিক সম্পৰ্কহীনতাই গল্পটোত স্থান পালেও কুশলী গল্পকাৰে অতি চতুৰভাৱে তাক লক্ষ্য বস্তুলৈ আগবঢ়াই নিছে আৰু শেষত শ্ৰেণী বিৱৰ্তনকেন্দ্ৰিক মূল বিষয়ৰ সৈতে পাঠকক মুখামুখি কৰাইছে। এইক্ষেত্ৰত ক্ষিতিশৰ গেঞ্জিটোক গল্পকাৰে সমগ্ৰ শোষিত শ্ৰেণীৰ প্ৰতীক হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। উল্লেখযোগ্য যে শইকীয়াৰ বহুকেইটা গল্পত গেঞ্জিটোৱে শোষিত, দাৰিদ্ৰ পীড়িত লোক এজনক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। উক্ত গল্পটোৰ দৰেই 'ঊনমৃত্যু' গল্পত ৰমা ককাৰ চৰিত্ৰটোৰ শৰীৰত ফুটা ওলোৱা গেঞ্জিটো পিন্ধাই দি তেখেতে চৰিত্ৰটোৰ অনাতনৰ অৱস্থাক ইংগিত কৰিছে— "ককাৰ গেঞ্জিটোৰ পিঠিত সহস্ৰ বৃত্ত, উপবৃত্ত এটাতকৈ যেন আনটো ডাঙৰ হোৱাৰ ইচ্ছা..." (*লিংগমুক্ত পৃথিৱীৰ সাধু এটা* ; পৃ ঃ ৪৫)।

গল্পকাৰৰ 'বেংছতা' গল্পটোৰ শীৰ্ষকতে ইয়াৰ ইংগিতময়তা নিহিত আছে। বেংছতা মানে হ'ল কাঠফুলা— যি এবিধ পৰজীৱী। গল্পকাৰে 'বেংছতা' শীৰ্ষকটিৰে সাম্প্ৰতিক সময়ত চৌদিশে চলি থকা পৰজীৱিতাৰ বিষয়টোকে প্ৰকাশিত কৰিছে। প্ৰতিজন মানুহেই জীয়াই থাকিবলৈ বা নিজস্ব প্ৰয়োজনীয়তাৰ খাতিৰত কোনো নহয় কোনো এজন মানুহৰ ওচৰত নিৰ্ভৰশীল। গল্পটোৰ এঠাইত গল্পকাৰে নিজেও "মই এক মৃতজীৱী বেংছতা" বুলি পাঠকলৈ আত্মসমালোচনাৰ পথ এৰি দিছে।

১.০৬ ব্যংগ ঃ

অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্প বিষয় চয়নলৈ লক্ষ্য কৰিলে ইয়াৰ মাজত ব্যক্তিৰ মনোজগত সম্পৰ্কীয় গল্পসমূহৰ লগতে সমাজ সমালোচনাত্মক দৃষ্টিভংগীৰ গল্প পোৱা যায়। ইয়াৰে প্ৰথম তিনিখন সংকলনৰ বাহিৰে শইকীয়াৰ গল্পধাৰাৰ অধিকাংশ গল্পতে এই সমাজ সমালোচনাত্মক দৃষ্টিভংগী এক ব্যংগৰ মাধ্যমেৰে প্ৰকাশ লাভ কৰিছে। গল্পকাৰৰ মতে 'চুটি অথচ গম্ভীৰ জীৱনটো'ত ই এক ধৰণৰ 'কমিক ৰিলিফ'— যি লেখকৰ সম্পূৰ্ণ স্বতঃস্ফূৰ্ত ।

তেখেতৰ 'মোৰ অক্ষৌহিণী প্ৰশ্নৰ কেইটামান' গল্পটোতো মুখ্য চৰিত্ৰ হিচাপে উপস্থিত থকা কথকে সপোনতে ঈশ্বৰৰ সৈতে বাৰ্তালাপ কৰিছে আৰু ঈশ্বৰে তেওঁক আগন্তুক মৃত্যুৰ সম্পৰ্কে অৱগত কৰাই তেওঁক বন্ধুত্বৰ প্ৰস্তাৱ দিছে। গল্পটোত অসৎ উপায়েৰে 'দোলাভাৰীৰ পৰা ৰজা' হোৱা চৰিত্ৰটোক স্বয়ং ঈশ্বৰে বন্ধুত্বৰ প্ৰস্তাৱ দিয়া প্ৰসংগটোৱে সাম্প্ৰতিক সমাজ ব্যৱস্থাত 'দুষ্টক দমন সন্তক পালন' নীতিৰ যে সম্পূৰ্ণ ওলোটা এখন সমাজ চলি আছে; সেই কথাকে গল্পকাৰে ব্যংগ কৰিছে। একেদৰে, 'লিংগমুক্ত পৃথিৱীৰ সাধু এটা' শীৰ্ষক গল্পটোত সাম্প্ৰতিক সময়ত বহু নাৰীৰ মনত থিতাপি লোৱা তথাকথিত নাৰীবাদৰ উগ্ৰ ৰূপটোক ব্যংগাত্মক সমালোচনা কৰা হৈছে। গল্পকাৰে আকৰ্ষণীয়ভাৱে নাৰীৰ হাতত পুৰুষক বাৰবনিতা সজোৱা বিষয়বস্তুৰে উগ্ৰ নাৰীবাদক তীৰ্যক সমালোচনা কৰিছে। কিয়নো আৰ্থিক অনাটনৰ বাবে ষ্টাইপাৰৰ কাম কৰিবলৈ বাধ্য হোৱা যুৱক দুজনক নাৰী কেইগৰাকীয়ে পণ্যৰ দৰে ব্যৱহাৰ কৰিছে।

১.০৭ চিকিৎসা বৈজ্ঞানিক প্ৰসংগ ঃ

চুটিগল্পৰ পিতৃপুৰুষ ডাঃ এণ্টন চেখভে কৈছিল— "Medicine is my lawful wife and literature is the mistress, when I tired of one, I spend the night with the other." চেখভৰ এই কথাষাৰ গল্পকাৰ ডাঃ অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ ক্ষেত্ৰতো খাটে। পেচাগতভাৱে চিকিৎসক হোৱাৰ হেতুকেই তেখেতৰ গল্পত চিকিৎসা শাস্ত্ৰৰ সৈতে জড়িত বহুতো প্ৰসংগই সহজাতভাৱে প্ৰকাশ লাভ কৰে। তেখেতৰ আৰম্ভণিৰ সংকলনকেইটিৰ গল্পত মনোবিজ্ঞান সম্পৰ্কীয় কথাই গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশৰ উন্মোচন কৰা দিশটো মন কৰিবলগীয়া।

তেখেতৰ 'ঈশ্বৰৰ ভুল' গল্পটোতো এজন পুৰুষৰ সমকামী মনোভাব সম্পৰ্কীয় বিষয় একোটা উপস্থাপন কৰিবলৈ মানুহৰ জন্ম প্ৰক্ৰিয়া, আলঝেইমাৰ নামৰ স্নায়ুৰোগৰ উল্লেখ, এইড্‌ছৰ ভয়াবহতা আৰু গৰ্ভ নিৰোধক আচ্ছাদনৰ ব্যৱহাৰ তথা আত্মহত্যাৰ বাবে পেনকিউৰ'নিয়াম নামৰ বিষাক্ত ঔষধৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে। একেদৰে, 'এটা বন্দুকৰ ভাষাৰে' গল্পটোত হিংসাত্মক সশস্ত্ৰ বিপ্লৱৰ

ভয়াবহতাক সন্তান এটা জন্ম হোৱাৰ পূৰ্বে হোৱা অস্বাভাৱিক ৰক্তপাতৰ সৈতে তুলনা কৰিছে; যি ৰক্তপাতে কোনো সুস্থ-সবল শিশু জন্ম দিব নোৱাৰে। আনহাতে 'বেংছতা' গল্পত কথকৰ মাক ভুৱা-গর্ভাৱস্থাত ভুগিছে। বৃদ্ধাগৰাকীয়ে একাকীত্বৰ যন্ত্রণা ভুগ কৰি নিজৰ মাজতে সন্তান জন্ম দিয়াৰ এক বাসনা গঢ়ি তুলিছে; যি বাসনাৰ তীব্রতাই শাৰীৰিকভাৱে গর্ভধাৰণৰ অপাৰগ বৃদ্ধাগৰাকীৰ শৰীৰত গর্ভধাৰণৰ লক্ষণ ফুটাই তুলিছে।

আকৌ, অক্ষি বিশেষজ্ঞ ডাঃ শইকীয়াৰ 'থেলাজিয়া' গল্পটোৰ মূল ভেঁটিটোৱেই চিকিৎসা বিজ্ঞান। চিকিৎসা শাস্ত্রৰ মতে 'থেলাজিয়া' হ'ল চকুত বাহ লোৱা এবিধ পেলুজাতীয় জীৱ; যি এবিধ ৰোগৰ কাৰক। গল্পটোত থেলাজিয়াই বাহ লোৱা শিশু চৰিত্র পীতাম্বৰে জানিবলৈ পাইছে যে মানুহৰ চকুপানী খাবলৈ অহা মাখিৰ পৰা এই ৰোগ হয়। গল্পটোত এই ৰোগটোৰ ভিত্তিতে এটা শিশুৰ মনত মাতৃৰ প্রতি থকা ভালপোৱা আৰু মাতৃৰ দুখ সহিব নোৱৰা সহমর্মিতা প্রকাশ কৰা হৈছে। সৰু সৰু কথাত চকুলো টোকা পীতাম্বৰে নিজৰ তুলনাত মাকৰ দুখৰ বিশালতা অনুমান কৰিব পাৰে; কিন্তু তাৰ প্রতিকাৰ কৰিব নোৱাৰে। তথাপি শিশুসুলভ সৰলতাৰে মাখিয়ে তাৰ চকুপানী খোৱাৰ দৰে সিও শুই থকা মাকৰ চকুপানী সেলেকি শেষ কৰিব খুজিছে । আনকি টৰি থোৱা আঠুৰাখন ফালি মাখি সোমাব পৰাকৈ এটা ফুটা উলিয়াইছে যাতে সেই ফুটাৰে মাখি সোমাই মাকৰ চকুপানীবোৰ খাই শেষ কৰে আৰু মাকৰ দুখ শেষ হয়। পীতাম্বৰ চৰিত্রটিৰ এনে শিশুসুলভ চিন্তাই শিশুমনৰ সুকোমল অনুভূতি আৰু মাতৃৰ প্রতি নিষ্কলুষ আকুলতাকে প্রকাশ কৰে।

১.০৮ পত্র-গল্প ঃ

পত্র বা চিঠিৰ যোগেদি বিষয় উপস্থাপনৰ কৌশল প্রয়োগ অসমীয়া সাহিত্যত নতুন নহয়। কবিতাৰ ক্ষেত্রত হেম বৰুৱাৰ 'এখন চিঠি', 'মমতাৰ চিঠি' আৰু উপন্যাসৰ ক্ষেত্রত লীলা গগৈৰ 'নীলা খামৰ চিঠি' ইয়াৰ উৎকৃষ্ট উদাহৰণ। গল্পৰ ক্ষেত্রত তেনে কোনো উল্লেখযোগ্য গল্প অসমীয়া সাহিত্যত পোৱা নাযায়। যদিও অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ 'বিষয় ঃ প্রেমৰ সংবিধান' গল্পটোক সেই ধাৰাত সংযোজন কৰিব পাৰি। গল্পটো অঞ্জু ছাক্‌ছেনা চৰিত্রটোৱে তেওঁৰ স'তে প্রেমবিহীন শাৰীৰিক সম্পর্ক ঘটা অখিলৰ প্রেমিকা নীলিমালৈ লিখা এখন চিঠি। চিঠিখনৰ যোগেদি গল্পকাৰে সমগ্র গল্পটো অঞ্জু ছাক্‌ছেনাৰ জৰিয়তে প্রথম পুৰুষত বর্ণাইছে।

১.০৯ কাহিনীৰ চলেৰে কাহিনী ঃ

কেতিয়াবা গল্পকাৰে গল্পৰ মূল বিষয়টো পোনে পোনে উপস্থাপন নকৰি সামঞ্জস্যবিশিষ্ট ঘটনাৰ মাজেৰে মূল বিষয় উপস্থাপন কৰে; ইয়ো গল্পকাৰ একোপ্রকাৰৰ বিশেষ কৌশল। গল্পকাৰ অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰো এনে কিছু গল্প আছে। 'কেইটামান অলস মুহূর্তৰ ফেণ্টাছী' আৰু 'এটা আধুনিক বুঢ়ী আইৰ সাধু' গল্পদুটা ইয়াৰ উদাহৰণ। 'এটা আধুনিক বুঢ়ী আইৰ সাধু' গল্পটোতো গল্পকাৰে মূল গল্পটো উপস্থাপনৰ মাধ্যম হিচাপে গল্পটোত সংস্থাপন কৰিছে গল্পকাৰ আৰু তেওঁৰ বন্ধু এজনৰ চৰিত্র। গল্পটোত গল্পকাৰ চৰিত্রটোৱে তেওঁৰ বন্ধুজনক সাধুৰ দৰে এটা আজৰ অলৌকিক গল্প শুনাইছে। সেই গল্পটোত মানু নামৰ নাৰী চৰিত্রটিয়ে নিজৰ ইচ্ছানুসৰি মূৰৰ পৰা লোৰ শলা এডাল উলিয়াই সুদর্শন পুৰুষলৈ ৰূপান্তৰিত হৈছে আৰু ঘটনাক্রমত মানুৱে মৃণ্ময়ৰ মূৰৰ পৰাও লোৰ শলা এডাল উলিয়াই পুৰুষজনক এগৰাকী নাৰীলৈ ৰূপান্তৰিত কৰিছে। কেৱল সেয়ে নহয়; নাৰীৰূপী মৃণ্ময়ৰ সৈতে পুৰুষৰূপী মানুৱে ক্ষণিকৰ বাবে অফিচতে যৌনতাৰ বন্য আনন্দ উপভোগ কৰিছে। অৱশ্যে গল্পটোৰ দ্বিতীয় অংশত গল্পকাৰে নিজেই অলৌকিক গল্পটোৰ গূঢ়ার্থ ব্যাখ্যাৰ চেষ্টা কৰিছে। তেওঁৰ মতে লোৰ শলা দুডাল মানুহৰ অৱচেতন মনৰ প্রতীক যি ব্যক্তিৰ গোপন ইচ্ছা বহন কৰে। এক কথাত কথকে নিজৰ আৰু বন্ধুজনৰ গল্পটোক এক অলৌকিক গল্পৰ মাজেৰে কোৱাৰ প্রয়াস কৰিছে।

১.১০ চৰিত্রৰ ক্রীড়াসুলভতা ঃ

চৰিত্রৰ ক্রীড়াসুলভতা অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্পৰ অন্য এক লক্ষণ। তেখেতে গল্পত কৌতূহল বর্তাই ৰাখিবৰ হেতুকে কিছুমান ক্রীড়াসদৃশ ঘটনা উপস্থাপন কৰে। তেখেতৰ চৰিত্রসমূহে নিজৰ মাজতে কিছুমান খেল খেলে আৰু সেই খেলে পৰোক্ষভাৱে গল্পটোৰ মূলভাবটোক উদ্ভাসিত কৰে। শইকীয়াৰ এনে কৌশলে গল্পটিক অধিক আকর্ষণীয় কৰি তোলে। প্রথম পুৰুষ শৈলীত ৰচিত তেখেতৰ 'সম্পৰীক্ষা' গল্পটোত এনে ক্রীড়াসুলভতাৰ উদাহৰণ পোৱা যায়। গল্পটোত দুটা চৰিত্রৰ উপস্থিতি পোৱা যায় যদিও ইয়াত কোনো সংলাপ নাই। মাথোঁ গল্পটোত কথকে নিজৰ ভায়েকৰ শিখৰ অর্জনত তেওঁৰ অৰিহণা আৰু তাৰ পাছত ভায়েকৰ মানসিক অৱস্থাৰ পৰিৱর্তন হৈছে নেকি; সেই লৈ থকা অনুসন্ধিৎসা আৰু তাৰ নিশ্চিতি লাভৰ প্রচেষ্টা বা সম্পৰীক্ষাহে বর্ণিত হৈছে। 'এটা আধুনিক বুঢ়ী আইৰ সাধু'ত মানুৱে অলৌকিকভাৱে পুৰুষৰ

শৰীৰ লাভ কৰি নিজৰ বিয়াৰ প্ৰাৰ্থী মৃণ্ময়ৰ লগত কথা পাতিবলৈ গৈছে আৰু নিজৰ পৰিচয় গোপনে ৰাখি মৃণ্ময়ক পৰীক্ষা কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে । একেদৰে, 'ইকিগাই' গল্পতো কৰুণা নামৰ নাৰী চৰিত্ৰই দুখত থকাৰ এখন খেল খেলি কথক চৰিত্ৰক প্ৰেমৰ জালত পেলাইছে আৰু ঘটনাক্ৰমত বিয়াত বহিছে। পাছত যেতিয়া কথকে তেওঁক বিয়াৰ আগতে দুখত থকাৰ কাৰণ সুধিছে; তেতিয়া তেওঁ সেই খেলখনৰ কথা হাস্যধৰ্মিতাৰে প্ৰকাশ কৰিছে। 'লিংগমুক্ত পৃথিৱীৰ সাধু এটা' গল্পটোতো মুখ্য নাৰী চৰিত্ৰই নিজেই পুৰুষ হৈ আৰু পুৰুষ চৰিত্ৰটিক নাৰী হিচাপে গঢ় দি যৌনতাৰ খেল খেলিছে আৰু সেই খেলখনে গল্পকাৰৰ আত্মিক সমকামিতাক ইংগিত কৰিছে। শইকীয়াৰ গল্পৰ চৰিত্ৰসমূহৰ এনে ক্ৰীড়াসুলভতাই গল্পৰ মাজলৈ কৌতুলহতা নমাই আনে আৰু পাঠকৰ বাবে গল্পটো এখন খেলৰ দৰে অধিক উৎসুকতাপূৰ্ণ হৈ উঠে।

১.১১ বিবিধ প্ৰসংগৰ উল্লেখ ঃ

গল্পত সদায় বিষয় বা প্লট একোটাক আংগিকৰ প্ৰয়োগ কৰি গল্পকাৰে উপস্থাপনৰ প্ৰয়াস কৰে। তাৰ বাবে গল্পকাৰে নিজস্ব ধ্যান-ধাৰণা আৰু বিষয়-সাদৃশ্যযুক্ত বিবিধ প্ৰসংগ গল্পটোত সন্নিৱিষ্ট কৰে। গল্পকাৰ শইকীয়াৰ গল্পৰাজিৰ ভিতৰতো চিকিৎসা বিদ্যাৰ উপৰিও এনে বহু প্ৰসংগৰ উল্লেখ্য পোৱা যায়। বৈজ্ঞানিক তথ্য, গ্ৰীক পুৰাকথা, অসমীয়া গীতিসাহিত্য, বিদেশী কবিতা, বহুচৰ্চিত চিত্ৰকৰ্ম আদি প্ৰসংগৰ ব্যৱহাৰ শইকীয়াৰ গল্পত পৰিলক্ষিত হয়। এনে প্ৰসংগসমূহৰ মাজেৰে গল্পকাৰৰ ৰুচিবোধ আৰু অধ্যয়নপুষ্টতাৰ পৰিচয় পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে—

(ক) যন্ত্ৰ-বৈজ্ঞানিক প্ৰসংগ ঃ সন্ত্ৰাসবাদক ভিত্তি হিচাপে লৈ ৰচনা কৰা শইকীয়াৰ 'এটা বন্দুকৰ ভাষাৰে' গল্পটোৰ আৰম্ভণিতে ৰাইফলৰ পৰা গুলি ওলোৱাৰ যন্ত্ৰ-বৈজ্ঞানিক তথ্যক উপস্থাপন কৰিছে এনেদৰে—

> "আগ্নেয়াস্ত্ৰটোৰ পৰা এটা সীহৰ গুলী নিৰ্গত হওঁতে সি এক ঘূৰ্ণায়মান গতি লাভ কৰে। যন্ত্ৰটো এনেকৈ সজা হৈছে যাতে গুলীটোৱে তাৰ ঘূৰ্ণায়মান গতিটোৰে এক পচণ্ড গতিশক্তি আৰু আঘাত-ক্ষমতা লাভ কৰে; কাৰণ এটা সীহৰ গুলীয়ে সদায় এটা জীৱিত প্ৰাণীকহে লক্ষ্য হিচাপে লয়।"
>
> ('এটা বন্দুকৰ ভাষাৰে'; *ৰান্ধনি বেলি,* পৃ ঃ ২২)

(খ) গ্ৰীক পুৰাকথাৰ প্ৰসংগ ঃ 'ঈশ্বৰৰ ভুল' গল্পত পুৰুষ চৰিত্ৰটোৰ সমকামিতাক প্ৰকাশ কৰিবলৈ গ্ৰীক পুৰাকথাৰ এন্দ্ৰাছসকলৰ প্ৰসংগ টানি আনিছে আৰু বিকৃত যৌনকৰ্মৰ বাবে জিউছে গাইনাছৰ পৰা এন্দ্ৰাছসকলক পৃথক কৰাৰ কথা অতি সংক্ষিপ্তভাৱে উল্লেখ কৰিছে। একেদৰে, এন্দ্ৰ'গাইনাছ নামৰ চাৰি ঠেং আৰু চাৰি হাতযুক্ত অদ্ভুত প্ৰাণীটোৰ কথাও গল্পটোত উল্লেখ আছে।

(গ) অসমীয়া গীতিসাহিত্য ঃ 'যন্ত্ৰ' গল্পটোৰ বিবাহিত নাৰী চৰিত্ৰ পৰিণীতাৰ অন্তৰত প্ৰোথিত মাতৃগৃহৰ কাতৰতা আৰু দুখবোধক নিৰ্মলপ্ৰভা বৰদলৈৰ জনপ্ৰিয় গীত 'সন্ধিয়াৰ আকাশত বগলী উৰে'ৰ প্ৰসংগেৰে উপস্থাপন কৰিছে।

(ঘ) চিত্ৰকৰ্ম প্ৰসংগ ঃ 'শব্দহীনতাৰ সন্ধানত' গল্পটোত গল্পকাৰে ছালভাদৰ দালিৰ 'স্মৃতিৰ সংৰক্ষণ' (Persistence of Memory) শীৰ্ষক শিল্পকৰ্মটিৰ প্ৰসংগ পোনপটীয়াকৈ বৰ্ণনা কৰিছে— "কেইটামান বিভিন্ন আকাৰৰ জীৰ্ণ-শীৰ্ণ ঘড়ী; এটা ওলমি আছে এজোপা গছৰ এটা শুকান ডালত, ত্ৰুটিপূৰ্ণ সময়েৰে এটা ওলমি আছে এটা ঘৰৰ আলহী কোঠাৰ বেৰত আৰু এটা ছুইচ ঘড়ী পৰি আছে মাটিত— তাৰ ছেকেণ্ডৰ কাঁটাডাল পৰি আছে কিছু দূৰত।"('শব্দহীনতাৰ সন্ধানত'; *ৰান্ধনি বেলি,* পৃ ঃ ৩১)

(ঙ) চীনা কবিতাৰ প্ৰসংগ ঃ একেটা গল্পতে গল্পকাৰে চৰিত্ৰৰ মনোজগতৰ নিঃসংগতা, নিস্তব্ধতাক মাশ্ব' বাছুৰ 'পুৰণি পুখুৰী' শীৰ্ষক বিখ্যাত হাইকুৰ যোগেদি গল্পকাৰে পাঠকৰ সমুখত তুলি ধৰিছে—"এটা বহু দিনৰ পুৰণি পুখুৰীত কোনো নিঃশব্দ দুপৰীয়া এটা বেং জঁপিয়াই পৰাৰ শব্দটোৱেও হয়তো তেওঁক এতিয়া আমনি কৰিব।" ('শব্দহীনতাৰ সন্ধানত'; *ৰান্ধনি বেলি,* পৃ ঃ ৩১)

১.১২ গল্প-ভাষা ঃ

সংক্ষিপ্ততা আৰু ব্যঞ্জনাধৰ্মিতাৰ চৰ্তসাপেক্ষে আধুনিক চুটিগল্প সদায় ভাষা-নিৰ্ভৰ। গল্পকাৰসকলে বিষয় উপস্থাপনৰ বাবে যিদৰে বিভিন্ন কৌশল আৰু শৈলী অৱলম্বন কৰে; সেইদৰে গল্পটোক পৰিস্থিতিসাপেক্ষ আৰু আকৰ্ষণীয় কৰি তুলিবলৈ এক স্বকীয় গল্প-ভাষাৰ গঢ় দিছে। অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্পৰাজিলৈ মন কৰিলে আমি তেওঁৰ লগত এক সুকীয়া গল্প-ভাষা লক্ষ্য কৰিব পাৰোঁ। অপৰম্পৰাগত কথনশৈলীৰে গল্প-কথনত বিশ্বাসী শইকীয়াই অৰ্থঘন, নিৰ্মেদ আৰু চাতুৰ্যপূৰ্ণ গল্পভাষাৰ যোগেদি সাম্প্ৰতিক অসমীয়া

চুটিগল্পৰ ক্ষেত্ৰখনত নিজকে একক আৰু অনন্য ৰূপত প্ৰতিষ্ঠা কৰিছে। শইকীয়াৰ গল্প সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ গৈ সমালোচক প্ৰদীপ আচাৰ্য্যই লিখিছে— "শইকীয়াৰ গল্পৰ জগতখন আধুনিক অধ্যয়নপুষ্ট মননৰ। বাস্তৱৰ দাবী অনায়াসে নেওচিও তেওঁ কাহিনী নিৰ্মাণ কৰে, চৰিত্ৰ সৃষ্টি কৰে। এই ক্ষেত্ৰত এক মজ্জাগত পৃথিৱীত অনুৰণন আমি পাওঁ হয়তো পৰিশ্ৰান্ত গ্ৰামীণ খুটিনাটিত। অন্তৰ্ধ্যানী কাব্যিকতাৰ পৰা সজ্ঞান দূৰত্ব ৰক্ষা কৰাৰ পাছতো ৰচনাসমূহ ভাবাৱেগেৰে গধু�ৰ। এই অন্তৰ্প্ৰবাহিত বিৰোধৰ কাৰণে তেওঁ এক নিৰ্দিষ্ট প্ৰকাশভংগী আৰু ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিছে; য'ত ভাষায়েই মূল আংগিক।" (পাতনি; *চ'তৰ উৰহী*)

সঁচাই গল্পকাৰ কলেজীয়া অৱস্থাত কাব্যচৰ্চা কৰা শইকীয়াৰ সংলাপ আৰু বৰ্ণনা উভয়তে এক কাব্যিক ব্যঞ্জনাৰ ছাপ দেখিবলৈ পোৱা যায়। উদাহৰণস্ৱৰূপে— দুখদায়ক স্মৃতিসমূহ ডুবাই মাৰিবলৈ আছে এখন পাহৰণি নামৰ পোতাকলং আৰু সুখদায়ক স্মৃতিবোৰ ঘোঁৱাৰ আগত ৰখা কেঁচাবুটৰ টোপোলাৰ দৰে মনৰ সমুখত ৰাখি সংসাৰৰ দুর্বহ বোজা কঢ়িয়াওঁ মই ('গল্প আৰু জীৱন'; পৃ ঃ ১৫)। একেদৰে উপমাৰ বহুল ব্যৱহাৰো গল্পকাৰ শইকীয়াৰ গল্পভাষাৰ এক উল্লেখযোগ্য বৈশিষ্ট্য। গল্পৰ বৰ্ণনাক অধিক সৰৱ আৰু ভাববস্তুক তীব্ৰতৰ কৰি তুলিবলৈ তেখেতে প্ৰায়ে সাদৃশ্যযুক্ত তুলনাৰ সহায় লয়। উদাহৰণস্ৱৰূপে— এটা পঁইতাচোৰাৰ বুভুক্ষাৰে তেওঁ হজম কৰিলে পৃথিৱীৰ চুকে কোণে প্ৰকাশিত হোৱা কিতাপ কিছুমানৰ খাদ্য-অখাদ্য সকলো ('ঈশ্ৱৰৰ ভুল', *ৰাঙ্কনি বেলি*, পৃঃ ১৬)।

১.১৩ সংলাপৰ ভাষা ঃ

লেখক এগৰাকীয়ে বিভিন্ন ধৰণৰ কিতাপ-পত্ৰ বা অন্যান্য কাকত-আলোচনী পঢ়ি ভাষা একোটাৰ বৈয়াকৰণিকভাৱে শুদ্ধ অর্থাৎ মান্যৰূপটো শিকিব পাৰে। কিন্তু ভাষা একোটাৰ কালিকাযুক্ত চহা ৰূপটো আয়ত্ত কৰিবলৈ লেখকৰ অন্তৰত মানুহ আৰু সমাজৰ প্ৰতি অপাৰ আগ্ৰহৰ প্ৰয়োজন হয়। অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্পসমূহত এনে আগ্ৰহৰ ৰেঙণি পোৱা যায়। তেখেতৰ মতে, অসমীয়া ভাষা এটা সাংঘাতিক ধনী ভাষা। কিন্তু ব্যৱহাৰ নকৰাৰ ফলত আমাৰ বহুতো শব্দসম্ভাৰ কালক্ৰমত হেৰাই যোৱাৰ উপক্ৰম কৰিছে। সেয়ে তেওঁ কেতিয়াবা স্ব-ইচ্ছাই গল্পৰ বৰ্ণনা আৰু বিশেষকৈ চৰিত্ৰৰ সংলাপত অসমীয়া ভাষাৰ গ্ৰাম্য ৰূপটোৰ ব্যৱহাৰ কৰে— যি গ্ৰাম্যভাষাত গল্পকাৰৰ জন্মস্থান মধ্য অসম বা নগাঁও অঞ্চলৰ লোকভাষাৰ লক্ষণ পোৱা যায়। উদাহৰণৰ বাবে 'গল্প আৰু জীৱন' শীৰ্ষক গল্পটোৰ কথাকে ক'ব পাৰি। গল্পটোত ডম্বৰু দাস নামৰ এটা চৰিত্ৰৰ মুখত ব্যৱহৃত ভাষাই অসমীয়া ভাষাৰ গ্ৰাম্যৰূপটোৰ স্বাক্ষৰ দাঙি ধৰিছে। গ্ৰাম্য সমাজৰ এজন লোকে যি ধৰণৰ শব্দভাণ্ডাৰ, জতুৱা ঠাঁচ আদি ব্যৱহাৰ কৰি নিজৰ এক কথ্যৰূপ গঢ় লয়; সেই লক্ষণ ডম্বৰু দাসৰ সংলাপত গল্পকাৰে যথাযথভাৱে প্ৰয়োগ কৰিছে ঃ

(ক) "এই আপদটোৰ মানে অমুকাৰ নাম ডম্বৰু দাস।"(পৃ.১৯)

(খ) "বুজিছে মেচ, চৰণেহে জানে মৰণৰ ঠাই। আমাৰ বা ফুটা কপালত মৃত্যুস্থান বুলি কি টাইপ কৰি থৈছে কণা গোঁসায়ে।"(পৃ.২০)

নিজকে 'আপদ' বুলি নিজকে লঘু কৰা, ভাগ্যত বা ঈশ্ৱৰত অতি বিশ্বাস কৰা আৰু কথাই কথাই জতুৱা-পটন্তৰ ব্যৱহাৰ কৰা বা হৰিনাম লোৱাটো চহৰীয়া মানুহৰ ভাষাৰূপৰ লক্ষণ নহয়। ই গঞা মানুহৰে ভাষাৰ লক্ষণ। একেদৰে 'মই' গল্পটোতো ৰংমন পেগু চৰিত্ৰটোৰ মুখত গাঁৱলীয়া কথিত ভাষাৰ সুৰ শুনিবলৈ পোৱা যায়। উদাহৰণস্ৱৰূপে— "কি কথা কয় হেৰি, আপোনাৰ কথা শুনিয়েই মোৰ স্ৱৰ্গ ঢুকি পোৱা যেন লাগিছে, পিছে আমি অভাৰী মানুহ।"(*বেংছতা;* পৃ.১৫৮)

অৱশ্যে ভাষিক দায়িত্ববোধসম্পন্ন লেখক হিচাপে গল্পকাৰ শইকীয়াই অসমীয়া ভাষাৰ থলুৱা ৰূপটোৰ যথাসম্ভৱ অধিক প্ৰয়োগৰ প্ৰয়াস কৰিলেও পৰিস্থিত সাপেক্ষে তেওঁ সম্পূৰ্ণ ইংৰাজী বাক্যও চৰিত্ৰৰ মুখত ব্যৱহাৰ কৰিছে। এইক্ষেত্ৰত তেখেতৰ বহু গল্পত উপস্থিত থকা চিকিৎসা বৃত্তিৰ চৰিত্ৰৰ মুখতে ইংৰাজী ভাষাৰ ব্যৱহাৰ বেছি। উদাহৰণস্ৱৰূপে 'থেলাজিয়া' গল্পটোত ডাক্তৰ চৰিত্ৰটোৰ মুখত ইংৰাজী ভাষাৰ বাক্য ব্যৱহাৰ কৰিছে ঃ "ছাৰ, গুড নিউজ এট লাষ্ট, ডিটেক্টেড এন এক্সিডেণ্টেল হ'ষ্ট অৱ দ্য থেলেজিয়া ৰৰ্ম। হয় ছাৰ, গ্ৰাউণ্ডৰৰ্কখিনি কৰা হৈ গৈছে, ফটো লৈছোঁ। ৰৰ্মটোৰ পৰীক্ষাৰ বাবে মাইক্ৰবায়লৈ পঠাইছোঁ। হ'ষ্ট একেবাৰে স্মাৰ্ট পোৱালি এটা, মৰম লগা।" (*চ'তৰ উৰহী;* পৃঃ১১)

১.১৪ শব্দচয়ন ঃ

সাহিত্যৰ ভাষা নিৰ্ভৰ কৰে ইয়াৰ বিষয়বস্তু আৰু পৰিৱেশৰ ওপৰত। কুশলী লেখকে পৰিস্থিতিৰ লগত সংগতি ৰাখি একেটা লেখাৰ মাজতে ভিন্ন শব্দ ব্যৱহাৰ কৰে; যি

সাহিত্যকর্মটিক অধিক বাস্তৱসম্মত কৰি তোলে। অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়ায়ো তেখেতৰ গল্পৰাজিত প্রয়োজনসাপেক্ষে লোকভাষা, প্রয়োজন সাপেক্ষে মান্যভাষা আৰু চৰিত্রসাপেক্ষে ইংৰাজী-হিন্দী আদি ভাষাৰো ব্যৱহাৰ কৰিছে। শব্দচয়নৰ দিশটোলৈ মন কৰিলে তেখেতৰ গল্পত সংস্কৃতমূলীয় শব্দৰ লগতে অসমীয়া ভাষাৰ বহু কথিত শব্দৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়।

সংস্কৃতমূলীয় ঃ

অংকশায়িনী, কিম্ভুত-কিমাকাৰ, ভূমিস্থ, খর্বমস্তিষ্ক, ঘূর্ণায়মান, চিৰপ্রবাহমান, দৈহিক নৈকট্য আহার্য, বিবদমান, পৰস্ত্রীগামী, অৱশ্যম্ভাৱিতা, পশ্চাদপৰণ

গ্রাম্য বা কথিত ঃ

জ ল্ডর্ঘলৌ, গায়ে-গাঁৰিয়ে, ফার্লংমান, ধিতিঙালি, কল্‌ঢোপ-কল্‌ঢোপকৈ, বিয়নী-সাবটাৰ, কচি বান্ধ, ঘিলা ভাঙি যাত্রা কৰা কেৰেলুৱা, চৰণেহে জানে মৰণৰ ঠাই, হাতত নাই ধন বৰসবাহলৈ মন, আজৰুবি, বাইকেও(বাক্যও),

আকৌ, একেটা কথাকে বুজাবলৈ সমান্তৰালভাৱে অসমীয়াৰ লগতে ইংৰাজী বাক্যৰ ব্যৱহাৰ শইকীয়াৰ গল্পত দেখা যায়। উদাহৰণৰ বাবে 'বেংছতা' গল্পটোলৈকে আঙুলিয়াব পাৰি— "মগজুৰ চিন্তা-ভাৱনা অহা-যোৱা কৰা আঁহবিলাকত আজিকালি বৌটিৰ প্রায়ে যান-জঁট লাগে। ট্রেফিক জেম ইন দ্য এগ্‌জন্‌ছ অৱ ব্রেইন।"

সমান্তৰালভাৱে গ্রাম্য ভাষাৰ ব্যৱহাৰেও তেখেতৰ গ্রাম্য চেতনাৰ স্বাক্ষৰ বহন কৰে। তেখেতৰ 'ঊনমৃত্যু' গল্পটোত এজন বৃদ্ধৰ একাকীত্ব, অথর্ব অৱস্থাক উপস্থাপন কৰা হৈছে এক ভাষা-শৃংখল বা শিক্ষণ মাধ্যমৰ মাজেৰে। অকলশৰীয়া বৃদ্ধ ৰমা ককাই নাতিনী 'শুৱলা'(মান্যতা)ক স্কুলৰ পৰা দিয়া হ'মৱর্ক কৰাই সহায় কৰিছে; যি হ'মৱর্কত তেওঁ অসমীয়া স্বৰবর্ণ কেইটাৰ পৰা তিনিটাকৈ শব্দ গঠণ কৰিছে। কিন্তু প্রথমে বৃদ্ধগৰাকীয়ে নাতিনীয়েকক শিকাই দিয়া শব্দসমূহ হৈ পৰিছে বৃদ্ধজনৰ বার্ধক্যচেতনাৰ পৰিচায়ক।

উদাহৰণস্বৰূপে 'অ' স্বৰটোৰ বাবে তেওঁ নাতিনীয়েকক শিকাই দিছে অসহায়, অথর্ব, অপত্য; 'আ' বর্ণৰ বাবে লিখিবলৈ দিছে আওমৰণ, আঘাত, আলপৈচান; 'ঊ'ৰ বাবে গঠন কৰিছে ঊদফাই, ঊর্ধদেহ, ঊনমৃত্যু ইত্যাদিৰ দৰে শব্দ— যাৰ ব্যৱহাৰ গল্পকাৰে নিজেই কৰি দেখুৱাইছে এনেদৰে ঃ

> পুৰণি 'ঊদফাই' ৰোগটো আছেই, তাতে উচ্চ ৰক্তচাপত ভুগি 'একাংগী' হোৱা দেহা, চৰকাৰী চিকিৎসালয়ৰ দিহা আৰু 'ঔষধ'ৰ ওপৰতে জীৱনটো বর্তি আছে। 'ইচ্ছামৃত্যু'ৰ পথতো মান্যতা হৈ পৰিছে এক প্রচণ্ড বাধা। 'ইহকাল'ৰ পৰা 'ঊর্ধ্বদেহ'ৰ মাজৰ পথছোৱাতে যে মায়া-মমতাৰ এক অলংঘনীয় পাহাৰ সৰু ছোৱালী এজনীৰ ৰূপ লৈ বহি থাকিব পাৰে তাকে ভাবিলে ককাৰ চকু দুটা সজল হৈ আহে। এই যেন সৰিব, এই যেন সৰি পৰিব দুটোপাল গৰম চকুপানী।
>
> ('ঊনমৃত্যু', *লিংগমুক্ত পৃথিৱীৰ সাধু এটা;* পৃ ঃ ৫০)

আনহাতে, গল্পটোৰ শীর্ষকত উদ্ধৃত কৰা 'ঊনমৃত্যু' শব্দটোৰ সম্পর্কে লেখকে ৰমা ককা চৰিত্রটিৰ মুখেৰেই কোৱাইছে। লেখকৰ মতে, ঊনচল্লিশ, ঊনপঞ্চাশ আদিয়ে যিদৰে চল্লিশ বা পঞ্চাশৰ আগৰ স্থিতিক বুজায়; ঠিক তেনেকৈয়ে 'ঊনমৃত্যু' শব্দটোৱেও মৃত্যুৰ আগৰ বা মৃত্যুতকৈ অলপ কম প্রাবল্যৰ নির্মম অৱস্থাক বুজাবলৈ সক্ষম। গল্পকাৰৰ এনে ভাষা ব্যৱহাৰে তেখেতৰ ভাষিক দক্ষতাকে প্রতিভাত কৰে।

২.০০ উপসংহাৰ ঃ

অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ গল্প বিশ্লেষণ কৰি চালে দেখা যায় যে তেখেতৰ প্রাৰম্ভিক স্তৰৰ গল্পসমূহত এক পৰম্পৰাগত কাহিনী কথনৰীতিৰ প্রভাৱ পৰিছিল যদিও পৰৱর্তী সময়ত তাক অতিক্রম কৰি তেওঁ নিজস্ব এক কথনৰীতি গঢ় দিছে। প্রথম পুৰুষ শৈলী, চেতনা স্রোত পদ্ধতি, হাস্য-ব্যংগ উপাদান, চিকিৎসা বিজ্ঞানৰ অনুষংগ ইত্যাদি বিভিন্ন উপাদানেৰে শইকীয়াৰ গল্পৰ আংগিক নির্মাণ হৈছে। সমান্তৰালভাৱে অসমীয়া ভাষাৰ মান্যৰূপৰ সৈতে গ্রাম্যৰূপৰ প্রয়োগ আৰু পৰিস্থিতিসাপেক্ষে অন্য ভাষাৰ ব্যৱহাৰে তেখেতৰ গল্পভাষাক অনন্য ৰূপত গঢ় দিছে। গল্পকাৰৰ ভাষাত তেখেত পূর্বসুৰী গল্পকাৰ "ৰমা দাসৰ ৰোমাণ্টিকতা, কৃষ্ণ ভূঞাৰ স্মার্ট ভাষা, ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ পুংখানুপুংখতা, মহিম বৰাৰ গাঁও আৰু সৌৰভ চলিহাৰ 'আই ডন্ট কেয়াৰ' জাতীয় মিশ্র-হাইব্রিড ভাষা"ৰ প্রতি যিদৰে আকৃষ্ট; সেইদৰে তেওঁ ভালপায় অপূর্ব শর্মাৰ 'perfection' আৰু কুল শইকীয়াৰ 'stream of conciousness'। অৱশ্যে এইসকল গল্পকাৰৰ পৰা প্রেৰণা লাভ কৰিলেও অপূর্ব কুমাৰ শইকীয়া গল্পৰ বিষয় নির্বাচন, আংগিক আৰু ভাষা— এই আটাইকেইটা দিশতে তেওঁলোকৰ পৰা প্রভাৱমুক্ত। ❑

প্রসংগ সূত্র ঃ

আচার্য্য, প্রদীপ। 'অসমীয়া সাহিত্যত আধুনিকতা'। *পৰিহার্য্য,* ক্রান্তিকাল প্রকাশন, ২০২৪, নিপৃ. ১৪৭-১৪৯।

বৰা, প্রভাত। 'সৌৰভ চলিহাৰ গল্প ঃ এটি অনুসন্ধান'। *যথাৰীতি,* আঁক-বাক, ২০১৩, নিপৃ. ৭৪-৮৭।

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী

মুখ্য সমল ঃ

শইকীয়া, অপূর্ব কুমাৰ । *চ'তৰ উৰহী,* গুৱাহাটী ঃ পাঞ্চজন্য । ২০১৯।

— — — । *বজাৰত এদিন* । গুৱাহাটী ঃ বাণী মন্দিৰ । ২০০৭।
— — — । *বেংছতা*। গুৱাহাটী ঃ আঁক-বাক । ২০১৬।
— — — । *ৰান্ধনি বেলি* । গুৱাহাটী ঃ আঁক-বাক । ২০২২।
— — — । *লিংগমুক্ত পৃথিৱীৰ সাধু এটা*। গুৱাহাটী ঃ আঁক-বাক । ২০১১।

গৌণ সমলঃ

আচার্য্য, প্রদীপ। 'অসমীয়া সাহিত্যত আধুনিকতা'। *পৰিহার্য্য,* ক্রান্তিকাল প্রকাশন, ২০২৪।

দত্ত, উদয়। *চুটি গল্প*। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰ্চ্। ২০১২।পুনৰ মুদ্রণ।

দাস, দুলাল চন্দ্র(সম্পা.) । *সাম্প্রতিক অসমীয়া চুটিগল্পৰ গতিপথ আৰু কেইগৰাকীমান গল্পকাৰৰ গল্প*। গুৱাহাটী ঃ ঋজুগ। ২০২১। প্রথম প্রকাশ।

নেওগ, সুব্রতজ্যোতি। *শৈলীবিজ্ঞান আৰু অসমীয়া সাহিত্যৰ শৈলী।* গুৱাহাটী ঃ বনলতা। ২০১৫। প্রথম প্রকাশ।

বৰগোহাঞি, হোমেন(সম্পা.) ঃ *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী(ষষ্ঠ খণ্ড)* । গুৱাহাটী ঃ আবিলেক। ২০১২। দ্বিতীয় প্রকাশ।

বৰা, প্রভাত ঃ *যথাৰীতি,* আঁক-বাক, গুৱাহাটী, ২০১৩।

ভট্টাচার্য, পৰাগ কুমাৰ। *সাহিত্যঃ সংজ্ঞা আৰু আংগিক* । গুৱাহাটী ঃ জ্যোতি প্রকাশন। ২০০২। প্রথম প্রকাশ।

Abrams & Harpham. *A Glossary of Literary Terms.* Delhi : Cengage Learning. 2021. 11th àßd.

Barry, Peter. *Beginning Theory*. New Delhi : Viva books. 2018. 4th ed.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন (নির্বাচিত কবিতাৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)

কৌশিক ঠাকুৰীয়া

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ,
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয
৯৩৯৫৩৭২৬৪৪
kaushikthakuria108@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্য জগতৰ এটি চিৰপৰিচিত নাম হ'ল নলিনীধৰ ভট্টাচার্য। চল্লিশৰ দশকৰ পৰা একবিংশ শতিকাৰ প্রথম দশকলৈকে অসমীয়া কবিতাৰ ক্ষেত্রখনত ভট্টাচার্যই এক বিশেষ স্থান দখল কৰি আছে। নলিনীধৰ ভট্টাচার্য একাধাৰে প্ররন্ধকাৰ, সমালোচক তথা অনুবাদক। আবাহন আলোচনীৰ মাজেৰে তেওঁ সাহিত্যৰ জগতখনত ভূমুকি মাৰিছিল। এইখন কাকতত প্রকাশিত 'দুখীয়া' কবিতাটোৱে হৈছে ভট্টাচার্যৰ প্রথম কবিতা। দ্বিতীয় মহাযুদ্ধ, স্বাধীনতা আন্দোলন, দেশ বিভাজন আৰু তাৰ মর্মান্তিক পৰিণতি, নক্সাল আন্দোলন, নৃগোষ্ঠী সমূহৰ আত্ম পৰিচয়ৰ সংকট ইত্যাদি ঘটনাই ভট্টাচার্যৰ সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ পৰিক্রমাটোত এক বিশেষ ভূমিকা পালন কৰিছে। তদুপৰি ভট্টাচার্যৰ কবিতাত সমসাময়কি অসমীয়া সমাজৰ ৰাজনীতি, সমাজনীতি, অর্থনীতি, শ্রেণীবৈষম্য, অসম আন্দোলন, গোষ্ঠী সংঘর্ষ, আলফা সমস্যা, তথাকথিত জাতীয়তাবাদ, প্রগতিশীল চিন্তা, সাংস্কৃতিক ঐতিহ্য ইত্যাদিৰ জীৱন্ত ছবি মূর্ত্তমান হৈ উঠিছে। ভট্টাচার্যৰ কবিতাত বিষয় বৈচিত্র্যৰ সমান্তৰাল ভাবে সহজসৰল ভাষা প্রয়োগৰ দক্ষতায়ো কবিতাসমূহক অভিনবত্ব প্রদান কৰিছে। উপমা, ৰূপক, প্রতীক, ছন্দ, আৰু অলংকাৰৰ প্রয়োগেও ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা আকর্ষণীয় কৰি তুলিছে। আমাৰ এই অধ্যয়নত নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা-ৰীতি সম্পর্কে আলোচনা কৰাৰ যত্ন কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

নলিনীধৰ ভট্টাচার্য, প্রতীক, গদ্যধর্মী ভাষা, লোকভাষা, আশাবাদ।

অৱতৰণিকা ঃ

অসমৰ কাব্য আৰু গদ্য উভয় সাহিত্যত অৱদান আগবঢ়াই যোৱা অসমীয়া লেখকসকলৰ ভিতৰত এগৰাকী হ'ল নলিনীধৰ ভট্টাচার্য। নলিনীধৰ ভট্টাচার্য একাধাৰে প্ররন্ধকাৰ, সমালোচক তথা অনুবাদক। আবাহন আলোচনীৰ মাজেৰে তেওঁ সাহিত্যৰ জগতখনত ভূমুকি মাৰিছিল। এইখন কাকতত প্রকাশিত 'দুখীয়া' কবিতাটোৱে হৈছে ভট্টাচার্যৰ প্রথম কবিতা। তদুপৰি ভট্টাচার্যই বাঁহী, জয়ন্তী, পচোৱা, ৰামধেনু, সাম্প্রতিক সাময়িকী, গৰিয়সী, প্রান্তিক ইত্যাদি আলোচনীৰ মাজেৰে ধাৰাবাহিকভাৱে সাহিত্য চর্চা কৰি অসমীয়া সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ অত্যন্ত বহল। প্রাচ্য আৰু পাশ্চাত্য উভয় সাহিত্যতে তেওঁৰ যথেষ্ট পৰিমাণে দখল আছিল। জীৱনৰ বিচিত্র অভিজ্ঞতাৰে পৰিপুষ্ট নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাত

মানৱতাবাদৰ সুৰ স্পষ্টভাৱে প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়। প্ৰখৰ সামাজিক চেতনাবোধে ভট্টচাৰ্যৰ সৃষ্টিৰাজিক নতুনত্ব প্ৰদান কৰিছে। নলিনীধৰ ভট্টাচাৰ্যৰ প্ৰকাশিত কবিতাপুথিৰ সংখ্যা ৭ খন। সেইকেইখন হ'ল

(১) এই কুঁৱলীতে

(২) চেৰাশালিৰ মালিতা

(৩) আহত সপোন

(৪) ননী আছনে ঘৰত

(৫) বিদায় ফুলৰ দিন

(৬) দিনৰ পিছত দিন

(৭) দিনবোৰ সলনি নহ'ল (কবিৰ স্ব-নির্বাচিত)।

সাহিত্য ভাষাৰ শিল্প। সাহিত্যৰ অংগ হিচাপে কবিতাও ভাষাৰে চাৰুশিল্প 'যাৰ মাধ্যম হ'ল শব্দ। কবি সেই ভাষাৰেই কাৰিকৰ। ভট্টাচার্য এই ক্ষেত্ৰত ব্যতিক্ৰম নহয়। ভট্টাচার্যৰ কবিতাত ভাষা প্ৰয়োগৰ বিবিধতা বিৰাজমান। উপমা, ৰূপক, প্ৰতীক, ছন্দ আৰু অলংকাৰ প্ৰয়োগৰ দক্ষতাই ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষাক অভিনৱত্ব প্ৰদান কৰিছে। ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ প্ৰকাশভংগীমা সহজ-সৰল আৰু স্পষ্ট। বৰ্ণনাধৰ্মী ভাষা, স্পন্দিত গদ্য, মুক্তক ছন্দৰ প্ৰয়োগেও কবিতাৰ ভাষা শক্তিশালী কৰি তুলিছে। ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা সম্পৰ্কে কৰা প্ৰাৰম্ভিক অধ্যয়নত ভাষাৰ ভিন্ন ৰূপ দেখিবলৈ পাওঁ। সেই ৰূপসমূহ এনে ধৰণৰ ঃ শব্দচয়নৰ বৈচিত্ৰ্যতাৰ ফালৰ পৰাও ভট্টাচার্যৰ কবিতাই স্বকীয়তা দাবী কৰিব পাৰে। "নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন (নির্বাচিত কবিতাৰ বিশেষ উল্লিখন সহ) শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষিক বৈচিত্ৰ্যৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ যত্ন কৰা হ'ব।

গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ কবিতাৰ মূল সম্পদ হৈছে ভাষা। ভাষাশৈলীয়ে কবিতাক গদ্যৰ পৰা পৃথক কৰিছে। কবিতাৰ ভাষা সচৰাচৰ ব্যৱহৃত জনগণৰ মুখৰ ভাষা নহয়। নাইবা ই গদ্য শৈলীৰ দৰেও একে নহয়। সেয়ে "নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষাঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখন কিছুমান বিশেষ উদ্দেশ্য আগত ৰাখি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে-

(ক) নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাত ব্যৱহৃত ভাষা শৈলীৰ পৰিচয়মূলক বিৱৰণ সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰাৰ যত্ন কৰা হ'ব।

(খ) ভট্টচার্যৰ কবিতাত প্ৰসংগ বা বিষয় অনুসৰি ভাষা প্ৰয়োগৰ দক্ষতা সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ব।

(গ) ভট্টাচার্যৰ কবিতাত ব্যৱহৃত লোকভাষাৰ প্ৰয়োগ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাৰ লগতে এনে ভাষাই জাতীয় চেতনা জাগ্ৰত কৰি তোলাত কেনে ধৰণৰ ভূমিকা পালন কৰিছে সেই সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা হ'ব।

(ঘ) ভট্টাচার্যৰ কবিতাত ভাষা প্ৰয়োগৰ বৈচিত্ৰতা তথা কলা কৌশল সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ব।

গৱেষণাৰ পৰিধি ঃ

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ ৭ খন কবিতা সংকলনত প্ৰায় ২০০ বো অধিক কবিতা প্ৰকাশিত হৈছে। ইয়াৰ বাহিৰেও গৰীয়সী, সাতসৰী, প্ৰান্তিক ইত্যাদি আলোচনীৰ পাততো কিছু কবিতা প্ৰকাশ পোৱা দেখা যায়। ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ বিষয় বস্তুৰ বৈচিত্ৰতা, তাত্বিক দর্শন, কলা-কৌশল আদি বিষয়কলৈ গৱেষণা কৰাৰ যথেষ্ট থল আছে যদিও নির্দিষ্ট সময় আৰু গৱেষণা পত্ৰৰ কলেৱৰলৈ লক্ষ্য ৰাখি "নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষাঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰত ভট্টাচার্যৰ নির্বাচিত কবিতাৰ কেৱল ভাষিক দিশটোৰহে আলোচনা আগবঢ়োৱাৰ যত্ন কৰা হ'ব।

গৱেষণাৰ সমল ঃ

আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোতে মূলতঃ দুই ধৰণৰ সমল ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। এটা হ'ল মূখ্য সমল আৰু আনটো হ'ল গৌণ সমল। মূখ্য সমল হিচাপে নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাসমগ্ৰৰ লগতে তেওঁৰ দ্বাৰা সৃষ্ট সাহিত্য সমগ্ৰক আৰু গৌণ সমল হিচাপে ভট্টাচার্যৰ কবিতা বিষয়ক লৈ লিখা কিতাপ পত্ৰ, স্মৃতিগ্ৰন্থ। আলোচনীত প্ৰকাশিত ভট্টাচার্যৰ সাহিত্য বিষয়ক প্ৰৱন্ধপাতিক সামৰি লোৱা হ'ব।

গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোতে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হ'ব।

মূল বিষয় বস্তুৰ বর্ণনা ঃ কবিতাৰ মূল সম্পদ হৈছে ভাষা। ভাষাশৈলীয়ে কবিতাক গদ্যৰ পৰা পৃথক কৰিছে। কবিতাৰ ভাষা সচৰাচৰ ব্যৱহৃত জনগণৰ মুখৰ ভাষা নহয়। নাইবা ই গদ্য শৈলীৰ দৰেও একে নহয়। মুঠতে কবিয়ে মনৰ ভাৱ প্ৰকাশ কৰা মাধ্যমটো হৈছে ভাষা। ভাষাৰ দ্বাৰা ভাৱানুভূতিক বিশেষ ভাৱে প্ৰকাশ কৰা শৈল্পিক ৰূপটোৱে হ'ল কবিতা। সেয়ে কবিতাত ভাষাৰ বিশেষ গুৰুত্ব আছে। কবিতাৰ ভাষাৰ মূল বিচাৰ কৰিবলৈ হ'লে কবিতাত ব্যৱহৃত

অভিধানগত অর্থ, বাক্যবিন্যাসগত ৰূপ, ছন্দ আৰু অলংকাৰৰ যথাযথ পৰীক্ষা-নীৰিক্ষাৰ সহায় ল'ব লাগিব কিয়োনো কবিতাৰ কথাবস্তু আৰু অংগ পাৰস্পাৰিকভাবে সম্পৃক্ত। অর্থ্যাৎ কবিতাৰ আৱয়বিক ৰূপ আৰু তাৰ অভিপ্রেত বক্তব্যৰ মাজত এক নিবিড় সম্পর্ক বিৰাজমান। উল্লেখযোগ্য যে ভট্টাচার্যই কবিতাৰ ভাষা সম্পর্কে মন্তব্য প্রদান কৰিছে যে "কবিয়ে সমাজৰ বর্তমান বা ভৱিষ্যত সম্বন্ধে যিমান চিন্তিত, ভাষাৰ সতর্ক আৰু সুশৃংখল প্রয়োগ সম্পর্কে সিমান উদ্বিগ্ন নহয়। আচলতে এই দুয়োটাৰ সুসমন্বয় হোৱা উচিত। কবিৰ দায়িত্ব দুই প্রকাৰৰ এটা সামাজিক আৰু আনটো ভাষিক। ভাষা এনে সুন্দৰ আৰু আকর্ষণীয় হোৱা উচিত যে তাৰ আঁৰপটৰ পৰাই কবিৰ স্বপ্ন বা দুঃস্বপ্নক আমি উদ্ধাৰ কৰিব পাৰোঁ।" (নলিনীধৰ ভট্টাচার্য কবিতাৰ কথা পৃ- ৯৮) এনে মন্তব্যৰ পৰা কবিতাত ভাষাৰ যথাযথ প্রয়োগ যে অপৰিহার্য সেই কথা নিশ্চিত।

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষালৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে, তেওঁৰ কবিতাৰ ভাষা মিতব্যয়ী আৰু আটিল; বছা বছা শব্দ আৰু অতি চুটি চুটি বাক্যৰ নির্মাণ শৈলীৰে ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাত একোখন সম্পূর্ণ চিত্র আঁকিবলৈ সক্ষম হোৱা দেখা যায়। উদাহৰণ স্বৰূপে -"লালুকসোলাৰ হাউলিৰ পদূলিত/সেয়া ফুচফুচনি শুনিছোঁ কাৰ? পিয়াহৰ পানী নেপালা আঘোণা কছাৰী/ভোটাই ডেকা পালানে ভোকৰ ভাত।"

মৰিশালি য'ত চেৰাশালি হয়, পৃ-৩৮

ইয়াত প্রথম শাৰীটোত ইতিহাস প্রসিদ্ধ আহোম সাম্রাজ্য কালিমা সনা গাঁথা তথা ক্ষমতা সর্বোচ্ছ স্বেচ্ছাচাৰী মানসিকতাৰ ছবি স্পষ্টভাৱে প্রকাশ পাইছে। শৰাইঘাটৰ যুদ্ধৰ পৰৱর্ত্তী সময়ছোৱাত লালুকসোলাত গুৱাহাটীৰ বৰফুকন হিচাপে নিযুক্ত কৰা হৈছিল আৰু তাৰ গইনালৈয়ে লালুকসোলাই আতন বুঢ়া গোএঞাইক ক্ষমতাচ্যুত কৰা আৰু নিজে উজনি অসমৰ ৰজা হোৱাৰ স্বার্থত মোগলৰ সৈতে সন্ধি কৰি মোগলক গুৱাহাটীলৈ সীমা বৃদ্ধি কৰাৰ সুবিধা প্রদান কৰিছিল। নলিনীধৰ ভট্টাচার্যই ওপৰোক্ত কবিতাফাঁকিৰ জৰিয়তে শৰাইঘাটৰ যুঁজৰ পৰৱর্ত্তী সময়ছোৱাৰ আহোম সাম্রাজ্যৰ ৰাজনৈতিক অৱিয়াঅৰি ছবি উন্মোচন কৰাৰ লগতে একাংশ আহোম বিষয়াক চাৰিত্রিক অধপতনৰ কথা যথাযথ ভাবে প্রকাশ কৰিছে।

শৰাইঘাটৰ যুদ্ধৰ পিছত লালুকসোলা বৰফুকনৰ ক্ষমতা লিপ্সা, উদ্ভণ্ডালীয়ে আহোম সাম্রাজ্যক বিপথে পৰিচালিত কৰাত ভোটাই ডেকা নামৰ সাহসী ডেকা এজনে অত্যাচাৰী লালুকসোলা বৰফুকনক হত্যা কৰে। হত্যাৰ পৰৱর্ত্তী সময়ছোৱাত ষড়যন্ত্রমূলকভাৱে আহোম বিষয়াই ভোটাই ডেকাক নির্মম ভাবে হত্যা কৰা ঐতিহাসিক ঘটনাক ভট্টাচার্যই দ্বিতীয় শাৰীটোত উন্মোচিত কৰিছে। অর্থাৎ ওপৰোক্ত কবিতাটোত ভট্টাচার্যই ১৭ শতিকাৰ অষ্টম দশকৰ অবিশ্বাস সংশয়, হত্যা-হিংসা আৰু বঙহে বঙহৰ মঙহ খোৱাৰ পৰিৱেশটোক সুন্দৰ ভাৱে উপস্থাপন কৰিছে।

কবিতাত অন্তর্নিহিত হৈ থকা দুটা বিশেষ প্রকৰণ হ'ল গীত আৰু ছবি। যাৰ ফলশ্রুতিত কবিতাত লোকজীৱনৰ সুৰৰ প্রভাৱ স্পষ্টভাবে পৰা পৰিলক্ষিত হয়। "কবিতাত ধ্বনি ব্যঞ্জনা আৰু কথা দুয়োটাৰে অপূর্ব সংযোগ ঘটে। দুয়োয়ে মিলি ভাৱৰ ভাষা নির্মাণ কৰে আৰু তাৰ মাজেৰে একোটাহঁত বিষয় বস্তু পল্লবিত হৈ উঠে। সেই বুলি কবিতাক সংগীত বুলিব নোৱাৰি; বৰং ই সংগীতময় বা সংগীতৰ দৰেহে। আনকথাত ই হ'ল সাংগীতিক চিন্তা।" (আধুনিক অসমীয়া কবিতাত প্রতীক আৰু চিত্রকল্প, পৃ- ১৫৮) নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ সৱহ সংখ্যক কবিতাত সাংগীতিক ব্যঞ্জনা তথা গীতিধর্মী ভাষাৰ ব্যৱহাৰ দেখিবলৈ পোৱা যায়। যেনে-

"নামা নামা দ পানীলৈ নামা
তাতেই পাবা/ সপোনৰ সুৰ/অসুৰ জিনা
ৰণচণ্ডীৰণ/দেওধ্বনি মন
দৈ জিৰি জিৰি নাচা" (দিনবোৰ সলনি নহ'ল, পৃ-৪১)

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাত যথেষ্ট পৰিমাণে গীতিধর্মী ভাষাৰ প্রয়োগ দেখা যায়। ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাৰ গীতিধর্মীতা সম্পর্কে কৈছে "কবিতাৰ বুৰঞ্জী সংবেদনশীলতাৰ বুৰঞ্জী। ইয়াত প্রয়োজন হয় অনুভূতি আৰু সংগীতৰ। অনুভূতি আৰু সংগীত নাথাকিলে বোধহয় কবিতা নহয় সি হ'ব পশ্চিমীয়া আলোচকৰ ভাষাত এণ্টি-পয়েট্রি। এনেধৰণৰ কবিতাও লিখা হৈছে তাত কেবল যুক্তি তর্কৰ সমাৱেশ। কেতিয়াৱা আকৌ দেখা যায় অতিশয় গদ্যগন্ধী কবিতাতো গভীৰ অনুভূতি আৰু এক অন্তর্নিহিত সংগীত থাকে তেনে কবিতাৰো উদাহৰণ আছে। স্বাশ্রয়ীয়েই হওঁক বা সামাজিক ধাৰাই হওঁক সি ৰসোতীর্ণ হ'ব লাগিব। অনুভূতিৰ সূক্ষ্মতা, সাংগীতিক লয়ে কবিতাৰ গাঁথনিত এটা নমনীয়তা দিয়ে, আৰু তাক মন পৰশাও কৰে।" (নলিনীধৰ ভট্টাচার্য, দিনবোৰ সলনি নহ'ল, পৃ- ১৯) উক্ত মন্তব্যৰ পৰা ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাত যে সাংগীতিক লয় ব্যৱহাৰৰ

পোষকতা কৰিছিল, সেই কথা সহজেই অনুমেয়। সেয়েহে ভট্টাচার্যৰ পানীতোলাৰ গীত, নিচুকনিগীত, জটায়ু, মৰণঘাটৰ স্বপ্ন আদি কবিতাটো থলুৱা লোকজীৱনৰ সুৰ তথা গীতিধর্মী ভাষাৰ প্রয়োগে কবিতাসমূহক আকর্ষণীয় কৰি তুলিছে। যেনে-

"শো অ' মইনা শ ৰাতি হ'ল
খিৰিকীৰ কাষত তোৰ ভৱিষ্যত শুইছে
সিঁও উদ্বিগ্ন, ছট ফটাই আছে যন্ত্রণাত।"

(বিদায় ফুলৰ দিন, পৃ-১৬)

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা অধ্যয়ন কৰিলে দেখা যায় যে তেওঁৰ কবিতা সমূহত কথোপকথন বা সংলাপধর্মী ৰীতিৰ প্রাধান্য। ভট্টাচার্যই কথোপকথন নীতি বা সংলাপধর্মী ৰীতিৰে কবিতাৰ বিষয়বস্তুক সাৱলীল ভাবে উপস্থাপন কৰা পৰিলক্ষিত হয়। ভট্টাচার্যৰ প্রায় ভাগ কবিতাতে এনে ৰীতি সহজলভ্য। যেনে-

"তোৰ শৰীৰৰত কি গজিছে অ' ননী
নেজ নে মাংসপেশী
কি ভূতে লম্ভিছে তোক
খটাসুৰ সময়ে তোৰ কাণত কি বিষ ঢালিছে
কিয় পাহৰিছ অহিৰ ভৈৰৱ"।

(ননী আছেনে ঘৰত, পৃ- ২৩)

বিংশ শতিকাৰ শেষৰ দুটা দশকত অসমৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক অস্থিৰতাৰ পৰিপ্রেক্ষিতত এচাম ডেকাই আলফাকে আদি কৰি বিভিন্ন সন্ত্রাসবাদী বা হিংসাজর্জৰ কার্যপন্থাৰ সৈতে জড়িত হৈ পথভ্রষ্ট হৈছিল। ওপৰোক্ত কবিতাশাৰীৰ দ্বাৰা ভট্টাচার্যই সংশ্লিষ্ট অসমীয়া ডেকাৰ সেই আবেগ আৰু সামাজিক বিভ্রান্তিক কবিতাৰ মাজেৰে যুক্তি সহকাৰে উপস্থাপন কৰিছে কথোপকথন শৈলীৰ আধাৰত।

ইংগিতময়তা ভাষাৰ অন্যতম আকর্ষণীয় শক্তি। ভট্টাচার্যৰ কবিতাসমূহ অধ্যয়ন কৰি আমি দেখিলো যে তেওঁৰ কবিতাত ইংগীতময়ী ভাষাই এক গুৰুত্বপূর্ণ স্থান দখল কৰি আছে। বিশেষকৈ কবিতাত ইয়াৰ ব্যৱহাৰে কথ্য বিষয়বস্তুৰ সৌন্দর্য আৰু শক্তি অধিক বৃদ্ধি কৰে। ভট্টাচার্যৰ কবিতাটো ইংগিতধর্মী ভাষাই স্থান পোৱা দেখা যায়। যেনে-

"মোৰ ও ল্ডখা ঠাইখনতে
উশাহ ল'ব নোৱাৰো
অন্ধকাৰ
পাক মাৰি ধূলিৰ বতাহে চূর্তি হেৰুৱায়।"

(বলিয়া হাতীৰ ৰাতি, পৃ- ৫৯)

ভোগবাদী মানসিকতা আৰু কৃত্রিম সভ্যতাই ক্রমাগতভাবে কিদৰে সমসাময়িক সমাজ ব্যৱস্থা প্রভাৱান্বিত কৰাৰ লগতে মানৱীয় ভাৱানুভূতি, প্রমূল্যবোধ আদিকো গ্রাস কৰাৰ উপক্রম হৈছে; তাৰ স্পষ্ট ইংগিত কবিতাশাৰীত বিদ্যমান। তদুপৰি ভট্টাচার্যৰ গুৱাহাটী, দুপৰ নিশাৰ চৰাই, বিজ্ঞাপনৰ মোহিনী, আমি কোৱাকুই কৰোঁ ইত্যাদি কবিতাটো ইংগিতময়ী ভাষাৰ প্রয়োগ দেখা যায়।

কবি বা সাহিত্যিক সকলে সমাজত গা কৰি উঠা শোষণ-বঞ্চনাৰ পৰা জনগণক মুক্ত কৰিবলৈকো কবিতাত এক বিশেষ শ্রেণীৰ প্রতিবাদী ভাষাৰ প্রয়োগ কৰা দেখা যায়। দৰাচলতে সমাজৰ ফোঁপোলা স্বৰূপ, মানুহৰ বোধ শক্তিৰ অভাৱ, প্রতাৰণা শঠতা ইত্যাদি দূৰ কৰাৰ মানসেৰে এইধৰণৰ ভাষাৰ আশ্রয়ত কবিতা লিখা হয়। ভট্টাচার্যৰ কবিতাটো এনে ভাষা ৰীতিৰ প্রয়োগ মনকৰিবলগীয়া ঃ-

উদাহৰণ ঃ-

"বঞ্চনা মাথোন বঞ্চনা, ঘৰে ঘৰে জুই
নিদ্রামগন নপতা ফুকন
হংসতুলীৰ শয়ন ভঙাৰ এয়েই সময়
ভোটাই ডেকা
এয়েই সময়।" (মৰিশালি য'ত চেৰাশালি হয়, পৃ- ১৯)

আন এঠাইত - "শাৰী শাৰী শাল আৰু চেগুণৰ
"ছাঁ এন্ধাৰত দেখিলোঁ/অজস্র ঘামৰ শিশু
ৰুটি যাৰ এতিয়াও স্বপ্নৰ মোনাত
এইখন পৃথিৱীৰ নৰিয়া লেচাৰ
ক'তো নাই স্বাস্থ্যৰ উল্লাস
তেজ পিয়া কান্ধত বগায়
ভৰপূৰ সিহঁতৰ দুখৰ পিয়লা।"

(মৈৰাপুৰত এৰাতি, পৃ- ১০)

পুঁজিপতি গোষ্ঠীটোৰ হাতত যুগ যুগ ধৰি শোষিত নিষ্পেষিত হৈ অহা সর্বহাৰা শ্রেণীটোক

অভাৱ অনাটন, দুখ দুর্দশাৰ পৰা মুক্ত হোৱাৰ পথ দেখুৱাই দিয়াৰ মানসেৰে নলিনীধৰ ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাত ওপৰত উল্লেখ কৰা ধৰণৰ প্রতিবাদী ভাষাৰ সহায় লৈছে।

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাত আশাবাদী চিন্তা চেতনাই ব্যাপকতা লাভ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। ভট্টাচার্যই

তেওঁৰ কবিতাত আশাবাদ সম্পৰ্কে মত পোষন কৰিছে যে "তথাপি মই আশাবাদী; বৰষুণৰ আশাৰে মৰুভূৰ মাজত ঘূৰি ফুৰা মই এজন সাধাৰণ পথিক। মানুহৰ ওপৰত আস্থা হেৰুওৱাটো পাপ। ঈৰ্ষা, ঘৃণা, অসূয়াৰ মাজত হিংস্ৰ হৈ পৰা অজস্ৰ মানুহে এদিন ব্যক্তি স্বাৰ্থৰ পৰা বিশ্বজনীনতাৰ ফালে আগুৱাই যাব, আৰু হয়তো এই বধ্যভূমিত ইংৰাজ কবি অ'ডেনৰ দ্বৰে চিঞৰি ক'ব 'উই মাষ্ট লাভ ওয়ান আনাদাৰ অৰ ডাই' কেৱল কবিতাৰ মুক্তিয়েই নহয়, হাজাৰ-বিজাৰ দুঃস্থ মানুহৰ মুক্তিয়ো মোৰ কবিতাৰ অংগীকাৰ। কেতিয়াবা ভাবো কথা ক'ব পাৰি। কিন্তু শুনে কোনে। এতিয়া ধনৰ সঞ্চয়ৰ দিন, মনৰ সঞ্চয় আমি দলিয়াই দিছোঁ। তথাপি নিৰাশ হোৱা নাই, কবিতা অৰ্থহীন নহয়।" (নলিনীধৰ ভট্টাচাৰ্য, দিনবোৰ সলনি নহ'ল, পৃঃ- ২০) নলিনীধৰ ভট্টাচাৰ্যৰ প্ৰায় সংখ্যক কবিতাত এই আশাবাদী দৃষ্টিভংগী ব্যঞ্জনা সমৃদ্ধ ভাষাৰ জৰিয়তে আত্মপ্ৰকাশ লাভ কৰা দেখা যায়। ভট্টাচাৰ্যৰ ব্যঞ্জনাৰে সমৃদ্ধ কবিতাৰ স্তৰক সমূহত গভীৰ উপলব্ধিৰ উন্মেষ ঘটা পৰিলক্ষিত হয়। উদাহৰণস্বৰূপে-

হে অনাগত বিধাতা
তোমাৰ সকলো দাবী পুৰি ছাই হোৱা দৃশ্য কি কৰুণ
তথাপি তোমাৰ আশিষ মাগোঁ।
মই যেন উপজিয়ে হওঁ, পোহৰৰ চুমাৰে উজ্জ্বল এডাল
দূৰৰি বন
যি জানে ইতিহাস, জানে মৰণৰো মৰণ কাহিনী
আৰু জানে সৰ্ববিধ ৰোগৰ নিদান

(এটি ভ্ৰূণৰ কাহিনী, পৃ- ২৫)

কবি নলিনীধৰ ভট্টাচাৰ্যই উক্ত কবিতাফাঁকিৰ দ্বাৰা সমসাময়িক সমাজ-ব্যৱস্থাৰ উত্থান-পতন, স্বাধীনতা-পৰাধীনতা সম্পৰ্কীয় আন্তঃসংঘাত, মূল্যবোধৰ বিপৰ্য্যয় ইত্যাদি কাৰকে সমাজখনত সৃষ্টি কৰা অৰাজকতাৰ ভয়াবহ ছবিখন কৌশলপূৰ্ণভাবে অংকন কৰিছে। তদুপৰি ভট্টাচাৰ্যই উত্তৰ পুৰুষৰ কৰ্ম, দৃষ্টিভংগী, চিন্তা-চেতনাক চূড়ান্ত বিশ্বাসী যে সময়ৰ বিৱৰ্ত্তনৰ লগে লগে জ্ঞানৰ দীপ্তিয়ে অপশক্তিক ধ্বংস কৰিব আৰু এখন সৰ্বাংগসুন্দৰ কল্যাণকামী সমাজ তথা ৰাষ্ট্ৰ নিৰ্মাণ কৰিব। অৰ্থাৎ ভট্টাচাৰ্যৰ গভীৰ আশাবাদী চিন্তাই ব্যঞ্জনা সমৃদ্ধ ভাষাৰ জৰিয়তে আত্ম প্ৰকাশ লাভ কৰিছে।

ভট্টাচাৰ্যৰ কবিতাৰ ভাষাত পৰিলক্ষিত হোৱা আন এটি বিশেষ বিশেষত্ব হ'ল গদ্যধৰ্মী ভাষাৰ সংযোজন। এনে ভাষাই আবেগক গতিশীল কৰি ৰখাৰ লগতে দৈনন্দিন জীৱনৰ ব্যৱহৃত ভাষাৰ সম্প্ৰয়োগে কবিতাক অধিক ৰসোত্তীৰ্ণ কৰি তুলিব পাৰে। এনে ভাষাই প্ৰতিপাদ্য বিষয়ৰ গভীৰতাক দ্ৰুতিগতিত হৃদয়ংগম কৰাত গুৰুত্ব ভূমিকা পালন কৰে। অৰ্থ্যাৎ এনে ধৰণৰ গদ্যধৰ্মী ভাষাৰ প্ৰয়োগে কবিতাক পাঠক বা জনগণৰ অধিক ওচৰ চপাই নিয়াত সহায় কৰে। যেনে-

"এতিয়া বহুত নিশা। বাহিৰত বৰ বৰষুণ, ওচৰত তুমি নাই
উৰুঙা উৰুঙা লাগে মন। বৰ বাবু শুলে। ঘৰৰ
আটাইবোৰ নিঃপালি দিলে। মই মাথোঁ আছোঁ সাৰে
তোমালৈ চিঠি লিখোঁ বুলি।"

(চেনিমৰা বাগিচাৰ চিঠি, পৃ- ২১)

লোকভাষা হ'ল কোনো এটা জাতিৰ অমূল্য সম্পদ। ভাষা একোটাত ব্যৱহাৰ হৈ থকা প্ৰৱাদ প্ৰৱচন ফঁকৰা-যোঁজনা বাক্য জতুৰা ঠাঁচ আদি লোকভাষাৰ ঘাই উপাদান। লোকভাষাৰ প্ৰতি শ্ৰদ্ধাশীল হৈ নলিনীধৰ ভট্টাচাৰ্যই তেওঁৰ কবিতাত যথেষ্ট পৰিমাণে লোকভাষা ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়। যেনে -

"বাগাল বুঢ়াৰ বাৰে বৰণ গাই একে বৰণ দুধ
দেশ দুনিয়া ঘূৰি জানিছোঁ আমি একে আইৰে পুত
তোৰ গীতৰ মাটিৰ গোন্ধে চিনাব কুটুম কোন
চালাম মিনি চালাম জুগনু চাচা
বজা বজা জাগিজা-গিজা কালৰ মাদল বজা।"

(চেৰাশালিৰ মালিতা, পৃ- ৫০)

ভট্টাচাৰ্যৰ ওপৰোক্ত কবিতা শাৰীৰ ভাষালৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে ভট্টাচাৰ্যই লোকভাষাৰ প্ৰয়োগেৰে অঞ্চল বিশেষৰ নৃগোষ্ঠী একো একোটাৰ সমাজ-সাংস্কৃতিক দিশটোকো সুন্দৰ ৰূপত প্ৰতিভাত কৰি তুলিছে।

সকলো সৃষ্টিৰ মূলতেই আছে লোক জীৱন। লোক সমাজত প্ৰচলিত ফঁকৰা-যোজনা, প্ৰবাদ-প্ৰৱচন, যঁতুৰা ঠাঁচ আদি একো একোটা জাতিৰ প্ৰাণ হোৱাৰ সমান্তৰালভাবে লোকভাষাৰো একোটা বিশেষ উপকৰণ। ভট্টাচাৰ্যক কবিতাতো লোকসমাজত প্ৰচলিত এই উপকৰণ সমূহৰ সংযোজনে কবিতাক অধিক আকৰ্ষণীয় আৰু জনমুখী কৰি তুলিছে ঃ

"এই টাঙনিৰ কলিজাবোৰত লাগিছে অচিন পঘা
কাল-ধিতিৰাজে বাওকণী পাৰে জীৱনৰ দুদমোৰ
ডলাৰ বগৰী ডলাতে বাগৰে নেমেলে নেমেলে যোৰ।"

(কাচনমতী, পৃ-২৬)

তদুপৰি ভট্টাচার্যৰ কবিতাত আমাৰ নিভাঁজ গাঁৱলীয়া যথাযথ প্ৰয়োগ দেখা যায়। যাৰ ফলশ্ৰুতিত ভট্টাচার্যৰ কবিতা সমূহে পাঠক সমাজৰ বাবে অত্যন্ত ঘৰুৱা তথা চিনাকী ৰূপত আত্ম প্ৰকাশ কৰিবলৈ সক্ষম হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। যেনে-

"কাহুদি খাৰলিৰে কণজহা চাউলৰ ভাতমুঠি মাৰে দিব পৰা নাই
মই চকুৰে সৰিয়হ ফুল দেখিছোঁ
সৰ্বশৰীৰ ৰাইজাই কৰিছে।" (এই ৰাতিখন, পৃঃ ৮)

আধুনিক কবিতাত প্ৰতীকে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান অধিকাৰ কৰি আছে। কবিতাত প্ৰতীকৰ ব্যৱহাৰে আক্ষৰিক তথা অভিধানিক অৰ্থক চেৰাই গৈ বিস্তৃত ভাৱৰ ব্যঞ্জনা আনি দিয়ে। ফলস্বৰূপে কবিৰ সৃষ্টিৰাজি অধিক কলাসন্মত তথা প্ৰাণবন্ত হৈ উঠা পৰিলক্ষিত হয়। ভট্টাচার্যৰ সৰহসংখ্যক কবিতাত প্ৰতীক ধৰ্মী ভাষাৰ প্ৰয়োগ সততে চকুত পৰে -

"বুকু পোহৰ কৰি আহ্ অ' উভতি আহ্
বালি ফালি উলিয়াওঁ হেৰোৱা নৈ
তয়ে ময়ে আকৌ এবাৰ সাগৰলৈ বুলি পাটীটো পাৰোঁ
আহ্ অ' ননি
আহ্। (ননি আছেনে ঘৰত, পৃঃ ১৫)

বিংশ শতিকাৰ শেষৰ ফালে ভুৱা বিপ্লৱৰ নামত জনগণৰ আত্ম প্ৰত্যয়ৰ ৰাজহাড় ভাঙি এচাম ক্ষমতালোভীয়ে যি নব্য নাটক আৰম্ভ কৰিছিল তাত যেন জাহ দিবলৈ বাধ্য হৈছিল সেই সময়ৰ এচাম উত্তৰ পুৰুষে। বৃদ্ধ পিতৃয়ে সকলো জানি শুনিয়ো যেন কেৱল হুমুনিয়া কাঢ়ি থাকিব লগা অৱস্থা হৈছিল সেয়ে সমাজ সচেতন কবি ভট্টাচার্যই এনে অস্থিৰতাৰ মাজতো 'বুকু পোহৰ কৰি', 'বালিফালি উলিয়াওঁ', 'সাগৰলৈ বুলি পাটীটো পাৰো', কবিতাংশৰ উল্লেখ কৰি প্ৰতীকী ভাষাৰে শুভ দিনৰ আগমন তথা প্ৰগতিৰ জয়গান ঘোষণা কৰিছে।

আন এঠাইত ---

"তাৰ আৰু লেম্প প'ষ্টটোৰ মাজত
ব্যৱধান জানো কিবা আছে?
সি জিয়া হ'লেও তাৰ দৰেই
নিষ্প্ৰাণ, নিষ্পন্দ, বৈচিত্ৰহীনতাৰ জীৱন।"
(লেম্পপ'ষ্ট, পৃঃ ২৭)

ইয়াত সমাজৰ কৰ্মঠ, শ্ৰমজীৱী শ্ৰেণীটো যে পদে পদে অৱহেলিত, অনাদৃত সেই কথাক বুজাবলৈ আভিজাত্যৰ প্ৰতিভূ স্বৰূপ লেম্পপ'ষ্টৰ সহায় লৈছে। লেম্পপ'ষ্টটোৱে চহৰখন উজলাই ৰাখে কিন্তু ইয়ো নিষ্পেষিত অনাদৃত।

নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষাৰ এটি বিশেষ দিশ হ'ল প্ৰতিকী ব্যঞ্জনা আৰু সুন্দৰ চিত্ৰধৰ্মী ভাষাৰে বৰ্ণনীয় বিষয়ক অভিনৱত্ব প্ৰদান কৰা। এনে ভাষাৰ জৰিয়তে জীৱন আৰু সমাজৰ একো একোটা জটিল ৰূপক অতি কৌশলেৰে উন্মোচন কৰা পৰিলক্ষিত হয়। যেনে-

"মহানগৰত ইমান পোহৰ, অথচ ইমান আন্ধাৰ
আছেন্যায়ালয়, তথাপিতো মৎস্যন্যায়ে খেলে অনায়াসে
ধৰ্মও অলেখ, তেও দেখো অধৰ্মৰ জুয়ে পোৰে ঘৰ
ইমান আনন্দ খেলা
তথাপি শোকৰ নিঃশব্দ শিখা কঁপি কঁপি জ্বলে।
দীঘল দীঘল নখ, ভয়ংকৰ দাঁতেৰে ধূলি আৰু ধোৱাৰ
মাজত অলিয়ে গলিয়ে ----।"
(অৰণ্য মহানগৰ হ'ল, পৃঃ ৫)

ওপৰোক্ত কবিতাফাঁকিত ভট্টাচার্যই এফালে মহানগৰৰ বাহ্যিক ৰূপটোক বাস্তৱসন্মত ভাবে অংকন কৰাৰ সমান্তৰাল ভাবে নগৰীয়া জীৱনৰ ফোঁপোলা স্বৰূপটোকো কলাসন্মত ভাবে উপস্থাপন কৰিছে।

ভট্টাচার্যৰ কবিতাত ব্যৱহৃত ভাষাৰ বৰ্ণ সমূহৰ বিন্যাস ৰীতিয়ো চমতৎকৃত। ছন্দ বন্ধনক বিশেষ মাত্ৰা দিবলৈ একে বাক্যৰ অন্তস্থানত পুনৰাবৃত্ত কৰি ভাষাৰ মাধুৰ্য্যগুণ বৃদ্ধি কৰিছে। যেনে-

"ধূপৰ গোন্ধবোৰ এটা গীত এটা কবিতা হৈছিল
মনৰ শইচবোৰ লহপহকৈ বাঢ়িছিল।
তেতিয়া কোনেও বাট হেৰুওৱা নাছিল
অথবা বাটেই সাপ হৈ কাকো দংশন কৰা নাছিল।"
(উত্তৰ পুৰুষলৈ, পৃঃ ১৫)

উপসংহাৰ ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনৰ আলোচনাৰ অন্তত আমি কিছুমান সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰো-

ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাত ব্যৱহাৰ কৰা ভাষা নিমজ আৰু সহজ সৰল। সহজ সৰল ভাষাক ভট্টাচার্যই দক্ষতাৰে কলাত্মক ৰূপ দিয়াত সফল হৈছে।

কবিতাৰ প্ৰসংগ তথা কথ্য বস্তু অনুসৰি ভাষা প্ৰয়োগৰ দক্ষতাই ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষাক অভিনবত্ব প্ৰদান কৰিছে।

ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাত লোক ভাষাৰ সুন্দৰ প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। যাৰ ফলত ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষাই জাতীয় চিন্তা চেতনাক জাগ্ৰত কৰা পৰিলক্ষিত হয়।

ভট্টাচার্যই তেওঁৰ কবিতাৰ ভাষাত সমাজ-সাংস্কৃতিক দিশটোক সুন্দৰভাবে উপস্থাপন কৰিব পৰা শব্দ চয়ন, জতুৱাঠাঁচ, প্ৰৱাদ-প্ৰৱচন, ফঁকৰা-যোজনা, পটন্তৰ ইত্যাদিৰ যথাযথ প্ৰয়োগ কৰিছে। ভট্টাচার্যৰ কবিতাৰ ভাষা সম্পৰ্কে কৰা অধ্যয়নে অসমৰ ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক, ৰাজনৈতিক ইত্যাদি দিশতো নতুন নতুন তথ্য তথা সমলৰ যোগান ধৰিব বুলি আশা কৰিব পাৰি। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য সমল ঃ

ডেকা, খনিন্দ্ৰ কুমাৰ (সম্পা) ঃ নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ নিৰ্বাচিত গদ্য, ভৱানী বুকছ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ, আগষ্ট, ২০১২।

ভট্টাচার্য, নলিনীধৰ ঃ আহত সপোন, চেতনা প্ৰকাশ, ৰাজগড়, প্ৰথম প্ৰকাশ ডিচেম্বৰ, ১৯৮৫।

---- ---- ---- ঃ কবিতা আৰু নেপথ্য, চেতনা প্ৰকাশ, ৰাজগড়, প্ৰথম প্ৰকাশ, ডিচেম্বৰ, ১৯৯৬।

---- ---- ---- ঃ কবিতাৰ কথা, চেতনা প্ৰকাশ, ৰাজগড়, প্ৰথম প্ৰকাশ জুন, ১৯৯৩।

---- ---- ---- ঃ চেৰাশালিৰ মালিতা, চেতনা প্ৰকাশ, ৰাজগড়, প্ৰথম প্ৰকাশ এপ্ৰিল, ১৯৮৩।

---- ---- ---- ঃ দিনবোৰ সলনি নহ'ল, অন্বেষা প্ৰকাশ, এম.ছি. ৰোড, বৰোৱাৰী, গুৱাহাটী, অক্টোৱৰ, ২০০৩।

---- ---- ---- ঃ বিদায় ফুলৰ দিন, শতাব্দী প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰথম প্ৰকাশ, ৪ ডিচেম্বৰ, ২০০১।

---- ---- ---- ঃ বেজবৰুৱা আৰু আধুনিকতাৰ ধাৰণা, আর্য বিদ্যাপীঠ মহাবিদ্যালয় শিক্ষকগোট, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১ মার্চ, ১৯৮৭।

শর্মা, বীৰেন্দ্ৰ নাৰায়ণ (সম্পা) ঃ নলিনীধৰ ভট্টাচার্যৰ শ্ৰেষ্ঠ সাহিত্য সমালোচনা, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ, জুন ২০১২।

গৌণ সমল ঃ

আহমেদ, কামাল উদ্দিন ঃ আধুনিক অসমীয়া কবিতা, বনলতা, গুৱাহাটী দ্বিতীয় প্ৰকাশ ২০১৫।

কোঁৰৰ, অপর্ণা ঃ ভাষা বিজ্ঞান উপক্ৰমণিকা, বনলতা ডিব্ৰুগড় প্ৰথম প্ৰকাশ ২০০২।

গোস্বামী, উপেন্দ্ৰ নাথ ঃ অসমীয়া ভাষাৰ উদ্ভৱ, সমৃদ্ধি আৰু বিকাশ, মণি মানিক প্ৰকাশ, গুৱাহাটী চতুর্থ সংস্কৰণ ২০১৪।

গোস্বামী, গোলক চন্দ্ৰ ঃ ধ্বনি বিজ্ঞানৰ ভূমিকা, বীণা প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, সংশোধিত চতুর্থ সংস্কৰণ ২০০৩।

বৰুৱা, লোপা ঃ আধুনিক অসমীয়া কবিতাত প্ৰতীক আৰু চিত্ৰকল্প, পূর্বাঞ্চল প্ৰকাশ, গুৱাহাটী-১, দ্বিতীয় প্ৰকাশ ২০১৩।

ভট্টাচার্য, পূর্ণ ঃ আধুনিক অসমীয়া কবিতা, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, টিহু, প্ৰথম প্ৰকাশ- ১৯৯৩।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

কৃষক বিদ্রোহ ঃ সমকালীন আলোচনী আৰু অন্যান্য প্রসংগ— এক বিশ্লেষণ

ৰাজেন দাস

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ডিব্রুগড়,
অসম, পিন ঃ ৭৮৬০০৪
৯১০১২২১৪৩৬
rajendas3687@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসম মুলুকত ব্রিটিছসকলে নিজৰ সাম্রাজ্য বিস্তাৰ কৰিবলৈ উঠিপৰি লাগিছিল। সেইক্ষেত্রত তেওঁলোকে প্রথমৰাস্থাৰ ধাৰণাৰ সলনি কৰিব বুলি অসমৰ জনতাই ভাব নাছিল। অৱশ্য মানৰ আক্রমণতকৈ তেওঁবিলাকে সকাহ দিয়া ধৰণৰ অৱস্থাক অদূৰদর্শিতাৰে আদৰি লৈছিল। অসমত বাণিজ্যিকভাৱে সফল হোৱাৰ বাট মোকলাই লৈছিল আৰু সফলো হৈছিল। যদিও সাধাৰণ কৃষকৰ পৰা নানান বিদ্রোহৰ বাবেও সাজু হৈ আছিল। ১৮২৬ চনত ইয়াণ্ডাবু সন্ধি সম্পন্ন হয় আৰু এই চুক্তিৰ চর্ত অনুসৰি অসমৰ শাসনভাৰ ব্রিটিছসকল অর্থাৎ অসমৰ শাসনভাৰ ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানীৰ হাতলৈ যায়। এই কার্যৰ লগে লগে আহোমসকলে অসমত শাসন কৰি অহা ছশবছৰীয়া ৰাজত্বকালৰ অৱসান ঘটিলে। ইয়াৰ পিছৰে পৰা অসমত ব্রিটিছসকলৰ ঔপনিৱেশিক শাসনৰো আৰম্ভণি ঘটে। এই ঔপনিৱেশিক শাসনে অসমৰ ৰাজনৈতিক ক্ষেত্রখনত বিশেষকৈ—"১৮২৬ খ্রীষ্টাব্দৰ পৰা প্রথম দহ বছৰ কাল অসমৰ ৰাজনৈতিক অৱস্থা আছিল অস্থিৰ। ১৮২৮ খ্রীষ্টাব্দত নামনি অসম স্থায়ীভাৱে বৃটিছ শাসনাধীন কৰা, ১৮১৮ আৰু ১৮৩০ খ্রীষ্টাব্দত পিয়লি ফুকন—গোমধৰ কোঁৱৰ—ধনঞ্জয় বৰগোহাঁইৰ নেতৃত্বত হোৱা বৃটিছৰ বিৰুদ্ধে সশস্ত্র বিদ্রোহ, ১৮৩৩ খ্রীষ্টাব্দত পুৰন্দৰ সিংহক উজনি অসমৰ কৰতলীয়া ৰজা হিচাপে দিয়া নিযুক্তি, ১৮৩৪ খ্রীষ্টাব্দত অসমৰ আয়ুক্ত হিচাপে জেনেৰেল জেনকিন্সৰ যোগদান, ১৮৩৮ খ্রীষ্টাব্দত পুৰন্দৰ সিংহক ৰজা ভাঙি উজনি অসমক স্থায়ীভাৱে বৃটিছৰ অধীনলৈ অনা কার্য আৰু ১৮৩৯ খ্রীষ্টাব্দত ৰৱসেনাপতিৰ ৰাজ্য বৃটিছ ৰাজ্যৰ অন্তর্ভূক্তি—এই ৰাজনৈতিক ঘটনাৱলীয়েই পিছৰ এশ বছৰৰ অসমৰ ভাগ্য নির্ণয় কৰি দিলে।" (উৎস-নগেন শইকীয়া, অৰুণোদয়ৰ পৰা জোনাকীলৈ, পৃ.৬) অসমৰ কৃষকসকলে প্রাপ্য অধিকাৰৰ বাবে প্রতিবাদ কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিছিল। অসমক কেইবাখনো জিলাত ইয়াৰ প্রভাৱ পৰিলক্ষিত হৈছিল। চৰকাৰৰ সৈতে কোনো আপোচ নকৰা সাধাৰণ কৃষকসকলে ৰাইজমেলৰ জৰিয়তে মিলিত হৈ চৰকাৰৰ বিৰুদ্ধে বিদ্রোহ ঘোষণা কৰি পৰৱর্তী প্রজন্মলৈ নিদর্শন দাঙি ধৰিছিল। এইখিনি প্রসংগতে উল্লেখ কৰিব পাৰি— "ঊনবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়ার্ধত নামনি অসমৰ ৰাজনৈতিক ইতিহাসৰ বহু পৃষ্ঠা নিঃসন্দেহে কৃষক বিদ্রোহসমূহে অধিকাৰ কৰি আছে। ১৮৫৭ চনৰ ব্যর্থতাৰ পিছত অসমত ৰাজনৈতিক নেতৃত্ব শূণ্য পৰিৱেশ এটা সৃষ্টি হোৱাত সর্বসাধাৰণৰ কৃষক ৰাইজে

ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে প্ৰতিবাদৰ ভাষা লৈ ওলাই আহিছিল। ঔপনিৱেশিক চৰকাৰৰ নতুন অৰ্থনৈতিক নীতিৰ ফলত জুৰুলা হোৱা কৃষকসকলে নামনি অসমৰ অবিভক্ত নগাঁও, দৰং আৰু কামৰূপ জিলাৰ কেবাঠাইতো মুকলি প্ৰতিবাদ কৰি, শাসন যন্ত্ৰৰ নিৰ্যাতনৰ সন্মুখীন হৈ সাহস আৰু আত্মত্যাগৰ মাজেদি পিছৰ প্ৰজন্মৰ বাবে মুক্তি সংগ্ৰামৰ পথ মুকলি কৰি থৈ গৈছিল।" (উৎস-কমলাকান্ত ডেকা (সম্পা.), ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ, শৰৎ হাজৰিকাৰ 'নগাঁও জিলাৰ কৃষক বিদ্রোহ', পৃ.১৬)

আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ আৰু সমকালীন কাকত-আলোচনী এই সম্পৰ্কে উপস্থাপন কৰা হৈছে। ইয়াত অধ্যয়নৰ সুবিধাৰ বাবে অৰুণোদই, জোনাকী, আসাম বন্ধু, মৌ আৰু ঊষা আদিৰ লগতে সমকালীন ভাৰতৰ দুই এখন আলোচনীক আলোচনাৰ প্ৰসংগত সহায় লোৱা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ অসম, বিদ্রোহ, কৃষক, সমকালীন কাকত-আলোচনী, ঊনবিংশ শতিকা, সামাজিক, ৰাজনৈতিক আদি।

০.০১. অধ্যয়নৰ পৰিসৰ আৰু পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনত ঐতিহাসিক বিশ্লেষণাত্মক আৰু ব্যাখ্যাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

০. ০ আৰম্ভণি ঃ

০.১ ঊনবিংশ শতিকাৰ কৃষক বিদ্রোহ আৰু সমকালীন কাকত-আলোচনী আৰু ভাৰতৰ অন্যান্য কাকত-আলোচনী কৃষক বিদ্রোহ ঃ

ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ চৰ্তৰ পিছতেই অসম ব্ৰিটিছৰ অধীন হ'ল। অসমত ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানীয়ে ১৮৩৯ চনৰ সময়ছোৱাত চাহখেতি কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে। চাহখেতি কৰি অৰ্থনীতিৰ মুনাফা অৰ্জন কৰা ব্ৰিটিছসকলৰ এটা কাৰণ আৰু আসাম কোম্পনীক অসমত চাহ-বাৰী পাতি চাহৰ কুঠি বহুৱাবলৈ আদেশ দিছিল আৰু ইয়াত পট্টাৰ কিছুমান চৰ্ত আছিল। ইয়াৰে এটা চৰ্ত এনেকুৱা আছিল যে 'কোম্পানীয়ে পট্টা পোৱা মাটিত আফু-খেতি কৰিব নোৱাৰিব।' (উৎস-বেণুধৰ শৰ্মা, মণিৰাম দেৱান,পৃ.১০৫) সম্পদ উৎপাদন আৰু উৎপাদনৰ প্ৰক্ৰিয়াৰ দিশটো বেহা-বেপাৰৰ সৈতে জড়িত হৈ থাকে। ৰাষ্ট্ৰ বা ৰজাঘৰৰ নীতি আৰু প্ৰৱৰ্তিত পদ্ধতি অনুসৰি নিয়ন্ত্ৰিত হয়। বৃটিছসকলে অসমৰ কৃষকসকলক অৰ্থনৈতিকভাৱে শোষণ কৰাৰ অন্তৰালত ৰাজনৈতিক ক্ষমতা আছিল। ব্ৰিটিছে অসম দখললৈ নিয়াৰ লগে লগে খেল-পাইক প্ৰথা আঁতৰিল। কৃষক বিদ্রোহ ব্ৰিটিছে আৰোপ কৰা বৰ্ধিত খাজনাৰ বিৰুদ্ধে ক্ষোভৰ বহিঃপ্ৰকাশ। ভাৰতৰ অন্যান্য অঞ্চলতো আলোড়নৰ সৃষ্টি কৰিছিল। ভাৰতৰ অন্যান্য আলোচনী, বাতৰি কাকতত কৃষক বিদ্রোহৰ ঘটনাই স্থান লাভ কৰিছিল। সেইসমূহৰ ভিতৰত—শিশিৰকুমাৰ ঘোষে প্ৰকাশ কৰা অমৃত বজাৰ পত্ৰিকা[The Amrit Bazar Patrika, 20 feb. 1868], দ্য ষ্টেটমেণ্ট [The Statesman, 1875, Robert Knight] আদি। ১৮৯২-৯৩- চনৰ সময়ত প্ৰকাশিত বংগবাসী, সহাচাৰ, সঞ্জিৱনী, হিতবাদী আদি বেংগলী বাতৰি কাকতত কৃষকসকলৰ আৰ্থিক দুৰৱস্থাৰ কথা প্ৰকাশপাইছিল। ইয়াৰ উপৰি Reis and Rayyet,1894, Sambhusaran Mukharji, দ্য ইণ্ডিয়ান নেশ্যন [The Indian Nation, 1931, Maharja Darbhanga, Maharja Sir Kameshwar Singh], দ্য হিন্দু পেট্ৰিইট [The Hindu Patriot,1895,5feb], দ্য ইণ্ডিয়ান নেশ্যন [The Indian Nation, 1894,21april] আদিত কৃষক বিদ্রোহ সম্পৰ্কীয় তথ্য প্ৰকাশ পাইছিল। অসমৰ অৰুণোদয় (১৮৪৬),আসাম-বন্ধু (১৮৮৫), মৌ (১৮৮৬) আদি আলোচনীত কৃষক বিদ্রোহৰ বিষয়ে সমৰ্থন পোৱা নাছিল। সেই সম্পৰ্কে জানিব পাৰি এইদৰে—'আশ্চৰ্যজনক কথা এইটোৱেই যে তৎকালীন অসমীয়া মধ্যশ্ৰেণীটোৱে ব্যক্তিগতভাৱেই হওক বা সমূহীয়াভাৱেই হওক এই বিদ্রোহবোৰত যোগ দিয়াতো দূৰৈৰ কথা আনকি সমৰ্থনো আগবঢ়োৱা নাছিল। বৰং অসমীয়া ক'লা চাহাবে তেনে বিদ্রোহক নিষ্ঠুৰভাৱে দমন-উৎপীড়ন কৰাত চৰকাৰক সহায়হে কৰিছিল। সেই সময়ৰ বৰপেটাৰ মহকুমাধিপতি মাধৱচন্দ্ৰ বৰদলৈয়ে বিদ্রোহী কৃষকক হালে হালে সাঙুৰি হাল টানিবলৈ দিছিল আৰু সাত্বিক পণ্ডিত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীয়ে বকো-ছয়গাঁও অঞ্চলত 'অসমীয়া কৃষকৰ ওপৰত কৰা অত্যাচাৰত নিখুঁটভাৱে পৌৰাহিত্য কৰিছিল।" (উৎস-শৈলেন বৰকটকী, অসমীয়া মধ্যশ্ৰেণী, প্ৰথম প্ৰকাশ, ৩১ অক্টোবৰ, ২০০০,পৃ.৪২) "১৮২৬ চনত স্বাধীনতা হেৰুৱাৰ আগলৈকে অসমৰ অৰ্থনীতি আছিল সম্পূৰ্ণ স্বতন্ত্ৰভাৱে প্ৰতিপালিত এক সহজ-সৰল প্ৰক্ৰিয়া। ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যাকাৰ বিস্তৃত এলেকা উমৈহতীয়া ৰাজনৈতিক শাসনৰ অধীনলৈ অনাৰ বাবে প্ৰচেষ্টা চলোৱা আহোমসকলেই অঞ্চলটোৰ অৰ্থনীতিকো এক সুসংহত ৰূপ দিছিল। কোনোধৰণৰ জটিলতালৈ নোযোৱাকৈ সহজ-সৰল উপায়েৰে সেউজ সমৃদ্ধিশালী অসমৰ প্ৰাকৃতিক সম্পদসমূহৰ সদ্ব্যৱহাৰ

নিশ্চিত কৰাটোৱেই আছিল আহোম অর্থনীতিৰ মূল বৈশিষ্ট্য।" (উৎস-পৰাগ কুমাৰ দাস, স্বাধীন অসমৰ অর্থনীতি, 'দুই' পৃ.২৭) ধর্মৰ লগতে আর্থ-সামাজিক আৰু খাজনা বৃদ্ধিৰ কাৰণে মোৱামৰীয়া বিদ্রোহ, ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্রোহ(লে.ছিংগাৰ), জয়ন্তীয়া কৃষক বিদ্রোহ (মেককেব), উত্তৰ কামৰূপ বা ৰঙিয়াৰ কৃষক বিদ্রোহ (মেকেবি) লচিমাৰ কৃষক বিদ্রোহ (মাধৰ চন্দ্র বৰদলৈ), পথৰুঘাটৰ কৃষক বিদ্রোহ (মিষ্টাৰ এণ্ডাৰছন) অসম ৰায়ত (ছাৰ উইলিয়াম ৰর্ড) আৰু জয়ন্তীয়া কৃষক বিদ্রোহ (নেতা-উকিয়াং নংবা) সংঘটিত হৈছিল। কৃষক বিদ্রোহসমূহ ভূমি নিৰিখ বৃদ্ধিৰ কাৰণে কানাড়া জিলাৰ কৃষক বিদ্রোহ (১৮৩০), খাজনা বৃদ্ধিৰ কাৰণত নীল বিদ্রোহ (১৮৬০), জমিদাৰৰ বিৰুদ্ধে পাবনাৰ কৃষক বিদ্রোহ (১৮৭২), ভূমি জৰীপ বৃদ্ধিৰ কাৰণত খাণ্ডেজ চার্ভে ৰায়তছ (১৮৭৫) আৰু টকা ধাৰে লোৱা মহাজনৰ বিৰুদ্ধে ডেক্কান ৰায়ত (১৮৭৫) আদি বিদ্রোহ সংঘটিত হোৱা দেখা যায়। "ছোটনাগৰপুৰ অঞ্চলৰ বিভিন্ন আদিবাসীসকলে খাজনা বৃদ্ধিৰ প্রতিবাদকল্পে ১৮৩১ চনতেই ঐক্যবদ্ধ বিক্ষোভৰ সূচনা কৰিছিল। ১৮৫৫-৫৬ চনত চাওতালীসকলে সিবু আৰু কানু নামৰ দুই ভ্রাতৃৰ নেতৃত্বত কৰা বিদ্রোহ, ১৮৭১ আৰু ১৮৮২ চনত খেৰওৱাৰ বিদ্রোহ, ১৮৭৭ চনত চর্দাৰী বিদ্রোহ, ১৮৯৫ চনত বিৰচা মুণ্ডাৰ নেতৃত্বৰ উলগুলান বিদ্রোহ, ১৮৫৯ চনত নীল বিদ্রোহ আদি কৃষক বিদ্রোহৰ মূল কাৰণ হ'ল অর্থনৈতিক।" (উৎস-কমলাকান্ত ডেকা (সম্পা.), ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ, 'অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ আৰু ৰাইজমেল', পৃ. ৬৩)

১.০ ০ সমকালীন কাকত-আলোচনী ঃ

ঊনবিংশ শতিকাৰ আলোচনীসমূহত কৃষক বিদ্রোহৰ প্রসংগই স্থান লাভ কৰিছিল। আলোচনীসমূহত লেখা লেখকৰ ৰচনাৰাজিত কৃষক বিদ্রোহে পাবলগীয়া সমর্থন লাভ কৰা নাছিল। কাৰণ এই কৃষক বিদ্রোহসমূহক গাঁৱৰ সাধাৰণ জনতাৰ মাজৰ পৰা নির্গত হোৱা প্রজাবিদ্রোহ বুলি এটি ধাৰণাই গঢ় লৈ উঠিছিল। চৰকাৰৰ কতৃপক্ষৰ তৰফৰ পৰা এনে বিদ্রোহ আন আন ঠাইলৈ বিয়পি যোৱাৰ ক্ষেত্রত বাধাৰ প্রাচীৰৰূপে থিয় দিছিল। "আশ্চর্যজনক কথা এইটোৱেই যে তৎকালীন অসমীয়া মধ্যশ্রেণীটোৱে ব্যক্তিগতভাৱেই হওক বা সমূহীয়াভাৱেই হওক এই বিদ্রাহবোৰত যোগ দিয়াতো দূৰৈৰ কথা আনকি সমর্থনো আগবঢ়োৱা নাছিল। ৰৰং অসমীয়া ক'লা চাহাবে তেনে বিদ্রোহক নিষ্ঠুৰভাৱে দমন-উৎপীড়ন কৰাত চৰকাৰক সহায়হে কৰিছিল। সেই সময়ৰ ৰৰপেটাৰ মহকুমাধিপতি মাধৱচন্দ্র ৰৰদলৈয়ে বিদ্রোহী কৃষকক হালে হালে সাঙুৰি হাল টানিবলৈ দিছিল আৰু সাত্বিক পণ্ডিত হেমচন্দ্র গোস্বামীয়ে বকো-ছয়গাঁও অঞ্চলত 'অসমীয়া কৃষকৰ ওপৰত কৰা অত্যাচাৰত নিখুঁটভাৱে পৌৰাহিত্য কৰিছিল।" (উৎস-শৈলেন ৰৰকটকী, অসমীয়া মধ্যশ্রেণী, প্রথম প্রকাশ, ৩১ অক্টোবৰ, ২০০০,পৃ.৪২)

২.০১ অসমৰ আলোচনীত কৃষক বিদ্রোহৰ প্রসংগ উপস্থাপন ঃ

কৃষকসকলে নিজৰ শ্রমদান কৰি কৃষিকার্য সম্পাদন কৰে। সেই সম্পাদনৰ ওপৰত বর্ধিত খাজনা বৃদ্ধিয়ে অসন্তুষ্টিৰ সৃষ্টি কৰিছিল। আৰু তাৰ বাবে তেওঁবিলাকে প্রতিবাদ কৰিছিল। ব্রিটিছ চৰকাৰৰ বর্ধিত খাজনাৰ বিৰুদ্ধে ভাৰতবর্ষৰ ভিতৰত অসমত পোনতে এনে বিদ্রোহৰ জুইকুৰা উমি উমি জ্বলিছিল। ব্রিটিছ ৰাজহ বৃদ্ধিৰ বাবে অসমত প্রথমবাৰৰ বাবে ১৮৬১ চনত কৃষক বিদ্রোহ হৈছিল। নগাঁও জিলাৰ ফুলগুৰিত পোনপ্রথমবাৰৰ বাবে এই কৃষক বিদ্রোহ সংঘটিত হৈছিল। এই বিদ্রোহৰ মূল কাৰণ অর্থনৈতিক। এই কৃষক বিদ্রোহত ফুলগুৰি অঞ্চলৰ অনুসূচিত জাতি, লালুং, কছাৰী আদিসকলৰ লগতে ৰায়তসকলৰ ভিতৰত লালুংসকলৰ ভূমিকা মন কৰিবলগীয়া। আফুখেতি চৰকাৰে বন্ধ কৰি দিয়াৰ বাবে ৰাইজমেলৰ জৰিয়তে কৃষকসকলে প্রতিবাদ জনাবলৈ উঠিপৰি লাগিছিল। ফুলগুৰি কৃষক বিদ্রোহৰ ঘটনাৰলীক ব্রিটিছ চৰকাৰে বিয়পি যাবলৈ বাধা প্রদান কৰিছিল। নগএগ ৰাইকে কৰা কানীয়া বিদ্রোহ বুলি প্রচাৰ কৰি সদৌ ৰাইজৰ পৰা আন্দোলনৰ গতিক উহ্য কৰিব বিচাৰিছিল যদিও সফলতা লাভ কৰা নাছিল। অৱশ্যে তেওঁলোকে বহু কৃষকক হত্যা, লাঞ্ছনা, গঞ্জনা, শোষিত, কলিয়াপানীত দিয়া, সশ্রম কাৰাদণ্ড দিয়া ইত্যাদি কার্য ক্ষীপ্রতাৰে সমাপন কৰিছিল। অসমৰ প্রথম বার্তালোচনী অৰুণোদয় কাককত সেই নগএগ লোক, সেই কৃষকৰ তথ্য ন.ল.ফ (নিধি নিবাই ফাৰৱেল) ছদ্মনামত প্রকাশিত হৈছিল এনেদৰে—

২.০১.১ অৰুণোদয় ঃ

ক) ন. ল. ফ-নগএগ দ্রোহী লোকৰ চৰিত্র বর্ণনা (উৎস-১৬ শ বছৰ, অৰুণোদই, নম্বৰ, ১১,১৮৭১)

অৰুণোদইত প্রকাশ পাইছিল এইদৰে—-"আমাৰ মানুহৰ উপকথাত যেনেকৈ কয় বোলে মৌপিয়া চটকে পর্বত নাই বুলি ঢোল যেন কণী পাৰে চুঙ্গাৰ বাদুলী।" লগতে (নিধি লিবাই ফাৰৱেল) তেওঁ (ন.ল.ফ) বিদ্রোহীসকলক কৈছিল যে ' মহৰ সিংগত কঁকীলা দাঁৰ মৰা মানুহ' বুলিও উপহাস

কৰিছে। (উৎস-স্মৃতিগ্ৰন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস, ২০১৭, পৃ.৪৮)

"ইংৰাজী ১৭৯৩ সনৰ পৰা ই দেশত আফিঙ্গ বা কানী লোকে ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে। এবং তাৰ কৃষিও সৰ্ব্বত্রে ব্যাপ্ত হ'ল। ইয়াক ব্যৱহাৰৰ পৰা দেশীয় লোক দুৰ্ব্বল আৰু অলস হই গ'ল। ইয়াৰ কৃষি নিবাৰণ কৰিলে তাৰ ব্যৱহাৰ হ্ৰাস হ'ব অথচ ৰাজস্বৰো বৃদ্ধি হ'ব এই ভাবি ১৮৬০ সনত কানীৰ ক্ষেতি নিষেধ কৰা হ'ল।" (উৎস-গুণাভিৰাম বৰুৱা, আসাম বুৰঞ্জী, 'ত্ৰয়োদশ অধ্যায়' পৃ.১৩৩)এই বিদ্রোহক আনকি সেই সময়ৰ কাকত "*অৰুনোদই* পত্রিকায়ো অনুসন্ধান পৰ্যন্ত নকৰাকৈয়ে বিদ্রোহীসকলক বিদ্রূপ কৰিছিল।" (উৎস-লক্ষ্মীনাথ তামুলী, ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্রামত অসমৰ অৱদান, 'কৃষক বিদ্রোহ ঃ ৰাজৰ বিৰুদ্ধে ৰাইজ',পৃ.৪৫) বিদ্রূপ কৰিছিল সেই কথা স্পষ্ট কৰিবলৈ আমি মাত্র এটি তথ্যৰ সন্ধান কৰিব লাগিব। য'ত অসমৰ মানুহে কানি সেৱন কৰাৰ তথ্য প্রকাশিত হৈছিল।

তালিকা নং—০১

গোৱালপাৰাত	৯।৭ সেৰ—	১৪৬৮৪	টকা
কামৰূপত	১৩০।৩ "—	১৯০১০৭	"
দৰঙ্গত	১৮৭।০ "—	২৫৮৭.০	"
	৪.		
নগাওঁত	২৩১। মোন—	৩১ ৫৭৯	"
	(আলোচনীখনত স্পষ্টকৈ দেখা নগ'ল)		
শিৱসাগৰত	৭৮।৫ । ছঃ	৪৯৯৮৪৩	"
লক্ষীমপুৰত	৩৯৮।২ সেৰ—	৫৮১৮৫৭	"
মোট	১৩৩০।৭ ছটাক—	৮৫৫৮০	

(উৎস- ঊষা,শ্রীসূর্যকুমাৰ ভূঞা, সম্পা., ১৯ জেঠ, ১৮৩০ শঁক, সোমবাৰ, 'কানিৰ অপকাৰিতা' কমলাকান্ত বৰদলৈ, পৃ.১৪৬)

২.০১.২ আসাম-বন্ধু ঃ

ৰাজনৈতিক আৰু অর্থনৈতিক,গুণাভিৰাম বৰুৱা, মোৱামৰীয়া বিদ্রোহ, ব্রিটিছ সু-শাসন আৰু সংবাদ এই সম্পর্কীয় দিশ পোহৰলৈ আনিছে—"এটি শিক্ষিত শ্রেণীটিয়ে সমকালীন ৰাজনৈতিক আৰু অর্থনৈতিক ঘটনা-প্রৱাহতকৈ অধিক গুৰুত্ব দিছিল অসমীয়া ভাষা, সাহিত্য আৰু জাতীয়তাৰ আত্মপৰিচয় প্রতিষ্ঠাৰ ওপৰত। সেইবাবে, এই সময়ৰ অসমীয়া মধ্যবিত্ত শিক্ষিতৰ মাজত কোনো প্রকাৰৰ সুকীয়া ৰাজনৈতিক দৃষ্টিভংগী গঢ় লৈ উঠা নাছিল; বৰং ব্রিটিছ বিৰুদ্ধে হোৱা "ৰাইজমেল" বা তেনে ধৰণৰ বিদ্রোহাত্মক কার্য সমর্থন কৰা নাছিল। আনকি গুণাভিৰাম বৰুৱাই মোৱামৰীয়া বিদ্রোহৰ বিৱৰণ দিওঁতেও ব্রিটিছে তেতিয়াই অসম অধিকাৰ কৰা হ'লে ভাল আছিল বুলি মন্তব্য কৰিছিল। হেমচন্দ্র বৰুৱায়ো মি.এগিউ চাহাবৰ প্রতি থকা তেওঁৰ সশ্রদ্ধ-প্রীতিৰ ভাৱ তেওঁৰ "আত্ম-জীৱন চৰিত" ত উল্লেখ কৰি গৈছে। গুণাভিৰাম বৰুৱায়ো ডেভিড স্কট আৰু জেনেৰেল জেনকিন্সৰ নাম শ্রদ্ধাৰে লৈছে। তদুপৰি, "ব্রিটিছ সু-শাসনৰ নিমিত্তে সকলো প্রকাৰে লোকৰ সুখ-সন্তোষ" হোৱা বুলি আৰু " এই দেশৰ অৱস্থা ক্রমে সকলো বিষয়তে উন্নত হ'বলৈ" ধৰা বুলি[৩১] বিশ্বাস কৰা গুণাভিৰামে ১৮৬০ খ্রীঃত কানিৰ খেতি নিষিদ্ধ কৰা আইন আৰু আয়কৰ বহুওৱা আইনৰ পক্ষে, আৰু মণিৰাম দেৱান-পিয়ালি বৰুৱাৰ বিদ্রোহৰ বিপক্ষেই প্রকাৰন্তৰে নিজৰ মত পোষণ কৰি গৈছে। আনকি, তেওঁ দেৱান আৰু বৰুৱাৰ নামো উল্লেখ নকৰি "দুজনৰ প্রাণদণ্ড" হোৱাৰ সংবাদহে বুৰঞ্জীত দি গৈছে।" (আসাম-বন্ধু, নগেন শইকীয়া, সম্পা.ভূমিকা দ্রষ্টব্য) ব্রিটিছৰ পক্ষত বহু অসমৰ ব্যক্তি হাতে হাত মিলাইছিল। সেইসমূহৰ ভিতৰত ...গুণাভিৰাম বৰুৱাই ১৮৬১ চনৰ ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্রোহীসকলে যথোচিত শাস্তি পোৱা বুলি ব্রিটিছৰ পক্ষাৱলম্বনহে কৰিছিল। গুণাভিৰাম বৰুৱাই ১৮৯৩-৯৪ চনত দৰঙৰ কৃষক বিদ্রোহীসকলে প্রকাশ কৰা প্রচাৰ পত্রিকা আৰু গোহাৰি পত্রবিলাক ব্রিটিছৰ বিষয়াৰ বোধগম্য হোৱাকৈ তর্জমা কৰি দিছিল।" (উৎস-স্মৃতিগ্ৰন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস, ২০১৭, পৃ.৪৮)

২.০১.৩ মৌ ঃ

ব্রিটিছ অসমৰ আর্থ-সামাজিক সমস্যা, ইংৰাজ শাসনে ঠাই দখল কৰিছিল। সেই সম্পর্কে পোৱা যায় এইদৰে—

"...বৰং ব্রিটিছ অসমৰ আর্থ-সামাজিক সমস্যাৰ কথাহে আলোচনা কৰিব বিচাৰিছিল। মধ্যশ্রেণীর্ভূক্ত আন আন বুদ্ধিজীৱীৰ দৰে সেয়েহে তেওঁ "মৌ"ৰ ও "ইংৰাজীক দেশৰ পৰা একে বেলিয়ে খেদিব নোখোজে। ভাৰতৰ মংগলৰ নিমিত্তে ভালে দিনলৈকে ইয়াত ইংৰাজ শাসন লাগতিয়াল" বুলি মত প্রকাশ কৰিছিল।" (উৎস-স্মৃতিগ্ৰন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস, ২০১৭, পৃ. ৪৮-৪৯)

২.০১.৪ জোনাকী ঃ

ব্রিটিছ গবর্ণমেণ্ট, তেওঁবিলাকৰ শাসনত বান্ধ খাই থকা কর্মচাৰীয়ে অন্যায় বিৰুদ্ধে ক'ত মাত মাতিব। সেই সময়ৰ অর্থাৎ ঊনবিংশ শতিকাৰ সময়ছোৱাৰ চৰকাৰী শাসনৰ তলত থকা ব্যক্তিসকলৰ মুক্ত কণ্ঠ ৰুদ্ধ কৰি ৰাখে—..তেন্তে আমি মুক্ত কণ্ঠে স্বীকাৰ কৰিবলগাত পৰো যে সদাশয় গবর্ণমেণ্টৰ তলত থাকি আমাৰ একোৰে অভাৱ নাই আৰু গবর্ণমেণ্টৰ গুৰিত অসন্তোষ প্রকাশ কৰিবলৈকো একো নাই।"

(স্মৃতিগ্রন্থ,পথৰুঘাট ঃ কৃষক স্বহীদ দিৱস, ২০১৭, পৃ.৪৯)

২.০১.৫ বিজুলী ঃ

গুণাভিৰাম বৰুৱা, ৰত্নেশ্বৰ মহন্তকে আদি কৰি সূর্যকুমাৰ ভূঞালৈকে নানাজনে এই বিদ্রোহৰ বিৱৰণ দি গৈছে।

সাম্রাজ্যবাদী ধ্যান-ধাৰণাত বন্দী এইসকলৰ দৃষ্টিকোণ আছিল ঘাইকৈ শাসকীয় দৃষ্টিকোণ। স্বভাৱতে শাসক শ্রেণীৰ গুণানুকীর্তন আৰু বিদ্রোহীসকলৰ প্রতি অৱমাননা তেওঁলোকৰ ৰচনাত প্রচ্ছন্ন। শাসকবর্গই সাধাৰণ প্রজাৰ ওপৰত চলোৱা শোষণ-নির্যাতন এওঁলোকে লঘু কৰি চাইছিল, শাসক-শাসিতৰ মাজ হোৱা শ্রেণী-সংঘর্ষৰ ওপৰত তেওঁলোকে দিয়া নাছিল কোনো ধৰণৰ গুৰুত্ব। মোৱামৰীয়া বিদ্রোহৰ এনে শাসকীয় ব্যাখ্যাত সেই সিদিনালৈ আচ্ছন্ন হৈ আছিল অসমৰ বিদ্বৎমণ্ডলী। এনে ব্যাখ্যাৰ পৰা মুক্ত হ'ব নোৱাৰি আনি নালাগে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ দৰে ব্যক্তিয়েও লিখিছিল, 'কেনেকৈ মৰাণে অসম ধ্বংসিলে' জাতীয় কবিতা।" (চন্দ্রপ্রসাদ শইকীয়া (সম্পাদক), গৰীয়সী,ষষ্ঠ বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা, ফে.১৯৯৯)

২.০১.৬. সোমপ্রকাশ ঃ

কৃষকসকলৰ মাজত অর্থনৈতিক শোষণ, অসন্তোষ আৰু উত্তেজনাই ৰাজনৈতিক দিশত সক্রিয় তথা সচেতন কৰি তোলে। কৃষকসকলে ব্রিটিছৰ প্রবল শক্তি উফৰাই দিয়াৰ প্রত্যহ্বান জনাই। তেওঁলোকে নিজা অধিকাৰৰ বিৰুদ্ধে স্বতন্ত্র প্রতিবাদ কৰি আহিছিল। কলিকতাৰ পৰা প্রকাশিত 'সোমপ্রকাশ'ত এই বিদ্রোহৰ ইতিবাচক পর্যালোচনা হৈছিল। আমাৰ আলোচনাত চমুকৈহে আলোচনা কৰাৰ প্রয়াস কৰা হৈছে।

৩.০০ অসমৰ মুষ্টিমেয় লোকৰ ধাৰণাত বিদ্রোহ চিন্তা-চর্চাঃ

ডিম্বেশ্বৰ নেওগ, দণ্ডিনাথ কলিতা, অমলেন্দু গুহ আদিয়ে এই বিদ্রোহক বিভিন্ন ধৰণে আখ্যায়িত কৰিছিল। ডিম্বেশ্বৰ নেওগে এই বিদ্রোহৰ ক্ষেত্রত কৈছে যে এই বিদ্রোহ 'জনসাধাৰণৰ বাবে আৰু জনসাধাৰণৰ দ্বাৰা কৰা প্রথম আর্থ-সামাজিক ৰাজনৈতিক আন্দোলন' (The First socio-poltical movement made for the people and by the people), দণ্ডিনাথ কলিতাই কৈছে যে এই বিদ্রোহ হৈছে জনপ্রিয় আন্দোলন'(Popular movement) আৰু 'বৈষ্ণৱবাদৰ পৰা মায়ামৰীয়া বিদ্রোহ'লৈ গ্রন্থত অমলেন্দু গুহদেৱে এই বিদ্রোহক মার্ক্সীয় দৃষ্টিভংগীৰে ব্যাখ্যা কৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছে।ফুলগুৰি বিদ্রোহৰ সময়ত নগএগ ৰাইজক মণিৰামে দেৱানে সহযোগিতা কৰিবলৈ নগএগ ৰাইজক উদ্বুদ্ধ কৰিছিল, তেওঁ কলিকতালৈ যাওঁতে কলঙেদি আহিছিল। আৰু তেওঁ ৰহাৰ ৰহিয়া বৰুৱাৰ সৈতে বিদ্রোহৰ আলোচনাত মিলিত হৈ কলিকতালৈ ৰাওনা হৈছিল। ....নামৰ 'ৰুৰঞ্জীত উল্লেখ আছে যে, ৰহাৰ ৰহিয়াল বৰুৱাৰ স'তে গোপনে কেইবাখনো মেল বহিছিল। এনে মেলবোৰত টোপাকুছি, সৰা, খাইগড়, বাৰপূজীয়া আৰু মিকিৰগাঁৱৰ পাঁচোৰজা আৰু মায়ং, কুমৈ, নেলী, বঘৰা, ঘগুৰা, তেতেলীয়া আৰু শুখনাগুৰীয়াৰ সাতোৰজাৰ উপৰিও চহৰী, উত্তৰখোলা আৰু গোভাৰ কটকী, জাগীয়াল গোহাঁই, কপিলী উপত্যাকাৰ লস্কৰসকল আৰু নগাঁৱৰ সকলো অংশৰ নেতৃস্থানীয় ডা-ডাঙৰীয়া আনকি মৌজাদাৰ সকলেও অংশগ্রহণ কৰি বিপ্লৱী সংগঠনৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছিল।" (উৎস-মিলেশ্বৰ পাটৰ, ইতিহাস চেতনা, 'কৃষক বিদ্রোহ-ফুলগুৰি ধেৰাঃ তিৰা ৰজাসকলৰ ঐতিহাসিক ভূমিকা' পৃ.১০-১১)

৪.০০ উচ্চ শিক্ষাক্ষেত্রত কৃষক বিদ্রোহৰ চিন্তা-চর্চা ঃ

"অসমত অস্থিৰ পৰিস্থিতিৰ বাবে অসমৰ লগত কোম্পানীৰ ব্যৱসায় ক্ষতিগ্রস্ত হৈছে।" (উৎস-ওম প্রকাশ গাট্টাণী, যোৰহাট প্রতিষ্ঠাৰ পৰা ভাৰতৰ স্বাধীনতালৈ (১৭৯৪-১৯৪৭),অসমীয়া অনুবাদ, শৈলেন গোস্বামী, প্রকাশন, গ্রন্থসংস্কৃতি, তৃতীয় সংস্কৰণ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৫, পৃ.৪৪) মণিৰাম দেৱানে এই চাহৰ ব্যৱসায় অসমত গঢ়ি তুলিছিল। পৰৱর্তী সময়ত মণিৰামে দেৱানে ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে বিদ্রোহ কৰা, পূর্বৰ আহোম শাসন আৰু সেই শাসনৰ উদ্ধাৰ বিৰুদ্ধে যুঁজ দিবলৈ গৈ ফাঁচিকাঠত উলমিব লগা হৈছিল। সেই সম্পর্কে বৌদ্ধিকভাৱে **ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ৰ বুৰঞ্জী বিভাগত গৱেষণাৰ দৰে বৌদ্ধিক আৰু উচ্চস্তৰীয়** চিন্তা-চর্চা হৈছে। —"Maniram started his carreer as a most loyal servant of the British extending his help to the government even to suppeess the early liberation movements organized by the members of the erstwhile nobility against the British regime. He expected progress and prosperity for his countryman under the 'benign' rule of the British.But that was something impossible under a colonial rule. No sooner Maniram realized this than defected from the Government and looked to the past, the erstwhile Ahom Government with its traditional rights and previleges.He brooded hopes of restoring this old Government and looked for supporters.Then came the Great Rebellion of 1857. In the wake of the Rebellion, he attempted to take up arms to

overthrow the British rule. But before his plan could be materialized, the secret was divulged. Man iram was arrested and thrown to the gallows along with his lietenant Piyali Barua in February 1858."(source-Ajit kumar Dutta, Maniram dewan and the contemporary Assamese Society, p.1)

ইউনিভাৰ্চিটি অব বেংগলৰ বুৰঞ্জী বিভাগত Peasant Unrest and Uprising in the Brahmputra Valley of Assam: A Case study of Erstwhile Kamrup, Darrang and Nowgong (1858-1894) শীৰ্ষক গৱেষণা কৰ্ম ২০১০ চনত ড° বিজয় কুমাৰ সৰকাৰৰ তত্ত্বাৱধনাত কমল চন্দ্ৰ পাঠকে সম্পন্ন কৰিছে। য'ত ভাৰতৰ কৃষক আন্দোলন, ব্ৰিটিছ শাসন, অসমৰ কৃষক বিদ্ৰোহত ইয়াৰ প্ৰভাৱ, অসমীয়া মধ্যবিত্ত শ্ৰেণী, এই শ্ৰেণীৰ সৈতে বিদ্ৰোহ, ইয়াত অংশগ্ৰহণ, ১৮৬১ চনৰ ফুলগুৰিৰ কৃষক বিদ্ৰোহ, ৰ ৮৯৩-৯৪ চনৰ কৃষক আন্দোলন, এই আন্দোলনসমূহ গঢ়ি তুলিবলৈ ৰাইজমেল, ইয়াত সকলো জাতি,ধৰ্ম, বৰ্ণৰ লোকৰ একত্ৰিকৰণ ইত্যাদি দিশ গ্ৰন্থখনত পোৱা যায়। উল্লিখিত ৰাইজমেল ব্ৰিটিছ চৰকাৰৰ বৰ্ধিত খাজনাৰ বাবে প্ৰতিবাদ কৰিবলৈ গাঁও পঞ্চায়তৰ দৰে গঢ়ি তোলা হৈছিল। সেই সময়ত ৰাইজমেলসমূহে কৃষকসকলক ব্ৰিটিছৰাজৰ শোষণ-শাসনৰ বিৰুদ্ধে যুঁজ দিবলৈ যথেষ্ট সহায় কৰিছিল। "Raij-mel was the highet and developed form of the Mel system. According to Maccabe, an English official, gaon-panchyat organized with the object of social issue developed gradually and took the name of Raij-mel later on. He describe the Raij-mel as an embodiment of collective strength of the people." (Source-Kamal chandra Pathak, Peasant Unrest and Uprising in the Brahmputra Valley of Assam: A Case study of Erstwhile Kamrup, Darrang and Nowgong (1858-1894, p.196)

ব্ৰিটিছসকলে খাজনা, ভাষা, শিক্ষা, মূল্য, গোচৰ, কুটীৰ শিল্প ইত্যাদি দিশত অসমৰ জনতাক এক চাপত ৰাখিছিল যাৰ ফলত অসমৰ মুষ্টিমেয় জনতাই প্ৰাপ্যৰ বাবে সংগ্ৰাম, অন্যায়ৰ বিৰুদ্ধে গৰজি উঠিবলৈ বাট হেৰুৱাই পেলাইছিল। এখন সম্ভাব্য আহোম শাসন ব্যৱস্থা আৰু ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থা আৰু মিলচ ৰিপৰ্টত তুলি ধৰা ৰাজহ বৃদ্ধিৰ দুখন তালিকা তলত উল্লেখ কৰা হ'ল—

তালিকা নং—০২

আহোম শাসন ব্যৱস্থা	ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থা
১. খাজনা দিয়া উপায় হিচাপে ধান, চাউল আৰু শস্য দিয়াৰ ব্যৱস্থা	১. চিকাৰূপ
২.অসমীয়া মানুহৰ জাত্যান্তৰ আৰু ধৰ্মান্তৰ হোৱাৰ ভয় দেখি ইংৰাজীৰ ভাষাৰ বিপক্ষে থিয় দিছিল।	২. ইংৰাজী শিক্ষাৰে শক্তিশালী শাসক দল গঠন
৩. অসমীয়া আৰু সংস্কৃত শিক্ষাত গুৰুত্ব আৰু গীতা-জ্যোতিষ-ব্যাকৰণৰ প্ৰচুৰ প্ৰচলন	৩. বাংলা ভাষা অফিচ,কাছাৰী, স্কুলত প্ৰচলন
৪. কুটীৰ শিল্প উৎকৰ্ষত গুৰুত্ব	৪. ইংলেণ্ডৰ পৰা কলৰ তৈয়াৰী বস্তু ভাপ জাহাজেৰে ভাৰতলৈ আমদানি,কলিকতা- গুৱাহাটী-অসমৰ বজাৰ দখল
৫. ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে থিয়	৫. ৰজা-ৰাণী, ডা-ডাঙৰীয়াৰ পৰা সা-সুবিধা কাঢ়ি নিয়ে
৬. ধান -চাউলৰ মূল্য ৰজাৰদিনত ভাৰসাম্য বৃদ্ধি	৬. ইংৰাজৰ দিনত মূল্য
৭. গোচৰৰ বিচাৰৰ সময় সীমা পযেক	৭. দীঘলীয়া, জুলুমদায়ক, নানা মেৰপেচ

নামনি অসমৰ কামৰূপ, দৰং আৰু নগাঁও জিলা আৰু উজনি অসমৰ শিৱসাগৰ আৰু লক্ষীমপুৰ জিলাৰ ৰাজহৰ এখন তুলনামূলক তালিকা প্ৰস্তুত কৰা হ'ল—

তালিকা নং- ০৩

Kamroop	2,52,9913	6	1/2	2,95,998	3	9	
Durrung	1,35,453	8	0	1,57,795	6	8	
Nowgong, ...	1,10,314	6	2	1,28,873	12	5	
Seebsagur	80,843	2	11	1,14,463	4	2	
Luokimpoor, ...	34,729	14	9	46,553	8	2	
Total,...	6,14,882	34	1/2	7,43,689	3	3	

[A.J.Moffatt Mill's Report on the Province of Assam, p5]

৫.০০ উপসংহাৰ ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনৰ পৰা কিছুমান সিদ্ধান্ত উপনীত হ'ব পাৰি। সেইসমূহ—

ক) কৃষক বিদ্ৰোহসমূহে সফলতা লাভ কৰিব পৰা নাছিল কাৰণ চৰকাৰী পক্ষই সেয়া দমন কৰিছিল যদিও বিদ্ৰোহৰ জুই উমি উমি জ্বলি আছিল সেইসমূহ কিন্তু চৌদিশে প্ৰচাৰ হোৱা নাছিল।

খ) বিদ্ৰোহকালীন সময়ছোৱাত আলোচনীসমূহেও বা-বাতৰি পৰিৱেশন বা প্ৰচাৰৰ দিশত সদ্দিচ্ছা দেখুওৱা নাছিল কাৰণ চৰকাৰী পক্ষৰ হস্তক্ষেপ আৰু নিজস্ব স্বৰূপ প্ৰকাশৰ ভয়-ভীত দিশটো সংপৃক্ত আছিল।

গ) তালিকা নং—০১, ০২,০৩ **ত** স্পষ্টকৈ দেখা যায় যে কৃষকসকলে পান কৰা কানিৰ পৰিমাণ বৃদ্ধি আৰু আহোম শাসন ব্যৱস্থা আৰু ব্ৰিটিছ শাসন ব্যৱস্থাৰ এখন সম্ভাব্য দিশ অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে। তালিকাখনত সন্নিবিষ্ট দিশসমূহ আৰু কামৰূপ, দৰং, নগাঁও, শিৱসাগৰ আৰু লখিমপুৰ জিলাত

ৰাজহ বৃদ্ধি , শাসন-শোষণ দিশ জড়িত হৈ আছে, সেয়ে আমি ভাবিবলৈ থল পাওঁ যে ব্রিটিছ চৰকাৰে তেওঁলোকৰ শাসনৰ স্বৰূপ স্পষ্ট হোৱাৰ অৱকাশ দিয়া নাছিল। সেইকাৰণে কাকত-আলোচনীসমূহতো সেই সমকালীন কৃষক বিদ্রোহৰ বাতৰিসমূহ পৰিৱেশন হৈছিল যদিও সদ্দিচ্ছাৰ অভাৱ পৰিলক্ষিত হৈছিল। একে সময়ত কৃষকসকলক এলেহুৱা অকামিলা কৰি বাণিজ্যিক দিশৰ মুনাফাত গুৰুত্ব প্রদান কৰিছিল আৰু আনফালেদি তেওঁবিলাকে অসম মুলুকৰ চৰকাৰী চাকৰিয়াল তথা শিক্ষিত মুষ্টিমেয়সকলৰ হাত-মুখ বান্ধি ৰাখিছিল। অদূৰ ভৱিষ্যতে কৃষক বিদ্রোহকালীন সময়ৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক প্রভাৱ পেলোৱা দিশখিনি বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰি চোৱাৰ প্রয়োজন আছে। এইসমূহ অনুদ্ধাৰিত তথ্য গোটাই কৃষক বিদ্রোহ ইয়াৰ সূদূৰ প্রসাৰী প্রভাৱ, প্রসাৰৰ পৰা কি কি কাৰকে ক্রিয়া কৰিছিল আৰু ইয়াৰ অন্তৰালত কি কি দিশ সংযুক্ত হৈ থাকিব পাৰে সেইসমূহ অধ্যয়নৰ থল আমাৰ চমু আলোচনাত নিশ্চয়কৈ ৰৈ গৈছে বুলিব পাৰি। সেইসমূহ বিচাৰ-বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে অসমৰ ইতিহাসৰ নতুন নতুন তথ্য পোহৰলৈ আহিব পাৰি এই দিশ বিস্তৃত তথা গভীৰকৈ গৱেষণামূলক দৃষ্টিৰে সেয়েহে অধ্যয়ন কৰিব পাৰি। ❑

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ

ওম প্রকাশ গাট্টাণী, যোৱহাট প্রতিষ্ঠাৰ পৰা ভাৰতৰ স্বাধীনতালৈ (১৭৯৪-১৯৪৭), অসমীয়া অনুবাদ, শৈলেন গোস্বামী, প্রকাশন, গ্রন্থসংস্কৃতি, তৃতীয় সংস্কৰণ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৫

মহেশ্বৰ নেওগ, অৰুনোদই ১৮৪৬-১৮৫৪, সংকলিত আৰু পু.সম্পা , অসম প্রকাশন পৰিষদ, ডিচেম্বৰ, ২০০৩

ডম্বৰুধৰ নাথ ,অসম বুৰঞ্জী, 'আহে ম ৰাজ্যৰ অৱনতি আৰু পতন মোৱামৰীয়া বিদ্রোহ আৰু মানৰ আক্রমণ (১৭৬৯-১৮২৬), বিদ্যা ভৱন,পৰিবর্ত্তিত আৰু পৰিবর্ধিত সংস্কৰণ, ২০১৮ চন।

পৰাগ কুমাৰ দাস, স্বাধীন অসমৰ অর্থনীতি, আলিবাট সংস্কৰণ, নৱেম্বৰ, ২০১৮ চন।

বৰকটকী শৈলেন অসমীয়া মধ্যশ্রেণী, প্রথম প্রকাশ, ৩১ অক্টোবৰ, ২০০০

কমলাকান্ত ডেকা (সম্পা.), ঊনবিংশ শতিকাৰ অসমৰ কৃষক বিদ্রোহ, নান্দনিক সাহিত্য চ'ৰা, প্রথম প্রকাশ, ফেব্রুৱাৰী, ২০০৮ চন।

মিলেশ্বৰ পাটৰ, ইতিহাস চেতনা, প্রথম প্রকাশ, ডিচেম্বৰ, ২০২২ চন।

সহায়ক আলোচনী ঃ

ঊষা, শ্রীসূর্যকুমাৰ ভূঞা, সম্পা., ১৯ জেঠ, ১৮৩০ শঁক।

চন্দ্রপ্রসাদ শইকীয়া (সম্পাদক), গৰীয়সী,ষষ্ঠ বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা, ফে.১৯৯৯ ।

সহায়ক গৱেষণা গ্রন্থ ঃ

Ajit kumar Dutta, Maniram dewan and the contemporary Assamese Society, Published by Anupoma Dutta,Sun Printers, Jorhat, Augusta,1990.

Kamal chandra Pathak, Peasant Unrest and Uprising in the Brahmputra Valley of Assam: A Case study of Erstwhile Kamrup, Darrang and Nowgong.,20.07.2010.

সহায়ক প্রতিবেদন ঃ

A.J.Moffatt Mills, Report on the Province of Assam,Publication Board of Assam, second edition, april,1984.

সাংকেতিক চিহ্ন ঃ

সম্পা.	ঃ	**সম্পাদনা**
পৃ.	ঃ	**পৃষ্ঠা**
খ্রীঃ	ঃ	**খীষ্টাব্দ**
পুন.সম্পা.	ঃ	**পুনসম্পাদিত**
ফে.	ঃ	**ফেব্রুৱাৰী**
ন.ল.ফ	ঃ	**নিধি লিৱাই ফাৰৱেল**

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'সম্রাজ্ঞী' চুটি গল্পত প্ৰকাশ পোৱা অৰ্থনৈতিক চেতনা ঃ এটি অৱলোকন

মঞ্জুলা কলিতা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৮৮৭৬৮৬৩৯১৬
manjulakalita0@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

সাম্প্ৰতিক কালত সামাজিক বাস্তৱতাৰ ভিত্তিত চুটি গল্প লিখা গল্পকাৰ সকলৰ ভিতৰত অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতা অন্যতম। বাস্তৱবাদী মন আৰু সামাজিক পৰিৱৰ্তনৰ প্ৰতি সচেতন আৰু দায়বদ্ধ গল্পকাৰ অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ গল্পত সামাজিক চেতনা, ৰাজনৈতিক চেতনা, অৰ্থনৈতিক চেতনা আদি বিষয় প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়। গল্পকাৰ গৰাকীৰ গল্পত অৰ্থনৈতিক চেতনা বিশেষকৈ বিশ্বায়ন আৰু পুঁজিবাদৰ আগ্ৰাসনে সাম্প্ৰতিক সময়ত অসমীয়া সমাজ জীৱনত সৃষ্টি কৰা অস্থিৰতাৰ চিত্ৰ বাস্তৱসম্মত ৰূপত প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়। এই নিৱন্ধটিত গল্পকাৰ অৰূপা পটংগীয়া কলিতাৰ অৰ্থনৈতিক চেতনা প্ৰকাশ পোৱা গল্পসমূহৰ ভিতৰত উল্লেখযোগ্য গল্প 'সম্রাজ্ঞী'ক আলোচনাৰ বাবে নিৰ্বাচন কৰি লোৱা হৈছে। উক্ত গল্পটিৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পোৱা বিশ্ব পুঁজিবাদৰ আগ্ৰাসনে সাম্প্ৰতিক সময়ৰ সমাজত জীৱনত পেলোৱা প্ৰভাৰ সম্পৰ্কে আলোচনাটিৰ জৰিয়তে সম্যক আভাস দিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

সূচক শব্দ ঃ চুটিগল্প, অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতা, অৰ্থনৈতিক চেতনা, পুঁজিবাদ, ভোগবাদ, নিসংগতা।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

চুটিগল্প আধুনিক যুগত সৃষ্টি হোৱা কথা সাহিত্য। জোনাকী যুগত জন্ম লাভ কৰা অসমীয়া চুটিগল্পই আৱাহন যুগ আৰু ৰামধেনু যুগৰ মাজেৰে আহি উত্তৰ ৰামধেনু যুগ আৰু শেহতীয়াকৈ সাম্প্ৰতিক যুগত পৰিপূৰ্ণতা লাভ কৰিছে। উত্তৰ ৰামধেনু যুগত অসমীয়া গল্প সাহিত্যলৈ বৰঙণি আগবঢ়োৱা গল্পকাৰ সকলৰ ভিতৰত অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতা অন্যতম। নিজস্ব কথন শৈলীৰে ৰচনা কৰা অৰূপা পটংগীয়া কলিতাৰ গল্প সংকলন কেইখন ক্ৰমে- 'মৰুযাত্ৰা আৰু অন্যান্য'(১৯৯২), 'মৰুভূমিত মেনকা আৰু অন্যান্য'(১৯৯৫), 'দেওপাহাৰৰ ভগ্নস্তূপত'(১৯৯৯), 'পাছ চোতালৰ কথকতা'(২০০০), 'মিলেনিয়ামৰ সপোন'(২০০২), 'আলেকজান বানুৰ জান'(২০০৫), 'কুৰোশ্বোৱাৰ সপোন, মোৰ সপোন, সিহঁতৰ সপোন'(২০০৭), 'সোণালী ঈগলে কণী পাৰিলে বেলিয়ে উমণি দিলে'(২০১০), 'মৰিয়ম আষ্টিন অথবা হীৰা বৰুৱা'(২০১২), 'জলতৰংগৰ সুৰ'(২০১৬), 'পানী গাভিনি আছিল আৰু অন্যান্য'(২০১৯), 'মোৱাধৰা পথাৰৰ মাণিকী-মধুৰি'(২০২৩)। তদুপৰি দৈনিক অসম, দৈনিক জনমভূমি, সাময়িক সাম্প্ৰতিক, মনিদীপ, প্ৰান্তিক, প্ৰকাশ, গৰিয়সী, আদি বিভিন্ন কাকত আলোচনীত তেওঁৰ ভালেমান গল্প প্ৰকাশ পাইছে।

উত্তৰ ৰামধেনু যুগৰ এগৰাকী সমাজ সচেতন গল্পকাৰ অৰূপা পটংগীয়া কলিতা। পটঙ্গীয়া কলিতাই বিংশ শতিকাৰ পৰা ন ন আদৰ্শ আগত ৰাখি সময় সাপেক্ষ আৰু বাস্তৱ সন্মত ভাৱে প্ৰায় দুশৰো অধিক গল্প ৰচনা কৰি পাঠক সমাজৰ পৰা সমাদৰ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। তেওঁৰ বৃহৎ ৰচনাৰাজিক এটি মাথোঁ লেখাৰ মাজত সামৰি আলোচনা কৰা কঠিনেই নহয় দুঃসাধ্যও। সেয়েহে আমাৰ এই আলোচনাত গল্পকাৰ গৰাকীৰ গল্পত অৰ্থনৈতিক চেতনা প্ৰকাশ পোৱা 'মৰুযাত্ৰা আৰু অন্যান্য' গল্প সংকলনৰ অন্তৰ্গত এটি উল্লেখযোগ্য গল্প 'সম্ৰাজ্ঞী'ৰ বিশেষ উল্লিখনসহ আমাৰ আলোচনাত অন্তৰ্ভুক্ত কৰি সূক্ষ্ম আলোচনা আগবঢ়াবলৈ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

০.০১ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

আমাৰ আলোচনাটি আগবঢ়াই নিয়াৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ লগতে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

১.০০ বিষয় প্ৰৱেশ ঃ

সময়ৰ পৰিৱৰ্তনে সমাজৰ পৰিৱৰ্তন আনে। পৰিৱৰ্তিত সমাজত মানুহৰ জীৱন-চৰ্যাৰ সলনি হয়। ইয়াৰ ফলস্বৰূপে মানুহৰ নৈতিক প্ৰমূল্যবোধৰ অৱক্ষয় ঘটা দেখা যায়। সত্তৰৰ দশকৰ শেষাৰ্ধৰ পৰা গল্প ৰচনা কৰা গল্পকাৰ অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাই তেওঁৰ গল্পত আন আন দিশৰ লগতে সমসাময়িক সময়ত সমাজৰ অৰ্থনৈতিক ক্ষেত্ৰত পৰা বিশ্বায়নৰ প্ৰভাৱ, পুঁজিবাদৰ আগ্ৰাসন, ভোগবাদী মানসিকতাৰ বিষময় ফলে মানুহৰ জীৱনলৈ আনি দিয়া চৰম হতাশা, প্ৰজন্মৰ ব্যৱধান, নিসংগতা, একাকীকত্ব ইত্যাদি দিশসমূহ সামৰি লৈছে। এনে বিষয়বস্তুকলৈ লিখা এতি অন্যতম গল্প 'সম্ৰাজ্ঞী'। তলত গল্পটিত প্ৰকাশ পোৱা অৰ্থনৈতিক চেতনা সম্পৰ্কে বহলাই আলোচনা কৰা হ'ল।

২.০০ অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'সম্ৰাজ্ঞী' গল্পত প্ৰকাশ পোৱা অৰ্থনৈতিক চেতনা ঃ

অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'মৰুযাত্ৰা আৰু অন্যান্য' গল্প সংকলনৰ অন্তৰ্গত এটি অন্যতম গল্প 'সম্ৰাজ্ঞী'। গল্পটোত এফালে ভোগবাদী মানসিকতা আৰু আনফালে ক্ৰমাৎ নিঃসংগ হৈ পৰা মানুহৰ জীৱন চিত্ৰ উপস্থাপন কৰা হৈছে। টকাৰ বলত বলীয়ান হৈ নৈতিক আদৰ্শ পাহৰি পেলোৱা এচাম মানুহৰ জীৱন চিত্ৰ গল্পটোৰ নায়ক আনন্দ চলিহাৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে। আনন্দ চলিহাৰ আছে অজস্ৰ সা-সম্পত্তি, পত্নী, পুত্ৰ-জীয়ৰী, চাকৰ-বাকৰে আগুৰি থকা এটা প্ৰাসাদোপম অট্টালিকা। যেন এটি ৰাজমহল। সেই ৰাজমহলত তেঁওৰ পত্নী বৰুণা চলিহা যেন এগৰাকী সম্ৰাজ্ঞী। দুহাত মেলি ধন ঘটা স্বামী, দুজনকৈ পুত্ৰ , জী-জোঁৱাই, চাকৰ-বাকৰেৰে পৰিপূৰ্ণ হৈ থকাৰ পিছতো বৰুণা চলিহাই গোঁসাই ঘৰত সুমাই অকলে নীৰৰে চকুলো টুকে। বৰুণা চলিহাই সোণৰ সঁজাত বন্দী হোৱা চৰাইৰ দৰে প্ৰতিবাদৰ ভাষা হেৰুৱাই পেলাইছে। যেতিয়া আনন্দ চলিহাক খৰ্কইভাৰ জনে অচেতন অৱস্থাত ঘৰলৈ আনিছিল, চলিহাৰ বুকুত আন কাৰোবাৰ ফোঁটৰ চিন, ডিঙিত সেমেকি যোৱা লিপষ্টিকৰ দাগ দেখিও তেওঁ প্ৰতিবাদ কৰিব পৰা নাছিল। তেওঁ প্ৰতিবাদ কৰিব পৰা নাছিল সৰু পুত্ৰ ৰূপমৰ ৰুমৰ বিচনাত উবুৰি খাই পৰি থকা কিতাপখনৰ উলঙ্গ ছোৱালীৰ ছবি দেখি। ধনৰ বলত বলীয়ান হৈ স্বামীয়ে মাংৰাক পিষ্টল দেখুৱাই ঘৰৰ পৰা খেদি পঠিওৱাৰ সময়তো একো ক'ব পৰা নাছিল। আনকি তথাকথিত অভিজাত্যৰ খাতিৰত বৰপুত্ৰ অনুপমক আনন্দ চলিহাৰ মতাদৰ্শৰ বিপৰীতে যোৱাৰ বাবে বন্দুক দেখুৱাই ঘৰৰ পৰা উলিয়াই পঠিওৱাৰ সময়তো তেওঁ স্বামীক বাধা দিব পৰা নাছিল।

আনন্দ চলিহাৰ দেহত ভোগবাদী লালসাই সিঁচি দিয়া ঘৃণনীয় বেমাৰ আৰু তাৰ চিকিৎসাৰ বাবে পূৰ্বতে আনন্দ চলিহাৰ টকাৰে পঢ়া বৰ্তমানৰ জোৱায়েক ৰঞ্জনে পৃথিৱীৰ সমস্ত কাম বাদ দি তেওঁক চিকিৎসা কৰি আহিছে। শহুৰেকৰ টকাৰে পঢ়া-শুনা কৰা, গাঁৱলীয়া ৰঞ্জনক পত্নী ৰূমাই সদায় নিজৰ তলত ৰাখে। যেনেদৰে আনন্দ চলিহাই তেওঁৰ তলত ৰাখে তেওঁৰ হৈ কাম কৰা মাংৰা, যদুৰাম, বাহাদুৰহঁতৰ দৰে খাটিখোৱা মানুহখিনিক। নহ'লে হঠাতে যেন চাবুক চলিব আৰু চাবুক ডাল তেজেৰে ৰাঙলী হৈ পৰিব।

বৰুণা চলিহাই ধনী-মানী উদ্যোগী ভোগবাদী স্বামীৰ লালসা আৰু সকলো বিকৃত আচৰণ নীৰৰে সহ্য কৰি গৈছিল কেৱল পৰিয়ালৰ সন্মান আৰু সন্তানৰ কল্যাণৰ খাতিৰত। কিন্তু একমাত্ৰ নীতি আদৰ্শত চলা বৰপুত্ৰৰ বাহিৰে বাকী দুজন যেতিয়া দেউতাকৰ আদৰ্শতে ভোগবাদী-বস্তুবাদী হৈ পৰিল, তেতিয়া বৰুণা চলিহা একেবাৰে নীৰৱ হৈ পৰিল।

গল্পটোত গল্পকাৰে আনন্দ চলিহাৰ আৰু মাংৰাহঁতৰ মাজেৰে শোষক-শোষিতৰ আৰু শ্ৰেণী বৈষম্যৰ চিত্ৰখন সুন্দৰ ৰূপত অংকণ কৰিছে। শোষক গোষ্ঠীয়ে ক্ষমতাৰ বলত বলীয়ান হৈ নিম্নবিত্ত মানুহখিনিক নিজ ইচ্ছা অনুযায়ী ব্যৱহাৰ কৰে আৰু শোষিত শ্ৰেণীটোৱে মালিকৰ অত্যাচাৰ-অৱমাননা সহ্য কৰি একমাত্ৰ নিজৰ সংসাৰখন আৰু পেটটো পুহিবৰ বাবে উচ্চবিত্ত মানুহৰখিনিৰ যি হুজুৰি কৰিবলগীয়াত পৰে।

কিন্তু মাজে সময়ে এই মানুহখিনিয়েও প্রতিবাদৰ ভাষা বিচাৰে। গল্পটোত কিছুক্ষেত্ৰত সেই প্রতিবাদৰ সুৰ মাংৰাৰ যোগেৰে দেখা পোৱা গৈছে।

আনন্দ চলিহাই এদিন মাংৰাক পিষ্টল দেখুৱাই ঘৰৰ পৰা বাহিৰ কৰি দিছিল। তাৰ দুদিন পিছতে হাতত অস্ত্ৰ লৈ মাংৰাৰ লগত এজাক মানুহ আনন্দ চলিহাৰ ঘৰৰ সন্মুখত আহি উপস্থিত হৈছিল। আগদিনা ৰাতি ভোগ-লালসাত মচগুল হৈ থকা আনন্দ চলিহাই মানুহ জাকৰ হুলস্থূল শুনি থৰক বৰককৈ তললৈ নামি আহিব চেষ্টা কৰিছিল। ব্লাডপ্রেছাৰ থকা মানুহজনে মানুহ জাক অহাৰ উত্তেজনাত কঁপি কঁপি তল নৌপাওঁতেই মূৰ ঘূৰাই ঢলি পৰিল। দ্বিতীয় বাৰলৈ ষ্ট্ৰক হোৱা মানুহজনৰ পৰি আঁঠুৰ ঘিলা ওলাই গ'ল। সকলোৰে মাজত হুৱা-দুৱা লাগি। সৰুপুত্ৰ ৰূপমে ডাক্তৰ আনিলে। ডাক্তৰে চলিহাক বেজী দি বেণ্ডেজ বান্ধি দিলে।

সুখ-ভোগৰ সময়ত মানুহে মত্ত হৈ থাকি নিজক পাহৰি আপোনজনক পাহৰি থাকে যদিও দুখ-যন্ত্ৰণাৰ সময়ত মানুহে আপোনজনৰ সান্নিধ্য বিচাৰে। গল্পটোত আনন্দ চলিহাৰ ক্ষেত্ৰতো তাকে দেখুৱাইছে। গল্পটো আছে ----

"ডাক্তৰ দুজনে বেজী দুটামান দি একাষৰীয়াকৈ কিবা আলোচনা কৰিছে। 'ব-ৰু-ণা' --- সেহাই সেহাই আনন্দ চলিহাই হঠাৎ বৰুণা চলিহাক মাত দিলে। 'আপুনি শুই থাককচোন' --- বৰুণা চলিহা আৰু কাষ চাপি গ'ল। কিবা এক অপূৰ্ব তৃপ্তিত বৰুণা চলিহাৰ মুখখন উজ্জ্বল হৈ উঠিল। কিমান দিনৰ মূৰত তেওঁ স্বামীৰ মাত এষাৰ পাইছে। যন্ত্ৰনাত কেকাঁই থকা স্বামীৰ মুখখনে বৰুণা চলিহাৰ মনত এক কৰুণা আৰু মৰমেৰে ভৰাই তুলিলে। কিমানদিন তেওঁ কাকো এনেদৰে মৰম কৰিব পৰা নাই । লাহে লাহে তেওঁ আনন্দ চলিহাক বিচনীখনেৰে বিচিবলৈ ধৰিলে।" (পটংগীয়া কলিতা, মৰুযাত্ৰা আৰু অন্যান্য পৃ.৭৯)

স্বামীৰ পৰা যিমান এলাগী হ'লেও, যন্ত্ৰণা পালেও পত্নী হিচাপে বৰুণা চলিহাই আনন্দ চলিহাৰ পৰা পোৱা এষাৰি মাততে ইমান দিনৰ সকলো দুখ-যন্ত্ৰণা পাহৰি গৈছে। তেওঁৰ অন্তৰত চলিহাৰ প্রতি পত্নী সুলভ স্নেহ জাগি উঠিছে। মানুহজনৰ যন্ত্ৰনাত কৰুণ হোৱা মুখখন দেখি বৰুণা চলিহাৰো চকু সেমেকি গৈছে। কিন্তু পিছ মুহূৰ্ততে আনন্দ চলিহাৰ কঁকালত বান্ধি থোৱা স্প্রিং টুকুৰা দেখি আনন্দ চলিহাই আনৰ ওপৰত কৰা অত্যাচাৰৰ কথা মনত পৰি বৰুণা চলিহা ব্যথিত হৈ পৰিছে। সমাজৰ চকুত স্বামী-স্ত্রীৰ সম্পৰ্কৰ মাজত বান্ধ খাই থকাৰ পিছতো দুয়োৰে মানসিক স্থিতি এটা মুদ্রাৰ ইপিঠি সিপিঠি। এগৰাকীয়ে টকা-পইচা, সা-সম্পত্তি, ভোগ-লালসাত মত্ত হৈ ৰঙীণ পৃথিৱীখনৰ ৰজা হৈ থাকে। আনগৰাকীয়ে অনিচ্ছা স্বত্তেও স্বামীৰ অপকার্য সহ্য কৰি নিজৰ সমস্ত সত্ত্বা ত্যাগ কৰি সমাজৰ চকুত আদর্শ পত্নী হৈ বুকুত শিল বান্ধি নিশ্চুপ হৈ থাকে।

অৰূপা পটংগীয়া কলিতাই 'সম্রাজ্ঞী' গল্পটোৰ জৰিয়তে একেটা প্রজন্মৰ আনন্দ চলিহা আৰু বৰুণা চলিহাৰ সন্তানসকলৰ মাজত থকা দুটা ভিন্ন মতাদর্শৰ প্রতিফলন দেখুৱাইছে। একে মাক-বাপেকৰ সন্তান হৈ বৰপুত্ৰ অনুপমে পিতৃৰ মতাদর্শক গ্রহণ নকৰি সাধাৰণ ভাৱে জীৱন-নির্বাহ কৰিছে। অতবোৰ সা-সম্পত্তিৰ মালিক পিতৃয়ে ঘৰৰ পৰা উলিয়াই পঠিয়াই পংগু মানসিকতাৰ পৰিচয় দিয়াৰ সময়ত অনুপমে মাক বৰুণা চলিহাৰ দৰে কোনো প্রতিবাদ কৰা নাছিল।

যেতিয়া পিতৃক হাস্পতাললৈ লৈ যোৱা হৈছিল পিতৃৰ খবৰ ল'বলৈ, এক কথাত ক'বলৈ গ'লে বিশেষভাৱে মাতৃৰ খবৰ ল'বলৈ ঘৰলৈ গৈছিল। ইমান দিন ঘৰৰ পৰা দূৰত থকা অনুপমে মাকৰ পুৰণি কাঁহটোৰ কথা পাহৰি যোৱা নাছিল। সমস্ত সা-সুবিধা, সা-সম্পত্তিৰ মাজত থাকিও যে মাক অকলশৰীয়া, নিসংগ তাক অনুপমে মর্মৰে উপলদ্ধি কৰে। ভোগবাদী-বস্তুবাদী পিতৃৰ প্রতাৰণাৰ বলি হোৱা মাকৰ মানসিক অৱস্থা মাকৰ ওচৰত নাথাকিলেও অনুপমে বুজে। সেয়েহে যেতিয়া ভনীয়েকে অনুপম ঘৰলৈ অহাৰ পিছত মাকে উচুপি উঠাৰ বাৰে অনুপমক জগৰীয়া বুলি ভাবি প্রশ্ন কৰিছিল তেতিয়া অনুপমে কৈছিল-

'মায়ে কন্দাটো একো নতুন কথা নহয়।' (পটংগীয়া কলিতা,পৃ.৮২)

বাক্যশাৰীৰ জৰিয়তে গল্পকাৰে অনুপম আৰু মাকৰ মাজত থকা আন্তৰিক বন্ধোনৰ কথাকে বুজাইছে। আনহাতে অনুপমৰ সম্পূর্ণ বিপৰীত চলিহাৰ একমাত্ৰ জীয়ৰী ৰূপা আৰু সৰু পুত্ৰ ৰূপমে পিতৃৰ আদর্শৰে আদর্শনীত্ব হৈ ভোগবাদী-বস্তুবাদী হৈ পৰিছিল। গল্পকাৰে সেই কথাৰ উমান দিয়ে বৰুণা চলিহাই ৰাতিপুৱা সৰু পুতেক ৰূপমৰ ৰুমত দেখা দৃশ্যৰ জৰিয়তে। ৰূপমৰ ৰুমত প্রায় জোৰকৈ সোমাই যোৱা মাতৃ বৰুণা চলিহাই পুত্ৰৰ বিচনাত দেখা উলঙ্গ ছোৱালীৰ ছবি, টেবুলত প্রায় খালি হৈ পৰি থকা বটল, আগদিনা পিন্ধা চার্টত লাগি থকা সস্তীয়া চেণ্টাৰ গোন্ধ, কলাৰৰ ওচৰত লাগি থকা চুলি আদিৰ পৰা পুতেকো যে বাপেক আনন্দ চলিহাৰ দৰে ভোগ-লালসাত বন্দী হৈছে তাক বুজিবলৈ বাকী নাথাকিল।

আনহাতে তেওঁলোকৰ একমাত্ৰ জীয়ৰী ৰূপাই নিজ স্বামী ডাঃ ৰঞ্জন বৰাক কৰা ব্যৱহাৰে তাইও যে দেউতাকৰ স্বভাৱেৰে

প্রভাৱান্বিত হৈছে গল্পকাৰে তাক দর্শাইছে। গল্পটোত বৰুণা চলিহাই দেউতাকৰ খবৰ লবলৈ অকলে অহা জীয়েকক প্রশ্ন কৰিছে —

'ৰঞ্জন ক'ত ?' —' গাঁৱৰ ঘৰলৈ গৈছে।'-

তুমি নগ'লা ?' — অর্থহীন প্রশ্ন। আনন্দ চলিহাৰ একমাত্র জীয়ৰী ৰূপাই স্বামীৰ গাঁৱৰ ঘৰত ভৰি নিদিয়ে। আনন্দ চলিহাৰ টকাৰে পঢ়া মাজ গাওঁ এল. পি. পণ্ডিতৰ ল'ৰা ডাঃ ৰঞ্জন বৰাই ৰূমাৰ আগত মূৰ তুলি কথা ক'ব নোৱাৰে। (পটঙ্গীয়া কলিতা, পৃ. ৮০)

গল্পটোত গল্পকাৰে ৰূপাৰ জৰিয়তে পুঁজিবাদ-ভোগীবাদী মানসিকতাই মানুহৰ নৈতিক প্রমূল্যবোধক ধ্বংস কৰাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। ৰূপা এফালে এগৰাকী নাৰী, আনফালে বৰুণা চলিহাৰ জীয়ৰী। কিন্তু নাৰী হিচাপে অথবা জীয়ৰী হিচাপেও তাই মাকৰ মানসিক স্থিতি সম্পর্কে অৱগত নহয়। সকলো থকাৰ পিছতো মাক যে নিসংগ, একাকী তাৰ উমান জীয়েকে পোৱা নাই বা ল'বলৈ চেষ্টাও কৰা নাই। বৰুণা চলিহাক প্রশ্ন কৰি থকা অর্দ্ধ উলঙ্গ জীয়ৰীক চাই থাকিব নোৱাৰি যেতিয়া তেওঁ তলমূৰ কৰি বহিছিল, তেতিয়া ৰূমাই ডাঃ চলিহাৰ সৈতে পতা কথোপকথন পৰা ৰূমা আৰু মাতৃ মাজত থকা আত্মিক ব্যৱধান সম্পর্কে জানিব পৰা যায়--

ৰূমা- ' মায়ে বৰ দুখ পাইছে।'

বৰ স্বাভাৱিক।' ডাঃ চলিহাৰ মাত

'দেউতাই মাক বৰ মৰম কৰে। জানে, এবাৰ আমাৰ ঘৰ সাজোঁতে আম এজোপা কটা যাওঁতে মায়ে দুঃখ কৰাত এখন পুৰা আমৰ বাগান দেউতাই মাৰ নামত পাতি দিছিল।' (পটঙ্গীয়া কলিতা, পৃ.৮০)

ইয়াৰ জৰিয়তে ৰূমা যে এজনী আন্তৰিক মৰম ভালপোৱাৰ মূল্য নজনা ভোগবাদী-বস্তুবাদী মানসিকতাৰ ছোৱালী তাক স্পষ্ট ভাবে বুজা যায়।

কিমানখিনি মানসিক অশান্তি পালে মানুহ এজনীয়ে আপোন এজনক শাৰীৰিক ভাৱে বিকৃত হোৱাটো বিচাৰে? জীৱনটো আনৰ বাবে উচর্গা কৰি সময়ত কিমানখিনি হতাশা আৰু নিৰাশা হ'লে মানুহে নিজৰ স্বাধীনতা বাবে বিদ্রোহ ঘোষণা কৰে? গল্পটো শেষত ৰূমাৰ মুখত আনন্দ চলিহাৰ অপাৰেশ্যনত ভৰিখন কটা যোৱাৰ খবৰটো শুনি বৰুণা চালিহাইয়ো যেন বিদ্রোহ কৰিছে। বিদ্রোহহ্লু ভোগবাদী মানসিকতাৰ বিৰুদ্ধে, বিদ্রোহহ্লু ইমান দিনে স্বামীয়ে কৰা অৱহেলা-অৱজ্ঞাৰ বিৰুদ্ধে। গল্পটোত আছে-

"নির্লিপ্ত বৰুণা চলিহাই নিজকে কোৱাদি হঠাৎ কৈ উঠিল, "মানুহটো খোৱা হ'লে মোৰ জীৱনলৈ তেওঁ শান্তি আহিব।" (পটঙ্গীয়া কলিতা, পৃ . ৮৩)

স্বার্থলোভী পুত্র-জীয়ৰীক দেউতাকৰ ভৰি কাটিবলগীয়া খবৰটোৱে উদ্বিগ্ন কৰিলেও বৰুণা চলিহাই স্বস্তিবোধ কৰিছে। 'এই স্বস্তিবোধ প্রসংগটোৰ জৰিয়তে প্রকাৰন্তৰে লেখকে চৰিত্রটোৰ অবদমিত ব্যক্তিত্বই এক নীৰৱ বিদ্রোহক সমর্থন কৰিছে।' (বৰা, অপূর্ব। সম্পা.। অসমীয়া চুটিগল্প ঃ ঐতিহ্য আৰু বিৱর্তন, পৃ.৪৮১)

৩.০০ সামৰণি ঃ

অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ গল্প সমাজবীক্ষামূলক। সমাজ সচেতক গল্পকাৰ হিচাপে পটংগীয়া কলিতাই গল্পটিত পুৰুষতান্ত্রিক সমাজ আৰু অৱহেলিত অবদমিত নাৰী সমাজৰ চিত্র সুন্দৰ ৰূপত ফুটাই তুলিছে। বিশ্বায়নৰ প্রভাৱে গ্রাস কৰা সমাজত একাংশই পুঁজিবাদী ভোগীবাদী মানসিকতাৰ দ্বাৰা পৰিচালিতহৈ কেনেদৰে আপোনজনক প্রতাৰিত কৰিছে তাক গল্পটোৰ মাজেৰে মর্মস্পর্শী ভাৱে বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। ভোগবাদী সমাজ ব্যৱস্থাৰ ফলত ক্রমাৎ নিসংগ হৈ পৰা মানুহৰ মানসিক দ্বন্দ্ব গল্পটোৰ অন্যতম প্রধান বৈশিষ্ট্য। এইদৰে বিশ্লেষণ কৰিলে ক'ব পাৰি যে 'সম্রাজ্ঞী' গল্পটি অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ নিঃসন্দেহ এটি সার্থক গল্প। ❑

গ্রন্থপঞ্জী

মুখসমল ঃ

পটঙ্গীয়া কলিতা, অৰূপা। মৰুযাত্রা আৰু অন্যান্য। লয়ার্ছ বুক ষ্টল, ১৯৯২, গুৱাহাটী মুদ্রিত।

গৌণসমল ঃ

গগৈ, অম্বেশ্বৰ। সম্পা.। চুটিগল্পৰ বিচাৰ। গুৱাহাটী ঃ চন্দ্র প্রকাশ, ২০০৯ মুদ্রিত

ঠাকুৰ, পংকজ। সম্পা.। শতাব্দীৰ পোহৰত অসমীয়া চুটিগল্প। নতুন দিল্লী ঃ সাহিত্য অকাডেমি, ১৯৯৭। মুদ্রিত।

ঠাকুৰ, প্রাপ্তি। প্রসংগ অসমীয়া চুটিগল্প। গুৱাহাটী পূর্বাঞ্চল প্রকাশ, ২০১৭। মুদ্রিত।

বৰা, অপূর্ব। সম্পা.। অসমীয়া চুটিগল্প ঃ ঐতিহ্য আৰু বিৱর্তন। যোৰহাট ঃ যোৰহাট কেন্দ্রীয় মহাবিদ্যালয় প্রকাশন কোষ, ২০১২ মুদ্রিত।

বৰা, দীপজ্যোতি আৰু বৰা, চিক্‌মি। সম্পা.। অসমীয়া চুটিগল্প উত্তৰণ নতুন অধ্যয়। গুৱাহাটী ঃ বনলতা। ২০২৪ মুদ্রিত।

বৰুৱা, প্রমোদ কুমাৰ। অসমীয়া চুটি গল্প অধ্যয়ন। ডিব্রুগড় ঃ বনলতা, ২০০৮ মুদ্রিত।

স্পষ্টিকৰণ ঃ

উক্ত প্রবন্ধটি মোৰ সম্পূর্ণ মৌলিক লেখা। লেখাটি পূর্বতে ক'তো প্রকাশ হোৱা নাই।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্ব

দুধনৈ ৰাজহ চক্ৰ অঞ্চলৰ বিশেষ উল্লেখেৰে অসমৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ ওপৰত কৰা এক অধ্যয়ন

কপিল কলিতা
গৱেষক
ইন্দিৰা মিৰি শিক্ষা অধ্যয়ন সত্ৰ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী, অসম
পিন -৭৮১০২২
৯৭০৬৮৭৮৪০৫
kapil.kalita89@gmail.com

ড° প্ৰণৱ শইকীয়া
সঞ্চালক (ভাৰপ্ৰাপ্ত) সহযোগী অধ্যাপক
ইন্দিৰা মিৰি শিক্ষা অধ্যয়ন সত্ৰ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী, অসম
pranabsaikia@kkhsou.in

সাৰাংশ ঃ

দুধনৈ ৰাজহ চক্ৰ এলেকাৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বিজ্ঞান বিষয়ত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ মাজৰ সম্পৰ্ক পৰীক্ষা কৰাৰ উদ্দেশ্যে এই অধ্যয়ন কৰা হৈছে। অধ্যয়নটোৱে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাই তেওঁলোকৰ শৈক্ষিক কৃতিত্বক কেনেদৰে প্ৰভাৱিত কৰে সেই বিষয়ে পৰীক্ষা কৰে, আৰু এই সম্পৰ্কত প্ৰভাৱ পেলাব পৰা কাৰকসমূহৰো অনুসন্ধান কৰিব চেষ্টা কৰে। এই অধ্যয়নত বৰ্ণাত্মক-সম্বন্ধ গৱেষণা ডিজাইন ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। অধ্যয়নটোত প্ৰামাণিক পৰীক্ষা আৰু শৈক্ষিক অভিলেখকে ধৰি পৰিমাণগত পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। অধ্যয়নৰ নমুনা হিচাপে দুধনৈ ৰাজহ চক্ৰ এলেকাৰ বিভিন্ন চৰকাৰী উচ্চ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ১০০ গৰাকী দশম শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰী লোৱা হৈছে। বিদ্যালয় নিৰ্বাচনৰ বাবে গৱেষকে যাদৃচ্ছিক নমুনা সংগ্ৰহ কৌশল ব্যৱহাৰ কৰিছে। কে.কে. আগৰৱাল, আৰ.এছ. অৰোৰাৰ দ্বাৰা নিৰ্মিত প্ৰশ্নাৱলী, তথ্য সংগ্ৰহ কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। বিজ্ঞানৰ শৈক্ষিক কৃতিত্বই শিক্ষাৰ্থীৰ দক্ষতা বৃদ্ধি কৰে আৰু তেওঁলোকক নিজৰ চৌপাশৰ জগতখন জুখিব আৰু ব্যাখ্যা কৰা ক্ষমতাৰে সজ্জিত কৰে। অধ্যয়নটোৰ প্ৰধান তথ্য অনুসৰি ছাত্ৰৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা ছাত্ৰীতকৈ বেছি। আকৌ ছোৱালীৰ তুলনাত ল'ৰাৰ বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্ব অধিক হোৱা দেখা যায়। আকৌ বিজ্ঞান বিষয়ত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ মাজত প্ৰায় নগণ্য সম্পৰ্ক আছে।

প্ৰাধান্যমূলক শব্দ ঃ

বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা, শৈক্ষিক কৃতিত্ব, বিজ্ঞান, উচ্চ মাধ্যমিক বিদ্যালয় ইত্যাদি।

প্ৰস্তাৱনা ঃ

এই একবিংশ শতিকাটো বিজ্ঞান, প্ৰযুক্তি, লগতে উদ্ভাৱনৰ যুগ। গতিকে এই যুগত ছাত্ৰ-ছাত্ৰী সফল হ'বলৈ হ'লে বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তিৰ জ্ঞান আৰু দক্ষতা অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ। বিজ্ঞান শিক্ষাৰ জৰিয়তে এজন শিক্ষাৰ্থীয়ে যিবোৰ গুণ আহৰণ কৰে, সেইবোৰ সমাজৰ এজন নাগৰিকৰ বাবে অত্যন্ত মূল্যৱান আৰু আৱশ্যকীয়। পাঠদান-শিক্ষণ প্ৰক্ৰিয়াত বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তিৰ গুৰুত্ব আমি অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰো। প্ৰযুক্তিগত সঁজুলি ব্যৱহাৰ কৰিলে পাঠদান আৰু শিক্ষণ অধিক ফলপ্ৰসূ হয় (কৌজাৰ আৰু মজিদ, ২০২১)।

ছাত্র-ছাত্রীৰ মাজত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ প্ৰয়োজন, যিয়ে বিজ্ঞান শিক্ষাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্ব হৈছে আন্তঃসংলগ্ন উপাদান যিয়ে শৈক্ষিক পৰিৱেশ গঢ় দিয়া আৰু বৌদ্ধিক বৃদ্ধিৰ পোষকতা কৰাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাই ব্যক্তিৰ বৈজ্ঞানিক ধাৰণা, পদ্ধতি আৰু প্ৰত্যাহ্বানসমূহ বুজি পোৱা, বিশ্লেষণ কৰা আৰু ইয়াৰ সৈতে জড়িত হোৱাৰ অন্তর্নিহিত ক্ষমতাক বুজায়। ইয়াক ব্যক্তিৰ, জন্মগত বা আয়ত্ব কৰা সামৰ্থ্য বা বৈজ্ঞানিক ক্ষেত্ৰত কিবা এটা কৰাৰ ক্ষমতা বুলিও সংজ্ঞায়িত কৰিব পাৰি। এইদৰে বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা হৈছে এটা নিৰ্দিষ্ট স্তৰত এটা নিৰ্দিষ্ট ধৰণৰ কাম কৰিবলৈ দক্ষতাৰ এটা উপাদান। ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বৈজ্ঞানিক ক্ষমতা প্ৰকাশ পোৱাৰ লগে লগে শৈক্ষিক কৃতিত্ব বহুত সহজ হৈ পৰে, আৰু শেষত শৈক্ষিক কৃতিত্ব নিশ্চিত হয়। এইদৰে এই যোগ্যতাই এক ভেটিৰ স্তম্ভ হিচাপে কাম কৰে যাৰ ওপৰত শৈক্ষিক কৃতিত্ব গঢ় লৈ উঠে। (নটৰাজ, পি.এন. আৰু মঞ্জুলা, জি. ২০১২) ৰ দৰে বিস্তাৰিত গৱেষণাৰ ফলাফলত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ মাজত ইতিবাচক সম্পৰ্ক আছে বুলি কৈছিল। বিজ্ঞান শিক্ষণে কিছুমান বৈজ্ঞানিক পদ্ধতি প্ৰদান কৰাৰ লগতে বিভিন্ন পৰ্যায়ত শিক্ষাৰ্থীসকলৰ মাজত বৈজ্ঞানিক মনোভাৱ গঢ়ি তোলাতো সহায় কৰে। এজন ব্যক্তিৰ যোগ্যতা হ'ল তেওঁৰ কোনো কাম অধিক ফলপ্ৰশূভাৱে সম্পন্ন কৰাৰ অনন্য ক্ষমতা।

বৰ্তমানৰ এইটো অধ্যয়নৰ লক্ষ্য হৈছে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাই বিজ্ঞানত তেওঁলোকৰ শৈক্ষিক প্ৰদৰ্শনত কিমান প্ৰভাৱ পেলায় সেইটো নিৰ্ণয় কৰা। বৈজ্ঞানিক সফলতা আৰু যোগ্যতাৰ ওপৰত অসংখ্য অধ্যয়ন কৰা হৈছে। ২০১৯ চনত ইয়ালো গাও (পি.এইচ.ডি. স্কোলাৰ) অধ্যাপক ই হেংছিঙৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষক কৃতিত্বৰ ওপৰত জনজাতীয় ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ ওপৰত কৰা এক অধ্যয়নত প্ৰকাশ পাইছে যে দ্বাদশ শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ গড় শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আছে। ইয়াৰ উপৰিও মন কৰিবলগীয়া যে বিজ্ঞানত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ সামগ্ৰিক শৈক্ষিক সফলতা আৰু দ্বাদশ শ্ৰেণীত তেওঁলোকৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজত এক উষ্ণ অনুকূল সম্পৰ্ক আছে।

শ্বাবিৰ আহমদ আৰু ইছফাক মজিদে (২০২২) অৰ্থনৈতিকভাৱে বঞ্চিত মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বিজ্ঞানৰ কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন চলাইছিল। তেওঁলোকে এই অধ্যয়ন জম্মু-কাশ্মীৰৰ অনন্তনাগ জিলাত কৰিছিল। এই তথ্যই দেখুৱাইছে যে মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৈজ্ঞানিক ক্ষমতাৰ স্তৰৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি বিজ্ঞান শাখাত কৃতিত্বৰ ভিন্নতা থাকে। কিন্তু ল'ৰাৰ মাজত বিভিন্ন স্তৰৰ বৈজ্ঞানিক দক্ষতা থকা ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে তেওঁলোকৰ বিজ্ঞানৰ কৃতিত্বৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষ পাৰ্থক্য দেখুৱাব নোৱাৰে। আকৌ ছোৱালীৰ ক্ষেত্ৰত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ বিভিন্ন স্তৰৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বিজ্ঞানত তেওঁলোকৰ কৃতিত্বৰ পাৰ্থক্য থাকে। আৰু শেষত এই গৱেষণাত প্ৰকাশ কৰিছে যে ল'ৰাৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাতকৈ ছোৱালীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা বেছি আছিল।

যদিও মাধ্যমিক পৰ্যায়ত বহু অধ্যয়ন কৰা হৈছে, তথাপিও উচ্চ মাধ্যমিক আৰু উচ্চতৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ত শৈক্ষিক কৃতিত্বক প্ৰভাৱিত কৰা বিভিন্ন কাৰকসমূহ পৰীক্ষা কৰাটো অতি প্ৰয়োজনীয়।

সমস্যাৰ বিবৃত্তি ঃ

"বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্ব ঃ দুধনৈ ৰাজহ চক্ৰ অঞ্চলৰ বিশেষ উল্লেখেৰে অসমৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ ওপৰত কৰা এক অধ্যয়ন।"

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্যসমূহ তলত দিয়া ধৰণে উল্লেখ কৰা হৈছে ঃ

(১) লিংগৰ ভিত্তিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ তুলনা কৰা।

(২) লিংগৰ ভিত্তিত বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ তুলনা কৰা।

(৩) মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বিজ্ঞান বিষয়ত শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজৰ

সম্পৰ্ক বিচাৰি উলিওৱা।

অধ্যয়নৰ অনুমান ঃ

(১) লিংগৰ ভিত্তিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ কোনো তাৎপৰ্য নাই।

(২) লিংগৰ ভিত্তিত বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ কোনো তাৎপৰ্য নাই।

(৩) মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজত বিজ্ঞান বিষয়ত শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ

মাজত কোনো তাৎপৰ্যপূৰ্ণ সম্পৰ্ক নাই।

ব্যৱহৃত কাৰ্য্যকৰী শব্দসমূহ ঃ

(১) বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা ঃ ই দশম শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-

ছাত্রীৰ SATB মেনুৱেল নম্বৰ উল্লেখ কৰা হৈছে।

(২) বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্ব ঃ কৃতিত্ব শব্দটোৱে দশম শ্রেণীৰ চূড়ান্ত পৰীক্ষাত বিজ্ঞান বিষয়ৰ নম্বৰক বুজায়।

(৩) মাধ্যমিক ছাত্র-ছাত্রী ঃ অসমৰ দুখনৈ অঞ্চলৰ মাধ্যমিক পর্যায়ৰ অন্তর্গত ছাত্র-ছাত্রী।

অধ্যয়নৰ সীমা নির্ধাৰণ ঃ

বর্তমানৰ অধ্যয়নৰ সীমাবদ্ধতাসমূহ আছিল তলত দিয়া ধৰণৰ।

(১) বর্তমানৰ অধ্যয়ন দুখনৈ চক্র এলেকাৰ দশম শ্রেণীৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ মাজত সীমাবদ্ধ।

(২) বর্তমানৰ অধ্যয়ন কেৱল ছেবাৰ (SàßBA) অধীনত অসমীয়া মাধ্যমৰ বিদ্যালয় পর্যন্ত সীমাবদ্ধ।

পদ্ধতি ঃ

বর্তমানৰ অধ্যয়নটো বর্ণনামূলক গৱেষণাৰ অন্তর্গত। বর্ণনাত্মক গৱেষণাক সহ-সম্পর্কীয় গৱেষণা বুলিও কোৱা হয়। ইয়াত চলকসমূহৰ মাজৰ সম্পর্কৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে অর্থাৎ ই অসমৰ দুখনৈ চক্র অঞ্চলৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ মাজত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ মাজৰ সম্পর্ক অনুসন্ধান কৰে। এই অধ্যয়নত গৱেষকজনে জৰীপ পদ্ধতি গ্রহণ কৰিছে। ইয়াত গৱেষকজনে প্রাথমিক তথ্যৰ লগতে গৌণ তথ্যও বাৱহাৰ কৰিছে। প্রাথমিক তথ্যসমূহ মূলতঃ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ পৰা প্রশ্নাৱলীৰ সহায়ত সংগ্রহ কৰা হৈছে আৰু কিছুমান তথ্য বিভিন্ন কিতাপ, আলোচনী, ইন্টাৰনেট আদিৰ পৰা আহৰণ কৰা হৈছে।

নমুনা ঃ

গৱেষকগৰাকীয়ে মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা অধ্যয়ন কৰাৰ সিদ্ধান্ত লৈছিল। গতিকে অসমৰ অসমীয়া মাধ্যমৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ত অধ্যয়ন কৰা দশম শ্রেণীৰ ছাত্র-ছাত্রীক বর্তমানৰ অধ্যয়নৰ জনসংখ্যৰ মাজত বিবেচিত হৈছিল। গৱেষকজনে এই অধ্যয়নৰ নমুনা হিচাপে দশম শ্রেণীৰ ১০০ গৰাকী ছাত্র-ছাত্রীক বাছি লৈছিল। সেই ১০০ জন দশম শ্রেণীৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ ভিতৰত ৫০ জন ল'ৰা আৰু ৫০ জন ছোৱালী। এই প্রসংগত অনুসন্ধানকাৰীয়ে ৰেণ্ডম নমুনা সংগ্রহ কৌশল অনুসৰণ কৰিছে।

ব্যৱহৃত সঁজুলিসমূহ ঃ

(১) এই গৱেষণাৰ বাবে গৱেষকজনে কে.কে. আগৰৱাল আৰু এছ.অৰোৱা, দ্বাৰা নির্মিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা স্কেলৰ অনুবাদিত সংস্কৰণ ব্যৱহাৰ কৰিছে।

(২) দশম শ্রেণীৰ বিজ্ঞানৰ চূড়ান্ত পৰীক্ষাত লাভ কৰা নম্বৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ শৈক্ষিক কৃতিত্ব বুলি গণ্য কৰা হৈছে।

তথ্য বিশ্লেষণ আৰু ব্যাখ্যা ঃ

অনুমান- ১

"লিংগৰ ভিত্তিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ কোনো তাৎপর্য নাই।"

সূচী- ১ লিংগৰ ভিত্তিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ ওপৰত গড় নম্বৰৰ মাজত উল্লেখযোগ্য পার্থক্যৰ পৰীক্ষা।

ইয়াত, $df = N_১ + N_২ - ২$

$= ৫০ + ৫০ - ২$

$= ৯৮$

ফলাফলৰ ব্যাখ্যা ঃ

০.০৫ স্তৰ আৰু ০.০১ স্তৰৰ তাৎপর্যত $df = ৯৮$ ৰ বাবে 't' ৰ মান ক্রমে ১.৯৮ আৰু ২.৬৩, যিটো 't' ৰ জটিল মানৰ তালিকাৰ পৰা পোৱা যায়। ইয়াত আমি দেখিব

লিংগ	N	গড় (Mean)	প্রামাণিক বিচ্যুতি (S.D)	SE_D	"t" মান
ল'ৰা	৫০	৫০.১৪	৮.১১	১.৪৬১	২.৯০
ছোৱালী	৫০	৪৫.৯	৬.৪০		

পাৱো যে গণনা কৰা 't' মানটো জটিল 't' মানতকৈ বেছি। যিয়ে ইংগিত দিয়ে যে 't' অনুপাতটো উল্লেখযোগ্য। গতিকে অনুমান "লিংগৰ ভিত্তিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ কোনো তাৎপর্য্য নাই", নাকচ কৰা হয়। ইয়াৰ পৰা বুজা যায় যে ছোৱালীতকৈ ল'ৰাৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা বেছি।

লিংগৰ ভিত্তিত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ গড়

চিত্র ঃ লিংগ অনুসৰি বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ গড় নম্বৰ দেখুওৱা হৈছে।

অনুমান - ২

"লিংগৰ ভিত্তিত বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ কোনো তাৎপর্য নাই।"

সূচী- ২ লিংগৰ ভিত্তিত বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ গড় নম্বৰৰ মাজত উল্লেখযোগ্য পার্থক্যৰ পৰীক্ষা।

ফলাফলৰ ব্যাখ্যা ঃ

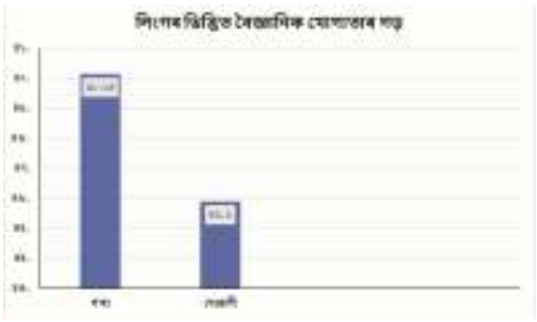

০.০৫ স্তৰ আৰু ০.০১ স্তৰৰ তাৎপর্য্যত df = ৯৮ ৰ বাবে 't' ৰ জটিল মানৰ তালিকাৰ পৰা পোৱা 't' ৰ মান ক্ৰমে ক্ৰমে ১.৯৮ আৰু ২.৬৩। ইয়াত টেবুল -২ ত গণনা কৰা 't' মান অর্থাৎ ৩.২৯ জটিল 't' মানতকৈ বেছি। যিয়ে ইংগিত দিয়ে যে 't' অনুপাতটো উল্লেখযোগ্য। এইদৰে দেখা যায় যে ল'ৰাৰ গড় নম্বৰ ছোৱালীতকৈ যথেষ্ট বেছি। সেয়েহে অনুমান অর্থাৎ "লিংগৰ ভিত্তিত বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ

লিংগ	N	গড় (Mean)	প্রামাণিক বিচ্যুতি (S.D)	$SE_{,D}$	"t" মান
ল'ৰা	৫০	৪৬.১৬	৮.৪৯	১.৬১	৩.২৯
ছোৱালী	৫০	৮০.৮৬	৭.৫৮		

কোনো তাৎপর্য্য নাই", নাকচ কৰা হয়।

লিংগৰ ভিত্তিত বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ গড়

চিত্র ঃ লিংগ অনুসৰি শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ গড় নম্বৰ দেখুওৱা হৈছে।

অনুমান - ৩

"মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ মাজত বিজ্ঞান বিষয়ত শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজত কোনো তাৎপর্যপূর্ণ সম্পর্ক নাই।"

সূচী- ৩ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ মাজৰ সম্পর্ক।

ফলাফলৰ ব্যাখ্যা ঃ

ইয়াত ০.০১২ আৰু ০.০৮২ ৰ সম্পর্ক সহজে অতি

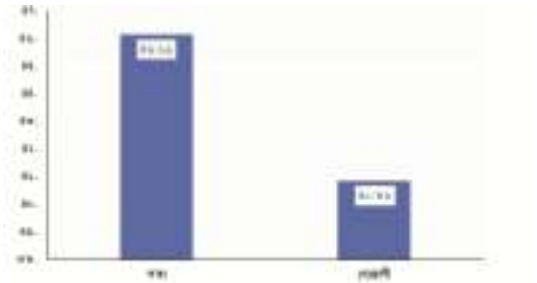

কম মানক প্রতিনিধিত্ব কৰে যিয়ে মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ মাজত বিজ্ঞানৰ শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজত অতি দুর্বল আৰু নগণ্য সম্পর্কক সূচায়। ইয়াৰ পৰা অনুমান কৰিব পাৰি যে দুয়োটা চলকৰ মাজত অলপ বা একেবাৰেই অর্থপূর্ণ সম্পর্ক নাই, যিয়ে এই ধাৰণাটো সমর্থন কৰে যে মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ মাজত

চলক	লিংগ	গড় (Mean)	প্রামাণিক বিচ্যুতি S.D.	DF	't' মান	বিবৰণ
বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা	ল'ৰা	৫০.১৪	৮.১১	৪৮	০.০১২	গ্রহণ যোগ্য সম্পর্ক
শৈক্ষিক কৃতিত্ব		৪৬.১৬	৮.৪৯			
বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা	ছোৱালী	৪৫.৯	৬.৪০	৪৮	০.০৮২	গ্রহণ যোগ্য সম্পর্ক
শৈক্ষিক কৃতিত্ব		৪০.৮৬	৭.৫৮			

বিজ্ঞান বিষয়ত শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজত কোনো তাৎপর্য্যপূর্ণ সম্পর্ক নাই।

অধ্যয়নৰ মূল তথ্যসমূহ ঃ

বর্তমানৰ অধ্যয়নৰ প্রধান তথ্যসমূহ তলত দিয়া হৈছে -

* ছোৱালীতকৈ ল'ৰাৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা বেছি।
* ছোৱালীৰ তুলনাত ল'ৰাৰ বিজ্ঞানত শৈক্ষিক কৃতিত্ব বেছি।
* বিজ্ঞান বিষয়ত শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজত প্রায় নগণ্য সম্পর্ক আছে।

আলোচনা ঃ

এই অধ্যয়নত অসমৰ দুধনৈ ৰাজহ চক্র অঞ্চলৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ মাজত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ ক্ষেত্র আৰু ইয়াৰ শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ সৈতে সংযোগৰ বিষয়ে গভীৰভাৱে আলোচনা কৰা হৈছিল। এই তথ্যই সুকীয়া লিংগভিত্তিক আর্হিৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে, ইয়াৰ পৰা দেখা গৈছে যে ল'ৰাসকলে উচ্চ পর্যায়ৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা প্রদর্শন কৰে আৰু ছোৱালীৰ তুলনাত বিজ্ঞানত উন্নত শৈক্ষিক প্রদর্শন লাভ কৰে। অৱশ্যে বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ মাজত পর্যবেক্ষণ কৰা সীমিত সম্পর্ক আকর্ষণীয়। পূর্বৰ কিছুমান গৱেষণামূলক কামত আমি বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ লগতে শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ সম্পর্কে কিছুমান ফলাফল পর্যবেক্ষণ কৰিব পাৰো। মণিচান্দৰ আৰু বৃন্দামান (২০১৪) ৰ অধ্যয়নত দেখা গৈছে যে এইডেড স্কুলৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ চৰকাৰী বিদ্যালয়তকৈ অলপ বেছি বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আছিল। আকৌ আন এটা ফলাফলত বিতর্কিত তথ্য উন্মোচিত হ'ল যে বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ ক্ষেত্রত মহিলা ছাত্র-ছাত্রীসকল পুৰুষ ছাত্র-ছাত্রীতকৈ ভাল। আহমদ আৰু মজিদৰ (২০২২) অধ্যয়নতো দেখা গৈছে যে

ছোৱালী ছাত্র-ছাত্রীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা ল'ৰাতকৈ বেছি। মিশ্রই (২০২০) পশ্চিমবংগৰ কিছুমান মাধ্যমিক বিদ্যালয়ত বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা আৰু শৈক্ষিক কৃতিত্বৰ ওপৰত অধ্যয়ন কৰিছিল। তেওঁৰ এই তথ্যই দেখুৱাইছে যে ছোৱালীৰ তুলনাত ল'ৰাবোৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা বেছি। আকৌ গৱেষকে চহৰৰ ছাত্র-ছাত্রী আৰু গ্রাম্য ছাত্র-ছাত্রীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা পর্যবেক্ষণ কৰে আৰু ফলাফলে স্পষ্টভাৱে ইংগিত দিয়ে যে নগৰীয়া ছাত্র-ছাত্রীৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা গ্রাম্য ছাত্র-ছাত্রীতকৈ বেছি।

ছোৱালীৰ তুলনাত ল'ৰাৰ বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা বেছি হোৱাটোও বর্তমানৰ অধ্যয়নত দেখা গৈছে। ওপৰত আলোচনা কৰা তথ্যসমূহ এই অধ্যয়নৰ সৈতে ওতঃপ্রোতভাৱে জড়িত। বর্তমানৰ অধ্যয়নত এইটোও প্রকাশ পাইছে যে ছোৱালীৰ তুলনাত ল'ৰাৰ বিজ্ঞানত উচ্চ শৈক্ষিক কৃতিত্ব লাভ কৰিছে। এই অধ্যয়নে এইটোও দেখুৱাইছে যে বিজ্ঞান বিষয়ত শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতাৰ মাজত অতি কম সম্পর্ক আছে।

সামৰণি ঃ

এই ক্ষেত্রত আৰু যথেষ্ট গৱেষণাৰ প্রয়োজন। গৱেষণাই ছাত্রৰ বিজ্ঞানৰ প্রতি থকা অন্তর্নিহিত যোগ্যতাক ব্যৱহাৰ কৰি শিক্ষণ আহৰণৰ বাবে বিভিন্ন কৌশলৰ মাজত সোমাই পৰিব পাৰিব পাৰে, যাৰ ফলত তেওঁলোকে ইয়াক শৈক্ষিক সফলতালৈ ৰূপান্তৰিত কৰিব পাৰে। প্রতিটো গৱেষণামূলক কামেই নতুন কিবা এটাৰ ইংগিত দিয়ে, যিয়ে ভৱিষ্যতৰ গৱেষণাৰ দিশ আৰু সেই সম্পূর্ণ হোৱা কামৰ সীমাবদ্ধতাক সূচায়।

এই গৱেষণা, অসমৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ত অধ্যয়ন কৰা ছাত্র-ছাত্রীৰ বিজ্ঞানৰ শৈক্ষিক কৃতিত্ব আৰু বৈজ্ঞানিক যোগ্যতা অধ্যয়নৰ এক বিনম্র প্রয়াস। গোৱালপাৰা জিলাৰ অন্তর্গত দুধনৈ ৰাজহ চক্রৰ অসমীয়া মধ্যম মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীৰ বাবে এই অধ্যয়ন সীমিত। আকৌ, এই অধ্যয়নে শিক্ষক আৰু অভিভাৱকসকলক তেওঁলোকৰ সন্তানৰ বৈজ্ঞানিক দক্ষতা জনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ বিষয়ে কিছু তথ্য প্রদান কৰিব। ❑

তথ্যসূত্র ঃ

1. Nataraj, P.N.and Manjula, G. (2012). A Study on Scientific Aptitude of High School Students In Relation To Their Achievement in Science. *Indian Streams Research Journal.*
2. Manichander, T., & Brindhamani, M. (2014). Academic Achievement and Scientific Aptitude in Science among the students of standard-X. *American Research Thoughts.* 1(1), 304-310.
3. Panneerselvam, M., & Muthamizhselvan, M. (2015). The Secondary School students in relation to Scientific Attitude and Achievement in Science. *Journal Of Research & Method in Education,* 5(2), 5-8.
4. Stanley, Leo S. (2016). Scientific Aptitude & Achievement in Science of IX Standard Students in Puducherry Region. Indian Journal of Research, 5(2), 290-291.
5. Ramoji Rao.Y.(2018).*A Study Of The Relationship Of A Few Selected Variables To The Academic Achievement Indices Of Secondary Schools.* (Ph.D Thesis). University of Madras and Chatterji (1972).
6. Patel, A. P. (2019). A study of scientific aptitude of secondary schools students in context of certain variables. *Gap Interdisciplinarities* .2(3),420-424.
7. Gao, Y., & Hangsing, E. (2019). Scientific Aptitude and Academic Achievement: A Study on Tribal Students. *International Journal of Scientific and Research Publications*, 9 (11), 246-249. DOI: 10.29322/IJSRP.9.11.2019.p9526.
8. Mishra, S (2020). Scientific Aptitude and Academic Achievement of Students in Mathematics. *Pedagogy of Learning.* 6 (1), 13-20.
9. Kouser, S., Majid, I. (2021). Technological Tools for àßnhancing Teaching and Learning Process. *Towards Excellence*, 13(1), 366-373.
10. Ahmad, S., & Majid I. (2022). Scientific Aptitude as a Predictor of Achievement in Science: A Study of Economically Disadvantaged Students. *The International Journal of Indian Psychology.* 10(2), 175-182. DOI: 10.25215/1002.018.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকৰ নেৰেটিভ শৈলী : এটি অধ্যয়ন
(এবছাৰ্ড নাটক কেইখনৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)

ৰিম্পী বড়া
গৱেষক
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
ৰাষ্ট্ৰীয় ঘাইপথ ৩৭, ৰেচম নগৰ,
খানাপাৰা, গুৱাহাটী, অসম
৭০০২৮৪৩৪৫৯
rimpiborah2015@gmail.com

ড° মৃণাল জ্যোতি গোস্বামী
সহকাৰী অধ্যাপক
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
ৰাষ্ট্ৰীয় ঘাইপথ ৩৭, ৰেচম নগৰ,
খানাপাৰা, গুৱাহাটী, অসম
৯৪৩৫০১৬৮৪০
mrinaljyoti@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

বসন্ত শইকীয়া (১৯৩৫ -২০২৪) এগৰাকী আধুনিক অসমীয়া নাট্যকাৰ। তেওঁৰ নাটকসমূহৰ নেৰেটিভ টেকনিক তদানীন্তন কালৰ নাট্যকাৰসকলতকৈ কিছু পৃথক। বিশেষকৈ তেওঁৰ এবছাৰ্ড নাটক কেইখনৰ নেৰেটিভ টেকনিক মন কৰিবলগীয়া। যোৱাটো শতিকাৰ সত্তৰ দশকত তেওঁ প্ৰচলিত অসমীয়া নাট্যশৈলী পৰিহাৰ কৰি এবছাৰ্ডিজমৰ উপাদানসমূহ গ্ৰহণ কৰি কেইবাখনো নাটক ৰচনা কৰে। সেই নাটক কেইখন হ'ল— মৃগতৃষ্ণা (ৰচনাকাল ১৯৭২), এজন নায়কৰ মৃত্যু (ৰচনাকাল ১৯৮৮), মানুহ (ৰচনাকাল ১৯৭৭), আৰু অসুৰ (ৰচনাকাল ১৯৭২)। উল্লিখিত নাটক কেইখনত বসন্ত শইকীয়াই মানুহৰ অস্তিত্বৰ সংকট, জীৱনৰ অৰ্থহীনতা আৰু মনস্তাত্বিক জটিলতা উপস্থাপন কৰিবলৈ এক নতুন ধৰণৰ অসমীয়া নেৰেটিভ শৈলীৰ নিৰ্মাণ কৰিছে। এই নাটককেইখনত শইকীয়াই কেনেধৰণৰ নেৰেটিভ কৌশল ব্যৱহাৰ কৰিছিল সেই বিষয়ে এই গৱেষণা পত্ৰখনত আলোকপাত কৰিব বিচৰা হৈছে।

এই গৱেষণা পত্ৰখনত শইকীয়াৰ নাটকসমূহে কেনেকৈ এবছাৰ্ড নাটকৰ বিচ্ছিন্নতা আৰু অনিশ্চিয়তাৰ শৈলী আত্মস্থ কৰি অসমীয়া নাটকৰ নেৰেটিভক এক নতুন দিশ প্ৰদান কৰিছে সেই বিষয়েও আলোচনা কৰা হ'ব। নাটকৰ পাঠৰ ব্যাখ্যাৰ জৰিয়তে শইকীয়াই তেওঁৰ এনে নাটকসমূহত কেনেদৰে পুনৰাবৃত্তিমূলক বা অৰ্থহীন কাম, শব্দৰ খেলা, আজে বাজে কথাৰে ভৰা সংলাপ, অৰ্থহীনভাৱে বিস্তৃত প্লট, এক অৰ্থহীন পৃথিৱী, বিচ্ছিনতাবোধ, এবছাৰ্ড নাটকৰ শৈলী (মূলতঃ ব্যক্তিগত অন্তদৃষ্টিৰ প্ৰকাশক)ৰ সাৰ্থক প্ৰকাশেৰে জীৱনৰ অন্তৰ্নিহিত বৈপৰীত্ব ফুটাই তুলিছে সেয়া বিশ্লেষণ কৰা যাব। মূলতঃ নেৰেটেলিজিৰ মূল ধাৰণা আৰু এবছাৰ্ড নাটকৰ ধাৰণাৰ আধাৰত এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰা যাব। ইয়াৰ জৰিয়তে বসন্ত শইকীয়াৰ এই নতুন নেৰেটিভ শৈলীয়ে অসমীয়া নাটকৰ নান্দনিক সম্ভাৱনাক প্ৰসাৰিত কৰাৰ লগতে নতুন নাট্য-কৌশল কেনেদৰে নিৰ্মাণ কৰিছিল তাৰো আভাস লাভ কৰা যাব।

বীজ শব্দ :

বসন্ত শইকীয়া, অসমীয়া নাটক, এবছাৰ্ড নাটক, নেৰেটিভ কৌশল, অস্তিত্ববাদ, আধুনিক অসমীয়া সাহিত্য, এবাৰ্ছাডিজম।

১.০ অৱতৰণিকা

বিংশ শতিকাৰ মাজভাগত কেইগৰাকীমান ইউৰোপীয়ান আৰু আমেৰিকান

নাট্যকাৰে এক নতুন ধৰণৰ নাট্যধাৰাৰ সৃষ্টি কৰে। মূলতঃ অস্তিত্ববাদী দার্শনিক এলবার্ট ক্যেমুৰে অস্তিত্ববাদ সম্পর্কে আগ বঢ়োৱা মতামত (মানৱ পৰিস্থিতি মূলতঃ অর্থহীন, উদ্দেশ্যহীন)ক আধাৰ হিচাপে লৈ তেওঁলোক নাটক ৰচনাত ব্রতী হৈছিল। এই চাম নাট্যকাৰৰ সেই সময়লৈকে প্রচলিত পৰম্পৰাগত নেৰেটিভৰ প্রতি মোহভংগ হৈছিল আৰু নতুন ধৰণে কথাবোৰ অনুভৱ কৰিছিল তথা প্রকাশ কৰিবলৈ যত্ন কৰিছিল। নাটকসমূহৰ মাজেৰে মানৱ জীৱনৰ অর্থহীনতা, বৃথা সংগ্রাম আদি প্রকাশ কৰিবলৈ যত্ন কৰিছিল। "এই দৃষ্টিভংগী মতে মানুহ আশাহীন, বিহ্বল আৰু উদ্বিগ্ন। সেই নাট্যধাৰাটোকেই 'দ্যা থিয়েটাৰ অৱ দ্যা এবছার্ড' নামেৰে অভিহিত কৰা হয়" (গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩, পৃ.৫৬)। এই নাট্যধাৰাটোৰ কেইগৰাকীমান উল্লেখযোগ্য নাট্যকাৰ হ'ল— চেমুৱেল বেকেট (Samuel Beckett), ইউজেন ইয়নেস্কো (àßuhne Ionesco), জিন জেনেট (Jean Genet), আর্থাৰ আডামভ (Arthur Adamov), হেৰল্ড পিণ্টাৰ (Harold Pinter) ইত্যাদি। মন কৰিবলগীয়া এয়ে যে এবছার্ডিষ্ট কিন্তু কোনো ধৰণৰ বিশেষ সাহিত্যিক আন্দোলন নাছিল। ১৯৬০ চনত প্রকাশিত মার্টিন এছলিন (Martin Esslin)ৰ "দ্যা থিয়েটাৰ অৱ দ্যা এবছার্ড" (The Theatre of the Absurd) শীর্ষক লিখনিটোতে এই নাট্যধাৰাটোক এই নামকৰণ কৰা হয়। এছলিনে ইয়নেস্কোৰ এটি উদ্ধৃতি দি কৈছে যে— "absurd is that which has not purpose, or goal, or objective." (Esslin, 1960, p. 4)।

বিংশ শতিকাৰ মাজভাগত অসমীয়া নাট্যকাৰ অৰুণ শর্মা আৰু বসন্ত শইকীয়াই এই নাট্যধাৰাৰ প্রতি আগ্রহী হৈ নাটক ৰচনা কৰা দেখা যায়। অৰুণ শর্মাই *আহাৰ* (১৯৬৭) নামেৰে এখন এনে ধাৰাৰ নাটক ৰচনা কৰিছিল। তাৰ পৰৱর্তী সময়ত বসন্ত শইকীয়াই — মৃগতৃষ্ণা (ৰচনাকাল ১৯৭২), এজন নায়কৰ মৃত্যু (ৰচনাকাল ১৯৮৮), মানুহ (ৰচনাকাল ১৯৭৭), আৰু অসুৰ (ৰচনাকাল ১৯৭২) ৰচনা কৰে। এই এবছার্ড নাটক কেইখনত শইকীয়াই অসমৰ সাংস্কৃতিক আৰু সামাজিক-ৰাজনৈতিক বাস্তৱতাৰ আধাৰত হতাশা, বিচ্ছিন্নতাবোধ আদি বিষয়বস্তু উপস্থাপিত কৰিছে। আনহাতে এবছার্ড নাটকৰ এক বিশেষ শৈলী বা ফর্ম থাকে, এছলিনৰ মন্তব্যটো এনেধৰণৰ— "the Theatre of the Absurd merely communicates one poet's most intimate and personal intuition of the human situation, his own sense of being, his individual vision of the world" (Esslin, 2004, pp.402-403)। এই সম্পর্কে ক'ব পাৰি— "এবছার্ড নাট্যকাৰসকলে বাস্তৱবাদৰ বিৰুদ্ধে ঠিয় দি, বাহ্যিক দৃষ্টিভংগীৰে দেখা পোৱা জীৱনটোৰ বিপৰীতে মানুহৰ আভ্যন্তৰীণ জীৱন সম্পর্কে, ধাৰণা সম্পর্কেহে গুৰুত্ব দিব বিচাৰিছিল।'ব্যক্তিগত অন্তর্দৃষ্টি'ক চিত্রিত কৰিবলৈকে এবছার্ড নাট্যকাৰসকলে গতানুগতিক পদ্ধতি পৰিত্যাগ কৰি অধিক কাব্যিক বা গীতিময় ৰূপ গ্রহণ কৰিবলগীয়া হৈছিল" (গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩, পৃ. ৫৮)। এই শৈলীটো নেৰেটলজীৰ আধাৰত বিশ্লেষণ কৰিলে কিছু নতুন দিশ উদ্ভাসিত হৈ উঠে।

নেৰেটলজী হ'ল বিংশ শতিকাত সাহিত্যৰ পাশ্চাত্যৰ সমালোচনাৰ ক্ষেত্রখনত গঢ় লৈ উঠা এক নতুন ধাৰা। নেৰটলজী হৈছে নেৰেটিভৰ গঠন, নেৰেটিভৰ নিমার্ণ আৰু বিশ্লেষণ নিয়ন্ত্রণ কৰা নীতিসমূহৰ অধ্যয়ন। ইয়াৰ লগত সম্পৃক্ত হৈ আছে— কাহিনী (Histoire) আৰু বর্ণনা (RÙcit), ফ'কলাইজেচন (Focalization), টেম্পৰেল মেনিপুলেচন, স্থান আৰু ছেটিং (Space and Setting), চৰিত্রায়ণ আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠ (Characterization and Narrative Voice) আদিৰ দৰে ধাৰণাসমূহ। এই ধাৰণাসমূহৰ আধাৰতেই এই গৱেষণা পত্রখনত বসন্ত শইকীয়াৰ এবছার্ড নাটক কেইখনৰ নেৰেটিভ কৌশল সম্পর্কে বিস্তৃত বিশ্লেষণ আগবঢ়াব বিচৰা হৈছে।

২.০ উদ্দেশ্য ঃ

এই গৱেষণা পত্রখনৰ মূল উদ্দেশ্য এটাই— বসন্ত শইকীয়াই তেওঁৰ এবছার্ড নাটকসমূহত ব্যৱহাৰ কৰা নেৰেটিভ কৌশলসমূহ বিশ্লেষণ কৰা।

৩.০ তত্ত্বগত কাঠামো ঃ

নেৰেটলজী শীর্ষক তাত্ত্বিক ধাৰণাটিৰ আধাৰত এই গৱেষণা পত্রখনৰ তত্ত্বগত কাঠামোটি তৈয়াৰ কৰা হৈছে। নেৰেটলজী হৈছে সাহিত্যত নেৰেটিভৰ গঠন আৰু বিশ্লেষণ নিয়ন্ত্রণ কৰা এক তত্ত্বগত পদ্ধতি। বুলগেৰিয়ান-ফৰাচী সাহিত্যতত্ত্ববিদ ছভেটান টড'ৰভে ১৯৬৯ চনত লিখা *Grammaire du Décaméron*-ত "Narratologie" শব্দটো পোনপ্রথমে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। টড'ৰভৰ মতে, নেৰেটলজী হৈছে কাহিনী আৰু বর্ণনাৰ গাঁথনিৰ বিশ্লেষণৰ এক তাত্ত্বিক ক্ষেত্র, য'ত পাঠকৰ দৃষ্টিকোণৰ পৰা আখ্যানৰ মূল সৃজনশীল দিশ বুজিবলৈ গুৰুত্ব দিয়া হয় (Todorov, 1969, p. 89)।

আধুনিক নেৰেটলজী বিকাশত ৰাছিয়ান ফর্মালিজমসকলৰ অৱদান বহু গভীৰ। ভ্লাদিমিৰ প্ৰপ (Vladimir Propp)-ৰ *Morphology of the Folktale* (1928) আৰু মিখাইল বাখটিন(Mikhail Bakhtin)-ৰ *The Dialogic Imagination* (1975) উল্লেখ থকা "theories of heteroglossia", "dialogism" আৰু "chronotope"ৰ মাজত ইয়াৰ উত্তৰণৰ বীজ সোমাই আছিল। আন এগৰাকী ফৰাচী নৃতত্ত্ববিদ ক্লড লেভি-ষ্ট্ৰাউছে (Claude Lévi-Strauss) পৌৰাণিক কাহিনীত নেৰটলজীৰ বিশ্লেষণ প্ৰয়োগ কৰি প্ৰপৰ ধাৰণাসমূহ অধিক বিস্তৃত কৰি তোলে। লেভি-ষ্ট্ৰাউছে তেওঁৰ গৱেষণা পত্ৰ "The Structural Study of Myth"-ত যুক্তি দিছিল যে ভাষাৰ দৰেই মিথকো "মিথিম"(mythemes) নামৰ সৰু সৰু এককত বিভক্ত কৰিব পাৰি, যিবোৰক বিভিন্ন ধৰণে পুনৰ সংযুক্ত কৰি বিভিন্ন কাহিনী সৃষ্টি কৰিব পাৰি (Lévi-Strauss, 1955, p. 431)।

ফৰাচী সাহিত্য তত্ত্ববিদ ৰ'লা বার্থে (Roland Barthes), বিংশ শতিকাৰ অষ্টম দশকত ফৰাচী সাহিত্য তত্ত্ববিদ জেৰার্ড জেনেট, বিংশ শতিকাৰ আশী আৰু নব্বৈৰ দশকত মিকে বাল (Mieke Bal), ছিমৰ চেটমেন (Seymour Chatman) আৰু ডেভিড হার্মান (David Herman)ৰ দৰে পণ্ডিতসকলে নেৰটলজীৰ ক্ষেত্ৰখন অধিক বিস্তাৰিত কৰে। জেৰার্ড জেনেটে ৰচনা কৰা *Narrative Discourse: An àßssay in Method* গ্ৰন্থখন প্ৰথমে ফৰাচী ভাষাত *Discours du récit* নামেৰে ১৯৭২ চনত প্ৰকাশিত হৈছিল। এই গ্ৰন্থখনৰ ইংৰাজী অনুবাদ ১৯৮০ চনত প্ৰকাশ পায়। এই গ্ৰন্থখনত জেনেটে গল্প বৰ্ণনাৰ গাঁথনি আৰু কৌশলসমূহৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল। কাহিনী (histoire) আৰু বৰ্ণনা (récit)ৰ মাজৰ পার্থক্যৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি নেৰেটলজীৰ পৰিৱর্তন সাধন কৰিছিল। জেনেটে কাহিনীৰ বিষয়বস্তু (পৰিঘটনা) আৰু সেই পৰিঘটনাৰ উপস্থাপন কৌশলৰ মাজৰ সম্পর্কৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা দেখা গৈছিল। তেওঁ ফেবুলা (fabula: গল্পৰ মূল পৰিঘটনা) আৰু স্যুজেট (sjuzhet: সেই পৰিঘটনাৰ গঠন)ৰ মাজৰ প্ৰসংগ স্পষ্ট কৰি নতুন ধৰণৰ ধাৰণা কেইটামানৰ প্ৰৱর্তন কৰে। এই গ্ৰন্থখনত তেওঁ নেৰেটলজীৰ কেইটামান ধাৰণাৰ প্ৰস্তাৱ দিছে — ক্ৰম (Order), কালবিধি বা সময়কাল (Duration), কম্পনাংক (Frequency), মেজাজ (Mood) আৰু কণ্ঠ (Voice)। এই কেইটা ধাৰণাই কাহিনী কিদৰে বৰ্ণনা কৰা হয় সেয়া বিশ্লেষণ কৰে (Genette, 1980, pp. 33—85)। ইয়াৰ লগতে তেওঁ ফ'কলাইজেচন(focalization) নামেৰে আন এটি নতুন ধাৰণাও অন্তর্ভুক্ত কৰে। তেওঁৰ মতে ফ'কলাইজেচনে কাহিনীৰ দৃষ্টিভংগী বুজাবলৈ সহায় কৰে আৰু পাঠক-দর্শকে কেনে তথ্য লাভ কৰিব সেয়া পৰিচালনা কৰে।

৩.১ নেৰেটলজীৰ মৌলিক ধাৰণাসমূহ ঃ

নেৰেটলজীৰ মৌলিক ধাৰণাসমূহ নেৰেটিভ গাঁথনিৰ বৈশিষ্ট্য বিশ্লেষণত কেন্দ্ৰিভূত হৈ থাকে। জেৰার্ড জেনেটৰ *Narrative Discourse* (1980) আৰু মিকে বালৰ *Narratology: Introduction to the Theory of Narrative* (1985)-ত নেৰেটিভৰ অন্তর্নিহিত তাত্ত্বিক মাত্ৰাসমূহ স্পষ্টভাৰে বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

- কাহিনী (Histoire) আৰু বৰ্ণনা (Récit) : নেৰেটলজীৰ এক মুখ্য তত্ত্ব কাহিনী আৰু বৰ্ণনাৰ মাজৰ ভিন্নতা। কাহিনী অর্থাৎ histoire বুজায় কাহিনীভাগৰ মূল ঘটনাৰ কালনুক্ৰমিক উপস্থাপন, আনহাতে récit হৈছে সেই ঘটনাৰ কাহিনীৰূপত পুনৰ নির্মাণ। কাহিনীভাগৰ অৱলম্বনত বার্তা কিদৰে পঠিওৱা হৈছে আৰু কিদৰে বুজা হ'ব সেই পর্যালোচনা এই ক্ষেত্ৰত বিশেষভাৱে গুৰুত্বপূর্ণ। জেনেটৰ মতে, কাহিনীভাগ আৰু বৰ্ণনাৰ এই তফাৎৰ জৰিয়তে পাঠক-দর্শকৰ অনুভৱৰ প্ৰতি প্ৰতিফলন সৃষ্টিৰ বাবে বিশেষ কৌশল গ্ৰহণ কৰা হয় (Genette, 1980, pp. 27-30)।
- ফ'কলাইজেচন (Focalization) : ফ'কলাইজেচন হৈছে নেৰেটিভৰ দৃষ্টিভংগী নির্ণয় কৰা এক গুৰুত্বপূর্ণ তত্ত্ব। জেনেটে এই ধাৰণাটোক তিনিটা ভাগত বিভাজন কৰিছে—

  o জিৰ' ফ'কলাইজেচন : সর্বজ্ঞ কথকৰ দৃষ্টিভংগী।

  oআন্তৰিক ফ'কলাইজেচন : কাহিনী কোনো চৰিত্ৰৰ অভ্যন্তৰীণ দৃষ্টিভংগীৰ পৰা উপস্থাপন।

  o বাহ্যিক ফ'কলাইজেচন : কাহিনীৰ ঘটনাৰ বাহ্যিক বা বস্তুনিষ্ঠ উপস্থাপন।

  ফ'কলাইজেচনৰ দ্বাৰা দর্শক-পাঠকক ঘটনাৰ গভীৰতাত অন্তর্ভুক্ত কৰাৰ লগতে উন্মোচিত তথ্যবোৰৰ প্ৰবাহ পৰিচালনা কৰা হয় (Genette, 1980, pp. 189-194)।
- টেম্পৰেল মেনিপুলেচন (Temporal Manipulation) : কাহিনীৰ সময় গাঁথনিৰ কালনুক্ৰম আৰু ইয়াৰ উপস্থাপন বিশ্লেষণ কৰিবলৈ টেম্পৰেল মেনিপুলেচন বিশেষভাৱে ব্যৱহৃত। ইয়াৰ জৰিয়তে কাহিনী ঘটনাসমূহ অতীত, বর্তমান, আৰু ভৱিষ্যৎ

সময়ৰেখাত স্থানান্তৰিত কৰা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে— পশ্চাৎ অৱলোকন (flashback) আৰু ভৱিষ্যতলৈ গমন (flash-forward)ৰ দৰে পদ্ধতিৰে কাহিনীভাগ অধিক নাটকীয় আৰু গভীৰ কৰা হয় (Bal, 2017, pp. 65-72)।

- স্থান আৰু ছেটিং (Space and Setting) : স্থান আৰু ছেটিং নেৰেটিভৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ অংশ। ভৌতিক স্থানৰ বৰ্ণনাৰ মাধ্যমে চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থা, নাটকৰ মেজাজ, আৰু ঘটনাসমূহৰ গুৰুত্ব দৰ্শক-পাঠকৰ বাবে প্ৰতিনিধিত্ব কৰা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে, বন্ধ স্থান এটি মানুহৰ ক্লান্তি বা বিভ্ৰান্তিৰ অনুভৱক প্ৰতিফলিত কৰিব পাৰে, আনহাতে বিস্তৃত স্থান স্বাধীনতাৰ প্ৰতীক হৈ দেখা দিব পাৰে (Bal, 2017, p. 124)।
- চৰিত্ৰায়ণ আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠ (Characterization and Narrative Voice) : চৰিত্ৰায়ণৰ মাধ্যমে চৰিত্ৰসমূহৰ মানসিকতা, অভিজ্ঞতা, আৰু ব্যক্তিত্ব প্ৰকাশ পায়। মিকে বালৰ মতে, চৰিত্ৰসমূহ বাস্তৱ জীৱনৰ মানৱসদৃশ দেখা গৈ বাস্তৱতাৰ এটি প্ৰতিমূৰ্তি গঠন কৰে, যি পাঠকৰ সৈতে গভীৰ সংযোগ স্থাপন কৰে (Bal, 2017, p. 106)। আনহাতে, নেৰেটিভ কণ্ঠ কাহিনী কোৱাসকলে পাঠকৰ বিশ্বাস আৰু অভিজ্ঞতাত গভীৰ প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰে।

৪.০ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখনত নিকট পাঠভিত্তিক বিশ্লেষণৰ মাধ্যমেৰে বসন্ত শইকীয়াৰ এবছাৰ্ড নাটকৰ নেৰেটিভ কৌশলসমূহৰ অধ্যয়ন কৰা হৈছে। মূল উৎস হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে শৈলেন ভৰালীৰ সম্পাদনাত অসম প্ৰকাশন পৰিষদে ২০১৯ চনত দ্বিতীয়বাৰ প্ৰকাশ কৰা *বসন্ত শইকীয়াৰ নাট্যসম্ভাৰ আৰু নাট্যকথা*। এই সংকলনত অন্তৰ্ভুক্ত তেওঁৰ নাটক কেইখন— "অসুৰ", "এজন নায়কৰ মৃত্যু", "মৃগতৃষ্ণা", আৰু "মানুহ"— গৱেষণাৰ মুখ্য উৎস ৰূপে বিবেচনা কৰা হৈছে।

গৌণ উৎসৰ অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে নেৰেটলজী, এবছাৰ্ড নাটকৰ ধাৰণা আৰু বসন্ত শইকীয়াৰ উল্লিখিত নাটক কেইখনৰ বিষয়ে ইতিমধ্যে প্ৰাপ্ত বিভিন্ন পণ্ডিতৰ সমালোচনামূলক ৰচনা। গৱেষণাত কাহিনী নিৰ্মাণ, চৰিত্ৰ বিকাশ, সংলাপ, ফ'কলাইজেচন (focalization), সময় আৰু স্থানৰ ব্যৱহাৰৰ দৰে নেৰেটিভ উপাদানসমূহত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে।

৫.০ সামগ্ৰিক আলোচনা ঃ

তত্ত্বিক কাঠামোত উল্লেখ কৰা মূল বিশেষত্ববোৰৰ আধাৰত তলত বসন্ত শইকীয়াৰ এবছাৰ্ড নাটকসমূহৰ নেৰেটিভ সম্পৰ্কে বহলাই বিশ্লেষণ কৰা হ'ল।

৫.১ কাহিনী (Histoire) আৰু বৰ্ণনা (Récit)

বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকসমূহত কাহিনী আৰু বৰ্ণনাৰ মাজত এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ বৈশিষ্ট্য প্ৰত্যক্ষ হয়। কাহিনীৰ মূল গাঁথনি কালনুক্ৰমিক, অথচ বৰ্ণনাৰ কৌশলৰ ব্যৱহাৰে ই সময়ৰেখাৰ নিয়ম ভংগ কৰিছে। এই কৌশলবোৰে নাটকৰ মূল বিষয়বস্তু আৰু ভাৱনাৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰিছে। প্ৰসংগত উল্লেখ কৰিব পাৰি যে, এবছাৰ্ড নাটকত নিটোল কাহিনী উপস্থাপন কৰা নহয়। ইয়াৰ কাৰণ হিচাপে ক'ব পাৰি — "মানুহৰ মনোজগতখন বিক্ষিপ্ত সেয়ে কেতিয়াও এটা সঠিক কাহিনীৰে তাক ব্যক্ত কৰিব নোৱাৰি। অসাৰ্থক, অযৌক্তিক, সংগতিহীন আৰু আদৰ্শহীন জীৱনৰ এটি নগ্ন পৰিস্থিতি অংকন কৰাই তেওঁলোকৰ উদ্দেশ্য। অভাৱবোধ, শূন্যতা, উদ্দেশ্যহীনতা, আৰু অমীমাংসিত ৰহস্যসমূহো বহুতো এবছাৰ্ডিষ্ট নাট্যকাৰে নাটকীয় প্লটৰ কেন্দ্ৰীয় বিষয় হিচাপে বিবেচনা কৰা দেখা যায়।"(গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩, পৃ. ৫৭) এক কথাত ক'ব পাৰি এবছাৰ্ড নাটকৰ বৰ্ণনাত সময়ৰেখাৰ নিয়ম ভংগ কৰাৰ প্ৰয়োগ হৈছে এবছাৰ্ডতত্ত্বৰ এক মুখ্য বৈশিষ্ট্য।

- অসুৰ : অসুৰ নাটকখনৰ দুটা অংকবিশিষ্ট । নাটকখনত দুৰ্নীতিত লিপ্ত হৈ অৱশেষত অপৰাধবোধৰ বাবে ধৰ্মত আশ্ৰয় লোৱা এগৰাকী ব্যক্তি, হৰনাথ চৌধুৰীৰ কাহিনীৰে আগবাঢ়িছে। নাটকখন ফ্লাশব্যাক বা পশ্চৎ অৱলোকন পদ্ধতিৰে আগবঢ়াই নিয়া হৈছে। হৰনাথ চৌধুৰীয়ে ধৰ্ম-মন্দিৰলৈ গৈ থাকোঁতে এক অদৃশ্য নাৰীসত্তাৰ প্ৰশ্নৰ সন্মুখীন হৈ তেওঁৰ অতীতৰ কু-কীৰ্তিৰ কথা দাঙি ধৰিছে। তেওঁকো এক অদৃশ্য নাৰীৰ বিকট চিঞৰে অহৰহ খেদি ফুৰে। কাহিনীভাগত পূৰ্বৰ ঘটনাবোৰ জানিবলৈ ফ্লাশব্যাকৰ ব্যৱহাৰে নাটকৰ বিষয়বস্তু আৰু গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে। মাৰ্টিন এছলিনৰ মতে, এবছাৰ্ড নাটকৰ এই বৈশিষ্ট্যৰে নাটকসমূহে দৰ্শকক সময়ৰেখাৰ অনুশাসনৰ বাহিৰত জীৱনৰ গভীৰ অৰ্থহীনতাক বুজিবলৈ সহায় কৰে (Esslin, 1960)।
- এজন নায়কৰ মৃত্যু : এই নাটকখনত পৰম্পৰাগত নায়কগাথাৰ বিকল্প ৰূপ উপস্থাপন কৰা হৈছে। চন্দন পাঠক নামৰ চৰিত্ৰটোৰ মানসিক আৰু সামাজিক দ্বন্দ্বৰ উপস্থাপনেৰে এক অস্তিত্ববাদী সংকটৰ চিত্ৰ দাঙি ধৰা হৈছে। চন্দন বিশ্বাস কৰে যে নিজৰ ভাগ্যই তেওঁৰ জীৱন চূড়ান্তভাৱে নিৰ্ধাৰণ কৰিব। লটাৰীৰ পইচা লাভ কৰাৰ স্বপ্নই তেওঁৰ অন্তৰ্ভুক্ত সংকট আৰু সমাজৰ লগত থকা বিভেদক স্পষ্ট কৰে। নাটকখনত পুঁজিবাদী সমাজ ব্যৱস্থাৰ বাবে সৃষ্টি হোৱা শূন্যতাবোধ, ৰাজনৈতিক ক্ষমতাৰ প্ৰভাৱ

আৰু মানুহৰ মানসিক অনিশ্চয়তা প্ৰতিফলিত হৈছে। নাটকৰ মূল সঙ্কট চন্দনৰ ব্যক্তিগত অভিজ্ঞতাৰ ওপৰত কেন্দ্ৰীভূত যদিও তাৰ পটভূমি হৈছে সমাজ ব্যৱস্থা। উদাহৰণস্বৰূপে, নায়কজনৰ জীৱনৰ কেন্দ্ৰীয় দ্বন্দ্ব বুজিবলৈ তেওঁৰ শৈশৱৰ কিছু ঘটনা নাটকৰ মাজত পশ্চাৎ অৱলোকন পদ্ধতিৰে উপস্থাপিত হৈছে (ভৰালী,২ ০১৯ পৃ. ১২২)।

- মানুহ : মানুহ নাটকখনো দুটা অংকৰ। নাটকখনত বনভোজ খাবলৈ যোৱা বিশ্ববিদ্যালয়ৰ ছাত্ৰী মন্দিৰাই সেই ঠাইত "বাঘ"ৰ অৱস্থিতি গম পাই অচেতন হৈ পৰাৰ পাছৰে পৰাই সকলো ঠাইতে বাঘৰ অৱস্থিতি অনুভৱ কৰে। আনকি এটা সময়ত তাই নিজেও বাঘিনীলৈ ৰূপান্তৰিত হয়। নাটকখনত পৃথক সময়ৰেখাৰ মাধ্যমে জীৱনৰ অৰ্থহীনতাৰ অনুভৱ কৰাইছে।
- মৃগতৃষ্ণা : মৃগতৃষ্ণা নাটকখনৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ দিগন্ত হাজৰিকা নামৰ হতাশগ্ৰস্ত কেৰাণী এজন। নাটকখনত তেওঁৰ স্বপ্নীল অৱস্থা এটাৰ মাজেৰে তেওঁৰ অৱদমিত কামনা-বাসনাক তুলি ধৰি সমসাময়িক সমাজ ব্যৱস্থাক ব্যংগ কৰা হৈছে। এক কথাত ক'ব পাৰি নাটকখনৰ বিষয়বস্তু—জীৱনৰ অৰ্থহীনতা আৰু মানৱীয় সংকট। ফ্লাশব্যাক আৰু ফ্লাশ-ফৰৱাৰ্ডৰ ব্যৱহাৰেৰে নাটকখন আগুৱাই নিয়া হৈছে।

সময়ৰ ধাৰাবাহিকতাক ভংগ কৰি "অভাৱবোধ, শূন্যতা, উদ্দেশ্যহীনতা, আৰু অমীমাংসিত ৰহস্যসমূহো বহুতো এবছার্ডিষ্ট নাট্যকাৰে নাটকীয় প্লটৰ কেন্দ্ৰীয় বিষয় হিচাপে বিবেচনা কৰা দেখা যায়" (গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩, পৃ. ৫৮)। এয়া এই নাটককেইখনটো সুন্দৰভাৱে প্ৰকাশ পাইছে। এছলিনৰ ভাষাৰে ক'ব পাৰি— "a lone outsider, cut off and isolated in (his own) private world" (Esslin, 2004, p.22).

৫.২ ফ'কলাইজেচন (Focalization) ঃ

বসন্ত শইকীয়াৰ এবছার্ড নাটকসমূহত ফ'কলাইজেচন কেনেদৰে উপস্থাপিত হৈছে সেয়া মন কৰিলে দেখা যায় যে নাট্যকাৰে প্ৰধান চৰিত্ৰসমূহৰ অভ্যন্তৰীণ অনুভৱ আৰু বাহ্যিক পৰিস্থিতিৰ চমৎকাৰ অপূৰ্ব সংমিশ্ৰণৰে উপস্থাপন কৰিছে। এই কৌশলে নাটকৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে আৰু দৰ্শকৰ সৈতে ব্যক্তিগতভাৱে সংযোগ স্থাপন কৰিবলৈ সহায় কৰিছে।

- অন্তৰিক ফ'কলাইজেচন : অন্তৰিক ফ'কলাইজেচনত নাটকৰ কাহিনী প্ৰধান চৰিত্ৰৰ দৃষ্টিভংগীৰ পৰা উপস্থাপন কৰা হয়, যি চৰিত্ৰটোৰ মানসিক অৱস্থা, অনুভৱ আৰু সংকট দৰ্শকলৈ উদঘাটন কৰে। "অসুৰ" নাটকখনত প্ৰধান চৰিত্ৰটিৰ অভ্যন্তৰীণ দ্বন্দ্ব আৰু মানসিক সংঘাতেই হৈছে নাটকখনৰ কেন্দ্ৰবিন্দু। ধৰ্মীয় বিশ্বাস আৰু ব্যক্তিগত অভিজ্ঞতাৰ সংঘৰ্ষত এই চৰিত্ৰটিৰ নিজস্ব দৃষ্টিভংগীয়ে নাটকৰ বিষয়বস্তু গভীৰ কৰি তোলে। উদাহৰণস্বৰূপে, প্ৰধান চৰিত্ৰটোৱে নিজৰ অতীতৰ অভিজ্ঞতা আৰু ধৰ্মীয় পীড়নৰ কথা দৰ্শকৰ আগত অৱগত কৰিছে এনেদৰে-

হৰনাথ : অতীতৰ কথা মনত পেলাবলৈ গ'লে প্ৰথমেই মোৰ স্মৃতিৰ পটলৈ আহে পত্নী আৰতিৰ কথা। আজিৰ পৰা পঁচিশ বছৰৰ আগৰ কোনোবা এটা দিনৰ মহেন্দ্ৰ ক্ষণত তেওঁৰ লগত মোৰ বিয়া হৈছিল। তেতিয়া মই ব্যৱসায় কৰা নাছিলো। এটা ভ্ৰাম্যমান যাত্ৰা পাৰ্টি মালিক আছিলো...। (ভৰালী, ২০১৯, পৃ. ১৮৬)

ঠিক সেইদৰে মানুহ নাটকখনৰ পৰমা চৰিত্ৰটিৰ একাকীত্বৰ অনুভৱ আৰু মানসিক যন্ত্ৰণাই নাটকৰ মেজাজ গঢ়ি তোলে। নাটকৰ বহু অংশত চৰিত্ৰটিৰ অন্তৰংগ দৃষ্টিভংগীৰে ঘটনা বিবৃত হৈছে। উদাহৰণস্ৰূপে, চৰিত্ৰটিৰ আত্মবিশ্লেষণত দৰ্শক তেওঁৰ একাকীত্ব আৰু জীৱনৰ অৰ্থহীনতাৰ গভীৰ অনুভৱৰ সৈতে সম্পৰ্কিত হয়।

- বাহ্যিক ফ'কলাইজেচন : বাহ্যিক ফ'কলাইজেচনৰ জৰিয়তে নাটকৰ ঘটনাসমূহ পাঠক-দৰ্শকৰ আগত বস্তুনিষ্ঠভাৱে উপস্থাপন কৰা হয়। এই কৌশলে কাহিনীভাগ গভীৰভাৱে বুজিবলৈ সহায় কৰে আৰু নাটকৰ পৰিৱেশ আৰু সামগ্ৰিক দৃষ্টিভংগী স্পষ্ট কৰে। "এজন নায়কৰ মৃত্যু" নাটকখনত নাটকৰ কেন্দ্ৰীয় ঘটনাবোৰ বাহ্যিকভাৱে বৰ্ণনা কৰা হৈছে, যাৰ ফলত দৰ্শক কাহিনীৰ বহিৰাগত দৃশ্যবোৰৰ এক সম্পূৰ্ণ চিত্ৰ লাভ কৰে। উদাহৰণস্বৰূপে, চন্দন পাঠকৰ পতনৰ ঘটনাবোৰ বাহ্যিক দৃষ্টিভংগীৰে উপস্থাপিত হৈছে, যি তেওঁৰ অন্তৰংগ অভিজ্ঞতা দৰ্শাবলৈ সংকল্পবদ্ধ নহয়। এবছার্ড নাটকৰ দৃষ্টিভংগীত বাহ্যিক ফ'কলাইজেচনে দৰ্শকৰ দৃষ্টিত অস্থিৰতা আৰু সংযোগৰ অভাৱ সৃষ্টি কৰিব পাৰে যি নাটকৰ বিষয়বস্তুৰ অংশস্ৰূপে কাম কৰে।

৫.৩ স্থান আৰু ছেটিং (Space and Setting)

বসন্ত শইকীয়াৰ এবছার্ড নাটকসমূহত স্থান আৰু

ছেটিং এটি মুখ্য উপাদান হিচাপে প্রয়োগ কৰা দেখা যায়। স্থান তথা পৰিৱেশে প্ৰধান চৰিত্ৰসমূহৰ মানসিক অৱস্থা, নাটকৰ মেজাজ আৰু দৰ্শকক নাটকৰ কেন্দ্ৰীয় ভাবনাৰ সৈতে সংযোগ স্থাপন কৰিবলৈ সহায় কৰে। স্থান আৰু ছেটিং নাটকৰ এক বিশেষ প্ৰেক্ষাপট গঢ়ি তোলে, যিয়ে নাটকৰ বিষয়বস্তুৰ গভীৰতা বঢ়ায়।

- সীমিত স্থান (Restricted Space): "অসুৰ" আৰু "মানুহ" নাটক দুখনত স্থানসমূহ সীমিত আৰু সংকীৰ্ণ, যিয়ে সমাজৰ দমনমূলক বাস্তৱতাৰ প্ৰতিফলন ঘটায়। উদাহৰণস্ৱৰূপে "অসুৰ" নাটকৰ ঘটনাসমূহ এখন সৰু গাঁৱৰ পৰিৱেশত সংঘটিত; যি ধৰ্মীয় আৰু সামাজিক দ্বন্দ্বৰ প্ৰতিফলন ঘটাইছে। স্থানটিৰ সীমাবদ্ধতাই পাঠক-দৰ্শকক এক পীড়িত সমাজ ব্যৱস্থাৰ সংকীৰ্ণতাক উপলব্ধি কৰিবলৈ সহায় কৰে। উদাহৰণস্ৱৰূপে, নাটকৰ কেন্দ্ৰীয় স্থান এটি ধৰ্মীয় অনুষ্ঠানৰ মঞ্চ, যি প্ৰধান চৰিত্ৰৰ মানসিক বিক্ষোভ আৰু দ্বন্দ্ব প্ৰকাশ কৰাত অনুঘটক হিচাপে কাম কৰিছে। এই স্থানটিৰ সংকীৰ্ণতাই সমাজৰ সংকোচিত দৃষ্টিভংগী আৰু ধৰ্মীয় অসহিষ্ণুতাৰো প্ৰতিফলন বুলি ক'ব পাৰি। ঠিক সেইদৰে মানুহ নাটকখনৰ স্থান এটি গৃহ বা সংকীৰ্ণ অঞ্চলত আবদ্ধ। এই স্থানৰ সীমাবদ্ধতা প্ৰধান চৰিত্ৰটোৰ একাকীত্ব আৰু মানসিক বিভ্ৰান্তিক উদঘাটন কৰে।
- বিস্তৃত স্থান (Expansive Space): "মৃগতৃষ্ণা" নাটকখনত স্থান বিস্তৃত, যি ব্যক্তিস্বাতন্ত্ৰ্য আৰু আত্মানুসন্ধানৰ এক শক্তিশালী প্ৰতীক। নাটকৰ স্থানসমূহ সপোন আৰু বাস্তৱৰ সীমা অতিক্ৰম কৰে। উদাহৰণস্ৱৰূপে, দিগন্ত চৰিত্ৰটোৱে নিজৰ অস্তিত্ব অৰ্থ বিচাৰিবলৈ এটি অনিশ্চিত যাত্ৰা আৰম্ভ কৰে । (ভৰালী, ২০১৯, পৃ. ১৮৬) এই স্থানবোৰে নাটকৰ বিষয়বস্তু—"মানৱীয় সংকট" আৰু "অস্তিত্ববাদী সংকট"—উদ্ভাসিত কৰিছে।

স্থান আৰু ছেটিং চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থা আৰু নাটকৰ মেজাজ গঢ়িবলৈ বিশেষ ভূমিকা পালন কৰে। বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকসমূহত স্থান আৰু ছেটিং সমাজৰ দমনমূলক পৰিৱেশৰ প্ৰতিফলন আৰু ব্যক্তিস্বাতন্ত্ৰ্যৰ সন্ধানৰ দ্বন্দ্বৰ মাজত দৰ্শকক স্থাপন কৰে। নাটকৰ স্থানসমূহ এবছাৰ্ড নাটকৰ এটি মুখ্য বৈশিষ্ট্য হিচাপে দৰ্শকৰ অভিজ্ঞতাৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰে। মন কৰিবলগীয়া যে এবছাৰ্ড নাটকত সাধাৰণতে এখন অৰ্থহীন পৃথিৱীৰ ছবি অংকন কৰা হয়। এছলিনে ভাষাৰে ক'ব পাৰি— "masked until the end of the Second World War by the substitute religions of faith in progress, nationalism, and various totalitarian fallacies" (àßsslin, 2004, p, 23). তথাপিও এই পন্থাবোৰো ত্ৰুটিপূৰ্ণ যেন দেখা গ'ল। মানৱ জীৱনৰ আঁৰত কোনো অৰ্থ নাই বুলি কোৱা বিকল্পটো কিন্তু ৰৈ গ'ল। এই ধৰণৰ দৃষ্টিভংগীয়েই থিয়েটাৰ অৱ দ্যা এবছাৰ্ডত প্ৰকাশ পায়।

৫.৪ টেম্পৰেল মেনিপুলেচন (Temporal Manipulation) ঃ

বসন্ত শইকীয়াৰ আলোচ্য নাটকসমূহত সময়ৰ গাঁথনি পৃথক ধৰণৰ। সময়ৰেখাৰ নিয়মভংগ, ফ্লাশব্যাক আৰু ফ্লাশ-ফৰৱাৰ্ডৰ সৃজনশীল ব্যৱহাৰে নাটকৰ মেজাজ গঢ়ি তোলা হৈছে। "এবছাৰ্ড নাটকত কাহিনীৰ (বিষয়বস্তুহু) উপস্থাপনৰ বাবে ধাৰাবাহিক সময়ৰ ফ্ৰেম ভাঙি পোলোৱা হয়। আধুনিক মনস্তত্ত্বৰ জনক 'ফ্ৰয়ড' আৰু 'য়ুঙে' ঊনবিংশ শতাব্দীৰ অন্ত আৰু বিংশ শতাব্দীৰ আদিতে ঘোষণা কৰা মানুহৰ চেতনাৰ বহুতৰপীয়া প্ৰকৃতি— একে সময়তেই এজন মানুহৰ চেতনাত কেইবাটাও কথাই ক্ৰিয়া কৰি থাকিব পাৰে। সেয়ে মানুহ মানুহৰ মাজত থাকিও একক আৰু নিঃসংগ। কোনেও কাৰো লগত যোগসূত্ৰ স্থাপন কৰিব নোৱাৰে কাৰণ প্ৰত্যেকেই নিজৰ নিজৰ আন্তৰিক সময়ত বাস কৰে" (গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩, পৃ. ৫৮) এই প্ৰসংগত ভাৰ্জিনিয়া উলফৰ এযাৰ কথা স্মতব্য— "Life is not a series of gig lamps symmetrically arranged; life is a luminous halo, a semi-transparent envelope surrounding us from the beginning of consciousness to the end." (Wolf, 1948, p.150) এবছাৰ্ড নাটকতো এনে ভাবধাৰাৰেই প্ৰকাশ ঘটে।

- ফ্লাশব্যাক (Flashback): ফ্লাশব্যাকৰ কৌশল ব্যৱহাৰ কৰি শইকীয়াই অতীত ঘটনাসমূহ নাটকৰ বৰ্তমানৰ লগত সংযুক্ত কৰিছে। ই নাটকৰ পটভূমি আৰু চৰিত্ৰৰ মানসিক সংকট উপলব্ধি কৰিবলৈ সহায় কৰিছে। উদাহৰণস্ৱৰূপে "অসুৰ" বা "এজন নায়কৰ মৃত্যু" নাটক দুখনৰ প্ৰসংগ টানি আনিব পাৰি। "অসুৰ" নাটকত হৱনাথ চৰিত্ৰটোৱে অতীতত কৰা ভুলৰ বাবে আৰতীৰ পৰা অভিশাপ লাভ কৰিছে বুলি সন্দেহ প্ৰকাশ কৰিছে।ঠিক সেইদৰে "এজন নায়কৰ মৃত্যু" নাটকখনত চন্দনে দেউতাকৰ সৈতে কৰা অন্যায় বাবে আজি সংকটত পৰিব লগা হৈছে বুলি নিজকে প্ৰশ্ন কৰিছে।
- অ-ৰৈখিক সময় (Non-linear Time): অ-ৰৈখিক সময়ৰেখাৰ প্ৰয়োগে নাটকৰ কাহিনী এটি সপোনৰ দৰে

প্ৰৱাহিত কৰি নিয়ে আৰু ইয়াৰ ফলত কাহিনীভাগৰ গভীৰতা বৃদ্ধি পায়। "মানুহ" নাটকখনত কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ পৰমাই নিজৰ অস্তিত্বৰ অৰ্থ বিচাৰি ভিন্ন সময়ৰ অভিজ্ঞতাসমূহ দৰ্শকৰ আগত উপস্থাপন কৰে। ই দৰ্শকক ঘটনাৰ বিশেষ সময়ত থিয় দিয়া বাবে বাধ্য কৰে (ভৰালী, ২০১৯, পৃ. ১৭২)। ঠিক সেইদৰে "মৃগতৃষ্ণা" নাটকখনৰ সময়ৰেখা একদম পৃথক। প্ৰধান চৰিত্ৰ দিগন্তৰ স্বাপ্নিক অনুসন্ধান, যি অতীত, বৰ্তমান আৰু ভৱিষ্যৎৰ মাজত স্থানান্তৰিত হয় আৰু ই অ-ৰৈখিক সময়ৰেখাৰ প্ৰয়োগৰ উৎকৃষ্ট উদাহৰণ।

বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকসমূহত সময়ৰেখাৰ নিয়ম ভংগ আৰু ফ্লাশব্যাকৰ সৃজনশীল প্ৰয়োগে নাটককেইখনৰ গভীৰতা আৰু দৰ্শকৰ অংশগ্ৰহণ বৃদ্ধি কৰে। সময়ৰেখাৰ এই সৃজনশীল ব্যৱস্থাপনাই এবছাৰ্ড নাটকৰ কেন্দ্ৰীয় বৈশিষ্ট্যৰ সৈতে নাটকসমূহক সংযোগ কৰায়।

৫.৫ চৰিত্ৰায়ণ আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠ (Characterization and Narrative Voice) ঃ

বসন্ত শইকীয়াৰ এবছাৰ্ড নাটকসমূহত চৰিত্ৰায়ণ আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠৰ ব্যৱস্থাপনা নাটকৰ মূল বিষয়বস্তু, মানসিক দ্বন্দ্ব আৰু দৃষ্টিভংগী প্ৰকাশ কাৰত অত্যন্ত গুৰত্বপূৰ্ণ উপাদান হিচাপে প্ৰয়োগ হৈছে। এই নাটকসমূহৰ চৰিত্ৰসমূহে মূলতঃ এবছাৰ্ড দৃষ্টিভংগীৰ প্ৰতিনিধিত্ব কৰে, য'ত তেওঁলোকৰ মানসিক দ্বন্দ্ব আৰু অস্তিত্ববাদী সংকটত প্ৰতিফলিত হৈছে। নেৰেটিভ কণ্ঠৰ ভিন্ন ৰূপে কাহিনীৰ দৃষ্টিভংগী পৃথক ৰূপত উপস্থাপন কৰাত সহায় কৰিছে। প্ৰসংগক্ৰমে উল্লেখ কৰি যোৱা হ'ল যে, "এবছাৰ্ড নাটকৰ চৰিত্ৰসমূহ উজ্জ্বল বা আমি সাধাৰণভাবে ভাল বা বেয়া বুলি ক'লে যি ধৰণৰ চৰিত্ৰৰ কথা বুজোঁ তেনে চৰিত্ৰ নহয়। বৰঞ্চ প্ৰতিটো চৰিত্ৰ একো একোটা শ্ৰেণীৰ প্ৰতিনিধিহে। বহুতো চৰিত্ৰ কেৱল ক্লিচে ভাষাত কথা কোৱা ৰুটিনত আবদ্ধ হৈ থকা মেচিনৰ দৰে অংকন কৰা হয়; সেই চৰিত্ৰসমূহ যেন Commedia dell'arteত দেখা পোৱা ষ্টেৰিঅ' টাইপ, আৰ্কিটাইপাল (archetypal) বা চেপেটা ধৰণৰ চৰিত্ৰ" (গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩, পৃ. ৫৭)।

- চৰিত্ৰৰ মানসিক দ্বন্দ্ব (Psychological Conflict): এবছাৰ্ড নাটকৰ এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ বৈশিষ্ট্য হ'ল প্ৰধান চৰিত্ৰসমূহৰ মানসিক দ্বন্দ্বৰ উপস্থাপন। বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকসমূহত এই মানসিক দ্বন্দ্ব গভীৰভাৱে উপস্থাপিত হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে "অসুৰ" নাটকখন কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰটিৰ মানসিক দ্বন্দ্ব আৰু ধৰ্মীয় মূল্যবোধৰ সংঘাতে দৰ্শকৰ মনত গভীৰ প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰে। গগৈ আৰু গোস্বামীয়ে উল্লেখ কৰে যে এবছাৰ্ড নাটকৰ এই বৈশিষ্ট্যই মানুহৰ জীৱনৰ গভীৰ অনিশ্চয়তা আৰু মানসিক সংকট উদঘাটন কৰে (গগৈ আৰু গোস্বামী, ২০২৩)। ঠিক সেইদৰে "এজন নায়কৰ মৃত্যু" নাটকখনত চন্দন পাঠকৰ দ্বন্দ্ব তেওঁৰ ব্যক্তিগত গৌৰৱৰ পৰা পতনৰ সময়ত সৃষ্ট হয়। তেওঁৰ মানসিক অৱস্থাৰ পতন আৰু আত্মবিশ্লেষণে দৰ্শকক তেওঁৰ জীৱনৰ গভীৰ সংকটত জড়িত কৰে। নাটকৰ বহু দৃশ্যত নায়কজন নিজৰ কৃতিত্ব আৰু আত্মগ্লানিৰ কথা কৈ যায়। এই বৈশিষ্ট্যবোৰে নাটকৰ এবছাৰ্ড মেজাজ প্ৰতিফলিত কৰে।
- নেৰেটিভ কণ্ঠ (Narrative Voice) : বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকসমূহত প্ৰথম পুৰুষ আৰু তৃতীয় পুৰুষ নেৰেটিভৰ মিশ্ৰণ দেখা যায়, যি নাটকৰ দৃষ্টিভংগী অধিক শক্তিশালী আৰু ব্যক্তিগতভাৱে পাঠক-দৰ্শকলৈ প্ৰেৰণ কৰে।
  - প্ৰথম পুৰুষ নেৰেটিভ : নাটকৰ বহু অংশত প্ৰধান চৰিত্ৰই নিজৰ অভিজ্ঞতা আৰু দৃষ্টিভংগী ব্যক্ত কৰে। উদাহৰণস্বৰূপে "অসুৰ" নাটকখনত প্ৰধান চৰিত্ৰটোৰ মাধ্যমে দৰ্শক নিজৰ অন্তৰ্দ্বন্দ্ব অনুভৱ কৰিবলৈ সক্ষম হয়। এই পদ্ধতিত দৰ্শকক জীৱনৰ গভীৰ সংকটৰ সৈতে জড়িত কৰা হয়।
  - তৃতীয় পুৰুষ নেৰেটিভ : কাহিনীৰ বহিৰাগত দৃষ্টিভংগীৰ জৰিয়তে ঘটনাবোৰ দৰ্শকলৈ উপস্থাপন কৰা হয়। উদাহৰণ হিচাপে, "এজন নায়কৰ মৃত্যু" নাটকখনত বাহ্যিক নেৰেটিভৰ মাধ্যমে মূল ঘটনাবোৰ বৰ্ণিত হৈছে, যিয়ে দৰ্শকক কাহিনীৰ সামগ্ৰিক পটভূমিৰ সৈতে জড়িত কৰে।
  - মিশ্ৰিত নেৰেটিভ কণ্ঠ : "মৃগতৃষ্ণা" নাটকখত প্ৰথম আৰু তৃতীয় পুৰুষৰ কণ্ঠৰ মিশ্ৰণে এটি পৃথক দৃষ্টিভংগী সৃষ্টি কৰিছে। উদাহৰণ হিচাপে, প্ৰধান চৰিত্ৰটোৱে কোনো সময়ত নিজেই নিজৰ অভিজ্ঞতা বৰ্ণনা কৰে, আন সময়ত বহিৰাগত নেৰেটৰ হৈ দৰ্শকক ঘটনাৰ তথ্য প্ৰদান কৰে। ই নাটকৰ বৈচিত্ৰ্য আৰু গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে। মিকে বালৰ মতে, এই পদ্ধতিয়ে চৰিত্ৰক বাস্তৱ মানুহৰ দৰে অভিজ্ঞতাৰ গভীৰতাৰে পূৰ্ণ কৰিব পাৰে (Bal, 2017, p. 106)।

❍ চৰিত্রায়ণৰ প্ৰভাৱ : চৰিত্ৰৰ মানসিক দ্বন্দ্বৰ উপস্থাপনে নাটকৰ মেজাজ গঢ়ি তোলে। উদাহৰণস্বৰূপে, "অসুৰ"ত উপস্থাপিত ধৰ্মীয় সংকট আৰু "মানুহ"ত প্ৰকাশিত একাকীত্বই দৰ্শকৰ মনত গভীৰ প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰে। বসন্ত শইকীয়াৰ আলোচ্য নাটকসমূহত চৰিত্রায়ণ আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠৰ ব্যবস্থাপনাই এবছাৰ্ড নাটকৰ মূল বৈশিষ্ট্য প্ৰতিফলিত কৰে। মানসিক দ্বন্দ্ব, প্ৰথম পুৰুষ আৰু তৃতীয় পুৰুষ নেৰেটিভৰ সংমিশ্ৰণে নাটকৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে আৰু পাঠক-দৰ্শকক কাহিনীৰ গভীৰ দৃষ্টিভংগীৰ সৈতে সংযুক্ত কৰিছে।

৬.০ উপসংহাৰ

বসন্ত শইকীয়াৰ এবছাৰ্ড নাটকসমূহৰ নেৰেটিভ বিশ্লেষণৰ অন্তত দেখা যায় যে তেওঁ এবছাৰ্ডনাটকৰ এক বিশেষ স্থানীয় ৰূপ সৃষ্টি কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। বসন্ত শইকীয়াই ইউৰোপীয় এবছাৰ্ড নাটকৰ মৌলিক বৈশিষ্ট্যসমূহ লৈ অসমৰ সমাজ, সংস্কৃতি, আৰু মানসিক পৰিৱেশৰ সৈতে সংযুক্ত কৰি নিজৰ নাটকসমূহত এক স্বকীয় দৃষ্টিভংগী সংযোজন কৰিছে। তেওঁৰ নাটকসমূহত সময়ৰেখাৰ নিয়ম ভংগ, ফ্লাশব্যাক আৰু ফ্লাশ-ফৰৱার্ড প্ৰয়োগ, স্থান আৰু ছেটিংৰ গভীৰ তাৎপৰ্য আৰু ফ'কলাইজেচনৰ মিশ্ৰণৰ সৈতে চৰিত্রসমূহৰ মানসিক দ্বন্দ্ব এবছাৰ্ড নাটকৰ মৌলিক দিশক অধিক প্ৰাসংগিক কৰি তুলিছে। বসন্ত শইকীয়াৰ নাটকসমূহ মানৱ জীৱনৰ অৰ্থহীনতা, অনিশ্চয়তা, আৰু সংকটৰ গভীৰ অনুভৱ দৰ্শকৰ মাজত সৃষ্ট কৰে।

❍ সিদ্ধান্তসমূহ :

o এবছাৰ্ড নাটকৰ স্থানীয়কৰণ : বসন্ত শইকীয়াই ইউৰোপীয় এবছাৰ্ড নাটকৰ মৌলিক উপাদানসমূহত অসমীয়াৰ স্থানীয় সাংস্কৃতিক আৰু সামাজিক প্ৰেক্ষাপট সংযোজন কৰিছে। ই অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত এবছাৰ্ড নাটকৰ এক স্বতন্ত্ৰ ধৰাৰ ৰূপ দান কৰিছে।

o সময়ৰেখাৰ নিয়ম ভংগৰ প্ৰয়োগ : সময়ৰেখাৰ নিয়ম ভংগ, বিশেষকৈ ফ্লাশব্যাক আৰু ফ্লাশ-ফৰৱার্ডৰ সৃষ্টিশীল ব্যৱহাৰ নাটকৰ বিষয়বস্তুৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে। ই নাটকৰ দৰ্শকক ঘটনাৰ গভীৰতাৰ সৈতে জড়িত কৰিবলৈ সহায় কৰিছে।

o ফ'কলাইজেচনৰ সৃষ্টিশীল মিশ্ৰণ : অন্তৰিক আৰু বাহ্যিক ফ'কলাইজেচনৰ সংমিশ্ৰণে শইকীয়াৰ নাটকৰ দৃষ্টিভংগীৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে। এই পদ্ধতিয়ে দৰ্শকক প্ৰধান চৰিত্রৰ মানসিক অৱস্থা আৰু বাহ্যিক পৰিস্থিতিৰ মাজত সমন্বয় কৰিবলৈ সহায় কৰিছে।

o স্থান আৰু ছেটিংৰ পৰিস্ফুটন : নাটকসমূহত স্থান আৰু ছেটিং চৰিত্রৰ মানসিক অৱস্থা আৰু নাটকৰ মেজাজৰ সৈতে গভীৰভাৱে সংযুক্ত। সীমিত স্থান দমনমূলক সামাজিক বাস্তৱতাৰ প্ৰতিফলন ঘটায়, আনহাতে বিস্তৃত স্থান ব্যক্তিস্বাতন্ত্ৰ্যৰ প্ৰতীক।

o মানসিক দ্বন্দ্ব আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠৰ গভীৰতা : মানসিক দ্বন্দ্ব আৰু নেৰেটিভ কণ্ঠৰ সংমিশ্ৰণে নাটকৰ দৃষ্টিভংগী আৰু বিষয়বস্তু অধিক প্ৰাসংগিক আৰু শক্তিশালী কৰিছে। ই দৰ্শকক নাটকৰ মূল সংকটৰ লগত গভীৰভাৱে জড়িত কৰে।

o অসমীয়া এবছাৰ্ড নাটকৰ এক বিশেষ স্থান : বসন্ত শইকীয়াৰ আলোচ্য নাটকসমূহ অসমীয়া এবছাৰ্ড নাটকক এক স্বতন্ত্ৰ স্থান সৃষ্টি কৰিছে। ❑

প্ৰসংগপুথি আৰু গ্ৰন্থপঞ্জী

গগৈ আৰু গোস্বামী (২০২৩); দ্যা থিয়েটাৰ অৱ এৱছার্দ আৰু অসমীয়া নাটক; *প্ৰকাশ,* জুন সংখ্যা, ৫৬-৬১।

গোস্বামী, মৃণাল জ্যোতি (২০১৭); *ঐতিহ্যৰ নিৰ্যাস;* ই-বুক [availabale in Google Play Booke]; আঁক-এ ক্ৰিয়েটিভ লাইন।

বৰা, মহেন্দ্ৰ (১৯৯৭); *সাহিত্য আৰু সাহিত্য;* গুৱাহাটী : ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰচ্।

ভৰালী, শৈলেন (১৯৯৫); "অসমীয়া এবছাৰ্ড নাটক"; ৰাজবংশী; পৰমানন্দ (সম্পাঃ)ৰ *অসমীয়া নাটক : পৰম্পৰা আৰু পৰিৱৰ্তন* (পৃ. ১৩৪-১৩৮); গুৱাহাটী : চন্দ্ৰ প্ৰকাশ।

ভৰালী, শৈলেন (২০০৮); *অসমীয়া নাটক : স্বৰাজোত্তৰ কাল;* গুৱাহাটী : চন্দ্ৰ প্ৰকাশ।

ভৰালী, শৈলেন (১৯৯২); *নাট্যকলা : দেশী আৰু বিদেশী;* গুৱাহাটী : বাণী প্ৰকাশ।

ভৰালী, শৈলেন (১৯৭৭); "যোৱা পঁচিশ বছৰৰ অসমীয়া নাটকৰ ধাৰা"; শইকীয়া, নগেন (সম্পাঃ)ৰ *আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ অভিলেখ* (পৃ. ২৭২-২৮০); যোৱহাট : অসম সাহিত্য সভা।

ভৰালী, শৈলেন (২০১৯); *বসন্ত শইকীয়াৰ নাট্যসম্ভাৰ আৰু নাট্যকথা;* গুৱাহাটী : অসম প্ৰকাশন পৰিষদ।

Abbotson, S. (2003). *Thematic guide to modern drama.* Greenwood.

Bal, M. (2009). *Narratology: Introduction to the theory of narrative* (3rd ed.). University of Toronto Press.

Bal, M. (2017). *Narratology: Introduction to the theory of narrative* (4th ed.). University of Toronto Press.

Bakhtin, M. M. (1975). *The dialogic imagination: Four essays* (M. Holquist,Ed.; C. Emerson & M. Holquist, Trans.). University of Texas Press.

Bakhtin, M. M. (1981). *The dialogic imagination: Four essays* (C. Emerson & M. Holquist, Trans.). University of Texas Press. (Original work published 1975)

Barthes, R. (1975). Introduction to the structural analysis of narratives. *New Literary History, 6*(2), 237–272.
Barthes, R. (1977). *Image-music-text* (S. Heath, Trans.). Fontana Press.
Beckett, S. (1982). *Waiting for Godot: A tragicomedy in two acts.* Grove.
Blocker, G. H. (1979). *The metaphysics of absurdity.* University Press of America.
Booth, W. C. (1961). *The rhetoric of fiction.* University of Chicago Press.
Booth, W. C. (2008). *The company we keep: An ethics of fiction.* University of California Press.
Britannica, T. Editors of Encyclopaedia. (2022, November 12). Theatre of the absurd. *Encyclopedia Britannica.* https://www.britannica.com/art/Theatre-of-the-Absurd
Camus, A. (1983). *The myth of Sisyphus and other essays* (J. O'Brien, Trans.). Vintage.
Chatman, S. (1978). *Story and discourse: Narrative structure in fiction and film.* Cornell University Press.
Culík, J. (2000). The Theatre of the Absurd: The West and the àßast. *University of Glasgow.* Archived from https://web.archive.org/web/200908230
Culler, J. (2011). *Literary theory: A very short introduction.* Oxford University Press.
Esslin, M. (1960). The Theatre of the Absurd. *The Tulane Drama Review, 4*(4), 3–15. https://doi.org/10.2307/1124873
Esslin, M. (1965). Introduction. In Ionesco, àß., Adamov, A., Arrabal, F., & Albee, E. *Absurd drama* (pp. 1–24). Penguin Books.
Esslin, M. (2004). *The Theatre of the Absurd.* Vintage.
Fludernik, M. (2009). *An introduction to narratology.* Routledge.
Freytag, G. (2013). *Technique of the drama: An exposition of dramatic composition and art.* Start Publishing LLC.
Genette, G. (1980). *Narrative discourse: An essay in method* (J. E. Lewin, Trans.). Cornell University Press. (Original work published 1972)
Heinen, S., & Sommer, R. (Eds.). (2009). *Narratology in the age of cross-disciplinary narrative research.* Walter de Gruyter.
Ionesco, E. (2006). *The bald soprano and the lesson* (T. How, Trans.). Grove.
Kindt, T., & Müller, H.-H. (2003). *What is narratology? Questions and answers regarding the status of a theory.* Walter de Gruyter.
Kumar, S. K. (1962). *Bergson and the stream of consciousness novel.* Black & Son.
Lévi-Strauss, C. (1955). The structural study of myth. *The Journal of American Folklore, 68*(270), 428–444. https://doi.org/10.2307/536768
Nicholl, A. (1969). *The theory of drama.* Doaba House.
Peacock, R. (1957). *The art of drama.* Broadway House.
Pickering, K. (2005). *Key concepts in drama and performance.* Palgrave Macmillan.
Prince, G. (1994). Narratology. In M. Groden & M. Kreiswirth (àßds.), *Johns Hopkins guide to literary theory and criticism* (p. 524). Johns Hopkins University Press.
Propp, V. (1968). *Morphology of the folktale* (L. Scott, Trans.). University of Texas Press.
Schwanecke, C. (2022). *A narratology of drama: Dramatic storytelling in theory, history, and culture from the Renaissance to the twenty-first century.* Walter de Gruyter.
Todorov, T. (1969). *Grammaire du Décaméron.* Mouton.
Waltan, A. (1962). *The English novel.* Penguin Books.
Wolf, V. (1948). *Modern fiction.* Hogarth Press.

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होग।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : .....

पदनाम : .....

पूरा पता : .....

: .....

ई-मेल : ..... मोबाइल : .....

RTGS का विवरण : .....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 100/-	प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1000/-	वार्षिक	: रु. 1,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary : Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No. : 551802010004619
Name of Bank & Branch : Union Bank of India, Hatigaon Chariali, Dispur-781038
IFS Code : UBIN0555185

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 31st December, 2024 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

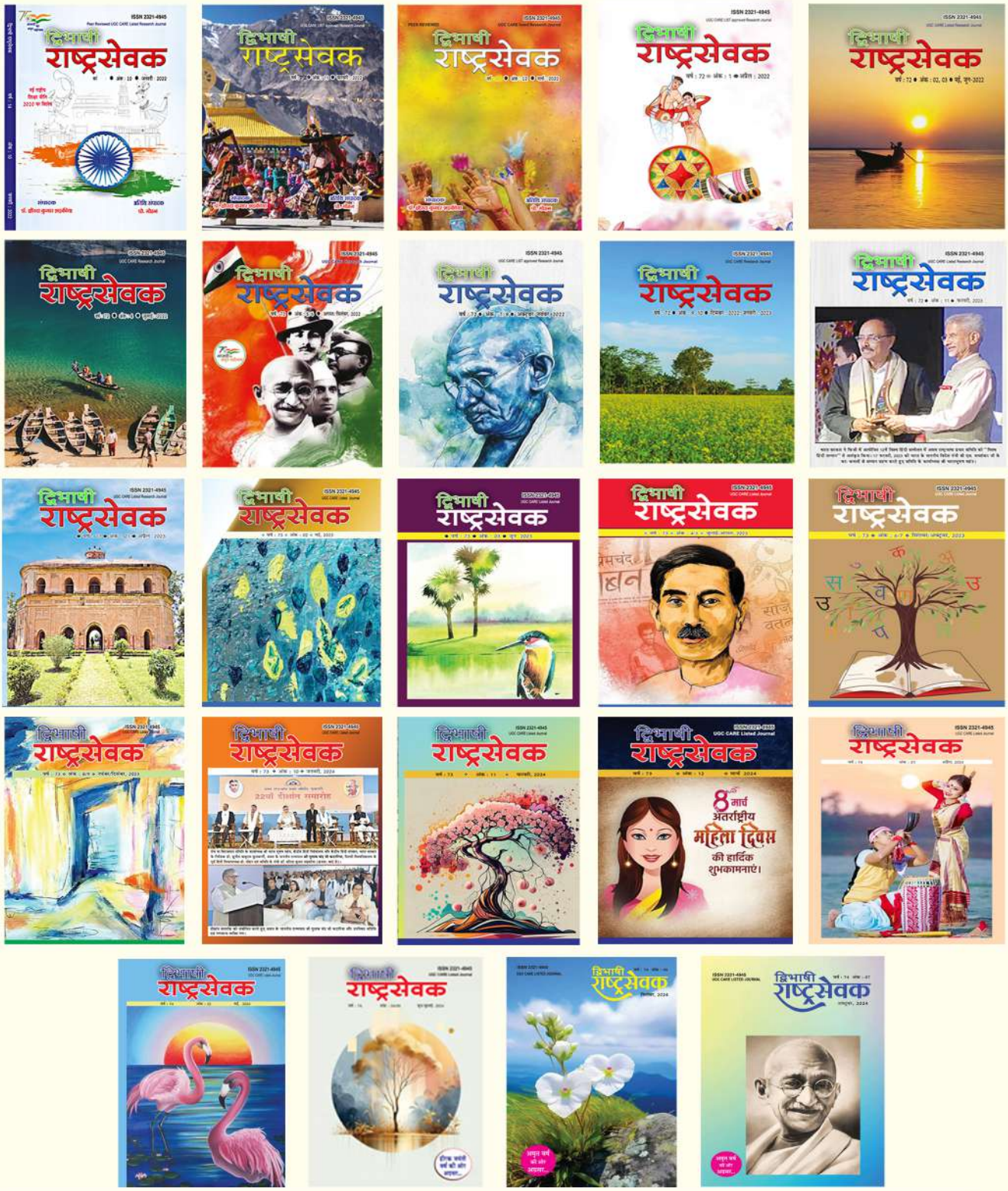

एक हृदय हो भारत जननी
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032

arpsguwahati.com rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380